श्रीरामकृष्ण वचनामृत

श्रीरामकृष्णवचनामृत

द्वितीय भाग

श्री महेन्द्रनाथ गुप्त

(श्री 'म')

रामकृष्ण मठ
नागपुर

अनुक्रमणिका

(द्वितीय खण्ड)

भगवान श्रीरामकृष्ण

परिच्छेद ९६

अहेतुकी भक्ति

(१)

हाजरा महाशय। मुक्ति तथा षडैश्वर्य

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में भक्तों के साथ दोपहर का भोजन समाप्त करके अपने कमरे में बैठे हुए हैं। पास मे जमीन पर मास्टर, हाजरा, बड़े काली, बाबूराम, रामलाल, मुखर्जियों के हरि आदि उपस्थित हैं, कुछ बैठे हैं और कुछ खड़े हैं। श्रीयुत केशव की माता के निमन्त्रण में कल उनके कोलूटोलावाले मकान में जाकर श्रीरामकृष्ण को खूब कीर्तनानन्द मिला था।

श्रीरामकृष्ण – (हाजरा से) – कल मैंने केशव सेन के यहाँ (नवीन सेन के घर पर) खूब आनन्द से प्रसाद पाया। बड़ी भक्ति से उन लोगों ने परोसा था।

हाजरा महाशय बहुत दिन से श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। 'मैं ज्ञानी हूँ' यह कहकर वे कुछ अभिमान भी करते हैं। लोगो से श्रीरामकृष्ण की कुछ निन्दा भी करते हैं। इधर बरामदे में तल्लीन होकर माला भी जपते है। चैतन्यदेव को 'आधुनिक अवतार है' कहकर साधारण समझते हैं। कहते हैं 'ईश्वर केवल भक्ति देते हैं, यही नही, उनके ऐश्वर्य का भी ओर-छोर नहीं है; वे ऐश्वर्य भी देते हैं। उन्हे पाने पर अष्टसिद्धियों से शक्ति भी प्राप्त होती है।' घर के लिए कुछ ऋण उन्हें देना है – हजार रुपये के लगभग होगा। इसके लिए उन्हें चिन्ता रहती है।

बड़े काली ऑफिस मे काम करते हैं। तनख्वाह बहुत कम पाते हैं। घर मे स्त्री और लड़के-बच्चे भी हैं। श्रीरामकृष्ण पर इनकी बड़ी भक्ति है। कभी-कभी ऑफिस जाना बन्द करके भी श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए आते हैं।

बड़े काली – (हाजरा से) – तुम स्वयं अपने को तो पारस पत्थर समझते हो और दूसरों मे कौनसा सोना खरा है और कौनसा बुरा, इसकी परीक्षा लेते फिरते हो – भला इस तरह दूसरों की इतनी निन्दा क्यो करते हो?

हाजरा – जो कुछ कहना होता है, मैं इन्हीं के पास कहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – और क्या!

हाजरा तत्त्वज्ञान की व्याख्या कर रहे हैं।

हाजरा – तत्त्वज्ञान का अर्थ है चौबीस तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करना; चौबीस तत्त्व कौन कौन से हैं। यह प्रश्न होता है।

"पंचभूत, छः रिपु, पाँच ज्ञानेन्द्रिय और पाँच कर्मेन्द्रिय – यही सब।"

मास्टर – (श्रीरामकृष्ण से हँसकर) – ये बतलाते है, छः रिपु चौबीस तत्त्वों के भीतर हैं!

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – अब इसी से समझो। और देखो, तत्त्वज्ञान का कैसा अर्थ बतलाता है। तत्त्वज्ञान का अर्थ है आत्मज्ञान। तत् अर्थात् परमात्मा, त्वं अर्थात् जीवात्मा। जीवात्मा और परमात्मा के एक हो जाने पर तत्त्वज्ञान होता है।

हाजरा कुछ देर में घर से निकलकर बरामदे में जा बैठे।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर आदि से) – वह बस तर्क करता है। अभी देखते ही देखते खूब समझ गया, परन्तु थोड़ी देर बाद फिर जैसे का तैसा!

"बड़ी मछली को जोर से खींचते हुए देखकर मै डोर ढीली कर देता हूँ। नहीं तो डोर तोड़ डालेगी और डोर पकड़नेवाला भी पानी मे गिर जायगा। इसलिए मै कुछ कहता नहीं।

(मास्टर से) "हाजरा कहता है, ब्राह्मण का शरीर धारण किये बिना मुक्ति नहीं होती। मैंने कहा, यह कैसी बात! भक्ति से ही मुक्ति होती है। शबरी व्याध की लडकी थी, रैदास – जिसके भोजन के समय घण्टा बजता था – ये सब शुद्र थे। इनकी मुक्ति भक्ति से ही हुई है। हाजरा इसमे 'परन्तु' जोड़ता है।

"ध्रुव को लेता है। प्रह्लाद को जितना लेता है, उतना ध्रुव को नहीं। लाटू ने कहा बचपन से ही परमात्मा पर ध्रुव का अनुराग था, तब वह चुप हुआ।

"मैं कहता हूँ, कामनाशून्य अहेतुकी भक्ति होनी चाहिए। इससे अधिक और कुछ भी नहीं है, हाजरा को यह बात मान्य नहीं हुई। याचक के आने पर धनी व्यक्ति बहुत नाराज होता है। विरक्ति से कहता है – ओफ, आ रहा है। आने पर एक खास तरह की आवाज में कहता है – 'बैठिये'। मानो अत्यधिक नाराज हो। ऐसे लोगो को वह अपने साथ गाड़ी पर नही बैठाता।

"हाजरा कहता है, वे दूसरे धनिकों की तरह नहीं हैं उन्हें ऐश्वर्य की क्या कमी है जो देने में उन्हें कष्ट होगा।

"हाजरा और भी कहता है – 'आकाश का पानी जब गिरता है, तब गंगा और दूसरी बडी बड़ी नदियाँ, बड़े बड़े तालाब सब भर जाते हैं और गड़हियाँ भी भर जाती हैं। उनकी कृपा होती है तो वे ज्ञान-भक्ति भी देते है और रुपया-पैसा भी देते हैं।'

"परन्तु इसे मलिन-भक्ति कहते है। शुद्धा-भक्ति वह है, जिसमे कोई कामना नही रहती। तुम यहां कुछ चाहते नही, परन्तु मुझे और मेरी बातो को चाहते और प्यार करते

हो। तुम्हारी ओर मेरा भी मन लगा रहता है। कैसे हो, क्यों नहीं आते, यह सब सोचता रहता हूँ।

"कुछ चाहते नहीं परन्तु प्यार करते हो, इसका नाम अहेतुकी भक्ति है – शुद्धा भक्ति है। यह प्रह्लाद में थी। न वह राज्य चाहता था, न ऐश्वर्य, केवल परमात्मा को चाहता था।"

मास्टर – हाजरा महाशय बस यों ही कुछ ऊटपटांग बका करते है। देखता हूँ, बिना चुप रहे कुछ होगा नहीं।

श्रीरामकृष्ण – कभी कभी पास आकर खूब मुलायम हो जाता है, परन्तु दुराग्रही भी ऐसा है कि फिर तर्क करने लगता है। अहंकार का मिटना बड़ा मुश्किल है। बेर का पेड अभी काट डालो, दूसरे दिन फिर पनपेगा और जब तक उसकी जड़ है, तब तक नयी डालियों का निकलना बन्द न होगा।

"मैं हाजरा से कहता हूँ, किसी की निन्दा न किया करो। नारायण ही सब रत्न धारण किये हुए हैं। दुष्ट मनुष्यों की भी पूजा की जा सकती है।

"देखो न कुमारी-पूजन। ऐसी लड़कियों की पूजा की जाती है जो देह में मल-मूत्र लगाये रहती हैं; ऐसा क्यों करते हैं? इसलिए कि वे भगवती की एक मूर्ति हैं।

"भक्त के भीतर वे विशेष रूप से रहते हैं। भक्त ईश्वर का बैठकखाना है।

"कद्दू खूब बड़ा हो तो उसका तानपूरा बहुत अच्छा होता है – खूब बजता है।

(हँसते हुए रामलाल से) "क्योंरे रामलाल, हाजरा ने कैसे कहा था – अन्तस् बहिस् यदि हरिस् (सकार लगाकर)? कैसा किसी ने कहा था – 'मातारं भातारं खातारं" – अर्थात् माँ भात खा रही है।" (सब हँसते हैं।)

रामलाल – (हँसते हुए) - अन्तर्बहिर्यदिहरिस्तपसा ततः किम्?

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – इसका अभ्यास कर लेना। कभी कभी मुझे सुनाना।

श्रीरामकृष्ण की छोटी थाली खो गयी है। रामलाल और वृन्दा नौकरानी थाली की बात पूछने लगे, 'क्या आप वह थाली जानते हैं?'

श्रीरामकृष्ण – आजकल तो मैंने उसे नहीं देखा। पहले थी जरूर – मैंने देखी थी।

(२)

निष्काम कर्म। संसारी तथा 'सोऽहं'

आज पंचवटी में दो साधु आये हुए हैं। वे गीता और वेदान्त यह सब पढ़ते हैं। दोपहर के भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण के कमरे में आकर दर्शन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए है। साधुओं ने प्रणाम किया, फिर जमीन पर चटाई पर बैठ गये। मास्टर आदि भी बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण हिन्दी में बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – क्या आप लोगों की सेवा हो चुकी है?

साधु – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – क्या खाया?

साधु – रोटी-दाल, आप खाइयेगा?

श्रीरामकृष्ण – नहीं, मैं तो थोड़ा-सा भात खाता हूँ। क्यों जी, आप लोग जो जप और ध्यान करते हैं, यह सब निष्काम ही करते है न?

साधु – जी महाराज।

श्रीरामकृष्ण – यही अच्छा है। और फल ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए न? गीता में लिखा है।

साधु – (दूसरे साधु से) –

यत् करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मदर्पणम्।।

श्रीरामकृष्ण – उन्हें एक गुना जो कुछ दोगे, उसका हजार गुना प्राप्त होगा। इसीलिए सब काम करके जलांजलि दी जाती है – कृष्ण के लिए फल का अर्पण किया जाता है।

"युधिष्ठिर जब सब पाप कृष्ण को अर्पित करने के लिए तैयार हुए, तब एक आदमी ने (भीम ने) उन्हें रोका। कहा, 'ऐसा कर्म न करो – कृष्ण को जो कुछ दोगें, उसका हजार गुना तुम्हें प्राप्त होगा।' अच्छा क्यों जी, निष्काम होना चाहिए – सब कामनाओं का त्याग करना चाहिए न?"

साधु – जी महाराज!

श्रीरामकृष्ण – परन्तु मेरी तो भक्ति-कामना है। वह बुरी नहीं, अच्छी ही है। मीठी चीजें बुरी हैं, आम्ल पित्त निर्माण करती हैं, किन्तु मिश्री उलटे उपकार करती है। क्यों जी?

साधु – जी महाराज।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा जी, वेदान्त कैसा है?

साधु – वेदान्त में षट्शास्त्र हैं।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु 'ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या' यही वेदान्त का सार है, मैं कोई अलग वस्तु नहीं हूँ, मैं ब्रह्म हूँ – यह। क्यों जी?

साधु – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु जो लोग संसार में हैं, और जिनमें देहबुद्धि है, 'सोऽहम्' भान उनके लिए अच्छा नहीं। संसारियों के लिए योगवाशिष्ठ वेदान्त अच्छा नहीं; बहुत बुरा है। संसारी सेव्य और सेवक के भाव में रहेंगे। 'हे ईश्वर, तुम सेव्य हो – प्रभु हो, मैं सेवक हूँ – तुम्हारा दास हूँ।'

"जिनमें देह-बुद्धि है, उन्हें 'सोऽहम्' की अच्छी धारणा नहीं होती।"

सब लोग चुपचाप बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण आप ही आप धीरे-धीरे हँस रहे हैं। आत्माराम अपने ही आनन्द में मग्न रहते है।

एक साधु दूसरे के कान में कह रहा है, 'अरे देखो, इसे परमहंस अवस्था कहते हैं।'

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – हँसी आ रही है।

श्रीरामकृष्ण बालक की तरह आप ही आप हँस रहे है।

(३)

कामिनी-त्याग

साधु दर्शन करके चले गये। श्रीरामकृष्ण, बाबूराम, मास्टर, मुखर्जियों के हरि आदि भक्त-समुदाय कमरे में और बरामदे मे टहल रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – क्या – तुम नवीन सेन के यहाँ गये थे?

मास्टर – जी हाँ, गया था। नीचे बैठा हुआ सब गाने सुन रहा था।

श्रीरामकृष्ण – यह तुमने अच्छा किया। वे लोग गये थे, केशव सेन क्या उनका चचेरा भाई है?

मास्टर – कुछ अन्तर है।

नवीन सेन आदि, एक भक्त के ससुरालवालों के कोई सम्बन्धी हैं।

मणि के साथ टहलते हुए एकान्त में श्रीरामकृष्ण उनसे बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – लोग ससुराल जाते हैं। मैंने कितना सोचा विवाह करूँगा, ससुराल जाऊँगा, आनन्द की साधें पूरी कर लूँगा; परन्तु क्या हो गया?

मणि – जी, आप कहा करते हैं – 'लड़का अगर बाप का हाथ पकड़े तो वह गिर सकता है, परन्तु बाप अगर लड़के का हाथ पकड़े तो वह नहीं गिरता।' आपकी बिलकुल यही अवस्था है। माता ने तो आपको सदा ही पकड़ रखा है।

श्रीरामकृष्ण – उलो के वामनदास के साथ विश्वास परिवार के यहाँ मुलाकत हुई थी। मैंने कहा, मैं तुम्हें देखने के लिए आया हूँ। जब चला आया, तब सुना, वह कह रहा था – 'बाप रे, बाघ जैसे आदमी को पकडता है, वैसे ही ईश्वर इन्हें पकड़े हुए हैं?' तब वह नौजवान था -- खूब मोटा था – सदा ही सेवाभाव रहता था।

"मैं औरतों से बहुत डरता हूँ। देखता हूँ, जैसे बाघिन खा जाने के लिए आ रही हो। और उसके अंग, प्रत्यंग और सब छेद बहुत बड़े बड़े दीख पड़ते हैं। उसके सब आकार राक्षसी-से दीख पड़ते है।

"पहले बड़ा भय था। मैं किसी को पास न आने देता था। इस समय तो बहुत ही मन को समझाकर उन्हें माँ आनन्दमयी की एक मूर्ति देखता हूँ।

"भगवती का अंश तो है; परन्तु पुरुषों के लिए, विशेष कर साधुओं के लिए और भक्तों के लिए वह त्याज्य है।

"चाहे ऊँचे दर्जे की भक्तिन हो, परन्तु स्त्री को मैं बड़ी देर तक अपने पास नही बैठने देता। थोड़ी ही देर मं कहता हूँ, जाओ. ठाकुरजी का दर्शन करो, इस पर भी अगर वह न चली गयी, तो तम्बाकू पीने के बहाने मैं स्वयं ही उठकर चला जाता हूँ।

"देखता हूं. किसी किसी का मन स्त्रियो की ओर बिलकुल ही नहीं जाता। निरंजन कहता है, मेरा तो मन स्त्रियों की ओर नही जाता।

"हरि से मैंने पूछा, और उसने भी कहा था – ना, स्त्रियों की ओर मन नही जाता।

"जो मन परमात्मा को दिया जाता है, उसका बारह आना स्त्री ले लेती है। फिर लड़कों के होने पर प्राय: सब मन खर्च हो जाता है। इस तरह फिर परमात्मा के लिए क्या दिया जाय?

"स्त्री की देखभाल करते करते किसी किसी के प्राणों पर आ बनती है। पांडेय जमादार बुड्ढा है, पश्चिम का रहनेवाला है। उसकी स्त्री की उम्र चौदह साल की है। बूढ़े के साथ उसे रहना पड़ता है। रहने को एक फूस की कुटिया है। फूस फाड़फाड़कर लोग उसकी स्त्री को झॉककर देखा करते हैं। अब वह स्त्री निकल गयी है।

"एक आदमी अपनी स्त्री को कहॉ लेकर रखे, कुछ ठीक नहीं कर सकता था। घर मं बड़ा शोर-गुल मचा था। वह बड़ी चिन्ता मैं है। परन्तु इस बात की चर्चा अनावश्यक है।

"और औरतों के साथ रहने से ही उनके वश हो जाना पड़ता है। औरत की बात पर संसारी आदमी उठते-बैठते हैं। सब के सब अपनी अपनी बीबी की तारीफ़ करने है।

"मैं एक जगह जाना चाहता था। रामलाल की चाची* से पूछने पर उसने मना किया। फिर मेरा जाना न हुआ। थोड़ी देर बाद सोचा – 'यह क्या! मैंने संसार-धर्म नही किया – कामिनी-कांचन त्यागी हूँ, इतने पर भी ऐसा! जो संसारी है, परमात्मा जाने, स्त्रियां के वश में वह कितना है।' "

मणि – कामिनी और कांचन में रहने से कुछ न कुछ आँच तो देह में जरूर ही लग जायेगी। आपने कहा था – 'जयनारायण बहुत बड़ा पण्डित था, बुड्ढा हो गया था परन्तु जब मैं गया तब देखा, धूप में तकिए डाल रहा था।'

श्रीरामकृष्ण – परन्तु पण्डिताई का अहंकार उसे न था। और जैसा उसने कहा था, उसी के अनुसार अन्त में काशी में जाकर रहा।

"बच्चों को मैंने देखा, पैरों में बूट डाले हुए थे, अंग्रेजी पढ़े-लिखे हैं।"

श्रीरामकृष्ण प्रश्नोत्तरों के द्वारा मणि को अपनी अवस्था समझा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – पहले बहुत अधिक उन्माद था – अब घट क्यों गया? – परन्तु कभी

---

* श्रीरामकृष्णदेव की लीलासहधर्मिणी श्रीसारदादेवी।

कभी अब भी होता है।

मणि – आपकी अवस्था कुछ एक तरह की तो है ही नहीं। जैसा आपने कहा था, कभी बालवत् – कभी उन्मादवत् – कभी जड़वत् – कभी पिशाचवत्, ये ही सब अवस्थाएं कभी कभी हुआ करतीं हैं। और कभी कभी सहज अवस्था भी होती है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ बालवत्। और उसी के साथ बाल्य, किशोर और युवा, ये अवस्थाएँ भी होती हैं। जब ज्ञानोपदेश दिया जाता है, तब युवा अवस्था होती है।

"और किशोर अवस्था में तेरह साल के बच्चे की तरह मजाक सूझता है; इसीलिए लड़कों के बीच में मजाक किया जाता है।

"अच्छा, नारायण कैसा है?"

मणि – जी, उसके सभी लक्षण अच्छे हैं।

श्रीरामकृष्ण – कद्दू की गढ़न अच्छी है – तानपूरा खूब बजेगा।

"वह मुझे कहता है, आप सब कुछ है। जिसकी जैसी धारणा है, वह वैसा ही कहता है। कोई कहता है, ये ऐसे ही साधु और भक्त है।

"जिसके लिए मैंने मना कर दिया है, उसकी उसने खूब धारणा कर ली है। उस दिन परदा समेटने के लिए मैंने कहा था, उसने न समेटा।

"गिरह लगाना, सीना, परदा लपेटना, दरवाजे में और सन्दूक में ताला लगाना, इस तरह के कामों के लिए मैंने मना कर दिया था – उसने ठीक धारणा कर रखी है। जिसे त्याग करना है, उसे इन बातों का साधन कर लेना चाहिए। यह सब संन्यासी के लिए है।

"साधना की अवस्था में कामिनी दावाग्नि-सी है – कालनागिनी-सी। सिद्ध अवस्था के पश्चात्, ईश्वर-प्राप्ति हो जाने पर, वह माँ आनन्दमयी की मूर्ति हो जाती है; तभी मनुष्य स्त्रियों को माता की एक एक मूर्ति देख सकता है।"

कई दिन हो गये, श्रीरामकृष्ण ने नारायण को कामिनी के सम्बन्ध में बहुत सावधान कर दिया था। कहा था – "स्त्रियों को हवा भी देह में न लगने पाये, मोटा कपड़ा देह में डाले रहना, कहीं ऐसा न हो कि उनके देह की हवा तेरे शरीर में लग जाय – और माता को छोड़कर दूसरी स्त्रियों से आठ हाथ, दो हाथ, नहीं तो कम से कम एक हाथ दूर जरूर रहना।"

श्रीरामकृष्ण – (मणि से) – उसकी माँ ने नारायण से कहा है – 'उन्हें देखकर हम लोग मुग्ध हो जाती हैं, तू तो भला अभी लड़का है।' और बिना सरल हुए कोई ईश्वर को पा नहीं सकता, निरंजन कैसा सरल है?

मणि – जी हाँ!

श्रीरामकृष्ण – उस दिन गाड़ी से आते समय कलकत्ते में तुमने देखा था या नहीं? हर समय उसका एक ही भाव रहता है – सरल है। आदमी अपने घर में तो एक तरह के

होते है, परन्तु जब बाहर जाते हैं, तब दूसरी तरह के हो जाते हैं। नरेन्द्र अब संसार की चिन्ता में पड़ गया हैं। उसमें कुछ हिसाबवाली बुद्धि है। सब लड़के क्या इसकी तरह कभी हो सकते हैं?

"आज मैं नीलकण्ठ का नाटक देखने गया था – दक्षिणेश्वर में नवीन नियोगी के यहाँ। वहाँ के लड़के बड़े दुष्ट हैं। वे सब इसकी-उसकी निन्दा किया करते हैं। इस तरह की जगहों में भाव रुक जाता है।

"उस बार नाटक देखते समय मधु डाक्टर की आँखों में आँसू देखकर मैंने उनकी ओर देखा था। किसी दूसरे की ओर मैं नहीं देख सका।"

(४)

समन्वय के बारे में उपदेश। दान और ध्यान

श्रीरामकृष्ण – (मणि से) – अच्छा, इतने आदमी जो यहाँ खिंचकर चले आते है, इसका क्या अर्थ?

मणि – मुझे तो व्रज की लीला याद आती है। कृष्ण जब चरवाहे और गौएँ बन गये, तब चरवाहों पर गोपियों का और बछड़ों पर गौओ का प्यार बढ़ गया – अधिक आकर्षण हो गया।

श्रीरामकृष्ण – वह ईश्वर का आकर्षण था। बात यह है कि माँ ऐसा ही जादू डाल देती हैं जिससे आकर्षण होता है।

"अच्छा, केशव सेन के यहाँ जितने आदमी जाते थे, यहाँ तो उतने आदमी नहीं आते। और केशव सेन को कितने आदमी जानते-मानते हैं, विलायत तक उसका नाम है, विक्टोरिया ने उससे बातचीत की थी। गीता में तो है कि जिसे बहुत से आदमी जानते-मानते हैं, वहाँ ईश्वर की ही शक्ति रहती है। यहाँ तो उतना नहीं होता।"

मणि – केशव सेन के पास संसारी आदमी गये थे।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह ठीक है, वे ऐहिक कामनाएँ रखने वाले थे।

मणि – केशव सेन जो कुछ कर गये हैं, क्या वह टिक सकेगा?

श्रीरामकृष्ण – क्यों, वे एक संहिता लिख गये हैं, उसमें उनके ब्राह्मसमाजी अनुयायियों के लिए नियमादि तो लिखे हैं।

मणि – अवतारी पुरुष जब स्वयं कार्य करते हैं, तब एक और ही बात होती है, जैसे चैतन्यदेव का कार्य।

श्रीरामकृष्ण – हाँ हाँ, यह ठीक है।

मणि – आप तो कहते हैं – चैतन्यदेव ने कहा था – 'मैं जो बीज डाले जा रहा हूँ, कभी न कभी इसका कार्य अवश्य होगा।' छत पर बीज था, जब घर ढह गया, तब उस

बीज से पेड़ पैदा हुआ।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, शिवनाथ आदि ने जो समाज बनाया है, उसमें भी बहुत से आदमी जाते हैं।

मणि – जी, वैसे ही आदमी जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ हाँ, सब संसारी आदमी जाते हैं। जो ईश्वर के लिए व्याकुल हैं – कामिनी-कांचन के त्याग करने की चेष्टा कर रहे हैं, ऐसे आदमी बहुत कम जाते हैं, यह ठीक है।

मणि – अगर यहाँ से एक प्रवाह बहे, तो बड़ा अच्छा हो – उस प्रवाह के वेग में सब बह जायँ। यहाँ से जो कुछ होगा, वह अवश्य ही एक विशेष ढर्रे का न होगा।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – जिस मनुष्य का जो भाव है, मैं उसके उस भाव की रक्षा करता हूँ। वैष्णवो से वैष्णव-भाव ही रखने के लिए कहता हूँ, शाक्तों से शाक्त-भाव; परन्तु इतना उनसे और कह देता हूँ कि यह मत कहो कि हमारा ही मार्ग सत्य है और बाकी सब मिथ्या – भ्रम है।

"हिन्दू, मुसलमान, ईसाई ये सब अनेक मार्गों से होकर एक ही जगह जा रहे हैं। अपने भाव की रक्षा करते हुए, उन्हें हृदय से पुकारने पर उनके दर्शन होते हैं।

"विजय की सास कहती हैं, 'तुम बलराम आदि से कह दो, साकार-पूजन की क्या जरूरत है? निराकार-सच्चिदानन्द को पुकारने से ही काम सिद्ध हो जायगा।'

"मैंने कहा, ऐसी बात मैं ही क्यों कहूँ और वे ही क्यों सुनने लगे? रुचिभेद के अनुसार – अधिकारियों में भेद देखकर एक ही चीज के कितने ही रूप कर दिये जाते हैं।"

मणि – जी हाँ, देश, काल और पात्र के भेद से सब अलग अलग रास्ते हैं। परन्तु चाहे जिस रास्ते से आदमी जाय, मन को शुद्ध करके और हृदय से व्याकुल हो जब उन्हें पुकारता है, तो उन्हें पाता अवश्य है। यही बात आप कहते हैं।

कमरे में श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हुए है। जमीन पर मुखर्जियों के सम्बन्धी हरि तथा मास्टर आदि बैठे हैं। एक अनजान आदमी श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके बैठा। श्रीरामकृष्ण ने बाद में कहा था, उसकी आँखों के लक्षण अच्छे नहीं थे – बिल्ली जैसी कंजी आँखें थीं।

श्रीरामकृष्ण – (हरि से) – देखूँ तो जरा तेरा हाथ। सब कुछ तो है – बड़े अच्छे लक्षण हैं।

"मुट्ठी खोल जरा। (अपने हाथ में हरि का हाथ लेकर जैसे तौल रहे हों) लड़कपन अब भी है। दोष अभी तक तो कुछ नहीं किया। (भक्तों से) हाथ देखकर मैं कह सकता हूँ कि अमुक खल है या सरल। (हरि से) क्या हुआ, तू ससुराल जाया कर – अपनी स्त्री से बातचीत किया कर – और इच्छा हो तो जरा आमोद-प्रमोद भी कर लिया कर।

(मास्टर से) "क्यों जी?" (मास्टर आदि हँसते है।)

मास्टर – जी, नयी हण्डी अगर खराब हो जाय, तो उसमे दूध फिर नहीं रखा जा सकता।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – अभी खराब नहीं हुई, यह तुमने कैसे जाना?

मुखर्जी दो भाई हैं, महेन्द्र और प्रियनाथ। ये नौकरी नहीं करते। उनकी आटे की चक्की है। प्रियनाथ पहले इंजीनियर का काम करते थे। श्रीरामकृष्ण हरि से मुखर्जी भाइयो की बात कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (हरि से) – बड़ा भाई अच्छा है न? – बड़ा सरल है।

हरि – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – सुनता हूँ, छोटा बड़ा कंजूस है, पर यहाँ आकर कुछ अच्छा हुआ है। उसने मुझसे कहा, 'मैं पहले कुछ नहीं जानता था।' (हरि से) क्या ये लोग कुछ दान आदि करते है?

हरि – ऐसा कुछ दीख तो नहीं पड़ता, इनके जो बड़े भाई थे, उनका देहान्त हो गया है। वे बड़े अच्छे थे, दान, ध्यान खूब करते थे।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर आदि से) – किसी के शरीर के लक्षणों को देखकर कहा जा सकता है कि उसकी बन जायेगी या नही। खल होने पर हाथ वजनदार होता है।

"नाक बैठी हुई होना अच्छा नहीं। शम्भू की नाक बैठी थी। इसीलिए इतने ज्ञान के होने पर भी वह सरल न था।

"कबूतर जैसा वक्ष:स्थल, टेढ़ी-मेढ़ी हड्डियाँ, मोटी कुहनी तथा बिल्ली के समान कंजी आँखे खराब लक्षण हैं।

"ओठ अगर डोमों के जैसे होते है, तो उसकी बुद्धि नीच होती है। विष्णुमन्दिर का पुजारी कुछ महीने के लिए बदले में काम करने आया था। उसके हाथ का मैं खाता नहीं था। एकाएक मेरे मुँह से निकल गया, वह डोम है। इसके बाद उसने एक दिन कहा – हाँ, मेरा घर डोम-टोले में है, मैं डोमों की तरह सूप इत्यादि बना लेता हूँ।

"और भी बुरे लक्षण हैं – एक आँख का काना होना, तिस पर वह भी कंजी आँख। काना फिर भी अच्छा है, परन्तु कंजा बड़ा खतरनाक होता है।

"महेश्वर का एक छात्र आया था। वह कहता था, मैं नास्तिक हूँ। उसने हृदय से कहा, 'मैं नास्तिक हूँ, तुम आस्तिक होकर मेरे साथ चर्चा करो।' तब मैंने उसे अच्छी तरह, देखा। देखा – उसकी आँख बिल्ली जैसी थी।

"चाल देखकर भी अच्छे और बुरे लक्षण समझे जाते हैं।"

श्रीरामकृष्ण कमरे से बरामदे में आकर टहलने लगे। साथ मास्टर और बाबूराम हैं।

श्रीरामकृष्ण – (हाजरा से) – एक आदमी आया था। मैंने देखा – उसकी आँखें

बिल्ली जैसी थी। उसने मुझसे पूछा – 'क्या आप ज्योतिष भी जानते है ? – मुझे कुछ कष्ट मिल रहा है।' मैने कहा – नही, तुम वराहनगर जाओ, वहाँ इसके पण्डित है।

बाबूराम और मास्टर नीलकण्ठ के नाटक की बात कह रहे है। बाबूराम नवीन सेन के घर से दक्षिणेश्वर लौटकर कल रात को यही थे। सुबह श्रीरामकृष्ण के साथ दक्षिणेश्वर मे नवीन नियोगी के यहाँ नीलकण्ठ का नाटक उन्होंने देखा था।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर और बाबूराम से) – तुम लोगो की क्या बातचीत हो रही है ?

मास्टर और बाबूराम - जी, नीलकण्ठ के नाटक की बातचीत हो रही है – और उसी गाने की बात - 'श्यामापदे आस, नदीतीरे वास।'

श्रीरामकृष्ण बरामदे मे है। टहलते हुए एकाएक मणि को एकान्त म ले जाकर कहने लगे – 'ईश्वर की चिन्ता मे जितना दूसरे आदमियो को भाव मालूम न हो उतना ही अच्छा है।' एकाएक यह कहकर श्रीरामकृष्ण चले गये।

श्रीरामकृष्ण हाजरा से बातचीत कर रहे है।

हाजरा – नीलकण्ठ ने तो आप से कहा है कि वह आयेगा।

श्रीरामकृष्ण – नही, रात मे जागता रहा है – ईश्वर की इच्छा से आप आये, तो दूसरी बात है।

श्रीरामकृष्ण बाबूराम से नारायण के यहाँ जाकर मिलने के लिए कह रहे है। आप नारायण को साक्षात् नारायण देखते है। इसीलिए उसे देखने को व्याकुल हो रहे है। बाबूराम से कह रहे है – 'तू बल्कि एक अंग्रेजी पुस्तक लेकर उसके पास जाना।'

(५)

भक्तो के साथ कीर्तनानन्द मे

श्रीरामकृष्ण कमरे मे अपने आसन पर बैठे हुए है। दिन के तीन बजे का समय होगा। नीलकण्ठ पाँच-सात साथियो के साथ श्रीरामकृष्ण के कमरे मे आये। श्रीरामकृष्ण उनकी अभ्यर्थना के लिए उठकर कुछ बढ़े। नीलकण्ठ कमरे के पूर्व द्वार से आये और श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण समाधिलीन हो गये है, उनके पीछे बाबूराम है, सामने नीलकण्ठ, मास्टर और आश्चर्य मे डूबे हुए नीलकण्ठ के साथी। खाट के उत्तर की ओर दीनानाथ खजानची आकर दर्शन कर रहे है। देखते ही देखते कमरा श्री ठाकुर-मन्दिर के आदमियो से भर गया। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण के भाव मे कुछ उपशम हुआ। श्रीरामकृष्ण जमीन पर चटाई पर बैठे हुए है। सामने नीलकण्ठ है और चारो ओर भक्त-मण्डली।

श्रीरामकृष्ण – (आवेश मे) – मै अच्छा हूँ।

नीलकण्ठ – (हाथ जोड़कर) – मुझे भी अच्छा कर लीजिये।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – तुम अच्छे तो हो। 'क' में आकार लगाने से 'का' होता है, उस पर फिर आकार लगाने से क्या फल होगा? 'का' पर एक और आकार लगाने से 'का' का 'का' ही रहता है! (सब हँसते हैं।)

नीलकण्ठ – इस संसार में पड़ा हुआ हूँ।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – तुम्हें संसार में उन्होंने और पाँच आदमियों के लिए रखा है।

"अष्ट पाश हैं। ये सब नहीं जाते। दो-एक पाश वे रख देते हैं – लोकशिक्षा के लिए। तुमने यह नाटक किया है, तुम्हारी भक्ति देखकर कितने ही आदमियों का उपकार होता है। और तुम अगर सब छोड़ दोगे, तो ये लोग (साथ के नाटकवाले) फिर कहाँ जायेंगे?

"वे तुम्हारे द्वारा काम कराये लेते हैं, काम पूरा हो जाने पर फिर तुम्हें लौटना न होगा। गृहिणी जब घर का कुल काम कर लेती है, सब को खिला-पिला लेती है – दास-दासियों को भी – तब खुद नहाने के लिए जाती है, उस समय बुलाने पर भी वह नहीं लौटती।"

नीलकण्ठ – मुझे आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – कृष्ण के वियोग से यशोदा की उन्मादावस्था थी। वे राधिका के पास गयी थी। उस समय राधिका ध्यान कर रही थीं। उन्होंने भावावेश में यशोदा से कहा – 'मैं वही मूल प्रकृति हूँ – आद्याशक्ति हूँ, तुम मुझसे वर की प्रार्थना करो।' यशोदा ने कहा, 'और क्या वर दोगी, यही कहो, जिससे मन, वाणी और कर्मों से भगवान की सेवा कर सकूँ, कानों से उनका नाम, उनके गुण सुनूँ, हाथों से उनकी और उनके भक्तों की सेवा कर सकूँ; आँखों से उनके रूप और उनके भक्तों के दर्शन कर सकूँ।'

"उनका नाम लेते हुए जब तुम्हारी आँखों में आँसुओं की धारा बह चलती है, तो तुम्हें चिन्ता किस बात की है? – उन पर तुम्हारा प्यार हो गया है।

"अनेक के जानने का नाम है अज्ञान और एक के जानने का नाम है ज्ञान – अर्थात् एक ही ईश्वर सत्य हैं और सर्व भूतों में विराजमान हैं। उनके साथ बातचीत करने का नाम है विज्ञान – उन्हें प्राप्त कर अनेक प्रकार से प्यार करने का नाम है विज्ञान।

"और यह भी है कि वे एक-दो के पार हैं, मन और वाणी से अतीत हैं। लीला से नित्य में जाना और नित्य से लीला में आना – इसका नाम है पक्की भक्ति।

"तुम्हारा वह गाना बड़ा सुन्दर है – 'श्यामापदे आस, नदी तीरे वास।'

"इसी से बन जायेगी – सब उनकी कृपा पर निर्भर है।

"परन्तु उन्हें पुकारना चाहिए। चुपचाप बैठे रहने से न होगा। वकील न्यायाधीश से सब कुछ कहकर अन्त में कहता है – 'मुझे जो कुछ कहना था, मैंने कह दिया, सब आपकी इच्छा।' "

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने कहा –

"तुमने सुबह इतना गाया, फिर तकलीफ करके यहाँ आये – परन्तु यहाँ सब 'ऑनरेरी' (Honorary) है।"

नीलकण्ठ – क्यों?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – मैं समझा, तुम जो कुछ कहोगे।

नीलकण्ठ – अनमोल रत्न ले जाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – वह अनमोल रत्न तुम्हारे ही पास है। 'का' में फिर से आकार लगाने से क्या लाभ? तुम्हारे पास रत्न न होता तो तुम्हारा गाना इतना अच्छा कैसे लगता? रामप्रसाद सिद्ध है, इसीलिए उसका गाना अच्छा लगता है।

"तुम्हारे गाने की बात सुनकर मैं स्वयं जा रहा था, परन्तु नियोगी फिर आया था कहने के लिए।"

श्रीरामकृष्ण छोटे तख्त पर अपने आसन पर जा बैठे। नीलकण्ठ से कहते हैं, जरा माता का नाम सुनने की इच्छा है।

नीलकण्ठ अपने साथियों के साथ गाने लगे। कई गाने गाये। एक गाने में एक जगह था – 'जिसकी जटा में गंगाजी शोभा पा रही हैं, उसने हृदय में राजराजेश्री को धारण कर रखा है।'

श्रीरामकृष्ण की प्रेमोन्मत्त अवस्था हो गयी। वे नृत्य करने लगे। नीलकण्ठ और भक्तगण उन्हें घेरकर गा रहे हैं और नृत्य कर रहे हैं।

गाना समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण नीलकण्ठ से कह रहे है – मैं तुम्हारा वह गाना सुनूँगा, कलकत्ते में जो सुना था।

मास्टर – वह है – 'श्रीगौरांग सुन्दर नव नटवर तपत-कांचन काय।' उसी के एक पद का अर्धांश गाते हुए श्रीरामकृष्ण फिर नाचने लगे। वह अपूर्व नृत्य जिन लोगों ने देखा है, वे कभी भूल न सकेंगे। कमरे में आदमी ठसाठस भर गये। सब लोग उन्मत्त हो रहे है। कमरा मानो श्रीवास का आँगन हो रहा है।

श्रीयुत मनोमोहन को भावावेश हो गया। उनके घर की कुछ स्त्रियाँ भी आयी हैं। वे उत्तर के बरामदे से यह अपूर्व नृत्य और संकीर्तन देख रही हैं। उनमें भी एक स्त्री को भावावेश हो गया था। मनोमोहन श्रीरामकृष्ण के भक्त हैं और राखाल के सम्बन्धी।

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे। उच्च संकीर्तन सुनकर चारों ओर के आदमी आकर जम गये। दक्षिण और उत्तर-पश्चिमवाले बरामदे में ठसाठस आदमी भर गये। जो लोग नाव पर जा रहे थे, उन्हें भी इस मधुर संकीर्तन के स्वर से आकर्षित होकर आना ही पड़ा।

कीर्तन समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण जगन्माता को प्रणाम कर रहे हैं। कह रहे हैं – "भागवत, भक्त, भगवान् – ज्ञानियों को नमस्कार, योगियों को नमस्कार, भक्तों को

नमस्कार।''

अब श्रीरामकृष्ण नीलकण्ठादि भक्तों के साथ पश्चिमवाले गोल बरामदे में आकर बैठे। शाम हो गयी है। आज रास-पूर्णिमा का दूसरा दिन है। चारों ओर चाँदनी फैली हुई है। श्रीरामकृष्ण नीलकण्ठ से आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं।

नीलकण्ठ – आप साक्षात् गौरांग हैं।

श्रीरामकृष्ण – यह सब क्या है! – मैं सब के दासों का दास हूँ।

''गंगा की ही तरंगें हैं, तरंगों की भी कभी गंगा होती है?''

नीलकण्ठ – आप कुछ भी कहें, हम लोग तो आपको ऐसा ही समझते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (कुछ भावावेश में करुणापूर्ण स्वर से) – भाई, अपने 'मैं' की तलाश करता हूँ, परन्तु कहीं खोजने पर भी नहीं मिलता।

''हनुमान ने कहा था – हे राम, कभी तो सोचता हूँ, तुम पूर्ण हो, मैं अंश हूँ – तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ, और जब तत्त्वज्ञान होता है, तब देखता हूँ, तुम्हीं 'मैं' हो और मैं ही 'तुम' हूँ।''

नीलकण्ठ – और क्या कहूँ, हम लोगों पर कृपा रखियेगा।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – तुम कितने ही आदमियों को पार कर रहे हो – तुम्हारा गाना सुनकर कितने ही आदमियों में उद्दीपना होती है।

नीलकण्ठ – मै पार कर रहा हूँ, आप कहते हैं; देखिये, खुद न डूबूँ।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – अगर डूबोगे तो उसी सुधा-ह्रद में।

नीलकण्ठ से मिलकर श्रीरामकृष्ण को आनन्द हुआ है। उनसे फिर कह रहे हैं – ''तुम्हारा यहाँ आना! – जो बड़ी साध्यसाधना के बाद कहीं मिलता हैं।'' यह कहकर श्रीरामकृष्ण एक गाना गाने लगे। अन्तिम पद में एक जगह है – ''चण्डी को ले आऊँगा।''

श्रीरामकृष्ण – चण्डी जब आ गयी हैं, तब कितने ही जटाधारी और योगी आयेंगे।

श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं। कुछ देर के बाद बाबूराम और मास्टर आदि से कह रहे हैं – ''मुझे बड़ी हँसी आ रही है। सोचता हूँ – इन्हें (नाटकवालों को) भी मैं गाना सुना रहा हूँ।''

नीलकण्ठ – हम लोग जो चारों ओर गाते फिरते हैं, उसका पुरस्कार आज मिला।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कोई चीज बेचने पर दूकानदार एक मुट्ठी और ऊपर से डाल देता है। वैसे ही तुम लोगों ने वहाँ गाया और एक मट्ठी यहाँ भी डाल दी।

परिच्छेद ९७

श्रीरामकृष्ण तथा कर्मकाण्ड

(१)

जितेन्द्रिय होने का उपाय - प्रकृतिभाव-साधना

आज शनिवार है। ११ अक्टूबर, १८८४ ई.। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे छोटे तख्त पर लेटे हुए है। दिन के दो बजे होंगे। जमीन पर मास्टर और प्रिय मुखर्जी बैठे हैं।

मास्टर एक बजे स्कूल छोड़कर दो बजे के लगभग दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर आ पहुँचे हैं।

श्रीरामकृष्ण – मैं यदु मल्लिक के घर गया था। जाते ही उसने पूछा – 'गाड़ी का किराया कितना है?' जब मेरे साथवालों ने कहा, तीन रुपये दो आने, तब उसने मुझसे पूछा। उधर उसके एक आदमी ने आड़ में बग्गीवाले से पूछा। उसने बताया – तीन रूपये चार आने। (सब हँसते हैं।) तब फिर हम लोगों के पास दौड़ा हुआ आया, पूछा, क्या किराया पड़ा?

"उसके पास दलाल आया था। उसने यदु से कहा, 'बड़ा बाजार में चार बिस्वा जगह बिक रही है, क्या आप लेंगे?' यदु ने पूछा, 'दाम क्या है? दाम में कुछ घटायेगा या नहीं?' मैंने कहा, 'तुम लोगे नहीं, सिर्फ ढोंग कर रहे हो।' तब मेरी ओर देखकर हँसने लगे। विषयी आदमियों का ऐसा ही दस्तूर है। पाँच आदमी आयेंगे, जायेंगे, बाजार में खूब नाम होगा।

"वह अधर के घर गया था। मैंने उससे कहा तुम अधर के यहाँ गये थे, इससे अधर को बड़ा आनन्द हुआ था। तब वह 'हें-हे' करने लगा था, पूछा – क्या सचमुच उन्हें आनन्द हुआ है?

"यदु के यहाँ एक दूसरा मल्लिक आया था, वह बड़ा चतुर और शठ है। उसकी आँखें देखकर मैं समझ गया। आँख की ओर देखकर मैंने कहा, 'चतुर होना अच्छा नहीं, कौआ बड़ा चतुर होता है, परन्तु विष्ठा खाता है!' उसे मैंने देखा, बड़ा अभागा है। यदु की माँ ने आश्चर्यचकित होकर कहा, 'बाबा, तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि उसके कुछ नहीं

है?' मैं चेहरे से समझ गया था।''

नारायण आये हुए हैं। वे भी जमीन पर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (प्रियनाथ से) – क्यों जी, तुम्हारा हरि तो बडा अच्छा है।

प्रियनाथ – ऐसा अच्छा क्या है – परन्तु हाँ, लड़का है।

नारायण – अपनी स्त्री को उसने माँ कहा है।

श्रीरामकृष्ण – यह क्या! मैं ही नहीं कह सकता और उसने माँ कहा! (प्रियनाथ से) बात यह है कि लड़का बड़ा शान्त है, ईश्वर की ओर मन है।

श्रीरामकृष्ण दूसरी बात करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – सुना तुमने, हेम क्या कहता था? बाबूराम से उसने कहा, ईश्वर ही एक सत्य हैं और सब मिथ्या। (सब हँसते हैं।) नहीं जी, उसने आन्तरिक भाव से कहा था। और मुझे घर ले जाकर कीर्तन सुनाने के लिए कहा था, परन्तु फिर हो नहीं सका। सुना उसके बाद कहता था – 'मैं अगर ढोलकरताल लूँगा तो आदमी क्या कहेंगे?' डर गया कि कहीं आदमी पागल न कहें।

''हरिपद घोषपाड़ा की एक स्त्री के फेर में पड़ गया है। छोडता नहीं! कहता है, गोद में लेकर खिलाती है। सुनो, कहता है, उसका गोपाल-भाव है। मैंने तो बहुत सावधान कर दिया है। कहता तो वात्सल्यभाव है, पर उसी वात्सल्य से फिर नीच भाव पैदा होते हैं।

''बात यह है कि स्त्री से बहुत दूर रहना पड़ता है, तब कहीं ईश्वर के दर्शन होते हैं। जिनका अभिप्राय बुरा है, उन सब स्त्रियों के पास का आना-जाना या उनके हाथ का कुछ खाना बहुत बुरा है। ये सत्त्व हरण करनेवाली हैं।

''बड़ी सावधानी से रहने पर तब कहीं भक्ति की रक्षा होती है। भवनाथ, राखाल इन लोगों ने एक दिन अपने हाथ से भोजन पकाया। सब के सब भोजन करने बैठे, उसी समय एक बाउल उन लोगों की पाँत में बैठ गया और बोला, मैं भी खाऊँगा। मैंने कहा, फिर पूरा न पड़ेगा। अगर बच जायेगा तो तुम्हें दिया जायेगा। परन्तु वह गुस्से मे आकर उठकर चला गया। विजया के दिन चाहे कोई भी आदमी अपने हाथ से खिला देता है, यह अच्छा नहीं है। शुद्धसत्व भक्त हो, तो उसके हाथ का खाया जा सकता है।

''स्त्रियों के पास बड़ी होशियारी से रहना चाहिए। गोपालभाव है, इस तरह की बातों पर बिलकुल ध्यान न देना चाहिए। स्त्रियों ने तीनों लोक निगल रखे हैं। कितनी स्त्रियाँ ऐसी हैं जो बढ़ती उम्र का लड़का देखकर नया जाल फैलाती हैं। इसीलिए गोपाल-भाव है।

''जिन्हें कुमार-अवस्था में ही वैराग्य होता है, जो बचपन से ही ईश्वर के लिए व्याकुल होकर घूमते हैं, उनकी श्रेणी एक अलग है। वे शुद्ध-कुलीन हैं। ठीक-ठीक वैराग्य के होने पर वे औरतों से पचास हाथ दूर रहते हैं, इसलिए कि कहीं उनका भाव भंग न हो। वे अगर स्त्रियों के फेर में पड़ जायँ, तो फिर शुद्धकुलीन नहीं रह जाते, भग्नभाव हो जाते है, फिर उनका स्थान नीचा हो जाता है। जिनका बिलकुल कौमार-वैराग्य है,

उनका स्थान बहुत ऊँचा है, उनकी देह में एक भी दाग नही लगा।

"जितेन्द्रिय किस तरह हुआ जाय? अपने मे स्त्री-भाव का आरोप करना पड़ता है। मै बहुत दिनो तक सखीभाव मे था। औरतो जैसे कपड़े और आभूषण पहनता था, उसी तरह सारी देह भी ढकता था। नही तो स्त्री (पत्नी) को आठ महीने तक पास रखा कैसे था? – हम दोनो ही माँ की सखियाँ थे।

"मै अपने को पु (पुरुष) नही कह सकता। एक दिन मै भाव मे था, उसने (श्रीरामकृष्ण की धर्मपत्नी ने) पूछा – 'मै तुम्हारी कौन हूँ?' मैने कहा – 'आनन्दमयी।' एक मत मे है, जिसके स्तन-स्थान मे घुण्डी हो, वह स्त्री है। अर्जुन और कृष्ण के घुण्डियाँ न थी।

"शिवपूजा का भाव जानते हो? शिवलिग की पूजा मातृस्थान और पितृस्थान की पूजा है। भक्त यह कहकर पूजा करता है – 'भगवान्, देखो, अब जैसे जन्म न लेना पड़े। शोणित, शुक्र के भीतर से मातृस्थान से होकर अब जैसे न आना हो।' "

(२)

साधक और स्त्री

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिभाव की बातचीत कर रहे है। श्रीयुत प्रिय मुखर्जी, मास्टर तथा और भी कुछ भक्त बैठे हुए है। इसी समय ठाकुरो के यहाँ के एक शिक्षक ठाकुरो के कई लडको को साथ लेकर आये।

श्रीरामकृष्ण - (भक्तो के प्रति) – श्रीकृष्ण के सिर पर मोरपंख रहता था, उसमे योनि-चिह्न होता है, इसका यह अर्थ है कि श्रीकृष्ण ने प्रकृति को सिर पर रखा था।

"कृष्ण रास-मण्डल मे गये। परन्तु वहाँ खुद प्रकृति बन गये। इसीलिए देखो, रास-मण्डल मे उनका प्रकृति-वेश है। स्वयं प्रकृतिभाव के बिना धारण किये कोई प्रकृति के सग का अधिकारी नही होता। प्रकृतिभाव के होने पर ही रास और सम्भोग होता है, परन्तु साधक की अवस्था मे बहुत सावधान रहना पड़ता है। उस समय स्त्रियो से बहुत दूर रहना पडता है। यहाँ तक कि भक्तिमती स्त्री होने पर भी उसके पास अधिक न जाना चाहिए। छत पर चढ़ते समय बहुत झूमना न चाहिए, क्योंकि इससे गिरने की सम्भावना है। जो कमजोर है, उन्हे दीवार के सहारे से चढ़ना पडता है। सिद्ध अवस्था की और बात है। भगवान के दर्शन के बाद फिर अधिक भय नही रह जाता। तब बहुत कुछ निर्भयता हो जाती है। छत पर एक बार चढ़ना हुआ तो बस, काम सिद्ध है। छत पर चढकर फिर वहाँ चाहे कोई जितना नाचे। और देखो जो कुछ छोड़कर छत पर जाया जाता है, वहाँ फिर उसका त्याग नही करना पड़ता। छत भी ईट, चूने और मसाले से बनी और सीढ़ियाँ भी उन्ही चीजों से बनी हैं। जिस स्त्री के निकट इतनी सावधानी रखनी पड़ती है, ईश्वर-दर्शन के

पश्चात् वही स्त्री साक्षात् भगवती जान पड़ती है। तब उसे माता समझकर उसकी पूजा करो, फिर विशेष भय की बात न रह जायेगी।

"बात यह है कि पाल छूकर फिर जो चाहे, करो।

"बहिर्मुखी अवस्था मे आदमी स्थूल देखता है। तब मन अन्नमय कोष में रहता है। इसके बाद है सूक्ष्मशरीर – लिंग शरीर। तब मनोमय और विज्ञानमय कोष में मन रहता है। इसके बाद है कारण शरीर। जब मन कारण शरीर मे आता है, तब आनन्द होता है, मन आनन्दमय, कोषमे रहता है। यह चैतन्यदेव की अर्धबाह्य दशा थी।

"इसके बाद मन लीन हो जाता है। मन का नाश हो जाता है। महाकारण में मन का नाश होता है। मन का नाश हो जाने पर फिर कोई खबर नहीं रहती। यह चैतन्यदेव की अन्तर्दशा थी।

"अन्तर्मुख अवस्था कैसी है, जानते हो? दयानन्द* ने कहा था, 'अन्दर आओ, दरवाजा बन्द कर लो।' अन्दर हरएक की पहुँच नही होती।

"मैं दीपशिखा पर यह भाव आरोपित करता था। उसकी ललाई को कहता था स्थूल, उसके भीतर सफेद भाग को कहता था सूक्ष्म, और सबके भीतर वाले काले हिस्से को कहता था कारण-शरीर।

"ध्यान ठीक हो रहा है इसके कई लक्षण है। एक यह है कि जड़ समझकर सिर पर पक्षी बैठ जाया करेगे।

"केशव सेन को मैंने पहले आदि-समाज में देखा था। वेदी पर कई आदमी बैठे हुए थे, बीच में केशव। मैंने देखा, काष्ठवत् बैठा हुआ था। तब मैंने सेजो बाबू से कहा – देखो, इसकी बंसी का चारा मछली खा रही है। वह उतना ध्यानी था इसी के बल से और ईश्वर की इच्छा से उसने जो कुछ सोचा वह हो गया।

"आँख खोलकर भी ध्यान होता है। बातचीत के बीच में भी ध्यान होता है। जैसे, सोचो, किसी को दाँत की बीमारी है। दर्द हो रहा है।"

ठाकुरों के शिक्षक – जी, यह बात खूब समझी हुई है। (हास्य)

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हाँ जी, दाँत की बीमारी अगर किसी को होती है, तो वह सब काम तो करता है, परन्तु मन उसका दर्द पर रखा रहता है। इस तरह ध्यान आँख खोलकर भी होता है और बातचीत करते हुए भी होता है।

शिक्षक – उनका नाम पतितपावन है – यही हम लोगों का भरोसा है। वे दयामय हैं!

श्रीरामकृष्ण – सिक्खों ने भी कहा था, वे दयामय हैं। मैंने पूछा वे कैसे दयामय है? उन्होंनें कहा, 'क्यों महाराज, उन्होंने हमारी सृष्टि की है, हमारे लिए इतनी चीजें तयार की हैं, पग-पग पर हमे विपत्ति से बचाते हैं।' तब मैंने कहा, 'वे हमें पैदा करके हमारी देखरेख

---

* आर्य समाज के संस्थापक

कर रहे हैं, खिलाते-पिलाते है इसमे कौनसी बड़ी तारीफ की बात है ? तुम्हारे अगर बच्चा हो तो क्या उसकी देखरेख कोई दूसरा आकर करेगा?''

शिक्षक – जी, किसी का काम जल्दी हो जाता है और किसी का नही होता, इसका क्या अर्थ है ?

श्रीरामकृष्ण – बात यह है कि बहुत कुछ तो पूर्वजन्म के संस्कारो से होता है। लोग सोचते है कि एकाएक हो रहा है।

''किसी ने सुबह को प्याले भर शराब पी थी। उतने ही से मतवाला हो गया, झूमने लगा। लोग आश्चर्य करने लगे। वे सोचने लगे, यह प्याले भर मे ही इतना मतवाला कैसे हो गया? एक ने कहा, अरे रात भर इसने शराब पी होगी।

''हनुमान ने सोने की लंका जला दी। लोग आश्चर्य मे पड़ गये कि एक बन्दर ने कैसे यह सब जला दिया; परन्तु फिर कहने लगे, वास्तव मे बात यह है कि सीता की गरम साँस और राम के कोप से लंका जली है।

''और लालाबाबू को देखो। इतना धन है, पूर्वजन्म के संस्कार के बिना क्या एकाएक कभी वैराग्य हो सकता था? और रानी भवानी – स्त्री होने पर भी उसमे कितनी ज्ञान भक्ति थी!

''अन्तिम जन्म मे सतोगुण होता है। तभी ईश्वर पर मन जाता है, उनके लिए विकलता होती है, और तरह तरह के विषय-कर्मो से मन हटता जाता है।

''कृष्णदास पाल आया था। मैंने देखा उसमे रजोगुण था। परन्तु हिन्दू है, इसलिए जूते बाहर खोलकर रखे, कुछ बातचीत करके देखा, भीतर कुछ नही था। मैने पूछा, 'मनुष्य का कर्तव्य क्या है?' उसने कहा – 'संसार का उपकार करना।' मैने कहा, 'क्यो जी, तुम हो कौन? और उपकार भी क्या करोगे और संसार क्या इतना छोटा है कि तुम उसका उपकार कर सकोगे?''

नारायण आये है। श्रीरामकृष्ण को बड़ा आनन्द है। नारायण को छोटी खाट पर अपनी बगल मे बैठाया। देह पर हाथ फेरते हुए स्नेह करने लगे। खाने के लिए मिठाई दी और स्नेहपूर्वक पानी के लिए पूछा। नारायण मास्टर के स्कूल मे पढ़ते है। श्रीरामकृष्ण के पास आते है, इसलिए घर मे मारे जाते है। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए स्नेहपूर्वक नारायण से कह रहे है, – ''तू एक चमड़े का कुर्ता पहना कर, तो कम लगेगा।''

फिर नारायण से कहने लगे – ''हरिपद की वह बनी हुई माँ आयी थी। मैंने हरिपद को खूब सावधान कर दिया है। वे लोग घोषपाड़ा के मतवाले है। मैंने उससे पूछा था, क्या तुम्हारे कोई 'आश्रय' है? उसने एक चक्रवर्ती को बतलाया।''

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – अहा! उस दिन नीलकण्ठ आया था। कैसा भाव है! – और एक दिन आने के लिए कह गया है। गाना सुनायेगा। आज उधर नाच हो रहा है, जाओ – देखो न। (रामलाल से) तेल नहीं है; (हण्डी देखकर) हण्डी में तो नहीं है।

(३)

पुरुषप्रकृति-विवेक-योग। राधा-कृष्ण कौन हैं?

श्रीरामकृष्ण टहल रहे है, कभी घर के भीतर, कभी घर के दक्षिण ओर के बरामदे में। कभी घर के पश्चिम ओर के गोल बरामदे में खड़े होकर गंगा-दर्शन कर रहे हैं।

कुछ देर बाद फिर छोटी खाट पर बैठे। दिन के तीन बज चुके है। भक्तगण फिर जमीन पर आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर चुपचाप बैठे हैं। रह-रहकर घर की दीवार की ओर देख रहे है। दीवार पर बहुत से चित्र हैं। श्रीरामकृष्ण की बाई ओर श्रीवीणापाणि का चित्र है। उससे कुछ दूर पर नित्यानन्द और गौरांग भक्त-समाज में कीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण के सामने ध्रुव, प्रह्लाद और जगन्माता काली की मूर्ति है, दाहिनी ओर दीवार पर राजराजेश्वरी की मूर्ति है। पीछे ईसा की तस्वीर है – पीटर डूबे जा रहे हैं और ईसा पानी से निकाल रहे है। एकाएक श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा – "देखो, घर में साधुओं और संन्यासिओं का चित्र रखना अच्छा हैं। सुबह उठकर दूसरे का मुँह देखने से पहले साधुओं और संन्यासिओं का मुख देखकर उठना अच्छा है। दीवार पर अंग्रेजी तस्वीर – धनी, राजा और रानी की तस्वीरें – रानी के लड़कों की तस्वीरे – साहब और मेम टहल रहे हैं, उनकी तस्वीरें – इस तरह की तस्वीरें आदि रखना रजोगुणी के लक्षण हैं।

"जिस तरह के संग में रहा जाता है, वैसा ही स्वभाव भी हो जाता है। इसीलिए तस्वीरों में भी दोष है। फिर मनुष्य जैसा है, वैसे ही संगी भी खोजता है। जो परमहंस होते हैं, वे पाँच-छ: साल के दो-चार लड़के अपने पास रख लेते हैं – उन्हें पास बुलाया करते है। उस अवस्था में बच्चों के बीच रहना खूब सुहाता है। बच्चे सत्त्व, रज और तम किसी गुण के वश नहीं है।

"पेड़ देखने पर तपोवन की याद आती है, ऋषियो के तपस्या करने का भाव जाग जाता है।"

सींती के ब्राह्मण कमरे मे आये, श्रीरामकृष्ण को उन्हांने प्रणाम किया। उन्होंने काशी मे वेदान्त पढ़ा था।

श्रीरामकृष्ण – क्यों जी, तुम कैसे हो? बहुत दिन बाद आये।

पण्डित – (सहास्य) – जी, गृहस्थी के काम से छुट्टी नहीं मिली, आप तो जानते ही है।

पण्डितजी ने आसन ग्रहण किया। उनसे बातचीत हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – बनारस तो बहुत दिन रहे, क्या क्या देखा कुछ कहो तो, कुछ दयानन्द की बातें बताओं।

पण्डित – दयानन्द से मुलाकात हुई थी। आपने तो देखा ही था?

श्रीरामकृष्ण – मै देखने के लिए गया था। तब उस तरफ के एक बगीचे मे वह टिका हुआ था। उस दिन केशव सेन के आने की बात थी। वह चातक की तरह उनके लिए तरस रहा था। बड़ा पण्डित है। बंगभाषा को 'गौराण्ड' भाषा कहता था। देवता को मानता था। केशव नहीं मानता था। दयानन्द कहता था, ईश्वर ने इतनी चीजे बनायीं और देवता क्या नही बना सकते थे? निराकारवादी है। कप्तान 'राम राम' कह रहा था, उसने कहा इससे 'बर्फी वर्फी' क्यो नहीं रटते?

पण्डित – काशी में पण्डितों के साथ दयानन्द का खूब शास्त्रार्थ हुआ। सब एक तरफ थे और वह एक तरफ। फिर लोगों ने उसे ऐसा बनाया कि भागते बन पड़ी। सब एक साथ ऊँची आवाज से कहने लगे – 'दयानन्देन यदुक्तं तद्धेयम्।'

"और कर्नल अलकट को भी मैंने देखा था। वे लोग कहते है, महात्मा भी हैं। और चन्द्रलोक, सूर्यलोक, नक्षत्रलोक ये भी सब है। सूक्ष्म शरीर उन सब स्थानों मे जा सकता है – इस तरह की बहुतसी बातें कहीं। अच्छा महाराज, यह विचार आपको कैसा जान पड़ता है?"

श्रीरामकृष्ण – "भक्ति ही एकमात्र सार वस्तु है – ईश्वर की भक्ति। वे क्या भक्ति की खोज करते हैं? – अगर ऐसा हो, तो अच्छा है। अगर ईश्वरलाभ उनका उद्देश्य हो तो अच्छा है। चन्द्रलोक, सूर्यलोक, नक्षत्रलोक और महात्मा को लेकर ही अगर कोई रहे, तो ईश्वर की खोज इससे नहीं होती। उनके पाद-पद्मों में भक्ति होने के लिए साधना करनी चाहिए, व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए। अनेक वस्तुओं से मन को खीचकर उनमे लगाना चाहिए।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण रामप्रसाद के गीत गाने लगे –

मन! अंधेरे में पागल की तरह उनके तत्त्व का विचार तुम क्या करते हो? वह तो भाव का विषय है, भाव के बिना अभाव के द्वारा क्या वह कभी मिल सकता है? उस भाव के लिए योगीजन युग-युगान्तर तक तपस्या किया करते हैं। भाव का उदय होने पर वह मनुष्य को उसी तरह पकड़ता है जैसे लोहे को चुम्बक पत्थर।

"और चाहे शास्त्र कहो, चाहे दर्शन कहो, चाहे वेदान्त, किसी में वे नही है। उनके लिए प्राणों के विकल हुए बिना कही कुछ न होगा।

"षड्दर्शन, निगमागम और तन्त्रसार से उनके दर्शन नहीं होते। वे तो भक्ति-रस के रसिक है, आनन्दपूर्वक हृदय-पुर में विराजमान हैं।

"खूब व्याकुल होना चाहिए। एक गाने में है – राधिका के दर्शन सब को नहीं होते।

अवतार भी साधना करते हैं – लोकशिक्षार्थ

"साधना की बड़ी जरूरत है। एकाएक क्या कभी ईश्वर के दर्शन होते है।

"एक ने पूछा, हमें ईश्वर के दर्शन क्यों नहीं होते? मेरे मन में उस समय यह बात उठी; – मैंने कहा, 'बड़ी मछली पकड़ना चाहते हो, तो उसके लिए आयोजन करो। जहाँ

मछली पकड़ना चाहते हो, वहाँ मसाला डालो। डोरी-बंसी लाओ। मसाले की गन्ध पाकर गहरे जल से मछली उसके पास आयेगी। जब पानी हिलने लगे, तब तुम समझ जाओ कि बड़ी मछली आयी है।'

"अगर मक्खन खाने की इच्छा है तो 'दूध मे मक्खन है, दूध मे मक्खन है', ऐसा कहने से क्या होगा? मेहनत करनी पड़ती है, तब मक्खन निकलता है। 'ईश्वर है', 'ईश्वर है' इस तरह बकते रहने से क्या कभी ईश्वर के दर्शन हो सकते है? साधना चाहिए।

"भगवती ने स्वयं पञ्चमुण्डी आसन पर बैठकर तपस्या की थी – लोकशिक्षा के लिए। श्रीकृष्ण साक्षात् पूर्ण ब्रह्म है, परन्तु उन्होने भी नपस्या की थी, तब राधायन्त्र उन्हे पड़ा हुआ मिल गया था।

"कृष्ण पुरुष है और राधा प्रकृति, चित्‌शक्ति आद्याशक्ति है। राधा प्रकृति है – त्रिगुणमयी, इनके भीतर सत्त्व, रज और तम तीन गुण है। जैसे प्याज का छिलका निकालते जाओ, पहले लाल और काला दोनो रंग का मिला हुआ हिस्सा निकलता है, फिर लाल निकलता रहता है, फिर सफेद। वैष्णव शास्त्रो मे लिखा है – कामराधा, प्रेमराधा, नित्यराधा। कामराधा चन्द्रावली हैं, प्रेमराधा श्रीमती। गोपाल को गोद मे लिए हुए नित्यराधा को नन्द ने देखा था।

"यह चित्-शक्ति और वेदान्त का ब्रह्म दोनो अभेद है। जैसे जल और उसकी हिमशक्ति। पानी की हिमशक्ति को सोचने से पानी को भी सोचना पड़ता है और पानी को सोचने से उसकी हिमशक्ति भी आ जाती है। साँप की तिर्यक् गति को सोचने से साँप को भी सोचना पड़ता है। ब्रह्म कब कहते है? – जब वे निष्क्रिय है या कार्य से निर्लिप्त है। पुरुष जब कपड़ा पहनता है, तब भी वह पुरुष ही रहता है। पहले दिगम्बर था, अब साम्बर हो गया है – फिर दिगम्बर हो सकता है। साँप के भीतर जहर है, परन्तु साँप को इससे कुछ नही होता। जिसे वह काटता है, उसी के लिए जहर है। ब्रह्म स्वयं निर्लिप्त है।

"नाम और रूप जहाँ है, वही प्रकृति का ऐश्वर्य है। सीता ने हनुमान से कहा था – 'वत्स, एक रूप से मै ही राम हूँ और एक रूप से सीता बनी हुई हूँ – एक रूप से मै इन्द्र हूँ और एक रूप से इन्द्राणी हूँ – एक रूप से ब्रह्मा हूँ और एक रूप से ब्रह्माणी – एक रूप से रुद्र हूँ और एक रूप से रुद्राणी। नाम-रूप जो कुछ है, सब चित्-शक्ति का ऐश्वर्य है। ध्यान और ध्याता भी चित्-शक्ति के ही ऐश्वर्य मे से है। जब तक यह बोध है कि मै ध्यान कर रहा हूँ, तब तक उन्ही का इलाका है। (मास्टर से) इन सब की धारणा करो। वेदो और पुराणो को सुनना चाहिए और वे जो कुछ कहते हैं, उसकी धारणा करनी चाहिए।

(पण्डित से) "कभी कभी साधु-संग करना अच्छा है। रोग तो आदमी को लगा ही हुआ है। साधु-संग से उसका बहुत कुछ उपशम होता है।

"मै और मेरा-पन यही अज्ञान है। 'हे ईश्वर! सब कुछ तुम्ही कर रहे हो और मेरे अपने आदमी तुम्ही हो। यह सब घर, द्वार, परिवार, आत्मीय, बन्धु, सम्पूर्ण संसार तुम्हारा

है।' इसी का नाम है यथार्थ ज्ञान। इसके विपरीत 'मै ही सब कुछ कर रहा हूँ, कर्ता मै, घर, द्वार, कुटुम्ब परिवार, लडके-बच्चे सब मेरे है' – इसका नाम है अज्ञान।

"गुरु शिष्य को ये सब बाते समझा रहे थे। कह रहे थे – एकमात्र ईश्वर ही तुम्हारे अपने है, और कोई अपने नही। शिष्य ने कहा, 'महाराज, माता और स्त्री ये लोग तो मेरी बड़ी खातिर करते है, अगर मुझे नही देखते तो तमाम संसार मे उनके लिए दु:ख का अँधेरा छा जाता है, तो देखिये, वे मुझे कितना प्यार करती है।' गुरु ने कहा 'यह तुम्हारे मन की भूल है। मै तुम्हे दिखलाये देता हूँ कि तुम्हारा कोई नही है। दवा की ये गोलियाँ अपने पास रखो, घर जाकर गोलियो को खाना और बिस्तरे पर लेटे रहना। लोग समझेगे, तुम्हारी देह छूट गयी है। मै उसी समय पहुँच जाऊँगा।'

"शिष्य ने वैसा ही किया। घर जाकर उसने गोलियो को खा लिया। थोडी देर मे वह बेहोश हो गया। उसकी माँ, उसकी स्त्री, सब रोने लगी। उसी समय गुरु वैद्य के रूप मे वहाँ पहुँच गये। सब सुनकर उन्होने कहा, 'अच्छा, इसकी एक दवा है – यह फिर से जी सकता है। परन्तु एक बात है। यह दवा पहले आप मे से किसी को खानी चाहिए, फिर यह उसे दी जायेगी। परन्तु इसका जो आत्मीय यह गोली खायेगा, उसकी मृत्यु हो जायेगी। और यहाँ तो इसकी माँ भी है? और शायद स्त्री भी है, इनमे से कोई न कोई अवश्य ही दवा खा लेगी। इस तरह यह जी जायेगा।

"शिष्य सब कुछ सुन रहा था। वैद्य ने पहले उसकी माता को बुलाया। माँ रोती हुई धूल मे लोट रही थी। उसके आने पर कविराज ने कहा, 'माँ, अब तुम्हे रोना न होगा। तुम यह दवा खाओ तो लडका अवश्य जी जायेगा, परन्तु तुम्हारी इससे मृत्यु हो जायेगी।' मा दवा हाथ मे लिये सोचन लगी। बहुत कुछ सोच-विचार के पश्चात् रोते हुए कहन लगी – 'बाबा, मेरे एक दूसरा लडका और एक लडकी है, मै अगर मर जाऊँगी, तो फिर उनका क्या होगा? यही सोच रही हूँ। कोन उनको देख रेख करेगा, कौन उन्हे खाने को देगा, यही सोच रही हूँ।' तब उसकी स्त्री को बुलाकर दवा दी गयी। उसकी स्त्री भी खूब रो रही थी। दवा हाथ मे लेकर वह भी सोचने लगी। उसने सुना था, दवा खाने पर मृत्यु अनिवार्य है। तब उसने रोते हुए कहा, 'उन्हे जो होना था सो तो हो गया, अब मेरे बच्चा के लिए क्या होगा? उनकी सेवा करनेवाला कोन है? फिर मै कैसे दवा खाऊँ?' तब तक शिष्य पर जो नशा था, वह उतर गया। वह समझ गया कि कोई किसी का नही है। तुरन्त उठकर वह गुरु के साथ चला गया। गुरु ने कहा, तुम्हारे अपने बस एक ही आदमी है – ईश्वर।

"अतएव उनके पादपद्मो मे जिससे भक्ति हो – जिससे वे मेरे है, इस तरह के सम्बन्ध से प्यार हो, वही करना चाहिए और वही अच्छा भी है। देखते हो, ससार दो दिन के लिए है। इसमे और कुछ नही है।"

पण्डित – (सहास्य) – जी, जब यहाँ आता हूँ, तब उस दिन पूर्ण वैराग्य हो जाता है। इच्छा होती है कि संसार का त्याग करके कही चला जाऊँ।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, त्याग क्यों करना होगा? आप लोग मन में त्याग का भाव लाइये। संसार में अनासक्त होकर रहिये।

"सुरेन्द्र ने कभी कभी आकर रहने की इच्छा से एक बिस्तरा यहाँ ला रखा था। दो-एक दिन आया भी था। फिर उसकी बीबी ने कहा, 'दिन के समय चाहे जहॉ जाकर रहो, रात को घर से न निकलने पाओगे।' तब सुरेन्द्र क्या कहता? अब रात के समय कहीं रहने का उपाय भी नहीं रह गया।

"और देखो, सिर्फ विचार करने से क्या होता है? उनके लिए व्याकुल होओ, उन्हे प्यार करना सीखो। ज्ञान और विचार ये पुरुष हैं, इनकी पहुँच बस दरवाजे तक है। भक्ति स्त्री है, वह भीतर भी चली जाती है।

"इसी तरह के एक भाव का आश्रय लेना पड़ता है – तब मनुष्य ईश्वर को पाता है। सनकादि ऋषि शान्तभाव लेकर रहते थे। हनुमान दासभाव में थे। श्रीदास, सुदाम आदि व्रज के चरवाहों का सख्यभाव था। यशोदा का वात्सल्यभाव था – ईश्वर पर उनकी सन्तानबुद्धि थी। श्रीमती का मधुरभाव था।

"हे ईश्वर, तुम प्रभु हो, मै दास हूँ, इस भाव का नाम है – दासभाव। साधक के लिए यह भाव बहुत अच्छा है।"

पण्डित – जी हॉ।

(४)

भक्तियोग और कर्मयोग। ज्ञान का लक्षण

सीती के पण्डितजी चले गये हैं। सन्ध्या हो गयी। काली मन्दिर में देवताओ की आरती होने लगी। श्रीरामकृष्ण देवताओं को प्रणाम कर रहे हैं। छोटी खाट पर बैठे हुए है, मन ईश्वर-चिन्तन में है। कुछ भक्त आकर जमीन पर बैठ गये। घर में शान्ति है।

एक घण्टा रात बीच चुकी है। ईशान मुखोपाध्याय और किशोरी आये। वे लोग श्रीरामकृष्णदेव को प्रणाम कर बैठ गये। पुरश्चरण आदि शास्त्रोक्त कर्मों पर ईशान का बड़ा ही अनुराग है। वे कर्मयोगी है। अब श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – ज्ञान ज्ञान कहने ही से कुछ थोड़े ही होता है? ज्ञान के दो लक्षण है। पहला है अनुराग, अर्थात् ईश्वर को प्यार करना। केवल ज्ञान का विचार कर रहे हैं, परन्तु ईश्वर पर अनुराग नही है, प्यार नहीं है तो वह मिथ्या है। एक और लक्षण है – कुण्डलिनी शक्ति का जागना। कुण्डलिनी जब तक सोती रहती है, तब तब ज्ञान नहीं होता। बैठे हुए पुस्तकें पढ़ते जा रहे हैं, विचार कर रहे हैं। परन्तु भीतर व्याकुलता नहीं है, वह ज्ञान का लक्षण नहीं है। कुण्डलिनी शक्ति के जागने पर भाव, भक्ति और प्रेम यह सब होता है। इसे ही भक्तियोग कहते हैं।

"कर्मयोग* बड़ा कठिन है, उससे कुछ शक्ति होती है, विभूतियाँ मिलती हैं।"

ईशान – मैं हाजरा महाशय के पास जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। कुछ देर बाद ईशान फिर कमरे में आये, साथ साथ हाजरा भी थे। श्रीरामकृष्ण चुपचाप बैठे हुए है। कुछ देर बाद हाजरा ने ईशान से कहा – "चलिये, अभी ये ध्यान करेंगे।" ईशान और हाजरा चले गये।

श्रीरामकृष्ण चुपचाप बैठे हुए हैं। कुछ समय में सचमुच ध्यान करने लगे। उँगलियों पर जप कर रहे हैं। वही हाथ एक बार सिर पर रखा, फिर ललाट पर, फिर क्रमश· कण्ठ, हृदय और नाभि पर।

भक्तों को जान पड़ा, श्रीरामकृष्ण षट्पद्मों में आदि-शक्ति का ध्यान कर रहे है। शिवसंहिता आदि शास्त्रों में जो योग की बाते है, क्या वे यही हैं?

(५)

निवृत्तिमार्ग। वासना का मूल - महामाया

ईशान हाजरा के साथ काली-मन्दिर गये हुए थे। श्रीरामकृष्ण ध्यान कर रहे थे। रात के साढ़े सात बजे का समय होगा। उसी समय अधर आ गये।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण काली का दर्शन करने गये। दर्शन कर और पादपद्मों का निर्माल्य लेकर उन्होंने सिर पर धारण किया। माता को प्रणाम कर उन्होंने प्रदक्षिणा की और चामर लेकर व्यजन करने लगे। श्रीरामकृष्ण प्रेम मे मतवाले हो रहे हैं। बाहर आते समय उन्होंने देखा, ईशान सन्ध्या कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (ईशान से) – क्या तुम तब के आये हुए सन्ध्योपासना ही कर रहे हो? एक गाना सुनो।

ईशान के पास बैठकर श्रीरामकृष्ण मधुर स्वर से गाने लगे – 'गया, गंगा, प्रभास, काशी, काँची कौन चाहता है, अगर काला काली कहते हुए, वह अपनी देह त्याग सके? त्रिसन्ध्या की बात लोग कहते हैं, परन्तु वह यह कुछ नही चाहता। मन्ध्या खुद उसकी खोज में फिरती है परन्तु कभी सन्धि नहीं पाती। दया, व्रत, दान आदि 'मदन' को कुछ नहीं सुहाते, ब्रह्ममयी के चरणकमल ही उसका याग-यज्ञ है।

"सन्ध्या उतने ही दिनों के लिए है, जब तक उनके पादपद्मो मे भक्ति न हो – उनका नाम लेते हुए आँखों में जब तक आँसू न आ जायँ और शरीर में रोमांच न हो जाय।

"रामप्रसाद के एक गाने में है – मैंने युक्ति और मुक्ति सब कुछ प्राप्त कर लिया है, क्योंकि काली को ब्रह्म जान मैने धर्माधर्म का त्याग कर दिया है।

"जब फल होता है तब फूल झड़ जाता है। जब भक्ति होती है, तब ईश्वर मिलते हैं – तब सन्ध्यादि कर्म दूर हो जाते हैं।

"गृहस्थ की बहू के जब लड़का होनेवाला होता है, तब उसकी सास काम घटा देती है। नौ महीने का गर्भ होने पर फिर घर का काम छूने नही देती। फिर सन्तान पैदा होने पर, वह बच्चे को ही गोद मे लिये रहती है और उसी की सेवा करती है। फिर उसके लिए कोई काम नही रह जाता। ईश्वर-प्राप्ति होने पर सन्ध्यादि कर्म छूट जाते है।

"तुम इस तरह धीमा तिताला बजाते रहोगे, तो कैसे काम चलेगा? तीव्र वैराग्य चाहिए। १५ महीने का एक साल बनाओगे तो क्या होगा? तुम्हारे भीतर मानो बल है ही नही – मानो भीगे हुए चिउड़े के समान हो। उठकर कमर कसो।

"इसीलिए मुझे यह गाना नही अच्छा लगता – 'हरि सो लागि रहो रे भाई। तेरी बनत बनत बनि जाई।।' 'बनत बनत बनि जाई' मुझे नही सुहाता। तीव्र वैराग्य चाहिए। हाजरा से भी मै यही कहता हूँ।

"पूछते हो, क्यो तीव्र वैराग्य नही होता? इसमे रहस्य है। भीतर वासनाएँ और सब प्रवृत्तियाँ है। यही मै हाजरा से कहता हूँ। कामारपुकुर मे खेतो मे पानी लाया जाता है। खेतो के चारो और मेड़ बँधी रहती है, इसलिए कि कही पानी निकल न जाय। कीच की मेड बनायी जाती है और मेड़ के बीच बीच मे नालियाँ कटी रहती है। लोग जपतप करते तो है परन्तु उनके पीछे वासना रहती है। उसी वासना की नालियो मे सब निकल जाया करता है।

'बंसी से मछली पकड़ी जाती है। बाँस तो सीधा ही होता है, परन्तु सिरे पर झुका हुआ इसलिए रहता है कि उससे मछली पकडी जाय। वासना मछली है। इसीलिए मन संसार म झुका हुआ है। वासना के न रहने पर मन की सहज ही ऊर्ध्वगति होती है – ईश्वर की ओर।

"ठीक जैसे तराजू के काँटे। कामिनी-कांचन का दबाव है, इसलिए ऊपर का काँटा नीचे के काँटे की बराबरी पर नही रहता, इसलिए लोग योगभ्रष्ट हो जाते है। तुमने दीपशिखा देखी है न? जरा सी हवा के लगने पर चंचल होती है। योगावस्था दीपशिखा की तरह है – जहाँ हवा नही लगती।

"मन तितर-बितर हो रहा है। कुछ चला गया है ढाका, कुछ दिल्ली और कुछ कूचबिहार मे है। उस मन को इकट्ठा करना होगा। इकट्ठा करके एक जगह रखना होगा। तुम अगर सोलह आने का कपड़ा खरीदो, तो कपड़ेवाले को सोलह आने तुम्हे देने पड़ेगे या नही? कुछ विघ्न के रहने पर फिर योग नही हो सकता। टेलीग्राफ के तार मे अगर कही जरासा छेद हो जाय तो फिर तार नही जा सकता।

"परन्तु संसार मे हो तो क्या हुआ? सब कर्मो का फल ईश्वर को समर्पण करना चाहिए। स्वयं किसी फल की कामना न करनी चाहिए।

"परन्तु एक बात है। भक्ति की कामना कामनाओ मे नही है। भक्ति की कामना – भक्ति के लिए प्रार्थना कर सकते हो।

"भक्ति का तमोगुण लाओ, माँ से जोर से कहो। रामप्रसाद के एक गाने में है – 'यह माता और पुत्र का मुकदमा है, बड़ी धूम मची है, जब मैं अपने को तेरी गोद में बैठा लूँगा, तब तेरा पिण्ड छोड़ूँगा।

"त्रैलोक्य ने कहा था, 'जब मैं कुटुम्ब मे पैदा हुआ हूँ, तो मेरा हिस्सा जरूर है।'

"अरे वह तो तुम्हारी अपनी माँ है, कुछ बनी-बनायी माँ थोड़े ही है? - न धर्म की माता है। अपना जोर उस पर न चलेगा, तो और किस पर चलेगा? कहो - 'माँ, मैं अठमासा बच्चा थोड़े ही हूँ कि आँख दिखाओगी तो डर जाऊँगा? अबकी बार श्रीनाथ के इजलास मे नालिश करूँगा और एक ही सवाल पर डिगरी लूँगा।'

"अपनी माँ है जोर करो। जिसकी जिसमें सत्ता होती है, उसका उस पर आकर्षण भी होता है। माँ की सत्ता हमारे भीतर है इसीलिए तो माँ की ओर इतना आकर्षण होता है। जो यथार्थ शैव है, वह शिव की सत्ता भी पाता है। कुछ कण उसके भीतर आ जाते हैं। जो यथार्थ वैष्णव है, नारायण की सत्ता उसके भीतर आती हैं। और अब तो तुम्हें विषयकर्म भी नहीं करना पड़ता, अब कुछ दिन उन्ही की चिन्ता करो। देख तो लिया कि संसार में कुछ नहीं है।

"और तुम बिचवाई और मुखियाई यह सब क्या किया करते हो? मैंने सुना है, तुम लोगों के झगड़ा का फैसला किया करते हो – तुम्हे लोग सर-पंच मानते हैं। यह तो बहुत दिन कर चुके। जिन्हें यह सब करना है, वे करे। तुम इस समय उनके पादपद्मों में अधिक मन लगाओ। क्यो किसीकी बला अपने सिर लेते हो?

"शम्भू ने कहा था, अस्पताल और दवाखाने बनवाऊँगा। वह भक्त था। इसीलिए मैंने कहा, ईश्वर के दर्शन होने पर क्या उनसे अस्पताल और दवाखाने चाहोगे?

"केशव सेन ने पूछा, ईश्वर के दर्शन क्यो नही होते? मैंने कहा, लोक-मर्यादा, विद्या यह सब लेकर तुम हो न, इसीलिए नही होता। बच्चा जब तक खिलौना लिये रहता है तब तक माँ नही आती। कुछ देर बाद खिलौना फेककर जब वह चिल्लाने लगता है, तब माँ तवा उतारकर दौड़ती है।

"तुम भी मुखियाई कर रहे हो। माँ सोच रही है मेरा बच्चा मुखिया बनकर अच्छी तरह तो है, अच्छा रहे।"

ईशान ने श्रीरामकृष्ण के चरणो का स्पर्श करके विनयपूर्वक कहा – "मैं अपनी इच्छा से यह सब नही करता।"

श्रीरामकृष्ण – यह मैं जानता हूँ। वह माता का ही खेल है, उन्हीं की लीला है। संसार मे फँसा रखना, यह महामाया की ही इच्छा है। बात यह है कि संसार में कितनी ही नावें तैरती और डूबती रहती हैं। और कितनी ही पतंगें उड़ती हैं, उनमें दो ही एक कटती हैं, और तब मा हँसकर तालियाँ पीटती है। लाखो मे कही दो-एक मुक्त होते हैं। रहे-सहे सब माँ की इच्छा से बँधे हुए है।

"चोर-चोर खेल तुमने देखा है या नही? ढाई की इच्छा है कि खेल होता रहे। अगर सब लड़के दौड़कर ढाई को छू ले, तो खेल ही बन्द हो जाय। इसीलिए बुढ़िया ढाई की इच्छा नही है कि सब लड़के उसे छू ले।

"और देखो, बड़ी बड़ी दूकानो मे ऊँची छत तक चावल के बोरे भरे रहते है। चावल भी रहता है और दाल भी, परन्तु कही चूहे न खा जायँ, इसलिए दूकानदार कोठे के दरवाजे पर सूप मे उनके लिए धान के लावे अलग रख देता है। उनमे कुछ गुड़ मिला रहता है। ये खाने मे मीठे लगते है और गन्ध सोंधी होती है इसलिए सब चूहे सूप पर ही टूट पड़ते है, अन्दर के बड़े बड़े कोठो की खोज नही करते। जीव कामिनी-काचन मे मुग्ध रहते है, ईश्वर की खबर नही पाते।"

(६)

श्रीरामकृष्ण का सर्ववासना-त्याग। केवल भक्ति-कामना

श्रीरामकृष्ण – नारद से राम ने कहा, तुम हमारे पास किसी वर की याचना करो। नारद ने कहा, – 'राम! मेरे लिए अब बाकी क्या रह गया? मै क्या वर माँगूँ? परन्तु अगर तुम्हे वर देना ही है, तो यही वर दो, जिससे तुम्हारे चरणकमलो मे शुद्धा भक्ति हो फिर संसार को मोह लेनेवाली तुम्हारी इस माया मे मुग्ध न होऊँ।' राम ने कहा – 'नारद कोई दूसरा वर लो।' नारद ने कहा – 'राम! मै और कुछ नही चाहता। यही करो जिससे तुम्हारे पादपद्मो मे मेरी शुद्धा भक्ति हो।'

"मैने माँ से प्रार्थना की थी और कहा था – 'माँ मै लोकसम्मान नही चाहता मा अष्टसिद्धियाँ तो क्या, मै शत सिद्धियाँ भी नही चाहता, मै देह-सुख भी नही चाहता हूँ, बस यही करो कि तुम्हारे पादपद्मो मे शुद्धा भक्ति हो।'

"अध्यात्म रामायण मे है कि लक्ष्मण ने राम से पूछा – 'राम, तुम तो कितने ही रूपो और कितने ही भावो मे रहा करते हो, फिर किस तरह मै तुम्हे पहचान पाऊँगा?' राम ने कहा – 'भाई, एक बात समझ रखो, – जहाँ ऊर्जिता भक्ति है, वहाँ मै अवश्य ही हूँ। ऊर्जिता भक्ति के होने पर भक्त हँसता है, रोता है, नाचता है, गाता है। अगर किसी मे ऐसी भक्ति हो, तो निश्चय समझना, ईश्वर वहाँ मौजूद है। चैतन्यदेव को ऐसा ही हुआ था।"

भक्तगण निर्वाक् हो सुन रहे है – देववाणी की तरह इन सब बातो को सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण की अमृतमयी वार्ता फिर होने लगी। अब निवृत्ति मार्ग की बात हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – (ईशान से) – तुम खुशामदवाली बातो मे न आ जाना। विषयी आदमियो को देखकर खुशामद करनेवाले आप उपस्थित हो जाते है।

"मरा हुआ बैल देखकर दुनिया भर के गिद्ध इकट्ठे हो जाते है।

"विषयी आदमियो में कुछ सार नही है। जैसे गोबर की टोकरी। खुशामद करनेवाले आकर कहेगे, आप दानी है, बडे ज्ञानी है। इसे बात की बात ही मत समझो – साथ मे डण्डे भी है। यह क्या है! कुछ ससारी ब्राह्मणो और पण्डितो को लेकर दिन-रात बैठे रहना और उनकी खुशामद सुनना।

"संसारी आदमी तीन के गुलाम है, फिर उनमे सार कैसे रह सकता है? वे बीबी के गुलाम है रुपये के गुलाम है और मालिक के गुलाम है। एक आदमी का नाम न लूँगा, उसकी आठ सौ रुपये महीने की तनख्वाह है। परन्तु बीबी का ऐसा गुलाम है कि उसी के इशारे पर उठता बैठता है।

"और मुखियाई और सरपंची आदि की क्या जरूरत है? दया, परोपकार? – यह सब तो बहुत किया। यह सब लोग करते है, उनकी दूसरी ही श्रेणी है। तुम्हारे लिए अब तो यह है कि ईश्वर के पादपद्मो मे मन लगाओ। उन्हे पा लेने पर सब कुछ प्राप्त हो जाता है। पहले वे है और दया, परोपकार, संसार का उपकार जीवो का उद्धार, उन्हे पा लेने के बाद है। इन सब बातो की चिन्ता से तुम्हे क्या काम? दूसरे की बला अपने सिर क्यो लादते हो?

"तुम्हे यही हुआ है। कोई सर्वत्यागी तुम्हे यदि यह बतलाये कि ऐसा करो, वैसा करो, तो अच्छा हो। ससारियो की सलाह मे पूरा नही पडने का, चाहे वह ब्राह्मण पण्डित हो या और कोई।

"पागल हो जाओ - ईश्वर के प्रेम मे पागल हो जाओ। लोग अगर यह समझें कि ईशान इस समय पागल हो गया है, अब यह सब काम नही कर सकता तो फिर वे तुम्हारे पास सरपच बनाने के लिए न आयेगे। घण्टी-वण्टी उठाकर फेक दो, अपना 'ईशान'* नाम सार्थक करो।"

'माँ, मुझे पागल कर दे, ज्ञान-विचार की अब कोई जरूरत नही है।' इस भाव के गाने का एक पद ईशान ने कहा।

श्रीरामकृष्ण – पागल है या अच्छे दिमागवाला? शिवनाथ ने कहा था, ईश्वर की अधिक चिन्ता करने पर आदमी पागल हो जाता है। मैने कहा, 'क्या! चेतन की चिन्ता करके क्या कभी कोई अचेतन हो जाता है? वे नित्य है, शुद्ध और बोधरूप है। उन्ही के ज्ञान से लोगो मे ज्ञान है, उन्ही की चेतना से सब चेतन हो रहा है।' उसने कहा, 'साहबो को ऐसा हुआ था, अधिक ईश्वरचिन्ता करते वे पागल हो गये थे।' हो सकता है वे ऐहिक पदार्थ की चिन्ता करते रहे होगे। भावे ते भरल तनु, हरल ज्ञान। इसमे जिस ज्ञान के हरने की बात है, वह बाह्य ज्ञान है।

* शिवजी का एक नाम।

ईशान श्रीरामकृष्ण के पैर पकड़े हुए बैठे है और सब बातें सुन रहे हैं। वे रह-रहकर मन्दिर के भीतर कालीमूर्ति की ओर देख रहे हैं। प्रदीप के आलोक में माता हँस रही हैं।

ईशान – (श्रीरामकृष्ण से) – आप जो बातें कह रहे हैं, वे सब वहाँ से (देवी की ओर हाथ उठाकर) आती हैं।

श्रीरामकृष्ण – मैं यन्त्र हूँ वे यन्त्री हैं, मैं गृह हूँ वे गृहिणी, मैं रथ हूँ वे रथी; वे जैसा चलाती हैं, मैं वैसा ही चलता हूँ; जैसा कहलाती हैं, वैसा ही कहता हूँ।

"कलिकाल में दूसरी तरह की देववाणी नहीं होती, परन्तु बालक या पागल के मुँह से देववाणी होती है – देवता बोलते हैं।

"आदमी कभी गुरु नहीं हो सकते। ईश्वर की इच्छा से ही सब हो रहा है। महापातक. बहुत दिनों के पातक, बहुत दिनो का अज्ञान, सब उनकी कृपा होने पर क्षण भर मे मिट जाता है।

"हजार साल के अँधेरे कमरे मे अगर एकाएक उजाला हो तो वह हजार साल का अंधेरा जरा जरा सा हटता है या एक साथ ही चला जाता है?

"आदमी यही कर सकता है कि वह बहुतसी बातें बतला सकता है, अन्त मे सब ईश्वर के ही हाथ है। वकील कहता है, मुझे जो कुछ करना था. मैने कर दिया। अब न्यायाधीश के हाथ की बात है।

"ब्रह्म निष्क्रिय हैं। वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय आदि सब कार्य करते हैं, तब उन्हे आदिशक्ति कहते हैं। उसी आद्याशक्ति को प्रसन्न करना पड़ता है। चण्डी में है, जानते हो न पहले देवताओं ने आद्याशक्ति की स्तुति की। उनके प्रसन्न होने पर विष्णु की योग-निद्रा छूटती है।"

ईशान – जी महाराज, मधुकैटभ के वध के समय देवताओं ने स्तुति की है – 'त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारस्वरात्मिका। सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधामात्रात्मिका स्थिता।। अर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषत:। त्वमेव संध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा।। त्वयैतत् धार्यते विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत्। त्वयैतत् पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा।। विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने। तथा संहृतिरूपाऽन्ते जगतोऽस्य जगन्मये।।*

श्रीरामकृष्ण – हाँ इसकी धारणा चाहिए।

(७)

कर्मकाण्ड कठिन है – इसीलिए भक्तियोग

कालीमन्दिर के सामने श्रीरामकृष्ण को चारों ओर से घेरकर भक्तगण बैठे हुए है। अब तक निर्वाक् रहकर श्रीरामकृष्ण की अमृतोपम वाणी सुन रहे थे।

* मार्कण्डेय चण्डी।

श्रीरामकृष्ण उठे। मन्दिर के सामने मण्डप के नीचे भूमिष्ठ होकर माता को प्रणाम किया। उसी समय भक्तो ने भी प्रणाम किया। प्रणाम कर श्रीरामकृष्ण अपने कमरे की ओर चले गये।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर की ओर देखकर रामप्रसाद के एक गाने के दो चरण गाये। उनका भाव यह है – युक्ति और मुक्ति मुझे मिल चुकी है, क्योकि काली ही एकमात्र मर्म है, यह जानकर मैने धर्माधर्म छोड़ दिये है।

श्रीरामकृष्ण – धर्माधर्म का अर्थ क्या है, जानते हो? यहाँ धर्म का तात्पर्य वैधी धर्म मे है – जैसे दान, श्राद्ध, कंगालो को खिलाना यह सब।

' इसी धर्म को कर्मकाण्ड कहते है। यह मार्ग बड़ा कठिन है। निष्काम कर्म करना बहुत मुश्किल है। इसीलिए भक्ति-पथ का आश्रय लेने के लिए कहा गया है।

"किसी ने अपने घर पर श्राद्ध किया था। बहुत से आदमियों को खिलाया था। एक कसाई काटने के लिए गौ ले जा रहा था। गौ काबू मे नही आ रही थी, कसाई हाँक रहा था। तब उसने सोचा, इसके यहाँ श्राद्ध हो रहा है, वहाँ चलकर कुछ खा लूँ। इस तरह कुछ बल बढ जायेगा, तब गौ को ले जा सकूँगा। अन्त मे उसने वैसा ही किया। परन्तु जब उसने गौ को काटा तब जिसने श्राद्ध किया था, उसे भी गोहत्या का पाप लगा।

"इसीलिए कहता हूँ, कर्मकाण्ड से भक्तिमार्ग अच्छा है।"

श्रीरामकृष्ण कमरे मे प्रवेश कर रहे है मास्टर साथ है। श्रीरामकृष्ण गुनगुनाते हुए गा रहे है।

कमरे मे पहुँचकर वे अपनी छोटी खाट पर बैठ गये। अधर, किशोरी तथा अन्य भक्त भी आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो से) – ईशान को देखा, कही कुछ नही हुआ। कहते क्या हो कि इसने पाँच महीने तक पुरश्चरण किया है? कोई दूसरा होता तो उसमें एक और ही बात पैदा हो गयी होती।

अधर – हम लोगो के सामने उन्हे इतनी बाते कहना अच्छा नही हुआ।

श्रीरामकृष्ण – क्यो क्या हुआ? वह तो जापक है, उसके ऊपर शब्दों का क्या असर!

कुछ देर तक बाते होने पर श्रीरामकृष्ण ने अधर से कहा "ईशान बड़ा दानी है और देखो, जप-तप बहुत करता है।" भक्तगण जमीन पर बैठे टकटकी लगाये हुए श्रीरामकृष्ण को देख रहे है।

एकाएक श्रीरामकृष्ण ने अधर से कहा – 'तुम लोगों के योग और भोग दोनों है।'

परिच्छेद ९८

आत्मानन्द में

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के सग

आज काली-पूजा है, शनिवार, १८ अक्टूबर, १८८४ ई.। रात के दस ग्यारह बजे से काली-पूजा शुरू होगी। कुछ लोग इस गम्भीर अमावस की रात मे श्रीरामकृष्ण के दर्शन करेगे। इसलिए वे कदम बढ़ाये चले आ रहे है।

रात आठ बजे के लगभग मास्टर अकेले आ पहुँचे। बगीचे मे आकर उन्होने देखा, काली-मन्दिर की पूजा आरम्भ हो चुकी है। बगीचे मे कही कही दीपक जलाये गये थे और काली-मन्दिर मे तो रोशनी ही रोशनी दीख पडती है। बीच बीच मे शहनाई भी बज रही है। कर्मचारीगण दौड-दौडकर इधर-इधर देखरेख कर रहे है। आज रानी रासमणि के काली-मन्दिर मे बडे समारोह के साथ पूजा होगी। दक्षिणेश्वर के आदमियो को यह सूचना पहले ही मिल चुकी थी। अन्त मे नाटक होगा यह भी वे लोग सुन चुके है। गाँव से लडके, जवान, बूढे और स्त्रियाँ सब देवीदर्शन के लिए चले आ रहे है।

दिन के पिछले पहर चण्डी-गीत हो रहा था, गवैये थे राजनारायण। श्रीरामकृष्ण ने भक्तो के साथ बड़े प्रेम से गाना सुना। देवी की पूजा की याद कर श्रीरामकृष्ण को अपार आनन्द हो रहा है।

रात के आठ बजे वहाँ पहुँचकर मास्टर ने देखा, श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर बैठे हुए है, उन्हे सामने करके कई भक्त जमीन पर बैठे है – बाबूराम, छोटे गोपाल, हरिपद, किशोरी निरजन के एक आत्मीय नवयुवक और ऐडेदा के एक और किशोर बालक। रामलाल और हाजरा कभी कभी आते है, फिर चले जाते है।

निरजन के आत्मीय नवयुवक श्रीरामकृष्ण के सामने बैठे हुए ध्यान कर रहे है - श्रीरामकृष्ण ने उन्हे ध्यान करने के लिए कहा है।

मास्टर प्रणाम करके बैठे। कुछ देर बाद निरंजन के आत्मीय प्रणाम करके बिदा हुए। ऐडेदा के दूसरे युवक भी प्रणाम कर खडे हो गये। उनके साथ जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण – (निरंजन के आत्मीय से) – तुम फिर कब आओगे?

भक्त – जी, सोमवार तक – शायद।

श्रीरामकृष्ण – (आग्रहपूर्वक) – लालटेन चाहिए? – साथ ले जाओ।

भक्त – जी नहीं, इस बगीचे के आस-पास तो रोशनी है – कोई जरूरत नहीं।

श्रीरामकृष्ण – (ऐंड़ेदा के लड़के से) – क्या तू भी जा रहा है?

लड़का – जी हॉ, बड़ी सर्दी है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा; सिर पर कपड़ा लपेट लेना।

दोनों लड़कों ने फिर से प्रणाम किया और चल दिये।

(२)

कीर्तनानन्द में

अमावस की घोर रात्रि है। तिस पर जगन्माता की पूजा है। श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर तकिए के सहारे बैठे हुए हैं। अन्तर्मुख हैं। रह-रहकर भक्तों से दो-एक बातें करते हैं।

एकाएक मास्टर तथा अन्य भक्तों की ओर देखकर कह रहे हैं – अहा, उस लड़के का कितना गम्भीर ध्यान था! (हरिपद से) कैसा ध्यान था?

हरिपद – जी हाँ, वह ठीक काठ की तरह स्थिर था।

श्रीरामकृष्ण – (किशोरी से) – उस लड़के को जानते हो? किसी सम्बन्ध से निरंजन का भाई लगता है।

फिर सब चुपचाप बैठे हुए हैं। हरिपद श्रीरामकृष्ण के पैर दबा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण धीरे धीरे गा रहे हैं, एकाएक उठकर बैठ गये और बड़े उत्साह से गाने लगे -

"यह सब उस पागल स्त्री का खेल है। वह खुद भी पागल है, उसके पति महेश भी पागल हैं, और दो चेले है वे भी पागल हैं। उसका रूप क्या है, गुण क्या है, चाल-ढाल कैसी है, कुछ कहा नही जाता। जिनके गले में विष की ज्वाला है, वे शिव उसका नाम बार बार लेते हैं। सगुण और निर्गुण का विवाद लगाकर वह रोडे से रोड़ा फोड़ती है। वह सब विषयों में राजी है, बस कर्तव्यों के समय ही उसकी नाराजगी होती है। रामप्रसाद कहते हैं, संसार-सागर में अपना डोंगा डालकर बैठे रहो। जब ज्वार आये तब वह जहाँ तक ले जाय, चढ़ते जाओ और जब भाटा हो, तब जहाँ तक उतरना हो, उतरते जाओ।"

गाते ही गाते श्रीरामकृष्ण मतवाले हो गये। उसी आवेश मे उन्होंने और कई गाने गाये। एक और गाने का भाव नीचे दिया जाता है –

"काली! तुम सदानन्दमयी हो, महाकाल के मन को भी मुग्ध कर लेती हो। तुम आप नाचती हो, आप गाती हो और आप ही तालियाँ बजाती हो। तुम आदिभूता हो, सनातनी हो, शून्यरूपा हो, तुम्हारे मस्तक पर चन्द्र शोभा दे रहा है। अच्छा माँ, तुम यह तो बतलाओ, जब ब्रह्माण्ड ही नहीं था, तब तुम्हें मुण्ड-माला कैसे मिली? तुम्ही यन्त्री

हो, हम लोग तुम्हारे ही इशारे पर चलते हैं। तुम जिस तरह रखती हो, उसी तरह रहते हैं और जो कुछ कहलाती हो, वही कहते हैं। अशान्त होकर कमलाकान्त तुम्हे गालियाँ देता हुआ कहता है, अबकी बार तो, ऐ सर्वहरे! खड्ग धारण करके मेरे धर्म और अधर्म दोनों को तुम खा गयी।''

श्रीरामकृष्ण ने फिर गाया –

''जय काली जय काली कहते हुए अगर मेरा प्राणान्त हो, तो मैं शिवत्व को प्राप्त करूँगा। वाराणसी की मुझे क्या जरूरत है? काली अनन्तरूपिणी हैं, उनका अन्त पा सके, ऐसा कौन है? उनका थोड़ासा ही माहात्म्य समझकर शिव उनके पैरो पर लोटते है।''

गाना समाप्त हो गया। इसी समय राजनारायण के दो लड़को ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। सभामण्डप मे दिन के पिछले पहर राजनारायण ने चण्डी-गीत गाया था। उनके साथ उन दोनों लड़को ने भी गाया था। श्रीरामकृष्ण दोनो लड़कों के साथ फिर गाने लगे।

श्रीरामकृष्ण के कई गाने गा चुकने पर कमरे में रामलाल आये। श्रीरामकृष्ण कहते है, तू भी कुछ गा, आज पूजा है। रामलाल गा रहे हैं –

''यह किसकी कामिनी है – समर को आलोकित कर रही है? सजल जलद-सी इसकी देह की कान्ति है, दर्शनो में दामिनी की द्युति दीख पड़ती है! इसकी केशराशि खुली हुई है, सुरों और असुरों के बीच मे भी इसे भय नहीं होता। इसके अट्टहास से ही दानवो का नाश हो जाता है। कमलाकान्त कहते हैं, जरा समझो तो, यह गजगामिनी कौन है।''

श्रीरामकृष्ण नृत्य करते हैं, प्रेमानन्द मे पागल हो रहे हैं। नाचते ही नाचते वे गाने लगे – ''मेरा मनमिलिन्द काली के नीलकमलचरणों पर लुब्ध हो गया।''

गाना और नृत्य समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे। भक्तगण भी जमीन पर बैठे।

मास्टर से श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – तुम न आये, चण्डीगीत कितना सुन्दर हुआ!

(३)

समाधि में श्रीरामकृष्ण

भक्तों में से कोई कोई काली-मन्दिर में देवीदर्शन करने के लिए चले गये। कोई कोई दर्शन करके अकेले गंगा के पक्के घाट पर बैठे हुए निर्जन में चुपचाप नाम-जप कर रहे हैं। रात के ग्यारह बजे होंगे। घोर अँधेरा छाया हुआ है। अभी ज्वार आने ही लगा है – भागीरथी उत्तरवाहिनी हो रही हैं।

रामलाल 'पूजापद्धति' नाम की पुस्तक बगल मे दबाये हुए माता के मन्दिर मे एक बार आये। पुस्तक मन्दिर के भीतर रखना चाहते थे। मणि माता को तृषित लोचनो से देख रहे थे, उन्हे देखकर रामलाल ने पूछा, क्या आप भीतर आइयेगा? अनुग्रह प्राप्त कर मणि मन्दिर के भीतर गये। देखा, माता की अपूर्व छटा थी। घर जगमगा रहा था। माता के सामने अदोदीपदान थे, ऊपर झाड़, नीचे नैवेद्य सजाकर रखा गया था, जिससे घर भरा हुआ था। माता के पादपद्मो मे जवा-पुष्प और बिल्वदल थे, श्रृंगार करनेवाले ने अनेक प्रकार के फूलो और मालाओ से माता को सजा रखा था। मणि ने देखा, सामने चामर लटक रहा है। एकाएक उन्हे याद आ गयी कि इसे लेकर श्रीरामकृष्ण व्यजन करते है। तब उन्हे संकोच हुआ। उसी संकुचित स्वर मे उन्होने रामलाल से कहा, क्या मैं यह चामर ले सकता हूँ? रामलाल ने आज्ञा दी। मणि चामर लेकर व्यजन करने लगे। उस समय भी पूजा का आरम्भ नही हुआ था।

जो सब भक्त बाहर गये हुए थे, वे फिर श्रीरामकृष्ण के कमरे मे आकर सम्मिलित हुए।

श्रीयुत वेणीपाल ने न्योता दिया है। कल सीती के ब्राह्मसमाज मे जाने के लिए श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण आया है। निमन्त्रणपत्र मे तारीख की गलती है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – वेणीपाल ने न्योता भेजा है। परन्तु भला इस तरह क्यो लिखा?

मास्टर – जी, लिखना ठीक नही हुआ। जान पड़ता है सोच-विचार कर नही लिखा।

श्रीरामकृष्ण कमरे मे खड़े है। पास मे बाबूराम है। श्रीरामकृष्ण पाल को चिट्ठी की बातचीत कर रहे है। बाबूराम के सहारे खड़े हुए एकाएक समाधिमग्न हो गये।

भक्तगण उन्हे घेरकर खडे हो गये। सभी इस समाधिमग्न महापुरुष को टकटकी लगाये देख रहे है। श्रीरामकृष्ण समाधिअवस्था मे बायाँ पैर बढ़ाये हुए खड़े है, कन्धा कुछ झुका हुआ है। बाबूराम की गरदन के पीछे श्रीरामकृष्ण का हाथ है।

कुछ देर बाद समाधि छूटी। तब भी आप खड़े ही रहे। इस समय गाल पर हाथ रखे हुए जैसे बहुत चिन्तित भाव से खड़े हो।

कुछ हँसकर भक्तो से बोले – "मैने सब देखा – कौन कितना बढ़ा, राखाल, ये (मणि), सुरेन्द्र, बाबूराम, बहुतो को देखा।"

हाजरा – मुझको भी?

श्रीरामकृष्ण – हाँ।

हाजरा – अब भी अनेक बन्धन है?

श्रीरामकृष्ण – नही।

हाजरा – नरेन्द्र का भी देखा?

श्रीरामकृष्ण – नही – परन्तु अब भी कह सकता हूँ, कुछ फँस गया है; परन्तु देखा कि सब की बन जायेगी।

(मणि की ओर देखकर) "सब को देखा, सब के सब तैयार है (पार जाने के लिए)।"

भक्तगण निर्वाक् होकर यह देववाणी सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु इसको (बाबूराम को) छूने पर ऐसा हुआ।

हाजरा – पहला दर्जा किसका है?

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। कुछ देर बाद कहा – "नित्यगोपाल जैसे कुछ और भी मिल जाते तो बड़ा अच्छा होता!"

फिर चिन्ता कर रहे है। अब भी उसी भाव में खड़े है।

फिर कहते हैं – "अधर सेन – अगर काम घट जाता, – परन्तु भय होता है कि साहब डाँटने लगेगा। यह न कह बैठे – यह क्या है?" (सब मुस्कराते है।)

श्रीरामकृष्ण फिर अपने आसन पर जा बैठे। जमीन पर भक्तगण बैठे। बाबूराम और किशोरी श्रीरामकृष्ण की चारपाई पर जाकर उनके पैर दबाने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (किशोरी की ओर ताककर) – आज तो खूब सेवा कर रहे हो!

रामलाल ने आकर सिर टेककर प्रणाम किया और बड़े ही भक्ति-भाव से पैरो की धूलि ली। माता की पूजा करने जा रहे हैं।

रामलाल – तो मै चलूँ?

श्रीरामकृष्ण – ॐ काली, ॐ काली। सावधानी से पूजा करना।

महानिशा है। पूजा का आरम्भ हो गया। श्रीरामकृष्ण पृजा देखने के लिए गये। माता के दर्शन कर रहे है।

रात को दो बजे तक कोई कोई भक्त काली-मन्दिर मे बैठे रहे। हरिपद ने काली-मन्दिर मे जाकर सब से कहा, चलो, बुलाते हैं – भोजन तैयार है। भक्तो ने देवी का प्रसाद पाया और जिसको जहाँ जगह मिली, वहीं लेटा रहा।

सबेरा हुआ। माता की मंगल-आरती हो चुकी है। माता के सामने सभामण्डप मे नाटक हो रहा है। श्रीरामकृष्ण भी नाटक देखने के लिए जा रहे है। मणि साथ जा रहे है – श्रीरामकृष्ण से बिदा होने के लिए।

श्रीरामकृष्ण – क्या तुम इसी समय जाना चाहते हो?

मणि – आज आप दिन के पिछले पहर सीती जायेगे, मेरी भी जाने की इच्छा है, इसलिए घर होकर जाना चाहता हूँ।

बातचीत करते हुए मणि काली-मन्दिर के पास आ गये। पास ही सभामण्डप है,

नाटक हो रहा है। मणि ने सीढ़ियो के नीचे भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'अच्छा, चलो, और आठ हाथ वाली दो धोतियाँ मेरे लिए लेते आना।'

□□□

परिच्छेद ९९

सींती ब्राह्मसमाज में

(१)

श्रीरामकृष्ण समाधि में

ब्राह्मभक्त सीती के ब्राह्मसमाज मे सम्मिलित हुए। आज काली-पूजा का दूसरा दिन है। कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा, १९ अक्टूबर, १८८४। अब शरद् का महोत्सव हो रहा है। श्रीयुत वेणीमाधव पाल की मनोहर उद्यान-वाटिका मे ब्राह्मसमाज का अधिवेशन हुआ।

प्रात:काल की उपासना आदि हो गयी है। श्रीरामकृष्ण दिन के चार बजे आये। उनकी गाड़ी बगीचे के भीतर खड़ी हुई। साथ ही दल के दल भक्तगण चारो ओर से उन्हे घेरने लगे। उधर कमरे के अन्दर समाज की वेदी बनायी गयी। सामने दालान है। उसी दालान मे श्रीरामकृष्ण बैठे। चारो ओर से भक्तो ने उन्हे घेर लिया। विजय, त्रैलौक्य तथा और भी बहुत से ब्राह्मभक्त उपस्थित है। उनमे ब्राह्मसमाजी एक सब-जज (Sub Judge) भी है।

महोत्सव के कारण समाज-गृह की शोभा अपूर्व हो रही है। अनेक रंगों की ध्वजा-पताकाएँ उड़ रही है। कही कही ऊँची इमारतो या झरोखो पर फूल-पत्तियों की झालरे लगी हुई है। सामने के स्वच्छ-सलिल सरोवर मे शरद् के नील नभमण्डप का प्रतिबिम्ब सुहावना रूप धारण कर रहा है। बगीचे की लाल लाल सड़कों की दोनों ओर भाँति भाँति के फूलो से लदे हुए पेड़ सौन्दर्य को बढ़ा रहे है। आज श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से निकली हुई वही वेदवाणी, वही वेदध्वनि भक्तो को फिर सुनने को मिलेगी – वही ध्वनि जो एक समय आर्य महर्षियो के श्रीमुख से निकली थी; वही ध्वनि जो नररूपधारी, परमसंन्यासी, ब्रह्मगतप्राण, जीवो के दु:ख से कातर, भक्तवत्सल, भक्तावतार, भगवत्-प्रेमविह्वल ईसा के श्रीमुख से उनके द्वादश निरक्षर शिष्यो – उन मत्स्य-जीवियों – ने सुनी थी; वही ध्वनि जो पुण्यक्षेत्र कुरुक्षेत्र मे सारथि-वेषधारी मानवाकार सच्चिदानन्द-गुरु भगवान श्रीकृष्ण के श्रीमुख से श्रीमद्भगवद्गीता के रूप मे एक समय निकली थी एवं मेघगम्भीर ध्वनि में विनयनम्र व्याकुल 'गुड़ाकेश' कौन्तेय ने श्रवणो के द्वारा इस कथामृत का पान किया था –

"कवि पुराणमनुशासितारम्
अणोरणीयांसमनुस्मरेत् यः।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप-
मादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।।
प्रयाणकाले मनसाऽचलेन
भक्त्या युक्तो योगबलेन चेव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्
स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।
यदक्षरं वेदविदो वदन्ति
विशन्ति यद्यतयो वीतरागा।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये।।"

श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण कर समाज की सुरचित वेदी की ओर दृष्टिपात करते ही सिर झुकाकर प्रणाम किया। वेदी पर से ईश्वरी चर्चा होती है, इसलिए श्रीरामकृष्ण उसे साक्षात् पुण्यक्षेत्र देख रहे है। जहाँ अच्युत का प्रसंग होता हे, वहाँ सर्व तीर्थों का समागम हुआ ऐसा समझते है। अदालत की इमारत को देखते ही मुकदमे की याद आती है, जज पर ध्यान जाता है, उसी तरह इस ईश्वरी चर्चा के स्थान को देखकर श्रीरामकृष्ण को ईश्वर का उद्दीपन हो गया है।

श्रीयुत त्रैलोक्य गा रहे है। श्रीरामकृष्ण ने कहा, "क्यों जी, तुम्हारा वह गाना बड़ा सुन्दर है – 'माँ, मुझे पागल कर दे।' वही गाना जरा गाओ।" त्रैलोक्य गा रहे हैं –

(भावार्थ) "माँ, मुझे पागल कर दे। अब ज्ञान और विचार की कोई जरूरत नही है। तेरे प्रेम की सुरा के पीते ही ऐसा कर दे कि मै बिलकुल मतवाला हो जाऊ। भक्त के चित्त को हरण करनेवाली माँ, मुझे प्रेम के सागर मे डुबा दे। तेरे इस पागलों की जमघट मे कोई तो हँसता है, कोई रोता है और कोई आनन्द से नाचता है। प्रेम के आवेश मे कितने ही ईसा, मूसा और चैतन्य अचेतन पडे हुए है; इन्ही मे मिलकर माँ मैं कब धन्य होऊँगा? स्वर्ग मे भी पागलो का जमघट है, जैसे वहाँ गुरु है वैसे ही चेले भी, और इस प्रेम की क्रीड़ा को समझ ही कौन सकता है? तू भी तो प्रेम से पागल हो रही है, पागल ही नही, पागलो से बढ़कर। माँ, कंगाल प्रेमदास को भी तू प्रेम का धनी कर दे।"

गाना सुनते ही श्रीरामकृष्ण का भाव परिवर्तित हो गया – बिलकुल समाधि-लीन हो गये। कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय, मन, बुद्धि, अहंकार सब मानो मिट गये है। चित्रस्थ मूर्ति की तरह देह दृष्टिगोचर हो रही है। एक दिन भगवान श्रीकृष्ण की यह अवस्था देखकर युधिष्ठिर आदि पाण्डव रोये थे। आर्यकुलगौरव भीष्मदेव शर-शय्या पर पड़े हुए अपना

अन्तिम समय जान ईश्वर के ध्यान में मग्न थे। उस समय कुरुक्षेत्र की लड़ाई समाप्त ही हुई थी। अतएव वे रोने के ही दिन थे। श्रीकृष्ण की उस समाधि-अवस्था को न समझकर पाण्डव रोये थे, सोचा था, उन्होंने देह छोड़ दी।

(२)

हरिकथा-प्रसंग। ब्राह्मसमाज में निराकारवाद

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण की कुछ प्राकृत अवस्था हो गयी। उसी अवस्था में आप भक्तो को उपदेश देने लगे। उस समय भी ईश्वरी भाव का आप पर ऐसा आवेश था कि उनकी बातचीत से जान पड़ता था, कोई मतवाला बोल रहा है। धीरे धीरे भाव घटता जा रहा है।

श्रीरामकृष्ण – (भावस्थ) – माँ, मुझे कारणानन्द नहीं चाहिए, मैं सिद्धि पीऊँगा।

"सिद्धि अर्थात् वस्तु (ईश्वर) की प्राप्ति। वह अष्टसिद्धियो की सिद्धि नहीं, उसके लिए तो श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है – 'भाई, अगर कहीं किसी के पास अष्ट-सिद्धियो में से एक भी सिद्धि है, तो समझना कि वह मनुष्य मुझे नही पा सकता;' क्योंकि सिद्धि के रहने पर अहंकार भी रहेगा और अहंकार के लेशमात्र रहते कोई ईश्वर को पा नहीं सकता।

"एक प्रकार के मत के अनुसार चार प्रकार के भक्त होते हैं – प्रवर्तक, साधक, सिद्ध, सिद्ध का सिद्ध। जिसने ईश्वर की आराधना में अभी अभी मन लगाया है, वह प्रवर्तको मे है; प्रवर्तक तिलक लगाते है, माला पहनते हैं, बाहर बड़ा आचार रखते हैं। साधक और आगे बढ़ा हुआ है, उसका दिखलावा बहुत कुछ घट गया है। उसे ईश्वर की प्राप्ति के लिए व्याकुलता होती है। वह आन्तरिक भाव से ईश्वर को पुकारता है, उनका नाम लेता है और भीतर से सरल भाव से प्रार्थना करता है। सिद्ध वह है जिसे निश्चयात्मिका बुद्धि हो गयी है – जिसने ईश्वर हैं और वे ही सब कुछ कर रहे हैं, यह सब देखा है। 'सिद्धों का सिद्ध' वह है जिसने उनसे बातचीत की है, केवल दर्शन ही नही। उनमें से किसी ने पिता के भाव से, किसी ने वात्सल्यभाव से, किसी ने मधुरभाव से उनके साथ आलाप भी किया है।

"लकड़ी मे आग अवश्य है, यह विश्वास रखना एक बात है, पर लकड़ी से आग निकालकर रोटी पकाना, खाना, शान्ति और तृप्ति पाना, एक दूसरी बात है।

"ईश्वरी अवस्थाओं की इति नहीं की जा सकती। एक से एक बढ़कर अवस्थाएँ हैं।

(भावस्थ) "ये ब्रह्मज्ञानी हैं, निराकारवादी हैं, यह अच्छा है।

(ब्राह्मभक्तो से) "एक में दृढ़ रहो, या तो साकार में या निराकार में। तभी ईश्वर प्राप्त होता है, अन्यथा नही। दृढ़ होने पर साकारवादी भी ईश्वर को पायेंगे और निराकारवादी

भी। मिश्री की डली सीधी तरह से खाओ या टेढ़ी करके, मीठी जरूर लगेगी। (सब हँसते हैं।)

"परन्तु दृढ़ होना होगा, व्याकुल होकर उन्हें पुकारना होगा। विषयी मनुष्यों के ईश्वर बस उसी तरह हैं, जैसे घर मे चाची और दीदी को लड़ते हुए देखकर उनसे 'भगवान कसम सुनकर खेलते समय बच्चे भी कहते हैं 'भगवान कसम', और जैसे कोई शौकीन बाबू पान चबाते हुए, हात मे छड़ी लेकर बगीचेमें टहलते हुए एक फूल तोड़कर मित्र से कहते हैं – 'ईश्वर ने कैसा ब्यूटिफुल (सुन्दर) फूल बनाया है!' विषयी मनुष्यों का यह भाव क्षणिक है, जैसे तपे हुए लोहे पर पानी के छींटे।

"एक पर दृढ़ता होनी चाहिए। डूबो – बिना डुबकी लगाये समुद्र के भीतर के रत्न नही मिलते। पानी के ऊपर केवल उतराते रहने से रत्न नहीं मिलता।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण जिस गाने से केशव आदि भक्तो का मन मोह लेते थे, वही गाना – उसी मधुर कण्ठ से – गाने लगे, सब के हृदय में एक अत्यन्त पवित्र स्वर्गीय आनन्द की धारा बहने लगी।

गाने का भाव यह है –

"ऐ मेरे मन! रूप के समुद्र में तू डूब जा, तलातल और पाताल तक तू अगर उसकी खोज करता रहेगा, तो वह प्रेमरत्न तुझे अवश्य ही प्राप्त होगा।"

(३)

ब्राह्म समाज तथा ईश्वर के ऐश्वर्य का वर्णन

श्रीरामकृष्ण – डुबकी लगाओ! ईश्वर को प्यार करना सीखो। उनके प्रेम में मग्न हो जाओ। देखो, तुम्हारी उपासना सुन रहा हूँ। परन्तु तुम ब्राह्मसमाजवाले ईश्वर के ऐश्वर्य का इतना वर्णन क्यों करते हो? 'हे ईश्वर! तुमने आकाश की सृष्टि की है, बड़े बड़े समुद्र बनाये है,' चंद्रलोक, सूर्यलोक, नक्षत्रलोक, यह सब तुम्हारी ही रचना है,' इन सब बातों से हमे क्या काम?

"सब आदमी बाबू के बगीचे को देखकर आश्चर्य कर रहे हैं – कैसे सुन्दर पेड़ उसमें लगे है, फूल, झील, बैंठकखाना, उसके अन्दर तस्बीरों की सजावट, ये सब ऐसे सुन्दर हैं कि इन्हे देखकर लोग दंग रह जाते हैं, परन्तु बगीचे के मालिक की खोज करनेवाले कितने होते है? मालिक की खोज तो दो ही एक करते हैं। ईश्वर को व्याकुल होकर खोजने पर उनके दर्शन होते हैं, उनसे आलाप भी होता है, बातचीत होती है, जैसे मै तुमसे बातचीत कर रहा हूं। सत्य कहता हूँ, उनके दर्शन होते हैं।

"यह बात मै कहता भी किससे हूं और विश्वास भी कौन करता है!

"क्या कभी शास्त्रो के भीतर कोई ईश्वर को पा सकता है? शास्त्र पढ़कर अधिक

से अधिक 'अस्ति' का बोध होता है। परन्तु स्वयं जब तक नही डूबते हो, तब तक ईश्वर के दर्शन नहीं हो सकते। डुबकी लगाने पर जब वे खुद समझा देते है, तब सन्देह दूर हो जाता है। चाहे हजार पुस्तकें पढ़ो, हजार श्लोको की आवृत्ति करो, व्याकुल होकर उनमे डुबकी लगाये बिना, उन्हे पकड़ न सकोगे। कोरे पाण्डित्य से आदमियो को ही मुग्ध कर सकोगे, उन्हे नहीं।

"शास्त्रो और पुस्तकों से क्या होगा? उनकी कृपा के हुए बिना कहीं कुछ न होगा। जिससे उनकी कृपा हो, इसलिए व्याकुल होकर उद्योग करो। उनकी कृपा होने पर उनके दर्शन भी होंगे। तब वे तुम्हारे साथ बातचीत भी करेंगे।"

सब-जज – महाराज, उनकी कृपा क्या किसी पर अधिक और किसी पर कम भी है? इस तरह तो ईश्वर पर वैषम्यदोष आ जाता है।

श्रीरामकृष्ण – यह क्या! घोड़े में भी 'घ' है और घोंसले में भी 'घ' है, इसलिए क्या दोनों बराबर हैं? तुम जैसा कह रहे हो, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने भी वैसा ही कहा था। कहा था, 'महाराज, क्या उन्होंने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम?' मैंने कहा, 'विभू के रूप से तो वे सब के भीतर हैं – मेरे भीतर जिस तरह है एक चीटी के भीतर भी उसी तरह हैं; परन्तु शक्ति की विशेषता है। अगर सब आदमी बराबर होते तो ईश्वरचन्द्र विद्यासागर यह नाम सुनकर हम लोग तुम्हें देखने क्यो आते? क्या तुम्हारे दो सीग निकले है? सो बात नही। तुम दयालु हो, पण्डित हो, ये सब गुण तुममे दूसरो से अधिक है। इसीलिए तुम्हारा इतना नाम है।' देखो न, ऐसे आदमी भी है जो अकेले सौ आदमियो को हरा दे और ऐसे भी हैं कि एक ही के भय से भाग खड़े हो।

" अगर शक्ति की विशेषता न होती तो लोग केशव को इतना मानते कैसे?

"गीता में है, जिसे बहुत से आदमी जानते और मानते है, चाहे विद्या के लिए हो या गाने-बजाने के लिए, लेक्चर देने के लिए या अन्य गुणो के लिए, निश्चयपूर्वक समझो, उसमें ईश्वर की विशेष शक्ति है।"

ब्राह्म भक्त – (सब-जज से) – ये जो कुछ कहते है, आप मान लीजिये।

श्रीरामकृष्ण – (ब्राह्म भक्त से) – तुम कैसे आदमी हो? बात पर विश्वास न करके सिर्फ मान लेना! कपट-आचरण! देखता हूँ, तुम ढोंग करनेवाले हो।

ब्राह्म भक्त लज्जित हो गये।

(४)

ब्राह्मसमाज, ईसाई धर्म तथा पापवाद

सब-जज – महाराज, क्या संसार का त्याग करना होगा?

श्रीरामकृष्ण – नहीं, तुम्हें त्याग क्यो करना होगा? संसार मे रहकर ही हो सकता

है। परन्तु पहले कुछ दिन निर्जन मे रहना पडता है। निर्जन मे रहकर ईश्वर की साधना करनी पड़ती हैं। घर के पास एक अड्डा बनाना पड़ता है, जहाँ से बस रोटी खाने के समय घर आकर रोटी खा जा सको।

"केशव सेन, प्रतापचन्द्र इन सब लोगो ने कहा था, 'महाराज, हमारा मत राजा जनक के मत की तरह है।' मैने कहा, 'कहने ही से कोई जनक राजा नही हो जाता। पहले जनक राजा ने सिर नीचे और पैर ऊपर करके एकान्त मे कितनी तपस्या की थी। तुम लाग भी कुछ करो, तब राजा जनक होगे!' अमुक मनुष्य बहुत जल्दी अंग्रेजी लिख सकता है तो क्या एक ही दिन मे उसने अंग्रेजी लिखना सीखा था? वह गरीब का लड़का है, पहले किसी के यहाँ रहकर भोजन पकाता था और खुद भी खाता था, बडी मेहनत से उसने अग्रजी सीखी थी, इसीलिए अब बहुत जल्दी अंग्रेजी लिख सकता है।

"मैने केशव सेन से और भी कहा था, 'निर्जन मे बिना गये कठिन रोग अच्छा कैसे होगा?' रोग है विकार। और जिस घर मे विकारी रोगी है, उसी घर मे अचार, इमली और पानी का घड़ा है। तो अब रोग कैसे अच्छा हो सकता है? अचार, इमली का नाम लेते ही देखो मेरी जीभ मे पानी भर आया। (सब हँसते है।) इनके सामने रहते हुए कभी रोग अच्छा हो सकता है? सब लोग जानते तो हो। पुरुष के लिए स्त्री अचार और इमली है और भोग-वासना पानी का घडा। विषय-तृष्णा का अन्त नही है। और ये विषय रोगी के घर मै है!

"इससे क्या विकार-रोग अच्छा हो सकता है? कुछ दिन के लिए जगह छोडकर दूसरी जगह रहना चाहिए, जहाँ न अचार हो, न इमली और न पानी का घड़ा। नीरोग होकर फिर उस घर मे जाने से कोई भय न रह जायेगा। उन्हे प्राप्त करके संसार मे आकर रहने से फिर कामिनी-कांचन की दाल नही गलती। तब जनक की तरह निर्लिप्त होकर रह सकोगे, परन्तु पहली अवस्था मे सावधान होना चाहिए, निरे निर्जन मे रहकर साधना करनी चाहिए। पीपल का पेड़ जब छोटा रहता है, तब उसे चारो ओर से घेर रखते है कि कही बकरी चर न जाय; परन्तु जब वह बढकर मोटा हो जाता है, तब उसे घेर रखने की आवश्यकता नही रहती। फिर हाथी बाँध देने पर भी पेड़ का कुछ नही बिगड़ता। अगर निर्जन मे साधना करके ईश्वर के पादपद्मो मे भक्ति करके बल बढ़ाकर घर जाकर ससार करो, तो कामिनी-कांचन फिर तुम्हारा कुछ न कर सकेगे।

"निर्जन मे दही जमाकर मक्खन निकाला जाता है। ज्ञान और भक्तिरूपी मक्खन अगर एक बार मनरूपी दूध से निकाल सको, तो संसाररूपी पानी मे डाल देने से वह निर्लिप्त होकर पानी पर तैरता रहेगा, परन्तु मन को कच्ची अवस्था मे – दूधवाली अवस्था मे ही – अगर संसाररूपी पानी मे छोड़ दोगे, तो दूध और पानी एक हो जायेगे, तब फिर मन निर्लिप्त होकर उससे अलग न रह सकेगा।

"ईश्वर-प्राप्ति के लिए संसार में रहकर एक हाथ से ईश्वर के पादपद्म पकड़े रहना चाहिए और दूसरे हाथ से संसार का काम करना चाहिए। जब काम से छुट्टी मिले, तब दोनो हाथों से ईश्वर के पादपद्म पकड़ लो, तब निर्जन मे वास करके एकमात्र उन्ही की चिन्ता और सेवा करते रहो।"

सब-जज – (आनन्दित होकर) – महाराज, यह तो बड़ी सुन्दर बात है। एकान्त मे साधना तो अवश्य ही करनी चाहिए। यही हम लोग भूल जाते हैं। सोचते हैं, एकदम राजा जनक हो गये! (श्रीरामकृष्ण और दूसरे हँसते हैं।) संसार का त्याग करने की जरूरत नही, घर पर रहकर भी लोग ईश्वर को पा सकते हैं – यह सुनकर मुझे शान्ति और आनन्द हुआ।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हे त्याग क्यो करना होगा? जब लड़ाई करनी है, तो किले मे रहकर ही लड़ाई करो। लड़ाई इन्द्रियों से है, भूख-प्यास इन सब के साथ लड़ाई करनी होगी। यह लड़ाई संसार मे रहकर ही करना अच्छा है। तिस पर कलिकाल में प्राण अन्नगत है, बाहर कभी खाना न मिला, तो उस समय ईश्वर-फीश्वर सब भूल जायेंगे। किसी ने अपनी बीबी से कहा – 'मै संसार छोड़कर जाता हूँ।' उसकी बीबी कुछ समझदार थी। उसने कहा – क्यो तुम चक्कर लगाते फिरोगे? अगर पेट भरने के लिए दस घरों मे चक्कर न लगाना पड़े तब तो कोई बात नही, जाओ, लेकिन अगर चक्कर लगाना पड़े तो अच्छा यही है कि इसी घर मे रहो।'

"तुम लोग त्याग क्यो करोगे? घर में रहने से तो बल्कि सुविधाएँ हैं। भोजन की चिन्ता नही करनी होती। सहवास भी पत्नी के साथ, इसमे दोष नही है। शरीर के लिए जब जिस वस्तु की जरूरत होगी वह पास ही तुम्हें मिल जायेगी। रोग होने पर सेवा करनेवाले आदमी भी पास ही मिलेंगे।

"जनक, व्यास, वशिष्ठ ने ज्ञानलाभ कर संसार-धर्म का पालन किया था। ये दो तलवारे चलाते थे। एक ज्ञान की और दूसरी कर्म की।"

सब-जज – महाराज, ज्ञान हुआ यह हम कैसे समझे?

श्रीरामकृष्ण – ज्ञान के होने पर फिर वे दूर नही रहते, न दूर दीख पड़ते हैं, और फिर उन्हे 'वे' नही कह सकते, फिर 'ये' कहा जाता है। हृदय मे उनके दर्शन होते हैं। वे सब के भीतर हैं, जो खोजता है, वही पाता है।

सब-जज – महाराज, मै पापी हूँ। कैसे कहूँ – वे मेरे भीतर है?

श्रीरामकृष्ण – जान पड़ता है तुम लोगो मे यही पाप पाप लगा रहता है – यह क्रिस्तानी मत है, नही? मुझे किसी ने एक पुस्तक – बाइबिल (Bible) – दी। उसका मैने कुछ भाग सुना। उसमे बस वही एक बात थी – पाप-पाप! मैने जब उनका नाम लिया – राम या कृष्ण कहा, तो मुझे फिर पाप कैसे लग सकता है – ऐसा विश्वास चाहिए। नाम

माहात्म्य पर विश्वास होना चाहिए।

सब-जज – महाराज, यह विश्वास कैसे हो?

श्रीरामकृष्ण – उन पर अनुराग लाओ। तुम्हीं लोगों के गाने में है – 'हे प्रभु, बिना अनुराग के क्या तुम्हें कोई जान सकता है, चाहे कितने ही याग और यज्ञ क्यों न करे?' जिससे इस प्रकार का अनुराग हो, इस तरह ईश्वर पर प्यार हो, उसके लिए उनके पास निर्जन मे व्याकुल होकर प्रार्थना करो और रोओ। स्त्री के बीमार होने पर, व्यापार में घाटा होने पर या नौकरी के लिए लोग आँसुओं की धारा बहा देते हैं, परन्तु बताओ तो, ईश्वर के लिए कौन रोता है?

(५)

आम-मुखत्यारी दे दो

त्रैलोक्य – महाराज, इनको समय कहाँ है? अंग्रेज का काम करना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, उन्हें आम-मुखत्यारी दे दो। अच्छे आदमी पर अगर कोई भार देता है, तो क्या वह आदमी कभी उसका अहित करता है? उन्हें हृदय से सब भार देकर तुम निश्चिन्त होकर बैठे रहो। उन्होंने जो काम करने के लिए दिया है, तुम वही करते जाओ।

"बिल्ली के बच्चे मे कपटयुक्त बुद्धि नहीं है। वह मीऊँ मीऊँ करके माँ को पुकारना भर जानता है। माँ अगर खँडहर में रखती है, तो देखो वहीं पड़ा रहता है। बस 'मीऊँ' करके पुकारता भर है। माँ जब उसे गृहस्थ के बिस्तरे पर रखती है, तब भी उसका वहीं भाव है। 'मीऊँ' कहकर माँ को पुकारता है।"

सब-जज – हम लोग गृहस्थ हैं, कब तक यह सब काम करना होगा?

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारा कर्तव्य अवश्य है। वह है बच्चों को आदमी बनाना, स्त्री का भरणपोषण करना, अपने न रहने पर स्त्री के रोटीकपड़े के लिए कुछ रख जाना। यह अगर न करोगे तो तुम निर्दय कहलाओगे। शुकदेव आदि ने भी दया रखी थी। जिसको दया नहीं, वह मनुष्य ही नही हैं।

सब-जज – सन्तान का पालन-पोषण कब तक के लिए है?

श्रीरामकृष्ण – उनके बालिग होने तक के लिए। पक्षी के बड़े होने पर जब वह खुद अपना भार ले सकता है, तब उसकी माँ उस पर चोंच चलाती है, उसे पास नहीं आने देती। (सब हँसते हैं।)

सब-जज – स्त्री के प्रति क्या कर्तव्य है?

श्रीरामकृष्ण – जब तक तुम बचे हुए हो, तब तक धर्मोपदेश देते रहो, रोटी-कपड़ा देते जाओ। यदि वह सती होगी, तो तुम्हारी मृत्यु के बाद जिससे उसके खाने-

पहनने की कोई न कोई व्यवस्था हो जाय, ऐसा बन्दोबन्त तुम्हें कर देना होगा।

"परन्तु ज्ञानोन्माद के होने पर फिर कोई कर्तव्य नहीं रह जाता। तब कल के लिए तुम अगर न सोचोगे तो ईश्वर सोचेंगे। ज्ञानोन्माद होने पर तुम्हारे परिवार के लिए भी वे ही सोचेंगे। जब कोई जमींदार नाबालिग लड़कों को छोड़कर मर जाता है तब सरकार रियासत का काम सँभालती है। ये सब कानूनी बातें हैं, तुम तो जानते ही हो।"

सब-जज – जी हाँ।

विजय गोस्वामी – अहा! अहा! कैसी बात है। जिनका मन एकमात्र उन्हीं पर लगा रहता है, जो उनके प्रेम में पागल हो जाते हैं, उनका भार ईश्वर स्वयं ढोते हैं। नाबालिगों को बिना खोजे आप ही पालक मिल जाते हैं। अहा, यह अवस्था कब होगी? जिनकी होती है, वे कितने भाग्यवान हैं!

त्रैलोक्य – महाराज, संसार में क्या यथार्थ ज्ञान होता है? – ईश्वर मिलते हैं?

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – क्यों – तुम तो मौज में हो। (सब हँसते हैं।) ईश्वर पर मन रखकर संसार में हो न? अवश्य ही काम हो जायेगा।

त्रैलोक्य – संसार में ज्ञानलाभ होता है, इसके लक्षण क्या हैं?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर का नाम लेते हुए, उसकी आँखों से धारा बह चलेगी, शरीर में पुलक होगा। उनका मधुर नाम सुनकर शरीर रोमांचित होने लगेगा और आँखों से धारा बह चलेगी।

"जब तक विषय की आसक्ति रहती है, कामिनी-कांचन पर प्यार रहता है, तब तक देहबुद्धि दूर नहीं होती। विषय की आसक्ति जितनी घटती जाती है, उतना ही मन आत्मज्ञान की ओर बढ़ता जाता है और देहबुद्धि भी घटती जाती है। विषय की आसक्ति के समूल नष्ट हो जाने पर ही आत्मज्ञान होता है, तब आत्मा अलग जान पड़ता है और देह अलग। नारियल का पानी सूखे बिना गोले को नारियल से काटकर अलग करना बड़ा मुश्किल है। पानी सूख जाता है तो नारियल का गोला खड़खड़ता रहता है। वह खोल से छूट जाता है। इसे पका हुआ नारियल कहते हैं।

"ईश्वर की प्राप्ति होने का यही लक्षण है कि वह आदमी पके हुए नारियल की तरह हो जाता है – तब उसकी देहात्मिकाबुद्धि चली जाती है। देह के सुख और दुःख से उसे सुख या दुःख का अनुभव नहीं होता। वह आदमी देह-सुख नहीं जानता, वह जीवन्मुक्त होकर विचरण करता है।

"जब देखना कि ईश्वर का नाम लेते ही आँसू बहते हैं और पुलक होता है, तब समझना, कामिनी-कांचन की आसक्ति चली गयी है, ईश्वर मिल गये हैं। दियासलाई अगर सूखी हो, तो घिसने से ही जल उठती है। और अगर भीगी हो, तो चाहे पचासों सलाई घिस डालो कहीं कुछ न होगा, सलाइयों की बरबादी करना ही है। विषय-रस में

रहने पर कामिनी और कांचन में मन भीगा हुआ होने पर, ईश्वर की उद्दीपना नहीं होती। चाहे हजार उद्योग करो, परन्तु सब व्यर्थ होगा। विषय-रस के सूखने पर उसी क्षण उद्दीपन होगा।''

त्रैलोक्य – विषय-रस को सुखाने का अब कौनसा उपाय है?

श्रीरामकृष्ण – माता से व्याकुल होकर कहो। उनके दर्शन होने पर विषय-रस आप ही सूख जायेगा। कामिनी-कांचन की आसक्ति सब दूर हो जायेगी। 'अपनी माँ हैं' ऐसा बोध हो जाने पर इसी समय मुक्ति हो जायेगी। वे कुछ धर्म की माँ थोड़े ही हैं, अपनी माँ हैं। व्याकुल होकर माता से कहो – हठ करो। बच्चा पतंग खरीदने के लिए माता का आँचल पकड़कर पैसे माँगता है। माँ कभी उस समय दूसरी स्त्रियों से बातचीत करती रहती है। पहले किसी तरह पैसे देना ही नहीं चाहती। कहती है – 'नहीं, वे मना कर गये हैं। आयेंगे तो कह दूंगी, पतंग लेकर एक उत्पात खड़ा करना चाहता है क्या?' पर जब लड़का रोने लगता है, किसी तरह नहीं छोड़ता, तब माँ दूसरी स्त्रियों से कहती है, तुम जरा बैठो, इस लड़के को बहलाकर मैं अभी आयी। यह कहकर चाभी ले, झटपट सन्दूक खोलती है और एक पैसा बच्चे के आगे फेंक देती है। इसी तरह तुम भी माता से हठ करो। वे अवश्य ही दर्शन देंगी। मैंने सिक्खों से यही बात कही थी। वे लोग दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में गये थे। कालीमन्दिर के सामने बैठकर बातचीत हुई थी। उन लोगों ने कहा था, ईश्वर दयामय हैं। मैंने पूछा, क्यों दयामय हैं? उन लोगों ने कहा, क्यों महाराज, वे सदा ही हमारी देख-रेख करते हैं, हमें धर्म और अर्थ सब दे रहे हैं, खाने को देते हैं। मैंने कहा, अगर किसी के लड़के-बच्चे हों, तो उनकी खबर, उनके खाने-पीने का भार उनका बाप न लेगा, तो क्या गाँववाले आकर लेंगे?

सब-जज – महाराज, तो क्या वे दयामय नहीं है?

श्रीरामकृष्ण – हैं क्यों नहीं? वह एक बात उस तरह की कहनी ही थी। वे तो अपने परम आत्मीय हैं। उन पर हमारा जोर है। अपने आदमी से तो ऐसी बात भी कही जा सकती है – 'देगा कि नहीं? – साला कहीं का!'

(६)

अहंकार और सब-जज

श्रीरामकृष्ण – (सब-जज से) – अच्छा, अभिमान और अहंकार ज्ञान से होते हैं या अज्ञान से? – अहंकार तमोगुण है, अज्ञान से पैदा होता है। इस अहंकार की आड़ है, इसीलिए लोग ईश्वर को नहीं देख पाते। 'मैं' मरा कि बला टली। अहंकार करना वृथा है। यह शरीर, यह ऐश्वर्य, कुछ भी न रह जायेगा। कोई मतवाला दुर्गा की मूर्ति देख रहा था। प्रतिमा की सजावट देखकर उसने कहा, 'चाहे जितना बनोठनो, एक दिन लोग तुम्हें

घसीटकर गंगा में डाल देंगे।' (सब हँसते हैं।) इसीलिए सब से कह रहा हूँ, जज हो जाओ, चाहे जो हो जाओ, सब दो दिन के लिए है। इसीलिए अभिमान और अहंकार का त्याग करना चाहिए।

"सत्त्व, रज और तम, इन तीनों गुणों का स्वभाव अलग अलग है। तमोगुणवालों के लक्षण हैं, अहंकार, निद्रा, अधिक भोजन, काम, क्रोध, आदि आदि। रजोगुणी अधिक काम समेटते हैं; कपड़े साफ सुथरे, घर झकाझक, बैठकखाने में Queen (रानी) की तस्वीर; जब ईश्वर की चिन्ता करता है, तब रेशमी धोती पहनता है, गले में रुद्राक्ष की माला है, उसमें कहीं कहीं सोने के दाने पड़े रहते हैं, अगर कोई उसका ठाकुरमन्दिर देखने के लिए जाता है, तो साथ जाकर दिखाता और कहता है, 'इधर आइये, अभी और देखने को है। सफेद पत्थर – संगमर्मर – की जमीन है, सोलह द्वारों का सभामण्डप है।' और आदमियों को दिखलाकर दान देता है। सतोगुणी मनुष्य बहुत ही शिष्ट और शान्त होता है; उसके कपड़े वही जो मिल गये; रोजगार बस पेट भरने के लिए; कभी किसी की खुशामद करके धन नहीं लेता; घर की मरम्मत नहीं हुई है, मान और प्रतिष्ठा के लिए एड़ी और चोटी का पसीना एक नहीं करता; ईश्वर-चिन्तन, दानध्यान सब गुप्त भाव से करता है – लोगों को खबर नहीं होती, मसहरी के भीतर ध्यान करता है, लोग सोचते हैं – रात को बाबू की आँख नहीं लगी, इसीलिए देर तक सो रहे है। सतोगुण अन्त की सीढ़ी है, उसके आगे ही छत है। सतोगुण के आने पर ईश्वरप्राप्ति मे फिर देर नही होती – जरासा और बढ़ने से ही ईश्वर मिलते हैं। (सब-जज से) तुमने कहा था, सब आदमी बराबर हैं, देखो, अलग अलग प्रकृति के कितने मनुष्य हैं।

"और भी कितने ही दर्जे हैं – नित्यजीव, मुक्तजीव, मुमुक्षुजीव, बद्धजीव – अनेक तरह के आदमी हैं। नारद, शुकदेव नित्य जीव हैं; जैसे Steam boat (कलवाला जहाज)। खुद भी पार जाता है और बड़े बड़े जीवों को – हाथियों को भी ले जाता है। नित्य जीव नायबों की तरह हैं, एक स्थान का शासन कर दूसरे का शासन करने के लिए जाते हैं। मुमुक्षु जीव संसार के जाल से मुक्त होने के लिए व्याकुल होकर जान तक की बाजी लगाकर परिश्रम करते हैं। इनमें से एक ही दो जाल से निकल सकते हैं, वे मुक्त जीव हैं। नित्यजीव एक चालाक मछली की तरह है, वे कभी जाल में नहीं पड़ते।

"परन्तु जो बद्ध जीव हैं, संसारी जीव है, उन्हें होश नही रहता। वे जाल में तो पड़े हुए हैं, परन्तु यह ज्ञान नही है कि हम जाल मे फँसे है। सामने भगवत्प्रसंग देखकर ये लोग वहाँ से उठकर चले जाते हैं, कहते हैं – 'मरने के समय रामनाम लिया जायेगा, अभी इतनी जल्दी क्या है?' फिर मृत्युशय्या पर पड़े हुए अपनी स्त्री या लड़के से कहते हैं, 'दीपक में कई बत्तियाँ क्यों लगायी गयी है? – एक बत्ती लगाओ, मुफ्त में तेल जला जा

रहा है।' और अपनी बीबी और बच्चों की याद कर-करके रोते है, कहते हैं, 'हाय! मैं मरूँगा तो इनके लिए क्या होगा?' बद्ध जीव जिससे इतनी तकलीफ पाता है, वही काम फिर करता है; जैसे कँटीली डालियाँ चबाते हुए ऊँट के मुँह से धर-धर खून बहने लगता है, परन्तु वह कँटीली डालियों को खाना फिर भी नही छोड़ता। इधर लड़का मर गया है, शोक से विह्वल हो रहा है, फिर भी हर साल बच्चो की पैदाइश मे घाटा नही होता; लड़की के विवाह में सिर के बाल भी बिक गये; परन्तु हर साल लडके और लड़कियो की हाजिरी में कमी नही होती; कहता है, 'क्या करूँ, भाग्य में ऐसा ही था।' अगर तीर्थ करने के लिए जाता है, तो स्वयं कभी ईश्वर की चिन्ता नही करता, न समय मिलता है – समय तो बीबी की पोटली ढोते ढोते पार हो जाता है, ठाकुरमन्दिर मे जाकर बच्चे को चरणामृत पिलाने और देवता के सामने लोटपोट कराने मे ही व्यस्त रहता है। बद्ध जीव अपने और अपने परिवार के पेट पालने के लिए ही दासत्व करता है, और झूठ, वंचना एवं खुशामद करके धनोपार्जन करता है। जो लोग ईश्वर की चिन्ता करते हैं, ईश्वर के ध्यान में मग्न रहते हैं, उन्हे बद्ध जीव पागल कहते है और इस तरह उन्हे चुटकियो में उड़ाया करते हैं। देखो, आदमी कितनी तरह के हैं। तुमने सब को बराबर बतलाया था। देखो, कितनी भिन्न-भिन्न प्रकृतियाँ हैं। किसी मे शक्ति अधिक है, किसी में कम।

"संसार में फँसा हुआ जीव मृत्यु के समय संसार की ही बातें कहता है। बाहर माला जपने, गंगा नहाने और तीर्थ जानें से क्या होता है? संसार की आसक्ति के रहने पर, मृत्यु के समय वह दीख पड़ती है। न जाने कितनी वाहियात बातें बकता रहता है। कभी-कभी सन्निपात मे 'हलदी, मसाला, धनियाँ' कहकर चिल्ला उठता है। तोता जब भलाचंगा रहता है तब राम राम कहता है, जब बिल्ली पकड़ती है तो अपनी बोली मे 'टे-टे' करता है। गीता मे लिखा है, मृत्यु के समय जो कुछ सोचोगे, दूसरे जन्म मे वही होगे। राजा भरत ने 'हरिण-हरिण' कहकर देह छोड़ी थी, दूसरे जन्म मे वे हरिण ही हुए थे। ईश्वर की चिन्ता करके देह का त्याग करने पर ईश्वर की प्राप्ति होती है। फिर इस संसार में नही आना पड़ता।"

ब्राह्मभक्त – महाराज! किसी ने दूसरे समय में ईश्वर की चिन्ता की है, परन्तु मृत्यु के समय नही कर सका, तो क्या फिर उसे इस दुःखमय संसार मे आना होगा? पहले तो उसने ईश्वर की चिन्ता की थी।

श्रीरामकृष्ण – जीव ईश्वर की चिन्ता तो करता है परन्तु ईश्वर पर उसका विश्वास नही है, इसलिए फिर भूलकर संसार में फँस जाता है। जैसे हाथी को बार बार नहलाने पर भी, वह फिर देह पर धूल फेंक लेता है, उसी तरह मन भी मतवाला है, परन्तु हाथी को नहलाकर ही अगर उसके स्थान में बाँध रखो तो फिर वह अपने ऊपर धूल नही डाल सकेगा। अगर मृत्यु के समय जीव ईश्वर की चिन्ता करता है तो उसका मन शुद्ध हो जाता

है, वह मन फिर कामिनी-कांचन में फँसने का अवसर नहीं पाता।

"ईश्वर पर विश्वास नहीं है, इसीलिए इतने कर्मो का भोग करना पड़ता है। लोग कहते हैं, जब तुम गंगा नहाने जाते हो तब तुम्हारे शरीर के पाप किनारे के पेड पर बैठ जाते हैं, तुम गंगा नहाकर निकले नही कि वे पाप फिर तुम्हारे सिर पर सवार हो जाते हैं। (सब हँसते है।) देहत्याग के समय जिससे ईश्वर की चिन्ता हो, उसी के लिए पहले से उपाय किया जाता है। उपाय है – अभ्यासयोग। ईश्वर-चिन्तन का अभ्यास करने पर अन्तिम दिन भी उनकी याद आयेगी।"

ब्राह्मभक्त – बड़ी अच्छी बातें हुई, बड़ी सुन्दर बातें हैं।

श्रीरामकृष्ण – कैसी बेसिर-पैर की बातें मैं बक गया। परन्तु मेरा भाव क्या है, जानते हो? मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं; मैं गृह हूँ, वे गृही हैं, मैं गाड़ी हूँ, वे इंजीनियर हैं, मैं रथ हूँ, वे रथी हैं, जैसा चलाते हैं, वैसा ही चलता हूँ, जैसा कराते हैं, वैसा ही करता हूँ।

(७)

श्रीरामकृष्ण कीर्तनानन्द में

त्रैलोक्य फिर गा रहे हैं। साथ में खोल करताल बज रहे हैं। श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त होकर नृत्य करते करते कितनी ही बार समाधिमग्न हो रहे हैं। समाधिमग्न अवस्था में खड़े हैं। देह निःस्पन्द है। नेत्र स्थिर, मुख हँसता हुआ, किसी प्रिय भक्त के कन्धे पर हाथ रखे हुए हैं; भाव के अन्त में फिर वही प्रेमोन्मत्त नृत्य। बाह्य दशा को प्राप्त होकर गाने के पद स्वयं भी गाते हैं।

यह अपूर्व दृश्य है! मातृगतप्राण, प्रेमोन्मत्त बालक का स्वर्गीय नृत्य! ब्राह्मभक्त उन्हें घेरकर नृत्य कर रहे हैं। जैसे लोह को चुम्बक ने खींच लिया हो। सब के सब उन्मत्तवत् होकर ब्रह्म के गुणानुवाद गा रहे हैं। कभी कभी ब्रह्म के उस मधुर नाम का – माँ नाम का – उच्चारण कर रहे हैं – कोई कोई बालक की तरह 'माँ-माँ' करते हुए रो रहे हैं।

कीर्तन समाप्त हो जाने पर सब ने आसन ग्रहण किया। अभी तक समाज की सन्ध्यावाली उपासना नहीं हुई है। इस कीर्तनानन्द में सब नियम न जाने कहाँ बह गये। श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी रात को वेदी पर बैठेंगे, ऐसा बन्दोबस्त किया गया है। इस समय रात के आठ बजे होंगे।

सब ने आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण भी बैठे हुए हैं। सामने विजय हैं। विजय की सास और दूसरी स्त्रियाँ श्रीरामकृष्ण के दर्शन करना चाहती हैं और उनसे बातचीत भी करेंगी। यह संवाद पाकर श्रीरामकृष्ण कमरे के भीतर जाकर उनसे मिले।

कुछ देर बाद वहाँ से आकर वे विजय से कह रहे है, "देखो, तुम्हारी सास बड़ी

भक्तिमती है। उसने कहा, 'संसार की बात अब न कहिये, एक तरंग जाती है और दूसरी आती है।' मैंने कहा 'इससे तुम्हारा क्या बिगड़ सकता है? तुम्हें ज्ञान तो है।' तुम्हारी सास ने इस पर कहा, 'मुझे कहाँ का ज्ञान है! अब भी मैं विद्या माया और अविद्या माया के पार नहीं जा सकी। सिर्फ अविद्या माया के पार जाने से तो कुछ होता नहीं, विद्या माया को भी पार करना है, ज्ञान तो तभी होगा। आप ही तो यह बात कहते हैं।' "

यह बात हो रही थी कि श्रीयुत वेणीपाल आ गये।

वेणीपाल – महाराज, तो अब उठिये, बड़ी देर हो गयी, चलकर उपासना का श्रीगणेश कीजिये।

विजय – महाराज! अब और उपासना की क्या जरूरत है? आप लोगो के यहाँ पहले खीर-मलाई खिलाने की व्यवस्था है और पीछे से मटर की दाल तथा और और चीजें।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – जो जैसा भक्त है, वह वैसी ही भेंट चढ़ाता है। सतोगुणी भक्त खीर चढ़ाता है, रजोगुणी पचास तरह की चीजें पकाकर भोग लगाता है। तमोगुणी भक्त भेड़ और बकरे की बलि देता है।

विजय उपासना करने के लिए वेदी पर बैठें या नहीं, यह सोच रहे हैं।

(८)

ब्राह्मसमाज में व्याख्यान। ईश्वर ही गुरु हैं।

विजय – आप कृपा कीजिये, तभी मैं वेदी पर से कुछ कह सकूँगा।

श्रीरामकृष्ण – अभिमान के जाने से ही हुआ। मैं लेक्चर दे रहा हूँ, तुम सुनो, इस अभिमान के न रहने से ही हुआ। अहंकार ज्ञान से होता है या अज्ञान से? जो निरहंकार है, ज्ञान उसे ही होता है। नीची जमीन में ही वर्षा का पानी ठहरता है, ऊँची जमीन से बह जाता है।

"जब तक अहंकार रहता है, तब तक ज्ञान नहीं होता और न मुक्ति ही होती है। इस संसार में बार बार आना पड़ता है। बछड़ा 'हम्बा-हम्बा' (हम-हम) करता है इसलिए उसे इतना कष्ट भोगना पड़ता है। कसाई काटते हैं। चमड़े से जूते बनाते हैं, और जंगी ढोल मढ़े जाते हैं, वह ढोल भी न जाने कितना पीटा जाता है, तकलीफ की हद हो जाती है। अन्त में आँतों से ताँत बनायी जाती है। उस ताँत से जब धुनिये का धनुहा बनता है और उसके हाथ में धुनकते समय जब ताँत 'तूँ-तूँ' करती है तब कहीं निस्तार होता है, तब वह 'हम्बा-हम्बा' (हम-हम) नहीं बोलती, 'तूँ-तूँ' करती है; अर्थात् 'हे ईश्वर, तुम कर्ता हो, मैं अकर्ता; तुम यन्त्री हो, मैं यन्त्र; तुम्हीं सब कुछ हो।'

"गुरु, बाबा और मालिक, इन तीन बातों से मेरी देह में काँटे चुभते हैं। मैं उनका

बच्चा हूँ, सदा ही बालक हूँ, मैं क्यों 'बाबा' होने लगा? ईश्वर ही मालिक हैं; वे यन्त्री हैं; मैं यन्त्र हूँ।

"और कोई मुझे गुरु कहता है, तो मैं कहता हूँ 'चल साला, गुरु क्या है रे?' एक सच्चिदानन्द को छोड़ और गुरु कोई नहीं है, उनके बिना कोई उपाय नहीं है। एकमात्र वे ही भवपार ले जानेवाले हैं। (विजय से) आचार्यगिरी बहुत मुश्किल बात है। उससे अपनी हानि होती है। दस आदमियों को आप ही आप मानते हुए देखकर वह पैर के ऊपर पैर रखकर कहता है, 'मैं बोलता हूँ, तुम सुनो।' ऐसा भाव बड़ा बुरा है। उसके लिए बस वही हद है। वही जरासा मान; अधिक से अधिक लोग कहेंगे – 'अहा, विजय बाबू बहुत अच्छा बोले, वे बड़े ज्ञानी आदमी हैं।' 'मै कह रहा हूँ,' ऐसा विचार न लाना। मैं माँ से कहता हूँ – माँ, तुम यन्त्री हो, मैं यन्त्र हूँ; जैसा कराती हो, वैसा ही करता हूँ, जैसा कहलाती हो, वैसा ही कहता हूँ।' "

विजय – (विनयपूर्वक) – आप कहें तो मैं वेदी पर बैठ सकता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – मैं क्या कहूँ? तुम्हीं ईश्वर से प्रार्थना करो। जैसे चन्दामामा सभी के मामा हैं वैसे वे भी सभी के हैं। अगर आन्तरिकता होगी तो भय की बात नहीं है।

विजय के फिर विनय करने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, जाओ, जैसे पद्धति है, वैसा ही करो। उन पर आन्तरिक भक्ति के रहने ही से काम हो जायेगा।' वेदी पर बैठकर विजय ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना करने लगे। प्रार्थना के समय विजय 'माँ-माँ' कहकर पुकार रहे हैं। सुनकर सब लोग द्रवीभूत हो गये।

उपासना के पश्चात् भक्तो की सेवा के लिए भोजन का आयोजन हो रहा है। दरियाँ, गलीचे, सब उठा लिये गये। वहाँ पत्तले पड़ने लगी। प्रबन्ध हो जाने पर भक्तों ने भोजन करने के लिए आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण का भी आसन लगाया गया। वे भी बैठे और वेणीपाल की परोसी हुई पूड़ियाँ, कचौड़ियाँ, पापड़ और अनेक प्रकार की मिठाइयाँ, दही-खीर आदि ईश्वर को भोग लगाकर आनन्दपूर्वक भोजन करने लगे।

(९)

पूर्ण ज्ञान के बाद अभेद। ईश्वर का मातृभाव। आद्याशक्ति

भोजन के बाद पान खाते हुए सब लोग घर लौट रहे है। श्रीरामकृष्ण लौटने के पहले विजय से एकान्त मे बैठकर बातचीत कर रहे है। वहाँ मास्टर भी हैं।

श्रीरामकृष्ण – तुमने उनसे 'माँ-माँ' कहकर प्रार्थना की थी। यह बहुत अच्छा है। कहावत है, माँ की चाह बाप से अधिक होती है। माँ पर अपना बस है, बाप पर नही। त्रैलोक्य की माँ की जमीदारी से गाड़ियों में रुपया लदकर आता था। हाथ में लाठियाँ लिये

कितने ही लाल पगड़ीवाले सिपाही साथ रहते थे। त्रैलोक्य रास्ते मे आदमियो को लिये हुए खड़ा रहता था, जबरन सब रुपया ले लेता था। माँ के धन पर अपना पूरा जोर है। कहते है, लड़के के नाम पर माँ का दावा भी नही होता।

विजय – ब्रह्म अगर माँ है, तो वे साकार है या निराकार?

श्रीरामकृष्ण – जो ब्रह्म है, वही काली भी है। जब निष्क्रिय है, तब उन्हे ब्रह्म कहते है। जब सृष्टि, स्थिति, प्रलय, यह सब काम करते है, तब उन्हे शक्ति कहते हैं। स्थिर जल से ब्रह्म की उपमा हो सकती है। पानी जब हिलता-डुलता है, तब वह शक्ति की – काली की उपमा है। काली वे है, जो महाकाल के साथ रमण करती है। काली साकार भी हैं और निराकार भी। तुम लोग अगर निराकार पर विश्वास करते हो, तो काली का उसी रूप मे ध्यान करो। एक को मजबूती से पकड़कर उनकी चिन्ता करने से वे ही समझा देती है कि वे कैसी है। श्यामपुकुर पहुँचने पर तेलीपाड़ा भी जान लोगे। तब तुम समझ जाओगे कि ईश्वर हैं (अस्तिमात्रम्)। यही नही, बल्कि वे तुम्हारे पास आकर तुमसे बोलेगे, बातचीत करेगे – जैसे मैं तुमसे बोल रहा हूँ। विश्वास करो, सब हो जायगा। एक बात और है, तुम्हे अगर निराकार पर विश्वास हो, तो उसी विश्वास को दृढ़ करो। परन्तु कट्टर मत बनो। उनके सम्बन्ध मे जोर देकर ऐसा न कहना कि वे यह हो सकते है और यह नही। कहो – 'मेरा विश्वास है, वे निराकार है, वे और क्या क्या हो सकते है, यह तो वे ही जाने। मै नही जानता, न मेरी समझ मे यह बात आती है।' आदमी की छटाक भर बुद्धि में क्या ईश्वर की बात समझी जा सकती है? सेर भर के लोटे मे क्या चार सेर दूध समाता है? वे अगर कृपा करके कभी दर्शन दे और समझाये तो समझ मे आता है, नही तो नही।

"जो ब्रह्म है, वही शक्ति है, वही माँ है। रामप्रसाद कहते है, मैं जिस सत्य की तलाश कर रहा हूँ वे ब्रह्म है, उन्हे ही मैं माँ कहकर पुकारता हूँ। इसी बात को रामप्रसाद ने एक जगह और दुहराया है, काली को ब्रह्म जानकर मैंने धर्म और अधर्म दोनो का त्याग कर दिया है।

"अधर्म है असत् कर्म। धर्म है वैधी कर्म – इतना दान करना होगा - इतने ब्राह्मणो को खिलाना है, यह सब धर्म है।"

विजय – धर्म और अधर्म का त्याग करने पर बाकी क्या रहता है?

श्रीरामकृष्ण - शुद्धा भक्ति। मैने माँ से कहा था 'माँ यह लो अपना धर्म, यह लो अपना अधर्म, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना पुण्य और यह लो अपना पाप, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना ज्ञान और यह लो अपना अज्ञान, मुझे शुद्धा भक्ति दो।' देखो, *ज्ञान भी मैने नही चाहा।* मैने लोकसम्मान भी नही चाहा। धर्माधर्म का त्याग करने पर शुद्धा भक्ति – अमला, निष्काम, अहेतुकी भक्ति – बाकी रहती है।

ब्राह्म भक्त – उनमे और उनकी शक्ति मे क्या भेद है?

श्रीरामकृष्ण – पूर्ण ज्ञान के बाद दोनों अभेद हैं। जैसे मणि की ज्योति और मणि अभेद हैं, मणि की ज्योति की चिन्ता करने से ही मणि की चिन्ता की जाती है। दूध और दूध की धवलता जैसे अभेद है, एक को सोचिये तो दूसरे को भी सोचना पड़ता है; परन्तु यह अभेद-ज्ञान पूर्ण ज्ञान के बिना हुए नहीं होता। पूर्ण ज्ञान से समाधि होती है। तब मनुष्य चौबीस तत्त्वों को पार कर जाता है – इसलिए अहंतत्त्व नहीं रह जाता। समाधि में कैसा अनुभव होता है, यह कहा नही जा सकता। उतरकर कुछ आभास मिलता है, वही कहा जा सकता है। समाधि छूटने के बाद जब मैं 'ॐ ॐ' कहता हूँ, तब समझो कि मैं कम से कम सौ हाथ नीचे उतर आया हूँ। ब्रह्म वेद और विधियों से परे हैं; वे वाणी में नहीं आते। वहाँ 'मैं-तुम' नहीं है।

"जब तक 'मैं' और 'तुम' ये भाव हैं, तब 'मैं प्रार्थना कर रहा हूँ या ध्यान कर रहा हूँ' यह भी ज्ञान है और 'तुम (ईश्वर) प्रार्थना सुनते हो' यह भी ज्ञान है; और उस समय ईश्वर के व्यक्तित्व का भी बोध है। तुम प्रभु हो, मैं दास, तुम पूर्ण हो, मै अंश; तुम माँ हो, मैं पुत्र, यह बोध भी रहेगा। यह भेद-बोध है – मैं एक अलग हूँ और तुम अलग। यह बोध वे ही कराते है; इसीलिए 'स्त्री' और 'पुरुष', 'उजाले' और 'अँधेरे' का ज्ञान है। जब तक यह भेद-बोध है, तब तक शक्ति को मानना पड़ेगा। उन्हींने हमारे भीतर 'मै' रख दिया है। चाहे हजार विचार करो, परन्तु 'मै' नही दूर होता। जब तक 'मैं' है तब तक ईश्वर साकार रूप में ही मिलते हैं।

"इसलिए जब तक 'मै' है, भेद-बुद्धि है, तब तक ब्रह्म निर्गुण है, यह कहने का अधिकार नहीं; तब तक सगुण ब्रह्म ही मानना होगा। इसी सगुण ब्रह्म को वेदो, पुराणों और तन्त्रो में काली या आद्याशक्ति कहा गया है।"

विजय – आद्याशक्ति के दर्शन और ब्रह्मज्ञान ये कैसे हों?

श्रीरामकृष्ण – हृदय के विकल होकर उनसे प्रार्थना करो और रोओ। चित्त शुद्ध हो जायेगा। निर्मल पानी में सूर्य का बिम्ब दिखायी देगा। भक्त के 'मैं' रूपी आईने में उस सगुण ब्रह्म – आद्याशक्ति के दर्शन होंगे; परन्तु आईने को खूब साफ रखना चाहिए।

"मैला रहने पर सच्चा बिम्ब न पड़ेगा।

" 'मै' रूपी पानी में सूर्य को तब तक इसलिए देखते हैं कि सूर्य के देखने का और कोई उपाय नही है, और प्रतिबिम्ब-सूर्य को छोड़ यथार्थ-सूर्य के देखने का जब तक कोई दूसरा उपाय नहीं मिलता, तब तक वह प्रतिबिम्ब-सूर्य ही सोलहों आने सत्य है। जब तक 'मैं' सत्य है, तब तक प्रतिबिम्ब-सूर्य भी सोलहों आने सत्य है। वही प्रतिबिम्ब-सूर्य आद्याशक्ति है।

"यदि ब्रह्मज्ञान चाहते हो, तो उसी प्रतिबिम्ब-सूर्य को पकड़कर सत्य-सूर्य की ओर जाओ। उस सगुण ब्रह्म से, जो प्रार्थनाएँ सुनते हैं, कहो; वे ही ब्रह्मज्ञान देंगे, क्योंकि जो

सगुण ब्रह्म है, वे ही निर्गुण ब्रह्म भी है, जो शक्ति है, वे ही ब्रह्म भी है, पूर्ण ज्ञान के बाद दोनो अभेद हो जाते है।

"माँ ब्रह्मज्ञान भी देती है; परन्तु शुद्ध भक्त कभी ब्रह्मज्ञान नही चाहता।

"एक और मार्ग है, ज्ञानयोग, परन्तु यह बड़ा कठिन है। ब्राह्मसमाजवाले तुम लोग ज्ञानी नही हो, भक्त हो। जो लोग ज्ञानी है उन्हे विश्वास है कि ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या-स्वप्नवत्।

"वे अन्तर्यामी है। उनसे सरल और शुद्ध मन से प्रार्थना करो। वे सब समझा देगे, अहंकार छोड़कर उनकी शरण मे जाओ। सब पा जाओगे।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे – " 'मन! अपने ही आप मे रहो। किसी दूसरे के घर न जाओ। जो कुछ चाहोग वह बैठे हुए ही पाओगे, अपने अन्त:पुर मे जरा खोजो तो सही। वह पारस पत्थर परम धन है, जो कुछ चाहोगे, वह तुम्हे दे सकता है। चिन्तामणि की नाट्यशाला के द्वार पर कितने ही मणि पडे हुए है।'

"जब बाहर के लोगो से मिलना तब सभी को प्यार करना, मिलकर एक हो जाना – फिर द्वेषभाव जरा भी न रखना। 'वह आदमी साकार मानता है, निराकार नही मानता, वह निराकार मानता है, साकार नही मानता, वह हिन्दू है, वह मुसलमान है, वह क्रिस्तान है,' यह कह-कहकर घृणा से नाक न सिकोड़ना, क्योकि उन्होने जिसे जिस तरह समझाया है, उसमे वैसी ही बुद्धि है। समझना कि सब की प्रकृति भिन्न भिन्न है। यह जानकर तुमसे जहाँ तक हो सके, दूसरो से मिलने की ही चेष्टा करना और उन्हे प्यार करना। फिर अपने घर मे शान्ति और आनन्द का भोग करो। 'हृदयरूपी घर में ज्ञान का दीपक जलाकर ब्रह्ममयी का मुख देखो।' अपने ही घर मे अपना स्वरूप देख सकोगे। चरवाहे जब गौओ को चराने के लिए ले जाते है, तब चरागाह मे सब गौएँ एक मे मिल जाती है। जब शाम के समय अपने घर मे जाती है तब फिर सब अलग अलग हो जाती है। इसीलिए मै कहता हूँ, अपने घर मे – 'अपने आप' मे ही रहो।"

रात के दस बज जाने पर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर चलने के लिए गाड़ी पर चढ़े। साथ मे दो-एक सेवक भक्त भी है। घोर अँधेरा है, गाड़ी पेड़ के नीचे खड़ी हुई है। वेणीपाल रामलाल के लिए पूड़ियाँ और मिठाई गाड़ी पर रख देने के लिए ले आये।

वेणीपाल – महाराज, रामलाल आ नही सके, उनके लिए इन लोगो के हाथ कुछ पूड़ी-मिठाई भेजना चाहता हूँ, अगर आप आज्ञा दे।

श्रीरामकृष्ण – (घबराकर) – ओ बाबू वेणीपाल! तुम मेरे साथ यह सब न भेजो। इससे मुझे दोष लगता है। मुझे अपने साथ किसी चीज का संचय करके रखना न चाहिए। तुम कुछ और न सोचना।

वेणीपाल – जो आज्ञा, आप आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – आज खूब आनन्द हुआ। देखो, जिसका दास अर्थ हो, आदमी वही है – जो लोग अर्थ का व्यवहार नहीं जानते, वे मनुष्य होकर भी मनुष्य नही हैं। आकृति तो उनकी मनुष्य जैसी है परन्तु व्यवहार पशु जैसा। तुम धन्य हो। इतने भक्तों को तुमने आनन्दित कर दिया।

□□□

परिच्छेद १००

बड़ा बाजार में श्रीरामकृष्ण

(१)

समाधितत्त्व

आज श्रीरामकृष्ण १२ नम्बर मल्लिक स्ट्रीट बडा बाजार जानेवाले है। मारवाडी भक्ता ने श्रीरामकृष्ण को न्योता दिया है। कालापूजा को बीते दो दिन हो गये। आज सोमवार है, २० अक्टूबर, १८८४, कार्तिक शुक्ला द्वितीया। बडा बाजार मे अब भी दीवाली का आनन्द चल रहा है।

दिन को लगभग तीन बजे मास्टर छोटे गोपाल के साथ बड़ा बाजार आये। श्रीरामकृष्ण ने छोटी धोती खरीदने की आज्ञा दी थी – मास्टर उसे खरीदकर एक कागज मे लपेटकर हाथ मे लिये हुए है। मल्लिक स्ट्रीट म दोनो ने पहुँचकर देखा, आदमियो की बड़ी भीड़ है। १२ नम्बर स्ट्रीट के पास पहुँचकर देखा, श्रीरामकृष्ण बग्घी पर बैठे हुए है, बग्घी बढ़ नही सकती – गाडियो की इतनी भीड़ है। भीतर बाबूराम थे और राम चट्टोपाध्याय। गोपाल और मास्टर को देखकर श्रीरामकृष्ण हँस रहे है।

श्रीरामकृष्ण गाड़ी मे उतरे। साथ मे बाबूराम है, मास्टर आगे रास्ता दिखाते हुए चल रहे है। मारवाडी भक्त के यहाँ पहुँचकर उन्होने देखा, नीचे आगन मे कपडे की कितनी ही गाँठे पडी हुई है। एक ओर बैलगाडियो पर माल लद रहा है। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ ऊपर के मजले पर चढने लगे। मारवाडियो ने आकर उन्हे तिमंजले के एक कमरे मे बैठाया। उस कमरे मे काली का चित्र था। श्रीरामकृष्ण आसन ग्रहण करके हँसते हुए भक्तो से बातचीत करने लगे।

एक मारवाड़ी आकर श्रीरामकृष्ण के पैर दबाने लगा। श्रीरामकृष्ण ने पहले तो मना किया, परन्तु फिर कुछ सोचकर कहा, 'अच्छा', फिर मास्टर से पूछा, स्कूल का क्या हाल है।

मास्टर – जी आज छुट्टी है।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – कल अधर के यहाँ चण्डी का गाना होगा।

मारवाड़ी भक्त ने पण्डितजी को श्रीरामकृष्ण के पास भेजा। पण्डितजी ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर आसन ग्रहण किया। पण्डितजी के साथ अनेक प्रकार की ईश्वर

सम्बन्धी वार्ता हो रही है। अवतार – सम्बन्धी बातें होने लगीं।

श्रीरामकृष्ण – अवतार भक्तों के लिए है, ज्ञानियों के लिए नहीं।

पण्डितजी – परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।

"अवतार पहले तो भक्तों के आनन्द के लिए होता है, और दूसरे दुष्टों के दमन के लिए। परन्तु ज्ञानी कामनाशून्य होते है।"

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – परन्तु मेरी सब कामनाएँ नहीं मिटी। भक्ति की कामना बनी हुई है।

इसी समय पण्डितजी के पुत्र ने आकर श्रीरामकृष्ण की चरण-वन्दना की और आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण – (पण्डितजी के प्रति) – अच्छा जी, भाव किसे कहते हैं?

पण्डितजी – ईश्वर की चिन्ता करते हुए जब मनोवृतियाँ कोमल हो जाती है, तब उस अवस्था को भाव कहते है, जैसे सूर्य के निकलने पर बर्फ गल जाती है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा जी, प्रेम किसे कहते है?

पण्डितजी हिन्दी में ही बातचीत कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उनके साथ बड़ी मधुर हिन्दी मे बातचीत कर रहे है। पण्डितजी ने प्रेम का उत्तर एक दूसरे ही ढंग से समझाया।

श्रीरामकृष्ण – (पण्डितजी से) – नही, प्रेम का अर्थ यह नहीं है। प्रेम यह है, ईश्वर पर ऐसा प्यार होगा कि संसार के अस्तित्व का होश तो रह ही नहीं जायेगा, साथ ही अपनी देह भी जो इतनी प्यारी वस्तु है, भूली जायेगी। प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था।

पण्डितजी – जी हाँ, जैसा मतवाला होने पर होता है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा जी, किसी को भक्ति होती है किसी को नहीं इसका क्या अर्थ है?

पण्डितजी – ईश्वर में वैषम्य नहीं है। वे कल्पतरु हैं। जो जो कुछ चाहता है, वह वही पाता है, परन्तु कल्पतरु के पास जाकर माँगना चाहिए।

पण्डितजी यह सब हिन्दी में कह रहे हैं। श्रीरामकृष्ण मास्टर की ओर देखकर अर्थ बतला रहे है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा जी, समाधियाँ किस किस तरह की हैं, अब कहिये तो जरा।

पण्डितजी – समाधि दो तरह की है, सविकल्प और निर्विकल्प। निर्विकल्प समाधि में विकल्प नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, 'तदाकाराकारित', ध्याता और ध्येय का भेद नहीं रहता। और चेतन समाधि और जड़ समाधि, ये भी हैं। नारद, शुकदेव. इनकी चेतन समाधि है, क्यो जी?

पण्डितजी – जी हॉ।

श्रीरामकृष्ण – और उन्मना समाधि और स्थित समाधि, ये भी हैं, क्यों जी?

पण्डितजी चुप हो रहे, कुछ बोले नही।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा जी, जप-तप करने से तो विभूतियाँ प्राप्त हो सकती है – जैसे गंगा के ऊपर से पैदल चले जाना।

पण्डितजी – जी हॉ, यह मब होता है, परन्तु भक्त यह कुछ नही चाहता।

और थोड़ीसी बातचीत होने पर पण्डितजी ने कहा, एकादशी के दिन दक्षिणेश्वर मे आपके दर्शन करने आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – अहा, तुम्हारा लड़का तो बड़ा अच्छा है।

पण्डितजी – महाराज, नदी की एक तरंग जाती है, तो दूसरी आती है। सब कुछ अनित्य है।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारे भीतर सार वस्तु है।

कुछ देर के बाद पण्डितजी ने प्रणाम किया। कहा, 'तो पूजा करने जाऊँ?'

श्रीरामकृष्ण – अजी, बैठो।

पण्डितजी फिर बैठे।

श्रीरामकृष्ण ने हठयोग की बात चलायी। पण्डितजी भी हिन्दी मे इसी के सम्बन्ध मे बातचीत करने लगे। श्रीरामकृष्ण ने कहा, हॉ, यह भी एक तरह की तपस्या है, परन्तु हठयोगी देहाभिमानी साधु है, उसका मन सदा देह पर ही लगा रहता है।

पण्डितजी ने फिर बिदा होना चाहा। पूजा करने के लिए जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण पण्डितजी के लड़के से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – कुछ न्याय, वेदान्त तथा और और दर्शनो के पढ़ने से श्रीमद्‌भागवत खूब समझ मे आती है, – क्यो?

पुत्र – जी महाराज, सांख्य-दर्शन पढ़ने की बड़ी आवश्यकता है। इस तरह की बाते होने लगी।

श्रीरामकृष्ण तकिये के सहारे जरा लेट गये। पण्डितजी के पुत्र तथा भक्तगण जमीन पर बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण लेटे ही लेटे धीरे धीरे गा रहे है –

'हरि सो लागी रहो रे भाई। तेरा बनत-बनत बनि जाई।।
अंका तारे बंका तारे, तारे मीराबाई।
सुआ पढ़ावत गणिका तारे, तारे सजन कसाई।।'

(२)

साधना की आवश्यकता

घर के मालिक ने आकर प्रणाम किया। ये मारवाड़ी-भक्त श्रीरामकृष्ण पर बड़ी

भक्ति रखते है। पण्डितजी के लड़के बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, क्या इस देश मे पाणिनि व्याकरण पढ़ाया जाता है?

मास्टर – जी पाणिनि?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, न्याय ओर वेदान्त, क्या यह सब पढ़ाया जाता है?

इन बातो का घर के मालिक मारवाड़ी ने कोई उत्तर नही दिया।

गृहस्वामी – महाराज, उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – उनका नाम-गुण-कीर्तन और साधुसंग। उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करना।

गृहस्वामी – महाराज, ऐसा आशीर्वाद दीजिये कि जिससे संसार मे मन हटता जाय।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कितना है? आठ आने? (हास्य।)

गृहस्वामी – यह सब तो आप जानते ही हैं। महात्मा की दया के हुए बिना कुछ भी न होगा।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर को सन्तुष्ट करोगे तो सभी सन्तुष्ट हो जायेगे। महात्मा के हृदय में वे ही तो है।

गृहस्वामी – उन्हे पाने पर तो बात ही कुछ और है। उन्हे अगर कोई पा जाता है, तो सब कुछ छोड़ देता है। रुपया पाने पर आदमी पैसे का आनन्द छोड़ देता है।

श्रीरामकृष्ण – कुछ साधना की आवश्यकता होती है। साधना करते ही करते आनन्द मिलने लगता है। मिट्टी के बहुत नीचे अगर घडे मे धन रखा हुआ हो, और अगर कोई वह धन चाहे तो मेहनत के साथ उसे खोदते रहना चाहिए। सिर मे पसीना टपकता है, परन्तु बहुत कुछ खोदने पर घड़े मे जब कुदार लगकर ठनकार होती है, तब आनन्द भी खूब मिलता है। जितनी ही ठनकार होती है, उतना ही आनन्द बढता है। राम को पुकारते जाओ, उनकी चिन्ता करो, वे ही सब कुछ ठीक कर देगे।

गृहस्वामी – महाराज, आप राम है।

श्रीरामकृष्ण – यह क्या, नदी की ही तरंग है, तरंगो की नदी थोड़े ही है?

गृहस्वामी – महात्माओ के ही भीतर राम है। राम को कोई देख तो पाता नही, और अब अवतार भी नही है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कैसे तुम्हे मालूम हुआ कि अवतार नही है?

गृहस्वामी चुपचाप बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण – अवतारी पुरुष को सब लोग नही पहचान पाते। नारद जब श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन करने के लिए गये, तब राम ने खड़े होकर नारद को साष्टांग प्रणाम किया और कहा, 'हम लोग संसारी जीव है, आप जैसे साधुओ के आये बिना हम लोग

कैसे पवित्र होंगे!' फिर जब सत्यपालन के लिए वन गये, तब देखा, राम के वनवास का संवाद पाकर ऋषिगण आहार तक छोड़कर पड़े हुए थे। फिर भी उनमे से बहुतों को मालूम नही था कि राम अवतार हैं।

गृहस्वामी – आप भी वही राम हैं।

श्रीरामकृष्ण – राम! राम! ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और कहा – "जो राम घट-घट मे विराजमान है, उन्ही का बनाया यह संसार है। मैं तुम लोगों का दास हूँ। वही राम ये सब मनुष्य और जीव-जन्तु हुए हैं।"

गृहस्वामी - हम लोग यह क्या जानें?

श्रीरामकृष्ण – तुम जानो या न जानो, तुम राम हो।

गृहस्वामी – आप मे राग-द्वेष नहीं हैं।

श्रीरामकृष्ण – क्यो? जिस गाड़ीवाले से कलकत्ते आने की बात हुई थी, वह तीन आने पैसे ले गया, फिर नही आया, उससे तो मै खूब चिढ़ गया था। और था भी वह बड़ा बुरा आदमी। देखो न, कितनी तकलीफ दी।

(३)

बड़ा बाजार का अन्नकूट-महोत्सव

श्रीरामकृष्ण ने कुछ देर विश्राम किया। इधर मारवाड़ी भक्त छत पर गाने-बजाने लगे। आज श्रीमयूर-मुकुटधारी का महोत्सव है। भोग का सब आयोजन हो गया। देवदर्शन करने के लिए लोग श्रीरामकृष्ण को बुला ले गये। श्रीमयूर-मुकुटधारी का दर्शन कर श्रीरामकृष्ण ने निर्माल्य धारण किया।

विग्रह के दर्शन कर श्रीरामकृष्ण भाव-मुग्ध हो रहे हैं। हाथ जोड़कर कह रहे हैं – "प्राण हो, हे कृष्ण, मेरे जीवन हो। जय गोविन्द गोविन्द वासुदेव सच्चिदानन्द! हे कृष्ण, हे कृष्ण, ज्ञान कृष्ण, मन कृष्ण, प्राण कृष्ण, आत्मा कृष्ण, देह कृष्ण, जाति कृष्ण, कुल कृष्ण, प्राण हो, हे कृष्ण, मेरे जीवन हो।"

ये बातें कहते हुए श्रीरामकृष्ण खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। श्रीयुत राम चैटर्जी श्रीरामकृष्ण को पकड़े रहे। बड़ी देर बाद समाधि छूटी।

इधर मारवाड़ी भक्त श्रीमयूर-मुकुटधारी विग्रह को बाहर ले जाने के लिए आये। भोग का बन्दोबस्त बाहर ही हुआ था।

अब श्रीरामकृष्ण की समाधि-अवस्था नहीं है। मारवाड़ी भक्त बड़े आनन्द से सिंहासन के विग्रह को बाहर लिये जा रहे है, श्रीरामकृष्ण भी साथ-साथ जा रहे हैं। भोग लगाया जा चुका। भोग के समय मारवाड़ी भक्तों ने कपड़े की आड़ की थी। भोग के

पश्चात् आरती और गाने होने लगे। श्रीरामकृष्ण विग्रह को चामर व्यजन कर रहे हैं। मारवाड़ियों ने श्रीरामकृष्ण से भोजन करने का अनुरोध किया। श्रीरामकृष्ण बैठे, भक्तों ने भी प्रसाद पाया।

श्रीरामकृष्ण चलने के लिए बिदा होने लगे। शाम हो गयी है और रास्ते में भीड़ भी बहुत है। श्रीरामकृष्ण ने कहा, "हम लोग गाड़ी से तब तक के लिए उतर पड़ें। गाड़ी पीछे से घूमकर आये तब चढ़ें।" रास्ते से जाते समय श्रीरामकृष्ण ने देखा, पानवाला एक बहुत छोटी सी दूकान में बैठा हुआ है जिसे देखकर मालूम हुआ कि दूकान क्या है, बिल है। उस दूकान में बिना खूब सिर झुकाये कोई घुस नहीं सकता था। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "कितना कष्ट है, इतने ही के भीतर बद्ध होकर रहना! संसारियों का स्वभाव भी कैसा है! इसी में उन्हें आनन्द मिलता है!"

गाड़ी लौटकर पास आयी। श्रीरामकृष्ण फिर गाड़ी पर बैठे। भीतर श्रीरामकृष्ण के साथ बाबूराम, मास्टर, राम चैटर्जी और छत पर छोटे गोपाल बैठे हुए हैं।

एक भिखारिन ने गोद में बच्चा लिये हुए गाड़ी के सामने आकर भीख माँगी। श्रीरामकृष्ण ने देखकर मास्टर से कहा – "क्यों जी, पैसा है?" गोपाल ने पैसा दे दिया।

बड़ा बाजार से गाड़ी जा रही है। दीवाली की बड़ी धूम है। अँधेरी रात दीपों से जगमगा रही है। बड़ा बाजार की गली से होकर गाड़ी चितपुर रोड पर आयी। वहाँ भी दिये जगमगा रहे हैं और चीटियों की तरह आदमियों की पाँत चल रही है। आदमी दूकानों की सजावट पर मुग्ध हो रहे हैं। दूकानदार अच्छे अच्छे वस्त्र पहने हुए गुलाबपाश हाथ में लिये लोगों पर गुलाब छिडक रहे हैं। गाड़ी एक इत्रवाले की दूकान के सामने आयी। श्रीरामकृष्ण पाँच वर्ष के बालक की तरह तस्वीर और रोशनी देख-देखकर प्रसन्न हो रहे हैं। चारों ओर कोलाहल हो रहा है। श्रीरामकृष्ण उच्च स्वर से कह रहे हैं – "और भी बढ़कर देखो – और भी बढ़कर।" यह कहकर हँस रहे हैं। बड़े जोरों से हँसकर बाबूराम से कह रहे हैं, 'अरे बढ़ता क्यों नहीं? तू कर क्या रहा है?'

भक्तगण हँसने लगे। उन्होंने समझा, श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं ईश्वर की ओर बढ़ जा, अपनी वर्तमान अवस्था से सन्तुष्ट होकर न रहना। ब्रह्मचारी ने लकड़हारे से कहा था, बढ़ जाओ। बढ़ते हुए उसने क्रमश: चन्दन का वन, चाँदी की खान, सोने की खान, हीरा, मणि आदि देखा था। इसीलिए श्रीरामकृष्ण बार बार कहते हैं, बढ़ जाओ, बढ़ जाओ।

गाड़ी चलने लगी। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर की खरीदी हुई धोतियाँ देखीं। दो धोतियाँ कोरी थीं और दो धुली हुई थीं। श्रीरामकृष्ण ने सिर्फ आठ हाथ की कोरी धोतियाँ लाने के लिए कहा था, जो नहाने के समय पहनी जाती हैं। श्रीरामकृष्ण ने ऐसी ही धोतियाँ खरीदने के लिए कहा था। उन्होंने कहा – "ये कोरी धोतियाँ दोनों दे जाओ और दूसरी धोतियाँ इस समय लेते जाओ, अपने पास रख लेना। चाहे एक दे देना।"

मास्टर – जी, एक धोती लौटा ले जाऊँगा?

श्रीरामकृष्ण – नहीं, तो अभी रहने दो; दोनों ही साथ ले जाना।

मास्टर – जो आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण – फिर जब आवश्यकता होगी तब ले आना। देखो न, कल वेणीपाल रामलाल के लिए गाड़ी में खाना देने के लिए आया था। मैंने कहा, मेरे साथ कोई चीज न देना। मुझमे संचय करने की शक्ति नहीं है।

मास्टर – जी हाँ। इसमें और क्या है, ये दोनों सादी धोतियाँ लौटा ले जाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – (सस्नेह) – मेरे मन में किसी तरह से कुछ पैदा हो यह तुम्हारे लिए अच्छा नही। – यह तो अपनी बात है, जब आवश्यकता होगी, कहूँगा।

मास्टर – (विनयपूर्वक) – जो आज्ञा।

गाड़ी एक दूकान के सामने आ गयी। वहाँ चिलमें बिक रही थीं। श्रीरामकृष्ण ने राम चैटर्जी से कहा, 'राम, एक पैसे की चिलम मोल न ले लोगे?

श्रीरामकृष्ण एक भक्त की बात कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – मैने उससे कहा, कल बड़ा बाजार जाऊँगा, तू भी चलना। परन्तु सुना तुमने – उसने क्या कहा? कहा – 'ट्राम के चार पैसे लगेंगे, कौन जाय?' कल वेणीपाल के बगीचे मे गया था। वहाँ फिर आचार्यगिरी भी की। किसी ने न कहा, न सुना, आप ही आप गाने लगा जिससे आदमी समझें मैं ब्राह्मसमाजवालों का ही एक आदमी हूँ। (मास्टर से) क्यों जी, यह भला क्या है? कहता है – एक आना खर्च हो जायेगा।

फिर मारवाड़ी भक्तों के अन्नकूट की बात होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – यहाँ जो कुछ तुमने देखा, वही बात वृन्दावन में भी है। राखाल आदि वृन्दावन में यही सब देख रहे होंगे। परन्तु वहाँ अन्नकूट और बढ़कर होता है। आदमी भी बहुत हैं। गोवर्धन पर्वत है, यही विचित्रता है।

"परन्तु मारवाड़ियों में कैसी भक्ति है, देखी? यथार्थ ही इनमें हिन्दू भाव है। यही सनातन धर्म है। – श्रीठाकुरजी को ले जाते समय, देखा तुमने, उन्हें कैसा आनन्द हो रहा था? आनन्द यह सोचकर कि हम भगवान का सिंहासन उठाये लिये जा रहे हैं।

"हिन्दूधर्म ही सनातन धर्म है। आजकल जो सब सम्प्रदाय देख रहे हो, यह सब उनकी इच्छा से होकर फिर मिट जायेंगे। इसीलिए मैं कहता हूँ, आधुनिक जो सब भक्त हैं, उनके भी चरणो मे प्रणाम है। हिन्दूधर्म पहले से है और सदा रहेगा भी।"

मास्टर घर जायेंगे। वे श्रीरामकृष्ण की चरण-वन्दना करके शोभा बाजार के पास उतर गये। श्रीरामकृष्ण आनन्द मनाते हुए गाड़ी पर जा रहे हैं।

परिच्छेद १०१

श्रीरामकृष्ण तथा मायावाद

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में मनमोहन, महिमा आदि भक्तों के साथ

चलो भाई, फिर उनके दर्शन करने चलें। उन्हीं महापुरुष बालकस्वरूप को देखें, जो माँ के सिवा और कुछ भी नहीं जानते – जो हमारे लिए ही शरीर धारण करके आये हैं। वही बतलायेंगे, इस कठिन जीवन-समस्या की पूर्ति कैसे होगी। वे संन्यासी को बतलायेंगे और गृहस्थ को भी बतलायेंगे, उनका द्वार सभी के लिए खुला हुआ है। वे दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में हमारे लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं, चलो, चलकर उनके दर्शन करें।

वे अनन्त गुणो के आधार है, वे प्रसन्नमूर्ति हैं, उनकी बातों को सुनकर आँखों से आँसू बह चलते हैं।

चलो भाई, वे अहेतुक-कृपा-सिन्धु हैं, प्रियदर्शन हैं, ईश्वर के प्रेम में दिन रात मस्त रहनेवाले उन सहास्यमूर्ति श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर हम अपने इस मनुष्य-जन्म को सार्थक करें।

आज रविवार है, २६ अक्टूबर १८८४। कार्तिक की शुक्ला सप्तमी; हेमन्तकाल है। दिन का दूसरा पहर है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में भक्तों के साथ बैठै हुए हैं। कमरे के साथ मिला हुआ पश्चिम की ओर अर्धगोलाकार एक बरामदा है। बरामदे के पश्चिम ओर बगीचे का रास्ता है जो उत्तर-दक्षिण की ओर गया हुआ है। रास्ते के पश्चिम ओर फुलवाड़ी है, आगे पवित्र सलिला जाह्नवी दक्षिणवाहिनी हो रही हैं।

भक्तों में से कितने ही आये हुए हैं। आज आनन्द का हाट लगा है। आनन्दमय श्रीरामकृष्ण का ईश्वर-प्रेम भक्तों के मुखदर्पण में प्रतिबिम्बित हो रहा है। कितना आश्चर्य है! केवल भक्तों ही के मुखदर्पण में नहीं, बाहर के उद्यानों में, वृक्षपत्रों मे, खिले हुए अनेक प्रकार के फूलों में, विशाल भागीरथी के हृदय में, सूर्य की किरणों से दीप्तिमान नीलिमामय नभोमण्डल में, भगवान विष्णु के चरणों से च्युत हुई गंगाजी के जलकणों को छूकर प्रवाहित होती हुई शीतल वायु में यही आनन्द प्रतिभासित हो रहा था! कितने

आश्चर्य की बात है। – 'मधुवत् पार्थिवं रजः' – सचमुच उद्यान की धूलि भी मधुमय हो रही है! – इच्छा होती है, गुप्त भाव से या भक्तो के साथ इस धूलि पर लोटपोट हो जायँ। इच्छा होती है, इस उद्यान के एक ओर खड़े होकर दिन भर इस मनोहर गंगावारि के दर्शन करे। इच्छा होती है, लता-गुल्म और पत्रपुष्पो से लदे हुए, सुशोभित हरे-भरे वृक्षो को अपना आत्मीय समझ उनसे मधुर सम्भाषण करे – उन्हे हृदय से लगा ले। इसी धूलि के ऊपर से श्रीरामकृष्ण के कोमल चरण चलते है। इन्ही पेड़ो के भीतर से वे सदा आया-जाया करते है। इच्छा होती है, ज्योतिर्मय आकाश की ओर टकटकी लगाये हेरते रहे, क्योंकि जान पड़ता है, भूलोक और द्युलोक, दोनो ही प्रेम और आनन्द मे तैर रहे है।

श्रीठाकुर-मन्दिर के पुजारी, दरवान, परिचारक, सब को न जाने क्यो आत्मीय कहने की इच्छा होती है। – क्यो यह जगह, बहुत दिनो के बाद देखी गयी जन्मभूमि की तरह मधुर लग रही है? आकाश, गंगा, देवमन्दिर, उद्यान-पथ, वृक्ष, लता, गुल्म, सेवकगण, आसन पर बैठी हुई भक्तमण्डली, सब मानो एक ही वस्तु से बनाये हुए जान पडते है। जिस वस्तु से श्रीरामकृष्ण बनाये गये है, जान पड़ता है, ये भी उसी वस्तु से बनाये गये है। जैसे एक मोम का बगीचा हो, पेड़, पल्लव, फूल, फल, सब मोम के! बगीचे के रास्ते, बगीचे के माली, बगीचे के निवासी, बगीचे के भीतर का गृह, सब मोम के! यहाँ का सब कुछ मानो आनन्द ही से रचा गया है!

श्रीमनमोहन, श्रीयुत महिमाचरण और मास्टर वहाँ बैठे हुए थे, क्रमशः ईशान, हृदय और हाजरा भी आये। और भी बहुत से भक्त बैठे हुए थे। बलराम और राखाल इस समय वृन्दावन मे थे। इस समय कुछ नये भक्त भी आते-जाते थे – नारायण, पल्टू, छोटे नरेन्द्र, तेजचन्द्र, विनोद, हरिपद। बाबूराम कभी कभी यही आकर रह जाते है। राम, सुरेश, केदार और देवेन्द्र आदि भक्तगण प्रायः आते है – कोई एक हफ्ते के बाद – कोई दो हफ्ते के बाद। लाटू यही रहते है। योगीन का घर नजदीक है, वे प्रायः रोज आया-जाया करते है। नरेन्द्र कभी कभी आते है, आते ही आनन्द का मानो हाट लग जाता है। नरेन्द्र जब अपने उस देवदुर्लभ कण्ठ से ईश्वर का नामगुण गाते है, तब श्रीरामकृष्ण को अनेक प्रकार के भावो का आवेश होता रहता है – समाधि होती है, जैसे एक उत्सव हो। श्रीरामकृष्ण की बड़ी इच्छा है कि लड़को मे से कोई उनके पास रहे, क्योकि वे शुद्धात्मा है, संसार मे विवाहादि के बन्धनो मे नही पड़े। बाबूराम से श्रीरामकृष्ण रहने के लिए कहते है; वे कभी कभी रहते भी है। श्रीयुत अधर सेन प्रायः आया करते है। कमरे के भीतर भक्तगण बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण बच्चे की तरह खड़े होकर कुछ सोच रहे है। भक्तगण उनकी ओर देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (मनमोहन से) – सब राममय देख रहा हूँ, तुम लोग सब बैठे हुए हो, देखता हूँ, सब राम ही है, एक एक अलग अलग।

मनमोहन – राम ही सब हुए हैं, परन्तु आप जैसा कहते हैं, आपो नारायणः, जल नारायण है, परन्तु कोई जल पिया जाता है, किसी जल से मुँह धोना तक चल सकता है और किसी जल से बर्तन साफ किये जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, परन्तु देखता हूँ, वे ही सब कुछ हैं। जीव जगत् वे ही हुए हैं।

यह बात कहते हुए श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर जा बैठे।

श्रीरामकृष्ण – (महिमाचरण से) – क्यों जी, सच बोलना है इसलिए मुझे कहीं शुचिता का रोग तो नहीं हो गया। अगर एकाएक कह दूँ कि मैं न खाऊँगा, तो भूख लगने पर भी फिर खाना न होगा। अगर कहूँ, झाऊतल्ले में मेरा लोटा लेकर अमुक आदमी को जाना होगा, तो यदि कोई दूसरा आदमी ले जाता है तो उसे लौटा देना पड़ता है। यह क्या हुआ भाई! इसका क्या कोई उपाय नहीं है?

"साथ भी कुछ लाने की शक्ति नहीं। पान, मिठाई, कोई वस्तु साथ नहीं ला सकता। इस तरह संचय होता है न? हाथ से मिट्टी भी नहीं ला सकता।"

इसी समय किसी ने आकर कहा, 'महाराज, हृदय यदु मल्लिक के बगीचे में आया है, फाटक के पास खड़ा है, आपसे मिलना चाहता हैं।'

श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं, 'हृदय से जरा मिल लूँ? तुम लोग बैठो।'

यह कहकर काले रंग की चट्टी पहनकर पूर्ववाले फाटक की ओर चले। साथ में केवल मास्टर हैं।

लाल सुरखो की राह है। उसी राह से श्रीरामकृष्ण पूर्व की ओर जा रहे हैं। रास्ते में खजानची खड़े थे, उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। दाहिनी ओर आँगन का फाटक छूट गया, वहाँ लम्बी दाढ़ीवाले सिपाही बैठे हुए थे। बायीं ओर 'कोठी' है – बाबुओं का बैठकखाना, पहले यहाँ नील की कोठी थी, इसीलिए इसे कोठी कहते हैं। इसके आगे रास्ते के दोनों ओर फूल के पेड़ हैं। थोड़ी ही दूर पर रास्ते के बिलकुल दक्षिण ओर गाजीतल्ला और काली-मन्दिर का तालाब है, पक्के घाट की सीढ़ियाँ दिखायी पड़ती हैं। क्रमशः आगे पूर्व द्वार आया, उसके बायीं ओर दरवान का घर है और दाहिनी ओर तुलसी का चौरा। उद्यान के बाहर आकर देखा, यदु मल्लिक के बगीचे के फाटक के पास हृदय खड़ा था।

(२)

हृदय का आगमन

हृदय* हाथ जोड़कर खडे हैं। श्रीरामकृष्ण को राजपथ पर देखते ही उन्होंने साष्टांग

* हृदय श्रीरामकृष्ण की जन्मभूमि कामारपुकुर के पास सिहोड ग्राम में रहते थे। बीस साल तक

प्रणाम किया – दण्डवत् भूमि पर लेट गये, श्रीरामकृष्ण ने उठने के लिए कहा। हृदय फिर हाथ जोड़कर बालक की तरह रो रहे हैं।

आश्चर्य है कि श्रीरामकृष्ण भी रो रहे हैं। नेत्र में कई बूँद आँसू दीख पड़े। उन्होंने हाथ से आँसू पोंछ डाले – जैसे आँसू आये ही न हों। जिस हृदय ने उन्हें इतना कष्ट दिया था, उसी के लिए वे दौड़े आयें और रो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – इस समय तू कैसे आया?

हृदय – (रोते हुए) – आप ही से भेंट करने के लिए आया हूँ। अपना दुःख मैं और किससे कहूँ?

श्रीरामकृष्ण – (सान्त्वनार्थ, सहास्य) – संसार में ऐसा दुःख लगा ही है। संसार में रहो तो सुख और दुःख होते ही रहते हैं। (मास्टर को दिखाकर) ये लोग कभी कभी इसीलिए आते हैं। आकर ईश्वर की दो बातें सुनते हैं तो मन में शान्ति आ जाती है। तुझे किस बात का दुःख है?

हृदय – (रोते हुए) – आपका संग छूटा हुआ है, यही दुःख है।

श्रीरामकृष्ण – तू ने ही तो कहा था – 'तुम्हारा मनोभाव तुम्ही में रहे, मेरा – मुझमें।'

हृदय – हाँ, ऐसा कहा तो था, परन्तु मैं इतना क्या जानूँ?

श्रीरामकृष्ण – आज अब तू यहीं-कहीं रह जा। कल बैठकर हम दोनों बातचीत करेंगे। आज रविवार है, बहुत से आदमी आये है। वे सब बैठे हैं, इस बार देश में धान कैसा हुआ?

हृदय – हाँ, एक तरह से पैदावार बुरी नहीं रही।

श्रीरामकृष्ण – तो आज तू जा, किसी दूसरे दिन आना।

हृदय ने फिर श्रीरामकृष्ण को साष्टांग प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण उसी रास्ते से लौटने लगे। मास्टर साथ हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – इसने मेरी सेवा जितनी की है मुझे कष्ट भी उतना ही दिया है। जब पेट की बीमारी से मेरी देह में बस दो हाड़ रह गये थे, कुछ खाया नहीं जाता था, तब इसने मुझसे कहा – 'यह देखो, मैं किस तरह खाता हूँ। अपने ही गुणों से तुमसे नहीं खाया जाता।' फिर कहता था – 'अक्ल के दुश्मन! मैं अगर न होता, तो तुम्हारी साधुगिरी निकल गयी होती।' एक दिन तो इसने इतना कष्ट दिया कि मैं पोस्ता

लगातार श्रीरामकृष्ण के पास रहकर दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर में उन्होंने काली की पूजा और श्रीरामकृष्ण की सेवा की थी। बगीचे के मालिकों के असन्तोष का कोई काम कर बैठने के कारण उनका बगीचे के भीतर आना बन्द कर दिया गया था। हृदय की दादी श्रीरामकृष्ण की बुआ थी।

के ऊपर से ज्वार के पानी में प्राण छोड़ देने के लिए चला गया था।

मास्टर यह सब सुनकर आश्चर्यचकित हो गये। सोचने लगे, इस तरह के आदमी के लिए भी ये रो रहे थे!

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – अच्छा इतनी सेवा करता था, फिर उसे ऐसा क्यों हुआ? जिस तरह आदमी बच्चे की देखरेख करते हैं, इसने उसी तरह मेरी की थी। मैं दिन-रात बेहोशी की हालत में रहता था, तिस पर बहुत दिनों तक बीमार पड़ा था। वह जिस तरह मुझे रखता था, मैं उसी तरह रहता था।

मास्टर क्या कहते! चुप थे। वे शायद सोच रहे थे कि हृदय ने निष्काम भाव से श्रीरामकृष्ण की सेवा नहीं की।

बातचीत करते हुए श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आये। भक्तगण प्रतीक्षा कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण फिर छोटी खाट पर बैठ गये।

(३)

भाव, महाभाव का गूढ़ तत्त्व

श्रीयुत महिमाचरण आदि कोन्नगर के कई भक्त आये हैं; इनमें से एक ने कुछ देर तक श्रीरामकृष्ण के साथ विचार किया।

कोन्नगर के भक्त – महाराज, मैंने सुना है, आपको भावावेश होता है, समाधि होती है। क्यों होती है, किस तरह होती है, हमें समझाइये।

श्रीरामकृष्ण – श्रीमती (राधिका) को महाभाव होता था, जब कोई सखी छूने के लिए बढ़ती तब दूसरी कहती – इस कृष्ण के विलास-अंग को न छू, इनके शरीर में इस समय कृष्ण विलास कर रहे हैं। ईश्वर का अनुभव हुए बिना भाव या महाभाव नहीं होता। गहरे जल से मछली के निकलने पर पानी हिलता है, अगर मछली बड़ी हुई तो पानी में उथल-पुथल मच जाती है। इसीलिए कहा है, भाव में हँसता है, नाचता है, रोता है, गाता है।

"बड़ी देर तक भाव में नहीं रहा जाता। आईने के पास बैठकर केवल मुँह देखते रहने से लोग पागल कहेंगे।"

कोन्नगर के भक्त – मैंने सुना है, महाराज, आप ईश्वर-दर्शन करते रहते है। तो हमें भी करा दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – सब कुछ ईश्वर के अधीन है – भला आदमी क्या कर सकता है? उनका नाम लेते हुए कभी अश्रुधारा बहती है, कभी नहीं। उनका ध्यान करते हुए कभी कभी खूब उद्दीपन होता है – किसी दिन कुछ भी नहीं होता।

"कर्म चाहिए, तब दर्शन होते हैं। एक दिन भावावेश में मैंने हालदार तालाब देखा।

देखा, एक निम्न जाति का आदमी काई हटाकर पानी भर रहा है। उसने दिखाया, काई हटाये बिना पानी नहीं भरा जा सकता। कर्म बिना किये भक्ति नहीं होती, ईश्वर-दर्शन नहीं होता। ध्यान, जप, यही सब कर्म हैं, उनके नाम और गुणों का कीर्तन करना भी कर्म है, और दान, यज्ञ, ये भी सब कर्म ही हैं।

"मक्खन अगर चाहते हो तो दूध को लेकर दही जमाना चाहिए। फिर निर्जन में रखना चाहिए। फिर दही जमने पर मेहनत करके उसे मथना चाहिए, तब कहीं मक्खन निकलता है।"

महिमाचरण – जी हाँ, कर्म तो चाहिए ही। बड़ा परिश्रम करना पड़ता है, तब कहीं वस्तु-लाभ होता है। पढ़ना भी कितना पड़ता है – अनन्त शास्त्र हैं।

श्रीरामकृष्ण – (महिमा से) – शास्त्र कितना पढ़ोगे? सिर्फ विचार करने से क्या होगा? पहले उनके लाभ करने की चेष्टा करो, गुरु की बात पर विश्वास करके कुछ कर्म करो। गुरु न रहे, तो ईश्वर से व्याकुल होकर प्रार्थना करो, वे कैसे हैं – वे खुद समझा देंगे।

"किताब पढ़कर क्या समझोगे? जब तक बाजार नहीं जाया जाता, तब तक दूर से बस हो-हल्ला सुन पड़ता है। बाजार पहुँचने पर एक और तरह की बात होती है। तब सब साफ दीख पड़ता है और साफ सुन पड़ता है; 'आलू लो' और 'पैसे दो' साफ सुनायी देगा।

"दूर से समुद्र के हरहराने का ही शब्द सुन पड़ता है। पास जाने पर कितने ही जहाजों को जाते हुए, कितने ही पक्षियों को उड़ते हुए और उठती हुई कितनी ही तरंगें देखोगे।

"पुस्तक पढ़कर ठीक अनुभव नहीं होता। बड़ा अन्तर है। उनके दर्शनों के बाद पुस्तक, शास्त्र और साइन्स (विज्ञान) सब तिनके-जैसे जान पड़ते हैं।

"बड़े बाबू के साथ परिचय की आवश्यकता है। उनकी कितनी कोठियाँ हैं, कितने बगीचे हैं, कम्पनी का कागज कितने का है, यह सब पहले से जानने के लिए इतने उतावले क्यों हो रहे हो? नौकरों के पास जाते हो तो वे खड़े भी नहीं रहने देते – कम्पनी के कागज की खबर भला क्या देंगे! परन्तु किसी तरह बड़े बाबू से एक बार मिल भर लो, चाहे धक्के खाकर मिलो और चाहे चारदीवारी लाँघकर तब उनके कितने मकान हैं, कितने बगीचे हैं, कितने का कम्पनी-कागज है, वे खुद बतला देंगे। बाबू से भेंट हो जाने पर नौकर और दरवान सब सलाम करेंगे।" (सब हँसते हैं।)

भक्त – अब बड़े बाबू से भेंट भी कैसे हो? (हास्य)

श्रीरामकृष्ण – इसीलिए कर्म चाहिए। ईश्वर हैं, यह कहकर बैठे रहने से कुछ न होगा। किसी तरह उनके पास तक जाना होगा। निर्जन में उन्हे पुकारो, प्रार्थना करो, 'दर्शन दो' कह-कहकर व्याकुल होकर रोओ! कामिनी और कांचन के लिए पागल होकर घूम

सकते हो, तो उनके लिए भी कुछ पागल हो जाओ। लोग कहें कि ईश्वर के लिए अमुक व्यक्ति पागल हो गया है। कुछ दिन, सब कुछ छोड़कर उन्हें अकेले में पुकारो।

"केवल वे हैं, यह कहकर बैठे रहने से क्या होगा? हालदार तालाब में बहुत बड़ी बड़ी मछलियाँ हैं, परन्तु तालाब के किनारे केवल बैठे रहने से क्या कहीं मछली पकड़ी जा सकती है? पानी में मसाला डालो, क्रमशः गहरे पानी से मछलियाँ निकलकर मसाले के पास आयेंगी, तब पानी भी हिलता-डुलता रहेगा। तब तुम्हें आनन्द होगा। कभी किसी मछली का कुछ अंश दिखलायी पड़ा, मछली उछली और पानी में एक शब्द हुआ। जब देखा, तब तुम्हें और भी आनन्द मिला।

"दूध जमाकर दही मथोगे तभी तो मक्खन निकलेगा। (महिमा से) यह अच्छी बला सिर चढ़ी, ईश्वर से मिला दो और आप चुपचाप बैठे रहेंगे! मक्खन निकालकर मुँह के पास रखा जाय! (सब हँसते हैं।) अच्छी बला आयी, मछली पकड़कर हाथ में रख दी जाय!

"एक आदमी राजा से मिलना चाहता है। सात ड्योढ़ियों के बाद राजा का मकान है। पहली ड्योढ़ी को पार करते ही वह पूछता है – 'राजा कहाँ हैं?' जिस तरह का प्रबन्ध है, उसी के अनुसार सातों ड्योढ़ियों को पार करना होगा या नहीं?"

महिमाचरण – किस कर्म से हम उन्हें प्राप्त कर सकते हैं?

श्रीरामकृष्ण – उन्हें अमुक कर्म से आदमी पाता है और अमुक से नहीं, यह बात नहीं। उनका मिलना उनकी कृपा पर अवलम्बित है। हाँ, व्याकुल होकर कुछ कर्म करते रहना चाहिए। विकलता के रहने पर उनकी कृप्रा होती है।

"कोई सुयोग मिलना चाहिए, चाहे साधु-संग हो या विवेक हो या सद्गुरु की प्राप्ति। कभी इस तरह का सुयोग मिल जाता है कि बड़े भाई ने संसार का कुल भार ले लिया, या स्त्री 'विद्याशक्ति' धर्मात्मा निकली, या विवाह ही न हुआ, इस तरह संसार में न फँसना पड़ा। इस प्रकार के शुभ संयोग के मिलने पर काम बन जाता है।

"किसी के घर में सख्त बीमारी थी – अब-तब हो रहा था। किसी ने कहा – 'स्वाति नक्षत्र में बरसात का पानी अगर मुर्दे की खोपड़ी में गिरकर रुक जाय और एक साँप मेंढ़क का पीछा करे, साँप के लपककर पकड़ते समय मेंढ़क खोपड़ी के उस पार उछलकर चला जाय और साँप का विष उसी खोपड़ी में गिर जाय, उसी विष की दवा यदि बनायी जाय और वह दवा अगर मरीज को दी जा सके तो वह बच सकता है।' तब जिसके यहाँ बीमारी थी, वह आदमी दिन, मुहूर्त, नक्षत्र आदि देखकर घर से निकला, और व्याकुल होकर यही सब खोजने लगा। मन ही मन वह ईश्वर को पुकारकर कहता गया – 'हे ईश्वर! तुम अगर सब इकट्ठा कर दो तो हो सकता है।' इस तरह जाते जाते सचमुच ही उसने देखा कि एक मुर्दे की खोपड़ी पड़ी हुई है। देखते ही देखते थोड़ा पानी भी बरस गया। तब उसने कहा – 'हे गुरु! मुर्दे की खोपड़ी मिली और थोड़ा पानी भी बरस गया और उसकी खोपड़ी

में जमा भी हो गया। अब कृपा करके और जो दो-एक योग हैं, उन्हें भी पूरा कर दो, भगवान्!'

"व्याकुल होकर वह सोच ही रहा था कि इतने में उसने देखा कि एक विषधर साँप आ रहा है। तब उसे बड़ा आनन्द हुआ। वह इतना व्याकुल हुआ कि छाती धड़कने लगी, और कहने लगा, *'हे गुरु!' साँप भी आ गया है। कई योग तो पूरे हो गये। कृपा करके और जो बाकी हैं, उन्हें भी पूर्ण कर दो।'* कहते ही कहते मेंढ़क भी आ गया। साँप मेंढ़क को खदेरने भी लगा। मुर्दे के सिर के पास साँप ने ज्योंही उस पर चोट करना चाहा कि मेंढ़क उछलकर इधर से उधर हो गया, और विष उसी खोपड़ी में गिर गया। तब वह आदमी तालियाँ बजाने और नाचने लगा।

"इसीलिए कहता हूँ, व्याकुलता के होने पर सब हो जाता है।"

(४)

संन्यास तथा गृहस्थाश्रम। ईश्वर-लाभ और त्याग

श्रीरामकृष्ण – मन से सम्पूर्ण त्याग के हुए बिना ईश्वर नहीं मिलते। साधु संचय नहीं कर सकता। कहते हैं, पक्षी और दरवेश, ये दोनो संचय नहीं करते। यहाँ का तो भाव यह है कि हाथ मे मिट्टी लगाने के लिए मैं मिट्टी भी नहीं ले जा सकता। पानदान में पान भी नहीं ले जा सकता। हृदय जब मुझे बड़ी तकलीफ दे रहा था, तब मेरी इच्छा हुई, यहा से काशी चला जाऊँ। सोचा, कपड़े तो लूँगा, परन्तु रुपये कैसे लूँगा? इसीलिए फिर काशी जाना भी न हुआ। (सब हँसते हैं।)

(महिमा से) "तुम लोग संसार में हो, तुम लोग यह भी रखते हो और वह भी रखते हो। संसार भी रखते हो और धर्म भी।"

महिमाचरण – यह और वह दोनों कभी रह सकते हैं?

श्रीरामकृष्ण – मैंने पंचवटी के पास गंगाजी के तट पर, 'रुपया मिट्टी है – मिट्टी ही रुपया है – रुपया ही मिट्टी है,' इस तरह विचार करते हुए, जब रुपया गंगाजी में फेंक दिया, तब पीछे मे कुछ भय भी हुआ! सोचा, मैं बिना लक्ष्मी के कहीं अभागा तो न हो जाऊँगा, माता लक्ष्मी अगर भोजन बन्द कर दें तो फिर क्या होगा? तब हाजरा की तरह पटवारी बुद्धि आयी। मैने कहा 'माँ, तुम हृदय में रहना।' एक आदमी की तपस्या पर सन्तुष्ट हो भगवती ने कहा, तुम वरदान लो। उसने कहा, 'माँ, अगर तुम्हें वरदान देना है तो यह वर दो कि मै नाती के साथ सोने की थाली में भोजन करूँ।' एक ही वर में नाती, ऐश्वर्य, सोने की थाली, सब कुछ हो गया! (लोग हँसते हैं।)

"मन से कामिनी-कांचन का जब त्याग हो जाता है तब ईश्वर की ओर मन जाता है, तब मन उन्हीं मे लिप्त भी रहता है। जो बद्ध हैं, उन्हीं मे मुक्त होने की शक्ति भी है। ईश्वर

से विमुख होने के कारण ही वे बद्ध हैं। काँटे की दो सुइयों में कब अन्तर होता है? यह तभी होता है जब एक पल्ला किसी भार से नीचे दबता है। कामिनी और कांचन ही भार है।

"बच्चा पैदा होते ही क्यों रोता है? 'मैं गर्भ में था तब योग मे था।' भूमिष्ठ होकर यही कहकर रोता है – 'कहाँ यह – कहाँ यह – यह मैं कहाँ आया, ईश्वर के पादपद्मों की चिन्ता कर रहा था, यह मै कहाँ आया!'

"तुम लोग मन से त्याग करो, अनासक्त होकर संसार में रहो।"

महिमा – उन पर मन जाय तो क्या फिर संसार रह सकता है?

श्रीरामकृष्ण – यह क्या? संसार में नहीं रहोगे तो जाओगे कहाँ? मैं देखता हूँ, मैं जहाँ रहता हूँ, वह राम की अयोध्या है। यह संसार राम की अयोध्या है। श्रीरामचन्द्रजी ने ज्ञान प्राप्त करके गुरु से कहा, मैं संसार का त्याग करूँगा। दशरथ ने उन्हें समझाने के लिए वशिष्ठ को भेजा। वशिष्ठ ने देखा, राम को तीव्र वैराग्य है। तब कहा, 'राम! पहले मेरे साथ कुछ विचार कर लो, फिर संसार छोड़ना। अच्छा, प्रश्न यह है, क्या संसार ईश्वर से कोई अलग चीज है? अगर ऐसा हो तो तुम इसका त्याग कर सकते हो।' राम ने देखा, ईश्वर ही जीव और जगत् सब कुछ हुए हैं। उनकी सत्ता के कारण सब कुछ सत्य जान पड़ता है। तब श्रीरामचन्द्रजी चुप हो रहे।

"संसार में काम और क्रोध, इन सब के साथ लड़ाई करनी पड़ती है, कितनी ही वासनाओं से संग्राम करना पड़ता है, आसक्तियों से भिड़ना पड़ता है। लड़ाई किले में रहकर की जाय तो सुवधाएँ हैं। घर से लड़ना ही अच्छा है। भोजन मिलता है – धर्मपत्नी भी बहुत कुछ सहायता करती है। कलिकाल में प्राण अन्नगत हैं – अन्न के लिए दस जगहो में मारे-मारे फिरने की अपेक्षा एक जगह रहना ही अच्छा है। घर में, किले के भीतर रहकर लड़ना अच्छा है।

"और संसार में आँधी में उड़ती हुई जूठी पत्तल की तरह रहो। जूठी पत्तल को आँधी कभी घर के भीतर ले जाती है, कभी नाबदान में। हवा का रुख जिस ओर होता है, पत्तल भी उसी ओर उड़ती है। कभी अच्छी जगह पर गिरती है और कभी बुरी जगह पर। तुम्हें इस समय उन्होंने संसार मे डाल रखा है। अच्छा है, इस समय यहीं रहो। फिर जब यहाँ से उठाकर अच्छी जगह ले जायेंगे, तब देखा जायेगा, जो होगा सो होता रहेगा।

"संसार में रखा है, तो क्या करोगे? सब कुछ उन्हें अर्पित कर दो – उन्हें आत्मसमर्पण कर दो तो फिर कोई झंझट नहीं रह जायेगी। तब देखोगे, वे ही सब कुछ कर रहे हैं। सभी 'राम की इच्छा' है।"

एक भक्त – राम की इच्छा, यह कैसी कहावत है?

श्रीरामकृष्ण – किसी गाँव में एक जुलाहा रहता था। वह बड़ा धर्मात्मा था। सब

को उस पर विश्वास था और सब लोग उसे प्यार भी करते थे। जुलाहा बाजार में कपड़े बेचा करता था। जब खरीददार दाम पूछते तो वह कहता, 'राम की इच्छा से सूत का दाम हुआ एक रुपया, मेहनत चार आने की, राम की इच्छा से मुनाफा दो आने, और कुल कीमत राम की इच्छा से एक रुपया छ: आने।' लोगों का उस पर इतना विश्वास था कि उसी समय वे दाम देकर कपड़ा ले लेते थे। वह जुलाहा बड़ा भक्त था, रात को भोजन करके बड़ी देर तक चण्डी-मण्डप मे बैठा ईश्वर-चिन्तन किया करता था। उनके नाम और गुणों का कीर्तन भी वही करता था। एक दिन बड़ी रात हो गयी, फिर भी उसकी ऑख न लगी, वह बैठा हुआ था, कभी कभी तम्बाकू पीता था। उसी समय उस रास्ते से डाकुओं का एक दल डाका डालने के लिए जा रहा था।

"उनमें कुलियो की कमी थी। उसे देखकर उन्होंने कहा, अबे, हमारे साथ चल। यह कहकर उसका हाथ पकड़ लिया और उसे ले चले। फिर एक गृहस्थ के यहाँ उन लोगों ने डाका डाला। कुछ चीजें जुलाहे पर लाद दीं, इतने में ही पुलिस आ गयी! डाकू भाग गये, सिर्फ जुलाहा सिर पर गट्ठर लिये हुए पकड़ा गया। उस रात को उसे हवालात में रखा। दूसरे दिन मैजिस्ट्रेट साहब के कोर्ट मे वह पेश किया गया। गाँव के आदमी मामला सुनकर कोर्ट में हाजिर हुए। उन सब लोगों ने कहा, हुजूर! यह आदमी कभी डाका नही डाल सकता। साहब ने तब जुलाहे से पूछा, 'क्यों जी, तुम्हें क्या हुआ है? कहो।'

"जुलाहे ने कहा, 'हुजूर! राम की इच्छा से मैने रात को रोटी खायी। इसके बाद राम की इच्छा से मै चण्डी-मण्डप में बैठा हुआ था, राम की इच्छा से रात बहुत हो गयी। मै राम की इच्छा से उनकी चिन्ता कर रहा था और उनके भजन गा रहा था। उसी समय राम की इच्छा से डाकुओं का एक दल उस रास्ते से आ निकला। राम की इच्छा वे लोग मुझे पकड़कर घसीट ले गये। राम की इच्छा से उन लोगो ने एक गृहस्थ के घर डाका डाला। राम की इच्छा से मेरे सिर पर गट्ठर लाद दिया। इतने में ही राम की इच्छा से पुलिस आ गयी। राम की इच्छा से मैं पकड़ा गया, तब मुझे राम की इच्छा से हवालात में पुलिस ने बन्द कर रखा। आज सुबह को राम की इच्छा से वह हुजूर के पास ले आयी है।'

"उसे धर्मात्मा देखकर साहब ने जुलाहे को छोड़ देने की आज्ञा दी। जुलाहे ने रास्ते में अपने मित्रो से कहा, 'राम की इच्छा से मैं छोड़ दिया गया।' संसार करना, संन्यास, यह भी सब राम की इच्छा से होता है, इसीलिए उ[illegible] सब भार छोड़कर संसार का काम करना चाहिए।

"नहीं तो और कुछ करो भी, तो क्या करोगे?

"किसी क्लर्क को जेल हो गयी थी। मियाद पूरी हो जाने पर वह जेल से निकाल दिया गया। अब बताओ, वह जेल [illegible] निकलकर मारे आनन्द के नाचता रहे या फिर क्लर्की करे?

"संसारी अगर जीवन्मुक्त हो जाय तो वह अनायास ही संसार में रह सकता है; जिसे ज्ञान की प्राप्ति हो गयी है, उसके लिए यहाँ-वहाँ नहीं है, उसके लिए सब बराबर है। जिसके मन में वहाँ है, उसके मन में यहाँ भी है।

"जब मैंने पहले-पहल बगीचे में केशव सेन को देखा, तब कहा, इसकी पूँछ गिर गयी है! सभा भर के आदमी हँस पड़े। केशव ने कहा, 'तुम लोग हँसो मत; इसका कोई अर्थ है, इनसे पूछता हूँ। ' मैंने कहा 'जब तक मेंढ़क के बच्चे की पूँछ नहीं गिर जाती, तब तक उसे पानी में ही रहना पड़ता है; वह किनारे से चढ़कर सूखी जमीन में विचर नहीं सकता; ज्योंही उसकी पूँछ गिर जाती है त्योंही वह फिर उछल-कूदकर जमीन पर आ जाता है। तब वह पानी में भी रह सकता है और जमीन पर भी। उसी तरह आदमी की जब तक अविद्या की पूँछ नहीं गिर जाती, तब तक वह संसार रूपी जल में ही पड़ा रहता है। अविद्यारूपी पूँछ के गिर जाने पर – ज्ञान होने पर ही मुक्त भाव से मनुष्य विचरण कर सकता है और इच्छा होने पर संसार में भी रह सकता है।' "

(५)

निर्लिप्त संसारी

श्रीयुत महिमाचरण आदि भक्तगण बैठे हुए श्रीरामकृष्ण के मधुर वचनामृत का पान कर रहे हैं। बातें क्या हैं, अनेक वर्णों के रत्न हैं! जिससे जितना हो सकता है, वह उतना ही संग्रह कर रहा है। अंचल भर गया है, इतना भारी हो रहा है कि उठाया नहीं जाता। छोटे छोटे आधारों से और अधिक धारणा नहीं होती। सृष्टि से लेकर आज तक मनुष्यों के हृदय में जितनी समस्याओ का उद्भव हुआ है, सब की पूर्ति हो रही है। पद्मलोचन, नारायण शास्त्री, गौरी पण्डित, दयानन्द सरस्वती आदि शास्त्रवेत्ता पण्डितों को आश्चर्य हो रहा है। दयानन्दजी ने जब श्रीरामकृष्ण और उनकी समाधि-अवस्था को देखा था, तब उन्होंने उसे लक्ष्य करते हुए कहा था, "हम लोगों ने इतना वेद और वेदान्त पढ़ा, परन्तु उसका फल इस महापुरुष में ही नजर आया। इन्हें देखकर प्रमाण मिला कि सब पण्डितगण शास्त्रों का मन्थन कर केवल उसका मट्ठा पीते हैं; मक्खन तो ऐसे ही महापुरुष खाया करते है।" उधर अंग्रेजी के उपासक केशवचन्द्र सेन जैसे पण्डितों को भी आश्चर्य हुआ है। वे सोचते हैं, "कितने आश्चर्य की बात है, एक निरक्षर मनुष्य ये सब बातें कैसे कह रहा है? यह तो बिलकुल मानो ईसा की बातें हैं, वही ग्रामीण भाषा, उसी तरह कहानियों में समझाना जिससे स्त्रीपुरुष, बच्चे, सब लोग आसानी से समझ सकें। ईसा पिता-पिता कहकर पागल हुए थे, ये 'माँ-माँ' कहकर पागल हुए हैं। केवल ज्ञान का भण्डार नहीं, ईश्वर-प्रेम की अविरल वर्षा हो रही है, फिर भी उसकी समाप्ति नही होती। ये भी ईसा की तरह त्यागी हैं, उन्हीं के जैसा अटल विश्वास इनमें भी मिल रहा है, इसलिए तो इनकी

बातों में इतना बल है। संसारी आदमियों के कहने पर इतना बल नहीं आ सकता; क्योंकि वे त्यागी नहीं हैं, उनमें वह प्रगाढ़ विश्वास कहाँ?" केशव सेन जैसे पण्डित भी यह सोचते हैं कि इस निरक्षर आदमी में इतना उदार भाव कैसे आया? कितने आश्चर्य की बात है, इनमें किसी तरह का द्वेषभाव नहीं। ये सब धर्मों के मनुष्यों का आदर करते हैं – इसीसे वैमनस्य नहीं होता।

आज महिमाचरण के साथ श्रीरामकृष्ण की बातचीत सुनकर कोई कोई भक्त सोचते हैं – 'श्रीरामकृष्ण ने तो संसार का त्याग करने के लिए कहा नही, बल्कि कहते हैं, संसार किला है, किले में रहकर काम, क्रोध आदि के साथ लड़ाई करने में सुविधा होती है। फिर उन्होंने कहा, जेल से निकलकर क्लर्क अपना ही काम फिर करता है; इससे एक तरह यही बात कही गयी कि जीवन्मुक्त संसार में भी रह सकता है। परन्तु एक बात है, श्रीरामकृष्ण कहते है, कभी कभी एकान्त में रहना चाहिए। पौधे को घेरना चाहिए। जब वह बड़ा हो जायेगा, तब उसे घेरने की जरूरत न रह जायेगी, तब हाथी बाँध देने से भी वह उसका कुछ कर नहीं सकता। निर्जन में रहकर भक्तिलाभ या ज्ञानलाभ करने के पश्चात् संसार में रहने से भी फिर भय की कोई बात नहीं रह जाती।'

भक्तगण इसी तरह की चिन्ताएँ कर रहे हैं। केशव के बारे में बातचीत करके श्रीरामकृष्ण और दो-एक संसारी भक्तों की बातें कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (महिमाचरण से) – फिर 'सेजोबाबू' के साथ देवेन्द्रबाबू से मिलने गया था। सेजोबाबू से मैंने कहा, 'सुना है, देवेन्द्र ठाकुर (रवीन्द्रनाथ के पिता) ईश्वर की चिन्ता करता है, उसे देखने की मेरी इच्छा होती है।' सेजोबाबू ने कहा, 'अच्छा बाबा, मैं तुम्हे ले जाऊँगा, हम दोनों हिन्दू कालेज में एक साथ पढ़ते थे, मेरे साथ बड़ी घनिष्ठता है।' सेजोबाबू से उनकी बहुत दिन बाद मुलाकात हुई। सेजोबाबू को देखकर देवेन्द्र ने कहा, 'तुम्हारा शरीर कुछ बदल गया है, तुम्हारे कुछ तोद निकल आयी है।' सेजोबाबू ने मेरी बात कही। उन्होंने कहा, 'ये तुम्हें देखने के लिए आये हैं, ये ईश्वर के लिए पागल हो रहे हैं। लक्षण देखने के लिए मैंने देवेन्द्र से कहा, 'देखें जी तुम्हारी देह।' देवेन्द्र ने देह से कुर्ता उतार डाला। मैंने देखा, गोरा रंग, तिस पर सेंदूर-सा लगाया हुआ, तब देवेन्द्र के बाल नही पके थे।

"पहले पहल मैंने उसमें कुछ अभिमान देखा था। होना भी चाहिए – इतना ऐश्वर्य है, विद्या है, मान है। अभिमान देखकर सेजोबाबू से मैंने पूछा, 'अच्छा, अभिमान ज्ञान से होता है या अज्ञान से? जिसे ब्रह्मज्ञान हो जाता है, उसे क्या 'मैं पण्डित हूँ, मैं ज्ञानी हूँ, मैं धनी हूँ, इस तरह का अभिमान हो सकता है?'

"देवेन्द्र के साथ बातचीत करते हुए एकाएक मेरी वही अवस्था हो गयी। उस अवस्था के होने पर कौन आदमी कैसा है, यह मै स्पष्ट देखता हूँ। मेरे भीतर से हँसी उमड़

पड़ी। जब यह अवस्था होती है तब पण्डित-फण्डित सब तिनके-से जान पड़ते हैं। जब देखता हूँ, पण्डित में विवेक और वैराग्य नहीं है, तब वे सब घास-फूस जैसे जान पड़ते हैं। तब यही दिखता है कि गीध बहुत ऊँचे उड़ रहा है परन्तु उसकी नजर नीचे मरघट पर ही लगी हुई है।

"देखा योग और भोग दोनों हैं, छोटे छोटे बहुत से लड़के थे, डाक्टर आया हुआ था – इसीसे सिद्ध है कि इतना ज्ञानी तो है, परन्तु संसार में रहना पड़ता है। मैंने कहा – 'तुम कलिकाल के जनक हो। जनक इधर-उधर दोनों ओर रहकर दूध का कटोरा खाली किया करते थे। मैंने सुना था, तुम संसार में रहकर भी ईश्वर पर मन लगाये हुए हो, इसीलिए तुम्हें देखने आया हूँ, मुझे कुछ ईश्वर की बातें सुनाओ।'

"तब वेद से कुछ अंश उसने सुनाये। कहा, 'यह संसार एक दीपक के पेड़ के समान है और प्रत्येक जीव इस पेड़ का एक एक दीपक है।' मैं जब यहाँ ध्यान करता था, तब बिलकुल इसी तरह देखता था। देवेन्द्र की बात से मेल हुआ, देखकर मैंने सोचा, तब तो यह बहुत बड़ा आदमी है। मैंने उसे व्याख्या करने के लिए कहा। उसने कहा, 'इस संसार को पहले कौन जानता था? – ईश्वर ने अपनी महिमा को प्रकाशित कर दिखाने के उद्देश्य से मनुष्य की सृष्टि की। पेड़ के उजाले के न रहने पर सब अँधेरा हो जाता है, पेड़ भी नहीं दिख पड़ता।'

"बहुत कुछ बातें होने के बाद देवेन्द्र ने खुश होकर कहा, 'आपको उत्सव में आना होगा।' मैंने कहा, 'वह ईश्वर की इच्छा; मेरी यह अवस्था तो देख ही रहे हो – वे कभी किसी भाव में रखते है, कभी किसी भाव में।' देवेन्द्र ने कहा, 'नहीं, आना ही होगा। परन्तु धोती और चद्दर ये दोनों कपड़े आप जरूर पहने हुए हों, आपको ऊलजलूल देखकर अगर किसी ने कुछ कह दिया तो मुझे बड़ा कष्ट होगा।' मैंने कहा, 'यह मुझसे न होगा, मैं बाबू न बन सकूगा!' देवेन्द्र और सेजोबाबू हँसने लगे।

"उसके दूसरे ही दिन सेजोबाबू के पास देवेन्द्र की चिट्ठी आयी – मुझे उत्सव देखने के लिए जाने से उन्होंने रोका था। लिखा था, देह पर एक चद्दर भी न रहेगी तो असभ्यता होगी। (सब हँसते हैं।)

(महिमा से) "एक और है – कप्तान। संसारी तो है परन्तु बड़ा भक्त है। तुम उससे मिलना।

"कप्तान को वेद, वेदान्त, गीता, भागवत, यह सब कण्ठाग्र याद है। तुम बातचीत करके देखना।

"बड़ी भक्ति है। मैं वराहनगर की राह से जा रहा था, वह मेरे ऊपर छाता लगाता था। अपने घर ले जाकर बड़ी खातिर की। – पंखा झलता था, पैर दबाता था और कितनी ही तरह की तरकारियाँ बना कर खिलाता था। मैं एक दिन उसके यहाँ पाखाने में बेहोश

हो गया। वह इतना आचारी तो है, परन्तु पाखाने के भीतर मेरे पास जाकर मेरे पैर फैलाकर मुझे बैठा दिया। इतना आचारी है, परन्तु घृणा नहीं की।

"कप्तान के पल्ले बड़ा खर्च है। उसके भाई बनारस में रहते हैं, उन्हें खर्च देना पड़ता है। उसकी बीबी पहले बड़ी कंजूस थी। अब इतनी पलट गयी है कि खर्च सँभाल नहीं सकती।

"कप्तान की स्त्री ने मुझसे कहा, 'इन्हें संसार अच्छा नहीं लगता, इसलिए एक बार इन्होंने कहा था कि संसार छोड़ दूँगा।' हाँ, वह ऐसा बराबर कहा करता है।

"उसका वंश ही भक्त है। उसका बाप लड़ाई में जाया करता था, मैंने सुना है लड़ाई के समय वह एक हाथ से शिव की पूजा करता था और दूसरे से तलवार चलाता था।

"बड़ा आचारी आदमी है। मैं केशव सेन के पास जाता था, इसीलिए इधर महीने भर से नहीं आया। कहता है, 'केशव सेन के आचार भ्रष्ट है – अंग्रेजों के साथ भोजन करता है, उसने दूसरी जाति में अपनी लड़की का विवाह किया है, उसकी कोई जाति नहीं है।' मैंने कहा, 'मुझे उन सब बातों से क्या काम? केशव सेन ईश्वर का नाम लेता है, इसलिए मैं उसे देखने जाया करता हूँ। ईश्वर की बातें सुनने के लिए वहाँ जाता हूँ – मैं बेर खाता हूँ, काँटों से मुझे क्या काम?' फिर भी मुझे कप्तान ने न छोड़ा। कहा, 'तुम केशव सेन के यहाँ क्यों जाते हो?' तब मैंने कुछ चिढ़कर कहा, 'मैं रुपयों के लिए तो जाता नहीं – मैं ईश्वर का नाम सुनने के लिए जाया करता हूँ – और तुम लाट साहब के यहाँ कैसे जाया करते हो? वे म्लेच्छ हैं। उनके साथ कैसे रहते हो?' यह सब कहने के बाद कहीं वह रुका।

"परन्तु उसमें बड़ी भक्ति है। जब पूजा करता है, तब कपूर की आरती करता है और पूजा करते हुए आसन पर बैठकर स्तवपाठ करता है। तब वह एक दूसरा ही आदमी रहता है, मानो तन्मय हो जाता है।

(६)

वेदान्त-विचार। मायावाद और श्रीरामकृष्ण

(महिमाचरण) "वेदान्त के विचार से संसार मायामय है - स्वप्न की तरह सब मिथ्या है। जो परमात्मा हैं, वे साक्षीस्वरूप हैं – जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं के साक्षीस्वरूप। ये सब तुम्हारे ही भाव की बातें हैं। स्वप्न जितना सत्य है, जागृति भी उतनी ही सत्य है। तुम्हारे भाव की एक कहानी कहता हूँ, सुनो।

"किसी देश में एक किसान रहता था। वह बड़ा ज्ञानी था। किसानी करता था – स्त्री थी, एक लड़का बहुत दिनों के बाद हुआ था। नाम उसका हारू था। बच्चे पर माँ और बाप, दोनों का प्यार था, क्योंकि एकमात्र वहीं नीलमणि जैसा धन था। किसान धर्मात्मा

था। गाँव के सब आदमी उसे चाहते थे। एक दिन वह मैदान में काम कर रहा था, किसी ने आकर खबर दी, हारू को हैजा हुआ। किसान ने घर जाकर उसकी बड़ी दवादारू की, परन्तु अन्त में लड़का गुजर गया। घर के सब लोगों को बड़ा शोक हुआ, परन्तु किसान को जैसे कुछ भी न हुआ हो। उल्टा वही सब को समझाता था कि शोक करने में कुछ नहीं है। फिर वह खेती करने चला गया। घर लौटकर उसने देखा, उसकी स्त्री रो रही है। उसने अपने पति से कहा, 'तुम बड़े निष्ठुर हो, लड़का जाता रहा और तुम्हारी आँखों से आँसू तक न निकले!' तब उस किसान ने स्थिर होकर कहा, 'मैं क्यों नहीं रोता, बतलाऊँ? कल मैंने एक बड़ा भारी स्वप्न देखा। देखा कि मैं राजा हुआ हूँ और मेरे आठ बच्चे हुए हैं। बड़े सुख से हूँ – फिर आँख खुल गयी। अब मुझे बड़ी चिन्ता है – अपने उन आठ लड़कों के लिए रोऊँ या तुम्हारे इस एक लड़के हारू के लिए रोऊँ?'

"किसान ज्ञानी था, इसीलिए वह देख रहा था, स्वप्न की अवस्था जिस तरह मिथ्या थी, उसी तरह जागृति की अवस्था भी मिथ्या है, एक नित्य वस्तु केवल आत्मा ही है।

"मैं सब कुछ लेता हूँ, तुरीय और जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति – सब कुछ। मैं पिछली तीनों अवस्थाओं को मानता हूँ। ब्रह्म और माया, जीव-जगत् , सब लेता हूँ, यदि मैं कुछ कम लूँ तो मुझे पूरा वजन न मिले।"

एक भक्त – वजन में क्यों घटता है? (सब हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण – ब्रह्म जीवजगत् विशिष्ट हैं। पहले नेति नेति करते समय जीवजगत् को छोड़ देना पड़ता है। अहंबुद्धि जब तक है, तब तक वे ही सब हुए हैं, ऐसा भासित होता है – चौबीसों तत्त्व वे ही हुए हैं।

"बेल का सार कहो तो उसका गूदा ही समझा जाता है, तब बीज और खोपड़ा निकाल देने पड़ते हैं; परन्तु बेल वजन में कितना था इसके कहने की आवश्यकता हुई तो केवल गूदा तौलने से काम नहीं चल सकता। तौलते समय गूदा, बीज, खोपड़ा, सब कुछ लेना चाहिए। जिसका गूदा है, उसके बीज भी हैं और खोपड़ा भी। जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्हीं की है।

"इसलिए मैं नित्यता और लीला सब मानता हूँ। संसार को माया कहकर मैं उसका अस्तित्व लोप नहीं करता। यदि मैं वैसा करूँ तो वजन पूरा न मिले।"

महिमाचरण – यह बहुत अच्छा सामञ्जस्य है। नित्यता से ही लीला है और लीला से ही नित्यता है।

श्रीरामकृष्ण – ज्ञानी सब कुछ स्वप्नवत् देखते हैं। भक्तगण सभी अवस्थाएँ मानते हैं। ज्ञानी दूध तो देते हैं, पर बूँद बूँद करके। (सब हँसते हैं।) कोई कोई गौ ऐसी होती है कि घास चुन-चुनकर चरती है, इसलिए दूध भी थोड़ा थोड़ा करके देती है। जो गौएँ इतना चुनती नहीं और सब कुछ, जो आगे आया खा लेती हैं, वे दूध भी खूब खर्राटे के

साथ देती हैं। उत्तम भक्त नित्य और लीला दोनो ही मानता है। इसीलिए नित्य से मन के उतर आने पर भी वह उन्हे सम्भोग करने के लिए पाता है। उत्तम भक्त खर्राटे के साथ दूध देता है! (सब हँसते हैं।)

महिमा – परन्तु दूध मे कुछ बू आती है! (हास्य)

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हॉ, आती है, परन्तु कुछ उबाल लेना पड़ता है। ज्ञानाग्नि पर दूध कुछ गरम कर लिया जाय तो फिर बू नही रह जाती। (सब हँसते हैं।)

(महिमा से) "ओंकार की व्याख्या तुम लोग केवल यही करते हो – अकार, उकार, मकार।"

महिमाचरण – अकार, उकार और मकार का अर्थ है सृष्टि, स्थिति और प्रलय।

श्रीरामकृष्ण – मै उपमा देता हूँ घण्टे की टंकार से। ट् – अ – म्। लीला से नित्य मे लीन होना, स्थूल, सूक्ष्म और कारण से महाकारण मे लीन होना, जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति से तुरीय मे लीन होना। घण्टे का बजना मानो महासमुद्र में एक वजनदार चीज का गिरना है। फिर तरंगो का उठना शुरू होता है; नित्य से लीला का आरम्भ होता है; महाकारण से स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीर का उद्भव होता है; तुरीय से जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति ये सब अवस्थाएँ आती है। फिर महासमुद्र की तरंग महासमुद्र मे ही लीन हो जाती है। नित्य से लीला है और लीला से नित्य। इसीलिए मै टंकार की उपमा दिया करता हूँ। मैने यह सब यथार्थ रूप मे देखा है। मुझे उसने दिखाया है; चित्-समुद्र है, उसका ओर-छोर नही है। उसीसे ये सब लीलाएँ उठी है और फिर उसीमे लीन हो गयी हैं। चिदाकाश मे करोड़ो ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति होकर वे फिर उसीमें लीन हो गये हैं। तुम्हारी पुस्तक मे क्या लिखा है, यह सब मै नही जानता।

महिमा – जिन्होने देखा है, उन्होने शास्त्र लिखा ही नही, वे तो अपने ही भाव में मस्त रहते थे, शास्त्र कब लिखते? लिखने बैठिये तो कुछ हिसाबी बुद्धि की जरूरत होती ही है। उनसे सुनकर दूसरो ने लिखा है।

श्रीरामकृष्ण – संसारी पूछते है, कामिनी और कांचन की आसक्ति क्यो नहीं जाती? अरे भाई, उन्हें प्राप्त करो तो आसक्ति चली जाय। अगर एक बार ब्रह्मानन्द मिल जाता है तो इन्द्रिय-सुखो या अर्थ या सम्मान आदि की ओर फिर मन नही जाता।

"कीड़ा अगर एक बार उजाला देख लेता है, तो फिर अँधेरे मे नहीं जाता।

"रावण से किसी ने कहा था, तुम सीता के लिए माया से अनेक रूप तो धरते हो, एक बार राम-रूप धारण करके सीता के पास क्यो नही जाते? रावण ने कहा, 'तुच्छं ब्रह्मपदं, परवधूसंग: कुत: – जब श्रीराम की चिन्ता करता हूँ, तब ब्रह्मपद भी तुच्छ जान पड़ता है, पराई स्त्री की तो बात ही क्या है? अतएव राम का रूप धारण करके मैं क्या करूँगा?'

भक्ति से संसारासक्ति कम होती है

इसीके लिए साधन-भजन है। जितनी ही उनकी चिन्ता करेंगे, संसार की भोगवासना उतनी ही घटती जायेगी। उनके पादपद्मों में जितनी भक्ति होगी, उतनी ही आसक्ति घटती जायेगी, उतना ही देहसुख की ओर से मन हटता रहेगा, पराई स्त्री माता के समान जान पड़ेगी, अपनी स्त्री धर्म में सहायता देनेवाली मित्र जान पड़ेगी, पशुभाव दूर हो जायेगा, देवभाव आयेगा, संसार से बिलकुल अनासक्त हो जाओगे। तब संसार में रहने पर भी जीवन्मुक्त होकर विचरण करोगे। चैतन्यदेव जैसे भक्त अनासक्त होकर संसार में थे।

(महिमा से) "जो सच्चा भक्त है, उसके पास चाहे हजार वेदान्त का विचार फैलाओ, और 'स्वप्नवत्' कहो, उसकी भक्ति जाने की नहीं। घूम-फिरकर कुछ न कुछ रहेगी ही। बेत के वन में एक मूसल पड़ा था, वही 'मूषलं कुलनाशनम्' हो गया था।

"शिव के अंश से पैदा होने पर मनुष्य ज्ञानी होता है। ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या, इसी भाव की ओर मन झुका रहता है। विष्णु के अंश से पैदा होने पर प्रेम और भक्ति होती है। वह प्रेम और वह भक्ति मिट नहीं सकती। ज्ञान और विचार के बाद यह प्रेम और भक्ति अगर घट जाय, तो एक दूसरे समय बड़े जोरों से बढ़ जाती हैं।"

(७)

मातृसेवा और श्रीरामकृष्ण। हाजरा महाशय

श्रीरामकृष्ण के कमरे के पूर्ववाले बरामदे में हाजरा महाशय बैठकर जप करते हैं। उम्र ४६-४७ होगी। श्रीरामकृष्ण के देश के आदमी हैं। बहुत दिनों से वैराग्य है। बाहर बाहर घूमते हैं, कभी घर जाकर रहते हैं। घर में कुछ जमीन आदि है। उसी से उनकी स्त्री और लड़के बच्चे पलते हैं। परन्तु एक हजार रुपये के लगभग ऋण है। इसके लिए हाजरा महाशय को बड़ी चिन्ता रहती है कि कब ऋण का शोध हो। इसके लिए वे सदा प्रयत्नशील भी रहते हैं। श्रीयुत हाजरा महाशय कलकत्ता भी आया-जाया करते हैं। वहाँ ठनठनिया के ईशानचन्द्र मुखोपाध्याय महाशय उनकी बड़ी खातिर करते हैं और साधु की तरह सेवा भी करते हैं। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें यत्नपूर्वक अपने पास रखा है, उनके कपड़े फट जाते हैं तो भक्तों से कहकर बनवा देते है। सदा उनकी खबर लेते हैं और सदा उनसे ईश्वरी प्रसंग किया करते हैं। हाजरा महाशय बड़े तार्किक हैं। प्राय: बातचीत करते हुए तर्क की तरंग में बहकर इधर से उधर हो जाते हैं। बरामदे में अपने आसन पर सदा माला लिये हुए जप किया करते हैं।

हाजरा महाशय की माता के बीमार पड़ने का हाल आया है। रामलाल के आते समय उन्होंने (हाजरा की माँ ने) उनका हाथ पकड़कर बहुत तरह से कहा था, 'अपने चाचा (श्रीरामकृष्ण) से मेरी विनय सुनाकर कहना वे प्रताप (हाजरा महाशय) को किसी तरह घर

भेज दें; एक बार मैं देख लूँ।' श्रीरामकृष्ण ने हाजरा महाशय से कहा था, 'एक बार घर जाकर अपनी माँ के दर्शन कर आओ। उन्होंने रामलाल से बहुत समझाकर कहा है, माँ को कष्ट देकर भी कभी ईश्वर को पुकारना हो सकता है? मुलाकात करके चले आना।'

भक्तों के उठ जाने पर महिमाचरण हाजरा को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के पास आये। मास्टर भी हैं।

महिमाचरण – (श्रीरामकृष्ण से, सहास्य) – महाराज, आपसे एक निवेदन है, आपने हाजरा को घर जाने के लिए क्यों कहा? फिर से संसार में जाने की उसकी इच्छा नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – उसकी माँ रामलाल के पास बहुत रोयी है। इसीलिए मैंने कहा, तीन ही दिन के लिए चले जाओ, एक बार मिलकर फिर चले आना। माता को कष्ट देकर क्या कभी ईश्वर की साधना होती है? मैं वृन्दावन में रहता था, तब माँ की याद आयी, सोचा, माँ रोयेंगी, बस, सेजोबाबू के साथ यहाँ चला आया। संसार में जाते हुए ज्ञानी को क्या डर है?

महिमाचरण – (सहास्य) – महाराज, हाजरा को ज्ञान जब हो तब न?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हाजरा को सब कुछ हो गया है। संसार में थोड़ा सा मन है, कारण, बच्चे आदि हैं और कुछ ऋण है। 'मामी की सब बीमारी अच्छी हो गयी है, एक नासूर रोग है!' (महिमाचरण आदि सब हँसते हैं।)

महिमाचरण – कहाँ ज्ञान हुआ महाराज?

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – नहीं जी, तुम नहीं जानते हो। सब लोग कहते हैं हाजरा एक विशेष व्यक्ति हैं, रासमणि की ठाकुरबाड़ी में रहते हैं। सब लोग हाजरा का ही नाम लेते हैं, यहाँ का (अपने को लक्ष्य कर) नाम कौन लेता है?

हाजरा – आप निरुपम हैं, आपकी उपमा नहीं है, इसीलिए आपको कोई समझ नहीं पाता।

श्रीरामकृष्ण – वही तो, निरुपम से कोई काम भी नहीं निकलता, अतएव यहाँ का नाम कोई क्यों लेने लगा?

महिमा – महाराज, वह क्या जाने? आप जैसा उपदेश देंगे, वह वैसा ही करेगा।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, तुम चाहे उससे पूछ देखो, उसने मुझसे कहा है, तुम्हारे साथ मेरा कोई लेना देना नहीं है।

महिमा – तर्क बहुत करता है।

श्रीरामकृष्ण – वह कभी कभी मुझे शिक्षा देता है। (सब हँसते हैं।) जब तर्क करता है तब कभी मैं गाली दे बैठता हूँ। तर्क के बाद कभी मसहरी के भीतर लेटा हुआ रहता हूँ, फिर यह सोचकर कि मैंने कुछ कह तो नहीं डाला, निकल आता हूँ, हाजरा को प्रणाम

कर जाता हूँ, तब चित्त स्थिर होता है।

श्रीरामकृष्ण – (हाजरा से) – तुम शुद्धात्मा को ईश्वर क्यों कहते हो? शुद्धात्मा निष्क्रिय है, तीनों अवस्थाओं का साक्षीस्वरूप है। जब हम सृष्टि, स्थिति और प्रलय के कार्यों की चिन्ता करते हैं, तभी ईश्वर को मानते हैं। शुद्धात्मा उसी तरह है जैसे दूर पर पड़ा हुआ चुम्बक पत्थर; सुई हिल रही है, परन्तु चुम्बक पत्थर चुपचाप पड़ा हुआ है – निष्क्रिय है।

(८)

सन्ध्या-संगीत और ईशान से संवाद

सन्ध्या हो रही है। श्रीरामकृष्ण टहल रहे हैं। मणि को अकेले बैठे हुए और कुछ सोचते हुए देखकर एकाएक श्रीरामकृष्ण ने उनसे स्नेह भरे स्वरों में कहा – "मरकीन के एक-दो कुर्ते ला देना, सब के कुर्ते मैं पहन भी नहीं सकता – कप्तान से कहने के लिए सोचा था, परन्तु अब तुम्हीं ला देना।" मणि खड़े हो गये, कहा, "जो आज्ञा।"

सन्ध्या हो गयी है। श्रीरामकृष्ण के कमरे में धूप दी गयी। वे देवताओं को प्रणाम करके, बीज मन्त्र जपकर, नामकीर्तन कर रहे हैं। घर के बाहर विचित्र शोभा है। आज कार्तिक की शुक्ला सप्तमी है। चन्द्रमा की निर्मल किरणों में एक ओर श्रीठाकुरमन्दिर जैसे हँस रहा है, दूसरी और भागीरथी सोते हुए शिशु के हृदय की तरह काँप रही है। ज्वार पूरा हो गया है। आरती का शब्द गंगा के स्निग्ध और उज्ज्वल प्रवाह से उठती हुई कलध्वनि से मिलकर बहुत दूर जाकर विलीन हो रहा था। श्रीठाकुर-मन्दिर में एक ही साथ तीन मन्दिरों में आरती हो रही है – काली-मन्दिर में, विष्णु-मन्दिर में और शिव-मन्दिर में। द्वाद्वश-शिव-मन्दिरों में एक एक के बाद आरती होती है। पुरोहित एक शिव-मन्दिर से दूसरे में जा रहे हैं, बाये हाथ में घण्टा है, दाहिने मे पंच प्रदीप, साथ में परिचारक है, हाथ में झाँझ लिये हुए। आरती हो रही है. उसके साथ श्रीठाकुर-मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम के कोने से शहनाई की मधुर ध्वनि सुन पड़ रही है। वहीं नौबतखाना है, सन्ध्या की रागिनी बज रही है। आनन्दमयी के नित्य उत्सव से जीवों को मानो यह शिक्षा मिल रही है, कोई निरानन्द न होना, ऐहिक भावों में सुख और दु:ख तो हैं ही; जगदम्बा भी तो है; फिर क्या चिन्ता, आनन्द करो। दासी के लड़के को अच्छा भोजन और अच्छे कपड़े नहीं मिलते, न उसके अच्छा घर है, न अच्छा द्वार; फिर भी उसके हृदय में यह भरोसा रहता है कि उसके माँ है। एकमात्र माता की गोद उसका अवलम्ब है। यह बनी बनायी माँ नहीं, अपनी निजी माँ है। मैं कौन हूँ. कहाँ से आया. कहाँ जाऊँगा सब माँ जानती है। इतना सोचेगा कौन? मैं जानना भी नहीं चाहता। अगर समझने की जरूरत होगी तो वे समझा देंगी।

बाहर कौमुदी की उज्ज्वलता मे संसार हँस रहा है और भीतर कमरे में भगवत्-

प्रेमाभिलिप्त श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। कलकत्ते से ईशान आये हैं। फिर ईश्वरी प्रसंग हो रहा है। ईशान को ईश्वर पर बड़ा विश्वास है। वे कहते हैं, जो घर से निकलते समय एक बार भी दुर्गा नाम स्मरण कर लेते हैं, शूल हाथ में लिये हुए शूलपाणि उनके साथ जाया करते हैं। विपत्ति में फिर भय क्या है? शिव स्वयं उसकी रक्षा करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (ईशान से) – तुम्हें बड़ा विश्वास है। हम लोगों को इतना नहीं है। (सब हँसते हैं।) विश्वास से ही वे मिलते हैं।

ईशान – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – तुम जप, सन्ध्या, उपवास, पुरश्चरण, यह सब कर्म कर रहे हो। यह अच्छा है। जिसकी ईश्वर पर अन्तर से लगन रहती है, उससे वे यह सब काम करा लेते हैं। फल की कामना न करके यह सब कर्म कर लेने से मनुष्य उन्हें अवश्य पाता है।

"शास्त्रों मे बहुत से कर्म करने के लिए कहा है, इसलिए मैं कर रहा हूँ' – इस तरह की भक्ति को वैधी भक्ति कहते हैं। एक और है, राग-भक्ति। वह अनुराग से होती है। ईश्वर पर प्रीति आने पर होती है, जैसे प्रह्लाद को हुई थी। उस भक्ति के आने पर फिर कभी कर्मों की आवश्यकता नही होती।"

(९)

सेवक (मणि) के विचार

सन्ध्या होने के पूर्व मणि घूम रहे हैं और सोच रहे हैं कि 'राम की इच्छा' यह तो बहुत अच्छी बात है। इससे तो अदृष्ट (Predestination), स्वाधीन इच्छा (Free Will), स्वतन्त्रता (Liberty), आवश्यकता (Necessity), आदि सब का झगड़ा मिट जाता है। मुझे डाकुओ ने पकड़ लिया, इसमे भी 'राम की इच्छा'; फिर मैं तम्बाकू पीता हूँ इसमें भी 'राम की इच्छा'; डाकूगिरी करता हूँ इसमें भी 'राम की इच्छा'; मुझे पुलिस ने पकड़ लिया, इसमे भी 'राम की इच्छा'; मैं साधु हो गया, इसमें भी 'राम की इच्छा'; मैं प्रार्थना करता हूँ कि हे प्रभु! मुझे असद्बुद्धि मत देना – मुझसे डकैती मत कराना, यह भी 'राम की इच्छा' है। सद् इच्छा और असद् इच्छा वे ही देते हैं। फिर भी एक बात है, असद् इच्छा वे क्यों देंगे? – डकैती करने की इच्छा वे क्यों देंगे? इसके उत्तर में श्रीरामकृष्णदेव ने कहा, "उन्होंने जानवरों में जिस प्रकार बाघ, सिंह, सर्प उत्पन्न किये हैं, पेड़ों मे जिस प्रकार विष का भी पेड़ पैदा किया है, उसी प्रकार मनुष्यों में चोर-डाकू भी बनाये हैं। ऐसा उन्होंने क्यो किया? इसे कौन कह सकता है? ईश्वर को कौन समझेगा?

"किन्तु यदि उन्होंने ही सब किया है तो उत्तरदायित्व का भाग (Sense of Responsibility) नष्ट हो जाता है, पर वह क्या होगा? जब तक ईश्वर को न जानोगे, उनके दर्शन न होंगे, तब तक 'राम की इच्छा' इस बात का सोलह आने बोध नहीं होगा।

उन्हें प्राप्त न करने से यह बात एक बार समझ में आती है, फिर भूल हो जाती है। जब तक पूर्ण विश्वास न होगा, तब तक पाप-पुण्य का बोध, उत्तरदायित्व (Responsibility) का बोध रहेगा ही। श्रीरामकृष्णदेव ने समझाया, 'राम की इच्छा'। तोते की तरह 'राम की इच्छा' मुँह से कहने से नहीं चल सकता। जब तक ईश्वर को नहीं जाना जाता, उनकी इच्छा से हमारी इच्छा का ऐक्य नहीं होता, जब तक 'मैं यन्त्र हूँ' ऐसा बोध नहीं होता, तब तक वे पाप-पुण्य का ज्ञान, सुख-दु:ख का ज्ञान, पवित्र-अपवित्र का ज्ञान, अच्छे-बुरे का ज्ञान नष्ट नहीं होने देते, उत्तरदायित्व का ज्ञान (Sense of Responsibility) नष्ट नहीं होने देते; ऐसा न होने से उनका मायामय संसार कैसे चलेगा?

"श्रीरामकृष्णदेव की भक्ति की बात जितनी सोचता हूँ, उतना ही अवाक् रह जाता हूँ। जब उन्होंने सुना कि केशव सेन हरिनाम लेते हैं, ईश्वर का चिन्तन करते हैं, तो ये तुरन्त उन्हें मिलने के लिए गये और केशव तुरन्त उनके आत्मीय भी हो गये। उस समय उन्होंने कप्तान की बातें नहीं सुनीं। केशव विलायत गयें है, उन्होंने साहबों के साथ खाया है, कन्या को दूसरी जाति के पुरुष के साथ ब्याह दिया है – कप्तान की ये सब बातें गायब हो गयीं।

"भक्ति के सूत्र में साकारवादी और निराकारवादी एक हो जाते है; हिन्दू, मुसलमान, ईसाई एक हो जाते है; चारों वर्ण एक हो जाते हैं। भक्ति की ही जय होती है। धन्य श्रीरामकृष्ण! तुम्हारी भी जय! तुम्ही ने सनातन धर्म के इस विश्वजनीन भाव को फिर से मूर्तिमान किया। इसीलिए समझता हूँ कि तुम्हारा इतना आकर्षण है! सब धर्मावलम्बियों को तुम परम आत्मीय समझकर आलिंगन करते हो! तुम्हारी भक्ति है। तुम सिर्फ देखते हो – अन्दर ईश्वर की भक्ति और प्रेम है या नहीं? यदि ऐसा हो तो वह व्यक्ति तुम्हारा परम आत्मीय है – भक्तिमान यदि दिखायी पड़े तो वह जैसा तुम्हारा आत्मीय है। मुसलमान को भी यदि अल्लाह के ऊपर प्रेम हो, तो वह भी तुम्हारा अपना आदमी होगा; ईसाई को यदि ईसा के ऊपर भक्ति हो, तो वह तुम्हारा परम आत्मीय होगा। तुम कहते हो कि सब नदियाँ भिन्न-भिन्न दिशाओं से बहकर समुद्र में गिरती हैं। सब का गन्तव्य-स्थान एक समुद्र ही है।

"सुना है, यह जगत्-ब्रह्माण्ड महाचिदाकाश में आविर्भूत होता है, फिर कुछ समय के बाद उसी में लय हो जाता है – महासमुद्र में लहर उठती है, फिर समय पाकर लय हो जाती है। आनन्द-सिन्धु के जल में अनन्त-लीला-तरंगें हैं। इन लीलाओं का आरम्भ कहाँ है? अन्त कहाँ है? उसे मुँह से कहा नहीं जाता – मन से सोचा नहीं जाता। मनुष्य की क्या शक्ति – उसकी बुद्धि की ही क्या शक्ति! सुनते हैं, महापुरुष समाधिस्थ होकर उसी नित्य परम पुरुष का दर्शन करते हैं – नित्य लीलामय हरि का साक्षात्कार करते हैं। अवश्य ही करते हैं कारण, श्रीरामकृष्णदेव ऐसा कहते हैं। किन्तु चर्मचक्षुओं से नहीं,

मालूम पड़ता है, – दिव्य चक्षु जिसे कहते है उसके द्वारा – जिन नेत्रों को पाकर अर्जुन ने विश्वरूप का दर्शन किया था, जिन नेत्रों से ऋषियों ने आत्मा का साक्षात्कार किया था जिस दिव्य चक्षु से ईसा अपने स्वर्गीय पिता का बराबर दर्शन करते थे! वे नेत्र किसे होते हैं? श्रीरामकृष्णदेव के मुँह से सुना था, वह व्याकुलता के द्वारा होता है! इस समय वह व्याकुलता किस प्रकार हो सकती है? क्या संसार का त्याग करना होगा? ऐसा भी तो उन्होंने आज नही कहा!''

□□□

परिच्छेद १०२

श्रीरामकृष्ण तथा ज्ञानयोग

(१)

संन्यासी तथा संचय। पूर्ण ज्ञान तथा प्रेम के लक्षण

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर मे विराजमान है। अपने कमरे में छोटी खाट पर पूर्व की ओर मुँह किये हुए बैठे है। भक्तगण जमीन पर बैठे है। आज कार्तिक की कृष्णा सप्तमी है, ९ नवम्बर १८८४।

दोपहर का समय है। श्रीयुत मास्टर आये, दूसरे भक्त भी धीरे धीरे आ रहे है। श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी के साथ कई ब्राह्म भक्त आये हुए है। पुजारी राम चक्रवर्ती भी आये है। क्रमश: महिमाचरण, नारायण और किशोरी भी आये। कुछ देर बाद और भी कई भक्त आये।

जाड़ा पड़ने लगा है। श्रीरामकृष्ण को कुर्ते की जरूरत है। मास्टर से ले आने के लिए कहा था। वे नैनगिलाट के कुर्तों के सिवा एक और जीन का कुर्ता भी ले आये है, परन्तु इसके लिए श्रीरामकृष्ण ने नही कहा था।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – तुम बल्कि इसे लेते जाओ तुम्ही पहनना। इसमे दोष नही है। अच्छा, तुमसे मैने किस तरह के कुर्तो के लिए कहा था?

मास्टर – जी आपने सादे कुर्तो की बात कही थी। जीन का कुर्ता ले आने के लिए नही कहा था।

श्रीरामकृष्ण – तो जीन वाले को ही लौटा ले जाओ।

(विजय आदि से) "देखो द्वारका बाबू ने एक शाल दिया था। मारवाड़ी भक्तो ने भी एक लाये थे, पर मैने नहीं लिया।" श्रीरामकृष्ण और भी कहना चाहते थे, उसी समय विजय बोल उठे –

विजय – जी हा ठीक तो है। जो कुछ चाहिए और जितना चाहिए, उतना ही ले लिया जाता है। किसी एक को तो देना ही होगा। आदमी को छोड़ और देगा भी कौन?

श्रीरामकृष्ण – देनेवाले वही ईश्वर है। सास ने कहा, 'बहू, सब की सेवा करने के लिए आदमी है परन्तु तुम्हारे पैर दबाने वाला कोई नही है।' कोई होता तो अच्छा होता।

बहू ने कहा, 'माँ, मेरे पैर भगवान दबायेंगे, मुझे किसी की जरूरत नहीं है।' उसने भक्तिपूर्वक यह बात कही थी।

"एक फकीर अकबरशाह के पास कुछ भेंट लेने गया था। बादशाह उस समय नमाज पढ़ रहा था और कह रहा था, ऐ खुदा मुझे दौलतमन्द कर दे। फकीर ने जब बादशाह की याचनाएँ सुनीं तो उठकर वापस जाना चाहा। परन्तु अकबरशाह ने उससे बैठने के लिए इशारा किया। नमाज समाप्त होने पर उन्होंने पूछा, तुम क्यों वापस जा रहे थे? उसने कहा, 'आप खुद ही याचना कर रहे हैं, ऐ खुदा, मुझे दौलतमन्द कर दे। इसलिए मैंने सोचा, अगर माँगना ही है तो भिक्षुक से क्यों माँगूँ, खुदा से ही क्यों न माँगूँ?

विजय – गया में मैंने एक साधु देखा था। वे स्वयं कुछ प्रयत्न नहीं करते थे। एक दिन इच्छा हुई, भक्तों को खिलाऊँ। देखा, न जाने कहाँ से मैदा और घी आ गया। फल भी आये।

श्रीरामकृष्ण – (विजय आदि से) – साधुओं के तीन दर्जे है, उत्तम, मध्यम और अधम। जो उत्तम हैं, वे भोजन की खोज में नहीं फिरते। मध्यम और अधम दण्डियों की तरह के होते हैं। मध्यम जो हैं, वे नमोनारायण करके खड़े हो जाते हैं। जो अधम हैं वे न देने पर झगड़ा करते हैं। (सब हँसे।)

"उत्तम श्रेणी के साधु अजगर-वृत्ति के होते हैं। उन्हें बैठे हुए ही आहार मिलता है। अजगर हिलता-डुलता नहीं। एक छोकरा साधु था – बाल ब्रह्मचारी। वह कहीं भिक्षा लेने के लिए गया। एक लड़की ने आकर भिक्षा दी। उसके स्तन देखकर उसने सोचा, इसकी छाती पर फोड़ा हुआ है। जब उसने पूछा तो घर की पुरखिन ने आकर उसे समझाया। इसके पेट में बच्चा होगा, उसके पीने के लिए ईश्वर इनमें दूध भर दिया करेंगे इसीलिए पहले से इसका बन्दोबस्त कर रखा है। यह बात सुनकर उस साधु को बड़ा आश्चर्य हुआ। तब उसने कहा, 'तो अब मुझे भिक्षा माँगने की क्या जरूरत है? ईश्वर मेरे लिए भी भोजन तैयार कर दिया करेंगे।'

"कुछ भक्त मन में सोचते हैं कि तब तो हम लोग भी यदि चेष्टा न करें, तो चल सकता है।

"जिसके मन में यह है कि चेष्टा करनी चाहिए, उसे चेष्टा करनी होगी।"

विजय – भक्तमाल में एक बड़ी अच्छी कहानी है।

श्रीरामकृष्ण – कहो, जरा सुनें तो।

विजय – आप कहिये।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, तुम्हीं कहो, मझे पूरी याद नहीं है। पहले पहल सुनना चाहिए, इसीलिए मैं सुना करता था।

"मेरी अब वह अवस्था नहीं है। हनुमान ने कहा था, वार, तिथि, नक्षत्र, इतना सब

मैं नहीं जानता, मैं तो बस श्रीरामचन्द्रजी की चिन्ता किया करता हूँ।

"चातक को बस स्वाति के जल की चाह रहती है। मारे प्यास के जी निकल रहा है, परन्तु गला उठाये वह आकाश की बूँदों की ही प्रतिक्षा करता है। गंगा-यमुना और सातों समुद्र इधर भरे हुए हैं, परन्तु वह पृथ्वी का पानी नहीं पीता।

"राम और लक्ष्मण जब पम्पा सरोवर पर गये तब लक्ष्मण ने देखा, एक कौआ व्याकुल होकर बार बार पानी पीने के लिए जा रहा था, परन्तु पीता न था। राम से पूछने पर उन्होंने कहा 'भाई, यह कौआ परम भक्त है। दिनरात यह रामनाम जप रहा है। इधर मारे प्यास के छाती फटी जा रही है, परन्तु पानी पी नहीं सकता। सोचता है, पानी पीने लगूँगा तो जप छूट जायेगा।' मैंने पूर्णिमा के दिन हलधर से पूछा, दादा, आज क्या अमावस है? (सब हँसते हैं।)

(सहास्य) "हाँ यह सत्य है। ज्ञानी पुरुष की पहचान यह है कि पूर्णिमा और अमावस में भेद नहीं पाता। परन्तु हलधारी को इस विषय में कौन विश्वास दिला सकता है? उसने कहा 'यह निश्चय ही कलिकाल है। वे (श्रीरामकृष्ण) पूर्णिमा और अमावस में भेद नहीं जानते और फिर भी लोग उनका आदर करते हैं।' " (इसी समय महिमाचरण आ गये।)

श्रीरामकृष्ण – (सम्भ्रमपूर्वक) – आइये, आइये, बैठिये। (विजय आदि से) इस अवस्था में दिन और तिथि का ख्याल नहीं रहता। उस दिन वेणीपाल के बगीचे में उत्सव था – मैं दिन भूल गया। 'अमुक दिन संक्रान्ति है, अच्छी तरह ईश्वर का नाम लूँगा', यह अब याद नहीं रहता। (कुछ देर विचार करने के बाद) परन्तु अगर कोई आने को होता है तो उसकी याद रहती है।

"ईश्वर पर सोलहों आने मन जाने पर यह अवस्था होती है। राम ने पूछा, 'हनुमान, तुम सीता की खबर तो ले आये, अच्छा, तो उन्हें कैसा देखा? कहो, मेरी सुनने की इच्छा है।' हनुमान ने कहा, 'राम, मैंने देखा, सीता का शरीर मात्र पड़ा हुआ है। उसमें मन, प्राण नहीं है। आप के ही पादपद्मो में उन्होंने वे समर्पण कर दिये हैं। इसलिए केवल शरीर ही पड़ा हुआ है। और मैंने देखा काल (यमराज) पास ही था; परन्तु वह करे क्या? वहाँ तो शरीर ही है, मन और प्राण तो हैं ही नहीं।'

"जिसकी चिन्ता की जाती है, उसकी सत्ता आ जाती है। दिनरात ईश्वर की चिन्ता करते रहने पर ईश्वर की सत्ता आ जाती है। नमक का पुतला समुद्र की थाह लेने गया तो गलकर खुद वही हो गया। पुस्तकों या शास्त्रों का उद्देश्य क्या है? – ईश्वरलाभ। साधु की पोथी को एक ने खोलकर देखा, उसमें सिर्फ रामनाम लिखा हुआ था, और कुछ भी नहीं।

"ईश्वर पर प्रीति होने पर थोड़े ही में उद्दीपन हुआ करता है। तब एक बार रामनाम

करने पर कोटि सन्ध्योपासन का फल होता है।

"मेघ देखकर मयूर को उद्दीपन होता है। आनन्द से पंख फैलाकर नृत्य करता है। श्रीमती राधा को भी ऐसा ही हुआ करता था। मेघ देखकर उन्हें कृष्ण की याद आती थी।

"चैतन्यदेव मेड़गांव के पास ही से जा रहे थे। उन्होने सुना इस गाँव की मिट्टी से ढोल बनता है। बस भावावेश मे विह्वल हो गये – क्योंकि संकीर्तन के समय ढोल का ही वाद्य होता है।

"उद्दीपन किसे होता है? जिसकी विषयबुद्धि दूर हो गयी है, जिसका विषयरस सूख जाता है, उसे ही थोड़े में उद्दीपन होता है। दियासलाई भीगी हुई हो तो चाहे कितना ही क्यो न घिसो, वह जल नही सकती, पानी अगर सूख जाय तो जरा सा घिसने से ही वह जल जाती है।

"देह मे सुख और दुःख लगे ही है। जिसे ईश्वरलाभ हो चुका है, वह मन, प्राण, आत्मा, सब उन्हें दे देता है। पम्पा सरोवर मे नहाते समय राम और लक्ष्मण ने सरोवर के तट की मिट्टी में धनुष गाड़ दिये। स्नान करके लक्ष्मण ने धनुष निकालते हुए देखा, धनुष मे खून लगा हुआ था। राम ने देखकर कहा, भाई, जान पड़ता है, कोई जीव-हिसा हो गयी। लक्ष्मण ने मिट्टी खोदकर देखा तो एक बड़ा मेढ़क था, वह मरणासन्न हो गया था। राम ने करुणापूर्ण स्वर मे कहा, 'तुमने आवाज क्यो नही दी? हम लोग तुम्हे बचा लेते। जब साँप पकड़ता है, तब तो खूब चिल्लाते हो।' मेढ़क ने कहा, 'राम, जब साँप पकड़ता है, तब मे चिल्लाता हूँ, राम, रक्षा करो – राम, रक्षा करो। पर अब देखता हूँ, राम स्वयं मुझे मार रहे है, इसीलिए मुझे चुपचाप रह जाना पड़ा।' "

(२)

गुरु-महिमा। ज्ञानयोग

श्रीरामकृष्ण चुपचाप बैठे हुए महिमाचरण आदि भक्तो को देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण ने सुना है कि महिमाचरण गुरु नही मानते। इस विषय पर वे कहने लगे –

श्रीरामकृष्ण – गुरु की बात पर विश्वास करना चाहिए। गुरु के चरित्र की ओर देखने की आवश्यकता नही। 'मेरे गुरु यद्यपि शराबवाले की दूकान जाते है, फिर भी मै उन्हे नित्यानन्द राय मानता हूँ', यह भाव रखना चाहिए।

"एक आदमी चण्डी भागवत सुनाता था। उसने कहा, झाड़ू स्वयं तो अस्पृश्य है, परन्तु स्थान को पवित्र करता है।"

महिमाचरण वेदान्त की चर्चा किया करते है। उद्देश्य ब्रह्मज्ञान है। उन्होंने ज्ञानी का मार्ग ग्रहण किया है और सदा ही विचार करते रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (महिमा से) – ज्ञानी का उद्देश्य है, वह स्वरूप को समझे; यही ज्ञान है और इसे ही मुक्ति कहते हैं। परब्रह्म जो है, वे ही सब के स्वरूप हैं। मैं और परब्रह्म दोनों एक ही सत्ता है। माया समझने नही देती। हरीश से मैंने कहा, 'और कुछ नहीं – सोने पर कुछ टोकरी मिट्टी पड़ गयी है, उसी मिट्टी को निकाल देना है।'

"भक्तगण 'मैं' रखते हैं, ज्ञानी नही रखते। किस तरह स्वरूप में रहना चाहिए, 'न्यांगटा' (तोतापुरी) इसका उपदेश देता था, कहता था, 'मन को बुद्धि में लीन करो और बुद्धि को आत्मा में, तब स्वरूप में रह सकोगे।'

"परन्तु 'मैं' रहेगा ही, वह नही जाता। जैसे अनन्त जल राशि, ऊपर-नीचे, सामने-पीछे, दाहिने-बायें पानी भरा हुआ है। उसी जल के भीतर एक जलपूर्ण कुम्भ है। 'मैं' रूपी कुम्भ।

"ज्ञानी का शरीर ज्यों का त्यों ही रहता है; परन्तु इतना होता है कि ज्ञानाग्नि में कामादि रिपु दग्ध हो जाते है। कालीमन्दिर में बहुत दिन हुए आँधी और पानी दोनों एक साथ आये, फिर मन्दिर पर बिजली गिरी। हम लोगो ने जाकर देखा, कपाट ज्यों के त्यों ही थे, नुकसान नहीं हुआ था; परन्तु स्क्रू जितने थे उनका सिर टूट गया था। कपाट मानो शरीर है और कामादि आसक्तियाँ जैसे स्क्रू।

"ज्ञानी केवल ईश्वर की बात चाहता है। विषय की बातें होने पर उसे बड़ा कष्ट होता है। विषयी और दर्जे के हैं। उनकी अविद्या की पगड़ी नही उतरनी; इसीलिए घूम घामकर वही विषय की बात ले आते हैं।

"वेदों में सप्त भूमियो की बातें है; पंचम भूमि पर जब ज्ञानी चढ़ता है, तब ईश्वरी बात के सिवा न तो कुछ और सुन सकता है, न कह सकता है; तब उसके मुँह से केवल ज्ञान का उपदेश निकलता है।

"वेदों में सच्चिदानन्द ब्रह्म की बात है। ब्रह्म न एक है, न दो, एक और दो के बीच मे है। उसे न तो कोई अस्ति कह सकता है, न नास्ति। वह अस्ति और नास्ति के बीच की वस्तु है।

"रागभक्ति के आने पर अर्थात् ईश्वर पर प्यार होने पर मनुष्य उन्हें पाता है। वैधी भक्ति जिस तरह होती है, उसी तरह चली भी जाती है। इतना जप करना है, इतना ध्यान करना है, इतना याग यज्ञ और होम करना है, इन उपचारों से पूजा करनी है, पूजा के समय इन मन्त्रों का पाठ करना है, ये सब वैधी भक्ति के लक्षण हैं। यह होती है जैसे, जाती भी है वैसे ही। कितने आदमी कहते हैं, 'अरे भाई, कितना हविष्यान्न किया, कितनी बार घर में पूजा की, परन्तु क्या हुआ?' रागभक्ति का कभी पतन नहीं होता। रागभक्ति उन्हें होती है.जिनका बहुत सा काम पूर्व जन्म से किया हुआ है, अथवा जो लोग नित्य-सिद्ध हैं। जैसे किसी गिरी हुई इमारत का ढेर साफ करते हुए लोगों को एक नलदार फव्वारा मिल गया।

उसके ऊपर मिटटी और सुरखी पड़ी हुई थी, ज्योही सब कूड़ा हटा दिया गया कि जोरो से पानी निकलने लगा।

"जिन्हे रागभक्ति होती है, वे यह बात नही कहते कि भाई इतना हविष्यान्न किया, परन्तु कही कुछ न हुआ। जो लोग पहले पहल किसानी करते है, अगर उपज नही होती तो वे किसानी छोड़ देते है। जिसके पुश्त-दरपुश्त से खेती हो रही है, वह यह काम नही छोड़ता, चाहे दो-एक बार पैदावार अच्छी न भी हो। वे जानते हैं कि खेती से ही उनका जीवन-निर्वाह होगा।

"जिनमे रागभक्ति है, उनका भाव आन्तरिक है, उनका भार ईश्वर लेते है। अस्पताल मे नाम लिखाने पर जब तक रोगी अच्छा नही हो जाता तब तक डाक्टर छोड़ता नही। ईश्वर जिन्हे पकडे हुए है उनके लिए किसी भय की बात नही। खेत की मेड़ पर से चलते हुए जो लड़का अपने बाप का हाथ पकडे रहता है, वह चाहे भले ही गिर जाय – सम्भव हे वह किसी दूसरे ख्याल मे डूबकर बाप का हाथ छोड़ दे, परन्तु जिस लड़के को बाप खुद पकडे रहता है, वह कभी नही गिर सकता।

"विश्वास से क्या नही होता? जो सच्चे मार्ग पर है, वह सब पर विश्वास करता है – साकार, निराकार, राम, कृष्ण, भगवती - सब पर।

"उस देश (कामारपुकुर) मे मैं जा रहा था, एकाएक रास्ते मे आँधी और पानी एक साथ आये। बीच मैदान मे डाकुओ का भी भय था। तब मैने सब कुछ कह डाला – राम, कृष्ण, भगवती, फिर मैने हनुमानजी की याद की! अच्छा मैने सब कुछ कहा, इसका क्या अर्थ है?

"बात यह हे जब कि नौकर या नौकरानी बाजार करने को पैसे लेती है तब हर चीज के पैसे अलग अलग लेती है, कहती है – ये आलू के पैसे हुए, ये बैगन के, ये मछली के, इस तरह सब पैसे अलग अलग लेती है। सब हिसाब करके फिर पैसे मिला देती है।

"ईश्वर पर प्यार होने पर केवल उन्ही की बात कहने को जी चाहता है। जो जिसे प्यार करता है, उसे उसी की बाते सुनते और कहते हुए प्रीति होती है। संसारी आदमियो के मुँह से अपने बच्चे की बाते करते हुए लार टपक पडती है। अगर कोई उसके बच्चे की तारीफ करता है तो वह अपने बच्चे से उसी समय कहता है, अरे देख, अपने चाचा को पैर धोने के लिए पानी तो ले आ।

"कबूतरो पर जिनकी रुचि है, उनके पास कबूतरो की तारीफ करो तो खुश हो जाते है। अगर कोई उनकी निन्दा करता है, तो वह कहता है, तुम्हारे बाप-दादे ने भी कभी कबूतरो को पाला है?

(महिमाचरण से) "संसार का एकदम छोड़ देने की क्या जरूरत है? आसक्ति के जाने ही से हुआ, परन्तु साधना चाहिए। इन्द्रियो के साथ लडाई करनी पड़ती है।

"किले के भीतर से लड़ने में और सुविधाएँ हैं। वहाँ बड़ी सहायता मिलती है। संसार भोग की जगह है। एक-एक चीज का भोग करके उसी समय उसे छोड़ देना चाहिए। मेरी इच्छा थी कि सोने की करधनी पहनूँ। अन्त में वह मिली भी। मैंने सोने की करधनी पहनी। पहनने के बाद उसे उसी समय खोल डाला।

"प्याज खाया और उसी समय विचार करने लगा। कहा, रे मन, यही प्याज है।' फिर मुँह में एक बार इधर, एक बार उधर, इस तरह चबाकर उसे फेंक दिया।"

(३)

संकीर्तनानन्द में

आज एक गानेवाले आयेगे, अपनी मण्डली के साथ कीर्तन करेंगे। श्रीरामकृष्ण बार बार अपने शिष्यों से पूछ रहे हैं, 'कीर्तनिया कहाँ है?' महिमाचरण ने कहा, "हम लोग ऐसे ही अच्छे हैं।"

श्रीरामकृष्ण – नहीं जी, हम लोगों का मिलना तो बारहों महीने लगा है।

बाहर से किसी ने कहा, "कीर्तनिया आ गया।"

श्रीरामकृष्ण ने आनन्द के उच्छ्वास में इतना ही कहा – "क्या आ गया?"

कमरे के दक्षिण-पूर्व के लम्बे बरामदे मे शतरंजी बिछायी गयी। श्रीरामकृष्ण ने कहा – "इस पर थोड़ा सा गंगाजल छिड़क देना। न जाने कितने विषयी मनुष्यों ने इसे रौंदा है।"

बाली के प्यारी बाबू की स्त्रियाँ और लड़कियाँ काली का दर्शन करने के लिए आयी हुई हैं। कीर्तन होने का आयोजन देखकर उन्हे भी सुनने की इच्छा हुई। एक ने श्रीरामकृष्ण से आकर कहा, 'वे सब पूछती हैं – क्या कमरे में जगह होगी? क्या वे भी बैठें?'

श्रीरामकृष्ण कीर्तन सुनते हुए ही कह रहे हैं – 'नहीं नही, जगह कहाँ है?' इसी समय नारायण आये और उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'तू क्यों आया? घरवालों ने तुझे इतना मारा!' नारायण श्रीरामकृष्ण के कमरे की ओर जा रहे थे; श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम को इशारे से कह दिया – इसे खाने के लिए देना।

नारायण कमरे के अन्दर गये। एकाएक श्रीरामकृष्ण ने उठकर कमरे में प्रवेश किया, नारायण को अपने हाथों भोजन करायेंगे। खिलाने के बाद फिर वे कीर्तन में आकर बैठे।

(४)

भक्तों के साथ संकीर्तनानन्द

बहुत से भक्त आये हुए है, श्रीयुत विजय गोस्वामी, महिमाचरण, नारायण, अधर, मास्टर, छोटे गोपाल आदि। राखाल, बलराम इस समय वृन्दावन में है।

दिन के ३-४ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण बरामदे में कीर्तन सुन रहे हैं, पास में नारायण आकर बैठे। चारों ओर दूसरे भक्त बैठे हुए हैं।

इसी समय अधर आये। अधर को देखकर श्रीरामकृष्ण में कुछ उद्दीपना हो गयी। अधर के प्रणाम करके आसन ग्रहण करने पर श्रीरामकृष्ण ने उन्हें और निकट बैठने के लिए इशारा किया।

कीर्तनियों ने कीर्तन समाप्त किया। सभा उठ गयी। बगीचे में भक्तगण इधर-इधर टहल रहे हैं। कोई कोई काली और राधाकान्तजी की आरती देखने के लिए गये।

सन्ध्या के बाद श्रीरामकृष्ण के कमरे मे भक्तगण फिर आये। उनके कमरे में कीर्तन का आयोजन फिर होने लगा। उनमें खूब उत्साह है। कहते हैं, एक बत्ती इधर भी देना। दो बत्तियाँ जला दी गयीं, खूब रोशनी होने लगी।

श्रीरामकृष्ण विजय से कह रहे है – 'तुम ऐसी जगह क्यों बैठे? इधर आकर बैठो।'

अब की बार कीर्तन खूब जमा। श्रीरामकृष्ण मस्त होकर नृत्य कर रहे है। भक्तगण उन्हें घेर-घेरकर खूब नाच रहे है। विजय नाचते हुए दिगम्बर हो गये। होश कुछ भी नहीं हैं।

कीर्तन के बाद विजय चाभी खोज रहे है। कही गिर गयी है। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "अब भी एक बार 'बोल वृन्दावन बिहारी की जय' होनी चाहिए!" यह कहकर हँस रहे है, विजय से और भी कह रहे हैं, "अब यह सब क्यों?" (अर्थात् अब चाभी के साथ क्यों सम्बन्ध रखते हो?)

किशोरी प्रणाम करके बिदाई ले रहे हैं। श्रीरामकृष्ण स्नेहार्द्र हो उनकी देह पर हाथ फेरने लगे और बोले, 'अच्छा आओ।' बातों में करुणा मिली हुई है। कुछ देर बाद मणि और गोपाल ने आकर प्रणाम किया – वे लोग भी चलने वाले हैं। श्रीरामकृष्ण की करुणापूर्ण बातें! कहा, कल सुबह को उठकर जाना, कहीं ओस लगकर तबीयत न खराब हो जाय।

मणि और गोपाल फिर नहीं गये। वे आज रात को यहीं रहेंगे। वे तथा और भी दो-एक भक्त जमीन पर बैठे हुए हैं। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण श्रीयुत राम चक्रवर्ती से कह रहे हैं, "राम, यहाँ एक पाँवपोश और था, क्या हो गया?"

श्रीरामकृष्ण को दिन भर अवकाश नहीं मिला कि जरा विश्राम करते। भक्तों

को छोड़कर जाते भी कहाँ? अब एक बार बाहर की ओर जाने लगे।

कमरे में लौटकर उन्होंने देखा, मणि रामलाल से सुनकर गाना लिख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने मणि से पूछा, 'क्या लिखते हो?' गाने का नाम सुनकर कहा, यह तो बहुत बड़ा गाना है।

रात को श्रीरामकृष्ण जरा सी सूजी की खीर और दो-एक पूड़ियाँ खाते हैं। उन्होंने रामलाल से पूछा, 'क्या सूजी है?'

गाना दो-एक लाइन लिखकर मणि ने लिखना बन्द कर दिया।

श्रीरामकृष्ण जमीन पर बिछे हुए आसन पर बैठकर सूजी की खीर खा रहे हैं। भोजन करके आप छोटी खाट पर बैठे। मास्टर खाट की बगल में तख्त पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण से बातचीत कर रहे हैं। नारायण की बात करते हुए श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण – आज नारायण को मैंने देखा।

मास्टर – जी हाँ, आँखे डबडबाई हुई थीं। उसका मुँह देखकर रुलाई आती थी।

श्रीरामकृष्ण – उसे देखकर वात्सल्य भाव का उद्रेक होता है। यहाँ आता है, इसीलिए घरवाले उसे मारते हैं। उसकी ओर से कहनेवाला कोई नहीं है।

मास्टर – (सहास्य) – हरिपद के घर में पुस्तकें रखकर वह यहाँ भाग आया।

श्रीरामकृष्ण – यह अच्छा नहीं किया।

श्रीरामकृष्ण चुप है। कुछ देर बाद बोले –

"देखो, उसमें बड़ी शक्ति है। नहीं तो कीर्तन सुनते हुए मुझे क्या कभी आकर्षित भी कर सकता था? मुझे कमरे के भीतर आना पड़ा। कीर्तन छोड़कर आना – ऐसा कभी नहीं हुआ।

"उससे मैंने भावावेश में पूछा था, उसने एक ही वाक्य में कहा – मैं आनन्द में हूँ। (मास्टर से) तुम उसे कभी कभी कुछ मोल लेकर खिलाया करो – वात्सल्य भाव से।"

श्रीरामकृष्ण ने फिर तेजचन्द्र की बात निकाली।

(मास्टर से) "एक बार उससे पूछना तो सही, एक शब्द में वह मुझे क्या बतलाता है? – ज्ञानी या कुछ और। सुना, तेजचन्द्र अधिक बातचीत नहीं करता। (गोपाल से) देख, तेजचन्द्र से शनि या मंगल के दिन आने के लिए कहना।"

श्रीरामकृष्ण जमीन पर बैठे हुए सूजी की खीर खा रहे हैं। पास ही एक दीपदान पर दिया जल रहा है। श्रीरामकृष्ण के पास मास्टर बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, 'क्या कुछ मिठाई है?' मास्टर नये गुड़ के सन्देश ले आये थे। रामलाल ने कहा, ताक पर सन्देश रखे हुए है।

श्रीरामकृष्ण – कहाँ है? जरा ले आओ।

मास्टर फुर्ती से उठकर ताक पर खोजने लगे। वहाँ सन्देश न थे। भक्तो की सेवा मे गये होगे। मास्टर संकुचित होकर श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, अबकी बार अगर तुम्हारे स्कूल मे जाकर देखूँ –

मास्टर ने सोचा, ये नारायण को देखने के लिए स्कूल जाने की बात कह रहे है। उन्होने कहा, हमारे घर मे चलकर बैठिये तो भी काम हो जायेगा।

श्रीरामकृष्ण – एक इच्छा है। वह यह कि वहाँ और कोई लडका उस तरह का है या नही, जरा देखूँ चलकर।

मास्टर – आप अवश्य चलिये। दूसरे आदमी देखने जाया करते है, उसी तरह आप भी जाइयेगा।

श्रीरामकृष्ण भोजन करके छोटी खाट पर बैठे। इस बीच मे मास्टर और गोपाल ने बरामदे मे बैठकर भोजन किया – रोटी और दाल। उन लोगो ने नौबतखाने मे सोने का निश्चय किया।

भोजन करके मास्टर श्रीरामकृष्ण के पाँवपोश पर आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – नौबतखाने मे हंडियाँ-बर्तन न रखे हो, यहाँ सोओगे – इस कमरे मे?

मास्टर – जी हाँ।

(५)

सेवक के संग में

रात के १०-११ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर तकिये के सहारे विश्राम कर रहे है। मणि जमीन पर बैठे है। मणि के साथ श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं। कमरे की दीवार के पास उसी दीपदान पर दिया जल रहा है।

श्रीरामकृष्ण – मेरे पैर सुहारते है, जरा हाथ फेर दो।

मणि श्रीरामकृष्ण के पैरो की ओर छोटी खाट पर बैठे हुए धीरे धीरे पैरो पर हाथ फेर रहे है। श्रीरामकृष्ण रह-रहकर बातचीत कर रहे है

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – अकबर बादशाह की बात कैसी रही?

मणि – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – कौन सी बात, कहो तो जरा।

मणि – फकीर बादशाह से मिलने आया था। अकबर बादशाह उस समय नमाज पढ़ रहे थे। नमाज पढ़ते हुए ईश्वर से धनदौलत की प्रार्थना करते थे। यह सुनकर फकीर धीरे से अपने घर चल दिया। बाद मे अकबर बादशाह के पूछने पर उसने कहा 'अगर

माँगना ही है तो भिखारी से क्या माँगू?'

श्रीरामकृष्ण – और कौन कौन सी बातें हुई थीं?

मणि – संचय की बाते खूब हुईं।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कौन-कौन सी?

मणि – जब यह ज्ञान रहता है कि हमें प्रयत्न करना चाहिए तब तक प्रयत्न करना चाहिए। संचय की बात सींती मे कैसी कही आपने?

श्रीरामकृष्ण – कौन सी बात?

मणि – जो पूर्ण रूप से उन पर अवलम्बित है, उसका भार वे लेते भी हैं – नाबालिग का भार जैसे वली लेता है। एक बात और सुनी थी, वह यह कि जिस घर में न्योता रहता है, वहाँ छोटा लड़का खुद स्थान ग्रहण नहीं कर सकता, खाने के लिए दूसरे उसे बैठाते हैं।

श्रीरामकृष्ण – नहीं। यह ठीक नहीं हुआ। बाप अगर लड़के का हाथ पकड़कर ले ज़ाता है तो वह लड़का नहीं गिरता।

मणि – और आज आपने तीन तरह के साधुओं की बात कही थी। उत्तम साधु को बैठे हुए ही भोजन मिलता है। आपने उस बालक साधु की बात कही। उसने लड़की के स्तन देखकर पूछा था, इसकी छाती पर ये फोड़े कैसे हुए? और भी बहुत सी सुन्दर सुन्दर बातें आपने कही थीं, सब बातें कैसे ऊँचे लक्ष्य की थीं!

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कौन कौन सी बातें?

मणि – पम्पा सरोवर के उस कौए की बात। दिन-रात रामनाम जपता है, इसीलिए पानी के पास पहुँचकर भी पानी पी नहीं सकता। और उस साधु की पोथी की बात जिसमें केवल 'श्रीराम' लिखा हुआ था। और हनुमान ने श्रीरामजी से जो कुछ कहा –

श्रीरामकृष्ण – क्या कहा?

मणि – 'सीता को मैंने देखा, केवल उनकी देह पड़ी हुई है, मन और प्राण सब तुम्हारे श्रीचरणों में उन्होंने अर्पित कर दिये हैं।'

"और चातक की बात – स्वाति की बूँदों को छोड़ और दूसरा पानी नहीं पीता।

"और ज्ञानयोग और भक्तियोग की बातें।"

श्रीरामकृष्ण – कौन सी?

मणि – जब तक 'कुम्भ' का ज्ञान है, तब तक 'मैं कुम्भ हूँ' यह भाव रहेगा ही। जब तक 'मैं' है, तब तक 'मैं भक्त हूँ, तुम भगवान हो' यह भाव भी रहेगा।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, 'कुम्भ' का ज्ञान रहे या न रहे, 'कुम्भ' मिट नहीं सकता। उसी तरह 'मैं' भी नहीं मिटता। चाहे लाख विचार करो, वह नहीं जाता।

मणि कुछ देर चुप हो रहे; फिर बोले –

"काली-मन्दिर मे ईशान मुखर्जी से आपकी बातचीत हुई थी – भाग्यवश उस समय हम लोग भी वहाँ थे और सब बाते सुनी थी।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हॉ, कौन-कौन सी बाते हुई थी, जरा कहो तो सही।

मणि – आपने कहा था, कर्मकाण्ड प्रथम अवस्था की क्रिया है, शम्भू मल्लिक से आपने कहा था, 'अगर ईश्वर तुम्हारे सामने आये तो क्या तुम उनसे कुछ अस्पतालो और दवाखानो की प्रार्थना करोगे?'

"एक बात और हुई थी। वह यह कि जब तक कर्मो मे आसक्ति रहती है, तब तक ईश्वर दर्शन नही देते। केशव सेन से इसी सम्बन्ध की बाते आपने कही थी।"

श्रीरामकृष्ण – कौन-कौन सी बाते?

मणि – जब तक लड़का खिलौने पर रीझा रहता है, तब तक मॉ रोटी-पानी मे लगी रहती है, पर खिलौना फेककर जब लड़का चिल्लाता रहता है तब मॉ तवा उतारकर बच्चे के लिए दौड़ती है।

"एक बात और उस दिन हुई थी। लक्ष्मण ने पूछा था, 'कहॉ कहॉ ईश्वर के दर्शन हो सकते है?' राम ने बहुत सी बाते कहकर फिर कहा, 'भाई, जिस मनुष्य मे यथार्थ भक्ति देखोगे, ऐसी भक्ति कि वह हॅसता है, रोता है, नाचता है, गाता है, मारे प्रेम के मतवाला हो रहा है, वहाँ समझना, मै अवश्य हूँ।' "

श्रीरामकृष्ण – आहा – आहा!

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप रहे।

मणि – ईशान से तो आपने केवल निवृत्ति की बाते कही थी। उसी दिन से बहुतो की अक्ल दुरुस्त हो गयी। अब कर्तव्य-कर्मो के घटाने की ओर हम लोगो का रुख है। आपने कहा था एक दूसरे की बला अपने सिर क्यो लादी जाय?

श्रीरामकृष्ण यह बात सुनकर बडे जोर से हॅसे।

मणि – (बड़े विनय-भाव से) – अच्छा, कर्तव्य-कर्म, यह जंजाल घटाना तो अच्छा है न?

श्रीरामकृष्ण – हॉ, परन्तु सामने कोई पड़ गया, वह और बात है। साधु या गरीब आदमी अगर सामने आया, तो उनकी सेवा करनी चाहिए।

मणि – और उस दिन ईशान मुखर्जी से खुशामद की बात भी आपने खूब कही। मुर्दे पर जैसे गीध टूटते है। यही बात आपने पण्डित पद्मलोचन से भी कही थी।

श्रीरामकृष्ण – नही, उलो के वामनदास से कही थी।

श्रीरामकृष्ण को नीद आ रही है। उन्होने मणि से कहा – "तुम अब सोओ जाकर। गोपाल कहॉ गया? तुम दरवाजा बन्द कर लो, पर जंजीर न चढ़ाना।"

दूसरे दिन सोमवार था। श्रीरामकृष्ण बिस्तर से प्रातःकाल उठकर देवताओ के नाम

ले रहे है। रह-रहकर गंगा-दर्शन कर रहे है। उधर काली और श्रीराधाकान्त के मन्दिर मे मंगलारती हो रही है। मणि श्रीरामकृष्ण के कमरे में जमीन पर लेटे हुए थे। वे भी बिस्तर से उठकर सब देख और सुन रहे है।

प्रात:कृत्य समाप्त करके वे श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण स्नान करके काली-मन्दिर जा रहे है। उन्होंने मणि से कमरे मे ताला बन्द कर लेने के लिए कहा।

काली-मन्दिर में जाकर श्रीरामकृष्ण आसन पर बैठे और फूल लेकर कभी अपने मस्तक पर और कभी श्रीकाली के पादपद्मो पर चढ़ा रहे है। फिर चामर लेकर व्यजन करने लगे।

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे की ओर लौटे। मणि से ताला खोलने के लिए कहा। कमरे मे प्रवेश कर छोटी खाट पर बैठे। इस समय भाव मे मग्न होकर नाम ले रहे है। मणि जमीन पर अकेले बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण गाने लगे। भाव मे मस्त हुए आप मणि को गीतो से क्या यह शिक्षा दे रहे है कि "काली ही ब्रह्म है, काली निर्गुण है और सगुण भी है, अरूपा है और अनन्तरूपिणी भी है।"

गाना (भावार्थ) – "ऐ तारिणी, मेरा त्राण कर। तू जल्दी कर, इधर यम-त्रास से मेरा जी निकल रहा है। तू जगदम्बा है, तू लोको का पालन करती है, मनुष्यो को मुग्ध भी तू ही करती है, तू संसार की जननी है, यशोदा के गर्भ से जन्म लेकर कृष्ण की लीला मे तू ही ने सहायता दी थी। वृन्दावन मे तू विनोदिनी राधा थी, व्रजवल्लभ कृष्ण के साथ तूने विहार किया था। रासरंगिनी और रसमयी होकर रास मे तूने अपनी लीला का प्रकाशन किया था। ... तू शिवानी है, सनातनी है, ईशानी है, सदानन्दमयी है, सगुणा भी है, निर्गुणा भी है, सदा ही तू शिव की प्यारी है, तेरी महिमा कहने के योग्य ऐसा कौन है?"

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने पूछा 'अच्छा, इस समय मेरी कैसी अवस्था तुम देख रहे हो?'

मणि – (सहास्य) – यह आपकी सहजावस्था है।

श्रीरामकृष्ण मन ही मन गाने का एक चरण अलाप रहे है।

परिच्छेद १०३

श्रीरामकृष्ण तथा श्री बंकिमचन्द्र

(१)

बंकिम और राधाकृष्ण; युगल-रूप व्याख्या

आज श्रीरामकृष्णदेव अधर के मकान पर पधारे है, मार्गशीर्ष की कृष्ण चतुर्थी है, शनिवार ६ दिसम्बर, सन् १८८४। श्रीरामकृष्ण पुष्य नक्षत्र मे आये है।

अधर विशेष भक्त है, वे डिप्टी मैजिस्ट्रेट है। उम्र २९-३० होगी। श्रीरामकृष्ण उनसे विशेष प्रेम रखते है। अधर की भी कैसी भक्ति है। सारा दिन ऑफिस के परिश्रम के बाद मुँह-हाथ धोकर प्राय: प्रतिदिन ही सन्ध्या के समय श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने जाया करते थे। मकान शोभाबाजार बेनेटोला मे है। वहाँ से दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर मे श्रीरामकृष्ण के पास गाडी करके जाते थे। इस प्रकार प्रतिदिन प्राय: दो रुपये गाड़ीभाड़ा देते थे। केवल श्रीरामकृष्ण का दर्शन करेंगे, यही आनन्द है। उनके श्रीमुख की वाणी सुनने का अवसर प्राय: नही होता था। पहुँचकर श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम करते थे, कुशल प्रश्न आदि के बाद मे माँ काली का दर्शन करने जाते थे। बाद में जमीन पर चटाई बिछी रहती थी, उस पर विश्राम करते थे। श्रीरामकृष्ण स्वयं ही उनको विश्राम करने को कहते थे। अधर का शरीर परिश्रम के कारण इतना क्लान्त हो जाता था कि वे थोड़े ही समय मे सो जाते थे। रात के ९-१० बजे उन्हे उठा दिया जाता था। वे भी उठकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर फिर गाड़ी पर सवार होते और घर लौट जाते थे।

अधर श्रीरामकृष्ण को अक्सर शोभाबाजार मे अपने घर पर ले जाते थे। श्रीरामकृष्णद्रेव के आने पर वहाँ उत्सव लग जाता था। श्रीरामकृष्ण तथा अन्य भक्तो के साथ अधर खूब आनंद मनाते थे और अनेक प्रकार उन्हे तृप्ती के साथ भोजन कराते थे।

एक दिन श्रीरामकृष्ण उनके घर पर पधारे। अधर ने कहा, "आप बहुत दिनो से इस मकान पर नही आये थे, घर बड़ा मैला पड़ा था, न जाने कैसी दुर्गन्ध पैदा हो गयी थी; आज देखिये, घर की कैसी शोभा हुई है। और कैसी सुगन्ध फैली हुई है! मैने आज ईश्वर को बहुत पुकारा था। यहाँ तक कि आँखो से आँसू निकल पड़े थे।" श्रीरामकृष्ण बोले, "कहते क्या हो जी" और यह कहकर अधर की ओर स्नेह-भरी दृष्टि से देखकर हँसने

लगे।

आज भी उत्सव होगा। श्रीरामकृष्ण भी आनन्दमय हैं, भक्तगण भी आनन्द से पूर्ण हैं; क्योंकि जहाँ श्रीरामकृष्ण उपस्थित हैं, वहाँ ईश्वर की चर्चा के अतिरिक्त और कोई भी बात न होगी। भक्तगण आये हैं और श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए अनेक नये नये व्यक्ति आये हैं। अधर स्वयं डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं। वे अपने कुछ मित्र तथा डिप्टी मैजिस्ट्रेट को आमन्त्रित करके लाये हैं। वे स्वयं श्रीरामकृष्ण को देखेंगे और कहेंगे, वास्तव में वे महापुरुष है या नहीं।

श्रीरामकृष्ण हँसमुख हो भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं। इसी समय अधर अपने कुछ मित्रों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

अधर – (बंकिम को दिखाकर, श्रीरामकृष्ण के प्रति) – महाराज, ये बड़े विद्वान हैं; अनेक पुस्तकें लिखी हैं। आपको देखने आये हैं। इनका नाम है बंकिमबाबू।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – बंकिम! तुम फिर किसके भाव में बंकिम (टेढ़े) हो भाई!

बंकिम – (हँसते हँसते) – जी महाराज, जूते की चोट से! (सभी हँसे।) साहब के जूते की चोट से टेढ़ा।

श्रीरामकृष्ण – नही जी, श्रीकृष्ण प्रेम से बंकिम बने थे। श्रीमती राधा के प्रेम से त्रिभंग हुए थे। कृष्ण-रूप की व्याख्या कोई कोई करते हैं, श्रीराधा के प्रेम से त्रिभंग।

"काला क्यों है जानते हो? और साढ़े तीन हाथ – उतने छोटे क्यों हैं?

"जब तक ईश्वर दूर हैं, तब तक काले दिखते हैं; जैसा समुद्र का जल दूर से नीला दिखता है। समुद्र के जल के पास जाने से और हाथ में उठाने से फिर जल काला नहीं रहता; उस समय बहुत साफ – सफेद दिखता है। सूर्य दूर है, इसलिए छोटा दिखता है; पास जाने पर फिर छोटा नहीं रहता, ईश्वर का स्वरूप ठीक जान लेने पर फिर काला भी नहीं रहता, छोटा भी नहीं रहता। यह बहुत दूर की बात है। समाधिमग्न न होने से उन्ही की सब लीला है यह समझ में नहीं आता। 'मैं' 'तुम' है तब तक नाम-रूप भी हैं। उन्हीं की सब लीला है। 'मैं-तुम' जब तक रहते हैं, तब तक वे अनेक रूपों में प्रकट होते हैं।

"श्रीकृष्ण पुरुष हैं, श्रीमती राधा उनकी शक्ति हैं – आद्याशक्ति। पुरुष और प्रकृति। युगल-मूर्ति का अर्थ क्या है? पुरुष और प्रकृति अभिन्न है। उनमें भेद नहीं है। पुरुष प्रकृति के बिना नहीं रह सकता; प्रकृति भी पुरुष के बिना नहीं रह सकती। एक का नाम करने से ही दूसरे को उसके साथ ही समझना होगा। जिस प्रकार अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। दाहिका शक्ति को छोड़कर अग्नि का चिन्तन नहीं किया जा सकता और अग्नि को छोड़कर दाहिका शक्ति का भी चिन्तन नहीं किया जा सकता। इसलिए युगल-मूर्ति में श्रीकृष्ण की दृष्टि श्रीमती की ओर, और श्रीमती की दृष्टि श्रीकृष्ण की ओर है।

श्रीमती का गौर वर्ण है, बिजली की तरह; श्रीमती ने नीली साड़ी पहनी है और उन्होंने नीलकान्त मणि से अंग को सजाया है। श्रीमती के चरणों में नुपुर हैं, इसलिए श्रीकृष्ण ने भी नुपुर पहने हैं, अर्थात् प्रकृति के साथ पुरुष का अन्दर तथा बाहर मेल है।"

ये सब बातें समाप्त हुईं। अब अधर के बंकिम आदि मित्रगण अंग्रेजी में धीरे धीरे बातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए बंकिम आदि के प्रति) – क्या जी आप लोग अंग्रेजी में क्या बातचीत कर रहे हैं? (सभी हँसे।)

अधर – जी, इसी विषय में जरा बात हो रही थी, कृष्णरूप की व्याख्या की बात!

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए सभी के प्रति) – एक कहानी का याद आने से मुझे हँसी आ रही है। सुनो कहानी कहूँ। नाई हजामत बनाने गया था। एक भद्र पुरुष हजामत बनवा रहे थे। अब हजामत बनवाते बनवाते उन्हें जरा कहीं अस्तुरा लग गया और उस भद्र पुरुष ने कहा 'डॅम' (damn) परन्तु नाई तो डॅम का मतलब नहीं जानता था। जाड़े का दिन था, उसने अस्तुरा आदि छोड़-छाड़कर अपनी कमीज की अस्तीन उठाकर कहा 'तुमने मुझे डॅम कहा, अब कहो, इसका मतलब क्या है?' उस व्यक्ति ने कहा, 'अरे, तू हजामत बना न! उसका मतलब विशेष कुछ भी नहीं है, परन्तु जरा होशियारी से बनाना!' नाई भी छोड़नेवाला न था। वह कहने लगा, 'डॅम का मतलब यदि अच्छा है, तो मैं डॅम, मेरा बाप डॅम, मेरे चौदह पुरुष डॅम हैं। (सभी हँसे।) और डॅम का मतलब यदि खराब हो तो तुम डॅम, तुम्हारा बाप डॅम, तुम्हारे चौदह पुरुष डॅम हैं। (सभी हँसे।) फिर केवल डॅम ही नहीं – डॅम डॅम डॅम डॅम।' (सभी जोर से हँसे।)

(२)

श्रीरामकृष्ण और प्रचारकार्य

सब की हँसी बन्द होने पर बंकिम ने फिर बातचीत प्रारम्भ की।

बंकिम – महाराज, आप प्रचार क्यों नहीं करते?

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हँसते) – प्रचार? वह सब गर्व की बातें हैं। मनुष्य तो क्षुद्र जीव है। प्रचार वे ही करेंगे जिन्होंने चन्द्र-सूर्य पैदा करके इस जगत् को प्रकाशित किया है। प्रचार करना क्या साधारण बात है? उनके दर्शन देकर आदेश न देने तक प्रचार नहीं होता। परन्तु प्रचार करने से तुम्हें कोई रोक नहीं सकता। तुम्हें आदेश नहीं मिला, फिर भी तुम बक-बक कर रहे हो; वही दो दिन लोग सुनेंगे फिर भूल जायेंगे। जैसे एक लहर। जब तक तुम कह रहे हो, तब तक लोग कहेंगे, 'अहा, अच्छा कह रहे हैं वे।' तुम रुकोगे, उसके बाद कहीं कुछ भी न होगा।

"जब तक दूध की कढ़ाई के नीचे आग जलती रहेगी, तब तक दूध खौल करके

उबल उठता है। लकड़ी खीच लो, दूध भी ज्यो का त्यो नीचे उतर गया!

"और साधना करके अपनी शक्ति बढ़ानी चाहिए, नहीं तो प्रचार नही होता। 'अपने सोने के लिए जगह नही पाता और ऊपर से शंकरा को पुकारता है।' अपने ही सोने के लिए स्थान नही, फिर पुकारता है, 'अरे शंकरा, आओ मेरे पास आकर सोओ।' (हँसी।)

"उस देश में हालदारो के तालाब के किनारे लोग रोज शौच को जाते थे, सबेरे लोग आकर देखते थे और गाली-गलौज करते थे। लोग गाली देते थे, फिर भी लोगों का शौच जाना बन्द नही होता था। अन्त मे मुहल्लेवालो ने अर्जी भेजकर कम्पनी को सूचित किया। उन्होंने एक नोटिस लगा दिया, 'यहाँ पर शौच जाना या पेशाब करना मना है, जो ऐसा करेगा उसे सजा दी जायेगी।' उसके बाद सब एकदम बन्द और फिर कोई गड़बड़ी नहीं। कम्पनी का हुक्म – सभी को मानना होगा।

"उसी प्रकार ईश्वर का साक्षात्कार होने पर यदि वे आदेश दें, तभी प्रचार होता है, लोकशिक्षा होती है, नही तो तुम्हारी बात कौन सुनेगा?" इन बातों को सभी गम्भीर भाव से स्थिर होकर सुनने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (बंकिम के प्रति) – अच्छा, आप तो बड़े पण्डित हैं, और कितनी पुस्तके लिखी हैं आपने! आप क्या कहते है, मनुष्य का क्या कर्तव्य है? साथ क्या जायेगा? परकाल तो है न?

बंकिम – परकाल? वह क्या चीज है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ज्ञान के बाद और दूसरे लोक में जाना नहीं पड़ता, पुनर्जन्म नहीं होता। परन्तु जब तक ज्ञान नही होता, ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती, तब तक संसार मे लौटकर आना पड़ता है, बचने का कोई भी उपाय नहीं है। तब तक परलोक भी है। ज्ञान प्राप्त होने पर, ईश्वर का दर्शन होने पर मुक्ति हो जाती है – और आना नहीं पड़ता। उबाला हुआ धान बोने से फिर पौधा नही होता। ज्ञानरूपी अग्नि से यदि कोई उबाला हुआ हो, तो उसे लेकर और सृष्टि का खेल नही होता। वह गृहस्थी कर नही सकता, उसकी तो कामिनी-कांचन में आसक्ति नही है। उबाले हुए धान को फिर खेत में बोने से क्या होगा?

बंकिम – (हँसते हँसते) – महाराज, हाँ और घास-पतवार से भी तो पेड़ का कार्य नही होता!

श्रीरामकृष्ण – परन्तु ज्ञानी घास-पतवार नहीं हैं। जिसने ईश्वर का दर्शन किया है, उसने अमृतफल प्राप्त किया है – वह कद्दू फल नहीं है! उसका पुनर्जन्म नहीं होता। पृथ्वी कहो, सूर्यलोक कहो, चन्द्रलोक कहो – कहीं पर भी उसे आना नहीं पड़ता।

"उपमा एकदेशी है। तुमने न्यायशास्त्र नहीं पढ़ा। बाघ की तरह भयानक कहने से

बाघ की तरह एक भारी दुम या बड़े भारी मुख से अर्थ हो, सो नही। (सभी हँसे।)

"मैने केशव सेन से वही बात कही थी। केशव ने पूछा – 'महाराज, क्या परलोक है?' मैने न इधर बताया और न उधर। कहा, कुम्हार लोग मिट्टी के बर्तन बनाकर सूखने के लिए बाहर रखते है। उनमे पक्के बर्तन भी हैं और फिर कच्चे बर्तन भी। कभी कोई जानवर आकर उन्हे कुचलकर चले जाते है। पक्के बर्तन टूट जाने पर कुम्हार उन्हे फेक देता है, परन्तु कच्चे बर्तन टूट जाने पर उन्हे कुम्हार फिर घर मे लाता है, लाकर पानी मिलाता है और उसे गीला करके रगड़कर फिर चाक पर चढ़ाता और नया बर्तन बना लेता है; छोड़ता नही। इसीलिए केशव से कहा, जब तक कच्चा रहेगा तब तक कुम्हार नही छोड़ेगा, जब तक ज्ञान प्राप्त नही होता, जब तक ईश्वर का दर्शन नही मिलता, तब तक कुम्हार फिर चाक पर डालेगा; छोड़ेगा नही। अर्थात् लौट-लौटकर इस संसार मे आना पड़ेगा – छुटकारा नही। उन्हे प्राप्त करने पर तब मुक्ति होनी है, तब कुम्हार छोड़ देता है, क्योकि उसके द्वारा माया की सृष्टि का कोई काम नही होता। ज्ञानी माया के पार चले गये है; वे फिर माया के संसार मे क्या करेंगे?

"परन्तु किसी किसी को वे माया के संसार मे रख देते है, लोक-शिक्षा के लिए। लोगो को शिक्षा देने के लिए। ज्ञानी विद्यामाया का सहारा लेकर रहते हैं। ईश्वर ही अपने काम के लिए उन्हे रख छोड़ते हैं; जैसे शुकदेव, शंकराचार्य। अच्छा, आप क्या कहते है, मनुष्य का क्या कर्तव्य है?"

बंकिम – (हँसते हँसते) – यदि आप पूछते ही है तो उसका कर्तव्य है, आहार, निद्रा और मैथुन।

श्रीरामकृष्ण – (विरक्त होकर) – ओह! तुम बहुत ही बेहूदे हो! तुम दिन-रात जो करते हो वही तुम्हारे मुख से निकल रहा है। लोग जो कुछ खाते है उसी की डकार आती है। मूली खानेपर मूली की डकार आती है। नारियल खाने पर नारियल की डकार आती है। कामिनी-कांचन मे दिन-रात रहते हो और वही बात मुख से निकल रही है। केवल विषय का चिन्तन करने से हिसाबी स्वभाव बन जाता है, मनुष्य कपटी बन जाता है। ईश्वर का चिन्तन करने पर सरल होता है, ईश्वर का साक्षात्कार होने पर ऐसी बाते कोई नहीं कहेगा।

"यदि ईश्वर का चिन्तन न हो, यदि विवेक-वैराग्य न हो तो केवल विद्वत्ता रहने से क्या होगा? यदि कामिनी-कांचन मे मन रहे, तो केवल पण्डिताई से क्या होगा?

"गिद्ध बहुत ऊँचाई पर उड़ता है, परन्तु दृष्टि उसकी केवल मरघट पर ही रहती है। पण्डितजी अनेक पुस्तके, शास्त्र पढ़ते है, श्लोक झाड़ सकते है, कितनी ही पुस्तके लिखते है, परन्तु औरत के प्रति आसक्त है, धन और मान को सार समझते है, वह फिर कैसा पण्डित? ईश्वर मे यदि मन न रहा तो फिर क्या पण्डित और क्या उसकी पण्डिताई?

"कोई-कोई समझते हैं कि ये लोग केवल ईश्वर-ईश्वर कर रहे हैं; पगले हैं! ये लोग बौरा गये हैं। हम कैसे चालाक है, कैसे सुख भोग रहे हैं – धन-सम्मान, इन्द्रिय-सुख। कौआ भी समझता है, मै बहुत चालाक हूँ, परन्तु सबेरे उठकर ही दूसरों की विष्ठा खाता हैं। कौओं को नहीं देखते हो, कितनी ऐठ के साथ घुमते-फिरते हैं, बड़े सयाने! (सभी चुप हैं।)

"जो लोग ईश्वर का चिन्तन करते हैं, विषय में आसक्ति, कामिनी-कांचन में प्रेम दूर करने के लिए दिन-रात प्रार्थना करते हैं, जिन्हें विषय का रस कडुवा लगता है, हरि-पाद पद्म की सुधा को छोड़कर जिन्हे और कुछ भी अच्छा नहीं लगता, उनका स्वभाव हंस का सा होता है। हंस के सामने दूध-जल मिलाकर रखो, जल छोड़कर दूध पी जायगा। हंस की चाल देखी है? एक ओर सीधा चला जायेगा। और शुद्ध भक्ति की गति भी केवल ईश्वर की ओर होती है। वह और कुछ नही चाहता। उसे और कुछ भी अच्छा नही लगता। (बंकिम के प्रति कोमल भाव से) आप कुछ बुरा न मानियेगा।"

बंकिम – जी, मै यहॉ मीठी बाते सुनने नहीं आया हूँ।

(३)

जगत् का उपकार तथा कर्मयोग

श्रीरामकृष्ण – (बंकिम के प्रति) – कामिनी-कांचन ही संसार है। इसीका नाम माया है। ईश्वर को देखने तथा उसका चिन्तन नहीं करने देती। एक-दो बच्चे होने पर स्त्री के साथ भाई-बहन के सदृश रहना चाहिए और आपस में सदा ईश्वर की बातचीत करनी चाहिए। इससे दोनों का ही मन उनकी ओर जायेगा और स्त्री धर्म की सहायक बनेगी। पशुभाव न मिटने पर ईश्वर के आनन्द का आस्वादन हो नहीं सकता। ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि जिससे पशुभाव दूर हो। व्याकुल होकर प्रार्थना। वे अन्तर्यामी हैं, अवश्य ही सुनेंगे – यदि प्रार्थना आन्तरिक हो।

"फिर 'कांचन'। मैंने पंचवटी में गंगा के किनारे पर बैठकर 'रुपया मिट्टी' 'रुपया मिट्टी' 'मिट्टी ही रुपया' 'रुपया ही मिट्टी' कहकर दोनों जल में फेंक दिये थे।"

बंकिम – रुपया मिट्टी! महाराज, चार पैसे रहे तो गरीब को दिये जा सकते है। रुपया यदि मिट्टी है तो फिर दया परोपकार कैसे होगा?

श्रीरामकृष्ण – (बंकिम के प्रति) – दया! परोपकार! तुम्हारी क्या शक्ति है कि तुम परोपकार करो? मनुष्य का इतना घमण्ड, परन्तु जब सो जाता है, तो यदि कोई खड़े होकर उसके मुँह मे पेशाब भी कर दे, तो पता नहीं लगता। उस समय अहंकार, गर्व, दर्प कहाँ जाता है?

"संन्यासी को कामिनी-कांचन का त्याग करना पड़ता है। उसे फिर वह ग्रहण नहीं

कर सकता। थूक को फेंककर फिर उसे चाटना नहीं चाहिए। संन्यासी यदि किसी को कुछ देता है तो वह ऐसा नही समझता कि उसने स्वयं दिया। दया ईश्वर की है, मनुष्य बेचारा क्या दया करेगा? दान आदि सभी राम की इच्छा पर निर्भर है। यथार्थ संन्यासी मन से भी त्याग करता है, बाहर से भी त्याग करता है। वह गुड़ नहीं खाता, उसके पास गुड़ रहना भी ठीक नही। पास गुड़ रहते यदि वह कहे कि 'न खाओ' तो लोग सुनेंगे नहीं।

"गृहस्थ लोगो को रुपयों की आवश्यकता है, क्योंकि स्त्री बच्चे हैं। उन्हें संचय करना चाहिए – स्त्री-बच्चों को खिलाना होगा। संचय नहीं करेंगे केवल पंछी और दरवेश, अर्थात् चिड़िया और संन्यासी। परन्तु चिड़िये का बच्चा होने पर वह मुँह में उठाकर खाना लाती है। उसे भी उस समय संचय करना पड़ता है। इसीलिए गृहस्थ लोगों को धन की आवश्यकता है – परिवार का पालन-पोषण करना चाहिए।

"गृहस्थ लोग यदि शुद्ध भक्त हों तो अनासक्त होकर कर्म कर सकते हैं। वह कर्म का फल, हानि, लाभ, सुख, दु:ख ईश्वर को समर्पित करता है। और उनसे दिन-रात भक्ति की प्रार्थना करता है, और कुछ भी नही चाहता। इसी का नाम है 'निष्काम कर्म' – अनासक्त होकर कर्म करना। संन्यासी के सभी कर्म निष्काम होने चाहिए। परंतु संन्यासी गृहस्थों की तरह विषयकर्म नही करता।

"गृहस्थ व्यक्ति निष्काम भाव से यदि किसी को कुछ दान दे, तो वह अपने ही उपकार के लिए होता है। परोपकार के लिए नहीं। सर्व भूतो में हरि विद्यमान हैं, उन्ही की सेवा होती है। हरि-सेवा होने से अपना ही उपकार हुआ, 'परोपकार' नहीं। यही सर्व भूतों में हरि की सेवा है – केवल मनुष्य की नहीं, जीवजन्तुओं में भी हरि की सेवा यदि कोई करे, और यदि वह मान, यश, मरने के बाद स्वर्ग न चाहे, जिनकी सेवा कर रहा है उनसे बदले में कोई उपकार न चाहे – इस प्रकार यदि सेवा करे, तो उसका निष्काम कर्म, अनासक्त कर्म होता है। इस प्रकार निष्काम कर्म करने पर उसका अपना कल्याण होता है। इसी का नाम कर्मयोग है। यह कर्मयोग भी ईश्वर को प्राप्त करने का एक उपाय है, परन्तु यह मार्ग है बड़ा कठिन। कलियुग के लिए नहीं है।

"इसलिए कहता हूँ, जो व्यक्ति अनासक्त होकर इस प्रकार कर्म करता है, दया-दान करता है, वह अपना ही भला करता है। दूसरों का उपकार, दूसरों का कल्याण – यह सब ईश्वर करते है जिन्होंने जीव के लिए चन्द्र, सूर्य, माँ बाप, फल, फूल, अनाज पैदा किया है। पिता आदि में जो स्नेह देखते हो, वह उन्हीं का स्नेह है, जीव की रक्षा के लिए ही उन्होने यह स्नेह दिया है। दयालु के भीतर जो दया देखते हो, वह उन्हीं की दया है, उन्होंने असहाय जीव की रक्षा के लिए दी है। तुम दया करो या न करो, वे किसी न किसी उपाय से अपना काम करेंगे ही। उनका काम रुका नहीं रह सकता।

"इसीलिए जीव का कर्तव्य क्या है? वह यह कि उनकी शरण में जाना, और

जिससे उनकी प्राप्ति हो, उनका दर्शन हो उसी के लिए व्याकुल होकर उनसे प्रार्थना करना – और दूसरा क्या?

"शम्भू ने कहा था, 'मेरी इच्छा होती है कि अनेक डिस्पेन्सरियाँ (दवाखाने), अस्पताल बनवा दूँ। इससे गरीबो का-बहुत उपकार होगा।' मैने कहा, 'हाँ, अनासक्त होकर यदि यह सब करो तो बुरा नही।' परन्तु ईश्वर पर आन्तरिक भक्ति न रहने पर अनासक्त बनना बड़ा कठिन है। फिर अनेक काम बढा लेने से न जाने किधर से आसक्ति आ जाती है, जाना नही जाता। मन मे सोचता हूँ कि निष्काम भाव से काम कर रहा हूँ, परन्तु सम्भव है, यश की इच्छा हुई, ख्याति प्राप्त करने की इच्छा हुई। फिर जब अधिक कर्म करने को जाता है तो कर्म की भीड़ मे ईश्वर को भूल जाता है। और कहा 'शम्भू! तुमसे एक बात पूछता हूँ। यदि ईश्वर तुम्हारे सामने आकर प्रकट हो तो क्या तुम उनसे कुछ डिस्पेन्सरियाँ या अस्पताल माँगोगे या स्वयं उन्हे माँगोगे?' उन्हे प्राप्त करने पर और कुछ भी अच्छा नही लगता। मिश्री का शरबत पीने पर फिर गुड का शरबत अच्छा नही लगता।

"जो लोग अस्पताल, डिस्पेन्सरी खोलेगे और इसी मे आनन्द अनुभव करेगे, वे भी भले आदमी है। परन्तु उनकी श्रेणी अलग है। जो शुद्ध भक्त है, वह ईश्वर के अतिरक्त और कुछ भी नही चाहता, अधिक कर्म के बीच मे यदि वह पड जाय तो व्याकुल होकर प्रार्थना करता है, 'हे ईश्वर, दया करके मेरा कर्म कम कर दो, नही तो, जो मन रातदिन तुम्ही मे लगा रहेगा, वह मन व्यर्थ मे इधर-उधर खर्च हो रहा है। उसी मन से विषय का चिन्तन किया जा रहा है।' शुद्धा भक्ति की श्रेणी अलग ही होती है। ईश्वर वस्तु है, बाकी सभी अवस्तु – यह बुद्धि न होने पर शुद्धा भक्ति नही होती। यह संसार अनित्य है, दो दिन के लिए है, और इस संसार के जो कर्ता है, वे ही सत्य है, नित्य है। यह ज्ञान न होने पर शुद्धा भक्ति नही होती।

"जनक आदि ने आदेश पाने पर ही कर्म किया है।"

(४)

पहले विद्या (Science) या पहले ईश्वर?

श्रीरामकृष्ण – (बंकिम के प्रति) – कोई कोई समझते है कि बिना शास्त्र पढ़े अथवा पुस्तको का अध्ययन किये ईश्वर को प्राप्त नही किया जा सकता। वे सोचते है, पहले जगत् के बारे मे, जीव के बारे मे जानना चाहिए, पहले साइन्स (Science) पढ़ना चाहिए। (सभी हँसे।) वे कहते है, ईश्वर की यह सारी सृष्टि समझे बिना ईश्वर को जाना नही जाता। तुम क्या कहते हो? पहले साइन्स या पहले ईश्वर?

बंकिम – जी हाँ, पहले जगत् के बारे मे दस बाते जान लेनी चाहिए। थोडा इधर का ज्ञान हुए बिना ईश्वर को कैसे जानूँगा? पहले पुस्तके पढ़कर कुछ जान लेना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण – वही तुम लोगो का एक ख्याल है। पहले ईश्वर, उसके बाद सृष्टि। उन्हे प्राप्त करने पर, आवश्यक हो तो सभी जान सकोगे। किसी भी तरह यदु मल्लिक के साथ बातचीत कर सकोगे फिर यदि तुम यह जानना चाहोगे कि उसके कितने मकान है, कितने कम्पनी के कागज है, कितने बगीचे है – तो यह सब भी जान सकोगे। यदु मल्लिक ही खुद सब बता देगा। परन्तु यदि उसके साथ बातचीत न हो, और मकान के अन्दर घुसना चाहोगे, तो दरवान लोग ही घुसने न देगे। फिर ठीक-ठीक कैसे जानोगे कि उसके कितने मकान है, कितने कम्पनी के कागजात है, कितने बगीचे है आदि आदि? उन्हे जान लेने पर सब कुछ जाना जा सकता है। परन्तु फिर मामूली चीजे जानने की इच्छा नही रहती। वेद मे भी यही बात है। जब तक किसी व्यक्ति को देखा नही जाता तब तक उसके गुणो की बाते बतायी जा सकती है, जब वह सामने आ जाता है, उस समय वे सब बाते बन्द हो जाती है। लोग उसे ही लेकर मस्त रहते है। उसके साथ ही बातचीत करते हुए विभोर हो जाते है, उस समय दूसरी बाते नही सूझती।

"पहले ईश्वर की प्राप्ति, उसके बाद सृष्टि या दूसरी बातचीत। वाल्मीकि को राममन्त्र का जप करने को कहा गया, परन्तु उनसे कहा गया, 'मरा' 'मरा' का जप करो। 'म' अर्थात् ईश्वर और 'रा' अर्थात् जगत्। पहले ईश्वर, उसके बाद जगत् , एक को जानने पर सभी जाना जा सकता है। एक के बाद यदि पचास शून्य रहे तो संख्या बढ़ जाती है। १ को मिटा देने से कुछ भी नही रहता। एक को लेकर ही अनेक है। पहले एक, उसके बाद अनेक, पहले ईश्वर, उसके बाद जीव-जगत्।

"तुम्हारी आवश्यकता है ईश्वर को प्राप्त करने की। तुम इतना जगत्, सृष्टि, साइन्स-फाइन्स यह सब क्या कर रहे हो? तुम्हे आम खाने से मतलब। बगीचे मे कितने सौ पेड़ है, कितने हजार टहनियाँ, कितने लाख करोड़ पत्ते है – इन सब हिसाबो से तुम्हारा क्या काम? तुम आम खाने आये हो, आम खाकर चले आओ। इस संसार मे मनुष्य आया है भगवान को प्राप्त करने के लिए। उसे भूलकर अन्य विषयो मे मन लगाना ठीक नही। आम खाने के लिए आये हो, आम खाकर ही चले जाओ।"

बंकिम – आम पाता हूँ कहाँ?

श्रीरामकृष्ण – उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करो, आन्तरिक प्रार्थना होने पर वे अवश्य सुनेगे। सम्भव है कि ऐसा कोई सत्संग जुटा दे, जिससे सुभीता हो जाय। सम्भव है कोई कह दे, ऐसा-ऐसा करो, तो ईश्वर को पाओगे।

बंकिम – कौन? गुरु? वे अच्छे आम स्वयं खाकर मुझे खराब आम देते है! (हँसी।)

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी! जिसके पेट मे जो सहन होता है। सभी लोग क्या पुलाव-कलिया खाकर पचा सकते है? घर मे अच्छी चीज बनने पर माँ सभी बच्चो को पुलाव-

कलिया नही देती। जो कमजोर है, जिसे पेट की बीमारी है, उसे सादी तरकारी देती है, तो क्या माँ उस बच्चे से कम स्नेह करती है?

"गुरुवाक्य मे विश्वास करना चाहिए। गुरु ही सच्चिदानन्द, सच्चिदानन्द ही गुरु है; उनकी बात पर विश्वास करने से, बालक की तरह विश्वास करने से, ईश्वरप्राप्ति होती है। बालक का क्या ही विश्वास है! माँ ने कहा, 'वह तेरा भाई लगता है,' उसी समय जान लिया, 'वह मेरा भाई है।' एकदम पूरा पक्का विश्वास। ऐसा भी हो सकता है कि वह लड़का ब्राह्मण के घर का है, और वह 'भाई' सम्भव है कि किसी दूसरी जाति का हो। माँ ने कहा, उस कमरे मे 'जूजू' है। बस, पक्का जान लिया, उस कमरे मे 'जूजू' है। यही बालक का विश्वास है, गुरुवाक्य मे इसी प्रकार विश्वास चाहिए। सयानी बुद्धि, हिसाबी बुद्धि, विचार बुद्धि करने से ईश्वर को प्राप्त नही किया जा सकता। विश्वास और सरलता होनी चाहिए, कपटी होने से न होगा। सरल के लिए वे बहुत सहज है। कपटी से वे बहुत दूर है।

"परन्तु बालक जिस प्रकार माँ को न देखने से बेचैन हो जाता है, लड्डू मिठाई हाथ पर लेकर चाहे भुलाने की चेष्टा करो परन्तु वह कुछ भी नही चाहता, किसी से नही भूलता और कहता है, 'नही, मैं माँ के ही पास जाऊँगा,' इसी प्रकार ईश्वर के लिए व्याकुलता चाहिए। अहा! कैसी स्थिति! – बालक जिस प्रकार 'माँ माँ' कहकर पागल हो जाता है, किसी भी तरह नही भूलता! जिसे संसार के ये सब सुखभोग फीके लगते है, जिसे अन्य कुछ भी अच्छा नही लगता, वही हृदय से 'माँ माँ' कहकर कातर होता है। उसी के लिए माँ को फिर सभी कामकाज छोड़कर दौड़ आना पड़ता है।

"यही व्याकुलता है। किसी भी पथ से क्यो न जाओ, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, शाक्त, ब्राह्म – किसी पथ से जाओ, यह व्याकुलता ही असली बात है। वे तो अन्तर्यामी है, यदि भूल पथ मे भी चले गये हो तो भी दोष नही है – पर व्याकुलता रहे। वे ही फिर ठीक पथ मे उठा लेते है।

"फिर सभी पथो मे भूल है – सभी समझते है, मेरी घड़ी ठीक जा रही है, पर किसी की घड़ी ठीक नही चलती। तिस पर भी किसी का काम बन्द नही रहता। व्याकुलता हो तो साधु-संग मिल जाता है, साधु-संग से अपनी घड़ी बहुत कुछ मिला ली जा सकती है।"

(५)

श्रीरामकृष्ण कीर्तनानन्द में

ब्राह्म समाज के श्री त्रैलोक्य गाना गा रहे है। श्रीरामकृष्ण कीर्तन सुनते-सुनते एकाएक खड़े हो गये और ईश्वर के आवेश मे बाह्यज्ञान-शून्य हो गये। एकदम अन्तर्मुख, समाधिमग्न। खड़े खड़े समाधिमग्न। सभी लोग घेरकर खड़े हुए। बंकिम व्यस्त होकर

भीड़ हटाकर श्रीरामकृष्ण के पास जाकर एकदृष्टि से देख रहे हैं। उन्होंने कभी समाधि नहीं देखी थी।

थोड़ी देर बाद थोड़ा बाह्य ज्ञान होने के बाद श्रीरामकृष्ण प्रेम से उन्मत्त होकर नृत्य करने लगे। मानो श्रीगौरांग श्रीवास के मन्दिर मे भक्तों के साथ नृत्य कर रहे है। वह अद्‌भुत नृत्य बंकिम आदि अंग्रेजी पढ़े लोग देखकर दंग रह गये। क्या आश्चर्य! क्या इसी का नाम प्रेमानन्द है? ईश्वर से प्रेम करके क्या मनुष्य इतना मतवाला हो जाता है? क्या ऐसा ही नृत्य नवद्वीप में श्रीगौरांग ने किया था? क्या इसी तरह उन्होने नवद्वीप में और श्रीक्षेत्र में (पुरी मे) प्रेम का बाजार बैठाया था? इसमें तो ढोग नहीं हो सकता। ये सर्वत्यागी हैं, इन्हे धन, मान, यश – किसी चीज की आवश्यकता नहीं है। तो क्या यही जीवन का उद्देश्य है? किसी ओर मन न लगाकर ईश्वर से प्रेम करना ही क्या जीवन का उद्देश्य है? अब उपाय क्या है? उन्होंने कहा, 'माँ के लिए बेचैन होकर व्याकुल होना, व्याकुलता, प्रेम करना ही उपाय है, प्रेम ही उद्देश्य है। सच्चा प्रेम आते ही दर्शन होता है।'

भक्तगण इसी प्रकार चिन्तन करने लगे और उस अद्‌भुत देवदुर्लभ नृत्य एवं कीर्तन का आनन्द प्रत्यक्ष करने लगे। – सभी श्रीरामकृष्ण के चारों ओर खड़े हैं – और एकटक उन्हें देख रहे है।

कीर्तन के बाद श्रीरामकृष्ण भूमिष्ठ होकर प्रणाम कर रहे हैं। 'भागवत-भक्त-भगवान' इस कथन का उच्चारण करके कह रहे हैं, 'ज्ञानी, योगी, भक्त – सभी के चरणों में प्रणाम।'

फिर सब लोग उनके चारो और घेरकर बैठ गये।

(६)

श्रीबंकिम और भक्तियोग। ईश्वरप्रेम

बंकिम – (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – महाराज, भक्ति का क्या उपाय है?

श्रीरामकृष्ण – व्याकुलता। लड़का जिस प्रकार माँ के लिए, माँ को न देखकर बेचैन होकर रोता है, उसी प्रकार व्याकुल होकर ईश्वर के लिए रोने से ईश्वर को प्राप्त तक किया जाता है।

"अरुणोदय होने पर पूर्व दिशा लाल हो जाती है, उस समय समझा जाता है कि सूर्योदय मे अब अधिक विलम्ब नहीं है। उसी प्रकार यदि किसी का प्राण ईश्वर के लिए व्याकुल देखा जाय, तो भलीभाँति समझा जा सकता है कि इस व्यक्ति का ईश्वर प्राप्ति में अधिक विलम्ब नहीं है।

"एक व्यक्ति ने गुरु से पूछा था, 'महाराज, ईश्वर को कैसे प्राप्त करूँ, बता दीजिये।' गुरु ने कहा, 'आओ, मैं तुम्हे बता देता हूँ।' यह कहकर वे उसे एक तालाब के

किनारे ले गये। दोनों जल में उतर पड़े। इतने में ही एकाएक गुरु ने शिष्य का सिर पकड़कर उसे जल में डुबो दिया और कुछ देर पानी में डुबाकर रखा। फिर थोड़ी देर बाद उसे छोड़ दिया। शिष्य सिर उठाकर खड़ा हो गया। गुरु ने पूछा, 'कहो, तुम्हें कैसा लग रहा था?' शिष्य ने कहा, 'ऐसा लग रहा था कि अभी प्राण जाते ही हैं, प्राण बेचैन हो रहे थे।' तब गुरु ने कहा, 'ईश्वर के लिए जब प्राण इसी प्रकार बेचैन होंगे, तभी जानो कि अब उनके साक्षात्कार में विलम्ब नहीं है।'

"तुमसे कहता हूँ, ऊपर ऊपर बहने से क्या होगा? ज़रा गोता लगाओ। गहरे जल के नीचे रत्न है, जल के ऊपर हाथ पैर पटकने से क्या होगा? यथार्थ मणि भारी होता है, वह जल पर तैरता नहीं; वह जल के नीचे डूबा हुआ रहता है। असली मणि प्राप्त करना हो तो जल के भीतर गोता लगाना पड़ेगा।"

बंकिम – महाराज, क्या करूँ, पीठ पर काग बँधी हुई है। (सभी हँसे।) वह डूबने नहीं देती।

श्रीरामकृष्ण – उनका स्मरण करने से सभी पाप कट जाते हैं। उनके नाम से काल का फन्दा कट जाता है। गोता लगाना होगा, नहीं तो रत्न नही मिलेगा। एक गाना सुनो –

(भावार्थ) "रे मेरे मन, रूप के समुद्र में गोता लगा। ओ रे, तल, अतल, पाताल खोजने पर प्रेमरूपी धन को पायेगा। ढूँढ़ो, ढूँढ़ो, ढूँढ़ने पर हृदय के बीच में वृन्दावन पाओगे और हृदय मे सदाज्ञान का दीपक जलता रहेगा। कबीर कहते हैं, सुन सुन, गुरु के श्रीचरणों का चिन्तन कर।"

श्रीरामकृष्ण ने अपने देवदुर्लभ मधुर कण्ठ से इस गाने को गाया। सभा के सभी लोग आकृष्ट होकर एक-मन से गाना सुनने लगे। गाना समाप्त होने पर फिर वार्तालाप शुरू हुआ।

श्रीरामकृष्ण – (बंकिम के प्रति) – कोई कोई गोता लगाना नहीं चाहते। वे कहते हैं, 'ईश्वर ईश्वर करके ज्यादती करके अन्त में क्या पागल हो जाऊँ?' जो लोग ईश्वर के प्रेम में मस्त हैं, उन्हें कहते हैं 'बौरा गये हैं', परन्तु ये सब लोग इस बात को नहीं समझते कि सच्चिदानन्द अमृत का समुद्र है।

"मैंने नरेन्द्र से पूछा था, 'मान लो कि एक बर्तन रस है, और तू मक्खी बना है; तो तू कहाँ पर बैठकर रस पीयेगा?' नरेन्द्र ने कहा, 'किनारे पर बैठकर मुँह बढ़ाकर पीऊँगा।' मैंने कहा, क्यों? बीच में जाकर डूबकर पीने में क्या हर्ज है?' नरेन्द्र ने कहा, 'फिर तो रस में डूबकर मर जाऊँगा।' तब मैंने कहा, 'भैया, सच्चिदानन्द-रस ऐसा नहीं है, यह रस अमृत-रस है। इसमें डूबने से मनुष्य मरता नहीं, अमर हो जाता है।'

"तभी कह रहा हूँ, 'गोता लगाओ। कोई भय नहीं है। डूबने से अमर हो जाओगे।"

अब बंकिम ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। वे बिदा लेंगे।

बंकिम – महाराज, मुझे आपने जितना बेवकूफ समझा है, उतना नहीं हूँ। एक प्रार्थना है, दया करके कुटिया में एक बार चरणधूलि –।

श्रीरामकृष्ण – ठीक तो है, ईश्वर की इच्छा।

बंकिम – वहाँ पर भी देखेंगे, भक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – कैसा जी? कैसे सब भक्त हैं वहाँ पर? जिन्होने गोपाल गोपाल, केशव केशव कहा था, उनकी तरह हैं क्या? – (सभी हँसे।)

एक भक्त – महाराज, गोपाल गोपाल की कहानी क्या है?

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हँसते) – अरे वह कहानी! अच्छा सुनो। एक स्थान पर एक सुनार की दूकान है। वे लोग परम वैष्णव हैं, गले में माला, तिलक है। हमेशा हाथ में हरिनाम का झोला और मुख मे सदैव हरिनाम। उन्हें कोई भी साधु ही कहेगा और सोचेगा कि वे पेट के लिए ही सुनार का काम करते हैं, क्योंकि औरत-बच्चों को पालना ही है। परम वैष्णव जानकर अनेक ग्राहक उन्हीं की दूकान में आते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि इनकी दूकान में सोने-चाँदी में गड़बड़ी न होगी। ग्राहक दूकान में आते ही देखता है कि वे मुख से हरिनाम जप रहे हैं और बैठे हुए कामकाज भी कर रहे हैं। खरीददार ज्योंही जाकर बैठा कि एक आदमी बोल उठा, 'केशव! केशव! केशव!' थोड़ी देर बाद एक दूसरा कह उठा, 'गोपाल! गोपाल! गोपाल!' फिर थोड़ी देर बातचीत होने पर एक तीसरा व्यक्ति कह उठा, 'हरि हरि हरि।' अब जेवर बनाने की बातचीत एक प्रकार से समाप्त हो रही है। इतने में ही एक व्यक्ति बोल उठा, 'हर हर हर।' इसीलिए तो इतनी भक्ति प्रेम देखकर वे लोग इन सुनारों के पास अपना रुपयापैसा देकर निश्चिन्त हो जाते हैं। सोचा कि वे लोग कभी न ठगेंगे।

"परन्तु असली बात क्या है जानते हो? ग्राहक के आने के बाद जिसने कहा था, 'केशव केशव' उसका मतलब है, ये सब लोग कौन हैं? अर्थात् ये ग्राहक लोग कौन हैं? जिसने कहा, 'गोपाल गोपाल' – उसका मतलब है, ये लोग गाय के दल हैं। जिसने कहा, 'हरि हरि', इसका मतलब है, ये लोग मूर्ख हैं, तो फिर 'हरि' अर्थात् हरण करूँ? और जिसने कहा, 'हर हर', इसका मतलब है, इनका सब कुछ हरण कर लो। ऐसे वे परम भक्त साधु थे!" (सभी हँसे।)

बंकिम ने बिदा ली। परन्तु एकाग्र मन से न जाने क्या सोच रहे थे। कमरे में दरवाजे के पास आकर देखते हैं, चद्दर छोड आये हैं। केवल कमीज पहने हैं। एक बाबू ने चद्दर उठा ली और दौड़कर उनके हाथ में दे दी। बंकिम क्या सोच रहे होंगे?

राखाल आये हैं। वे बलराम के साथ श्रीवृन्दावनधाम गये थे। वहाँ से कुछ दिन हुए लौटे हैं। श्रीरामकृष्ण ने शरत् और देवेन्द्र के पास उनकी बात कही थी और उनसे कहा था कि उनके साथ बातचीत करें। इसीलिए वे राखाल के साथ परिचय करने के लिए

उत्सुक होकर आये है। सुना, इन्ही का नाम राखाल है।

शरत् और सान्याल ब्राह्मण है ओर अधर है जाति के सुवर्ण वणिक् (बनिया)। कही उनके घरवाले भोजन करने के लिए न बुला ले इसीलिए जल्दी मे भाग गये। नये आये है, अभी नही जानते कि श्रीरामकृष्ण अधर से कितना स्नेह करते है। श्रीरामकृष्ण का कहना है, भक्तो की एक अलग जाति है। उनमे जातिभेद नही है।

अधर ने श्रीरामकृष्ण को तथा उपस्थित भक्तो को अत्यन्त आदर के साथ बुलाकर सन्तोषपूर्वक भोजन कराया। भोजन के बाद भक्तगण श्रीरामकृष्ण के मधुर वचनो का स्मरण करते करने उनका विचित्र प्रेममय चित्र हृदय मे धारण कर घर लौटे।

अधर के घर शुभागमन के दिन श्री बंकिम ने श्रीरामकृष्णदेव से उनके मकान पर पधारने का अनुरोध किया था। अतएव थोड़े दिनो के बाद श्रीरामकृष्ण ने श्री गिरीश व मास्टर को उनके कलकत्ते के मकान पर भेज दिया था। उनके साथ श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध मे काफी बातचीत हुई। बंकिम ने श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए फिर आने की इच्छा प्रकट की थी, परन्तु काम मे व्यस्त रहने के कारण न आ सके।

पंचवटी के नीचे 'देवी चौधरानी' का पाठ

ता ६ दिसम्बर, १८८४ ई को श्रीरामकृष्ण ने श्री अधर के घर पर शुभागमन किया था और श्री बंकिम बाबू के साथ वार्तालाप किया था। प्रथम से षष्ठ विभाग तक ये ही सब बाते विवृत हुई।

इस घटना के कुछ दिनो के बाद अर्थात् २७ दिसम्बर, शनिवार को श्रीरामकृष्ण ने *पचवटी के नीचे भक्तो के साथ बकिम रचित* 'देवी चौधरानी' के कुछ अंश का पाठ सुना था और गीतोक्त निष्काम धर्म के बारे मे अनेक बाते कही थी।

श्रीरामकृष्ण पचवटी के नीचे चबूतरे पर अनेक भक्तो के साथ बैठे थे। मास्टर से पढकर सुनाने के लिए कहा। केदार, राम, नित्यगोपाल, तारक (शिवानन्द), प्रसन्न (त्रिगुणातीतानन्द) सुरेन्द्र आदि अनेक भक्त उपस्थित थे।

परिच्छेद १०४

प्रह्लाद-चरित्र का अभिनय-दर्शन

(१)

समाधि में

श्रीरामकृष्ण आज स्टार थिएटर मे प्रह्लाद-चरित्र का अभिनय देखने आये है। साथ मे बाबूराम, मास्टर, नारायण आदि है। तब स्टार थिएटर बिडन स्ट्रीट मे था। बाद मे इसी रंगमंच पर एमरेल्ड थिएटर और क्लासिक थिएटर का अभिनय होता था।

आज रविवार है। १४ दिसम्बर, १८८४। श्रीरामकृष्ण एक बाक्स में उत्तर की ओर मुह किये हुए बैठे है। रंगमंच रोशनी से जगमगा रहा है। श्रीरामकृष्ण के पास बाबूराम, मास्टर और नारायण बैठे है। गिरीश आये है, अभी अभिनय का आरम्भ नही हुआ है। श्रीरामकृष्ण गिरीश से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – वाह, तुमने तो यह सब बहुत अच्छा लिखा है।

गिरीश – महाराज, धारणा कहाँ? सिर्फ लिखता गया हूँ।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, तुम्हे धारणा है। उसी दिन तो मैने तुमसे कहा था, भीतर भक्ति हुए बिना कोई चित्र नही खीच सकता।

"धारणा भी इसके लिए चाहिए। केशव के यहाँ मै नववृन्दावन नाटक देखने गया था। देखा एक डिप्टी आठ सौ रुपया महीना पाता है। सब लोगो ने कहा, बड़ा पण्डित है, परन्तु वह गोद मे एक बच्चा लिए हैरान हो रहा था। क्या किया जाय जिससे बच्चा अच्छी जगह बैठे, अच्छी तरह नाटक देखे, इसी के लिए वह व्याकुल हो रहा था। इधर ईश्वरी बाते हो रही थी, उसका जी नही लगता था। बच्चा बार बार पूछ रहा था, 'बाबूजी, यह क्या है? वह क्या है?' वह भी बच्चे के साथ उलझा हुआ था। उसने बस पुस्तक पढ़ी है, धारणा नही हुई है।"

गिरीश – दिल मे आता है अब थिएटर-सिएटर क्या करूँ?

श्रीरामकृष्ण – नही, नही, इसका रहना जरूरी है, इससे लोकशिक्षा होगी।

अभिनय होने लगा। प्रह्लाद पाठशाला मे पढ़ने के लिए आये है। प्रह्लाद को देखकर श्रीरामकृष्ण 'प्रह्लाद प्रह्लाद' कहते हुए एकदम समाधिमग्न हो गये।

प्रह्लाद को हाथी के पैरों के नीचे देखकर श्रीरामकृष्ण रो रहे हैं। अग्निकुण्ड में जब वे फेंक दिये गये तब भी श्रीरामकृष्ण के आँसू बह चले।

गोलोक में लक्ष्मीनारायण बैठे हैं। प्रह्लाद के लिए नारायण सोच रहे हैं! यह दृश्य देखकर श्रीरामकृष्ण फिर समाधिमग्न हो गये।

(२)

ईश्वरदर्शन का उपाय। कर्मयोग तथा चित्तशुद्धि

थिएटर-भवन के जिस कमरे में गिरीश रहते हैं, अभिनय हो जाने पर श्रीरामकृष्ण को वहीं ले गये। गिरीश ने पूछा, "विवाह-विभ्राट आप सुनेंगे?" श्रीरामकृष्ण ने कहा, "नहीं, प्रह्लाद-चरित्र के बाद यह सब क्या है? मैंने इसीलिए गोपाल उड़िया के दल से कहा था। 'तुम लोग अन्त में कुछ ईश्वरी बातें किया करो।' बहुत अच्छी ईश्वरी बातें हो रही थीं, फिर 'विवाहविभ्राट' – संसार की बात आ गयी! 'जो मैं था, वही हो गया।' फिर वही पहले के भाव आ जाते हैं।" श्रीरामकृष्ण गिरीश आदि के साथ ईश्वरी बातें कह रहे हैं। गिरीश पूछ रहे हैं, 'महाराज, आपने कैसा देखा?'

श्रीरामकृष्ण – साक्षात् वे ही सब कुछ हुए हैं। जो अभिनय कर रहे थे उनमें मैंने साक्षात् आनन्दमयी माता को देखा। जो लोग गोलोक के गोपाल बने थे, उन्हें मैंने साक्षात् नारायण देखा। वे ही सब कुछ हुए हैं। परन्तु ईश्वर-दर्शन ठीक होता है या नहीं इसके लक्षण हैं। एक लक्षण तो आनन्द है। दूसरा, संकोच का लोप हो जाना। जैसे समुद्र में ऊपर तो हिलोरें और आवर्त उठ रहे हैं, परन्तु भीतर गम्भीर जल है। जिसे ईश्वर के दर्शन हो चुके है, वह कभी पागल की तरह रहता है, कभी पिशाच की तरह। शुचि और अशुचि में भेद नहीं रहता है, कभी जड की तरह है, क्योंकि भीतर और बाहर ईश्वर के दर्शन करके आश्चर्यचकित हो गया है। कभी बालकवत् है, दृढ़ता नहीं, जैसे बालक बगल में धोती दबाये घूमता है। इस अवस्था में कभी तो बाल्यभाव होता है, कभी तरुणभाव – तब दिल्लगी सूझती है, कभी युवाभाव – तब कर्म करता है, लोक-शिक्षा देता है, तब वह सिंहतुल्य है।

"जीवों में अहंकार है, इसीलिए वे ईश्वर को नहीं देख पाते। मेघों के उमड़ने पर फिर सूर्य नहीं दीख पड़ता। सूर्य दिख नहीं पड़ता इसलिए क्या कभी यह कहना चाहिए कि सूर्य है ही नहीं? सूर्य अवश्य है।

"परन्तु बालक के 'मैं' में दोष नहीं, बल्कि उपकार है। साग के खाने से बीमारी होती है, परन्तु 'हिंचा' साग के खाने से उपकार होता है। इसीलिए 'हिंचा' साग में नहीं है। मिश्री भी इसी प्रकार मिठाइयों में नहीं है। दूसरी मिठाइयों से बीमारी होती है, परन्तु मिश्री से कफ का दोष होता ही नहीं।

"इसीलिए मैंने केशव सेन से कहा था, तुम्हें और अधिक कहने से फिर यह दल न रह जायेगा। केशव डर गया। तब मैंने कहा, बालक का 'मैं', दास का 'मैं' – इनमें दोष नही है।

"जिन्होंने ईश्वर का दर्शन किया है वे देखते हैं, ईश्वर ही जीव और जगत् हुए है। सब कुछ वे ही हैं। इन्हें ही उत्तम भक्त कहते हैं।"

गिरीश – (सहास्य) – सब कुछ तो वे ही हैं, परन्तु जरा सा 'मैं' रह जाता है, इसमें कोई दोष नही है।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – हॉं, इससे हानि नहीं। वह 'मैं' केवल सम्भोग के लिए है। 'मैं' अलग और 'तुम' अलग जब होता है, तभी सम्भोग हो सकता है, सेव्य-सेवक के भाव से।

"और मध्यम दर्जे के भी भक्त हैं। वे देखते हैं, ईश्वर सब भूतों में अन्तर्यामी के रूप से विराजमान हैं। अधम दर्जे के भक्त कहते हैं, – वे हैं – अर्थात आकाश के उस पार! (सब हँसे।)

"गोलोक के गोपालों को देखकर मुझे यह ज्ञात हुआ कि वे ही सब कुछ हुए हैं। जिन्होंने ईश्वर को देखा है वे स्पष्ट देखते हैं, ईश्वर ही कर्ता हैं, वे ही सब कुछ कर रहे हैं।"

गिरीश – महाराज, मैंने ठीक समझा है कि वे ही सब कुछ कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – मै कहता हूँ, 'माँ, मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो; में जड़ हूँ, तुम चेतना भरनेवाली हो; तुम जैसा कराती हो, मैं वैसा ही करता हूँ; जैसा कहलाती हो, वैसा ही कहता हूँ।' जो अज्ञान दशा में हैं, वे कहते हैं, 'कुछ तो वे करते हैं, कुछ मैं करता हूँ।'

गिरीश – महाराज, मै और करता ही क्या हूँ? और अब कर्म ही क्यों किये जायँ?

श्रीरामकृष्ण – नही जी, कर्म करना अच्छा है। जमीन जुती हुई हो तो उसमें जो कुछ बोओगे वही होगा। परन्तु इतना है कि कर्म निष्काम भाव से करना चाहिए।

"परमहंस दो तरह के हैं। ज्ञानी परमहंस और प्रेमी परमहंस। जो ज्ञानी हैं, उन्हे अपने काम से काम। जो प्रेमी हैं, जैसे शुकदेवादि, वे ईश्वर को प्राप्त करके फिर लोक-शिक्षा देते हैं। कोई अपने आप ही आम खाकर मुँह पोंछ डालता है, और कोई और पाँच आदमियों को खिलाता है। कोई कुआँ खोदते समय टोकरी और कुदार अपने घर उठा ले जाते हैं; कोई कुआँ खुद जाने पर टोकरी और कुदार उसी कुएँ में डाल देते है; कोई दूसरों के लिए रख देते है ताकि पड़ोसियों के ही काम आ जाय। शुकदेव आदि ने दूसरों के लिए टोकरी और कुदार रख दी। (गिरीश से) तुम भी दूसरों के लिए रखना।"

गिरीश – तो आप आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – तुम माता के नाम पर विश्वास करना, बस हो जायेगा।

गिरीश – मै पापी तो हूँ।

श्रीरामकृष्ण – जो सदा पाप पाप सोचा करता है, वह पापी हो जाता है।

गिरीश – महाराज, मै जहाँ बैठता था, वहाँ की मिट्टी भी अशुद्ध है।

श्रीरामकृष्ण – यह क्या! हजार साल के अँधेरे घर मे अगर उजाला आता है तो क्या जरा जरा करके उजाला होता है या एकदम ही प्रकाश फैल जाता है?

गिरीश – आपने आशीर्वाद दिया।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारे अन्दर से अगर यही बात हो तो मै इस पर क्या कह सकता हूँ? मै तो खाता-पीता हूँ और उनका नाम लिया करता हूँ।

गिरीश – आन्तरिकता है नही, परन्तु यह कृपया आप दे जाइये।

श्रीरामकृष्ण – क्या मैं? नारद, शुकदेव, ये लोग होते तो दे देते।

गिरीश – नारदादि तो दृष्टि के सामने है नही, पर आप मेरे सामने है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – अच्छा, तुम्हे विश्वास है।

सभी कुछ देर चुप रहे। फिर बातचीत होने लगी।

गिरीश – एक इच्छा है, अहेतुकी भक्ति की।

श्रीरामकृष्ण - अहेतुकी भक्ति ईश्वर-कोटि को होती है। जीव-कोटि को नही होती।

श्रीरामकृष्ण ऊर्ध्वदृष्टि है। आप ही आप गाने लगे –

"श्यामा को क्या सब लोग पाते है? नादान मन समझाने पर भी नही समझता। उन सुरंजित चरणो से मन लगना शिव के लिए भी असाध्य साधन है। जो माता की चिन्ता करता है, उसके लिए इन्द्रादि का सुख और ऐश्वर्य भी तुच्छ हो जाता है। अगर वे कृपा की दृष्टि फेरती है, तो भक्त सदा ही आनन्द मे मग्न रहता है। योगीन्द्र, मुनीन्द्र और इन्द्र उनके श्रीचरणो का ध्यान करके भी उन्हे नही पाते। निर्गुण मे रहकर भी कमलाकान्त उन चरणो की चाह रखता है।"

गिरीश – निर्गुण मे रहकर भी कमलाकान्त उन चरणो की चाह रखता है।

(३)

क्या संसार में ईश्वरलाभ होता है?

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश से) - तीव्र वैराग्य के होने पर वे मिलते है। प्राणो मे विकलता होनी चाहिए। शिष्य ने गुरु से पूछा था, क्या करूँ जो ईश्वर को पाऊँ? गुरु ने कहा, मेरे साथ आओ। यह कहकर गुरु ने उसे एक तालाब मे डुबाकर ऊपर से पकड़ रखा। कुछ देर बाद उसे पानी मे निकाल लिया और पूछा, 'पानी के भीतर तुम्हे कैसा लगता था?' महाराज, मेरे प्राण डूबते-उतराते थे, जान पडता था अभी प्राण निकलना

चाहते है।' गुरु ने कहा, 'देखो, इसी तरह ईश्वर के लिए जब जी डूबता उतराता है तब उनके दर्शन होते है।'

"इस पर मै कहता हूँ, जब तीनों आकर्षण एकत्र होते है तब ईश्वर मिलते है। विषयी का जैसा आकर्षण विषय की ओर है, सती का पति की ओर तथा माता का सन्तान की ओर, इन तीनों को अगर एक साथ मिलाकर कोई ईश्वर को पुकार सके तो उसी समय उनके दर्शन हो जायँ।

" 'मन! जिस तरह पुकारा जाता है उस तरह तू पुकार तो सही, देखूँ भला, कैसे श्यामा रह सकती है?' उस तरह व्याकुल होकर पुकारने पर उन्हे दर्शन देना ही होगा।

"उस दिन तुमसे मैंने कहा था – भक्ति का अर्थ क्या है। वह है मन, वाणी और कर्म से उन्हे पुकारना। कर्म – अर्थात् हाथों से उनकी पूजा और सेवा करना, पैरो से उनके स्थानों तक जाना, कानो से भगवान और उनके नाम, गुणो और भजनो को सुनना, आँखो से उनकी मूर्ति के दर्शन करना। मन अर्थात् सदा उनका ध्यान – उनकी चिन्ता करना तथा उनकी लीलाओ का स्मरण करना। वाणी – अर्थात् उनकी स्तुतियाँ पढना – उनके भजन गाना।

"कलिकाल के लिए नारदीय भक्ति है – सदा उनके नाम और गुणो का कीर्तन करना। जिन्हे समय नही है, उन्हें कम से कम शाम को तालियाँ बजाकर एकाग्र चित्त हो 'श्रीमन्नारायण नारायण' कहकर उनके नाम का कीर्तन करना चाहिए।

"भक्ति के 'मै' मे अहंकार नही होता। वह अज्ञान नही लाता, बल्कि ईश्वर की प्राप्ति करा देता है। यह 'मै' मे नही गिना जाता, जैसे 'हिचा' साग नही गिना जाता। दूसरे सागो से बीमारी हो सकती है, परन्तु 'हिचा' साग पित्तनाशक है, इससे उपकार ही होता है। मिश्री मिठाइयो मे नही गिनी जाती। दूसरी मिठाइयो के खाने से अपकार होता है, परन्तु मिश्री के खाने से अम्लविकार हटता है।

"निष्ठा के बाद भक्ति होती है। भक्ति की परिपक्व अवस्था भाव है। भाव के घनीभूत होने पर महाभाव होता है। सब से अन्त मे है प्रेम।

"प्रेम रज्जु है। प्रेम के होने पर भक्त के निकट ईश्वर बँधे रहते है, फिर भाग नही सकते। साधारण जीवो को केवल भाव तक होता है। ईश्वर-कोटि के हुए बिना महाभाव या प्रेम नही होता। प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था।

"ज्ञान वह है, जिस रास्ते से चलकर मनुष्य स्वरूप का पता पाता है। ब्रह्म ही मेरा रूप है, यह बोध होना चाहिए।

"प्रह्लाद कभी स्वरूप मे रहते थे। कभी देखते थे 'एक मै हूँ और एक तुम', तब वे भक्तिभाव मे रहते थे।

"हनुमान ने कहा था, 'राम, कभी देखता हूँ, तुम पूर्ण हो, मै अंश हूँ, कभी देखता

हूँ, तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ; और राम, जब तत्त्वज्ञान होता है, तब देखता हूँ, तुम्हीं मैं हो, मैं ही तुम हूँ।' "

गिरीश – अहा!

श्रीरामकृष्ण – संसार में होगा क्यो नहीं? परन्तु विवेक और वैराग्य चाहिए। ईश्वर ही वस्तु हैं, और सब अनित्य और अवस्तु – दो दिन के लिए है, यह विचार दृढ़ रहना चाहिए। ऊपर उतराते रहने से न होगा। डुबकी मारनी चाहिए।

"एक बात और; काम आदि घड़ियालों का भय है।"

गिरीश – परन्तु यम का भय मुझे नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, काम आदि घड़ियालो का भय है। इसीलिए हलदी लगाकर डुबकी मारनी चाहिए – हलदी है विवेक और वैराग्य।

"संसार में किसी किसी को ज्ञान होता है। इस पर दो तरह के योगियों की बात कही गयी है – गुप्त योगी और व्यक्त योगी। जिन लोगों ने संसार का त्याग कर दिया है, वे व्यक्त योगी हैं, उन्हें सब लोग पहचानते हैं। गुप्त योगी व्यक्त नहीं होता। जैसे नौकरानी – सब काम तो करती है, परन्तु मन अपने देश में बालबच्चों पर लगाये रहती है। और जैसा मैंने तुमसे कहा है, व्यभिचारणी औरत घर का कुल काम तो बड़े उत्साह से करती है, परन्तु मन से वह सदा अपने यार की याद करती रहती है। विवेक और वैराग्य का होना बड़ा मुश्किल है, 'मैं कर्ता हूँ' और 'ये सब चीजें मेरी हैं,' यह भाव बड़ी जल्दी दूर नहीं होता। एक डिप्टी को मैंने देखा, आठ सौ रुपया महीना पाता है; ईश्वरी बातें हो रही थीं, उधर उसका जरा भी मन नहीं लगा। एक लड़का साथ ले आया था, उसे कभी यहाँ बैठाता था, कभी वहाँ। मैं एक आदमी को जानता हूँ, उसका नाम न लूँगा, खूप जप करता था, परन्तु दस हजार रुपयों के लिए उसने झूठी गवाही दी थी।

"इसीलिए कहा, विवेक और वैराग्य के होने पर संसार में भी ईश्वर प्राप्ति होती है।"

गिरीश – इस पापी के लिए क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण ऊर्ध्वदृष्टि हो गाने लगे –

"ऐ जीवो, उस नरकान्तकारी श्रीकान्त का चिन्तन करो, इस तरह कृतान्त के भय का अन्त हो जायेगा। उनका स्मरण करने पर भवभावना दूर हो जाती है, उस त्रिभंग के एक ही भ्रूभंग से मनुष्य इस घोर तरंग को पार कर जाता है। सोचो तो, किस तत्त्व की प्राप्ति के लिए तुम इस मर्त्यलोक में आये, पर यहाँ आकर चित्त में बुरी वृत्तियाँ भरना शुरू कर दिया! यह कदापि उचित नहीं, इस तरह तुम अपने को डुबा दोगे। अतएव उस नित्यपद की चिन्ता करके अपने इस चित्त का प्रायश्चित्त करो।"

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश से) – उस त्रिभंग के एक ही भ्रूभंग से मनुष्य इस घोर तरंग

को पार कर जाता है।

"महामाया के द्वार छोडने पर उनके दर्शन होते है, महामाया की दया चाहिए। इसीलिए शक्ति की उपासना की जाती है। देखो न, पास ही भगवान है, फिर भी उन्हे जानने के लिए कोई उपाय नही, बीच मे महामाया है, इसलिए। राम, सीता और लक्ष्मण जा रहे है, आगे राम है, बीच मे सीता और पीछे लक्ष्मण। राम बस ढाई हाथ के फासले पर है, फिर भी लक्ष्मण उन्हे नही देख पाते।

"उनकी उपासना करने के लिए एक भाव का आश्रय लिया जाता है। मेरे तीन भाव है, सन्तानभाव, दासीभाव और सखीभाव। दासीभाव और सखीभाव मे मै बहुत दिनो तक था। उस समय स्त्रियो की तरह गहने और कपडे पहनता था। सन्तानभाव बहुत अच्छा है।

"वीरभाव अच्छा नही। मुण्डे और मुण्डियाँ, भैरव और भैरवियाँ, ये सब वीरभाव के उपासक है, अर्थात् प्रकृति को स्त्रीरूप से देखना और रमण के द्वारा उसे प्रसन्न करना – इस भाव मे प्राय: पतन हुआ करता है।"

गिरीश – मुझ मे एक समय वही भाव आया था।

श्रीरामकृष्ण चिन्तित हुए-से गिरीश को देखने लगे।

गिरीश – इस भाव का कुछ अंश शेष है। अब उपाय क्या है, बतलाइये।

श्रीरामकृष्ण – (कुछ देर चिन्ता करके) – उन्हे आम मुख्त्यारी दे दो, उनकी जो इच्छा हो, वे करे।

(८)

सत्त्वगुण तथा ईश्वरलाभ

श्रीरामकृष्ण भक्त बालको की बाते कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश से) – ध्यान करता हुआ मै उनके सब लक्षण देख लेता हूँ। 'घर सँवारूँगा' यह भाव उनमे नही है। स्त्री-सुख की इच्छा नही है। जिनके स्त्री है भी, वे उसके साथ नही सोते। बात यह है कि रजोगुण के बिना गये, शुद्ध सत्त्वगुण के बिना आये, ईश्वर पर मन स्थिर नही होता, उन पर प्यार नही होता, उन्हे मनुष्य पा नही सकता।

गिरीश – आपने मुझे आशीर्वाद दिया है।

श्रीरामकृष्ण – कब? परन्तु हाँ, यह कहा है कि आन्तरिकता के होने पर सब हो जायेगा।

बातचीत करते हुए श्रीरामकृष्ण 'आनन्दमयी' कहकर समाधिलीन हो रहे है। बड़ी देर तक समाधि की अवस्था मे रहे। जरा समाधि से उतरकर कह रहे है – "ये सब कहाँ गये?" मास्टर बाबूराम को बुला लाये। श्रीरामकृष्ण बाबूराम और दूसरे भक्तो की ओर देखकर बोले – "सच्चिदानन्द ही अच्छा है, और कारणानन्द?"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे –

"अबकी बार मैने अच्छा सोचा है। एक अच्छे सोचनेवाले से मैने सोचने का ढंग सीखा है। जिस देश मे रात नही है, मुझे उसी देश का एक आदमी मिला है। दिन की तो बात ही न पूछो, सन्ध्या को भी मैने बन्ध्या बना डाला है। मेरी ऑखे खुल गयी है, अब *क्या फिर मै सो सकता हूँ? मै योग और याग मे जाग रहा हूँ। माँ, योगनिद्रा तुझे देकर* नीद को ही मैने सुला दिया है। सोहागा और गन्धक को पीसकर मैने बड़ा ही सुन्दर रंग चढ़ाया है, ऑखो की कूँची बनाकर मै मणि-मन्दिर को साफ कर लूँगा। रामप्रसाद कहते है, भुक्ति और मुक्ति दोनो को सिर पर रखे हुए हूँ और 'काली ही ब्रह्म है' यह मर्म समझकर धर्म और अधर्म, दोनो को मैने छोड़ दिया है।"

फिर उन्होंने दूसरा गाना गाया।

"यदि 'काली काली' कहते मेरी मृत्यु हो जाय तो गंगा, गया, काशी, कांची, प्रभासादि क्षेत्रो मे मै क्यो जाऊँ? ...."

फिर वे कहने लगे, "मैने माँ से प्रार्थना करते हुए कहा था, माँ, मै और कुछ नही चाहता, मुझे शुद्धा भक्ति दो।"

गिरीश का शान्त भाव देखकर श्रीरामकृष्ण को प्रसन्नता हुई है। वे कह रहे है, "तुम्हारी यही अवस्था अच्छी है। सहज अवस्था ही उत्तम अवस्था है।"

श्रीरामकृष्ण नाट्यभवन के मैनेजर के कमरे मे बैठे हुए है। एक ने आकर पूछा, "क्या आप 'विवाह-विभ्राट' देखेंगे? – अब अभिनय हो रहा है?"

श्रीरामकृष्ण ने गिरीश से कहा, "यह तुमने क्या किया? प्रह्लाद-चरित्र के बाद विवाह-विभ्राट? पहले खीर देकर पीछे से कड़वी तरकारी?"

अभिनय समाप्त हो जाने पर गिरीश के आदेश मे रंगमंच की अभिनेत्रियाँ (actresses) श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करने आयी। सब ने भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। भक्तगण कोई खड़े, कोई बैठे हुए देख रहे है। उन्हे देखकर आश्चर्य होने लगा। अभिनेत्रियो मे कोई-कोई श्रीरामकृष्ण के पैरो पर हाथ रखकर प्रणाम कर रही है। पैरो पर हाथ रखते समय श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "माँ, बस हो गया – माँ बस, रहने दो।" बातों मे करुणा सनी हुई थी।

उनके प्रणाम करके चले जाने पर श्रीरामकृष्ण भक्तो से कह रहे है – "सब वही है – एक एक अलग रूप मे।"

अब श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर चढ़े। गिरीश आदि भक्तों ने उनके साथ चलकर उन्हे गाड़ी पर चढ़ा दिया।

गाड़ी पर चढ़ते ही श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि मे लीन हो गये। नारायण आदि भक्त भी गाड़ी मे बैठे। गाड़ी दक्षिणेश्वर की ओर चल दी।

परिच्छेद १०५

'देवी चौधरानी' का पठन

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में श्रीरामकृष्ण

आज शनिवार है, २७ दिसम्बर, १८८४, पूस की शुक्ला सप्तमी। बड़े दिन की छुट्टियों में भक्तों को अवकाश मिला है। कितने ही श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आये है। सुबह को ही बहुतेरे आ गये है। मास्टर और प्रसन्न ने आकर देखा, श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिण दालान में थे। उन लोगों ने आकर श्रीरामकृष्ण की चरण-वन्दना की।

श्रीयुत शारदाप्रसन्न ने पहले ही पहल श्रीरामकृष्ण को देखा है।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा – "क्यों जी, तुम बंकिम को नहीं ले आये?"

बंकिम स्कूल का विद्यार्थी है। श्रीरामकृष्ण ने उसे बागबाजार में देखा था। दूर से देखकर ही कहा था, लड़का अच्छा है।

बहुत से भक्त आये हुए है। केदार, राम, नृत्यगोपाल, तारक, सुरेश आदि और बहुत से भक्तबालक भी आये हुए है।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ पंचवटी में जाकर बैठे। भक्तगण उन्हे चारों ओर से घेरे हुए है – कोई बैठे है, कोई खड़े है। श्रीरामकृष्ण पंचवटी में ईटों के बने हुए चबूतरे पर बैठे है। दक्षिण-पश्चिम की ओर मुँह किये हुए है। हँसते हुए मास्टर से उन्होने पूछा, क्या तुम पुस्तक ले आये हो?

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – जरा पढ़कर मुझे सुनाओ तो'

भक्तगण उत्सुकता के साथ देख रहे है कि कौन सी पुस्तक है। पुस्तक का नाम है 'देवी चौधरानी।' श्रीरामकृष्ण सुन रहे है। देवी चौधरानी में निष्काम कर्म की बाते लिखी है। वे लेखक श्रीयुत बंकिमचन्द्र की तारीफ भी सुन चुके थे। पुस्तक में उन्होने क्या लिखा है, इसे सुनकर वे उनके मन की अवस्था समझ लेगे। मास्टर ने कहा, यह स्त्री डाकुओ के पाले पड़े थी, इसका नाम प्रफुल्ल था, बाद मे देवी चौधरानी हुआ था। जिस डाकू के साथ यह स्त्री पड़ी थी, उसका नाम भवानी पाठक था। भवानी पाठक बड़ा अच्छा आदमी

था। उसी ने प्रफुल्ल से बहुत कुछ साधना करायी थी, और किस तरह निष्काम कर्म किया जाता है, इसकी शिक्षा दी थी। डाकू दुष्टों से रुपया-पैसा छीनकर गरीबों को दिया करता था, उनके भोजन-वस्त्र के लिए। प्रफुल्ल से उसने कहा था, मैं दुष्टों का दमन और शिष्टों का पालन करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – यह तो राजा का काम है।

मास्टर – और एक जगह भक्ति की बातें हैं। भवानी पाठक ने प्रफुल्ल के पास रहने के लिए एक लड़की को भेजा था, उसका नाम था निशि, वह लड़की बड़ी भक्तिमती थी। वह कहती थी, मेरे स्वामी श्रीकृष्ण है। प्रफुल्ल का विवाह हो गया था। उसके बाप न था, माँ थी। अकारण एक कलंक लगाकर गाँववालों ने उसे जाति-पाति से अलग कर दिया था; इसीलिए प्रफुल्ल को उसका ससुर अपने यहाँ नहीं ले गया। अपने लडके के उसने और दो विवाह कर दिये थे। प्रफुल्ल अपने पति को बहुत चाहती थी। अब पुस्तक का यह अंश समझ में आ जाएगा।

निशि – उनकी (भवानी पाठक की) कन्या हूँ, वे मेरे पिता हैं। उन्होंने भी एक तरह से मेरा विवाह कर दिया है।

प्रफुल्ल – एक तरह से, इसके क्या मानी?

निशि – मैने अपना सब कुछ श्रीकृष्ण को अर्पित किया है।

प्रफुल्ल – वह कैसे?

निशि – मेरा रूप, यौवन और प्राण।

प्रफुल्ल – क्या वही तुम्हारे स्वामी है?

निशि – हाँ, क्योंकि जिनका मुझ पर पूर्ण अधिकार है, वे ही मेरे स्वामी है।

प्रफुल्ल ने एक लम्बी साँस छोड़कर कहा, "मैं नहीं कह सकूँगी। कभी तुमने पति का मुख नहीं देखा, इसीलिए कह रही हो। पति को अगर देखा होता तो कभी श्रीकृष्ण पर तुम्हारा मन न जाता।"

मूर्ख व्रजेश्वर (प्रफुल्ल का पति) यह न जानता था कि उसकी स्त्री उससे इतना प्रेम करती है।

निशि ने कहा, "श्रीकृष्ण पर सब का मन लग सकता है, क्योंकि उनका रूप अनन्त है, यौवन अनन्त है, ऐश्वर्य अनन्त है।"

यह युवती भवानी पाठक की शिष्या थी, निरक्षर प्रफुल्ल उसकी बातों का उत्तर न दे सकी। केवल हिन्दू-समाजधर्म के प्रणेतागण उत्तर जानते थे। मैं जानता हूँ, ईश्वर अनन्त हैं, परन्तु अनन्त को इस छोटे से हृदय-पिञ्जर में हम रख नहीं सकते, सान्त को रख सकते हैं। इसीलिए अनन्त ईश्वर हिन्दूओं के हृदयपिञ्जर में सान्त श्रीकृष्ण के रूप में हैं। पति और भी अच्छी तरह सान्त है। इसीलिए प्रेम के पवित्र होने पर, पति ईश्वर के पथ पर चढ़ने का

प्रथम सोपान है। यही कारण है कि पति ही हिन्दू स्त्रियों का देवता है। इस जगह दूसरे समाज हिन्दू समाज से निकृष्ट है।

प्रफुल्ल मूर्खा थी, वह कुछ समझ न सकी। उसने कहा, "बहन, मैं इतनी बाते नही समझ सकती। तुम्हारा नाम क्या है, तुमने तो अब तक नही बताया।"

निशि बोली, "भवानी पाठक ने मेरा नाम निशि रखा है। मै दिवा की बहन निशि हूँ। दिवा को एक दिन तुमसे मिलने के लिए लाऊँगी, परन्तु मै जो कह रही थी, सुनो। एकमात्र ईश्वर हमारे स्वामी है। स्त्रियो का पति ही देवता है। श्रीकृष्ण सब के देवता है। क्यो बहन, दो देवता फिर क्यो रहे? इस छोटे से जी मे जो जरा भक्ति है, उसके दो टुकड़े कर डालने पर फिर कितना बच रहता है?"

प्रफुल्ल – अरी चल! स्त्रियो की भक्ति का भी कही अन्त है?

निशि – स्त्रियो के प्यार का तो अन्त नही है, परन्तु भक्ति और चीज है, प्यार और चीज।

मास्टर – भवानी पाठक प्रफुल्ल से साधना कराने लगे।

"पहले साल भवानी पाठक प्रफुल्ल के घर किसी पुरुष को न जाने देते थे, और न घर के बाहर किसी पुरुष से उसे मिलने ही देते थे। दूसरे साल मिलने-जुलने मे इतनी रोक-टोक न रही, परन्तु उसके यहाँ किसी पुरुष को न जाने देते थे। फिर तीसरे साल, जब प्रफुल्ल ने सिर घुटाया, तब भवानी पाठक अपने चुने हुए चेलो को लेकर उसके पास जाया करते थे – प्रफुल्ल सिर घुटाये आँखे नीची करके शास्त्रीय चर्चा किया करती थी।

"फिर प्रफुल्ल की शिक्षा का आरम्भ हुआ। वह व्याकरण समाप्त कर चुकी, रघुवंश, कुमार, नैषध, शाकुन्तल पढ़ चुकी। कुछ सांख्य, कुछ वेदान्त और कुछ न्याय भी उसने पढ़ा।"

श्रीरामकृष्ण – इसका मतलब समझे? बिना पढ़े ज्ञान नही होता। जिसने लिखा है, वैसे आदमियो का यही मत है। वे सोचते है, पहले पढ़ना-लिखना है, फिर ईश्वर है। यदि ईश्वर को समझना है तो पढ़ना-लिखना अत्यावश्यक है। परन्तु अगर मुझे यदु मल्लिक से मिलना है, तो उसके कितने मकान है, कितने रुपये है, कितने का कम्पनी का कागज है, क्या यह सब पहले जानने की आवश्यकता है? मुझे इतनी खबरो का क्या काम? स्तव या स्तुति करके किसी भी तरह से हो अथवा दरवान के धक्के ही सहकर, किसी तरह घर के भीतर घुसकर यदु मल्लिक से मिलना चाहिए। और अगर रुपया-पैसा और ऐश्वर्य के जानने की इच्छा हो, तो यदु मल्लिक से पूछने ही से काम सिद्ध हो जाता है। बहुत सहज मे ही मतलव निकल जाता है। पहले राम है, फिर राम का ऐश्वर्य यह संसार। इसलिए वाल्मीकी ने 'मरा' जाना था। 'म' अर्थात् ईश्वर और 'रा' अर्थात् संसार – उनका ऐश्वर्य।

(२)

निष्काम कर्म और श्रीरामकृष्ण। फल-समर्पण और भक्ति

मास्टर – प्रफुल्ल के अध्ययन समाप्त करने और बहुत दिनों तक साधना कर चुकने के पश्चात् भवानी पाठक उससे मिलने के लिए आये। अब वे उसे निष्काम कर्म का उपदेश देना चाहते थे। उन्होंने गीता का एक श्लोक कहा –

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचार।
असक्तो ह्याचरन कर्म परमाप्नोति पूरुषः।।

अनासक्ति के उन्होंने तीन लक्षण बतलाये –

(१) इन्द्रिय-संयम (२) निरहंकार (३) श्रीकृष्ण के चरणो मे फल-समर्पण। निरहंकार के बिना धर्माचरण नही होता। गीता मे और भी कहा गया है –

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहंकारविमूढ़ात्मा कर्ताहमिति मन्यते।।

इसके पश्चात् श्रीकृष्ण को सब कर्मो का फलार्पण। उन्होंने गीता के श्लोक का उल्लेख किया –

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोसि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्।।

निष्काम कर्म के ये तीन लक्षण कहे है।

श्रीरामकृष्ण – यह अच्छा है। गीता की बात है। अकाट्य है। परन्तु एक बात है। श्रीकृष्ण को फलार्पण कर देने के लिए तो कहा, परन्तु उन पर भक्ति करने की बात तो नहीं कही।

मास्टर – यहाँ यह बात विशेषतया नही कही गयी।

फिर धन का व्यय किस तरह करना चाहिए, यह बात हुई। प्रफुल्ल ने कहा, यह सब धन श्रीकृष्ण के लिए मैंने समर्पित किया।

प्रफुल्ल – जब मैंने अपने सब कर्म श्रीकृष्ण को समर्पित किये, तब अपने धन का भी समर्पण मैंने श्रीकृष्ण को ही कर दिया।

भवानी – सब?

प्रफुल्ल – सब।

भवानी – तो कर्म वास्तव मे अनासक्त कर्म न हो सकेगा। अगर तुम्हे अपने भोजन के लिए प्रयत्न करना पड़ा तो इससे आसक्ति होगी। अतएव, सम्भवतः तुम्हे भिक्षावृत्ति के द्वारा भोजन का संग्रह करना होगा या इसी धन से अपनी शरीर-रक्षा के लिए कुछ रखना होगा। भिक्षा मे भी आसक्ति है, अतएव तुम्हे इसी धन से अपने शरीर की रक्षा करनी

चाहिए।

मास्टर – (श्रीरामकृष्ण से) – यह इनका पटवारीपन है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह इनका पटवारीपन है। हिसाबी बुद्धि है। जो ईश्वर को चाहता है, वह एकदम कूद पड़ता है। देह-रक्षा के लिए इतना रहे, यह हिसाब नहीं आता।

मास्टर – फिर भवानी ने पूछा, – 'धन लेकर श्रीकृष्ण के लिए समर्पण कैसे करोगी?' प्रफुल्ल ने कहा, 'श्रीकृष्ण सर्व भूतों में विराजमान है। अतएव सर्व भूतों के लिए इसका व्यय करूँगी।' भवानी ने कहा, 'यह बहुत ही अच्छा है,' और वे गीता के श्लोक पढ़ने लगे –

> यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
> तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।।
> सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
> सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते।।
> आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
> सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः।।

गीता–अ ६, श्लोक ३०-३१-३२

श्रीरामकृष्ण – ये उत्तम भक्त के लक्षण है।

मास्टर पढ़ने लगे।

"सर्व भूतों को दान करने के लिए बडे परिश्रम की आवश्यकता है। इसलिए कुछ साज-सजावट, कुछ भोग-विलास की जरूरत है। भवानी पाठक ने इसीलिए कहा, 'कभी कभी कुछ दूकानदारी की भी आवश्यकता होती है।"

श्रीरामकृष्ण – (विरक्ति के भाव से) – 'दूकानदारी की भी आवश्यकता होती है।' जैसा आकर है, बात भी वैसी ही निकलती है। दिन-रात विषय की चिन्ता, मनुष्यों से धोखेबाजी, यह सब करते हुए बातें भी उसी ढंग की हो जाती है। मूली खाने पर मूली की ही डकार आती है। 'दूकानदारी' न कहकर वही बात अच्छे ढंग से भी कही जा सकती थी, वह कह सकता था, 'अपने को अकर्ता समझ कर्ता की तरह कार्य करना।' उस दिन एक आदमी गा रहा था। उस गाने के भीतर लाभ और घाटा, इन्हीं बातों की भरमार थी। मैंने मना किया। आदमी दिन-रात जो चिन्ताएँ किया करता है, मुँह से वही बातें निकलती रहती है।

(३)

योग की दूरबीन। पतिव्रता-धर्म

पठन जारी है। अब ईश्वर-दर्शन की बात आयी। प्रफुल्ल अब देवी चौधरानी हो गयी

है। वैशाख शुक्ला सप्तमी तिथि है। देवी छप्परवाली नाव पर बैठी हुई दिवा के साथ बातचीत कर रही है। चन्द्रोदय हो गया है। नाव का लंगर छोड़ दिया गया है, गंगा के वक्ष पर नाव स्थिर भाव से खड़ी है। नाव की छत पर देवी और उसकी दोनो सहेलियाँ बैठी हुई हैं। ईश्वर प्रत्यक्ष होते है या नही, यही बात हो रही है। देवी ने कहा, जैसे फूल की सुगन्ध घ्राणेन्द्रिय के निकट प्रत्यक्ष है, उसी तरह ईश्वर मन के निकट प्रत्यक्ष होते है।

श्रीरामकृष्ण – जिस मन के निकट प्रत्यक्ष होते है, वह यह मन नही, वह शुद्ध मन है, तब यह मन नही रहता, विषयासक्ति के जरा भी रहने पर नही होता। मन जब शुद्ध होता है, तब चाहे उसे शुद्ध मन कह लो, चाहे शुद्ध आत्मा।

मास्टर – मन के निकट सहज ही वे प्रत्यक्ष नही होते, यह बात कुछ आगे है। कहा है, प्रत्यक्ष करने के लिए दूरबीन चाहिए। दूरबीन का नाम योग है। फिर जैसा गीता मे लिखा है, योग तीन तरह के है – ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग। इस योगरूपी दूरबीन से ईश्वर दीख पड़ते है।

श्रीरामकृष्ण – यह बड़ी अच्छी बात है। गीता की बात है।

मास्टर – अन्त मे देवी चौधरानी अपने स्वामी से मिली। स्वामी पर उसकी बड़ी भक्ति थी। स्वामी से उसने कहा – 'तुम मेरे देवता हो। मै दूसरे देवता की अर्चना करना सीख रही थी, परन्तु सीख नही सकी। तुमने सब देवताओ का स्थान अधिकृत कर लिया है।'

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – 'सीख न सकी।' इसे पतिव्रता का धर्म कहते है। यह भी एक मार्ग है।

पठन समाप्त हो गया, श्रीरामकृष्ण हँस रहे है। भक्तगण टकटकी लगाये देख रहे है, कुछ सुनने के आग्रह से।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर, केदार तथा भक्तो से) – यह एक प्रकार से बुरा नही। इसे पतिव्रता-धर्म कहते है। प्रतिमा मे ईश्वर की पूजा तो होती है, फिर जीते-जागते आदमी मे क्यो नही होगी! आदमी के रूप मे वे ही लीला कर रहे है।

"कैसी अवस्था बीत चुकी है! हरगौरी के भाव मे कितने ही दिनो तक रहा था! फिर कितने ही दिन श्रीराधाकृष्ण भाव मे बीते थे! कभी सीताराम का भाव था! राधा के भाव मे रहकर 'कृष्ण-कृष्ण' कहता था, सीता के भाव में 'राम-राम!'

"परन्तु लीला ही अन्तिम बात नही है। इन सब भावो के बाद मैने कहा, माँ, इन सब मे विच्छेद है। जिसमे विच्छेद नही है, ऐसी अवस्था कर दो, इसीलिए अनेक दिन अखण्ड सच्चिदानन्द के भाव मे रहा। देवताओ की तस्वीरे मैने कमरेसे निकाल दी।

"उन्हे सर्व भूतो मे देखने लगा। पूजा उठ गयी। यही बेल का पेड़ है, यहाँ मै बेल-पत्र लेने आया करता था। एक दिन बेलपत्र तोडते हुए कुछ छाल निकल गयी। मैने पेड़

मे चेतना देखी। मन मे कष्ट हुआ। दूर्वादल लेते समय देखा, पहले की तरह मै चुन नही सकता। तब बलपूर्वक चुनने लगा।

"मै नीबू नही काट सकता। उस रोज बडी मुश्किल से 'जय काली' कहकर उनके सामने बलि देने की तरह एक नीबू मं काट सका था। एक दिन मै फूल तोड रहा था। उसने दिखलाया पेड मे फूल खिले हुए है, जैसे सामने विराट की पूजा हो रही हो – विराट के सिर पर फूल के गुच्छे रखे हुए हो। फिर मै फूल तोड न सका।

"वे आदमी होकर भी लीलाएँ कर रहे है। मै तो साक्षात् नारायण को देखता हूँ। काठ को घिसने मे जिस तरह आग निकल पड़ती है, उसी तरह भक्ति का बल रहने पर आदमी मे भी ईश्वर के दर्शन होते है। बंसी मे अगर बढ़िया ममाला लगाया हो, तो 'रेहू' और 'कातला' फौरन उसे निगल जाती है। प्रेमोन्माद होने पर सर्व भूतो मे ईश्वर का साक्षात्कार होता है। गोपियो ने सर्व भूतो मे श्रीकृष्ण के दर्शन किये थे। सब को कृष्णमय देखा, कहा था, 'मै ही कृष्ण हूँ।' तब उनकी उन्मादावस्था थी। पेड देखकर उन लोगो ने कहा 'ये तपस्वी है, कृष्ण का ध्यान कर रहे है।' तृणो को देखकर कहा था, 'श्रीकृष्ण के स्पर्श से पृथ्वी को रोमाञ्च हो रहा है।'

"पतिव्रता-धर्म मे स्वामी देवता है, और यह होगा भी क्यो नही? मूर्ति की पूजा तो होती है, फिर जीते-जागते आदमी की क्या नही होगी?

"प्रतिमा के आविर्भाव के लिए तीन बातो की जरूरत होती है – पहली बात, पुजारी मे भक्ति हो, दूसरी, प्रतिमा सुन्दर हो, तीसरी गृहस्वामी स्वय भक्त हो। वैष्णवचरण ने कहा था, अन्त मे नरलीला मे ही मन लीन हो जाता है।

"परन्तु एक बात है – उन्हे बिना देखे इस तरह लीला-दर्शन नही होता। साक्षात्कार का लक्षण जानते हो? देखनेवाले का स्वभाव बालक जैसा हो जाता है। बालस्वभाव क्यो होता है? इसलिए कि ईश्वर स्वयं बालस्वभाव है। अतएव जिसे उनके दर्शन होते है, वह भी उसी स्वभाव का हो जाता है।

"यह दर्शन होना चाहिए। अब उनके दर्शन भी कैसे हो? तीव्र वैराग्य होना चाहिए। ऐसा चाहिए कि कहे – 'क्या तुम जगत्पिता हो तो मै क्या संसार से अलग हूँ? मुझ पर तुम दया न करोगे? – साला!'

"जो जिसकी चिन्ता करता है, उसे उसी की सत्ता मिलती है। शिव की पूजा करने पर शिव का सत्ता मिलती है। श्रीरामचन्द्रजी का एक भक्त था। वह दिन-रात हनुमान की चिन्ता किया करता। वह सोचता था, मै हनुमान हो गया हूँ। अन्त मे उसे दृढ़ विश्वास हो गया कि उसके जरा सी पूँछ भी निकली है।

"शिव के अंश से ज्ञान होता है, विष्णु के अंश से भक्ति। जिनमे शिव का अंश है, उनका स्वभाव ज्ञानियो जैसा है, जिनमे विष्णु का अंश है, उनका भक्तो जैसा

स्वभाव है।''

मास्टर - चैतन्यदेव के लिए तो आपने कहा था, उनमे ज्ञान और भक्ति दोनो थे।

श्रीरामकृष्ण - (विरक्तिपूर्वक) - उनकी और बात है। वे ईश्वर के अवतार थे। उनमे और जीवो मे बडा अन्तर है। उन्हे ऐसा वैराग्य था कि सार्वभौम ने जब जीभ पर चीनी डाल दी, तब चीनी हवा मे 'फर-फर' करके उड़ गयी, भीगी तक नही। वे सदा ही समाधिमग्न रहते थे। कितने बडे कामजयी थे वे, जीवो के साथ उनकी तुलना कैसे हो? सिह बारह वर्ष मे एक बार रमण करता है, परन्तु मांस खाता है; चिडियाँ दाने चबाती है, परन्तु दिन रात रमण करती है। उसी तरह अवतार और जीव है। जीव काम का त्याग तो करते है, परन्तु कुछ दिन बाद कभी भोग कर लेते है, सँभाल नही सकते। (मास्टर से) लज्जा क्यो? जो पार हो जाता है, वह आदमी को कीड़े के बराबर देखता है। 'लज्जा, घृणा और भय', ये तीन न रहने चाहिए। ये सब पाश है। 'अष्ट पाश' है न?

''जो नित्यसिद्ध है, उसे संसार का क्या डर? बँधे घरो का खेल है, पासे फेकने से कुछ और न पड जाय, यह डर उसे फिर नही रहता।

''जो नित्यसिद्ध है, वह चाहे तो संसार मे भी रह सकता है। कोई कोई दो तलवारे भी चला सकते है - वे ऐसे खिलाडी है कि कंकड़ फेककर मारो तो तलवार मे लगकर अलग हो जाता है।''

भक्त - महाराज, किस अवस्था मे ईश्वर के दर्शन होते है?

श्रीरामकृष्ण - बिना सब तरफ से मन को समेटे ईश्वर के दर्शन थोड़े ही होते है? भागवत मे शुकदेव की बाते है - वे रास्ते पर जा रहे थे - मानो संगीन चढ़ाई हुई हो! किसी ओर नजर नही जाती! एक लक्ष्य - केवल ईश्वर की ओर दृष्टि, योग यह है।

''चातक बस स्वाति का जल पीता है। गंगा, यमुना, गोदावरी सब नदियो मे पानी भरा हुआ है, सातो सागर पूर्ण है, फिर भी उनका जल वह नही पीता। स्वाति मे वर्षा होगी तब वह पानी पीयेगा।

''जिसका योग इस तरह का हुआ हो, उसे ईश्वर के दर्शन हो सकते है। थिएटर मे जाओ तो जब तक पर्दा नही उठता तब तक आदमी बैठे हुए अनेक प्रकार की बाते करते है - घर की बाते, आफिस की बाते, स्कूल की बाते, यही सब। पर्दा उठा नही कि सब बाते बन्द! जो नाटक हो रहा है, टकटकी लगाये उसे ही देखते है। बड़ी देर बाद अगर एक-आध बाते करते भी है तो उसी नाटक के सम्बन्ध की।

''शराबखोर शराब पीने के बाद आनन्द की ही बाते करता है।''

(४)

पचवटी मे श्रीरामकृष्ण

नृत्यगोपाल सामने बेठे हुए है। सदा ही भावस्थ रहते है, बिलकुल चुपचाप।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – गोपाल! तू तो बस चुपचाप बैठा रहता है।

नृत्यगोपाल – (बालक की तरह) – मै – नही – जानता।

श्रीरामकृष्ण – मै समझा, तू क्यो कुछ नही बोलता। शायद तू अपराध से डरता है।

"सच है। जय और विजय नारायण के द्वारपाल थे। सनक सनातन आदि ऋषियो को भीतर जाने मे उन्होने रोका था। इसी अपराध से उन्हे इस संसार मे तीन बार जन्म-ग्रहण करना पड़ा था।

"श्रीदाम गोलोक मे विरजा के द्वारी थे। श्रीमती (राधिका) कृष्ण को विरजा के मन्दिर मे पकडने के लिए उनके द्वार पर गयी थी, और भीतर घुसना चाहा – श्रीदाम ने घुसने नही दिया, इस पर राधिका ने शाप दिया कि तू मर्त्यलोक मे असुर होकर पैदा हो। श्रीदाम ने भी शाप दिया था। (सब मुस्कराये।) परन्तु एक बात है – बच्चा अगर अपने बाप का हाथ पकडता है, तो वह गड्ढे मे गिर भी सकता है, परन्तु जिसका हाथ बाप पकड़ता है, उसे फिर क्या भय है?"

श्रीदाम की बात ब्रह्मवैवर्त पुराण मे है।

केदार चैटर्जी इस समय ढाका मे रहते है। वे सरकारी नौकरी करते है। पहले उनका आफिस कलकत्ते मे था। अब ढाके मे है। वे श्रीरामकृष्ण के परम भक्त है। ढाके मे बहुत से भक्तो का साथ हो चुका है। वे भक्त सदा ही उनके पास आते और उपदेश ले जाया करते है। खाली हाथ दर्शनो के लिए न जाना चाहिए, इस विचार से वे भक्त केदार के लिए मिठाइयाँ ले आया करते है।

केदार – (विनयपूर्वक) – क्या मै उनकी चीजे खाया करूँ?

श्रीरामकृष्ण – अगर ईश्वर पर भक्ति करके देता हो तो दोष नही है। कामना करके देने से वह चीज अच्छी नही होती।

केदार – मैने उन लोगो से कह दिया है। मै अब निश्चिन्त हूँ। मैने कहा है, मुझ पर जिन्होने कृपा की है, वे सब जानते है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – यह तो सच है, यहाँ बहुत तरह के आदमी आते है, वे अनेक प्रकार के भाव भी देखते है।

केदार – मुझे अनेक विषयो के जानने की जरूरत नही है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – नही जी, जरा जरा सा सब कुछ चाहिए। अगर कोई

पंसारी की दूकान खोलता है, तो उसे सब तरह की चीजें रखनी पड़ती है। – कुछ मसूर की दाल भी चाहिए और कहीं जरा इमली भी रख ली – यह सब रखना ही पड़ता है।

"जो बाजे का उस्ताद है, वह कुछ कुछ सब तरह के बाजे बजा सकता है।"

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले में शौच के लिए गये। एक भक्त गडुआ लेकर वहीं रख आये।

भक्तगण इधर-उधर घूम रहे हैं। कोई श्रीठाकुरमन्दिर की ओर चले गये, कोई पंचवटी की ओर लौट रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने वहाँ आकर कहा – "दो तीन बार शौच के लिए जाना पड़ा, मल्लिक के यहाँ का खाना – घोर विषयी है, पेट गरम हो गया।"

श्रीरामकृष्ण के पान का डब्बा पंचवटी के चबूतरे पर अब भी पड़ा हुआ है; और भी दो एक चीजे पड़ी हुई हैं।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा – "वह डब्बा, और क्या क्या है, कमरे में ले आओ।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण अपने कमरे की ओर जाने लगे। पीछे पीछे भक्त भी आ रहे हैं। किसी के हाथ में पान का डब्बा है, किसी के हाथ में गडुआ आदि।

श्रीरामकृष्ण दोपहर के बाद कुछ विश्राम कर रहे है। दो-चार भक्त भी वहाँ आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर एक छोटे तकिये के सहारे बैठे हुए है। एक भक्त ने पूछा –

"महाराज, ज्ञान के द्वारा क्या ईश्वर के गुण समझे जाते हैं?"

श्रीरामकृष्ण ने कहा – "वे इस ज्ञान से नहीं समझे जाते; एकाएक क्या कभी कोई उन्हें जान सकता है? साधना करनी चाहिए। एक बात और, किसी भाव का आश्रय लेना। जैसे दासभाव। ऋषियों का शान्तभाव था। ज्ञानियों का भाव क्या है, जानते हो? स्वरूप की चिन्ता करना। (एक भक्त के प्रति हँसकर) तुम्हारा क्या है?"

भक्त चुपचाप बैठे रहे।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – तुम्हारे दो भाव हैं। स्वरूपचिन्ता करना भी है और सेव्य-सेवक का भाव भी है। क्यों, ठीक है या नही?

भक्त – (सहास्य और ससंकोच) – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – इसीलिए हाजरा कहता है, तुम मन की बातें सब समझ लेते हो। यह भाव कुछ बढ़ जाने पर होता है। प्रह्लाद को हुआ था।

"परन्तु उस भाव की साधना के लिए कर्म चाहिए।

"एक आदमी बेर का काँटा एक हाथ से दबाकर पकड़े हुए है – हाथ से खून टप-टप गिर रहा है, फिर भी वह कहता है, मुझे कुछ नहीं हुआ। लगा नहीं। पूछने पर कहता है, मैं खूब अच्छा हूँ। मुझे कुछ नहीं हुआ। पर यह बात केवल जबान से कहने से क्या होगा? भाव की साधना होनी चाहिए।"

□□□

परिच्छेद १०६

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का जन्म-महोत्सव

(१)

नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ कीर्तनानन्द में

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में उत्तर-पूर्ववाले लम्बे बरामदे में गोपी-गोष्ठ तथा सुबल-मिलन कीर्तन सुन रहे हैं। नरोत्तम कीर्तन कर रहे हैं। आज फाल्गुन शुक्लाष्टमी है, रविवार २२ फरवरी १८८५ ई। भक्तगण उनका जन्म-महोत्सव मना रहे हैं। गत सोमवार, फाल्गुन शुक्ल द्वितीया के दिन उनकी जन्मतिथि थी। नरेन्द्र, राखाल, बाबूराम, भवनाथ, सुरेन्द्र, गिरीन्द्र, विनोद, हाजरा, रामलाल, राम, नित्यगोपाल, मणि मल्लिक, गिरीश, सीती के महेन्द्र वैद्य आदि अनेक भक्तो का समागम हुआ है। कीर्तन प्रात.काल से ही चल रहा है। अब सुबह आठ बजे का समय होगा। मास्टर ने आकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने पास बैठने का इशारा किया।

कीर्तन सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो गये है। श्रीकृष्ण को गौएं चराने के लिए आने मे विलम्ब हो रहा है। कोई ग्वाला कह रहा है, 'यशोदा माई आने नही दे रही है।' बलराम जिद करके कह रहे है, 'मै सीग बजाकर कन्हैया को ले आऊँगा।' बलराम का प्रेम अगाध है।

कीर्तनकार फिर गा रहे है। श्रीकृष्ण बंसरी बजा रहे हैं। गोपियाँ और गोप बालकगण बंसरी की ध्वनि सुन रहे है और उनमे अनेकानेक भाव उठ रहे है।

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठकर कीर्तन सुन रहे हैं। एकाएक नरेन्द्र की ओर उनकी दृष्टि पड़ी। नरेन्द्र पास ही बैठे थे। श्रीरामकृष्ण खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। नरेन्द्र के घुटने को एक पैर से छूकर खड़े हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ होकर फिर बैठे। नरेन्द्र सभा से उठकर चले गये। कीर्तन चल रहा है।

श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम से धीरे धीरे कहा, 'कमरे मे खीर है, जाकर नरेन्द्र को दे दो।'

क्या श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के भीतर साक्षात् नारायण का दर्शन कर रहे है?

कीर्तन के बाद श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे आये है और नरेन्द्र को प्यार के साथ

मिठाई खिला रहे है।

गिरीश का विश्वास है कि ईश्वर श्रीरामकृष्ण के रूप मे अवतीर्ण हुए हैं।

गिरीश (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – आपके सभी काम श्रीकृष्ण की तरह है। श्रीकृष्ण जैसे यशोदा के पास तरह तरह के ढोंग करते थे।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, श्रीकृष्ण अवतार जो है। नरलीला मे उसी प्रकार होता है। इधर गोवर्धन पहाड़ को धारण किया था, और उधर नन्द के पास दिखा रहे है कि पीढ़ा उठाने मे भी कष्ट हो रहा है।

गिरीश – समझा। आपको अब समझ रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हैं। दिन के ग्यारह बजे का समय होगा। राम आदि भक्तगण श्रीरामकृष्ण को नवीन वस्त्र पहनायेंगे। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "नही, नही।" एक अंग्रेजी पढ़े हुए व्यक्ति को दिखाकर कह रहे है, "वे क्या कहेंगे!" भक्तो के बहुत जिद करने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "तुम लोग कह रहे हो, अच्छा लाओ, पहन लेता हूँ।'

भक्तगण उसी कमरे मे श्रीरामकृष्ण के भोजन आदि की तैयारी कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को जरा गाने के लिए कह रहे हैं।

नरेन्द्र गा रहे है –

(भावार्थ) – "माँ, घने अन्धकार मे तेरा रूप चमकता है। इसीलिए योगी पहाड़ की गुफा मे निवास करता हुआ ध्यान लगाता है। अनन्त अन्धकार की गोदी मे, महानिर्वाण के हिल्लोल मे चिर शान्ति का परिमल लगातार बहता जा रहा है। महाकाल का रूप धारण कर, अन्धकार का वस्त्र पहन, माँ, समाधिमन्दिर मे अकेली बैठी हुई तुम कौन हो? तुम्हारे अभय चरणकमलो मे प्रेम की बिजली चमकती है, तुम्हारे चिन्मय मुखमण्डल पर हास्य शोभायमान है।"

नरेन्द्र ने ज्योही गाया, 'माँ समाधि-मन्दिर मे अकेली बैठी हुई तुम कौन हो?'– उसी समय श्रीरामकृष्ण बाह्यज्ञान-शून्य होकर समाधिमग्न हो गये। बहुत देर बाद समाधि भंग होने पर भक्तो ने श्रीरामकृष्ण को भोजन के लिए आसन पर बैठाया। अभी भी भाव का आवेश है। भात खा रहे हैं, परन्तु दोनो हाथ से! भवनाथ से कह रहे है, "तू खिला दे!" भाव का आवेश अभी है, इसीलिए स्वयं खा नही पा रहे है। भवनाथ उन्हे खिला रहे है।

श्रीरामकृष्ण ने बहुत कम भोजन किया। भोजन के बाद राम कह रहे है, "नित्यगोपाल आपकी जूठी थाली मे खायेगा।"

श्रीरामकृष्ण – मेरी जूठी थाली मे? क्यो?

राम – क्यो क्या हुआ? भला आपकी जूठी थाली मे क्यो न खाये?

नित्यगोपाल को भावमग्न देखकर श्रीरामकृष्ण ने एक-दो कौर खिला दिये।

अब कोन्नगर के भक्तगण नाव पर सवार होकर आये है। उन्होने कीर्तन करते हुए श्रीरामकृष्ण के कमरे मे प्रवेश किया। कीर्तन के बाद वे जलपान करने के लिए बाहर गये। नरोत्तम कीर्तनकार श्रीरामकृष्ण के कमरे मे बैठे है। श्रीरामकृष्ण नरोत्तम आदि से कह रहे है, "इनका मानो नाव चलानेवाला गाना।" गाना ऐसा होना चाहिए कि सभी नाचने लगे। इस प्रकार के गाने गाने चाहिए -

(भावार्थ) - " 'ओ रे! गौर-प्रेम की हिलोर से सारा नदिया शहर झूम रहा है।'

(नरोत्तम के प्रति) - "उसके साथ यह कहना होता है -

(भावार्थ) - "ओ रे! 'हरिनाम कहते ही जिनके आँसू झरते है, वे दोनो भाई आये है। ओ रे! जो मार खाकर प्रेम देना चाहते है, वे दो भाई आये है। ओ रे, जो स्वयं रोकर जगत् को रुलाते है, वे दो भाई आये है। ओ रे! जो स्वयं मतवाले बनकर दुनिया को मतवाली बनाते है, वे दो भाई आये है। ओ रे! जो चण्डाल तक को गोदी मे उठा लेते है, वे दो भाई आये है।।"

"फिर यह भी गाना चाहिए -

(भावार्थ) - "हे प्रभो, गौर निताई, तुम दोनो भाई परम दयालु हो। हे नाथ, यही सुनकर मैं आया हूं, सुना है कि तुम चण्डाल तक को गोदी मे उठा लेते हो, और गोदी मे उठाकर उसे हरि-नाम करने को कहते हो।"

(२)

भक्तों के साथ वार्तालाप

अब भक्तगण प्रसाद पा रहे है। चिउड़ा, मिठाई आदि अनेक प्रकार के प्रसाद पाकर वे तृप्त हुए। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है, "मुखर्जियो को नही कहा था। सुरेन्द्र से कहो, बाऊलो (गवैयो) को खिला दे।"

श्री बिपिन सरकार आये है। भक्तो ने कहा, "इनका नाम बिपिन सरकार है।" श्रीरामकृष्ण उठकर बैठे और विनीत भाव से बोले, "इन्हे आसन दो और पान दो।" उनसे कह रहे है, "आपके साथ बात न कर सका, आज बड़ी भीड़ है।"

गिरीन्द्र को देखकर श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम से कहा, "इन्हे एक आसन दो।" नित्यगोपाल को जमीन पर बैठा देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "उसे भी एक आसन दो।"

सीती के महेन्द्र वैद्य आये है। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए राखाल को इशारा कर रहे है, "हाथ दिखा लो।"

रामलाल से कह रहे है, "गिरीश घोष के साथ दोस्ती कर, तो थिएटर देख सकेगा।" (हँसी)

नरेन्द्र हाजरा महाशय से बरामदे मे बहुत देर तक बातचीत कर रहे थे। नरेन्द्र के पिता के देहान्त के बाद घर मे बड़ा ही कष्ट हो रहा है। अब नरेन्द्र कमरे के भीतर आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र के प्रति) – तू क्या हाजरा के पास बैठा था? तू विदेशी है, और वह विरही। हाजरा को भी डेढ़ हजार रूपयो की आवश्यकता है। (हँसी)

"हाजरा कहता है, 'नरेन्द्र मे सोलह आना सतोगुण आ गया है, परन्तु रजोगुण की जरा लाली है। मेरा विशुद्ध सत्त्व, सत्रह आना।' (सभी की हँसी)

"मै जब कहता हूँ, 'तुम केवल विचार करते हो, इसीलिए शुष्क हो', तो वह कहता है, 'मै सूर्य की सुधा पीता हूँ, इसीलिए शुष्क हूँ।'

"मै जब शुद्धा भक्ति की बात कहता हूं, जब कहता हूँ कि शुद्ध भक्त रुपया-पैसा, ऐश्वर्य कुछ भी नही चाहता, तो वह कहता है, 'उनकी कृपा की बाढ आने पर नदी तो भर जायेगी ही, फिर गढ़े-नाले भी अपने आप ही भर जायेगे। शुद्धा भक्ति भी होती है और षडैश्वर्य भी होते है। रुपये-पैसे भी होते है।' "

श्रीरामकृष्ण के कमरे मे जमीन पर नरेन्द्र आदि अनेक भक्त बैठे है, गिरीश भी आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश के प्रति) – मै नरेन्द्र को आत्मा स्वरूप मानता हूं। और मै उसका अनुगत हूं।

गिरीश – क्या कोई ऐसा है जिसके आप अनुगत नही भी है?

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – उसका है मर्द का भाव (पुरुषभाव) और मेरा औरत-भाव (प्रकृतिभाव)। नरेन्द्र का ऊँचा घर, अखण्ड का घर है।

गिरीश तम्बाकू पीने के लिए बाहर गये।

नरेन्द्र (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – गिरीश घोष के साथ वार्तालाप हुआ, बहुत बड़े आदमी है। आपकी चर्चा हो रही थी।

श्रीरामकृष्ण – क्या चर्चा?

नरेन्द्र – आप लिखना-पढ़ना नही जानते है, हम सब पण्डित है, यही सब बाते हो रही थी। (हँसी)

मणि मल्लिक (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – आप बिना पढ़े पण्डित है।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र आदि के प्रति) – सच कहता हूँ, मुझे इस बात का जरा भी दु:ख नही होता कि मैने वेदान्त आदि शास्त्र नही पढ़े। मै जानता हूँ, वेदान्त का सार है – 'ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है'। फिर गीता का सार क्या है? गीता का दस बार उच्चारण करने पर जो होता है, अर्थात् त्यागी, त्यागी!

"शास्त्र का सार श्रीगुरुमुख से जान लेना चाहिए। उसके बाद साधन-भजन। एक

आदमी को किसी ने पत्र लिखा था। पत्र पढ़ा भी न गया था कि खो गया। तब सब मिलकर ढूँढ़ने लगे। जब पत्र मिला, पढ़कर देखा, लिखा था – 'पाँच सेर सन्देश और एक धोती भेज दो।' पढ़कर उसने पत्र को फेंक दिया और पाँच सेर सन्देश और एक धोती का प्रबन्ध करने लगा। इसी प्रकार शास्त्रों का सार जान लेने पर फिर पुस्तकें पढ़ने की क्या आवश्यकता? अब साधन-भजन।"

अब गिरीश कमरे में आये हैं।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश के प्रति) – हाँ जी, मेरी बात तुम लोग सब क्या कह रहे थे? मैं खाता-पीता और मजे में रहता हूँ।

गिरीश – आपकी बात और क्या कहूँगा आप क्या साधु हैं?

श्रीरामकृष्ण – साधु-वाधु नहीं। सच ही तो मुझ में साधु-बोध नहीं है।

गिरीश – मजाक में भी आप से हार गया।

श्रीरामकृष्ण – मैं लाल किनारी की धोती पहनकर जयगोपाल सेन के बगीचे में गया था। केशव सेन वहाँ पर था। केशव ने लाल किनारी की धोती देखकर कहा, 'आज तो खूब रंग दीख रहा है! लाल किनारी की बड़ी बहार है।' मैंने कहा, 'केशव का मन भुलाना होगा, इसीलिए बहार लेकर आया हूँ।'

अब फिर नरेन्द्र का संगीत होगा। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से तानपूरा उतार देने के लिए कहा। नरेन्द्र बहुत देर से तानपूरे को बाँध रहे हैं। श्रीरामकृष्ण तथा सभी लोग अधीर हो गये हैं।

विनोद कह रहे हैं, "आज बाँधना होगा, गाना किसी दूसरे दिन होगा।" (सभी हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं और कह रहे हैं, "ऐसी इच्छा हो रही है कि तानपूरे को तोड़ डालूँ। क्या 'टंग टंग' – फिर 'ताना नाना तेरे नुम्' होगा।"

भवनाथ – संगीत के प्रारम्भ में ऐसी ही तंगी मालूम होती है।

नरेन्द्र (बाँधते बाँधते) – न समझने से ही ऐसा होता है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – देखो, हम सभी को उड़ा दिया!

नरेन्द्र गाना गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे सुन रहे हैं। नित्यगोपाल आदि भक्तगण जमीन पर बैठे सुन रहे हैं।

(भावार्थ) – (१) "ओ माँ, अन्तर्यामिनी, तुम मेरे हृदय में जाग रही हो, रात-दिन मुझे गोदी में लिये बैठी हो।"

(२) "गाओ रे आनन्दमयी का नाम, ओ मेरे प्राणों को आराम देनेवाली एकतन्त्री।"

(३) "माँ, घने अन्धकार में तेरा रूप चमकता है। इसीलिए योगी पहाड़ की गुफा

में रहकर ध्यान करता रहता है।"

श्रीरामकृष्ण भावविभोर होकर नीचे उतर आये हैं और नरेन्द्र के पास बैठे हैं। भावविभोर होकर बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – गाना गाऊँ? नहीं, नही। (नित्यगोपाल के प्रति) तू क्या कहता है? उद्दीपन के लिए सुनना चाहिए। उसके बाद क्या आया और क्या गया!

"उसने आग लगा दी, सो तो अच्छा है। उसके बाद चुप। अच्छा, मैं भी तो चुप हूँ, तू भी चुप रह।

"आनन्द-रस में मग्न होने से वास्ना!

"गाना गाऊँ? अच्छा, गाया भी जा सकता है। जल स्थिर रहने से भी जल है, और हिलने-डुलने पर भी जल है।"

नरेन्द्र को शिक्षा - ज्ञान-अज्ञान से परे रहो

नरेन्द्र पास बैठे हैं। उनके घर में कष्ट है, इसीलिए वे सदा ही चिन्तित रहते हैं। वे साधारण ब्राह्मसमाज में आते-जाते रहते हैं। अभी भी सदा ज्ञान-विचार करते हैं, वेदान्त आदि ग्रन्थ पढ़ने की बहुत ही इच्छा है। इस समय उनकी आयु तेईस वर्ष की होगी। श्रीरामकृष्ण एकदृष्टि से नरेन्द्र को देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर नरेन्द्र के प्रति) – तू तो 'ख' (आकाश की तरह) है, परन्तु यदि टैक्स[1] न रहता! (सभी की हँसी)

"कृष्णकिशोर कहा करता था, मैं 'ख' हूँ। एक दिन उसके घर जाकर देखता हूँ तो वह चिन्तित होकर बैठा है, अधिक बात नही कर रहा है। मैंने पूछा, 'क्या हुआ जी, इस तरह क्यों बैठे हो?' उसने कहा, 'टैक्सवाला आया था, कह गया, यदि रुपये न दोगे, तो घर का सब सामान नीलाम कर लेंगे। इसीलिए मुझे चिन्ता हुई है।' मैंने हँसते हँसते कहा, 'यह कैसी बात है जी, तुम तो 'ख' (आकाश) की तरह हो। जाने दो, सालों को सब सामान ले जाने दो, तुम्हारा क्या?'

"इसीलिए तुझे कहता हूँ, तू तो 'ख' है – इतनी चिन्ता क्यों कर रहा है? जानता है, श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा था, 'अष्टसिद्धि में से एक सिद्धि के रहते कुछ शक्ति हो सकती है, परन्तु मुझे न पाओगे।' सिद्धि द्वारा अच्छी शक्ति, बल, धन ये सब प्राप्त हो सकते हैं, परन्तु ईश्वर की प्राप्ति नही होती।

"एक और बात। ज्ञान-अज्ञान से परे रहो। कई कहते हैं, अमुक बड़े ज्ञानी हैं, पर वास्तव में ऐसा नहीं है। वशिष्ठ इतने बड़े ज्ञानी थे परन्तु पुत्रशोक से बेचैन हुए थे। तब लक्ष्मण ने कहा, 'राम, यह क्या आश्चर्य है! ये भी इतने शोकार्त है!' राम बोले, 'भाई,

---

[1] अर्थात् घर की चिन्ता।

जिसका ज्ञान है, उसका अज्ञान भी है; जिसको आलोक का बोध है, उसे अन्धकार का भी है; जिसे सुख का बोध है, उसे दु:ख का भी है; जिसे भले का बोध है, उसे बुरे का भी है। भाई, तुम दोनों से परे चले जाओ, सुख-दु:ख से परे जाओ, ज्ञान-अज्ञान से परे जाओ।' इसीलिए तुझे कहता हूँ, ज्ञान-अज्ञान से परे चला जा।''

(३)

गृहस्थ तथा दानधर्म। मनोयोग तथा कर्मयोग

श्रीरामकृष्ण फिर छोटे तखत पर आकर बैठे हैं। भक्तगण अभी भी जमीन पर बैठे हैं। सुरेन्द्र उनके पास बैठे है। श्रीरामकृष्ण उनकी ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि से देख रहे हैं और बातचीत के सिलसिले में उन्हें अनेकों उपदेश दे रहे है।

श्रीरामकृष्ण (सुरेन्द्र के प्रति) – बीच बीच में आते जाना। नागा कहा करता था, लोटा रोज रगड़ना चाहिए, नही तो मैला पड़ जायेगा। साधुसंग सदैव ही आवश्यक है।

"कामिनी-कांचन का त्याग संन्यासी के लिए है, तुम लोगो के लिए वह नहीं। तुम लोग बीच-बीच मे निर्जन में जाना और उन्हे व्याकुल होकर पुकारना। तुम लोग मन में त्याग करना।

"भक्त, वीर हुए बिना भगवान् तथा संसार दोनो ओर ध्यान नहीं रख सकता। जनक राजा साधन-भजन के बाद सिद्ध होकर संसार मे रहे थे। वे दो तलवारें घुमाते थे – ज्ञान और कर्म।''

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे हैं –

(भावार्थ) – ''यह संसार आनन्द की कुटिया है। यहाँ मैं खाता, पीता और मजा लूटता हूँ। जनक राजा महातेजस्वी थे। उन्हें किस बात की कमी थी! उन्होंने दोनो बातों को सँभालते हुए दूध पिया था।''

श्रीरामकृष्ण – ''तुम्हारे लिए चैतन्यदेव ने जो कहा था, जीवों पर दया, भक्तों की सेवा और नामसंकीर्तन।

"तुम्हें क्यो कह रहा हूँ? तुम 'हौस'* में काम कर रहे हो। अनेक काम करने पड़ते हैं, इसलिए कह रहा हूँ।

"तुम आफिस में झूठ बोलते हो, फिर भी तुम्हारी चीजें क्यों खाता हूँ? तुम दान, ध्यान जो करते हो। तुम्हारी जो आमदनी है उससे अधिक दान करते हो। बारह हाथ ककड़ी का तेरह हाथ बीज!

"कंजूस की चीज मैं नही खाता हूँ। उनका धन इतने प्रकारों से नष्ट हो जाता है –

* House – व्यापारी की दूकान

मामला-मुकदमा में, चोर-डकैतों से, डाक्टरों मे, फिर बदचलन लड़के सब धन उड़ा देते हैं, यही सब है।

"तुम जो दान, ध्यान करते हो, बहुत अच्छा है। जिनके पास धन है उन्हें दान करना चाहिए। कंजूस का धन उड़ जाता है। दाता के धन की रक्षा होती है, सत्कर्म में जाता है। कामारपुकुर में किसान लोग नाला काटकर खेत में जल लाते हैं। कभी कभी जल का इतना वेग होता है कि खेत का बाँध टूट जाता है और जल निकल जाता है, अनाज बरबाद हो जाता है; इसीलिए किसान लोग बाँध के बीच बीच में सूराख बनाकर रखते हैं; इसे 'घोघी' कहते हैं। जल थोड़ा थोड़ा करके घोघी मे से होकर निकल जाता है, तब जल के वेग से बाँध नहीं टूटता और खेत पर मिट्टी की परतें जम जाती हैं। उससे खेत उर्वर बन जाता है और बहुत अनाज पैदा होता है। जो दान, ध्यान करता है वह बहुत फल प्राप्त करता है, चतुर्वर्ग फल।"

भक्तगण सभी श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से दानधर्म की यह कथा एक मन से सुन रहे है।

सुरेन्द्र – मैं अच्छा ध्यान नहीं कर पाता। बीच बीच में 'माँ माँ' कहता हूँ। और सोते समय 'माँ माँ' कहते कहते सो जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – ऐसा होने से ही काफी है। स्मरण-मनन तो है न?

"मनोयोग और कर्मयोग। पूजा, तीर्थ, जीवसेवा आदि तथा गुरु के उपदेश के अनुसार कर्म करने का नाम है कर्मयोग। जनक आदि जो कर्म करते थे, उसका नाम भी कर्मयोग है। योगी लोग जो स्मरण-मनन करते हैं उसका नाम है मनोयोग।

"फिर कालीमन्दिर मे जाकर सोचता हूँ 'माँ, मन भी तो तुम हो!' इसीलिए शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि, शुद्ध आत्मा एक ही चीज है।"

सन्ध्या हो रही है। अनेक भक्त श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर घर लौट रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण पश्चिम के बरामदे में गये हैं। भवनाथ और मास्टर साथ हैं।

श्रीरामकृष्ण (भवनाथ के प्रति) – तू इतनी देर में क्यों आता है?

भवनाथ (हँसकर) – जी, पन्द्रह दिनों के बाद दर्शन करता हूँ। उस दिन आपने स्वयं ही रास्ते में दर्शन दिया। इसलिए फिर नहीं आया।

श्रीरामकृष्ण – यह कैसी बात है रे! केवल दर्शन मे क्या होता है? स्पर्शन, वार्तालाप ये सब भी तो चाहिए।

(४)

गिरीश आदि भक्तों के साथ प्रेमानन्द में

सायंकाल हुआ। धीरे धीरे मन्दिर मे आरती का शब्द सुनायी देने लगा। आज फाल्गुन की शुक्ला अष्टमी तिथि; छः-सात दिनो के बाद पूर्णिमा के दिन होली महोत्सव होगा।

देवमन्दिर का शिखर, प्रांगण, बगीचा, वृक्षो के ऊपर के भाग चन्द्रकिरण मे मनोहर रूप धारण किये हुए है। गंगाजी इस समय उत्तर की ओर बह रही है, चाँदनी मे चमक रही है, मानो आनन्द से मन्दिर के किनारे से उत्तर की ओर प्रवाहित हो रही है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे छोटे तखत पर बैठकर चुपचाप जगन्माता का चिन्तन कर रहे है।

उत्सव के बाद अभी तक दो-एक भक्त रह गये है। नरेन्द्र पहले ही चले गये।

आरती समाप्त हुई। श्रीरामकृष्ण भावविभोर होकर दक्षिण-पूर्व के लम्बे बरामदे पर धीरे धीरे टहल रहे है। मास्टर भी वही खड़े खड़े श्रीरामकृष्ण की ओर देख रहे है। श्रीरामकृष्ण एकाएक मास्टर को सम्बोधित कर कह रहे है, "अहा, नरेन्द्र का क्या ही गाना है!"

मास्टर – जी, 'घने अन्धकार मे', वह गाना!

श्रीरामकृष्ण – हाँ, उस गाने का बहुत गम्भीर अर्थ है। मेरे मन को मानो अभी तक खींचकर रखा है।

मास्टर – जी, हाँ।

श्रीरामकृष्ण – अन्धकार मे ध्यान, यह तन्त्र का मत है। उस समय सूर्य का आलोक कहाँ है?

श्री गिरीश घोष आकर खड़े हुए। श्रीरामकृष्ण। गाना गा रहे है।

(भावार्थ) – "ओ रे! क्या मेरी माँ काली है? ओ रे! कालरूपी दिगम्बरी हृत्पद्म को आलोकित करती है।"

श्रीरामकृष्ण मतवाले होकर खड़े खड़े गिरीश के शरीर पर हाथ रखकर गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "गया, गंगा, प्रभास, काशी, कांची आदि कौन चाहता है। ..."

(भावार्थ) – "इस बार मैने अच्छा सोचा है। अच्छे भाववाले से भाव सीखा है। माँ, जिस देश मे रात्रि नही है, उस देश का एक आदमी पाया हूँ; क्या दिन और क्या सन्ध्या – सन्ध्या को भी मैंने वन्ध्या बना डाली है। नूपुर में ताल मिलाकर उस ताल का एक गाना सीखा है, वह ताल 'ताध्रिम ताध्रिम' रव से बज रहा है। मेरी नीद खुल गयी है, क्या मै फिर सो सकता हूँ? मै याग-योग मे जाग रहा हूँ! माँ, योगनिद्रा तुझे देकर मैने नीद को

सुला दिया है। प्रसाद कहता है, मैंने भुक्ति और मुक्ति इन दोनो को सिर पर रखा है। काली ही ब्रह्म है इस मर्म को जानकर मैने धर्म और अधर्म दोनो को त्याग दिया है।''

गिरीश को देखते देखते मानो श्रीरामकृष्ण के भाव का उल्लास और भी बढ़ रहा है। वे खड़े खड़े फिर गा रहे है –

(भावार्थ) – ''मैने अभय पद मे प्राणो को सौप दिया है ...।''

श्रीरामकृष्ण भाव मे मस्त होकर फिर गा रहे है –

(भावार्थ) – ''मै देह को संसाररूपी बाजार मे बेचकर श्रीदुर्गानाम खरीद लाया हूं।''

श्रीरामकृष्ण (गिरीश आदि भक्तो के प्रति) – '' 'भाव से शरीर भर गया, ज्ञान नष्ट हो गया।'

''उस ज्ञान का अर्थ है बाहर का ज्ञान। तत्त्वज्ञान, ब्रह्मज्ञान यही सब चाहिए।

''भक्ति ही सार है। सकाम भक्ति भी है और निष्काम भक्ति भी। शुद्धा भक्ति, अहेतुकी भक्ति – यह भी है। केशव सेन आदि अहेतुकी भक्ति नही जानते थे। कोई कामना नही, केवल ईश्वर के चरणकमलो मे भक्ति!

''एक और है – उर्जिता भक्ति। मानो भक्ति उमड रही है। भाव मे हँसता-नाचता-गाता है, जैसे चैतन्यदेव। राम ने लक्ष्मण से कहा, 'भाई, जहाँ पर उर्जिता भक्ति हो, वही पर जानो, मै स्वयं विद्यमान हूँ।' ''

श्रीरामकृष्ण क्या अपनी स्थिति का इशारा कर रहे है? क्या श्रीरामकृष्ण चैतन्यदेव की तरह अवतार है? जीव को भक्ति सिखाने के लिए अवतीर्ण हुए है?

गिरीश – आपकी कृपा होने से ही सब कुछ होता है। मै क्या था, क्या हुआ हूं!

श्रीरामकृष्ण – अजी, तुम्हारा संस्कार था, इसीलिए हो रहा है। समय हुए बिना कुछ नही होता। जब रोग अच्छा होने को हुआ, तो वैद्य ने कहा, 'इस पत्ते को काली मिर्च के साथ पीसकर खाना।' उसके बाद रोग दूर हो गया। अब काली मिर्च के साथ दवा खाकर अच्छा हुआ या यो ही रोग ठीक हो गया, कौन कह सकता है?

''लक्ष्मण ने लव-कुश से कहा, 'तुम बच्चे हो, श्रीरामचन्द्र को नही जानते। उनके पदस्पर्श से अहिल्या पत्थर से मानवी बन गयी।' लव-कुश बोले, 'महाराज, हम सब जानते है; सब सुना है। पत्थर से जो मानवी बनी, यह मुनि का वचन था। गौतम मुनि ने कहा था कि त्रेतायुग मे श्रीरामचन्द्र उस आश्रम के पास से होकर जायेगे, उनके चरणस्पर्श से तुम फिर मानवी बन जाओगी। सो अब राम के गुण से बनी या मुनि के वचन से, कौन कह सकता है?'

''सब ईश्वर की इच्छा से हो रहा है। यहाँ पर यदि तुम्हे चैतन्य प्राप्त हो, तो मुझे निमित्त मात्र जानना। चन्दामामा सभी का मामा है। ईश्वर की इच्छा से सब कुछ हो

रहा है।''

गिरीश (हँसते हुए) – ईश्वर की इच्छा से न? मैं भी तो यही कह रहा हूँ। (सभी की हँसी)

श्रीरामकृष्ण (गिरीश के प्रति) – सरल बनने पर ईश्वर का शीघ्र ही लाभ होता है। जानते हो कितनों को ज्ञान नहीं होता? एक – जिसका मन टेढ़ा है, सरल नहीं है। दूसरा – जिसे छुआछूत का रोग है, और तिसरा जो संशयात्मा है।

श्रीरामकृष्ण नित्यगोपाल की भावावस्था की प्रशंसा कर रहे है।

अभी तक तीन-चार भक्त उस दक्षिण-पूर्ववाले लम्बे बरामदे मे श्रीरामकृष्ण के पास खड़े है और सब कुछ सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण परमहस की स्थिति का वर्णन कर रहे हैं। कह रहे है, ''परमहंस को सदा यही बोध होता है कि ईश्वर सत्य हैं, शेष सभी अनित्य। हंस में जल से दूध को अलग निकाल लेने की शक्ति है। उसकी जिह्वा में एक प्रकार का खट्टा रस रहता है; दूध और जल यदि मिला हुआ रहे तो उस रस के द्वारा दूध अलग और जल अलग हो जाता है। परमहंस के मुख मे भी खट्टा रस है, प्रेमाभक्ति। प्रेमाभक्ति रहने से ही नित्य-अनित्य का विवेक होता है, ईश्वर की अनुभूति होती है, ईश्वर का दर्शन होता है।''

□□□

परिच्छेद १०७

गिरीश के मकान पर

(१)

ज्ञान-भक्ति-समन्वय का प्रसंग

श्रीरामकृष्ण गिरीश घोष के बसुपाडावाले मकान मे भक्तो के साथ बैठकर ईश्वर सम्बन्धी वार्तालाप कर रहे है। दिन के तीन बजे का समय है। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। आज बुधवार है – फाल्गुन शुक्ला एकादशी – २५ फरवरी १८८५ ई । पिछले रविवार को दक्षिणेश्वर मन्दिर मे श्रीरामकृष्ण का जन्म महोत्सव हो गया है। श्रीरामकृष्ण गिरीश के घर होकर स्टार थिएटर मे 'वृषकेतु' नाटक देखने जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण थोडी देर पहले ही पधारे है। कामकाज समाप्त करके आने मे मास्टर को थोड़ा विलम्ब हुआ। उन्होने आकर ही देखा, श्रीरामकृष्ण उत्साह के साथ ब्रह्मज्ञान और भक्तितत्त्व के समन्वय की चर्चा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश आदि भक्तो के प्रति) – जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति – जीव की ये तीन स्थितियाँ होती है।

"जो लोग ज्ञान का विचार करते है वे तीनो स्थितियो को उडा देते है। वे कहते है कि ब्रह्म तीनो स्थितियों से परे है – स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनो शरीरो से परे है, सत्त्व, रज, तम – तीनो गुणो से परे है। सभी माया है, जैसे दर्पण मे परछाई पडती है। प्रतिबिम्ब कोई वस्तु नही है। ब्रह्म ही वस्तु है, बाकी सब अवस्तु।

"ब्रह्मज्ञानी और भी कहते है, देहात्मबुद्धि रहने से ही दो दिखते है। परछाई भी सत्य प्रतीत होती है। वह बुद्धि लुप्त होने पर 'सोऽहम्' – 'मै ही वह ब्रह्म हूँ' – यह अनुभूति होती है।"

एक भक्त – तो फिर, क्या हम सब बुद्धि-विचार का मार्ग ग्रहण करे?

श्रीरामकृष्ण – विचार-पथ भी है – वेदान्तवादियो का पथ। और एक पथ है – भक्तिपथ। भक्त यदि ब्रह्मज्ञान के लिए व्याकुल होकर रोता है, तो वह उसे भी प्राप्त कर लेता है। ज्ञानयोग और भक्तियोग।

"दोनो पथो से ब्रह्मज्ञान हो सकता है। कोई कोई ब्रह्मज्ञान के बाद भी भक्ति लेकर

रहते है – लोकशिक्षा के लिए; जैसे अवतार आदि।

"देहात्मबुद्धि, 'मै'-बुद्धि आसानी से नहीं जाती। उनकी कृपा से समाधिस्थ होने पर जाती है – निर्विकल्प समाधि, जड़ समाधि।

"समाधि के बाद अवतार आदि का 'मैं' फिर लौट आता है – 'विद्या का मैं', 'भक्त का मै'। इस 'विद्या के मै' से लोकशिक्षा होती है। शंकराचार्य ने 'विद्या के मैं' को रखा था।

"चैतन्यदेव इसी 'मै द्वारा भक्ति का आस्वादन करते थे, भक्ति-भक्त लेकर रहते थे, ईश्वर की बाते करते थे, नाम संकीर्तन करते थे।

'मै' तो सरलता से नही जाता, इसीलिए भक्त जाग्रत्, स्वप्न आदि स्थितियों को उड़ा नही देता। वह सभी स्थितियों को मानता है, सत्त्व-रज-तम तीन गुण भी मानता है। भक्त देखता है, वे ही चौबीस तत्त्व बने हुए है। जीव-जगत् बने हुए हैं। फिर वह देखता है कि वे साकार चिन्मय रूप मे दर्शन देते हैं।

"भक्त विद्यामाया की शरण लेता है। साधुसंग, तीर्थ, ज्ञान, भक्ति, वैराग्य – इन सब की शरण लेकर रहता है। वह कहता है, यदि 'मैं' सरलता से चला न जाय, तो रहे साला 'दास' बनकर, 'भक्त' बनकर।

"भक्त का भी एकाकार ज्ञान होता है। वह देखता है, ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ भी नही है। स्वप्न की तरह नही कहता, परन्तु कहता है, वे ही ये सब बने हुए हैं। मोम के बगीचे में सभी कुछ मोम का है। परन्तु है अनेक रूप मे।

"परन्तु पक्की भक्ति होने पर इस प्रकार बोध होता है। अधिक पित्त जमने पर पीला रोग होता है। तब मनुष्य देखता है कि सभी पीले हैं। श्रीमती राधा ने श्यामसुन्दर का चिन्तन करते करते सभी श्याममय देखा और अपने को भी श्याम समझने लगीं। सीसा यदि अधिक दिन तक पारे के तालाब में रहे तो वह भी पारा बन जाता है। 'कुमुड़' कीड़े को सोचते सोचते झींगुर निश्चल हो जाता है, हिलता नही, अन्त में 'कुमुड़' कीड़ा ही बन जाता है। भक्त भी उनका चिन्तन करते करते अहंशून्य बन जाता है। फिर देखता है 'वह ही मैं हूँ, मैं ही वह हूँ।'

"झींगुर जब 'कुमुड़' कीड़ा बन जाता है, तब सब कुछ हो गया। तभी मुक्ति होती है।

"जब तक उन्होंने मैं-पन को रखा, तब तक एक भाव का सहारा लेकर उन्हें पुकारना पड़ता है – शान्त, दास्य, वात्सल्य – ये सब।

"मैं दासीभाव में एक वर्ष तक था – ब्रह्ममयी की दासी। औरतों का कपड़ा, ओढ़ना – यह सब पहना करता था, फिर नथ भी पहनता था। औरतों के भाव में रहने से काम पर विजय प्राप्त होती है।

"उस आद्यशक्ति की पूजा करनी होती है, उन्हें प्रसन्न करना होता है। वे ही औरतो का रूप धारण करके वर्तमान हैं; इसीलिए मेरा मातृभाव है।

"मातृभाव अति शुद्ध भाव है। तन्त्र में वामाचार की बात भी है; परन्तु वह ठीक नहीं; उससे पतन होता है। भोग रखने से ही भय है।

"मातृभाव मानो निर्जला एकादशी है; किसी भोग की गन्ध नहीं है। दूसरी है फल-मूल खाकर एकादशी; और तीसरी, पूरी मिठाई खाकर एकादशी। मेरी निर्जला एकादशी है, मैंने मातृभाव से सोलह वर्ष की कुमारी की पूजा की थी। देखा, स्तन मातृस्तन है, योनि मातृयोनि है।

"यह मातृभाव – साधना की अन्तिम बात है। 'तुम माँ हो, मैं तुम्हारा बालक हूँ।' यही अन्तिम बात है।

"संन्यासी की निर्जला एकादशी है; यदि संन्यासी भोग रखता है; तभी भय है। कामिनी-कांचन भोग हैं। जैसे थूककर फिर उसी थूक को चाट लेना। रुपये-पैसे, मान-इज्जत, इन्द्रियसुख – ये सब भोग हैं। संन्यासी का स्त्रीभक्त के साथ बैठना या वार्तालाप करना भी ठीक नहीं है – इसमें अपनी भी हानि और दूसरों की भी हानि है। इससे दूसरे लोगों को शिक्षा नहीं मिलती, लोकशिक्षा नहीं होती। संन्यासी का शरीर-धारण लोकशिक्षा के लिए है।

"औरतों के साथ बैठना या अधिक देर तक वार्तालाप करना – इसे भी रमण कहा है। रमण आठ प्रकार के हैं। कोई औरतों की बातें सुन रहा है; सुनते सुनते आनन्द हो रहा है, – यह एक प्रकार का रमण है। औरतों की बात कह रहा है(कीर्तन में) – यह एक प्रकार का रमण है। औरतों के साथ एकान्त में गुपचुप बातचीत कर रहा है – यह एक प्रकार का रमण है। औरतों की कोई चीज पास रख ली है, आनन्द हो रहा है – यह प्रकार है। स्पर्श करना भी एक प्रकार का रमण है; इसीलिए गुरुपत्नी यदि युवती हो तो पादस्पर्श नहीं करना चाहिए। संन्यासियों के लिए ये सब नियम हैं।

"संसारियों की अलग बात है। वे दो-एक पुत्र होने पर भाईबहन की तरह रहें। उनके लिए अन्य सात प्रकार के रमण से उतना दोष नहीं है।

"गृहस्थ के ऋण हैं। देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण; फिर स्त्रीऋण भी है – एक दो बच्चे होना और सती हो तो उसका प्रतिपालन करना।

"संसारी लोग समझ नहीं सकते कि कौन अच्छी स्त्री है और कौन बुरी स्त्री; कौन विद्याशक्ति और कौन अविद्याशक्ति। जो अच्छी स्त्री है, विद्याशक्ति है, उसमें काम, क्रोध आदि कम होता है, नींद कम होती है। वह पति के मस्तक को दूर ठेल देती है। जो विद्याशक्ति है उसमें स्नेह, दया, भक्ति, लज्जा आदि होते हैं। वह सभी की सेवा करती है, वात्सल्य भाव से; और पति की भगवान् में भक्ति बढ़ाने का यत्न करती है। अधिक

खर्च नही करती, कही पति को अधिक श्रम न करना पड़े, कहीं ईश्वर के चिन्तन मे विघ्न न हो।

"फिर मर्दानी स्त्रियो के भी लक्षण हैं। खराब लक्षण – टेढ़ी धँसी हुई आँखे, बिल्ली जैसी आँखे, हड्डियाँ उभरी हुई, बछड़े जैसे गाल।"

गिरीश – हमारे उद्धार का उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – भक्ति ही सार है। फिर भक्ति का सत्त्व, भक्ति का रज, भक्ति का तम भी है।

"भक्ति का सत्त्व है दीन-हीन भाव; भक्ति का तम मानो डाका पड़ने का भाव है – मै उनका काम कर रहा हूँ, मुझे फिर पाप कैसा? तुम मेरी अपनी माँ हो, दर्शन देना ही होगा।"

गिरीश (हँसते हुए) – भक्ति का तम आप ही तो सिखाते है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – परन्तु उनके दर्शन होने का लक्षण है। समाधी होती हैं। समाधि पाँच प्रकार की होती है। (१) चीटी की गति – महावायु चीटीं की तरह उठती है। (२) मछली की गति। (३) तिर्यक् गति। (४) पक्षी की गति – जिस प्रकार पक्षी एक शाखा से दूसरी शाखा पर जाता है। (५) कपिवत् या बन्दर की गति – मानो महावायु कूदकर माथे पर उठ गयी और समाधि हो गयी।

"और भी दो प्रकार की समाधि है। एक – स्थित समाधि, एकदम बाह्यशून्य: बहुत देर तक, सम्भव है, कई दिनो तक रहे। और दूसरी – उन्मना समाधि, एकाएक मन को चारों ओर से समेट कर ईश्वर मे लगा देना।

(मास्टर के प्रति) "तुमने यह समझा है?"

मास्टर – जी हाँ।

गिरीश – क्या साधना द्वारा उन्हे प्राप्त किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण – लोगो ने अनेक प्रकार से उन्हे प्राप्त किया है। किसी ने अनेक तपस्या, साधन-भजन करके प्राप्त किया है, ये है साधनसिद्ध। कोई जन्म से सिद्ध है, जैसे नारद शुकदेव आदि; इन्हे कहते है नित्यसिद्ध। दूसरे है अकस्मात सिद्ध, जिन्होने एकाएक प्राप्त कर लिया है; जैसे कोई आशा न थी। पर एकाएक नन्द बसु की तरह धन मिल गया।

"और कुछ लोग हैं स्वप्नसिद्ध और कृपासिद्ध। यह कहकर श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर होकर गाना गा रहे है।

(भावार्थ) – "क्या श्यामारूप। धन को सभी लोग प्राप्त करते है! अबोध मन नही समझता है, यह क्या बात है!" ...

(२)

गिरीश का शान्तभाव। कलि में शूद्र की भक्ति और मुक्ति

श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर भावाविष्ट हैं। गिरीश आदि भक्तगण सामने बैठे हैं। कुछ दिन पहले स्टार थिएटर में गिरीश ने अनेक बातें बतायी थीं; इस समय शान्त भाव है।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश के प्रति) – तुम्हारा यह भाव बहुत अच्छा है – शान्तभाव। माँ से इसीलिए कहा था, 'माँ', उसे शान्त कर दो, मुझे ऐसा-वैसा न कहे।'

गिरीश (मास्टर के प्रति) – न जाने किसने मेरी जीभ को दबाकर पकड़ लिया है; मुझे बात करने नही दे रहा है।

श्रीरामकृष्ण अभी भी भावमग्न हैं, अन्तर्मुख। बाहर के व्यक्ति, वस्तु, धीरे-धीरे मानो सभी को भूलते जा रहे हैं। जरा स्वस्थ होकर मन को उतार रहे हैं। भक्तों को फिर देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर को देखकर) – ये सब वहाँ पर (दक्षिणेश्वर में) जाते हैं, – जाते हैं तो जायें, माँ सब कुछ जानती हैं।

(पड़ोसी बालक के प्रति) – क्यों जी, तुम क्या समझते हो? मनुष्य का क्या कर्तव्य है?

सभी चुप हैं। क्या श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं कि ईश्वर की प्राप्ति ही जीवन का उद्देश्य है?

श्रीरामकृष्ण (नारायण के प्रति) – क्या तू पास होना नहीं चाहता? अरे सुन, जो पाशमुक्त हो जाता है वह शिव बन जाता है और जो पाशबद्ध रहता है वह जीव है।*

श्रीरामकृष्ण अभी भावमग्न हैं। पास ही ग्लास में जल रखा था, उन्होंने उसका पान किया। वे अपने आप कह रहे हैं, "कहाँ, भाव में तो मैंने जल पी लिया!"

अभी सायंकाल नहीं हुआ। श्रीरामकृष्ण गिरीश के भाई अतुल के साथ बातचीत कर रहे हैं। अतुल भक्तों के साथ सामने ही बैठे हैं। एक ब्राह्मण पड़ोसी भी बैठे हैं। अतुल हाईकोर्ट में वकील हैं।

श्रीरामकृष्ण (अतुल के प्रति) – आप लोगों से यही कहता हूँ, आप दोनों करें, संसार धर्म भी करें और जिससे भक्ति हो वह भी करें।

ब्राह्मण पड़ोसी – क्या ब्राह्मण न होने पर मनुष्य सिद्ध होता है?

श्रीरामकृष्ण – क्यों? कलियुग में शूद्र की भक्ति की कथाएँ हैं। शबरी, रैदास, गुहल चण्डाल, – ये सब हैं।

नारायण – (हँसते हुए) – ब्राह्मण, शूद्र सब एक हैं।

---

* बँगला मे 'पास' और 'पाश' दोनों का उच्चारण एक जैसा किया जाता है।

ब्राह्मण – क्या एक जन्म मे होता है?

श्रीरामकृष्ण – उनकी दया होने पर क्या नही होता! हजार वर्ष के अन्धकारपूर्ण कमरे मे बत्ती लाने पर क्या थोड़ा थोडा करके अन्धकार जाता है? एकदम रोशनी हो जाती है!

(अतुल के प्रति) – "तीव्र वैराग्य चाहिए – जैसी नंगी तलवार! ऐसा वैराग्य होने पर स्वजन काले सॉप जैसे लगते है; घर कुआँ-सा प्रतीत होता है।

"और अन्तर से व्याकुल होकर उन्हे पुकारना चाहिए। अन्तर की पुकार वे अवश्य सुनेंगे।"

सब चुपचाप हैं। श्रीरामकृष्ण ने जो कुछ कहा, एकाग्र चित्त से सुनकर सभी उस पर चिन्तन कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (अतुल के प्रति) – क्यो, वैसी दृढ़ता – व्याकुलता – नही होती?

अतुल – मन कहाँ ईश्वर मे रह पाता है?

श्रीरामकृष्ण – अभ्यासयोग! प्रतिदिन उन्हे पुकारने का अभ्यास करना चाहिए। एक दिन मे नही होता। रोज पुकारते पुकारते व्याकुलता आ जाती है।

"रात-दिन केवल विषय-कर्म करने पर व्याकुलता कैसे आयेगी? यदु मल्लिक शुरू शुरू मे ईश्वर की बाते अच्छी तरह सुनता था, स्वयं भी कहता था। आजकल अब उतना नही कहता। रात-दिन चापलूसो को लेकर बैठा रहता है, केवल विषय की बाते!"

सायंकाल हुआ। कमरे मे बत्ती जलायी गयी है। श्रीरामकृष्ण देवताओ के नाम ले रहे है, गाना गा रहे है और प्रार्थना कर रहे है।

कह रहे है, "हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल"; फिर "राम, राम, राम", फिर "नित्यलीलामयी, ओ माँ! उपाय बता दे, माँ!", "शरणागत, शरणागत, शरणागत"।

गिरीश को व्यस्त देखकर श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर चुप रहे। तेजचन्द्र से कह रहे है, "तू जरा पास आकर बैठ।"

तेजचन्द्र पास बैठे। थोड़ी देर बाद मास्टर से कान मे कह रहे है, "मुझे जाना है।"

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – क्या कह रहा है?

मास्टर – घर जाना है – यही कह रहा है।

श्रीरामकृष्ण – मै इन्हे इतना क्यो चाहता हूँ? ये निर्मल पात्र है – विषयबुद्धि प्रविष्ट नही हुई है। विषयबुद्धि रहने पर उपदेशो को धारण नही कर सकते। नये बर्तन में दूध रखा जा सकता है, दही के बर्तन मे दूध रखने से खराब हो जाता है।

"जिस कटोरी मे लहसुन घोला हो, उस कटोरी को चाहे हजार बार धो डालो, लहसुन की गन्ध नही जाती।"

(३)

श्रीरामकृष्ण का स्टार थिएटर में देखना 'वृषकेतु' नाटक; नरेन्द्र आदि के साथ

श्रीरामकृष्ण 'वृषकेतु' नाटक देखेंगे। बीडन स्ट्रीट पर जहाँ बाद में मनोमोहन थिएटर हुआ, पहले वहाँ स्टार थिएटर था। श्रीरामकृष्ण थिएटर में आकर बाक्स में दक्षिण की ओर मुँह करके बैठे। मास्टर आदि भक्तगण पास ही बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – नरेन्द्र आया है?

मास्टर – जी हाँ।

अभिनय हो रहा है। कर्ण और पद्मावती ने आरी को दोनों ओर से पकड़कर वृषकेतु का बलिदान किया। पद्मावती ने रोते रोते मांस को पकाया। वृद्ध ब्राह्मण अतिथि आनन्द मनाते हुए कर्ण से कह रहे हैं, "अब आओ, हम एक साथ बैठकर पका हुआ मांस खायें।" कर्ण कह रहे हैं, "यह मुझसे न होगा। पुत्र का मांस खा न सकूँगा।"

एक भक्त ने सहानुभूति प्रकट करके धीरे से आर्तनाद किया। साथ ही श्रीरामकृष्ण ने भी दु:ख प्रकट किया।

खेल समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण रंगमंच के विश्रामगृह मे आकर उपस्थित हुए। गिरीश, नरेन्द्र आदि भक्तगण बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण कमरे मे जाकर नरेन्द्र के पास खड़े हुए और बोले, "मैं आया हूँ।"

श्रीरामकृष्ण बैठे। अभी भी वृन्द वाद्यों का संगीत सुनायी दे रहा है।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति) – यह बाजा सुनकर मुझे आनन्द हो रहा है। वहाँ पर (दक्षिणेश्वर में) शहनाई बजती थी, मैं भावमग्न हो जाता था। एक साधु मेरी स्थिति देखकर कहा करता था, 'ये सब ब्रह्मज्ञान के लक्षण हैं।'

वाद्य बन्द होने पर श्रीरामकृष्ण फिर बात कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश के प्रति) -- यह तुम्हारा थिएटर है या तुम लोगों का?

गिरीश – जी, हम लोगों का।

श्रीरामकृष्ण – 'हम लोगों का' शब्द ही अच्छा है। 'मेरा' कहना ठीक नहीं। कोई कोई कहता है 'मैं खुद आया हूँ।' ये सब बातें हीनबुद्धि अहंकारी लोग कहते हैं।

नरेन्द्र – सभी कुछ थिएटर है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, हाँ, ठीक। परन्तु कहीं विद्या का खेल है, कही अविद्या का।

नरेन्द्र – सभी विद्या के खेल हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, हाँ; परन्तु यह तो ब्रह्मज्ञान से होता है। भक्ति और भक्त के लिए दोनो ही है, विद्यामाया और अविद्यामाया। तू जरा गाना गा।

नरेन्द्र गाना गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "चिदानन्द समुद्र के जल में प्रेमानन्द की लहरें हैं। अहा! महाभाव में रासलीला की क्या ही माधुरी है! नाना प्रकार के विलास, आनन्द-प्रसंग, कितनी ही नयी नयी भाव-तरंगें नये नये रूप धारण कर डूब रही हैं, उठ रही हैं और तरह तरह के खेल कर रही हैं। महायोग में सभी एकाकार हो गये। देश-काल की पृथक्ता तथा भेदाभेद मिट गये और मेरी आशा पूर्ण हुई। मेरी सभी आकांक्षाएँ मिट गयी। अब हे मन, आनन्द मे मस्त होकर दोनो हाथ उठाकर 'हरि हरि' बोल।"

नरेन्द्र जब गा रहे थे, "महायोग मे सब एकाकार हो गये", – तो श्रीरामकृष्ण ने कहा, "यह ब्रह्मज्ञान से होता है। तू जो कह रहा था, – सभी विद्या हैं।"

नरेन्द्र जब गाने लगे, "हे मन! आनन्द में मस्त होकर दोनों हाथ उठाकर 'हरि हरि' बोल" – तो श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र से कहा "इसे दो बार कह।"

गीत समाप्त होने पर भक्तो के साथ वार्तालाप हो रहा है।

गिरीश – देवेन्द्रबाबू नही आये हैं। वे अभिमान करके कहते हैं, 'हमारे अन्दर तो कुछ सार नही है, हम आकर क्या करेंगे!'

श्रीरामकृष्ण (विस्मित होकर) – कहाँ, पहले तो वे वैसी बातें नहीं करते थे?

श्रीरामकृष्ण जलपान कर रहे है. नरेन्द्र को भी कुछ खाने को दिया।

यतीन देव (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – आप 'नरेन्द्र खाओ' 'नरेन्द्र खाओ' कह रहे है, और हम लोग क्या कही से बहकर आये है!

यतीन को श्रीरामकृष्ण बहुत चाहते है। वे दक्षिणेश्वर मे जाकर बीच-बीच में दर्शन करते है। कभीकभी रात भी वही बि.. ते हैं। वह शोभाबाजार के राजाओं के घर का (राधाकान्त देव के घर का) लड़का है।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र के प्रति हँसते हुए) – दख, यतीन तेरी ही बात कर रहा है।

श्रीरामकृष्ण ने हँसते हँसते यतीन की ठुड्डी पकड़कर प्यार करते हुए कहा, "वहाँ जाना, जाकर खाना।" अर्थात् 'दक्षिणेश्वर में जाना।' श्रीरामकृष्ण फिर 'विवाहविभ्राट' नाटक का अभिनय देखेगे। बाक्स मे जाकर बैठे। नौकरानो की बात सुनकर हँसने लगे।

थोड़ी देर सुनकर उनका मन दूसरी ओर गया! मास्टर के साथ धीरे-धीरे बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – अच्छा, गिरीश जो कह रहा है (अर्थात् अवतार) क्या वह सत्य है?

मास्टर – जी, ठीक बात है। नही तो सभी के मन में क्यों लग रही है?

श्रीरामकृष्ण – देखो, अब एक स्थिति आ रही है, पहले की स्थिति उलट गयी है। अब धातु की चीजें छू नहीं सकता हूँ।

मास्टर विस्मित होकर सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण – यह जो नवीन स्थिति है, इसका एक बहुत ही गूढ़ अर्थ है।

श्रीरामकृष्ण धातु छू नही सक रहे हैं। सम्भव है, अवतार माया के ऐश्वर्य का कुछ भी भोग नहीं करते, क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण ये सब बातें कह रहे है?

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – अच्छा, मेरी स्थिति कुछ बदल रही है, देखते हो?

मास्टर – जी, कहाँ?

श्रीरामकृष्ण – कर्म मे?

मास्टर – अब कर्म बढ़ रहा है – अनेक लोग जान रहे है।

श्रीरामकृष्ण – देख रहे हो! पहले जो कुछ कहता था, अब सफल हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर चुप रहकर एकाएक कह रहे हैं – "अच्छा, पल्टू का अच्छा ध्यान क्यों नहीं होता?"

अब श्रीरामकृष्ण के दक्षिणेश्वर जाने की व्यवस्था हो रही है।

श्रीरामकृष्ण ने किसी भक्त के पास गिरीश के सम्बन्ध में कहा था, "पीसे हुए लहसुन की कटोरी को हजार बार धोओ, पर लहसुन की गन्ध क्या सम्पूर्ण रूप से जाती है?" गिरीश ने भी इसीलिए मन ही मन प्रेम-कोप किया है। जाते समय गिरीश श्रीरामकृष्ण से कुछ कह रहे हैं।

गिरीश (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – लहसुन की गन्ध क्या जायेगी?

श्रीरामकृष्ण – जायेगी।

गिरीश – तो आप कह रहे है – जायेगी?

श्रीरामकृष्ण – खूब आग जलाकर लहसुन की कटोरी को उसमें तपा लेने पर फिर गन्ध नही रह जाती; बर्तन मानो नया बन जाता है।

"जो कहता है 'मेरा नहीं होगा', उसका नहीं होता। मुक्त-अभिमानी मुक्त ही हो जाता है और बद्ध-अभिमानी बद्ध ही रह जाता है। जो जोर से कहता है 'मैं मुक्त हूँ', वह मुक्त ही हो जाता है! पर जो दिनरात कहता है, 'मैं बद्ध हूँ' वह बद्ध ही हो जाता है।"

परिच्छेद १०८

दक्षिणेश्वर में भक्तों के संग में

(१)

भक्तियोग

श्रीरामकृष्ण कमरे मे छोटे तखत पर समाधिमग्न बैठे हुए हैं। सब भक्त जमीन पर बैठे हुए टकटकी लगाये उन्हे देख रहे हैं। महिमाचरण, रामदत्त, मनोमोहन, नवाई चैतन्य, नरेन्द्र, मास्टर आदि कितने ही लोग बैठे हुए है। आज होली है, फाल्गुन पूर्णिमा, महाप्रभु श्रीचैतन्यदेव का जन्मदिन है। रविवार, १ मार्च १८८५ ई।

भक्तगण एकटक देख रहे है। श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। इस समय भी भाव पूर्ण मात्रा मे है। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से कह रहे है – "बाबू, हरिभक्ति की कोई कथा –"

महिमाचरण – "आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।।
अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
नान्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्।।
विरम विरम ब्रह्मन् किं तपस्यासु वत्स।
व्रज व्रज द्विज शीघ्रं शंकरं ज्ञानसिन्धुम्।।
लभ लभ हरिभक्तिं वैष्णवोक्तां सुपक्वाम्।
भवनिगड निबन्धच्छेदनीं कर्तरीं च।।

" 'नारद-पंचरात्र' में है कि नारद जब तपस्या कर रहे थे, उस समय यह देववाणी हुई – 'यदि हरि की आराधना की जाय तो फिर तपस्या की क्या आवश्यकता? और यदि हरि की आराधना न की जाय तो भी तपस्या की क्या आवश्यकता? अन्दर बाहर यदि हरि ही हो तो फिर तपस्या का क्या प्रयोजन? और अन्दर बाहर यदि हरि न हो तो भी तपस्या का क्या प्रयोजन? अतएव हे ब्रह्मन्, तपस्या से विरत होओ। वत्स, तपस्या की क्या आवश्यकता है? हे द्विज, शीघ्र ही ज्ञानसिन्धु शंकर के पास जाओ। वैष्णवो ने जिस

हरिभक्ति की महिमा गायी है उस सुपस्व भक्ति का लाभ करो। इस भक्तिरूपी कटार से भवबंधन कट जायेंगे।' "

श्रीरामकृष्ण – जीवकोटि और ईश्वरकोटि, दो हैं। जीवकोटि की भक्ति वैधी भक्ति है – इतने उपचार से पूजा की जायेगी, इतना जप और इतना पुरश्चरण किया जायेगा। इस वैधी भक्ति के बाद है ज्ञान। इसके बाद है लय। इस लय के बाद फिर जीव नहीं लौटता।

"ईश्वरकोटि की और बात है – जैसे अनुलोम और विलोम। 'नेति-नेति' करके वह छत पर पहुँचकर जब देखता है, कि छत जिन चीजों की – चूना, सुरखी और ईटों की – बनी हुई है – सीढ़ी भी उन्ही चीजों की बनी हुई है, तब वह चाहे तो छत में रह जाय, चाहे चढ़ना-उतरना जारी रखे। वह दोनों ही कर सकता है।

"शुकदेव समाधिस्थ थे। निर्विकल्प समाधि – जड़ समाधि हो गयी थी। भगवान् ने नारद को भेजा – परीक्षित् को भागवत सुनाना था। उधर नारद ने देखा कि शुकदेव जड़ की तरह बाह्य चेतना से रहित बैठे हुए है। तब नारद वीणा बजाते हुए चार श्लोको मे श्रीभगवान् के रूप का वर्णन गाने लगे। जब वे पहला श्लोक गा रहे थे, तब शुकदेव को रोमांच हुआ। क्रमश: आँसू बहने लगे। भीतर – हृदय में चिन्मयस्वरूप के दर्शन होने लगे। जड़ समाधि के पश्चात् फिर रूप के दर्शन भी हुए। शुकदेव ईश्वरकोटि के थे।

"हनुमान ने साकार और निराकार दोनों के दर्शन कर लेने के पश्चात् श्रीराम की मूर्ति पर अपनी निष्ठा रखी थी। चिद्घन आनन्द की मूर्ति वही श्रीराम मूर्ति है।

"प्रह्लाद कभी तो 'सोऽहम्' देखते थे और कभी दासभाव में रहते थे। भक्ति न लें तो क्या लेकर रहें? इसीलिए सेव्य और सेवक का भाव लेना पड़ता है, – तुम प्रभु हो, मैं दास – यह भाव हरि-रसास्वादन के लिए। रस-रसिक का यह भाव है – हे ईश्वर, तुम रस हो, मैं रसिक हूँ।

" 'भक्ति के मैं' में, 'विद्या के मैं' में तथा 'बालक के मैं' में दोष नही। शंकराचार्य ने विद्या का 'मैं' रखा था – लोकशिक्षा के लिए। बालक के 'मैं' में दृढ़ता नहीं है। बालक गुणातीत है – वह किसी गुण के वश नही। अभी अभी वह गुस्सा हो गया। थोड़ी देर मे कही कुछ नही। देखते ही देखते उसने खेलने के लिए घरौंदा बनाया, फिर तुरन्त ही उसे भूल भी गया। अभी तो खेलनेवाले साथियों को वह प्यार कर रहा है, फिर कुछ दिनों के लिए अगर उन्हें न देखा तो सब भूल भी गया। बालक सत्त्व, रज और तम किसी गुण के वश नहीं है।

"तुम भगवान् हो, मैं भक्त हूँ, यह भक्तों का भाव है, – यह 'मैं' 'भक्ति का मैं' है। लोग 'भक्ति का मैं' क्यों रखते हैं? इसका कुछ अर्थ है। 'मैं' मिटने का तो है ही नहीं, तो फिर वह पड़ा रहे – 'दास का मैं', 'भक्त का मैं' होकर।

"लाख विचार करो, पर 'मै' नही जाता। 'मैं' मानो कुम्भ स्वरूप है, और ब्रह्म है समुद्र, चारो ओर जल राशि। कुम्भ के भीतर भी जल है, बाहर भी जल। पर कुम्भ तो है ही। यही 'भक्त के मै' का स्वरूप है; जब तक कुम्भ है, तब तक 'मैं' और 'तुम' है; तुम भगवान् हो, मैं भक्त हूँ; तुम प्रभु हो, मै दास हूँ; यह भी है। विचार चाहे लाख करो, परन्तु इसे छोड़ने का उपाय नही। कुम्भ अगर न रहे, तो और बात है।"

(२)

नरेन्द्र के प्रति संन्यास का उपदेश

नरन्द्र आये और उन्होने प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से बातचीत कर रहे है। बातचीत करते हुए जमीन पर आकर बैठे। जमीन पर चटाई बिछी हुई है। अब कमरा भी आदमियो से भर गया। भक्तगण भी है और बाहर आदमी भी आये हुए है।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र से) – तेरी तबीयत अच्छी है न? सुना है, तू गिरीश घोष के यहां प्राय: जाया करता है?

नरेन्द्र – जी हाँ, कभी कभी जाया करता हूँ।

इधर कुछ महीनो से श्रीरामकृष्ण के पास गिरीश आया-जाया करते है। श्रीरामकृष्ण कहते है, गिरीश का विश्वास इतना जबरदस्त है कि पकड़ मे नही आता। उन्हे जैसा विश्वास है, वैसा ही अनुराग भी है। घर मे सदा ही श्रीरामकृष्ण के चिन्तन मे मस्त रहा करते है। नरेन्द्र प्राय: उनके वहाँ जाते है, हरिपद, देवेन्द्र तथा और भी कई भक्त प्राय: उनके यहाँ जाया करते है। गिरीश उनके साथ श्रीरामकृष्ण की ही चर्चा किया करते है। गिरीश संसारी है; इधर श्रीरामकृष्ण देखते है, नरेन्द्र संसार मे न रहेंगे, – वे कामिनी-कांचन त्यागी होगे, अतएव नरेन्द्र से कह रहे हैं –

"तू गिरीश घोष के यहां क्या बहुत जाया करता है?

"परन्तु लहसुन के कटोरे को चाहे जितना धोओ, कुछ न कुछ बू तो रहेगी ही। लड़के शुद्ध आधार है; कामिनी और कांचन का स्पर्श अभी उन्होंने नही किया। बहुत दिनो तक कामिनी और कांचन का उपभोग करने पर लहसुन की तरह बू आने लगती है।

"जैसे कौए का काटा हुआ आम। देवता पर चढ़ ही नहीं सकता, अपने खाने में भी सन्देह है। जैसे नयी हण्डी और दही जमायी हण्डी – दही जमायी हण्डी में दूध रखते हुए डर लगता है। अक्सर दूध खराब हो जाता है।

"गिरीश जैसे गृहस्थ एक दूसरी श्रेणी के हैं। वे योग भी चाहते है और भोग भी। जैसा भाव रावण का था – नागकन्याओं और देवकन्याओं को हथियाना चाहता था, उधर राम की प्राप्ति की भी आशा रखता था।

"असुर लोग अनेक प्रकार के भोग भी करते है और नारायण के पाने की भी इच्छा रखते है।

नरेन्द्र – गिरीश घोष ने पहले का संग छोड दिया है।

श्रीरामकृष्ण – बूढा बैल बधिया बनाया गया है। मैने बर्दवान मे देखा था, एक बधिया एक गाय के पीछे लगा हुआ था। देखकर मैने पूछा, 'यह कैसा? – यह तो बधिया है।' तब गाडीवान ने कहा, 'महाराज, बडा हो जाने पर यह बधिया किया गया था। इसीलिए पहले के संस्कार नही गये।'

"एक जगह अनेक सन्यासी बैठे हुए थे। उधर से एक औरत निकली। सब के सब ईश्वर-चिन्तन कर रहे थे। उनमे से एक ने जरा नजर तिरछी करके उसे देख लिया। तीन लडके हो जाने के बाद उसने सन्यास लिया था।

"एक कटोरे मे अगर लहसुन पीसकर घोल दिया जाय, तो क्या लहसुन की बू जाती है? इमली के पेड मे क्या कभी आम फलते है? अगर वैसा विभूती का बल किसी को हो तो यह हो सकता है – वह इमली मे भी आम लगा देता है। परन्तु क्या वैसी विभूती सभी के पास रहती है?

"संसारी आदमियो को अवसर कहा? एक ने एक भागवतपाठी पण्डित चाहा था। उसके मित्र ने कहा, 'एक बडा अच्छा भागवती पण्डित है, परन्तु कुछ अडचन है। वह यह कि उसे खुद अपने घर की खेती का काम सँभालना पडता है, उसके चार हल चलते है और आठ बैल है। सदा उसे अपने काम की देखरेख करनी पडती है, इसलिए अवकाश नही है।' जिसे पण्डित की जरूरत थी, उसने कहा, 'मुझे इस तरह के भागवती पण्डित की जरूरत नही है, जिसे अवकाश ही न हो। हल और बैल वाले भागवती पण्डित की तलाश मै नही करता, मै तो ऐसा पण्डित चाहता हूँ जो मुझे भागवत सुना सके।'

"एक राजा प्रतिदिन भागवत सुनता था, पाठ समाप्त करके पण्डितजी रोज कहते थे, 'महाराज, आप समझे?' राजा भी रोज कहता, 'पहले तुम खुद समझो।' पण्डित घर जाकर रोज सोचता था, 'राजा ऐसी बात क्यो कहता है कि पहले तुम खुद समझो?' वह पण्डित भजन-पूजन भी करता था, क्रमश: उसे होश हुआ। तब उसने देखा, ईश्वर का पादपद्म ही सार वस्तु है और सब मिथ्या। संसार से विरक्त होकर वह निकल गया। एक आदमी को उसने राजा के पास इतना कहने के लिए भेज दिया कि 'राजा, अब वह समझ गया है।'

"परन्तु क्या मै इन्हे घृणा करता हूँ? नही, मै उन्हे ब्रह्मज्ञान की दृष्टि से देखता हूँ। वे ही सब कुछ हुए है – सब नारायण है। सब योनियो को मातृयोनि मानता हूँ, तब वेश्या और सती लक्ष्मी मे कोई भेद नही दीख पडता।

"क्या कहूँ, देखता हूँ, सब के सब मटर की दाल के ग्राहक है। कामिनी और कांचन

नहीं छोड़ना चाहते। आदमी स्त्रियों के रूप पर मुग्ध हो जाते है, रुपये और ऐश्वर्य देखकर सब कुछ भूल जाते हैं, परन्तु यह नही जानते कि ईश्वर के रूप का दर्शन करने पर ब्रह्मपद भी तुच्छ हो जाता है।

"रावण से किसी ने कहा था, तुम इतने रूप बदलकर तो सीता के पास जाते हो; परन्तु श्रीरामचन्द्र का रूप क्यों नहीं धारण करते? रावण ने कहा, 'राम का रूप हृदय मे एक बार भी देख लेने पर रम्भा और तिलोत्तमा चिता की खाक जान पड़ती हैं। ब्रह्मपद भी तुच्छ हो जाता है – पराई स्त्री की तो बात ही दूर रही।'

"सब के सब मटर की दाल के ग्राहक है। शुद्ध आधार के हुए बिना ईश्वर पर शुद्धा भक्ति नही होती – एक लक्ष्य नहीं रहता, कितनी ही ओर मन दौड़ता फिरता है।

(मनोमोहन से) – "तुम गुस्सा करो और चाहे जो करो, राखाल से मैंने कहा, तू अगर ईश्वर के लिए गंगा में डूबकर मर जाय, तो यह बात मै सुन लूँगा; परन्तु तू किसी की गुलामी करता है, ऐसी बात न सुनूँ।

"नेपाल से एक लड़की आयी थी। इसराज बजाकर उसने बहुत अच्छा गाया। भजन गाती थी। किसी ने पूछा, 'क्या तुम्हारा विवाह हो गया है? उसने कहा, 'अब और किसकी दासी बनूँ? – एक ईश्वर की दासी हूँ।'

"कामिनी और कांचन के भीतर रहकर कैसे कोई सिद्ध हो? वहाँ अनासक्त होना बहुत ही मुश्किल है। एक ओर बीबी का गुलाम, दूसरी ओर रुपये का गुलाम, तीसरी ओर मालिक का गुलाम – उनकी नौकरी बजानी पड़ती है।

"एक फकीर जंगल में कुटी बनाकर रहता था। तब अकबर शाह दिल्ली के बादशाह थे। फकीर के पास बहुत से आदमी आयाजाया करते थे। अतिथि-सत्कार की उसे बड़ी इच्छा हुई। एक दिन उसने सोचा, 'बिना रुपये पैसे के अतिथि-सत्कार कैसे हो सकता है? इसलिए एक बार अकबर शाह के दरबार मे चलूँ।' साधु-फकीर के लिए सब जगह द्वार खुला रहता है। जब फकीर वहाँ पहुँचा, तब अकबर शाह नमाज पढ़ रहे थे। फकीर मसजिद में उसी जगह पर जाकर बैठ गया। उसने सुना कि नमाज पूरी करके अकबर शाह खुदा से कह रहे थे, 'ऐ खुदा, मुझे तू दौलत मन्द कर, खुश रख' – तथा और भी इसी तरह की कितनी ही इच्छाएँ पूरी करने के लिए खुदा से दुआएँ माँगते थे। उसी समय फकीर ने वहाँ से उठ जाना चाहा। अकबर शाह ने बैठने के लिए इशारा किया। नमाज पूरी करके बादशाह ने आकर पूछा, 'आप बैठे थे, फिर चले कैसे?' फकीर ने कहा, 'यह शाहंशाह के सुनने लायक बात नहीं है, मै जाता हूँ।' बादशाह के जिद करने पर फकीर ने कहा, 'मेरे यहाँ बहुत से आदमी आया करते हैं, इसीलिए मैं कुछ रुपये माँगने आया था।' अकबर ने पूछा, 'तो आप चले क्यों जा रहे है?' फकीर ने कहा, 'मैंने देखा, तुम भी दौलत के कंगाल हो, और सोचा कि यह भी फकीर ही है, फकीर से क्या माँगूँ?

माँगना ही है तो खुदा से ही माँगूँगा।' "

नरेन्द्र – गिरीश घोष इस समय बस ऐसी ही चिन्ताएँ करते है।

श्रीरामकृष्ण की सत्त्वगुण की अवस्था

श्रीरामकृष्ण – यह तो बहुत ही अच्छा है, परन्तु इतनी गालियाँ क्यो दिया करता है? मेरी वह अवस्था नही है। जब बिजली गिरती है, तब भारी चीजे उतनी नही हिलती, परन्तु झरोखे की झंझरियाँ हिल जाती है। मेरी वह अवस्था नही है। सतोगुण की अवस्था मे शोर-गुल नही सहा जाता। हृदय इसीलिए चला गया, – माँ ने उसे नही रखा। पिछले दिनो मे बडी बढ़ा-चढी करने लगा था। मुझे गालियाँ देता था, हल्ला मचाता था।

"गिरीश घोष जो कुछ कहता है, वह तेरे साथ कही कुछ मिला भी?"

नरेन्द्र – मैने कुछ कहा नही, वे ही कहा करते है उनका विश्वास है कि आप अवतार है। मैने कुछ कहा नही।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु खूब विश्वास है, देखा है न?

भक्तगण एकदृष्टि से देख रहे है। श्रीरामकृष्ण नीचे ही चटाई पर बैठे है। पास मास्टर है, सामने नरेन्द्र, चारो ओर भक्तमण्डली।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप रहकर प्रेमपूर्ण दृष्टि से नरेन्द्र को देख रहे है।

कुछ देर बाद नरेन्द्र से कहा, "भैया, कामिनी और कांचन के बिना छूटे कुछ न होगा।" कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण भावमग्न हो गये। करुणा से भरी हुई सस्नेह दृष्टि है। साथ ही भाव मे मस्त होकर गाने लगे –

(भावार्थ) – "बात करते हुए भी मुझे भय होता है, और कुछ नही बोलता तो भी भय होता है। मेरे हृदय मे यह सन्देह है कि कही तुम्हारे जैसे धन को मै खो न बैठूँ। हम जो मन्त्र जानते है, वही मंत्र तुझे देगे। फिर तो तेरा मन तेरे पास है ही। हम लोग जिस मन्त्र के बल से विपत्तियो से त्राण पाते है, उसी मन्त्र से दूसरो को भी उत्तीर्ण कर देते है।"

श्रीरामकृष्ण को जैसे भय हो रहा हो कि नरेन्द्र किसी दूसरे का हो गया। नरेन्द्र आँखो मे आँसू भरे हुए देख रहे है।

बाहर के एक भक्त श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए आये हुए थे। वे भी पास बैठे हुए सब कुछ देख-सुन रहे थे।

भक्त – महाराज, कामिनी और कांचन का अगर त्याग ही करना है तो गृहस्थ फिर कहाँ जाय?

श्रीरामकृष्ण – तुम गृहस्थी करो न! हम लोगो के बीच मे एक ऐसी ही बात हो गयी।

महिमाचरण चुपचाप बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण (महिमा से) – बढ़ जाओ, और भी आगे बढ जाओ। चन्दन की लकड़ी मिलेगी, और भी आगे बढ जाओ, चाँदी की खान मिलेगी, और भी आगे बढ़ जाओ, सोने की खान पाओगे, और भी आगे बढ़ो तो हीरे और मणि मिलेंगे; बढ़े जाओ।

महिमा – पर जी खीचता रहता है, आगे बढ़ने देता ही नही।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – क्यों लगाम काट दो। उनके नाम के प्रभाव से काट डालो। उनके नाम के प्रभाव से कालपाश भी छिन्न हो जाता है।

पिता के निधन के बाद से संसार मे नरेन्द्र को बड़ा कष्ट हो रहा है। उन पर कई आफते गुजर चुकी। बीच-बीच मे श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को देख रहे है। श्रीरामकृष्ण कहते हे, "तू चिकित्सक तो नही बना?

– "शतमारी भवेद्वैद्य· सहस्रमारी चिकित्सक:।" (सब हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण का शायद यह अर्थ है कि नरेन्द्र इतनी ही उम्र मे बहुत-कुछ देख चुका – सुख और दु:ख के साथ उसका बहुत परिचय हो चुका।

नरेन्द्र जरा मुस्कराकर रह गये।

(३)

गृहस्थों के प्रति अभयदान

नवाई चैतन्य गा रहे है। भक्तगण बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए है। एकाएक उठे। कमरे के बाहर गये। भक्त सब बैठे ही रहे। गाना हो रहा है।

मास्टर श्रीरामकृष्ण के साथ-साथ गये। श्रीरामकृष्ण पक्के आँगन से होकर कालीमन्दिर की ओर जा रहे है। पहले श्रीराधाकान्त के मन्दिर मे गये। भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। उन्हे प्रणाम करते हुए देख मास्टर ने भी प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण के सामनेवाली थाली मे अबीर रखा हुआ था। आज होली है, श्रीरामकृष्ण भूले नही। थाली से अबीर लेकर श्रीराधाकान्तजी पर चढ़ाया। फिर उन्हे प्रणाम किया।

अब कालीमन्दिर जा रहे है। पहले सातो सीढ़ियो पर चढ़कर चबूतरे पर खड़े हुए, माता को प्रणाम किया, फिर मन्दिर मे गये। माता पर अबीर चढ़ाया। प्रणाम करके कालीमन्दिर से लौट रहे है। कालीमन्दिर के सामने चबूतरे पर खड़े होकर मास्टर से उन्होने कहा, "बाबूराम को तुम क्यो नही ले आये?"

श्रीरामकृष्ण फिर आँगन से कमरे की ओर जा रहे है। साथ मे मास्टर है तथा और एक जन अबीर की थाली हाथ मे लिये हुए आ रहे है। कमरे मे आकर श्रीरामकृष्ण ने सब चित्रो पर अबीर चढ़ाया – दो-एक चित्रो को छोड़कर, – उनमे एक उनका अपना चित्र था और दूसरी येशु की तसबीर। अब आप बरामदे मे आये। कमरे मे प्रवेश करते समय बरामदे का जो भाग आता है, वही नरेन्द्र बैठे हुए है। किसी-किसी भक्त के साथ उनकी

बातचीत हो रही है। श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र पर अबीर छोड़ा। आप कमरे में प्रवेश कर रहे हैं, मास्टर भी साथ जा रहे हैं, आपने मास्टर पर भी अबीर छोड़ा।

कमरे में जितने भक्त थे, सब पर आपने अबीर डाला। सब के सब प्रणाम करने लगे।

दिन का पिछला पहर हो चला। भक्तगण इधर-उधर घूमने लगे। श्रीरामकृष्ण मास्टर से धीरे-धीरे बातचीत करने लगे। पास कोई नहीं है। बालक-भक्तों की बात कह रहे हैं। कह रहे है, "अच्छा, सब तो कहते हैं कि ध्यान खूब होता है, परन्तु पल्टू का ध्यान क्यों नहीं होता?

"नरेन्द्र के बारे में तुम्हारी क्या राय है? बड़ा सरल है; परन्तु उस पर संसार की बड़ी बड़ी आफतें गुजर चुकी है, इसीलिए कुछ दबा हुआ है। यह भाव रहेगा भी नही।"

श्रीरामकृष्ण रह-रहकर बरामदे मे चले जाते हैं। नरेन्द्र एक वेदान्तवादी मे विचार कर रहे हैं।

क्रमश: भक्तगण फिर इकट्ठे हो रहे हैं। महिमाचरण से अब स्तव पाठ करने के लिए कहा गया। वे महानिर्वाण-तन्त्र के तृतीय उल्लास मे लिखी हुई ब्रह्म की स्तुति कह रहे हैं –

"हृदयकमलमध्ये निर्विशेषं निरीहं
हरिहरविधिवेद्यं योगिभिर्ध्यानगम्यम्।
जननमरणभीतिभ्रंशिसच्चित्स्वरूपं
सकलभुवनबीजं ब्रह्मचैतन्यमीडे।।"

और भी दो एक स्तुतियाँ कहकर महिमाचरण श्रीशंकराचार्य की रची हुई स्तुति कह रहे हैं। उसमें संसार-कूप और संसार-गहनता की बात है। महिमाचरण स्वयं संसारी भक्त हैं।

"हे चन्द्रचूड़ मदनान्तक शूलपाणे
स्थाणो गिरीश गिरिजेश महेश शंभो।
भूतेश भीतभयसूदन मामनाथं
संसार-दु:ख-गहनाज्जगदीश रक्ष।।
हे पार्वती-हृदयवल्लभ चन्द्रमौले
भूताधिप प्रमथनाथ गिरीशजाप।
हे वामदेव भव रुद्र पिनाकपाणे,
संसार-दु:ख-गहनाज्जगदीश रक्ष।..."

श्रीरामकृष्ण (महिमा से) – संसार कूप है, संसार गहन है यह सब क्यों कहते हो? पहले-पहल इस तरह कहा जाता है। उन्हे पकड़ने पर फिर क्या भय है? तब यह संसार

मौज की कुटिया हो जाता है। मै खाता-पीता हूँ और आनन्द करता हूँ।...'

"भय क्या है? उन्हे पकड़ो। काटो का जंगल है, तो क्या हुआ? जूते पहनकर उसे पार कर जाओ। भय क्या है? जो पाला छू लेता है, क्या वह भी कभी चोर हो सकता है?

"राजा जनक दो तलवारे चलाते थे। एक ज्ञान की और दूसरी कर्म की। पक्के खिलाड़ी को किसी का डर नही रहता।"

इसी तरह की ईश्वरी बाते हो रही है। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी चारपाई पर बैठे हुए है। चारपाई की बगल मे मास्टर बैठे है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – उसने जैसा कहा, उसी ने उसे खीच रखा है।

श्रीरामकृष्ण महिमाचरण की बाते कह रहे है। नवाई चैतन्य तथा अन्य भक्त फिर गाने लगे। अब श्रीरामकृष्ण उनमे मिल गये और भावमग्न होकर संकीर्तन की मण्डली मे नृत्य करने लगे।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "यही इतना काम हुआ और सब मिथ्या था। प्रेम और भक्ति, यही वस्तु है और सब अवस्तु।"

(४)

गुह्य बातें

दिन का पिछला पहर हो गया। श्रीरामकृष्ण पंचवटी गये हुए है। मास्टर से विनोद की बाते पूछते है। विनोद मास्टर के स्कूल मे पढ़ते है। ईश्वर का चिन्तन करते हुए कभी-कभी विनोद को भावावेश हो जाता है। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन्हे प्यार करते है।

अब श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत करते हुए कमरे की ओर लौट रहे है। बकुलतल्ले के घाट के पास आकर उन्होने कहा, "अच्छा, यह जो कोई कोई (मुझे) अवतार कहते है, इस पर तुम्हारा क्या विचार है?"

बातचीत करते हुए श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे आ गये। चट्टी उतारकर उसी छोटे तखत पर बैठ गये। तखत के पूर्व की ओर एक पॉवपोश रखा हुआ है। मास्टर उसी पर बैठे हुए बातचीत कर रहे है। श्रीरामकृष्ण ने वही बात फिर पूछी। दूसरे भक्त कुछ दूर बैठे हुए है। ये सब बाते उनकी समझ मे नही आयी।

श्रीरामकृष्ण – तुम क्या कहते हो?

मास्टर – जी, मुझे भी यही जान पड़ता है, जैसे चैतन्यदेव थे।

श्रीरामकृष्ण – पूर्ण या अंश या कला? – तौल कहो न।

मास्टर – जी, तौल मेरी समझ मे नही आती। इतना कह सकता हूँ, भगवान् की शक्ति अवतीर्ण हुई है। वे तो आप मे है ही।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, चैतन्यदेव ने शक्ति के लिए प्रार्थना की थी।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप रहे। फिर कहा, "परन्तु वे षड्भुज हुए थे।"

मास्टर सोच रहे है, चैतन्यदेव को षड्भुज रूप मे उनके भक्तो ने देखा था जरूर, परन्तु श्रीरामकृष्ण ने किस उद्देश्य से इसका उल्लेख किया?

भक्तगण पास ही कमरे मे बैठे हुए है। नरेन्द्र विचार कर रहे है। राम (दत्त) बीमारी से उठकर ही आये है, वे भी नरेन्द्र के साथ घोर तर्क कर रहे है। श्रीरामकृष्ण देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – मुझे ये सब विचार अच्छे नही लगते। (राम से) बन्द करो – एक तो तुम बीमार थे। अच्छा, धीरे-धीरे। (मास्टर से) मुझे यह सब अच्छा नही लगता। मै रोता था और कहता था, 'माँ, एक कहता है – ऐसा नही, ऐसा है, दूसरा कुछ और बतलाता है। सत्य क्या है, तू मुझे बतला दे।'

□□□

परिच्छेद १०९

भक्तों के प्रति उपदेश

(१)

राखाल, भवनाथ, नरेन्द्र, बाबूराम

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ आनन्दपूर्वक बैठे हुए है। बाबूराम, छोटे नरेन्द्र, पल्टू, हरिपद, मोहिनीमोहन आदि भक्त जमीन पर बैठे हुए है। एक ब्राह्मण युवक दो-तीन दिन से श्रीरामकृष्ण के पास है, वे भी बैठे हुए है। आज शनिवार है, ७ मार्च १८८५, दिन के तीन बजे का समय होगा। चैत की कृष्णा सप्तमी है।

श्रीमाताजी* भी आजकल नौबतखाने मे रहती है। श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए वे कभी कभी यहाँ आया करती है। मोहिनीमोहन के साथ उनकी स्त्री और नवीनबाबू की माँ, गाड़ी पर आयी हुई है।

औरते नौबतखाने मे श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर वही पर रह गयी। भक्तो के जरा हट जाने पर वे आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करगी। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए भक्त बालको को देख रहे है और आनन्द मे मग्न हो रहे है।

राखाल इस समय दक्षिणेश्वर मे नही रहते। कुछ महीने बलराम के साथ वृन्दावन मे थे; वहाँ से लौटकर इस समय घर पर रहते है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – राखाल इस समय पेन्शन ले रहा है। वृन्दावन से लौटकर घर पर रहता है। घर मे उसकी स्त्री है। परन्तु उसने कहा है, 'हजार रुपया तनख्वाह देने पर भी नौकरी न करूँगा।'

''यहाँ लेटा हुआ कहता था, तुम्हारी भी संगत अब अच्छी नही लगती उसकी ऐसी एक अवस्था हुई थी।

''भवनाथने विवाह किया है; परन्तु रात भर स्त्री के साथ धर्म की ही चर्चा करता है। दोनो ईश्वरी प्रसंग लेकर रहते है। मैने कहा, 'अपनी स्त्री से कुछ आमोद-प्रमोद भी

* श्रीसारदादेवी – श्रीरामकृष्णदेव की लीलासहधर्मिणी।

किया कर', तब गुस्से में आकर उसने कहा था, 'क्या! हम लोग भी आमोद-प्रमोद लेकर रहेंगे?'

श्रीरामकृष्ण अब नरेन्द्र के बारे मे कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो से) – परन्तु नरेन्द्र के लिए मुझे जितनी व्याकुलता हुई थी, उतनी उसके (छोटे नरेन्द्र के) लिए नहीं हुई।

(हरिपद से) – "क्या तू गिरीश घोष के यहाँ जाया करता है?"

हरिपद – हमारे घर के पास ही उनका घर है। प्राय: जाया करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – क्या नरेन्द्र भी जाता है?

हरिपद – हाँ, कभी कभी तो देखता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – गिरीश जो कुछ (मेरे अवतारत्व के सम्बन्ध में) कहता है, उस पर उसकी क्या राय है?

हरिपद – नरेन्द्र तर्क में हार गये हैं।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, उसने (नरेन्द्र ने) कहा, 'गिरीश घोष को जब इतना विश्वास है, तो उस पर मैं कुछ क्यो कहूँ?'

जज अनुकूल मुखोपाध्याय के जामाता के भाई आये हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण – तुम नरेन्द्र को जानते हो?

जामाता के भाई – जी हाँ, नरेन्द्र बुद्धिमान लड़का है।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से) – ये अच्छे आदमी है, जब इन्होंने नरेन्द्र की तारीफ की। उस दिन नरेन्द्र आया था। त्रैलोक्य के साथ उस दिन उसने गाया भी; परन्तु उस दिन का गाना अलोना लगा।

श्रीरामकृष्ण बाबूराम की ओर देखकर बातचीत कर रहे हैं। मास्टर जिस स्कूल में पढ़ाते है, बाबूराम उसी स्कूल की प्रवेशिका कक्षा में पढ़ते हैं।

श्रीरामकृष्ण (बाबूराम से) – तेरी पुस्तकें कहाँ है? तू लिखे-पढ़ेगा या नहीं? (मास्टर से) वह दोनों ओर सँभालना चाहता है।

"बड़ा कठिन मार्ग है। उन्हे जरा सा समझ लेने से क्या होगा? वशिष्ठ कितने बड़े थे, उन्हे भी पुत्रों के लिए शोक हुआ था। लक्ष्मण ने उन्हे शोक करते हुए देख आश्चर्य में आकर राम से पूछा। राम ने कहा, 'भाई, इसमें आश्चर्य क्या है? जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है। भाई, तुम ज्ञान और अज्ञान दोनों को पार कर जाओ।' पैर में काँटा लगता है, तो एक और काँटा खोज लाना पड़ता है; उस काँटे से पहला काँटा निकाला जाता है; फिर दोनों ही काँटे फेंक दिये जाते हैं। इसीलिए अज्ञानरूपी काँटे को निकालने के लिए ज्ञानरूपी काँटा संग्रह करना पड़ता है; फिर ज्ञान और अज्ञान के पार जाया जाता है।

बाबूराम (हँसकर) – मैं यही चाहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – अरे, दोनो ओर रक्षा करने से क्या वह बात होती है? उसे अगर तू चाहता है, तो चला आ निकलकर।

बाबूराम (हँसकर) – आप ले आइये।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – राखाल रहता था, वह बात और थी – उसमे उसके बाप की भी स्वीकृति थी। पर इन लड़को के रहने पर तो गड़बड होगा।

(बाबूराम से) – "तू कमजोर है। तुझ मे हिम्मत कम है। देख तो, छोटा नरेन्द्र कैसे कहता है, 'मै जब आऊँगा, तब एकदम चला आऊँगा'।"

अब श्रीरामकृष्ण भक्त-बालको के बीच मे चटाई पर आकर बैठे। मास्टर उनके पास बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – मै कामिनी-कांचन-त्यागी खोज रहा हूँ। सोचता हूँ, यह शायद यहाँ रह जायेगा। पर सब के सब कोई न कोई अड़ंगा लगा देते है।

"एक भूत अपना साथी खोज रहा था। शनि या मंगलवार को अपघात-मृत्यु होने पर मनुष्य भूत होता है। इसलिए वह भूत जब कभी देखता कि कोई छत पर से गिरकर बेसुध हो गया है, तब वहाँ वह यह सोचकर दौड़ा हुआ जाता कि इसकी अपघात-मृत्यु हुई, अब यह भूत होकर मेरा साथी होगा। परन्तु उसका ऐसा दुर्भाग्य कि सब के सब बच जाते! उसे कोई साथी नही मिलता।

"इसी तरह दखो न, राखाल भी 'बीबी-बीबी' करता है, कहता है, 'मेरी बीबी का क्या होगा। नरेन्द्र की छाती पर मैने हाथ रखा तो बेहोश हो गया और चिल्लाया, 'अजी, यह तुम क्या कर रहे हो? मेरे बाप-माँ जो है।'

"मुझे उन्होने इस अवस्था मे क्यो रखा है? चैतन्यदेव ने संन्यास धारण किया, इसलिए कि सब लोग प्रणाम करेगे, जो लोग एक बार प्रणाम करेंगे, उनका उद्धार हो जायेगा।"

श्रीरामकृष्ण के लिए मोहिनीमोहन बॉस की टोकरी मे सन्देश लाये है।

श्रीरामकृष्ण – ये सन्देश कौन लाया है?

बाबूराम ने मोहिनीमोहन की ओर उँगली उठाकर इशारा किया।

श्रीरामकृष्ण ने प्रणव का उच्चारण करके सन्देशा को छुआ और उसमे से थोड़ासा ग्रहण करके प्रसाद कर दिया। फिर भक्तो को थोड़ा बॉटने लगे। छोटे नरेन्द्र को, और भी दो एक भक्त-बालको को खुद खिला रहे है!

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – इसका एक अर्थ है। शुद्धात्माओ के भीतर नारायण का प्रकाश अधिक है। कामारपुकुर मे जब मै जाता था, तब वहाँ किसी किसी लडके को खुद खिला देता था। चीने शॉखारी कहता था, 'ये हमे क्यो नही खिलाते?' मै किस तरह खिलाता? वे दुराचारी जो थे। भला उन्हे कौन खिलायेगा?

(२)

ज्ञान तथा भक्ति

शुद्धात्मा भक्तो को प्राप्त कर श्रीरामकृष्ण आनन्द मे मग्न हो रहे है। अपने छोटे तखत पर बैठे हुए कीर्तन गानेवाली के नाज-नखरे दिखा-दिखाकर उन्हे हँसा रहे है। कीर्तन गानेवाली सजधजकर अपने साथियो के साथ गा रही है। वह हाथ मे रंगीन रूमाल लिए हुए खड़ी है, बीच बीच मे खाँसने का ढोंग कर रही है और नथ उठाकर थूक रही है। गाते समय अगर किसी विशिष्ट मनुष्य का आना होता है, तो वह गाते हुए ही उसकी अभ्यर्थना के लिए, 'आइये, बैठिये' आदि शब्दो का प्रयोग करती है। फिर कभी कभी हाथ का कपड़ा हटाकर बाजूबन्द, अनन्त आदि गहने दिखाती हे।

उनका यह अभिनय देखकर भक्तगण ठहाका मारकर हँस रहे है। पल्टू तो हँसते हँसते लोटपोट हो रहे है। श्रीरामकृष्ण पल्टू की ओर देखकर मास्टर से कह रहे है, "बच्चा है न, इसीलिए लोटपोट हुआ जा रहा है। (पल्टू से, हँसकर) ये सब बाते अपने बाप से न कहना। तो फिर जो कुछ लगन (मेरे पास आने के लिए) है, वह भी न रह जायेगी। एक तो ऐसे ही वे लोग इंग्लिशमैन है!

(भक्तो से) – "बहुतेरे तो सन्ध्योपासना करते हुए ही दुनिया भर की बाते करते है, परन्तु बातचीत करने की मनाही है, इसलिए ओठ दबाये हुए ही हर तरह का इशारा करते है। यह ले आओ – वह ले आओ – ऊ – हूँ – हूँ – यही सब किया करते है। (सब हँसते है।)

"और कोई कोई ऐसे है कि माला जपते हुए ही मछलीवाली से मछली का मोल-तोल करते है। जप करते हुए कभी ऊँगली से इशारा करके बतला देते है कि वह मछली निकाल। जितना हिसाब है, सब उसी समय होता है। (सब हँसते है।)

'स्त्रियाँ गंगा नहाने के लिए आती है, तो उस समय ईश्वर का चिन्तन करना तो दूर रहा, उसी समय दुनिया भर की बाते करने लग जाती है। पूछती हे, 'तुम्हारे लड़के का विवाह हुआ, तुमने कौन-कौन से गहने दिये?'; 'अमुक को कठिन बीमारी है', 'अमुक की बेटी अपनी ससुराल से आयी या नही', 'अमुक आदमी लड़की देखने गया था, वह खूब देगा और खर्च भी खूब करेगा', 'हमारा हरीश मुझसे इतना हिला हुआ है कि मुझे छोड़कर एक क्षण भी नही रह सकता', 'माँ, मै इतने दिनो तक इसीलिए नही आ सकी कि अमुक की लड़की के 'देखुआ' आये थे – अब की बार विवाह पक्का होनेवाला था, इसलिए मुझे फुरसत नही मिली।'

"देखो न, कहाँ तो गंगा नहाने के लिए आयी है, और कहाँ दुनिया भर की बाते!"

श्रीरामकृष्ण छोटे नरेन्द्र को एकदृष्टि से देख रहे है। देखते ही देखते समाधिमग्न

हो गये। क्या आप शुद्धात्मा भक्तो के भीतर नारायण के दर्शन कर रहे है?

भक्तगण निर्निमेष नयनो से वह समाधिचित्र देख रहे है। इतना हँसी-मजाक हो रहा था, सब बन्द हो गया, जैसे कमरे मे एक भी आदमी न हो। श्रीरामकृष्ण का शरीर नि:स्पन्द है, दृष्टि स्थिर है, हाथ जोडकर चित्रवत् बैठे हुए है।

कुछ देर बाद समाधि छूटी। श्रीरामकृष्ण की वायु स्थिर हो गयी थी। अब उन्होने एक लम्बी साँस छोड़ी। क्रमश: मन बाह्य ससार मे आ रहा है। भक्तो की ओर वे देख रहे है।

अब भी भावमग्न है। अब भक्तो को सम्बोधित करके, किसे क्या होगा, किसकी कैसी अवस्था है, संक्षेप मे कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण (छोटे नरेन्द्र से) – तुझे देखने के लिए मै व्याकुल हो रहा था। तेरी बन जायेगी। कभी कभी आया कर। अच्छा, तू क्या चाहता है – ज्ञान या भक्ति?

छोटे नरेन्द्र – केवल भक्ति।

श्रीरामकृष्ण – बिना जाने तू किसकी भक्ति करेगा? (मास्टर को दिखाकर, सहास्य) इन्हे अगर तू जाने ही नही, तो इनकी भक्ति कैसे कर सकेगा? (मास्टर से) परन्तु शुद्धात्मा ने जब कहा है कि केवल भक्ति चाहिए तो इसका अर्थ भी अवश्य है। "आप ही आप भक्ति का आना संस्कार के बिना नही होता। यह प्रेमाभक्ति का लक्षण है। ज्ञान-भक्ति है विचार के बाद होनेवाली भक्ति।

(छोटे नरेन्द्र से) – "देखूँ तेरी देह, कुर्ता उतार तो जरा। छाती खूब चौड़ी है – तो काम सिद्ध है। कभी कभी आना।"

श्रीरामकृष्ण अब भी भावस्थ है। दूसरे भक्तो मे हरएक को सम्बोधित करके स्नेहपूर्वक कह रहे है।

(पल्टू से) – "तेरी भी मनोकामना सिद्ध होगी, परन्तु कुछ समय लगेगा।

(बाबूराम से) – "तुझे इसलिए नही खीचता हूँ कि अन्त मे कही गुलगपाडा न मच जाय।(मोहिनीमोहन से) – "और तुम्हारे बारे मे सब कुछ ठीक ही है। केवल थोड़ी कसर बाकी है। जब वह भी पूर्ण हो जायेगी तब कुछ शेष न रह जायेगा – न कर्तव्य, न कर्म, और न खुद संसार ही। क्यो, सभी कुछ छूट जाना क्या अच्छा है"!

यह कहकर उनकी ओर सस्नेह एक निगाह से देख रहे है, जैसे उनके अन्तरतम प्रदेश के सब भाव देख रहे हो। क्या मोहिनीमोहन यही सोच रहे है कि ईश्वर के लिए सब कुछ छूट जाना ही अच्छा है! कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा, "भागवत पण्डित को एक पाश देकर ईश्वर संसार मे रख देते है, – नही तो भागवत फिर कौन सुनाये! रख देते है लोकशिक्षा के लिए, माता ने तुम्हे इसीलिए संसार मे रखा है।"

अब ब्राह्मण युवक मे बातें कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (युवक से) – तुम ज्ञान की चर्चा छोड़ो, भक्ति लो – भक्ति ही सार है। आज क्या तुम्हे तीन दिन हो गये?

ब्राह्मण युवक (हाथ जोड़कर) – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – विश्वास करो – उन पर निर्भरता लाओ – तो तुम्हे कुछ भी न करना होगा। माँ काली सब कुछ कर लेगी।

"ज्ञान की पहुँच सदर दरवाजे तक ही है। भक्ति घर के भीतर भी जाती है।

"शुद्ध आत्मा निर्लिप्त है। उसमे विद्या और अविद्या दोनो है परन्तु वह निर्लिप्त है। वायु मे कभी सुगन्ध मिलती है, कभी दुर्गन्ध, परन्तु वायु निर्लिप्त है। व्यासदेव यमुना पार कर रहे थे। वहाँ गोपियाँ भी थी। वे भी पार जाना चाहती थी – दही, दूध और मक्खन बेचने के लिए पर वहाँ नाव न थी, सब सोच रही थी, कैसे पार जायँ। इसी समय व्यासदेव ने कहा, 'मुझे बड़ी भूख लगी है।" तब गोपियाँ उन्हे दही, दूध, मक्खन, रबड़ी, सब खिलाने लगी। व्यासदेव लगभग सब साफ कर गये।

"फिर व्यासदेव ने यमुना से कहा, 'यमुने, अगर मैने कुछ भी नही खाया, तो तुम्हारा जल दो भागो मे बँट जाय, बीच से राह हो जाय और हम लोग निकल जायँ।' ऐसा ही हुआ। यमुना के दो भाग हो गये, बीच से उस पार जाने की राह बन गयी। उसी रास्ते से गोपियो के साथ व्यासदेव पार हो गये।

"मैने नही खाया, इसका अर्थ यह है कि मै वही शुद्ध आत्मा हूँ, शुद्ध आत्मा निर्लिप्त है, प्रकृति के परे है। उसे न भूख है, न प्यास, न जन्म है, न मृत्यु, वह अजर, अमर और सुमेरुवत् है।

"जिसे यह ब्रह्मज्ञान हुआ हो, वह जीवन्मुक्त है। वह ठीक समझता है कि आत्मा अलग है और देह अलग। ईश्वर के दर्शन करने पर फिर देहात्मबुद्धि नही रह जाती। दोनो अलग अलग है। जैसे नारियल का पानी सूख जाने पर भीतर का गोला और ऊपर का खोपड़ा अलग अलग हो जाते है। आत्मा भी उसी गोले की तरह मानो देह के भीतर खड़खड़ाती हो। उसी तरह विषयबुद्धिरूपी पानी के सूख जाने पर आत्मज्ञान होता है। तब आत्मा एक अलग चीज जान पड़ती है और देह एक अलग चीज। कच्ची सुपारी या कच्चे बादाम के भीतर का गूदा छिलके से अलग नही किया जा सकता।

"परन्तु जब पक्की अवस्था होती है, तब सुपारी और बादाम छिलके से अलग हो जाते है। पक्की अवस्था मे रस सूख जाता है। ब्रह्मज्ञान के होने पर विषय-रस सूख जाता है।

"परन्तु वह ज्ञान होना बड़ा कठिन है। कहने से ही किसी को ब्रह्मज्ञान नही हो जाता। कोई ज्ञान होने का ढोंग करता है। (हँसकर) एक आदमी बहुत झूठ बोलता था। इधर यह भी कहता था कि मुझे ब्रह्मज्ञान हो गया है। किसी दूसरे के तिरस्कार करने पर

उसने कहा, 'क्यो जी, संसार तो स्वप्नवत् है ही, अतएव सब अगर मिथ्या हो तो सच बात ही कहाँ से सही होगी? झूठ भी झूठ है और सच भी झूठ ही है।''' (सब हँसते है।)

(३)

अवतारलीला तथा योगमाया आद्या-शक्ति

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ जमीन पर चटाई पर बैठे हुए है। प्रसन्नमुख है। भक्तो से कह रहे है, "मेरे पैरो पर जरा हाथ तो फेर दो।" भक्तगण उनके पैर दाब रहे है। मास्टर से हँसकर कहते है, "इसके (पैर दाबने के) बहुत अर्थ है।"

फिर अपने हृदय पर हाथ रखकर कह रहे है, "इसके भीतर अगर कुछ है तो (सेवा करने पर) अज्ञान, अविद्या सब दूर हो जायेगे।"

एकाएक श्रीरामकृष्ण गम्भीर हो गये, जैसे कोई गूढ विषय कहनेवाले हो।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – यहाँ दूसरा कोई आदमी नही है। उस दिन यहाँ हरीश था - मैंने देखा - गिलाफ को (देह[1] को) छोड़कर सच्चिदानन्द बाहर हो आया निकलकर उसने कहा, 'हरएक युग मे मै ही अवतार लेता हूँ।' तब मैने सोचा, यह मेरी ही कोई कल्पना होगी। फिर चुपचाप देखने लगा। – तब मैने देखा, वह स्वयं कह रहा है, 'शक्ति की आराधना चैतन्य को भी करनी पड़ी थी।'

सब भक्त आश्चर्यचकित होकर सुन रहे है। कोई कोई सोच रहे है, क्या सच्चिदानन्द भगवान् ही श्रीरामकृष्ण का रूप धारण कर हमारे पास बैठे है? भगवान् क्या फिर अवतीर्ण हुए है?

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से फिर कहा, "मैने देखा, इस समय पूर्ण आविर्भाव है, परन्तु ऐश्वर्य सत्त्व गुण का है।" भक्तगण विस्मित होकर सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – "अभी अभी मै माँ से कह रहा था, माँ, अब मुझसे बका नही जाता और कह रहा था, एक बार छू देने पर ही आदमी को चैतन्य हो। योगमाया की महिमा भी ऐसी है कि वह गोरखधन्धे मे डाल देती है। वृन्दावन की लीला के समय योगमाया ने वैसा ही किया। और उसी के बल से सुबल ने श्रीकृष्ण से श्रीमती को मिला दिया था। जो आद्याशक्ति है, उस योगमाया मे एक आकर्षण शक्ति है। मैने उसी शक्ति का आरोप किया था।

"अच्छा जो लोग आते है, उन्हे कुछ होता है?"

मास्टर – जी हाँ, होता क्यो नही?

श्रीरामकृष्ण – तुम्हे मालूम कैसे हुआ?

---

[1] श्रीरामकृष्ण की देह।

मास्टर (सहास्य) – सब कहते हैं, उनके पास जो जाते हैं, वे लौटते नहीं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – एक बड़ा मेढक मटियाले साँप के पाले पड़ा था। साँप न उसे निगल सकता था, न छोड़ सकता था! मेंढक भी आफत में पड़ा था; लगातार टें टें कर रहा था और साँप की भी जान आफत में थी। परन्तु वह मेंढक अगर गोखुरे साँप के पाले पड़ता तो दो ही एक पुकार में उसे ठण्डा हो जाना पड़ता! (सब हँसते हैं।)

(किशोर भक्तों से) – "तुम लोग त्रैलोक्य की वह पुस्तक – 'भक्ति चैतन्यचन्द्रिका' – पढ़ना। उससे एक किताब माँग लेना। उसमें चैतन्यदेव की बड़ी अच्छी बातें लिखी हैं।"

एक भक्त – क्या वे देंगे?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – क्यों, खेत मे अगर बहुत सी ककड़िया हुई हों, तो मालिक दो तीन मुफ्त ही दे सकता है। (सब हँसते हैं।) क्या मुफ्त नहीं देगा – तू क्या कहता है?

(पल्टू से) – "यहाँ एक बार आना।"

पल्टू – हो सका तो आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – मैं कलकत्ते में जहाँ जाऊँ, वहाँ तू जायेगा या नहीं?

पल्टू – जाऊँगा; कोशिश करूँगा।

श्रीरामकृष्ण – यह पटवारी बुद्धि है।

पल्टू – 'कोशिश करूँगा' यह अगर न कहूँ तो बात झूठ हो सकती है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – इनकी बातो को मैं झूठ मे शामिल नहीं करता, क्योंकि वे स्वाधीन नही हैं।

(हरिपद से) – "महेन्द्र मुखर्जी क्यो नही आता?"

हरिपद – मैं ठीक ठीक नही कह सकता।

मास्टर – (सहास्य) – वे ज्ञानयोग कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, उस दिन प्रह्लाद-चरित्र दिखाने के लिए उसने गाड़ी भेजने के लिए कहा था, परन्तु फिर भेज नहीं सका, शायद इसीलिए आता भी नहीं।

मास्टर – एक दिन महिम चक्रवर्ती से मुलाकात हुई थी, बातचीत भी हुई थी। जान पड़ता है, वे (महेन्द्र) उनके पास आया-जाया करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – क्यों, महिम तो भक्ति की बातें भी करता है। वह तो कहता भी है खूब – 'आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।'

मास्टर (हँसकर) – आप कहलाते है, इसीलिए वह कहता है। श्री गिरीश घोष श्रीरामकृष्ण के पास पहले-पहल आने-जाने लगे हैं। आजकल वे सदा श्रीरामकृष्ण की ही बातों मे रहते हैं।

हरि – गिरीश घोष आजकल कितनी ही तरह के दर्शन करते है। यहाँ से लौटने पर सर्वदा ईश्वरी भाव मे रहते है।

श्रीरामकृष्ण – यह हो सकता है, गंगा के पास जाओ तो कितनी ही तरह की चीजे दीख पड़ती है – नाव, जहाज – कितनी चीजे।

हरि – गिरीश घोष कहते हैं, 'अब सिर्फ कर्म लेकर रहूँगा, सुबह को घड़ी देखकर दवात-कलम लेकर बैठूँगा और दिन भर वही काम (पुस्तके लिखना) किया करूँगा।' इस तरह कहते है, पर कर नही सकते। हम लोग जाते हैं तो बस यही की बाते किया करते है। आपने नरेन्द्र को भेजने के लिए कहा था, गिरीश बाबू ने कहा, 'नरेन्द्र को किराये की गाड़ी कर दूँगा।'

पाँच बजे है, छोटे नरेन्द्र घर जा रहे है। श्रीरामकृष्ण उत्तरपूर्ववाले लम्बे बरामदे मे खड़े हुए एकान्त मे उन्हे अनेक प्रकार के उपदेश द रहे है। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर वे बिदा हुए; और भी कितने ही भक्तो ने बिदाई ली।

श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए मोहिनीमोहन से बातचीत कर रहे है। लड़के के गुजर जाने पर उनकी स्त्री एक तरह से पागलसी हो गयी है। कभी रोती है, कभी हँसती है। श्रीरामकृष्ण के पास आकर बहुत कुछ शान्त हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारी स्त्री इस समय कैसी है?

मोहिनी – यहाँ आने ही से शान्त हो जाती है, वहाँ तो कभी-कभी बड़ा उत्पात मचाती है। अभी उस दिन मरने पर तुली हुई थी।

श्रीरामकृष्ण सुनकर कुछ देर सोचते रहे। मोहिनीमोहन ने विनयपूर्वक कहा, "आप दो-एक बाते बता दीजिये।"

श्रीरामकृष्ण – उससे भोजन न पकवाना। इससे सिर और भी गरम हो जाता है। और साथ-साथ आदमी रखे रहना।

(४)

श्रीरामकृष्ण की अद्भुत संन्यासावस्था

शाम हो गयी, श्रीठाकुरबाड़ी मे आरती के लिए तैयारी हो रही है। श्रीरामकृष्ण के कमरें मे दिया जला दिया गया और धूनी भी दी जा चुकी। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए जगन्माता को प्रणाम कर मधुर स्वर से उनका नाम ले रहे है। कमरे मे और कोई नही है, सिर्फ मास्टर बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण उठे। मास्टर भी खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण ने कमरे के पश्चिम और उत्तर के दरवाजो को दिखाकर उन्हे बन्द कर देने के लिए कहा। मास्टर दरवाजे बन्द कर बरामदे मे श्रीरामकृष्ण के पास आकर खड़े हुए।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, "अब मै कालीमन्दिर जाऊँगा।" यह कहकर मास्टर का हाथ पकड़ उनके सहारे कालीमन्दिर के सामने मन्दिर के चबूतरे पर जाकर बैठे। बैठने के पहले कह रहे है, "तुम उसे बुला तो लो।" मास्टर ने बाबूराम को बुला दिया।

श्रीरामकृष्ण काली के दर्शन कर उस बड़े ऑगन से होकर अपने कमरे की ओर लौट रहे है। मुख से "मॉ! मॉ! राज राजेश्वरी!" कहते जा रहे है।

कमरे मे आकर अपने छोटे तखत पर बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण की एक अद्भुत अवस्था है। किसी धातु की वस्तु को छू नही सकते। उन्होने कहा था, "मॉ अब ऐश्वर्य की बाते शायद मन से बिलकुल हटा दे रही है।" अब वे केले के पत्ते मे भोजन करते है। मिट्टी के बर्तन मे पानी पीते है। गडुआ नही छू सकते। इसीलिए भक्तो से मिट्टी के बर्तन ले आने के लिए कहा था। गडुए या थाली मे हाथ लगाने से हाथ मे झुनझुनी-सी चढ़ जाती है, दर्द होने लगता है, – जैसे सिंगी मछली का कॉटा चुभ गया हो।

प्रसन्न कुछ मिट्टी के बर्तन ले आये है, परन्तु वे बहुत छोटे है। श्रीरामकृष्ण हॅसकर कह रहे है, "ये बर्तन बहुत छोटे है। पर यह लड़का बड़ा अच्छा है। मेरे कहने पर मेरे सामने नंगा होकर खड़ा हो गया! कैसा लड़कपन है!"

बेलघर के तारक एक मित्र के साथ आये। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए है, कमरे मे दिया जल रहा है। मास्टर तथा दो एक और भक्त बैठे हुए है।

तारक ने विवाह किया है। उनके मॉ-बाप उन्हे श्रीरामकृष्ण के पास आने नही देते। कलकत्ते के बहूबाजार के पास एक मकान है, आजकल तारक वही रहा करते है। तारक को श्रीरामकृष्ण चाहते भी बहुत है। उनके साथ का लड़का जरा तमोगुणी जान पड़ता है। धर्म-विषय और श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध मे उसका कुछ व्यंगाभाव-सा है। तारक की उम्र लगभग बीस साल की होगी। तारक ने आकर भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (तारक के मित्र से) – जरा ये मन्दिर देख आओ न।

मित्र - यह सब देखा हुआ है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, तारक यहॉ आता है। क्या यह बुरा है?

मित्र – यह तो आप ही जाने।

श्रीरामकृष्ण – ये (मास्टर) हेडमास्टर है।

मित्र – ओ:।

श्रीरामकृष्ण तारक से कुशल-प्रश्न पूछ रहे है और उनसे बहुत-सी बाते कर रहे है। अनेक प्रकार की बाते करके तारक ने बिदा होना चाहा। श्रीरामकृष्ण उन्हे अनेक विषयो मे सावधान कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (तारक से) – साधो सावधान रहो! कामिनी और कांचन से सावधान

रहो। स्त्री की माया मे एक बार भी डूब गये तो बाहर आने की सम्भावना नही है। वह विशालाक्षी नदी का भँवर है, जो एक बार भी फँसा वह फिर नही निकल सकता। और यहाँ कभी-कभी आना।

तारक – घरवाले नही आने देते।

एक भक्त – अगर किसी की माँ कहे कि तू दक्षिणेश्वर न जाया कर, और कसम खाये कि जो तू वहाँ जाय, तो तू मेरा खून पिये, तो? –

श्रीरामकृष्ण – जो माँ ऐसी बात कहे, वह माँ नही है, – वह अविद्या की मूर्ति है। उस माँ की बात अगर न मानी जाय तो कोई दोष नही। वह माँ ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग मे विघ्न डालती है। ईश्वर के लिए गुरुजनो की बात का उल्लंघन किया जाय तो इसमे कोई दोष नही होता। भरत ने राम के लिए कैकेयी की बात नही मानी। गोपियो ने श्रीकृष्ण-दर्शन के लिए पति की मनाई नही सुनी। प्रह्लाद ने ईश्वर के लिए बाप की बात पर ध्यान नही दिया। बलि ने ईश्वर की प्रीति के लिए अपने गुरु शुक्राचार्य की बात नही सुनी। बिभीषण ने राम को पाने के लिए अपने बड़े भाई रावण की बातो पर ध्यान नही दिया।

"परन्तु 'ईश्वर के मार्ग पर न जाना' इस बात को छोड और सब बाते मानो।"

"देखूँ तो तेरा हाथ" यह कहकर श्रीरामकृष्ण तारक के हाथ का वजन परख रहे है। कुछ देर बाद कह रहे है, "कुछ (बाधा) है, परन्तु वह न रह जायेगी। उनसे जरा प्रार्थना करना, और यहाँ कभी-कभी आना – वह दूर हो जायेगी। क्या कलकत्ते के बहूबाजार मे तूने मकान किराये से लिया है?"

तारक – जी, मैने नही लिया, उन्ही लोगो ने लिया है।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – उन लोगो ने लिया है या तूने? बाघ के डर से न? श्रीरामकृष्ण कामिनी को बाघ कह रहे है। तारक प्रणाम करके बिदा हुए।

श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर लेटे हुए है, – तारक के लिए सोच रहे हो। एकाएक मास्टर से कहने लगे, "इन लोगो के लिए मै इतना व्याकुल क्यो होता हूँ?"

मास्टर चुपचाप बैठे हुए है, जैसे उत्तर सोच रहे हो।

श्रीरामकृष्ण फिर पूछते है, और कहते है, "कहो न।"

इधर मोहिनीमोहन की स्त्री श्रीरामकृष्ण के कमरे मे आकर उन्हे प्रणाम करके एक ओर बैठी हुई है। श्रीरामकृष्ण तारक के साथी की बात मास्टर से कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – तारक क्यो उसे अपने साथ ले आया?

मास्टर – रास्ते मे साथ के विचार से ले आया होगा। दूर तक चलना पड़ता है।

इस बात के बीच मे श्रीरामकृष्ण एकाएक मोहिनीमोहन की स्त्री से कहने लगे, "अपघात-मृत्यु के होने पर स्त्री प्रेतनी होती है। सावधान रहना! मन को समझाना। इतना देख-सुनकर भी अन्त मे क्या यही चाहती हो?"

मोहनीमोहन अब बिदा होने लगे। श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ होकर प्रणाम कर रहें हैं। उनकी स्त्री ने भी प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के उत्तर तरफवाले दरवाजे के पास आकर खड़े हुए। मोहिनीमोहन की पत्नी आँचल से सिर ढाँककर श्रीरामकृष्ण से कुछ कह रही हैं।

श्रीरामकृष्ण – यहाँ रहोगी?

पत्नी – कुछ दिन यहाँ आकर रहूँगी। नौबतखाने मे माँ हैं, उनके पास।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा तो है, परन्तु तुम मरने की बात जो कहती हो, इसी से भय होता है। फिर गंगाजी भी पास ही है!

□□□

परिच्छेद ११०

बलराम बसु के घर में

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा त्याग की पराकाष्ठा

आज फाल्गुन की कृष्णा दशमी है, बुधवार, ११ मार्च, १८८५। आज दस बजे के लगभग दक्षिणेश्वर से आकर बलराम बसु के यहाँ श्रीरामकृष्ण ने जगन्नाथजी का प्रसाद ग्रहण किया। उनके साथ लाटू आदि भक्त भी हैं।

बलराम, तुम धन्य हो! आज तुम्हारा ही घर श्रीरामकृष्ण का प्रधान कार्य-क्षेत्र हो रहा है। यहाँ श्रीरामकृष्ण कितने ही नये नये भक्तों को आकर्षित कर प्रेमरज्जु से बाँध रहे हैं, भक्तो के साथ कितना नृत्य करते हैं, गाते हैं। मानो श्रीचैतन्यदेव ने श्रीवास के भवन में प्रेम की हाट बसा दी हो!

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में बैठे हुए रोते है, अपने अन्तरंगों को देखने के लिए व्याकुल हो जाते हैं, रात को नींद नहीं आती। जगदम्बा से कहते हैं, "माँ, उसे बड़ी भक्ति है, उसे तुम खींच लो; माँ उसे यहाँ ले आओ; अगर वह न आ सके तो माँ, मुझे ही वहाँ ले चलो, मैं उसे देख लूँ।" इसीलिए श्रीरामकृष्ण बलराम के यहाँ दौड़ आते हैं। लोगो से कहा करते है, बलराम के यहाँ श्रीजगन्नाथजी की सेवा होती है, उसका अन्न बड़ा शुद्ध है।" जब आते हैं तब बलराम को भक्तों को न्योता देने के लिए भेजते हैं; कहते हैं "जाओ, नरेन्द्र को, भवनाथ को, राखाल को न्योता दे आओ; छोटा नरेन्द्र नारायण इन सब को न्योता दे आओ। इन्हे खिलाने से नारायण को खिलाना होता है। ये ऐसे-वैसे नहीं हैं, ये ईश्वरांश से पैदा हुए हैं। इन्हें खिलाने पर तुम्हारा बहुत कल्याण होगा।"

बलराम के ही यहाँ गिरीश घोष के साथ पहली बार बैठकर बातचीत हुई थी। यहीं रथ के समय कीर्तनानन्द हुआ करता है। यहीं कितने ही बार प्रेम का दरबार लगा और आनन्द की हाट जमी।

मास्टर पास ही के विद्यालय में पढ़ाते है। उन्होंने सुना है, आज दस बजे श्रीरामकृष्ण बलराम के यहाँ आयेंगे। बीच में पढ़ाई से थोड़ा अवकाश मिलने पर दोपहर के समय वे वहाँ गये। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद

बैठकखाने में जरा विश्राम कर रहे हैं। बीच बीच में बटुए से मसाला निकालकर खा रहे हैं। कुछ कम उम्रवाले भक्त उन्हे चारो ओर से घेरे हुए है।

श्रीरामकृष्ण (सस्नेह) – तुम यहाँ आये, स्कूल नही है?

मास्टर – स्कूल से आ रहा हूँ। इस समय वहाँ विशेष काम नहीं है।

एक भक्त – नही महाराज, स्कूल से भाग आये हैं। (सब हँसते हैं।)

मास्टर (स्वगत) – हाय! मानो कोई मुझे खींच लाया!

श्रीरामकृष्ण कुछ चिन्तित-से हो रहे हैं। फिर मास्टर को पास बैठाकर अनेक प्रकार की बातें करने लगे। कहा, "मेरा गमछा जरा निचोड़ तो दो और कुर्ता धूप मे डाल दो। पैर झनझना रहा है। क्या उस पर जरा हाथ फेर दे सकोगे?" मास्टर सेवा करना नही जानते, इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन्हें सेवा करना सिखा रहे है। मास्टर हकपकाकर एक एक करके वे सब काम कर रहे है। फिर वे पैरों पर हाथ फेरने लगे। श्रीरामकृष्ण उन्हें बातों ही बातों मे उपदेश दे रहे है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – क्यो जी, कुछ दिनों से लगातार मुझे ऐसा क्यों हो रहा है? धातु के किसी बरतन को मै छू नही सकता। एक बार कटोरे में हाथ लगाया तो ऐसा हो गया जैसे सिंगी मछली ने हाथ मे कॉटा मार दिया हो। हाथ में झुनझुनी-सी चढ़ गयी और दर्द होने लगा। गडुए को बिना छुए तो काम चल ही नहीं सकता, इस ख्याल से मैंने सोचा, जरा गमछे से ढककर तो देखूँ, उठा सकता हूँ या नही। यह सोचकर ज्योंही उसे छुआ कि हाथ मे झुनझुनी चढ़ गयी और बहुत दर्द होने लगा। अन्त में माता से प्रार्थना की, 'माँ, अब ऐसा काम न करूँगा, अब की बार माँ, क्षमा करो।'

(मास्टर से) – "क्यो जी, छोटा नरेन्द्र आया-जाया करता है, घरवाले क्या कुछ कहेगे? बिलकुल शुद्ध है, स्त्री-संग कभी नहीं किया।"

मास्टर – और उच्च आधार है।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, और कहता है, ईश्वरी बातें एक बार सुन लेने से मुझे याद रहती हैं। कहता है, 'बचपन मे मै रोया करता था, ईश्वर दर्शन नहीं दे रहे हैं इसलिए।'

मास्टर के साथ छोटे नरेन्द्र के सम्बन्ध में बहुत सी बातें हुई। इस समय भक्तों में से किसी ने कहा, "मास्टर महाशय, क्या आप स्कूल नहीं आयेंगे?'

श्रीरामकृष्ण – क्या बजा है?

भक्त – एक बजने को दस मिनट है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) तुम जाओ, तुम्हें देर हो रही है। एक तो काम छोड़कर आये हो। (लाटू से) राखाल कहाँ है?

लाटू – घर चला गया है।

श्रीरामकृष्ण – मुझसे मुलाकात बिना किये ही?

(२)

अवतारवाद तथा श्रीरामकृष्ण

स्कूल की छुट्टी हो जाने पर मास्टर ने आकर देखा, श्रीरामकृष्ण बलराम के बैठकखाने मे भक्तो के साथ दरबार लगाये बैठे हुए है। मुख पर हास्य की रेखा है और वही हास्य भक्तो के मुख पर भी प्रतिबिम्बित हो रहा है। मास्टर को लौटकर आते हुए देख, उनके प्रणाम करने के पश्चात्. श्रीरामकृष्ण ने उन्हे अपने पास बैठने का इशारा किया। श्री गिरीश घोष, सुरेश मित्र, बलराम, लाटू, चुन्नीलाल आदि भक्त उपस्थित है।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश से) – तुम एक बार नरेन्द्र के साथ विचार करके देखना कि वह क्या कहता है।

गिरीश (हँसकर) – नरेन्द्र कहता है, ईश्वर अनन्त है। जो कुछ हम लोग देखते या सुनते है – वस्तु या व्यक्ति – सब उनके अंश है – इतना भी कहने का हमे अधिकार नही है। Infinity (अनन्तता) जिसका स्वरूप है, उसका फिर अंश कैसे हो सकता है? अंश नही होता।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर अनन्त हो अथवा कितने ही बडे हो, वे अगर चाहे तो उनके भीतर का सार पदार्थ आदमी के भीतर से प्रकट हो सकता है, और होता भी है। वे अवतार लेते है, यह उपमा के द्वारा नही समझाया जा सकता। इसका अनुभव होना चाहिए। इसे प्रत्यक्ष करना चाहिए। उपमा के द्वारा कुछ आभास मात्र मिलता है। गौ का सीग अगर कोई छू ले, तो गौ को ही छूना हुआ, पैर या पूँछ के छूने पर भी गौ को ही छूना है; परन्तु हमारे लिए गौ के भीतर का सार भाग दूध है। वह दूध उसके स्तनो से निकलता है। उसी तरह प्रेम और भक्ति की शिक्षा देने के लिए ईश्वर मनुष्य की देह धारण करके समय समय पर आते है।

गिरीश – नरेन्द्र कहता है, उनकी सम्पूर्ण धारणा क्या कभी हो सकती है? वे अनन्त है।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश से) – ईश्वर की सब धारणा कर भी कौन सकता है? न उनका कोई बड़ा अंश, न कोई छोटा अंश सम्पूर्ण धारणा मे लाया जा सकता है; और सम्पूर्ण धारणा करने की जरूरत ही क्या है? उन्हे प्रत्यक्ष कर लेने ही से काम बन गया। उनके अवतार को देखने ही से उन्हे देखना हो गया। अगर कोई गंगाजी के पास जाकर गंगाजल का स्पर्श करता है तो वह कहता है, मै गंगाजी के दर्शन कर आया। उसे हरिद्वार से गंगासागर तक की गंगा का स्पर्श नहीं करना पड़ता। (सब हँसते है।)

"तुम्हारे पैर अगर मै छू लूँ, तो तुम्हें ही छूना हुआ। (हास्य)

"अगर समुद्र के पास जाकर कुछ पानी छू लो तो समुद्र का ही स्पर्श करना होता

है। अग्नितत्त्व सब जगह है, परन्तु लकडी मे अधिक है।''

गिरीश (हँसते हुए) – जहाँ मुझे आग मिलेगी, मुझे उसी जगह से जरूरत है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – अग्नितत्त्व लकडी मे अधिक है। अगर तुम ईश्वर की खोज करते हो तो आदमी मे खोजो। आदमी मे उनका प्रकाश अधिक होता है। जिस आदमी मे ऊर्जिता भक्ति देखोगे – देखोगे उसमे प्रेम और भक्ति, दोनो उमड रहे है – ईश्वर के लिए वह पागल हो रहा है – उनके प्रेम मे मस्त घूमता है – उस मनुष्य में, निश्चयपूर्वक समझो कि वे अवतीर्ण हो चुके है।

(मास्टर को देखकर) – ''वे तो है ही, परन्तु कही उनकी शक्ति का प्रकाश अधिक है, कही कम। अवतारो मे उनकी शक्ति का प्रकाश अधिक है। वहाँ शक्ति कभी कभी पूर्ण भाव से रहती है। अवतार शक्ति का ही होता है।''

गिरीश – नरेन्द्र कहता है, वे अवाङ्मनसगोचरम् है।

श्रीरामकृष्ण – नही, इस मन के गोचर तो नही है, परन्तु वे शुद्ध मन के गोचर अवश्य है। इस बुद्धि के गोचर नही, परन्तु शुद्ध बुद्धि के गोचर हैं। कामिनी और काचन पर मे आसक्ति गयी नही कि शुद्ध मन और शुद्ध बुद्धि की उत्पत्ति हुई। तब शुद्ध मन और शुद्ध बुद्धि दोनों एक कहलाते है। वे उस शुद्ध मन से दीख पडते है। क्या ऋषि और मुनियो ने उनके दर्शन नही किये? उन लोगो ने चैतन्य के द्वारा चैतन्य का साक्षात्कार किया था।

गिरीश (हँसकर) – नरेन्द्र तर्क मे मुझसे परास्त हो गया है।

श्रीरामकृष्ण – नही, उसने मुझसे कहा है, गिरीश घोष आदमी को अवतार कहकर जब इतना विश्वास करता है, तो इस पर मै और क्या कहता? इस तरह के विश्वास पर कुछ कहना भी न चाहिए।

गिरीश (सहास्य) – महाराज! हम लोग तो अनर्गल बाते कर रहे है, और मास्टर चुपचाप बैठे हुए है – जरा भी जबान नही हिलाते। महाराज! ये क्या सोचते है?

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – अधिक बकवाद करनेवाला, अधिक चुप्पी साधनेवाला, कान मे तुलसी खोसनेवाला आदमी, बडा लम्बा घूँघट काढनेवाली स्त्री, काईवाले तालाब का पानी, इनकी गणना अनर्थकारियो मे है। (सब हँसते है)। (हँसकर) परन्तु ये ऐसे नही है, ये गम्भीर प्रकृति के है। (सब हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण ने जिन्हे अनर्थकारियो मे गिनाया, उनके लिए वहाँ उन्होने एक पद कहा था।

गिरीश – महाराज! वह पद आपने कैसे कहा?

श्रीरामकृष्ण – इन आदमियो से सचेत रहना चाहिए। पहले तो वह है जो अधिक बकता हो – अनाप-शनाप, फिर चुपचाप बैठा रहनेवाला – जिसके मन की थाह मिलती

ही नही -- गोताखोर भी मिट्टी न छू पाये, फिर कान मे तुलसी के दल खोसनेवाला, कान मे इसलिए तुलसी खोस लेता है कि लोग समझे, यह बड़ा भक्त है लम्बा घूँघट काढनेवाली औरत – लम्बा घूँघट देखकर आदमी सोचते है कि यह बड़ी सती है, परन्तु बात ऐसी नही है, और काईवाले तालाब के पानी मे नहाने से ही सन्निपात हो जाता है।

चुन्नीलाल – इनके (मास्टर के) नाम पर एक बात फैली है। छोटा नरेन्द्र, बाबूराम, इनके विद्यार्थी है। नारायण, पल्टू, पूर्ण, तेजचन्द्र – ये भी इनके विद्यार्थी है। बात फैली है कि ये उन्हे यहाँ ले आते है और इस तरह उनका लिखना-पढना मिट्टी मे मिल रहा है। इन पर लोग दोषारोपण कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – उनकी बात पर विश्वास कौन करेगा?

इस तरह बाते हो रही थी, इतने मे नारायण आये और उन्होने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। नारायण का रग गोरा, उम्र सत्रह-अठारह साल की है, स्कूल मे पढ़ते है, श्रीरामकृष्ण इन्हे बहुत प्यार करते है। इन्हे देखने और खिलाने को वे सदा ही व्याकुल रहा करते है। इनके लिए दक्षिणेश्वर मे बैठे हुए रोते भी है। नारायण को वे साक्षात् नारायण देखते है।

गिरीश (नारायण को देखकर) – किसने तुम्हे खबर दी? देखते है, मास्टर ने सब को साफ कर दिया। (सब हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – बैठो। चुपचाप बैठो। एक तो वैसे ही इन्हे (मास्टर को) लोग दोष दे रहे है।

फिर नरेन्द्र की बात चली।

एक भक्त - अब उतना क्यो नही आते?

श्रीरामकृष्ण – अन्न की चिन्ता भी बडी बिकट होती है, बडो बडो की अक्ल उस समय काम नही देती।

बलराम – शिव गुहा के घराने के अन्नदा गुहा के पास नरेन्द्र का आना-जाना खूब है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, एक आफिसवाले के यहाँ नरेन्द्र, अन्नदा, ये लोग जाया करते है। वहाँ सब मिलकर ब्राह्म समाज करते है।

एक भक्त – उनका (आफिसवाले का) नाम तारापद है।

बलराम (हँसते हुए) – कुछ ब्राह्मण कहते है, अन्नदा गुहा बड़ा अहंकारी है।

श्रीरामकृष्ण – ब्राह्मणो की इन सब बातो पर ध्यान ही नही देना चाहिए। उनका हाल तो जानते ही हो, जो नही देता वह बदमाश हो जाता है और जो देता है वह अच्छा। (सब हँसते है।) अन्नदा को मै जानता हूँ, वह अच्छा आदमी है।

(३)

भक्तों के साथ भजनानन्द में

श्रीरामकृष्ण की गाना सुनने की इच्छा है। बलराम के बैठकखाने के कमरे में आदमी भरे हैं। सब के सब उनकी ओर ताक रहे है, उनकी वाणी सुनने के लिए।

श्रीरामकृष्ण की इच्छा-पूर्ति के लिए तारापद गाने लगे –

"केशव कुरु करुणा दीने कुंज-कानतचारी।
माधव मनमोहन मोहनमुरलीधारी।।
व्रजकिशोर कालीयहर कातर-भयभंजन,
नयनबॉका बॉका शिखिपाखा, राधिका-हृदिरंजन।
गोवर्धनधारण, वनकुसुमभूषण,
दामोदर कंसदर्पहारी, श्याम रासरसविहारी।।"

श्रीरामकृष्ण (गिरीश से) – अहा, बड़ा अच्छा गाना है! सब गानो की रचना तुम्ही ने की है?

भक्त – जी हॉ, 'चैतन्यलीला' के सब गाने इन्हीं के बनाये हुए है।

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश से) – यह गाना उतरा भी खूब है।

(गानेवाले के प्रति) – "निताई का गाना आता है?"

फिर गाना होने लगा, नित्यानन्द ने गाया था –

(भावार्थ) "किशोरी का प्रेम अगर तुझे लेना है तो चला आ, . . . प्रेम का ज्वार बहा जा रहा है। अरे, वह प्रेम शत धाराओं में बह रहा है, जो जितना चाहता है, उसे उतना ही मिलता है। प्रेम की किशोरी, स्वयं इच्छा करके प्रेम वितरण कर रही है। राधा के प्रेम मे तुम भी 'जय कृष्ण जय कृष्ण' कहो। उस प्रेम से प्राण मस्त हो जाते है, उसकी तरंगो पर प्राण नाचने लगते है। राधा के प्रेम से 'जय कृष्ण जय कृष्ण' कहता हुआ तू चला आ।"

फिर गौरांग का गाना होने लगा –

(भावार्थ) – "किसके भाव मे आकर गौरांग के वेश में तुमने प्राणों को शीतल कर दिया? प्रेम के सागर में तूफान आ गया है, अब कुल की मर्यादा न रह जायेगी। व्रज में गोपाल का वेश धारण कर तुमने गौएँ चरायी थीं, बंसी बजाकर गोपियों का मन मुग्ध कर लिया था, गोबर्धन धारण कर वृन्दावन की रक्षा की थी, गोपियों के मान करने पर तुम उनके पैरों पड़े थे – आँसुओं से तुम्हारा चन्द्रानन प्लावित हो गया था।"

सब मास्टर से गाने के लिए अनुरोध कर रहे हैं। मास्टर स्वभाव के कुछ लजीले हैं, वे धीमे शब्दों में माफी माँगने लगे।

गिरीश (श्रीरामकृष्ण से हँसकर) – महाराज, मास्टर किसी तरह नही गा रहे है।

श्रीरामकृष्ण (विरक्ति के स्वर मे) – वह स्कूल मे भले ही दॉत दिखाये, मुँह खोले, पर गाने मे ही उसे दुनिया भर की लज्जा सवार हो जाती है।

मास्टर चुपचाप बैठे रहे।

सुरेश मित्र कुछ दूर बैठे थे। श्रीरामकृष्ण उन्हे सस्नेह देखकर गिरीश की ओर इशारा करके हँसते हुए कह रहे है –

"तुम्ही नही, ये (गिरीश) तुममे भी बढे-चढे है।"

सुरेश (हँसते हुए) – जी हॉ, मेरे बडे भाई है। (सब हँसते है।)

गिरीश (श्रीरामकृष्ण से) – अच्छा महाराज, बचपन मे मैने न कुछ पढ़ा न लिखा, फिर भी लोग मुझे विद्वान् कहते है।

श्रीरामकृष्ण – महिम चक्रवर्ती ने शास्त्रावलोकन खूब किया है – आधार भी उच्च है। (मास्टर से) क्यो जी ?

मास्टर – जी हॉ।

गिरीश – क्या ? विद्या ? यह बहुत देख चुका हूँ। अब इसके चकमे मे नही आता।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – यहाँ का भाव क्या है, जानते हो ? पुस्तक और शास्त्र ये सब केवल ईश्वर के पास पहुँचने का मार्ग ही बताते है। मार्ग - उपाय – के समझ लेने पर फिर पुस्तको और शास्त्रो का क्या जरूरत है ? तब स्वय अपना काम करना चाहिए।

"एक आदमी को एक चिट्ठी मिला। उसको उसके किसी आत्मीय ने कुछ चीजे भेजने के लिए लिखा था। जब चीजो के खरीदने का समय आया, तब चिट्ठी की तलाश करने पर भी वह नही मिल रही थी। मकानमालिक ने बडी उत्सुकता के साथ खोजना शुरू किया। बडी देर तक कई आदमियो ने मिलकर खोजा। अन्त मे वह चिट्ठी मिल गयी। तब उसे खूब आनन्द हुआ। मालिक ने बडी उत्सुकता के साथ चिट्ठी अपने हाथ मे ले ली, और उसमे जो कुछ लिखा हुआ था, पढने लगा, लिखा था – पाँच सेर सन्देश भेजियेगा, एक धोती, तथा कुछ अन्य चीजे – न जाने क्या क्या। तब फिर चिट्ठी की कोई जरूरत न रही, चिट्ठी फेककर सन्देश, कपडे तथा और और चीजो की व्यवस्था करने को वह चल दिया। चिट्ठी की जरूरत तो तभी तक थी, जब तक सन्देश, कपड़े आदि के विषय मे ज्ञान नही हुआ था। इसके बाद प्राप्ति की चेष्टा हुई।

"शास्त्रो मे तो उनके पाने के उपायो की ही बाते मिलेगी। परन्तु खबरें लेकर काम करना चाहिए। तभी तो वस्तुलाभ होगा।

"केवल पाण्डित्य से क्या होगा ? बहुत से श्लोक और बहुत से शास्त्र पण्डितो के समझे हुए हो सकते है, परन्तु संसार पर जिसकी आसक्ति है, मन ही मन कामिनी और

कांचन पर जिसका प्यार है, शास्त्रो पर उसकी धारणा नही हुई – उसका पढ़ना व्यर्थ है। पंचांग मे लिखा है कि इस साल वर्षा खूब होगी, परन्तु पंचांग को दाबने पर एक बूँद भी पानी नही निकलता, भला एक बूँद भी तो गिरता, परन्तु उतना भी नही गिरता!" (सब हँसते है।)

गिरीश (सहास्य) – महाराज, पंचांग को दाबने पर एक बूँद भी पानी नही गिरता? (सब हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – पण्डित खूब लम्बी लम्बी बाते ता करते है, परन्तु उनकी नजर कहाँ है? – कामिनी और कांचन पर – देह-सुख और रुपयो पर।

"गीध बहुत ऊँचे उड़ता है, परन्तु उसकी नजर मरघट पर ही रहती है। (हास्य) वह बस मुर्दे की लाश ही खोजता रहता है – कहाँ है मरघट और कहाँ है मरा हुआ बैल!

(गिरीश से) – "नरेन्द्र बहुत अच्छा है, गाने-बजाने मे, पढ़ने लिखने मे – सब बातो मे पक्का है, इधर जितेन्द्रिय भी है, विवेक और वैराग्य भी है, सत्यवादी भी है। उसमे बहुत से गुण है।

(मास्टर से) – "क्यो जी! कैसा है, अच्छा है न खूब?"

मास्टर – जी हाँ, बहुत अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से अकेले मे) – देखो, उसमे (गिरीश मे) अनुराग खूब है, और विश्वास भी है।

मास्टर आश्चर्य मे आकर एकदृष्टि से गिरीश को देख रहे है। गिरीश कुछ ही दिनो से श्रीरामकृष्ण के पास आने लगे है, परन्तु मास्टर ने देखा, श्रीरामकृष्ण से मानो उनका बहुत दिनो का परिचय हो – जैसे वे कोई परम आत्मीय हो, जैसे एक ही सूत मे पिरोये हुए मणियो मे से एक हो।

नारायण ने कहा, "महाराज, क्या गाना न होगा?"

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से माता का नाम और गुणगान करने लगे –

(भावार्थ) – "आदरणीय श्यामा माँ को यत्नपूर्वक हृदय मे रखना। ऐ मन, तू देख और मै देखूँ, कोई और जैसे न देखने पावे। कामादि को धोखा देकर, ऐ मन, आ, एकान्त मे उनके दर्शन करे। रसना को हम लोग साथ रखेगे, ताकि वह 'माँ माँ' कहकर पुकारती रहे। जितने कुरुचि कुमन्त्री है उन्हे पास भी न फटकने देना। ज्ञान के नेत्रो को पहरेदार बनाना और उन्हे सतर्क रहने के लिए होशियार कर देना।"

श्रीरामकृष्ण त्रितापपीड़ित संसारियों का भाव अपने पर आरोपित कर माता से अभिमानपूर्वक कह रहे है –

(भावार्थ) – "माँ, आनन्दमयी होकर तुम मुझे निरानन्द न करना। तुम्हारे दोनो चरणो को छोड़ मेरा मन और कुछ भी नही जानता। माँ, मुझे यम बदमाश कहता है, मै

उसे क्या जवाब दूँ, तुम्हीं बता दो। मेरे मन की यह इच्छा थी की 'भवानी' कहकर मैं भव से पार हो जाऊँ। तुम मुझे इस अछोर सागर में डुबो दोगी, यह विचार स्वप्न में भी मुझे न था। मैं दिन-रात तुम्हारा दुर्गा-नाम लिया करता हूँ, फिर भी मेरे इन असंख्य दु:खों का विनाश न हो पाया। ऐ हरसुन्दरी, अब की बार अगर मैं मरा, तो समझ लेना कि तुम्हारा यह दुर्गा-नाम फिर कोई न लेगा।"

फिर वे नित्यानन्दमयी के ब्रह्मानन्द के स्वरूप का कीर्तन करने लगे –

(भावार्थ) – "तुम शिव के साथ सदा ही आनन्द में मग्न हो रही हो। कितने ही रंग दिखा रही हो। मां, सुधा पान करके लड़खड़ाती हुई भी तुम गिर नहीं पड़ती।"

भक्तगण नि:स्तब्ध भाव से गाना सुन रहे हैं। वे टकटकी लगाये श्रीरामकृष्ण की इस आत्मविस्मृत प्रमत्त अवस्था का अवलोकन कर रहे हैं।

गाना समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – "आज मेरा गाना अच्छा नही हुआ। जुकाम हो गया है।"

(४)

श्रीरामकृष्ण की प्रार्थना

सन्ध्या हो आयी है। समुद्र के वक्ष:स्थल पर, जहाँ अनन्त की नील छाया पड़ रही है, घने जंगलो में, आसमान को छूनेवाले पर्वतों की चोटियों पर, हवा से काँपती हुई नदी के तट पर, दिगन्त के छोर तक फैले हुए प्रान्तर में साधारण मानव का सहज ही भावान्तर हो जाता हैं। यह सूर्य जो समस्त संसार को आलोकित कर रहा था, कहाँ गया? बालक सोच रहा है – तथा सोच रहे हैं बालकस्वभाव महापुरुष। सन्ध्या हो गयी। कैसा आश्चर्य है! किसने ऐसा किया? चिड़ियाँ डालियों पर बैठी हुई चहक रही है, मनुष्यों में जिन्हे चैतन्य हो गया है, वे भी उस आदिकवि – कारण के कारण पुरुषोत्तम – का नाम ले रहे हैं।

बातचीत करते हुए सन्ध्या हो गयी। भक्तों में, जो जिस आसन पर बैठा था, वह उसी पर बैठा रहा। श्रीरामकृष्ण मधुर नाम ले रहे हैं। सब लोग उत्सुकता से दत्तचित्त हो सुन रहे हैं। इस तरह का मधुर नाम उन लोगों ने कभी नहीं सुना, मानो सुधावृष्टि हो रही है। इस तरह प्रेम से भरे हुए बालक का 'माँ माँ' कहकर पुकारना उन लोगों ने कभी नही सुना। आकाश, पर्वत, महासागर, वन, इन सब को देखने की अब क्या जरूरत है? गौ के सींग, पैर और शरीर के दूसरे अंगों को देखने की अब क्या जरूरत है? श्रीरामकृष्ण ने गौ के जिन स्तनों की बात कही है, इस कमरे में हम वही तो नहीं देख रहे हैं? सब के अशान्त मन को कैसे शान्ति मिली? निरानन्द का संसार आनन्द की धारा में कैसे प्लावित हो गया? भक्तों को आनन्दमग्न और शान्तिपूर्ण क्यों देख रहा हूँ? ये प्रेमिक संन्यासी

क्या सुन्दर रूपधारी अनन्त ईश्वर है? दूध के पिपासुओ को क्या यही दूध मिल सकेगा? अवतार हो या कोई भी हो, मन तो इन्ही के श्रीचरणो मे बिक गया, अब और कही जाने की शक्ति नही रही। इन्ही को अपने जीवन का ध्रुवतारा बना लिया है। देखूँ तो सही, इनके हृदय-सरोवर मे वे आदिपुरुष किस तरह प्रतिबिम्बित हो रहे है।

भक्तो मे से कोई कोई इस तरह का चिन्तन कर रहे है और श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से निकले हुए हरि का नाम और माँ का नाम सुन-सुनकर कृतार्थ हो रहे है। नामगुण-कीर्तन के पश्चात् श्रीरामकृष्ण प्रार्थना करने लगे, मानो साक्षात् भगवान् प्रेम का शरीर धारण कर जीवो को शिक्षा दे रहे है कि कैसे प्रार्थना करनी चाहिए। कहा – "माँ, मै तुम्हारी शरण मे हूँ – शरणागत हूँ! तुम्हारे चरणकमलो मे मैंने शरण ली है। माँ, मै देह-सुख नही चाहता, मान सम्मान नही चाहता, अणिमादि अष्ट सिद्धियाँ नही चाहता, केवल यह कहता हूँ कि तुम्हारे पादपद्मो मे शुद्धा भक्ति हो - निष्काम, अमला, अहेतुकी भक्ति। और माँ, तुम्हारी भुवनमोहिनी माया मे मुग्ध न होऊँ – तुम्हारी माया के संसार के कामिनी-कांचन पर कभी प्यार न हो। माँ, तुम्हारे सिवा मेरा और कोई नही है। मै भजनहीन हूँ, साधनाहीन हूँ, ज्ञानहीन हूँ, भक्तिहीन हूँ, कृपा करके अपने श्रीपादपद्मो मे मुझे भक्ति दो।"

मणि सोच रहे है – 'तीनो काल मे जो उनका नाम ले रहे है – जिनके श्रीमुख से निकली हुई नामगंगा तैलधारा की भाँति निरवच्छिन्ना है, फिर उनके लिए सन्ध्या-वन्दना का क्या प्रयोजन?' मणि ने बाद मे समझा कि लोकशिक्षा के लिए ही श्रीरामकृष्ण ने मानवशरीर धारण किया है – "हरि ने स्वयं ही आकर योगी के वेश मे नाम का संकीर्तन किया।"

गिरीश ने श्रीरामकृष्ण को न्योता दिया। उसी रात को जाना है।

श्रीरामकृष्ण – रात न होगी?

गिरीश – नही, आप जब चाहे, आइयेगा। मुझे आज थिएटर जाना होगा, उन लोगो मे लड़ाई हो रही है, उसका निपटारा करना है।

(५)

श्रीरामकृष्ण का अद्भुत भावावेश

गिरीश का न्योता है, रात ही को जाना होगा। इस समय रात के नौ बजे है। *श्रीरामकृष्ण को खिलाने के लिए बलराम भी भोजन का प्रबन्ध करा रहे थे।* कही बलराम को दुःख न हो, इसलिए श्रीरामकृष्ण ने गिरीश के यहाँ जाते समय बलराम से कहा, "बलराम, तुम भी भोजन भिजवा देना।"

दुमँजले से नीचे उतरते हुए श्रीरामकृष्ण भगवद्भावना मे मस्त हो रहे है, जैसे

मतवाला। साथ मे नारायण है और मास्टर। पीछे राम, चुन्नी आदि कितने ही है। एक भक्त पूछ रहे है, 'साथ कोन जायेगा?' श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'किसी एक के जाने ही से काम हो जायेगा।' उतरते हुए ही विभोर हो रहे है। नारायण हाथ पकड़ने के लिए बढ़े कि कही गिर न जायँ। श्रीरामकृष्ण को इससे विरक्ति-सी हुई। कुछ देर बाद नारायण से उन्होने स्नेहपूर्ण स्वर मे कहा, "हाथ पकड़ने पर लोग मतवाला समझेगे, मै खुद चला जाऊँगा।'

बोसपाड़े का तिराहा पार कर रहे है – कुछ ही दूर पर गिरीश का घर है। इतने शीघ्र क्यो जा रहे है? भक्त सब पीछे रह जाते है। शायद हृदय मे किसी अद्भुत दिव्यभाव का आवेश हो रहा है। वेदो मे जिन्हे वाणी और मन से परे कहा है, क्या उन्ही की चिन्ता करते हुए श्रीरामकृष्ण पागल की तरह लड़खड़ाते हुए चले जा रहे है? अभी कुछ ही समय हुआ होगा, उन्होने बलराम के यहाँ कहा था, वे वाणी और मन से परे नही है, वे शुद्ध मन शुद्ध बुद्धि और शुद्ध आत्मा के गोचर है। शायद वे उस परमपुरुष का साक्षात्कार कर रहे है। क्या यही देख रहे है - 'जो कुछ है सो तू ही है'?

नरेन्द्र आ रहे है। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के लिए पागल रहते है। नरेन्द्र सामने आये, परन्तु श्रीरामकृष्ण कुछ बोल न सके। लोग इसी को 'भाव' कहते है; क्या श्रीगौरांग को भी ऐसा ही होता था?

कौन इस भावावस्था को समझेगा? गिरीश के घर मे जानेवाली गली के सामने श्रीरामकृष्ण आये। भक्त सब साथ है। अब आप नरेन्द्र से बोले –

"क्यो भैया, अच्छे हो न? मै उस समय कुछ बोल नही सका।"

श्रीरामकृष्ण के अक्षर-अक्षर मे करुणा भरी हुई है। तब भी वे गिरीश के दरवाजे पर नही पहुँचे थे।

श्रीरामकृष्ण एकाएक खड़े हो गये। नरेन्द्र की ओर देखकर बोले, "एक बात है, एक तो यह (देह) है और एक वह (संसार)।"

जीव और संसार। वे ही जाने कि भाव मे वे यह सब क्या देख रहे थे। अवाक् होकर उन्होने क्या देखा? दो ही एक बात वे कह सके थे – जैसे वेदवाक्य या देववाणी, अथवा जैसे कोई समुद्र के तट पर खड़ा हुआ अनन्त तरंगमालाओ से उठते हुए अनाहत नाद की दो ही एक ध्वनि सुनता है, उसी तरह उस अनन्त ज्ञानराशि से निकले हुए दो ही एक शब्द श्रीरामकृष्ण के पास खड़े हुए भक्तो ने सुने।

(६)

नित्यगोपाल से वार्तालाप

गिरीश दरवाजे पर से श्रीरामकृष्ण को ले जाने के लिए आये हैं। भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण के बिलकुल निकट आ जाने पर गिरीश दण्ड की तरह श्रीरामकृष्ण के पैरो

पर गिर पड़े। आज्ञा पाकर उठे, श्रीरामकृष्ण की पदधूलि ली और उन्हें अपने साथ दुमँजले के बैठकखाने में ले जाकर बैठाया। भक्तों ने भी आसन ग्रहण किया। उन्हीं के पास बैठकर उनका वचनामृत पान करने की सब की इच्छा है।

आसन ग्रहण करते हुए श्रीरामकृष्ण ने देखा, एक संवादपत्र पड़ा हुआ था। संवादपत्र में विषयी मनुष्यों की बातें रहती हैं – दूसरों की चर्चा, दूसरों की निन्दा, यही सब रहता है, अतएव श्रीरामकृष्ण की दृष्टि में वह अपवित्र है; उन्होंने उसे हटा देने के लिए इशारा किया। कागज के हटाने के बाद उन्होंने आसन ग्रहण किया।

नित्यगोपाल ने प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (नित्यगोपाल से) – वहाँ? –

नित्यगोपाल – जी हाँ, दक्षिणेश्वर मैं नहीं जा सका, शरीर अस्वस्थ था, दर्द है।

श्रीरामकृष्ण – कैसा है तू?

नित्यगोपाल – अच्छा नहीं रहता।

श्रीरामकृष्ण – मन को कुछ निम्न पर लाना।

नित्यगोपाल – आदमी अच्छे नहीं लगते। कितनी ही बातें लोग कहा करते हैं – कभी कभी मुझे भय होता है। कभी कभी साहस भी खूब होता है।

श्रीरामकृष्ण – होगा क्यों नहीं? तेरे साथ रहता कौन है?

नित्यगोपाल – तारक* हमारे साथ रहता है। उसे भी कभी कभी जी नही चाहता।

श्रीरामकृष्ण – नागा कहता था, उसके मठ में एक सिद्ध था, वह आसमान की ओर नजर उठाये हुए चला जाता था। परन्तु उसका एक साथी चला जाने से उसे बड़ा दु:ख हुआ, वह अधीर हो गया।

कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण का भाव-परिवर्तन हो गया। किसी एक भाव में वे निर्वाक् हो गये। कुछ देर बाद कह रहे हैं, "तू आया है? मैं भी आया हूँ।"

यह बात कौन समझेगा? क्या यही देवभाषा है?

(७)

अवतार के सम्बन्ध में विचार

कितने ही भक्त आये हुए हैं। श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए हैं। नरेन्द्र, गिरीश, राम, हरिपद, चुन्नी, बलराम, मास्टर – कितने ही हैं।

नरेन्द्र नहीं मानते कि मनुष्य की देह में कभी अवतार हो सकता है। इधर गिरीश को ज्वलन्त विश्वास है कि प्रत्येक युग में ईश्वर का अवतार होता है, – वे मनुष्य की देह

* श्री तारकनाथ घोषाल – स्वामी शिवानन्दजी।

धारण करके संसार में आते हैं। श्रीरामकृष्ण की बड़ी इच्छा है कि इस सम्बन्ध में दोनों विचार करें। श्रीरामकृष्ण गिरीश से कह रहे हैं, "तुम दोनों जरा अंग्रेज़ी में विचार करो, मै सुनूँगा।"

विचार आरम्भ हुआ। अंग्रेजी में न होकर बंगला मे ही होने लगा – बीच-बीच मे अंग्रेजी के दो-एक शब्द निकल जाते थे। नरेन्द्र ने कहा, "ईश्वर अनन्त है, उनकी धारणा करना क्या हम लोगों की शक्ति का काम है? वे सब के भीतर हैं, केवल किसी एक के ही भीतर वे आये हैं, ऐसी बात नहीं।'

श्रीरामकृष्ण (सस्नेह) – इसका जो मत है, वही मेरा भी है। वे सब जगह है; परन्तु इतनी बात है कि शक्ति की विशेषता है। कही तो अविद्याशक्ति का प्रकाश है, कहीं विद्याशक्ति का। किसी आधार में शक्ति अधिक है, किसी में कम, इसलिए सब आदमी समान नहीं है।

राम – इस तरह के वृथा तर्क से क्या फायदा है?

श्रीरामकृष्ण – नही, नहीं; इसका एक खास अर्थ है।

गिरीश – तुम्हे कैसे मालूम हुआ कि वे देह धारण करके नही आते?

नरेन्द्र – वे अवाङ्मनसगोचरम् हैं।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, वे शुद्ध-बुद्धि-गोचर हैं। शुद्ध बुद्धि और शुद्ध आत्मा, ये एक ही वस्तु हैं। ऋषियों ने शुद्ध बुद्धि के द्वारा शुद्ध आत्मा का साक्षात्कार किया था।

गिरीश (नरेन्द्र से) – मनुष्य में उनका अवतार न हो तो समझाये फिर कौन? मनुष्य को ज्ञान-भक्ति देने के लिए वे देह धारण करते हैं। नहीं तो शिक्षा कौन देगा?

नरेन्द्र – क्यों? वे अन्तर में रहकर समझायेंगे।

श्रीरामकृष्ण (सस्नेह) – हाँ, हाँ, अन्तर्यामी के रूप से वे समझायेंगे।

फिर घोर तर्क ठन गया। Infinity (अनन्त) के अंश किस तरह होंगे, हैमिल्टन क्या कहते हैं, हर्बर्ट स्पेन्सर क्या कहते हैं, टिण्डल, हक्सले क्या कह गये हैं, ये सब बातें होने लगीं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – देखो, यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता! मैं सब वही देख रहा हूँ, विचार अब इस पर क्या करूँ? देख रहा हूँ – वे ही सब हैं, सब कुछ वे ही हुए हैं। यह भी है, और वह भी। एक अवस्था में अखण्ड में मन और बुद्धि खो जाती है। नरेन्द्र को देखकर मेरा मन अखण्ड में लीन हो जाता है। (गिरीश से) इसके बारे में तुम्हारी क्या राय है?

गिरीश (हँसते हुए) – आप मुझसे क्यो पूछते हैं? इतने ही को छोड़ मानो और सब कुछ मैं जानता हूँ! (सब हँसने लगे।)

श्रीरामकृष्ण – दो श्रेणी बिना उतरे मुख से बोला नही जाता। "वेदान्त – शंकर ने

जो कुछ समझाया है, वह भी है और रामानुज का विशिष्टाद्वैतवाद भी है।"

नरेन्द्र – विशिष्टाद्वैतवाद क्या है?

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र से) – विशिष्टाद्वैतवाद रामानुज का मत है। अर्थात् जीवजगत्-विशिष्ट ब्रह्म। सब मिलकर एक।

"जैसे एक बेल। एक ने उसके खोपड़े को अलग, बीजों को अलग और गूदे को अलग कर लिया था। फिर यह समझने की जरूरत हुई कि बेल वजन में कितना था। तब सिर्फ गूदा तौलने पर बेल का वजन कैसे पूरा उतर सकता था? क्यों कि पूरा वजन समझना है तो खोपड़ा, बीज और गूदा तीनों ही एक साथ लेने होंगे। खोपड़े और बीजों को निकालकर गूदे को ही लोग असल चीज समझते हैं। फिर विचार करके देखो – जिस वस्तु का गूदा है, उसी का खोपड़ा भी है और उसी के बीज भी। पहले नेति नेति करके जाना पड़ता है; जीव नेति, जगत् नेति इस तरह का विचार करना चाहिए, ब्रह्म ही वस्तु है और सब अवस्तु; फिर यह अनुभव होता है – जिसका गूदा है, खोपड़ा और बीज भी उसके हैं; जिसे ब्रह्म कहते हो, उसी से जीव और जगत् भी हुए हैं। जिसकी नित्यता है, लीला भी उसी की है। इसीलिए रामानुज कहते थे, जीवनजगत्-विशिष्ट ब्रह्म। इसे ही विशिष्टाद्वैतवाद कहते है।"

(८)

ईश्वरदर्शन। अवतार प्रत्यक्षसिद्ध हैं

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – मैं यह प्रत्यक्ष देख रहा हूँ, विचार अब और क्या करना हैं? मैं देख रहा हूँ, वे ही सब कुछ हुए हैं – वे ही जीव और जगत हुए हैं।

"परन्तु चैतन्य का लाभ हुए बिना चैतन्य को कोई जान नहीं सकता। विचार तो तभी तक है जब तक उन्हें कोई पा नही लेता। केवल जबानी जमाखर्च से काम न होगा, मैं देख रहा हूँ, वे ही सब कुछ हुए हैं। उनकी कृपा से चैतन्य लाभ करना चाहिए। चैतन्य लाभ करने पर समाधि होती है, कभी कभी देह भी भूल जाती है, कामिनी और कांचन पर आसक्ति नहीं रह जाती, – ईश्वरी बातों के सिवा और कुछ नहीं सुहाता, विषय की बातें सुनकर कष्ट होता है।

"चैतन्य प्राप्त करके ही मनुष्य चैतन्य को जान सकता है।" अब श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं –

"मैंने देखा है, विचार करने पर एक तरह का ज्ञान होता है, और ध्यान करने पर लोग एक दूसरी तरह उन्हें समझते हैं। और वे जब खुद दिखा देते हैं तब वे एक और है।
"वे जब खुद दिखलाते हैं कि अवतार इस प्रकार होता है, वे जब अपनी मनुष्यलीला समझा देते हैं, तब विचार करने की जरूरत नहीं रह जाती; किसी के समझाने की

आवश्यकता नही रहती। किस तरह – जानते हो? – जैसे अँधेरे कमरे के भीतर दियासलाई घिसने से एकाएक उजाला हो जाता है। उसी तरह एकाएक वे अगर उजाला दे दे तो सब सन्देह अपने आप मिट जाते हैं। इस तरह विचार करके उन्हें कौन जान सकता है?''

श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को पास बुलाकर बैठाया और कुशल-प्रश्न करते हुए बड़े ही प्यार से बातचीत आरम्भ की।

नरेन्द्र (श्रीरामकृष्ण से) – तीन-चार दिन तो मैंने काली का ध्यान किया, परन्तु कहाँ मुझे तो कहीं कुछ नही हुआ।

श्रीरामकृष्ण – धीरे-धीरे होगा। काली और कोई नहीं, जो ब्रह्म हैं वही काली भी है। काली आद्याशक्ति है। जब वे निष्क्रिय रहती हैं, तब उन्हे ब्रह्म कहता हूँ और जब वे सृष्टि, स्थिति और प्रलय करती है, तब उन्हें शक्ति कहता हूँ, काली कहता हूँ। जिन्हें तुम ब्रह्म कह रहे हो, उन्हें ही मैं काली कहता हूँ।

''ब्रह्म और काली अभेद हैं। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। अग्नि को सोचते ही उसकी दाहिका शक्ति की चिन्ता आ जाती है। काली के मानने पर ब्रह्म को मानना पड़ता है और ब्रह्म को मानने पर काली को।

''ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं, मैं उन्हें ही शक्ति – काली – कहता हूँ।''

अब रात हो रही है। गिरीश हरिपद से कह रहे है, ''भाई, एक गाड़ी अगर ला दो तो बड़ा उपकार मानूँ – थिएटर जाना है।''

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – देखना, कहीं भूल न जाना। (सब हँसते हैं।)

हरिपद (हँसकर) – मैं लाने के लिए जा रहा हूँ, तो ले क्यों नहीं आऊँगा?

गिरीश – आपको छोड़कर भी थिएटर जाना पड रहा है।

श्रीरामकृष्ण – नही, दोनों तरफ की रक्षा करनी चाहिए। राजा जनक दोनों बचाकर – संसार तथा ईश्वर – दूध का कटोरा खाली किया करते थे। (सब हँसते हैं।)

गिरीश – सोचता हूँ, थिएटर को उन लड़कों के हाथ में छोड़ दूँ।

श्रीरामकृष्ण – नहीं नहीं, यह अच्छा है। बहुतों का इससे उपकार हो रहा है।

नरेन्द्र (धीमे स्वर में) – यह (गिरीश) अभी तो ईश्वर और अवतार की बात कर रहे थे, अब इन्हें थिएटर घसीट रहा है!

(९)

ईश्वरदर्शन तथा विचार-मार्ग

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को अपने पास बैठाकर एकदृष्टि से उन्हें देख रहे हैं। एकाएक वे उनके पास और सरककर बैठे। नरेन्द्र अवतार नहीं मानते तो इससे क्या? श्रीरामकृष्ण

का प्यार मानो और उमड़ पड़ा। नरेन्द्र की देह पर हाथ फेरते हुए कह रहे हैं " '(राधे) तुमने मान किया तो क्या हुआ, हम लोग भी तुम्हारे मान में तुम्हारे साथ ही हैं।'

(नरेन्द्र से) – "जब तक विचार है, तब तक वे नहीं मिले। तुम लोग विचार कर रहे थे, मुझे अच्छा नहीं लग रहा था।

"जहाँ न्योता रहता है, वहाँ शब्द तभी तक सुन पड़ता है जब तक लोग भोजन करने के लिए बैठते नहीं। तरकारी और पूड़ियाँ आयीं नही कि बारह आने गुलगपाड़ा घट जाता है। (सब हँसते हैं।) दूसरी चीजें ज्यो ज्यों आती हैं, त्यों त्यों आवाज घटती जाती है। दही आया कि बस सपासप आवाज रह गयी। फिर भोजन हो जाने पर निद्रा।

"जितना ही ईश्वर की ओर बढ़ोगे, विचार उतना ही घटता जायेगा। उन्हें पा लेने पर फिर शब्द या विचार नहीं रह जाते। तब रह जाती है निद्रा – समाधि।"

यह कहकर नरेन्द्र की देह पर हाथ फेरते हुए स्नेह कर रहे हैं और 'हरिः ॐ, हरिः ॐ, हरिः ॐ' कह रहे हैं।

वैसा क्यों कह तथा कर रहे हैं? क्या श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के अन्दर नारायण का साक्षात् दर्शन कर रहे है? क्या यही मनुष्य में ईश्वर-दर्शन है? बड़े आश्चर्य की बात है! देखते ही देखते श्रीरामकृष्ण का बाह्यज्ञान विलीन होने लगा। बहिर्जगत् का होश बिलकुल जाता रहा। शायद यही अर्धबाह्य दशा है जो चैतन्यदेव को हुई थी। अब भी नरेन्द्र के पैर पर श्रीरामकृष्ण का हाथ पड़ा हुआ है मानो किसी बहाने से नारायण का पैर दबा रहे हों – फिर देह पर हाथ फेर रहे हैं। परमात्मा जाने, इस तरह श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को नारायण मानकर उनकी सेवा कर रहे थे या उनमें शक्ति का संचार कर रहे थे।

देखते ही देखते और भी भावान्तर होने लगा। नरेन्द्र के आगे हाथ जोड़कर कह रहे हैं, "एक गाना गा तो मैं अच्छा हो जाऊँगा, – उँठूगा कैसे! – गौरांग के प्रेम में पूरे मतवाले (ऐ निताई) –"

कुछ देर के लिए वे फिर चित्रवत् हो निर्वाक् रह गये। भावावेश में मस्त होकर फिर कहने लगे – "सम्हालकर, राधे – यमुना में गिर जाओगी – कृष्ण-प्रेमोन्मादिनी!"

भावविभोर हो फिर कह रहे हैं – "सखी! वह वन कितनी दूर है जहाँ मेरे श्यामसुन्दर हैं? (श्रीकृष्ण के अंग-से सुगन्ध निकल रही है)। अब मैं चल नहीं सकती।"

इस समय संसार भूल गया है, – किसी की याद नहीं है, – नरेन्द्र सामने हैं, परन्तु उनकी भी याद नहीं है, – कहाँ वे बैठे है, इसका कुछ भी ज्ञान नहीं है! इस समय प्राण मानो ईश्वर में लीन हो गया है – "मद्गतान्तरात्मा!"

"गौरांग के प्रेम में पूरे मतवाले!" यह कहते हुए हुंकार देकर श्रीरामकृष्ण एकाएक उठकर खड़े हो गये। फिर बैठकर कहने लगे – "वह एक उजाला आ रहा है, मैं देख रहा हूँ, – परन्तु किस तरफ से आ रहा है, अभी तक कुछ समझ में नही आता।"

अब नरेन्द्र गाने लगे – (भावार्थ) – "दर्शन देकर तुमने मेरे सब दु:ख दूर कर दिये। मेरे प्राणो को मुग्ध कर दिया। सप्तलोक तुम्हें पाकर शोक भूल जाता है – फिर हम जैसे दीनहीन की बात ही क्या है!"

गाना सुनते हुए श्रीरामकृष्ण का बाहरी संसार का ज्ञान छूटता जा रहा है। फिर आँखें बन्द हो गयीं, देह नि:स्पन्द हो गयी, – श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये।

समाधि छूटने पर कह रहे हैं – "मुझे कौन ले जायेगा?" बालक जैसे साथी के बिना चारों ओर अँधेरा देखता है, यह वही भाव है।

रात अधिक हो गयी है। फागुन की कृष्णा दशमी है। रात अँधेरो है। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-कालीमन्दिर जायेंगे। गाड़ी पर बैठेंगे। भक्त सब गाड़ी के पास खड़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण को वे बड़ी सावधानी से गाड़ी पर चढ़ा रहे हैं। इस समय भी श्रीरामकृष्ण भावोन्मत्त हो रहे हैं।

गाड़ी चली गयी। भक्तगण अपने अपने घर जा रहे हैं।

(१०)

सेवक के हृदय के विचार

मस्तक के ऊपर ताराओं से सुशोभित रात्रि का गगन है; हृदय पटल पर श्रीरामकृष्ण की अपूर्व छबि अंकित है; मानसनेत्रों के आगे उस भक्तसमागम प्रेम का – उस प्रेम की हाट का – दृश्य किसी सुखद स्वप्न की भाँति झलक रहा है। भक्तगण कलकत्ते के राजमार्ग पर से चलते हुए अपने अपने घरों की ओर जा रहे हैं। कोई कोई वसन्तसमीरण का सेवन करते हुए उस गीत को गुनगुनाते जा रहे हैं – "दर्शन देकर तुमने मेरे सब दु:ख दूर कर दिये – मेरे प्राणों को मुग्ध कर दिया।"

मणि सोचते हुए चले हैं "क्या सचमुच में ही ईश्वर मनुष्यदेह धारण कर आया करते हैं? तो क्या अवतार वास्तव में सत्य हैं? पर अनन्त ईश्वर साढ़े तीन हाथ का मनुष्य कैसे बन सकते हैं? क्या अनन्त कभी सान्त हो सकता है? विचार तो बहुत कर चुका पर क्या समझा? विचार के द्वारा तो कुछ न समझ पाया!

"श्रीरामकृष्ण ने कितना सुन्दर कहा – 'जब तक विचार है तब तक वस्तुलाभ नहीं हुआ, ईश्वर की प्राप्ति नहीं हुई।' ठीक ही तो है। छटाक भर तो बुद्धि है, भला इसके द्वारा ईश्वर का तत्त्व कैसे समझा जाय? एक सेर के बरतन में क्या चार सेर दूध आ सकता है? फिर अवतार पर विश्वास कैसे हो? श्रीरामकृष्ण ने तो कहा कि ईश्वर स्वयं अगर एकाएक प्रकाशित कर दिखायें तो क्षणभर में सब समझ में आ जाय। वे अगर एकाएक ज्ञानदीप जला दें तो सब सन्देह मिट जायँ।

"जिस प्रकार पैलेस्टाइन के अज्ञ मछुओं ने ईसा मसीह को, अथवा श्रीदास आदि

भक्तों ने श्रीचैतन्यदेव को पूर्णावतार के रूप में देखा था, उस प्रकार इस समय भी हो!

"पर वे यदि न दिखा दें तो फिर उपाय ही क्या है? क्यों? जब श्रीरामकृष्ण स्वयं यह बात कह रहे हैं तो मैं अवतार पर विश्वास रखूँगा। उन्होंने ही सिखाया हैं – विश्वास! विश्वास! विश्वास! गुरुवाक्य पर विश्वास! फिर, *मैंने तो उन्हीं को जीवन का ध्रुवतारा* मान लिया है। इस, भवसमुद्र में मैं अब कभी दिशा नहीं भूलूँगा।' ईश्वर की कृपा से उनकी बातों पर मेरा विश्वास हुआ है। मैं तो यह विश्वास रखूँगा; दूसरे लोग चाहे जो भी करें मैं इस देवदुर्लभ विश्वास को क्यों छोड़ूँ? विचार पड़ा रहे। ज्ञान चर्चा की खिचड़ी पकाते हुए क्या मैं दूसरा फौस्ट (Faust) बनूँ जिसने गम्भीर रात्रि में अकेले घर में 'हाय मैं कुछ नहीं जान सका! मैंने व्यर्थ ही विज्ञान और दर्शन का अध्ययन किया! इस जीवन को धिक्कार है!' यह सोचते हुए जहर पीकर आत्महत्या कर ली! या, दूसरे अलास्टर (Alaster) की तरह अज्ञान का बोध न हो सकने के कारण एक शिला पर मस्तक टेककर मृत्यु की राह देखता रहूँ! नहीं, इन प्रकाण्ड पण्डितों की तरह छटाक भर ज्ञान के द्वारा इस रहस्य को भेदने का प्रयत्न करने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं और एक सेर के बरतन में चार सेर दूध नही आया इसीलिए मरने की भी आवश्यकता नहीं! कितनी सुन्दर बात है – गुरुवाक्य पर विश्वास! हे भगवन्, मुझे यह विश्वास दो, अब व्यर्थ न भटकाओं जिसे पाना सम्भव नही उसे खोजने मत लगाओ। और जैसा कि श्रीरामकृष्ण ने सिखाया है – 'तुम्हारे पादपद्मों में शुद्ध भक्ति हो; अमर, अहैतुकी भक्ति हो; तथा मैं तुम्हारी भुवन मोहिनी माया से मुग्ध न हो जाऊँ' – कृपा कर मुझे यही आशीर्वाद दो।"

श्रीरामकृष्ण के अपूर्व प्रेम की बात सोचते हुए मणि उस अँधेरी रात में राजपथ पर से चलते हुए घर लौट रहे हैं। वे सोच रहे हैं – "गिरीश पर आपका कितना प्रेम है! गिरीश थोड़ी ही देर में थिएटर को जाने वाले हैं, फिर भी उनके यहाँ जाते हैं! केवल यही नहीं! आप उनसे यह भी नहीं कहते कि सब कुछ त्याग दो – घर बार, परिवार, सांसारिक कामकाज आदि सब त्यागकर संन्यास लो! समझ गया इसका अर्थ यही है कि समय न आने पर, तीव्र वैराग्य न होने पर यह सब छोड़ते हुए कष्ट होगा। जैसा कि श्रीरामकृष्ण कहा करते हैं – घाव पूरा सूखने के पहले ही यदि उसकी पपड़ी खींच निकाली जाय तो खून निकलने लगता है और वेदना होती है। पर फिर घाव के सूख जाने पर वह अपने आप झड़ जाती है। सामान्य लोग, जिनकी अन्तर्दृष्टि नहीं खुली, कहते हैं कि अभी संसार त्याग दो! पर ये सद्गुरु हैं, अहेतुक कृपासिन्धु हैं, प्रेम समुद्र हैं, जीव का मंगल कैसे हो यही प्रयत्न रात-दिन कर रहे हैं।

"फिर गिरीश का कैसा विश्वास है! दो ही बार दर्शन करने के बाद कहा था, 'प्रभो, तुम्हीं ईश्वर हो। मनुष्यदेह धारण कर आये हो – मेरे उद्धार के लिए।' गिरीश ने ठीक ही तो कहा; ईश्वर यदि मनुष्यदेह धारण कर न आयें तो इस प्रकार अपने आत्मीय की तरह

कौन उपदेश दे; कौन सिखा दे कि ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु; जमीन पर पड़े हुए दुर्बल जनो को कौन हाथ पकड़कर उठाये, कामिनीकांचन मे आसक्त पशुभाव को प्राप्त हुए मनुष्य को फिर पूर्ववत् अमृतत्त्व का अधिकारी कौन बनाये? और वे यदि मनुष्यरूप *धरकर साथ साथ न रहे तो जो तद्गतान्तरात्मा है, जिन्हे ईश्वर के सिवा दूसरा कुछ नही* सुहाता, उनके दिन कैसे कटेंगे?

इसीलिए तो भगवान् ने कहा है –

" 'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।'

"क्या अपूर्व प्रेम है! नरेन्द्र के लिए मानो पागल है। नारायण के लिए कितना क्रन्दन करते हे, कहते है, 'ये और राखाल, भवनाथ, पूर्ण, बाबूराम आदि दूसरे बालकगण साक्षात् नारायण है, मेरे लिए देह धारण कर आये है।' यह प्रेम तो मनुष्य बुद्धि से नही किया जा रहा है यह तो ईश्वर प्रेम है! ये बालक शुद्ध चित्त है, इन्होने कभी कामभाव से स्त्रियो का स्पर्श नही किया, वैषयिक कर्म करते हुए इनमे लोभ, अहंकार, ईर्ष्या आदि का स्फुरण नही हुआ, इसीलिए इन बालको के भीतर ईश्वर का प्रकाश अधिक है। परन्तु यह दृष्टि है किसकी? श्रीरामकृष्ण की अन्तर्दृष्टि है, वे सब देखते है – कौन विषयासक्त है, कौन सरल, उदार और भक्त है! इसीलिए ऐसे भक्तो को देखते ही वे साक्षात् नारायण मानकर उनकी सेवा करते है। उन्हे नहलाते, खिलाते तथा सुलाते है। उन्हे देखने के लिए रोते है तथा दौड-दौड़कर कलकत्ता जाते है। उन्हे कलकत्ते से गाड़ी पर अपने साथ ले आने के लिए लोगो से विनती करते है। गृहस्थ भक्तो से सदा कहा करते है, 'इन्हे न्योता देकर भोजन कराना, इससे तुम्हारा भला होगा।' क्या यह मायिक प्रेम है, अथवा विशुद्ध ईश्वर प्रेम? मिट्टी की मूर्ति मे इतने उपचारो से ईश्वर की सेवा पूजा हो सकती है, फिर शुद्ध मनुष्यदेह मे क्यो न हो? फिर ये लोग तो भगवान् की प्रत्येक लीला मे सहायक रहे है। जन्म-जन्म के सहचर है!

"नरेन्द्र को देखते ही देखते आप बाह्य जगत् को भूल गये। फिर धीरे धीरे नरेन्द्र की देह को, बाह्य मनुष्य को भूल गये और उसके यथार्थ स्वरूप के दर्शन करने लगे। मन अखण्ड सच्चिदानन्द मे लीन हुआ। उनके दर्शन करते हुए कभी निर्वाक्, निःस्पन्द रहने लगे, तो कभी 'ॐ ॐ' कहने लगे या बालक की तरह 'माँ माँ' कहते हुए पुकारने लगे। नरेन्द्र के भीतर ईश्वर का अधिक प्रकाश देखते है, इसीलिए 'नरेन्द्र नरेन्द्र' कह व्याकुल होते है।

"नरेन्द्र अवतार नही मानते तो क्या हुआ? श्रीरामकृष्ण ने दिव्यचक्षु से देखा कि यह ईश्वर पर अभिमान के कारण सम्भव हो सकता है। ईश्वर तो अपने है, वे अपनी माँ

हैं, मानी हुई माँ नहीं; तब वे क्यों नहीं समझा देते, क्यों, नहीं प्रकाशित कर दिखाते? शायद इसीलिए श्रीरामकृष्ण ने कहा, *'तुमने मान किया तो क्या हुआ, हम लोग भी तुम्हारे मान में तुम्हारें साथ ही हैं।'*

"जो अपने से भी अपने हैं उन पर मान न करें तो और किस पर करें? धन्य नरेन्द्रनाथ, तुम्हारे ऊपर इन पुरुषोत्तम का इतना प्रेम है! तुम्हें देखकर इन्हें इतनी सहजता से ईश्वर का उद्दीपन होता है!"

इस प्रकार सोचते हुए तथा श्रीरामकृष्ण का स्मरण करते हुए उस गहरी रात में भक्तगण अपने अपने घरों में लौट रहे हैं।

□□□

परिच्छेद १११

कलकत्ते में श्रीरामकृष्ण

(१)

बलराम के घर में भक्तों के साथ

दिन के तीन बज चुके हैं। चैत का महीना, धूप कड़ाके की पड़ रही है। श्रीरामकृष्ण दो-एक भक्तों के साथ बलराम के बैठकखाने में बैठे हुए मास्टर से वार्तालाप कर रहे हैं।

आज ६ अप्रैल, १८८५, सोमवार है। श्रीरामकृष्ण कलकत्ते में भक्तों के यहाँ आये हुए हैं। वहाँ वे अपने सांगोपांगों को देखेंगे और नीमू गोस्वामी की गली में देवेन्द्र के यहाँ जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण ईश्वर के प्रेम में दिनरात मतवाले रहते हैं। सदा ही भावावेश या समाधि होती रहती है। बाहरी संसार में मन बिलकुल नहीं है। केवल अन्तरंग भक्त जब तक स्वयं को पहचान न सके, तब तक उनके लिए श्रीरामकृष्ण को व्याकुल ही समझिये, – जैसे माता-पिता अक्षम बालक के लिए व्याकुल रहते हैं और उसे आदमी बनाने के लिए सदैव ही चिन्तित रहा करते हैं, या जैसे चिड़िया अपने बच्चों का पालनपोषण करने के लिए व्याकुल रहती है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – मैंने कह दिया था कि तीन बजे आऊँगा, इसीलिए आना पड़ा। परन्तु धूप बड़ी तेज है।

मास्टर – जी हाँ, आपको तो बड़ा कष्ट हुआ होगा।

भक्तगण श्रीरामकृष्ण को पंखा झल रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – छोटे नरेन्द्र और बाबूराम के लिए मैं आया। पूर्ण को तुम क्यों नहीं लेते आये?

मास्टर – सभा में वह नहीं आना चाहता। उसे भय होता है, आप पाँच आदमियों के बीच तारीफ करते हैं, कहीं उसके घरवालों को न मालूम हो जाय।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह तो ठीक है। अगर मैं कह भी डालता तो अब न कहूँगा। अच्छा, पूर्ण को तुम धर्म की शिक्षा दे रहे हो, यह बड़ा अच्छा है।

मास्टर – विद्यासागर की पुस्तक में भी तो यही बात है कि ईश्वर को हृदय और

मन से प्यार करो। इसकी शिक्षा देने से लड़कों के अभिभावक अगर नाराज हों तो किया क्या जाय?

श्रीरामकृष्ण – इनकी पुस्तकों में बातें तो बहुत हैं, परन्तु जिन लोगों ने पुस्तकें लिखी हैं, वे खुद धारणा नहीं कर सके। साधु-संग करने पर धारणा होती है। यथार्थ त्यागी साधु अगर उपदेश देता है तो लोगों पर उसका असर अधिक पड़ता है। केवल पण्डितों की लिखी पुस्तकें पढ़कर या उनके उपदेश सुनकर उतनी धारणा नहीं होती। जिसके पास ही गुड़ के घड़े रखे हों, वह अगर रोगी को उपदेश दे कि गुड़ न खाना तो रोगी उसकी बात उतनी नहीं मानता। अच्छा, पूर्ण की अवस्था कैसी देख रहे हो? क्या उसे भावावेश होता है?

मास्टर – भाव की अवस्था बाहर से तो मुझे विशेष नहीं दीख पड़ती। एक दिन आपकी वह बात मैंने उससे कही थी।

श्रीरामकृष्ण – कौनसी बात?

मास्टर – आपने कहा था – छोटा आधार भावावेश को सम्हाल नहीं सकता, आधार अगर बड़ा हुआ तो उसके भीतर तो भाव खूब होता है, परन्तु बाहर उसके लक्षण प्रकट नहीं होने पाते। जैसा आपने कहा था, – बड़े तालाब में हाथी के उतर जाने पर कुछ भी समझ में नहीं आता, परन्तु वह अगर किसी गड़ही में उतर जाय तो उथल-पुथल मचा देता है, पानी की हिलोरें तट पर पछाड़ खा-खाकर गिरने लगती हैं।

श्रीरामकृष्ण – बाहर उसका भावावेश नहीं दिखेगा, उसका स्वभाव कुछ दूसरा ही है, और और लक्षण तो सब अच्छे हैं न?

मास्टर – आँखें खूब उज्ज्वल तथा विशाल हैं।

श्रीरामकृष्ण – केवल आँखों के उज्ज्वल होने ही से नहीं हो जाता। ईश्वरभाववाली आँखें और होती हैं। अच्छा क्या तुमने उससे पूछा था – उसके बाद* उसे कैसा लगा?

मास्टर – जी हाँ, बातें हुई थीं। वह चार-पाँच दिन से कह रहा है, ईश्वर की चिन्ता करने पर, उनका नाम लेने पर, आँखों में आँसू आ जाते हैं, रोमांच हो जाता है।

श्रीरामकृष्ण – तो फिर और क्या चाहिए?

श्रीरामकृष्ण और मास्टर चुप हैं। कुछ देर बाद मास्टर बोले – "वह खड़ा है –"

श्रीरामकृष्ण – कौन?

मास्टर – पूर्ण। जान पड़ता है, अपने घर के दरवाजे के पास खड़ा है, हममें से कोई जाय तो वह दौड़कर हम लोगों को प्रणाम कर ले।

श्रीरामकृष्ण – आहा! –

---

* श्रीरामकृष्ण से साक्षात् होने के बाद.

श्रीरामकृष्ण तकिये के सहारे विश्राम कर रहे है। मास्टर के साथ एक बारह साल का लड़का आया हुआ है। मास्टर के स्कूल में पढ़ता है, नाम है क्षीरोद। मास्टर कहते है, "यह बड़ा अच्छा लड़का है, ईश्वर के नाम से इसे बड़ा आनन्द होता है।"

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – आंखें तो हिरण जैसी है।

लड़के ने श्रीरामकृष्ण के पैरो पर हाथ रखकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया और बडे भक्ति-भाव से श्रीरामकृष्ण की पद-सेवा करने लगा। श्रीरामकृष्ण भक्तों के सम्बन्ध में वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) -- राखाल घर मे है। उसका भी शरीर अच्छा नही है, उसके फोड़ा हुआ है। मैने सुना है, उसे एक लड़का हागा।

पल्टू और विनोद सामने बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण (पल्टू से, सहास्य) – तूने अपने बाप से क्या कहा? (मास्टर से) सुना, इसने यहाँ आने की बात पर अपने बाप को भी जवाब दे दिया। (पल्टू से) क्यों रे, क्या कहा?

पल्टू – मैने कहा, हाँ, मैं उनके पास जाया करता हूँ, तो यह कौनसा बुरा काम है? (श्रीरामकृष्ण और मास्टर हॅसे।) अगर जरूरत होगी तो और भी इसी तरह की सुनाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य, मास्टर से) – नही, क्यों जी, इतनी भी कहीं बढ़ा-चढ़ी होती है?

मास्टर – जी नहीं, इतनी बढ़ा-चढ़ी अच्छी नहीं। (श्रीरामकृष्ण हॅसते हैं)

श्रीरामकृष्ण (विनोद से) – तू कैसा है? वहॉ, दक्षिणेश्वर, तू नही गया?

विनोद – जी, जा रहा था, फिर डर के मारे नही गया। शरीर भी कुछ अस्वस्थ है।

श्रीरामकृष्ण – वहॉ चल तो सही, वहॉ की हवा अच्छी है, चंगा हो जायेगा।

छोटे नरेन्द्र आये। श्रीरामकृष्ण मुँह धोने के लिए जा रहे थे। छोटे नरेन्द्र अँगौछा लेकर श्रीरामकृष्ण को पानी देने के लिए गये। साथ मे मास्टर भी हैं। छोटे नरेन्द्र पश्चिमवाले बरामदे के उत्तर कोने में श्रीरामकृष्ण के हाथपैर धो रहे हैं, पास ही मास्टर भी खड़े हैं।

श्रीरामकृष्ण – बड़ी कड़ी धूप है।

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – तुम किस तरह वहाँ रहते हो! ऊपरवाले कमरे में गरमी नहीं होती?

मास्टर – जी हाँ, बड़ी गरमी होती है।

श्रीरामकृष्ण – एक तो तुम्हारी स्त्री को मस्तिष्क की बीमारी है – उसे ठण्डे में रखा करो।

मास्टर – जी हाँ, उसे नीचे के कमरे में सोने के लिए कह दिया है।

श्रीरामकृष्ण बैठकखाने में फिर आकर बैठे। मास्टर से पूछ रहे हैं – "तुम इस रविवार को क्यों नहीं गये?"

मास्टर – जी, घर में भी तो कोई नहीं है। तिस पर (स्त्री को) मस्तिष्क की बीमारी है। देखनेवाला कोई नही था।

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर नीमू गोस्वामी की गली से होकर देवेन्द्र के यहाँ जा रहे है। साथ मे छोटे नरेन्द्र, मास्टर और भी दो एक भक्त है। श्रीरामकृष्ण पूर्ण की बात कर रहे है। पूर्ण के लिए वे व्याकुल हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – बहुत बड़ा आधार है। नहीं तो अपने लिए जप कैसे करा लेता! उसे तो ये सब बातें मालूम हैं ही नहीं।

मास्टर और भक्तगण आश्चर्यभाव से सुन रहे हैं, श्रीरामकृष्ण ने पूर्ण के लिए बीजमन्त्र का जप किया।

श्रीरामकृष्ण – आज उसे ले आते, लाये क्यों नहीं?

छोटे नरेन्द्र को हँसते हुए देखकर श्रीरामकृष्ण भी हँस रहे हैं और भक्तगण भी हँस रहे हैं। श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक छोटे नरेन्द्र की ओर संकेत करके मास्टर से कह रहे हैं – देखो देखो, किस तरह हँस रहा है, जैसे कुछ भी नही जानता। परन्तु उसके मन के भीतर जमीन, जोरू, रुपया कुछ नहीं है। तीनों में से एक भी उसके मन मे नहीं है। मन से कामिनी और कांचन के बिलकुल गये बिना कभी ईश्वरलाभ नहीं होता।

श्रीरामकृष्ण देवेन्द्र के यहाँ जा रहे हैं। दक्षिणेश्वर में देवेन्द्र से एक दिन आप कह रहे थे, 'इच्छा होती है एक दिन तुम्हारे यहाँ जाऊँ।' देवेन्द्र ने कहा था, 'मैं आपसे यही कहने के लिए आया था, इसी रविवार को जाना होगा।' श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'परन्तु तुम्हारी आमदनी कम है, अधिक आदमियों को न्योता न देना; और गाड़ी का किराया भी बहुत अधिक है।' देवेन्द्र ने कहा था, 'आमदनी कम है तो क्या हुआ? ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत् (ऋण करके भी घी पीना चाहिए)।' श्रीरामकृष्ण यह सुनकर हँसने लगे। हँसी रूकती ही न थी।

कुछ देर बाद घर पहुँचकर श्रीरामकृष्ण ने कहा – "देवेन्द्र, मेरे लिए भोजन बहुत थोड़ा बनवाना – मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है।"

(२)

देवेन्द्र के घर में भक्तों के साथ

श्रीरामकृष्ण देवेन्द्र के बैठकखाने में भक्तमण्डली में बैठे हुए हैं। बैठकखाना एकमँजले पर है। सन्ध्या हो गयी। कमरे में दिया जल रहा है। छोटे नरेन्द्र, राम, मास्टर,

गिरीश, देवेन्द्र, अक्षय, उपेन्द्र इत्यादि बहुत से भक्त पास बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण एक बालक-भक्त को देखकर आनन्द मे मग्न हो रहे है। उसी के सम्बन्ध मे भक्तो से कह रहे है –

"इसमे जमीन, रुपया, स्त्री तीनो मे से एक भी नही है जिससे यह इस संसार मे बँध जाय। इन तीनो मे से एक पर भी मन को रखने से परमात्मा पर मन नही जाता, मन का योग नही होता। इसने कुछ देखा भी था! (भक्त से) क्यो रे, बता तो, क्या देखा था तूने?"

भक्त (हँसकर) – मैने देखा, विष्ठा के कुछ ढेर पड़े हुए है। कोई कोई उसके ऊपर बैठे हुए है, कोई उससे कुछ दूर पर।

श्रीरामकृष्ण – इसने देखा, संसारी मनुष्यो की यही दशा है, जो ईश्वर को भूले हुए है; इसीलिए इसके मन से सब छूटा जा रहा है। कामिनी और कांचन से मन अगर हट जाय तो फिर चिन्ता ही क्या है?

"उः! कितने आश्चर्य की बात है! मेरा तो यह भाव बहुत कुछ जप और ध्यान करने पर दूर हुआ था। एकदम इतनी जल्दी इसका यह भाव दूर कैसे हो गया! काम का नाश हो जाना क्या कुछ साधारण बात है! छः महीने के बाद मेरी छाती मे कुछ ऐसा होने लगा था कि पेड़ के नीचे पड़ा हुआ मै रो-रोकर माँ से कहने लगा था – 'माँ, अगर कुछ बुरा हुआ तो मै गले मे छुरी मार लूँगा।'

(भक्तो से) – "कामिनी और कांचन ये दोनो अगर मन से दूर हो गये फिर बाकी ही क्या रहा? तब तो बस ब्रह्मानन्द ही है।"

शशी उस समय पहले ही पहल श्रीरामकृष्ण के पास आने-जाने लगे थे। वे उस समय विद्यासागर कालेज मे बी. ए. के प्रथम वर्ष म थे। श्रीरामकृष्ण अब उनकी बात कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो से) – वह जो लड़का आया करता है, कुछ दिन के लिए, देखता हूँ, रुपये की ओर उसका मन कभी कभी चला जाया करेगा; परन्तु कुछ लोगो का मन, देखता हूँ, उधर बिलकुल नही जायेगा। कुछ लड़के विवाह करेगे ही नही।

भक्तगण चुपचाप सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो से) – मन से कामिनी और कांचन के गये बिना अवतार को पहचानना मुश्किल है। किसी बैगनवाले से हीरे का मोल पूछा गया था। उसने कहा, 'मै इसके बदले मे नौ सेर बैगन दे सकूँगा। इससे अधिक एक भी नही।' (सब हँसते है, छोटे नरेन्द्र जोर से हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण ने देखा, छोटे नरेन्द्र बात का मर्म बहुत जल्द समझ गये।

श्रीरामकृष्ण – इसकी बुद्धि कितनी सूक्ष्म है! नागा इसी तरह बहुत जल्द समझ

जाता था – गीता, भागवत में जहाँ जो कुछ है, वह समझ लेता था।

"बचपन से ही कामिनी और कांचन का त्याग, यह बड़े आश्चर्य की बात है। परन्तु ऐसा बहुत कम आदमियों में होता है। नही तो पत्थर का मारा आम, जैसे न ठाकुरजी की सेवा में आता है, न कोई मनुष्य ही खाने की हिम्मत करता है।

"पहले निर्विचार पाप करके फिर बुढ़ापे में ईश्वर का नाम लेना, यह बुराई की अपेक्षा अच्छा है।

"अमुक मल्लिक की माँ बहुत बड़े घर की लड़की है। वेश्याओं की बात पर उसने पूछा, 'उनका क्या किसी तरह उद्धार न होगा?' स्वयं पहले उसने बहुत तरह के काम किये थे – इसीलिए उसने पूछा। मैंने कहा, 'हाँ, होगा अगर आन्तरिक प्रेरणा से व्याकुल होकर वे रोवें और कहें, ऐसा काम अब मैं न करूँगी। केवल हरिनाम करने से क्या? हृदय से व्याकुल होकर रोना चाहिए।' "

(३)

कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण

अब ढोल करताल लेकर कीर्तनिया संकीर्तन कर रहा है –

(भावार्थ) "मैंने यह क्या देखा! केशव भारती की कुटी में, एक अपूर्व ज्योति – श्रीगौरांग की मूर्ति मैंने देखी! उनके दोनों नेत्रों से शत शत धाराओं में प्रेम बह रहा है। ..."

श्रीरामकृष्ण को गाना सुनते सुनते भावावेश हो रहा है। कीर्तनिया श्रीकृष्ण के विरह की मारी गोपियों का वर्णन कर रहा है। व्रज की गोपियाँ माधवी कुंजों में श्रीकृष्ण को खोज रही है।

"री माधवी! मेरे माधव को निकाल दे! मेरे माधव को मुझे देकर, बिना दामों ही तू मुझे खरीद ले। जल जिस तरह मछलियों का जीवन है, उसी तरह माधव भी मेरे जीवन हैं।...."

श्रीरामकृष्ण बीच बीच में जोड़ रहे हैं – "मथुरा कितनी दूर है – जहाँ मेरा प्राणवल्लभ है?"

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हैं, देह निश्चल हो रही है। बड़ी देर से स्थिर हैं।

कुछ देर बाद उनकी प्राकृत अवस्था हुई। परन्तु भावावेश अब भी है। इसी अवस्था में भक्तों की बात कह रहे हैं। बीच-बीच में माता से बातचीत भी कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भावस्थ) – माँ, उसे अपनी ओर खींच लो, मैं अब अधिक उसकी चिन्ता नहीं कर सकता। (मास्टर से) मेरा मन तुम्हारे सम्बन्धी की ओर कुछ खिंचा हुआ है।

(गिरीश के प्रति) – "तुम गाली-गलौज बहुत करते हो, खैर, यह सब निकल जाना

ही अच्छा है। किसी किसी को रक्तदोष का रोग भी होता है। उसका दूषित रक्त जितना ही बाहर निकल जाय, उतना ही अच्छा है।

"उपाधि-नाश के समय मे ही शब्द होता है। काठ जलते समय चटाचट शब्द होता है। सब जल जाने पर फिर शब्द नही होता।

"तुम दिन पर दिन शुद्ध होओगे। दिन-दिन तुम्हारी खूब उन्नति होगी। लोगो को देखकर आश्चर्य होगा। मै अधिक न आ सकूँगा, पर इससे क्या, तुम्हारी ऐसे ही बन जायेगी।"

श्रीरामकृष्ण का भाव और भी गहरा होने लगा। फिर माता के साथ बातचीत कर रहे है, "माँ, जो खुद अच्छा है, उसे अच्छा करना कौनसी बडी बात है? माँ, मरे को मारकर क्या होगा? जो पैर जमाये खडा है, उसे अगर मार सको तो तुम्हारी महिमा है।"

श्रीरामकृष्ण कुछ स्थिर होकर कुछ उँचे स्वर मे कह रहे है, "मै दक्षिणेश्वर से आ रहा हूँ, माँ, मैं अब जाता हूँ।" मानो एक छोटा लड़का दूर से माता की आवाज सुनकर जवाब दे रहा है। श्रीरामकृष्ण की देह फिर नि:स्पन्द हो गयी, समाधिमग्न होकर बैठे हुए है। भक्तगण अनिमेष लोचनो से चुपचाप देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण भावावेश मे फिर कह रहे है – "मै अब पूड़ी न खाऊँगा।"

पड़ोस के दो-एक गोस्वामी आये थे, वे चले गये।

(४)

भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रहे है। चैत का महीना, गरमी जोरो की पड़ रही है। देवेन्द्र कुल्फीबरफ बनवाकर श्रीरामकृष्ण और भक्तो को दे रहे है। भक्तो को कुल्फी खाकर प्रसन्नता हो रही है। मणि धीरे धीरे कह रहे है – 'Encore! Encore!' (अर्थात् कुल्फी और दो)! सब लोग हँस रहे है। कुल्फी देखकर श्रीरामकृष्ण को बिलकुल बच्चे की तरह आनन्द हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण – कीर्तन तो बड़ा अच्छा हुआ। गोपियो की दशा का वर्णन अच्छा किया, – 'री माधवी! मेरे माधव को दे।' यह गोपियो के प्रेमोन्माद की अवस्था है। कितना आश्चर्य है! कृष्ण के लिए सब पागल हो रही थी!

एक भक्त एक दूसरे की ओर इशारा करके कह रहे है, "इनका सखीभाव है – गोपीभाव।" राम ने कहा, "इनके भीतर दोनो भाव है। मधुरभाव भी है और ज्ञान का कठोर भाव भी है।"

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी?

श्रीरामकृष्ण अब सुरेन्द्र की बातचीत करने लगे।

राम – मैंने खबर भेजी थी, परन्तु नहीं आया, न जाने क्यों?

श्रीरामकृष्ण – काम से लौटने पर थक जाता है।

एक भक्त – रामबाबू आपकी बात लिख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – क्या लिखा है?

भक्त – 'परमहंस की भक्ति' विषय पर उन्होंने लिखा है।

श्रीरामकृष्ण – तो फिर क्या, राम की खूब प्रसिद्धि होगी।

गिरीश (सहास्य) – इसलिए कि वह आपका चेला हैं?

श्रीरामकृष्ण – मेरे चेला-वेला कोई नहीं, मैं तो राम का दासानुदास हूँ।

पड़ोस के कोई कोई आये थे, परन्तु उन्हें देखकर श्रीरामकृष्ण को प्रसन्नता नहीं हुई। श्रीरामकृष्ण ने एक बार कहा, "यह कैसा मुहल्ला है? यहाँ देखता हूँ, कोई नहीं है।"

देवेन्द्र अब श्रीरामकृष्ण को कमरे के अन्दर लिये जा रहे हैं। वहाँ श्रीरामकृष्ण के जलपान का बन्दोबस्त किया गया है। श्रीरामकृष्ण भीतर गये।

श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक घर के भीतर से वापस आये और बैठकखाने में फिर बैठे। भक्तगण पास बैठे हुए हैं। उपेन्द्र और अक्षय श्रीरामकृष्ण की दोनों ओर बैठे हुए उनकी चरणसेवा कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण देवेन्द्र के यहाँ की औरतों की बातें कह रहे हैं –

"औरतें बड़ी अच्छी हैं, देहात की हैं न? बड़ी भक्ति है।"

फिर वे अपने आप में मस्त होकर गाने लगे। वे भला किस भाव से गा रहे हैं? क्या अपनी अवस्था का स्मरण होकर उन्हें उल्लास हो रहा है? क्या इसीलिए वे ये गाना गा रहे हैं? –

(भावार्थ) – "आदमी जब तक सहज (सीधा) नहीं हो जाता तब तक सहज को वह प्राप्त भी नहीं कर सकता।"

(भावार्थ) – "दरवेश! तू खड़ा रह, मैं तेरे स्वरूप को जरा देख लूँ।"

(भावार्थ) – "एक ऐसे भाव का फकीर आया है जो हिन्दुओं का देवता और मुसलमानों का पीर है।"

गिरीश प्रणाम करके बिदा हो गये। श्रीरामकृष्ण ने भी गिरीश को नमस्कार किया।

देवेन्द्र आदि भक्तों ने श्रीरामकृष्ण को गाड़ी पर चढ़ा दिया।

देवेन्द्र ने बैठकखाने के दक्षिण ओर आँगन में आकर देखा, उनके मुहल्ले का एक आदमी उस समय भी तख्त पर पड़ा सो रहा था। उन्होंने उसे जगाया। आँखें मलते हुए उठकर उसने पूछा – "क्या श्रीरामकृष्णदेव आये?" सब लोग ठहाका मारकर हँसने लगे। यह आदमी श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए उनसे पहले आया था। गरमी लगने के कारण, आँगन में तख्त पर चटाई बिछाकर आराम से सो गया था।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर जा रहे हैं। गाड़ी पर मास्टर से आनन्दपूर्वक कह रहे हैं,

"मैंने खूब कुल्फी खायी। तुम जब दक्षिणेश्वर आना तो चार-पॉच कुल्फियाँ लेते आना।" श्रीरामकृष्ण मास्टर से फिर कह रहे है, "इस समय इन्ही कुछ बालको की ओर मन खिचता है, – छोटे नरेन्द्र, पूर्ण और तुम्हारे सम्बन्धी की ओर।"

मास्टर – द्विज की ओर?

श्रीरामकृष्ण – नही, द्विज तो है ही, उससे बड़ा जो है उसकी ओर।

मास्टर – अच्छा।

श्रीरामकृष्ण आनन्द से गाड़ी पर जा रहे है।

□□□

परिच्छेद ११२

बलराम के मकान पर श्रीरामकृष्ण

(१)

स्वयं की साधना का वर्णन

श्रीरामकृष्ण कलकत्ते मे भक्तों के साथ बलगम के बैठकखाने मे बैठे हुए हैं। गिरीश, मास्टर और बलराम है, धीरे-धीरे छोटे नरेन्द्र, पल्टू, द्विज, पूर्ण, महेन्द्र मुखर्जी आदि कितने ही भक्त आये। ब्राह्मसमाज के त्रैलोक्य सान्याल और जयगोपाल सेन भी आये है। स्त्री-भक्तो मे भी बहुत सी स्त्रियॉ आयी हुई है। वे चिक की आड़ में बैठी हुई श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर रही है। मोहिनीमोहन की स्त्री भी आयी हुई हैं – लड़के के गुजर जाने पर इनकी पागल जैसी अवस्था हो गयी है। वे तथा उनकी तरह शोकसन्तप्त और भी कितनी ही स्त्रियाँ आयी हुई है, – उन्हें विश्वास है कि श्रीरामकृष्ण के पास अवश्य ही शान्ति मिलेगी। रविवार, १२ अप्रैल १८८५। दिन के तीन बजे होंगे।

मास्टर ने आकर देखा, श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हुए अपनी साधना और अनेकविध आध्यात्मिक अवस्था की बातें कह रहे है। मास्टर ने आकर श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया और उनकी आज्ञा पा उनके पास बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से) – उस समय – साधना के समय ध्यान करता हुआ मैं देखता था, एक आदमी हाथ में त्रिशूल लिये हुए मेरे पास बैठा रहता था। मुझे डराता था, अगर मै ईश्वर के चरणकमलो में मन न लगाऊँ तो वह वही त्रिशूल भोंक देगा। मन न लगाने पर छाती में त्रिशूल के बींधे जाने का डर था।

"कभी माँ ऐसी अवस्था कर देती थी कि नित्य से उतरकर मन लीला में आ जाता था और कभी लीला से नित्य पर चढ़ जाता था।

"जब मन लीला में उतर आता था, तब कभी-कभी दिनरात मैं सीताराम की चिन्ता किया करता था। और सदा मुझे सीताराम के रूप भी दीख पड़ते थे, – रामलाला* को लिये सदा मैं घूमता था, कभी उसे नहलाता था, कभी खिलाता था। मैं कभी कभी राधाकृष्ण के

---

* अष्टधातुओं से बनी हुई राम की एक छोटीसी बाल मूर्ति।

भाव मे रहता था। उन रूपो के सदा दर्शन भी होते थे। कभी फिर गौरांग के भाव में रहता था। यह दो भावो का मेल था – पुरुष और प्रकृति के भावों का। इस अवस्था मे सदा ही गौरांग के दर्शन होते थे। फिर यह अवस्था बदल गयी। तब लीला को छोड़कर मन नित्य मे चढ़ गया। सहजन के पत्ते और तुलसी के दल, सब एक जान पड़ने लगे। फिर ईश्वरी रूप देखना अच्छा नही लगा। मैने कहा, 'तुमसे तो विच्छेद हो जाता है।' तब मैने उनसे अपना मन निकाल लिया। कमरे मे देवी-देवताओ की जितनी तस्बीरे थी, सब हटा दी। केवल उस अखण्ड सच्चिदानन्द – उस आदिपुरुष की चिन्ता करने लगा। स्वयं दासीभाव से रहने लगा – पुरुष की दासी!

"मैने सब तरह की साधनाएँ की है। साधना तीन तरह की है – सात्त्विक, राजसिक और तामसिक। सात्त्विक साधना मे उन्हे व्याकुल होकर पुकारा जाता है अथवा केवल उनका नाम मात्र लिया जाता है। कोई दूसरी फलाकांक्षा नही रहती। राजसिक साधना मे अनेक तरह की क्रियाएँ करनी पड़ती है, – इतने बार पुरश्चरण करना होगा, इतने तीर्थ करने होंगे, पंचतप करना होगा, षोड़शोपचारो से पूजा करनी होगी, यह सब। तामसिक साधना तमोगुण का आश्रय लेकर की जाती है। जय काली! क्या तू दर्शन न देगी? – यह देख, गले मे छूरी मार लूंगा, अगर तू दर्शन न देगी। इस साधना मे शुद्धाचार नही है, जैसे तन्त्रोक्त साधना।

"उस अवस्था मे – साधनावस्था मे – बड़े विचित्र-विचित्र दर्शन होते थे। आत्मा का रमण मैने प्रत्यक्ष किया। मेरी ही तरह का एक आदमी मेरी देह मे समा गया, और षट्पद्मो के हरएक पद्म मे वह रमण करने लगा। छहो पद्म मुँदे हुए थे, उसके रमण के साथ ही हरएक पद्म खुलकर ऊर्ध्वमुख हो जाने लगा। इस तरह मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्रार सब पद्म खिल गये। और मैने प्रत्यक्ष देखा, उनके मुख जो नीचे थे, ऊपर हो गये।

"साधना के समय ध्यान करता हुआ मै अपने पर दीपशिखा के भाव का आरोप करता था, – जब हवा नही रहती है तब वह बिलकुल नही हिलती, – इसी भाव का आरोप करता था।

"ध्यान के गम्भीर होने पर बाहरी ज्ञान का नाश हो जाता है। एक व्याध पक्षी मारने के लिए निशाना साध रहा था। उसके पास ही से वर-बराती, गाड़ी-घोड़े, बाजे-कहार बड़ी देर तक जाते रहे, परन्तु उसे कुछ भी होश न था। वह नही समझ सका कि पास से बरात कब निकल गयी।

"एक आदमी अकेला एक तालाब के किनारे मछली मारने के लिए बैठा था। बड़ी देर के बाद बंसी का 'शोला' हिला, कभीकभी वह पानी मे कुछ डूब भी जाता था तब उसने बंसी को झपाटे के साथ खींचने की कोशिश की। इसी समय किसी राहगीर ने आकर

उससे पूछा, 'महाशय, अमुक बनर्जी का घर कहाँ है, क्या आप बतला सकेंगे?' उत्तर कुछ भी न मिला। यह आदमी उस समय बंसी खींचने की ताक में था। पथिक ने बार बार उच्च स्वर से कहा, 'महाशय, अमुक बनर्जी का घर क्या आप बतला सकेंगे?' उधर उस आदमी को होश था ही नहीं, उसका हाथ काँप रहा था, बस शोले पर उसकी निगाह थी। तब पथिक नाराज हो वहाँ से चला गया। वह जब बड़ी दूर चला गया, तब इधर शोला बिलकुल डूब गया और उस आदमी ने झट बंसी खींचकर मछली को जमीन पर ला गिराया। तब अँगौछे से मुँह पोंछकर पथिक को ऊँची आवाज लगाकर उसने बुलाया – 'एजी, सुनो – सुनो।' पथिक लौटना नहीं चाहता था, कई बार के पुकारने पर वह आया। आते ही उसने कहा, 'क्यों महाशय, अब क्यों आप बुलाते हैं?' तब उसने पूछा, 'तुम मुझसे क्या कह रहे थे?' पथिक ने कहा, 'उस समय इतनी बार पूछा और अब पूछते हो क्या कहा था?' उसने कहा, 'उस समय शोला डूब रहा था, इसलिए मैंने कुछ सुना ही नहीं।'

"ध्यान में इस तरह की एकाग्रता होती है, उस समय और कुछ भी नहीं दीख पड़ता, न कुछ सुन पड़ता है। कोई छू भी ले तो समझ में नहीं आता। देह पर से साँप चला जाता है और कुछ पता नहीं चल पाता। जो ध्यान करता है, न वह समझ सकता है और न साँप।

"ध्यान के गहरे होने पर इन्द्रियों के कुल काम बन्द हो जाते हैं। मन बहिर्मुख नहीं रहता, जैसे घर का बाहरी दरवाजा बन्द हो जाय। इन्द्रियों के विषय पाँच हैं – रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द – ये बाहर पड़े रहते हैं।

"ध्यान के समय पहले-पहल इन्द्रियों के सब विषय सामने आते हैं, ध्यान के गम्भीर होने पर वे फिर नहीं आते – सब बाहर पड़े रहते हैं। ध्यान करते समय, मुझे कितने ही प्रकार के दर्शन होते थे। मैंने प्रत्यक्ष देखा, सामने रुपये की ढेरी थी, शाल थी, एक थाली में सन्देश थे और दो औरतें थीं, उनकी नाक में नथ थी। तब मैंने मन से पूछा, 'मन तू क्या चाहता है? क्या तू कुछ भोग करना चाहता है?' मन ने कहा, 'नहीं, मैं कुछ भी नहीं चाहता, ईश्वर के पादपद्मों को छोड़ मैं और कुछ नहीं चाहता।' स्त्रियों का भीतर-बाहर, सब मुझे दीख पड़ने लगा, – जैसे शीशे की आलमारियों की कुल चीजें बाहर से दीख पड़ती हैं। उनके भीतर मैंने देखा – मल, मूत्र, विष्ठा, कफ, लार, आतें, यही सब।"

गिरीश कभी-कभी कहते थे, 'श्रीरामकृष्ण का नाम लेकर बीमारी अच्छी किया करूँगा।'

श्रीरामकृष्ण (गिरीश आदि भक्तों से) – *जो हीन बुद्धि के हैं, वे ही सिद्धियाँ चाहते हैं*, – बीमारी अच्छी करना, मुकद्दमा जिताना, पानी के ऊपर से पैदल चले जाना, यह

सब। जो शुद्ध भक्त है, वे ईश्वर के पादपद्मो को छोड़कर और कुछ नही चाहते। हृदय ने एक दिन कहा, 'मामा, मां से कुछ शक्ति की प्रार्थना करो – कुछ सिद्धि मॉगो।' मेरा बालक का स्वभाव, – कालीमन्दिर मे जप करते समय मॉ से मैने कहा, 'मॉ, हृदय कुछ शक्ति और सिद्धि मॉगने के लिए कहता है।' उसी समय मॉ ने दिखलाया, – एक बूढ़ी वेश्या, उम्र चालीस की होगी, सामने से आकर मेरी ओर पीछा करके पाखाना फिरने लगी। मॉ ने दिखलाया, विभूति इसी बूढ़ी वेश्या की विष्ठा है। तब मै हृदय के पास जाकर उसे डॉटने लगा। कहा, 'तूने क्यो मुझे ऐसी बात सिखलायी? तेरे लिए ही तो मुझे ऐसा हुआ।'

"जिनमे कुछ विभूतियॉ रहती है उन्हे ही प्रतिष्ठा, सम्मान, यह सब मिलता है। बहुतो की इच्छा होती है, मै गुरुआई करूॅ, पॉच आदमी मुझे माने, शिष्य सेवा करे, लोग कहेंगे, – गुरुचरण के भाई का समय आजकल निहायत अच्छा है, कितने ही लोग जाते है, चेल-चपाटे भी बहुत से हो गये है, घर मे चीजो का ढेर लग रहा है, कितनी चीजे लोग ला-लाकर दे रहे है, वह चाहे तो उसमे ऐसी शक्ति है कि कितने ही आदमियो को खिला दे।

"गुरुआई और वेश्यापन दोनो एक है, – खाक रुपया-पैसा, लोकसम्मान, शरीर की सेवा, – इन सब के लिए अपने को बेचना! जिस शरीर, मन और आत्मा के द्वारा ईश्वर की प्राप्ति होती है, उसी शरीर, मन और आत्मा को जरासी वस्तु के लिए इस तरह कर रखना अच्छा नहीं। एक ने कहा था, साबी का यह बड़ा अच्छा समय चल रहा है – इस समय उसकी पॉचो ऊॅगलियॉ घी मे है। एक कमरा उसने किराये से लिया है, – गोबर, कण्डे, चारपाई, ये सब अब उसके है चार बासन भी हो गये है; बिस्तरा, चटाई, तकिया, सब कुछ है। कितने ही आदमी उसके वश मे है, – आते-जाते रहते है। अर्थात् साबी अब वेश्या हो गयी है, इसीलिए उसके सुख की इति नही होती। पहले वह किसी भले आदमी के यहॉ दासी थी; अब वेश्या हो गयी है! जरा सी वस्तु के लिए अपना सर्वनाश कर डाला।

"साधना के समय ध्यान करते करते मै और भी बहुत कुछ देखता था। बेल के पेड़ के नीचे ध्यान कर रहा था, पाप-पुरुष आकर कितने ही तरह के लोभ दिखाने लगा। लड़ाकू गोरे का रूप धारण करके आया था! रुपया, मान, रमण-सुख, नाना प्रकार की शक्तियाँ, बहुत कुछ उसने देना चाहा। मै मॉ को पुकारने लगा। बड़ी गुप्त बात है। मॉ ने दर्शन दिये, तब मैने कहा, 'मॉ, इसे काट डालो।' माता का वह रूप, भुवनमोहन रूप याद आ रहा है। वह कृष्णमयी* का रूप लेकर मेरे पास आयी थी। – परन्तु उसकी दृष्टि के नर्तन के साथ ही मानो संसार हिल रहा है!"

---

* बलराम बसु की बालिका कन्या।

श्रीरामकृष्ण चुप हो रहे। कुछ देर बाद फिर कह रहे हैं – "और भी बहुत कुछ है, न जाने कौन मुँह दबा लेता है, कहने नहीं देता!

"सहजन के पत्ते और तुलसी दल एक जान पड़ते थे। भेद-बुद्धि उसने दूर कर दी थी। बट के नीचे मैं ध्यान कर रहा था, उसने दिखलाया, एक दाढ़ीवाला मुसलमान* तश्तरी में भात लेकर सामने आया। तश्तरी से म्लेच्छों को खिलाकर मुझे भी कुछ दे गया। माँ ने दिखलाया – एक के सिवा दो नहीं हैं। सच्चिदानन्द ही अनेक रूपों से विचर रहे है। जीव, जगत्, सब वे ही हुए हैं। अन्न भी वे ही हुए हैं।

(गिरीश, मास्टर आदि से) "मेरा बालक-स्वभाव है। हृदय ने कहा, 'मामा, माँ से कुछ शक्ति के लिए कहो', – बस मैं भी माँ से कहने के लिए चल दिया। ऐसी अवस्था में उसने रखा है कि जो व्यक्ति पास रहेगा, उसकी बात माननी पड़ती है। छोटा बच्चा जैसे कोई पास न रहने से सब कुछ अन्धकार ही देखता है, मुझे भी वैसा ही होता था। हृदय जब पास न रहता था, तब जान पड़ता था कि अब जान निकलने ही को है। यह देखो, वही भाव आ रहा है। बातें कहते ही कहते मन उद्दीप्त हो रहा है।"

यह कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण को भावावेश होने लगा। देश और काल का ज्ञान मिटा जा रहा है। बड़ी मुश्किल से भाव-संवरण की चेष्टा कर रहे हैं। भावावेश में कह रहे हैं – "अब भी तुम लोगों को देख रहा हूँ, – परन्तु यह भासित होता है कि मानो सदा ही तुम लोग इस तरह बैठे हुए हो, – कब आये हो, कहाँ से आये, यह कुछ याद नही।"

श्रीरामकृष्ण कुछ देर स्थिर रहे। कुछ प्रकृतिस्थ होकर कह रहे हैं, "पानी पीऊँगा।" समाधि-भंग के पश्चात् मन को उतारने के लिए यह बात प्राय: कहा करते हैं। गिरीश अभी नये आये हैं, वे नहीं जानते, इसलिए पानी ले आने के लिए चले। श्रीरामकृष्ण मना कर रहे हैं, कहा, "नही जी, अभी पानी न पी सकूँगा।"

श्रीरामकृष्ण और भक्तगण कुछ देर तक चुप हैं। अब श्रीरामकृष्ण मास्टर से बोले – "क्यों जी, क्या मैंने अपराध किया जो ये सब गुप्त बातें कह दीं?"

मास्टर क्या कहते? वे चुप हैं। तब श्रीरामकृष्ण स्वयं बोले – "नही, अपराध क्यो होगा? मैंने तुममें श्रद्धा उत्पन्न होने के लिए कहा हैं।" कुछ देर बाद जैसे बड़ी प्रार्थना के साथ कह रहे हैं – "उनके (पूर्ण आदि के) साथ क्या भेंट करा दोगे?"

मास्टर (संकुचित होकर) – जी, इसी समय खबर भेजता हूँ।

श्रीरामकृष्ण (आग्रह से) – वहीं छोर मिल रहा हैं।

क्या इसका यह अर्थ है कि पूर्ण श्रीरामकृष्ण का सब से पीछे का भक्त है – अन्तिम छोर हैं, उसके बाद फिर कोई नहीं?

---

* मुहम्मद पैगम्बर

(२)

श्रीरामकृष्ण का महाभाव

गिरीश और मास्टर आदि के प स श्रीरामकृष्ण अपने महाभाव की अवस्था का वर्णन कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो से) – उस अवस्था के बाद आनन्द भी जितना है उसके पहले कष्ट भी उतना ही है। महाभाव ईश्वर का भाव है। वह इस शरीर और मन को डॉवाडोल कर देना है। जैसे एक बडा हाथी कुटिया मे समा गया हो। कुटिया डॉवाडोल हो जाती है – कभी वह नष्ट भी हो जाती है।

"ईश्वर के लिए जो विरहाग्नि होती है, वह बहुत साधारण नही होती। इस अवस्था के होने पर रूप और सनातन जिस पेड के नीचे बैठे रहते थे, कहते है, उस पेड की पत्तियॉ भी झुलस जाया करती थी। इस अवस्था मे मै तीन दिन तक अचेत पडा रहा था। हिलडुल भी नही सकता था, एक ही जगह पर पडा रहता था। जब होश आया तब ब्राह्मणी* मुझे पकडकर नहलाने के लिए ले गयी, परन्तु हाथ से देह छूने की हिम्मत न थी – देह मोटी चादर से ढॅकी रहती थी, उसी चादर पर से मुझे पकडकर ब्राह्मणी ले गयी थी। देह मे जो मिट्टी लगी हुई थी, वह जल गयी थी।

"जब वह अवस्था आती थी तब मेरुमज्जा के भीतर से जैसे कोई हल चला देता था। 'अब जी गया, अब जी गया' यही रट लगी रहती थी। परन्तु उसके बाद फिर बडा आनन्द होता था।"

भक्तमण्डली आश्चर्यचकित होकर बाते सुन रही हैं।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश से) – तुम्हारे लिए इतने की जरूरत नही। मेरा भाव केवल उदाहरण के लिए है। तुम लोग अनेक बाते लेकर रहते हो, मै सिर्फ एक को ही लेकर। मुझे ईश्वर को छोड और कुछ अच्छा लगता नही। उनकी इच्छा। (सहास्य) एक डाल वाला पेड भी है और पॉच डालियो का पेड़ भी है। (सब हॅसते है।)

"मेरी अवस्था उदाहरण के लिए है। तुम लोग संसार-धर्म का पालन करो, अनासक्त होकर। कीच लग जायेगी, परन्तु उसे 'पॉकाल' मछली की तरह झाड़ डाला करो। कलंक के सागर मे तैरो, फिर भी देह मे कलंक न छू जायेगा।"

गिरीश – आपका भी तो विवाह हो गया है। (हास्य)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – संस्कार के लिए विवाह करना पड़ता है। परन्तु मै सांसारिक जीवन कैसे व्यतीत कर सकता था? ईश्वरदर्शन के लिए मेरी व्याकुलता इतनी

* श्रीरामकृष्ण की तन्त्रसाधना की आचार्या भैरवी ब्राह्मणी।

तीव्र थी कि जब जब मेरे गले में जनेऊ डाल दिया जाता था, वह आप ही गिर जाता था। – मैं सँभाल नही सकता था। एक मत में है – शुकदेव का विवाह सस्कार के लिए हुआ था। एक कन्या भी शायद हुई थी। (सब हँसते हैं।)

"कामिनी और कांचन ही संसार है – ईश्वर को भुला देता है।"

गिरीश – कामिनी और कांचन छोड़े, तब न?

श्रीरामकृष्ण – उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करो, विवेक के लिए प्रार्थना करो। ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य – इसी को विवेक कहने है। छन्ने से पानी छान लेना चाहिए, इस तरह उसका मैल एक तरफ पड़ा रहता है, अच्छा जल एक तरफ आ जाता है। विवेकरूपी छन्नों का उपयोग करो। तुम लोग उन्हे जानकर संसार करना। यही विद्या का संसार कहलाता है।

"देखो न, स्त्रियो मे कितनी मोहिनी शक्ति है – तिस पर अविद्या-रूपिणी स्त्रियाँ पुरुषो को मानो एक बेवकूफ जड़पदार्थ बना देती है। जब देखता हूँ, स्त्री-पुरुष एक साथ बैठे हुए है तब सोचता हूँ, अहा! ये बिल्कुल ही गये! (मास्टर की ओर देखकर) हारू इतना अच्छा लड़का है, परन्तु वह प्रेतनी के हाथो पड़ा है! लाख कहो – 'अरे मेरे हारू, तुम कहाँ गये! हारू तुम कहाँ गये!' कहाँ है हारू! लोगो ने देखा चलकर, हारू बट के नीचे चुपचाप बैठा हुआ है, न वह रूप है, न वह तेज, न वह आनन्द! बट की प्रेतनी हारू पर सवार है!

"बीबी अगर कहे, 'जरा चले तो जाओ', बस आप उठकर खड़े हो गये, अगर कहा, 'बैठो', तो कहने भर की देर होती है, आप बैठ गये!

"एक उम्मीदवार बड़े बाबू के पास जाते-जाते हैरान हो गया। काम किसी तरह न मिला। बाबू आफिस के बड़े बाबू थे। वे कहते थे, 'अभी जगह खाली नही है, मिलते रहना।' इस तरह बहुत समय कट गया। उम्मीदवार हताश हो गया। वह अपने एक मित्र से अपना दु:ख रो रहा था। मित्र ने कहा, 'तू भी अक्ल का दुश्मन ही है! – अरे उसके पास क्यो दौड़-धूप कर रहा है? गुलाबजान के पास जा, उससे सिफारिश करा, तो काम हो जायेगा।' उम्मीदवार बोला, 'ऐसी बात है! तो मै अभी जाता हूँ।' गुलाबजान बड़े बाबू की रखेली है। उम्मीदवार उससे मिला, कहा, 'माँ, तुम्हारे बिना किये न होगा – मै बड़ी विपत्ति मे पड़ गया हूँ। ब्राह्मण का बच्चा हूँ, कहाँ मारा मारा फिरूँ? माँ, बहुत दिनों से कामकाज कुछ नही मिला, लड़केबच्चे भूखो मर रहे है, तुम्हारे एक बार के कहने ही से मेरा मनोरथ सिद्ध हो जायगा।' गुलाबजान ने उस ब्राह्मण से पूछा, 'बेटा, किससे कहना होगा?' उम्मीदवार ने कहा, 'बड़े बाबू से जरा आप कह दें तो मुझे जरूर काम मिल जाय।' गुलाबजान ने कहा, 'मैं आज ही बड़े बाबू से कहकर सब ठीक करा दूँगी।' दूसरे दिन सुबह को उम्मीदवार के पास एक आदमी जाकर हाजिर हुआ। उसने कहा, 'आप आज ही से

बड़े बाबू के आफिस जाया कीजिये।' बडे बाबू ने साहब से कहा, 'ये बड़े ही योग्य है, इन्हे काम पर मैने रख लिया है, आफिस का काम ये बडी तत्परता के साथ कर सकेगे।'

"इसी कामिनी और कांचन पर सब लोग लट्टू है। परन्तु मुझे यह बिलकुल नही सुहाता। सच कहता हूँ, राम दुहाई, ईश्वर को छोड मै और कुछ नही जानता।"

(३)

सत्य बोलना कलियुग की तपस्या है

एक भक्त – महाराज, सुना है कि एक नया सम्प्रदाय 'नव हुल्लोल' शुरू हुआ है। ललित चटर्जी उसका एक सदस्य है।

श्रीरामकृष्ण – इस संसार मे भिन्न मत है, ये सब उसी एक ईश्वर तक पहुँचने के अलग अलग रास्ते है, पर आश्चर्य यह है कि हरएक मनुष्य यही सोचता है कि केवल उसी का मत ठीक है, सिर्फ उसी की घडी ठीक समय बताती है।

गिरीश (मास्टर से) – तुम जानते हो, इसके बारे मे पोप का क्या कहना है? – 'It is with our Judgement'* आदि।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – इसका क्या अर्थ है?

मास्टर – हरएक व्यक्ति सोचता है कि उसी की घड़ी ठीक समय बताती है, परन्तु यथार्थ बात यह है कि भिन्न-भिन्न घडियाँ एक ही समय नही बतलाती।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु घडियाँ चाहे जितनी गलत क्यो न हो, सूरज कभी गलती नही करता है। मनुष्य को अपनी घडी सूरज से मिला लेनी चाहिए।

एक भक्त – महाराज, अमुक व्यक्ति झूठ बोलता है।

श्रीरामकृष्ण - सत्य बोलना कलियुग की तपस्या है, इस जीवन मे अन्य साधनाओ का अभ्यास करना कठिन है, परन्तु सत्य पर दृढ़ रहने से मनुष्य ईश्वर को प्राप्त कर लेता है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा भी है कि सत्य वचन, ईश्वराधीनता तथा परस्त्री को मातृरूप से देखना ये महान् गुण है, अगर इनसे हरि न मिले तो तुलसी को झूठा समझो।

"केशव सेन ने अपने पिता का कर्जा अपने ऊपर ले लिया। वैसे कुछ लिखापढ़ी भी नही थी कोई और होता तो साफ इन्कार कर जाता। मै जोड़ासाँको मे देवेन्द्र के समाज मे गया और वहाँ देखा कि केशव मंच पर बैठा ध्यान कर रहा है। उस समय वह तरुण अवस्था का था। उसे देखकर मैने मथुरबाबू से कहा, 'यहाँ और जितने लोग ध्यानधारणा

---

* It is with our judgements as with our watches
None goes just alike, yet each believes his own – Pope

"जिस प्रकार हरएक मनुष्य यह समझता है कि उसी की घड़ी ठीक चलती है वैसे ही उसकी धारणा अपने धर्ममार्ग के बारे मे भी होती है यद्यपि सब के मार्ग अलग अलग होते है।

कर रहे हैं उन सब में इसी तरुण युवक का 'शोला' पानी के नीचे बैठ गया है। मछली मानो कटिया में मुँह लगाने लगी है।'

"एक आदमी था – उसका नाम मैं नहीं बताऊँगा। वह दस हजार रुपयों के लिए अदालत में झूठ बोल गया। मुकदमा जीतने के लिए उसने काली माँ के पास मुझसे एक भेंट चढ़वाई। मुझसे बोला, 'बाबा, कृपा करके यह भेट माँ को चढ़ा दीजियेगा।' बालक के समान विश्वास करके मैंने वह भेंट चढ़ा दी।"

भक्त – तो सचमुच वह बड़ा अच्छा आदमी रहा होगा!

श्रीरामकृष्ण – नहीं, बात ऐसी थी, उसकी मुझमें इतनी श्रद्धा थी कि वह जानता था, यदि मैं माता के पास भेंट चढ़ाऊँगा तो माँ उसकी प्रार्थना अवश्य स्वीकार कर लेंगी।

ललितबाबू का संकेत करते हुए श्रीरामकृष्ण ने कहा, "क्यों अहंकार पर विजय प्राप्त कर लेना सरल बात है? ऐसे लोग बहुत कम हैं, जो अहंकार से रहित हों। हाँ! बलराम ऐसा है। (एक भक्त की ओर इशारा करके) और देखो, यह दूसरा है। इसके स्थान पर कोई और होता तो घमण्ड के मारे फूल जाता। बाल में कंघी करके माँग निकालता तथा अनेक प्रकार के तमोगुण उसमें प्रकट हो जाते। अपनी विद्वता पर उसे घमण्ड हो जाता। उस मोटे ब्राह्मण में (प्राणकृष्ण की ओर संकेत करके) अब भी अहंभाव का कुछ लेश है। (मास्टर से) महिम चक्रवर्ती ने बहुत से ग्रन्थ पढ़े हैं न?"

मास्टर – हाँ महाराज, उसने बहुत कुछ पढ़ा है।

श्रीरामकृष्ण (मुस्कराकर) – मेरी इच्छा है कि उसकी और गिरीश की भेट हो जाती। तब हम लोग उनके वादविवाद का थोड़ा मजा देखते।

गिरीश (मुसकराते हुए) – क्या वह ऐसा नहीं कहता कि साधना के द्वारा सभी लोग भगवान् श्रीकृष्ण के सदृश हो सकते हैं?

श्रीरामकृष्ण – नहीं, बिलकुल वैसी बात नहीं, मगर हाँ, कुछ कुछ वैसी ही।

भक्त – महाराज, क्या सब श्रीकृष्ण के सदृश हो सकते हैं?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर का अवतार अथवा जिसमें अवतार के कुछ चिह्न होते हैं उसे ईश्वर-कोटि कहते हैं। साधारण मनुष्य को जीव या जीव-कोटि कहते हैं। साधना के बल पर जीव-कोटि ईश्वरानुभव कर सकता है, परन्तु समाधि के बाद वह इस जगत् में फिर नहीं लौटता।

"ईश्वर-कोटि मानो एक राजा के लड़के के सदृश होता है। उसके पास मानो सात-मंजिला महल के प्रत्येक कमरे की चाबी रहती है, वह सातों मंजिलों पर चढ़ सकता है और इच्छानुसार नीचे उतर भी सकता है। जीव-कोटि एक मामूली कर्मचारी के समान होता है। वह उस महल के कुछ ही कमरों में प्रवेश कर सकता है; उतना ही उसका क्षेत्र है।

"जनक ज्ञानी थे। उन्होंने ज्ञान की उपलब्धि साधना द्वारा की। परन्तु शुकदेव तो ज्ञान

की मूर्ति ही थे।''

गिरीश – ओह, ऐसी बात है महाराज?

श्रीरामकृष्ण – शुकदेव ने साधना के द्वारा ज्ञान प्राप्त नही किया। शुकदेव के समान नारद को भी ब्रह्मज्ञान था, परन्तु वे लोगो के शिक्षणार्थ अपने मे भक्ति को भी बनाये रखे। प्रह्लाद की कभी कभी यह धारणा होती थी, 'मै ही ईश्वर हूँ – सोऽहम्।' कभी अपने को ईश्वर का दास समझते थे और कभी उसका बालक। हनुमान की भी यही दशा थी।

''ऐसी उच्च अवस्था प्राप्त करने का विचार सब लोग चाहे भले ही करे परन्तु उसे सब प्राप्त नही कर सकते। कुछ बॉंस पोले होते है और कुछ अधिक ठोस।''

(४)

कामिनी-कांचन तथा तीव्र वैराग्य

एक भक्त – आपके ये सब भाव तो उदाहरण के लिए है, तो हम लोगो को क्या करना होगा?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर-प्राप्ति के लिए तीव्र वैराग्य चाहिए। ईश्वर के मार्ग का जिसे विरोधी समझो, उसे उसी समय छोड दो। पीछे छोड़ देगे, यह सोचकर उसे रखना उचित नही। कामिनी और काचन ईश्वर के मार्ग के विरोधी है, उनसे मन को हटा लेना चाहिए।

''धीमे तिताले पर चलते रहने से न बनेगा। एक आदमी गमछा कन्धे पर रखे नहाने जा रहा था। उसकी स्त्री बोली, 'तुम किसी काम के नही हो, उम्र बढ़ रही है, अब भी यह सब न छोड सके। मुझे छोडकर तुम एक दिन भी नही रह सकते, परन्तु अमुक को देखो, वह कितना त्यागी है।'

''पति – 'क्यो उसने क्या किया?'

''स्त्री – 'उसकी सोलह स्त्रियॉं है, वह एक एक करके सब को छोड़ रहा है। तुम कभी त्याग न कर सकोगे।'

''पति – 'एक-एक करके त्याग। अरी पगली, वह त्याग हरगिज न कर सकेगा। जो त्याग करता है वह क्या कभी जरा-जरा-सा त्याग करता है?'

''स्त्री (हँसकर) – 'फिर भी वह तुमसे अच्छा है।'

''पति – 'अरी, तू नही समझी। वह क्या त्याग करेगा? त्याग मै करूँगा, यह देख मै चला।'

''तीव्र वैराग्य यह है। ज्योही विवेक आया कि उसी समय उसने त्याग किया। गमछा कन्धे पर डाले हुए ही वह चला गया। संसार का काम ठीक कर जाने के लिए भी नही आया। घर की ओर एक बार मुड़कर उसने देखा भी नही।

''जो त्याग करेगा, उसमे मन का बल खूब होना चाहिए। डाका मारने का भाव,

डाका डालने के पहले डाकू जिस तरह किया करते है – मारो, लूटो, काटो।

"तुम लोग और क्या करोगे? उनकी भक्ति तथा कुछ प्रेम प्राप्त कर दिन पार करते रहना। कृष्ण के चले जाने पर यशोदा पागल की भाँति श्रीमती के पास गयी। उन्हे दु:खित देखकर श्रीमती ने आद्याशक्ति के रूप मे उन्हे दर्शन दिया। कहा 'माँ मुझसे वर की प्रार्थना करो।' यशोदा ने कहा, 'अब और क्या वर लूँ! यह कहो कि मन, वाणी और कर्म से श्रीकृष्ण की सेवा कर सकूँ। इन आँखो से उसके भक्तो के दर्शन हो, जहाँ जहाँ उसने लीला की है, ये पैर वहाँ वहाँ जा सके, ये हाथ उसकी और उसके भक्तो की सेवा करे, सब इन्द्रियाँ उसी के काम मे लगी रहे।' "

यह कहते कहते श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। एकाएक आप ही आप कह रहे है – "संहारमूर्ति काली या नित्यकाली।"

बड़े कष्ट से श्रीरामकृष्ण ने भाव का वेग रोका। उन्होंने कुछ पानी पिया। यशोदा की बात फिर कहने जा रहे है कि महेन्द्र मुखर्जी आ पहुँचे। ये तथा उनके छोटे भाई प्रिय मुखर्जी अभी थोडे दिनो से श्रीरामकृष्ण के पास आने-जाने लगे है। महेन्द्र की आटे की चक्की है तथा अन्य व्यवसाय भी है। इनके भाई इंजीनियर का काम करते थे। इनका काम कर्मचारी सँभालते है, इन्हे यथेष्ट अवकाश है। महेन्द्र की उम्र छत्तीस-सैतीस की होगी और इनके भाई की उम्र चौतीस-पैतीस की। ये केदेटी मौजे मे रहते है। कलकत्ते के बागबाजार मे भी इनका एक मकान है। वही सब लोग रहते है। इनके साथ एक नवयुवक आया-जाया करते है, भक्त है, नाम हरि है। हरि का विवाह तो हो चुका है, परन्तु श्रीरामकृष्ण पर ये बडी भक्ति रखते है। महेन्द्र बहुत दिनो से दक्षिणेश्वर नही गये। हरि भी नही गये, – आज आये है। महेन्द्र ने भूमिष्ठ होकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। हरि ने भी प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी, इतने दिनो तक दक्षिणेश्वर क्यो नही आये

महेन्द्र – जी, मै केदेटी गया था, कलकत्ते मे नहा था।

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी, न तो तुम्हारे लडके-बच्चे है, न किसी की नौकरी करते हो, फिर भी तुम्हे अवकाश नही रहता! अजब है!

भक्त सब चुप है। महेन्द्र का चेहरा उतर गया।

श्रीरामकृष्ण (महेन्द्र से) – तुमसे मै इसलिए कहता हूँ कि तुम सरल और उदार हो – ईश्वर पर तुम्हारी भक्ति है।

महेन्द्र – जी, आप तो मेरे भले के लिए ही कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – और यहाँ आकर कुछ पूजा भी नही चढानी पड़ती। यदु की माँ ने इस पर कहा था, 'दूसरे साधु बस लाओ-लाओ किया करते है। बाबा, तुममे यह बात नही है।' विषयी आदमियो का जी ही निकल आता है अगर उन्हे गाँठ का पैसा खर्च

करना पड़े।

"एक जगह नाटक हो रहा था। एक आदमी को बैठकर सुनने की बड़ी इच्छा थी। उसने झाँककर देखा, तो उसे मालूम हुआ कि यदि कोई बैठकर देखना चाहता है, तो उससे टिकट के दाम लिये जाते है, फिर क्या था – वहाँ से चलता बना। एक दूसरी जगह नाटक हो रहा था, वह वहाँ गया। पूछने पर मालूम हुआ, वहाँ टिकट नही लगता। वहाँ बड़ी भीड़ थी। वह दोनो हाथो से भीड़ हटाकर बीच महफिल मे पहुँचा। वहाँ अच्छी तरह जमकर मूँछो पर ताव दे-देकर सुनने लगा! (सब हँसते है)

"और तुम्हारे लड़के-बच्चे भी नही है कि कहे, मन दूसरी ओर चला जायेगा। एक डिप्टी है, आठ सौ तनख्वाह पाता है। केशव सेन के यहाँ नाटक देखने गया था। मै भी गया था। मेरे साथ राखाल तथा और भी कई आदमी गये थे। मै जहाँ नाटक देखने के लिए बैठा था, वही मेरी बगल मे वे लोग भी बैठे हुए थे। उस समय राखाल उठकर जरा कही बाहर गया। डिप्टी साहब वही आकर डट गये और राखाल की जगह पर उसने अपने छोटे बच्चे को बैठा दिया। मैने कहा, 'यहाँ मत बैठाइये।' मेरी ऐसी अवस्था थी कि जो कोई जैसा कहता था, मुझे वैसा करना पड़ता था। इसीलिए मैने राखाल को वहाँ बैठाया था। जब तक नाटक हुआ, डिप्टी बराबर अपने बच्चे से बातचीत करता रहा। उसने एक बार भी नाटक नही देखा, और मैने सुना है वह बीबी का गुलाम है, उसके इशारे पर उठता-बैठता है, और एक नकबैठे बन्दर की शक्ल के बच्चे के लिए उसने नाटक नही देखा।

(महेन्द्र से) तुम ध्यान-धारणा करते हो न?"

महेन्द्र – जी, कुछ करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – कभी कभी आया करो।

महेन्द्र – (सहास्य) – जी, कहाँ कैसी गिरह पड़ी हुई है, आप जानते ही है। जरा देखियेगा।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – पहले आया तो करो। – तब तो दाब-दूबकर देखूँगा, कहाँ गिरह है – कहाँ क्या है। तुम आते क्यो नही?

महेन्द्र – महाराज, आजकल काम से फुरसत नही मिलती। तिस पर कभी कभी केदेटी के मकान का इन्तजाम करना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण – (महेन्द्र से, भक्तो की ओर इशारे से बतलाकर) – "क्या इनके घर-द्वार नही है? या कामकाज नही है? ये किस तरह आया करते है?

(हरि से) "तू क्यो नही आता? तेरी बीबी आयी है न?"

हरि – जी, नही।

श्रीरामकृष्ण – तो तू क्यो भूल गया?

हरि – जी, मै बीमार हो गया था।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – हाँ, दुबला तो हो गया है। इसे भक्ति तो कम है नहीं, भक्ति की दौड़ का हाल फिर क्या पूछना! – उत्पाती भक्ति है। (हँस रहे हैं।)

श्रीरामकृष्ण एक भक्त की स्त्री को 'हाबी की माँ' कहकर पुकारते थे। 'हाबी की माँ' के भाई आये हुए हैं, कालेज में पढ़ते हैं, उम्र कोई बीस साल की होगी। वे क्रिकेट खेलने के लिए जायेंगे, इसलिए उठे, उनके साथ उनके छोटे भाई भी उठे, ये भी श्रीरामकृष्ण के भक्त है। कुछ देर बाद द्विज के लौट आने पर श्रीरामकृष्ण ने पूछा – 'तू नही गया?'

किसी भक्त ने कहा, 'ये गाना सुनेंगे इसीलिए चले आये हैं।' आज ब्राह्म भक्त श्री त्रैलोक्य का गाना होगा। पल्टू भी आ गये। श्रीरामकृष्ण कहते हैं – 'कौन – अरे! पल्टू?'

एक और नवयुवक भक्त आये। इनका नाम पूर्ण है। श्रीरामकृष्ण के कई बार बुलवाने से तो ये आये हैं। घरवाले इन्हें आने ही नही देते थे। मास्टर जिस स्कूल में पढ़ाते है, ये वही पाँचवी कक्षा में पढ़ते हैं। इन्होंने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण उन्हे अपने पास बैठाकर धीरे धीरे बातचीत कर रहे हैं। मास्टर पास बैठे हुए है। दूसरे भक्त दूसरे ही विचार में डूबे है। गिरीश एक ओर बैठे हुए केशव-चरित पढ़ रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (पूर्ण से) – यहाँ आया करो।

गिरीश – (मास्टर से) – यह कौन है?

मास्टर – (विरक्ति से) – लड़का है और कौन है?

गिरीश – लड़का है यह तो देख ही रहा हूँ।

मास्टर डरे कि कहीं चार आदमी जान गये और लड़के के घर तक खबर फैली तो उसके लिए यह अच्छा न होगा, और इससे मास्टर पर भी दोषारोपण होता है। इसीलिए बच्चे के साथ श्रीरामकृष्ण धीरे धीरे बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – जो कुछ मैंने बतलाया था, सब करते जाना।

बच्चा – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – स्वप्न में कुछ देखते हो? – अग्नि-शिखा, जलती हुई मशाल, सुहागिन स्त्री, स्मशान? यह सब देखना बहुत अच्छा है।

बच्चा – आपको देखा है, आप बैठे हुए कुछ कह रहे थे।

श्रीरामकृष्ण – क्या? – उपदेश? – अच्छा क्या सुना, एक कहो तो जरा।

बच्चा – याद नही है।

श्रीरामकृष्ण – नही याद है तो नही सही, यह बहुत अच्छा है।

तुम्हारी उन्नति होगी। मुझ पर आकर्षण है न?

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – 'क्या वहाँ नहीं जाओगे?' (अर्थात्

दक्षिणेश्वर में)। बच्चा कह रहा है, 'मैं यह नहीं कह सकता।'

श्रीरामकृष्ण - क्यों? वहाँ तुम्हारा कोई आत्मीय है न?

बच्चा – जी हाँ, परन्तु वहाँ जाने की सुविधा नहीं है।

गिरीश केशव-चरित पढ़ रहे है। ब्राह्म समाज के श्रीयुत त्रैलोक्य ने यह पुस्तक लिखी है। इसमें लिखा है, पहले श्रीरामकृष्णदेव संसार से विरक्त थे, परन्तु केशव से मिलने के बाद उन्होंने अपना मत बदल दिया है। अब श्रीरामकृष्णदेव कहते है कि संसार में भी धर्म होता है। इसे पढ़कर किसी किसी भक्त ने श्रीरामकृष्ण से यह बात कही है। भक्तों की इच्छा है कि त्रैलोक्य के साथ इस विषय पर बातचीत हो। श्रीरामकृष्ण को पुस्तक पढ़कर यह बात सुनायी गयी थी।

गिरीश के हाथ में पुस्तक देखकर श्रीरामकृष्ण गिरीश, मास्टर, राम तथा दूसरे भक्तों से कह रहे हैं – "वे लोग वही लेकर हैं, इसीलिए संसार-संसार रट रहे हैं। कामिनी और कांचन के भीतर हैं न! उन्हे पा लेने पर ऐसी बात नही निकलती। ईश्वर का आनन्द मिल जाता है, तब संसार तो काकविष्ठावत् जान पड़ता है। मैं पहले सब से किनाराकशी कर गया था। – विषयी लोगो का साथ तो छोड़ा, बीच में भक्तों का संग भी छोड़ दिया था। देखा, सब पटापट कूच कर जाते हैं (मर जाते हैं) और यह सुनकर मेरा कलेजा दहलता था – इस समय कुछ कुछ तो आदमियों में रहता भी हूँ।"

(५)

संकीर्तन के आनन्द में

गिरीश घर चले गये। फिर आयेंगे।

श्रीयुत जयगोपाल सेन के साथ त्रैलोक्य आ गये। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण उनसे कुशलप्रश्न कर रहे हैं। छोटे नरेन्द्र ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'क्यों रे, तू शनिवार को तो फिर नहीं आया?' अब त्रैलोक्य का गाना होगा।

श्रीरामकृष्ण – अहा! उस दिन तुमने आनन्दमयी माता का गाना गाया, कितना सुन्दर गाना था! – और सब आदमियो के गाने अलोने लगते हैं! उस दिन नरेन्द्र का गाना भी अच्छा नहीं लगा। जरा वही गाना गाओ!

त्रैलोक्य गा रहे हैं – 'जय शचीनन्दन!'

श्रीरामकृष्ण मुँह धोने के लिए जा रहे हैं। स्त्रियाँ चिक के पास व्याकुल भाव से बैठी हुई थी। उनके पास श्रीरामकृष्ण दर्शन देने के लिए जायेंगे। त्रैलोक्य का गाना हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण कमरे में लौटकर त्रैलोक्य से कह रहे है – 'जरा आनन्दमयी का गाना गाओ तो।' त्रैलोक्य गा रहे हैं –

"माता, मनुष्य-सन्तानो पर तुम्हारी कितनी प्रीति है! जब इसकी याद आती है, तब आँखो से प्रेम की धारा बह चलती है। मै जन्म से ही तुम्हारे श्रीचरणो मे अपराधी हूँ, फिर भी तुम मेरे मुख की ओर प्रेमपूर्ण नेत्रो से देखकर मधुर स्वर से पुकार रही हो। जब यह बात याद आती है, तब दोनो नेत्रो से प्रेम की धारा बह चलती है। तुम्हारे प्रेम का भार अब मुझसे ढोया नही जाता। जी विकल होकर गे उठता है, तुम्हारे स्नेह को देखकर हृदय विदीर्ण हो जाता है। माँ, तुम्हारे श्रीचरणो मे मै शरणागत हूँ।"

गाना सुनते ही छोटे नरेन्द्र गम्भीर ध्यान मे मग्न हो रहे है, – शरीर काष्ठवत् जान पडता है। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है, 'देखो देखो, कितना गम्भीर ध्यान है। बाहरी संसार का ज्ञान बिलकुल नही है।'

गाना समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण ने त्रैलोक्य से 'दे माँ पागल करे' गाने के लिए कहा। राम ने कहा, 'कुछ हरिनाम होना चाहिए।' त्रैलोक्य गा रहे है, 'मन एक बार हरि कहो।'

मास्टर धीरे धीरे कह रहे है – " 'निताई-गौर तुम दोनो भाई भाई' यह गाना सुनने की श्रीरामकृष्ण की भी इच्छा है।" त्रैलोक्य के साथ भक्तगण भी मिलकर गा रहे है। श्रीरामकृष्ण भी साथ गाने लगे। यह गाना समाप्त होने पर दूसरा गाना शुरू किया गया।• – "हरिनाम लेते हुए जिनकी आँखो से आँसू बह चलते है, वे दोनो भाई आये है। जो मार सहकर भी प्रेमदान देने के लिए तैयार रहते है, वे दोनो भाई आये है।"

इसके बाद श्रीरामकृष्ण ने स्वय गाना गाया – "श्रीगौरांग के प्रेम-प्रवाह से नदिया मे उथल-पुथल मची हुई है।"

श्रीरामकृष्ण ने फिर गाया – "हरिनाम लेता हुआ यह कौन जा रहा है? ऐ माधाई, तू जरा देख तो आ।"

गाना हो जाने पर छोटे नरेन्द्र बिदा हुए।

श्रीरामकृष्ण – तू अपने माँ-बाप पर खूब भक्ति किया कर। परन्तु वे अगर ईश्वर के मार्ग मे रोड़े अटकावे, तो उनकी बाते न मानना। खूब दृढ़ता रखना – वह बाप नही साला है, अगर ईश्वर के मार्ग मे विघ्न खड़ा करता है।

छोटे नरेन्द्र – न जाने क्यो, मुझे भय नही होता।

गिरीश घर से लौट आये। श्रीरामकृष्ण त्रैलोक्य से परिचय करा रहे है। कह रहे है – 'तुम लोग कुछ वार्तालाप करो।' दोनो मे कुछ बातचीत हो जाने पर, त्रैलोक्य से कह रहे है, "जरा वही गाना एक बार और – 'जय शचीनन्दन'।"

त्रैलोक्य गाने लगे।

(भावार्थ) "हे शचीनन्दन, गुणाकर गोरांग, तुम पारस-पत्थर हो। भाव-रस के सागर हो। तुम्हारी मूर्ति कितनी सुन्दर है। अंग कनक की आभामयी मनोहर आँखे।

मृणाल-निन्दित, आजानु-लम्बित, प्रेम-प्रसारित तुम्हारे कर-युगल भी कितने सुकुमार है। प्रेम-रस से भरा, छलकता हुआ रुचिर वदन-कमल, सुन्दर केश, चारु गण्डस्थल भी कितने सुंदर है! - तुम्हारे ईश्वरप्रेम की विकल आस्था से सर्वाग कितना आकर्षक हो रहा है। तुम महाभाव-मण्डित हो, हरि-रस-रंजित हो रहे हो, आनन्द से तुम्हारा सर्वाग पुलकित हो रहा है। प्रमत्त मातंग की तरह, ऐ हेमकान्ति, तुम्हारे अंग आवेश-विभोर हो रहे है – अनुराग से भरे हुए है। तुम हरिगुण-गायक हो, अलोक-सामान्य हो, भक्तिसिन्धु के श्रीचैतन्य हो। अहा! 'भाई' कहकर चाण्डाल को भी तुम प्रेमपूर्वक हृदय से लगा लेते हो, दोनो बाहुओ को उठाकर हरि-नाम-कीर्तन करते हुए तुम्हारी ऑखो से अविरल ऑसुओ की धारा बह चलती है। 'मेरे जीवन-धन वे कहाँ है', कहकर जब तुम रोदन करते हो, उस समय महा स्वेद होता है – कम्पन होता है, हुंकार के साथ गर्जना होती है। पुलकित और रोमांचित होकर तुम्हारा सुन्दर शरीर धूलि-लुण्ठित हो जाता है। ऐ हरिलीलारस-निकेतन! ऐ भक्ति-रस प्रस्रवण! दीन-जन-बान्धव ऐ बंग-गौरव! प्रेम-शशिधर ऐ श्री चैतन्य! तुम धन्य हो – तुम धन्य हो!''

'मेरे जीवन-धन वे कहाँ है, कहकर तुम रोदन करते हो', यह सुनकर श्रीरामकृष्ण भावावेश मे आकर खड़े हो गये, – बिलकुल बाह्य ज्ञान जाता रहा!

जब कुछ प्राकृत दशा हुई तब वे त्रैलोक्य से विनयपूर्वक कहने लगे – ''एक बार वह गाना भी – 'क्या देखा मैंने केशव भारती के कुटीर मे!' '' त्रैलोक्य ने वह गाना भी गाया।

गाना समाप्त हो गया। सन्ध्या हो आयी। श्रीरामकृष्ण अब भी भक्तो के साथ बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण (राम से) – बाजा नही है। अगर अच्छा बाजा रहा तो गाना खूब जमता है। (हँसकर) बलराम का बन्दोबस्त क्या है, जानते हो? – ब्राह्मण की गौ! – जो खाय तो कम, पर दूध दे सेरो! (सब हँसते है) बलराम का भाव है – आप लोग खूब गाइये-बजाइये! (सब हँसते है)

(६)

श्रीरामकृष्ण तथा विद्या का संसार

सन्ध्या हो गयी है। बलराम के बैठकखाने और बरामदे मे चिराग जल गये। श्रीरामकृष्ण जगन्माता को प्रणाम करके उँगलियो पर बीजमन्त्र का जप कर मधुर स्वर से नाम ले रहे है। भक्तगण चारो ओर बैठे है। वे मधुर नाम सुन रहे है। गिरीश, मास्टर, बलराम, त्रैलोक्य तथा अन्य दूसरे बहुत से भक्त अब भी बैठे है। 'केशव-चरित' ग्रन्थ मे संसार के लिए श्रीरामकृष्ण के मतपरिवर्तन की जो बात लिखी है, त्रैलोक्य के सामने वह

प्रसंग उठाने के लिए भक्तो ने निश्चय किया। गिरीश ने श्रीगणेश किया।

वे त्रैलोक्य से कह रहे है – "आपने जो यह लिखा है कि संसार के सम्बन्ध मे इनका (श्रीरामकृष्ण का) मत बदल गया है, वास्तव मे बात वैसी नही, इनका मत परिवर्तित नही हुआ है।"

श्रीरामकृष्ण – (त्रैलोक्य और दूसरे भक्तो से) – इधर का आनन्द मिलने पर फिर संसार नही सुहाता। ईश्वर का आनन्द मिल गया तो संसार अलोना जान पड़ता है। शाल के मिलने पर फिर बनात अच्छी नही लगती।

त्रैलोक्य – जो लोग सांसारिक है, मैने उनकी बात लिखी है। जो लोग त्यागी है, मै उनकी बात नही कहता।

श्रीरामकृष्ण – ये सब तुम लोगो की कैसी बाते है? जो लोग 'संसार मे धर्म' की रट लगाते है, वे लोग एक बार अगर ईश्वर का आनन्द पा जायँ, तो उन्हे कुछ भी नही सुहाता। कामो के लिए जो दृढ़ता होती है, वह भी घट जाती है। क्रमश: आनन्द जितना बढता जाता है, उतना ही वे काम करने मे थक जाते है, – केवल उस आनन्द की ही खोज मे रहते है। कहाँ ईश्वरानन्द और कहाँ विषयानन्द और रमणानन्द! एक बार ईश्वर के आनन्द का स्वाद पा जाने पर फिर मनुष्य उसी आनन्द की खोज के लिए तुल जाता है, संसार रहे, चाहे जाय।

"प्यास के मारे चातक की छाती फटी जाती है, सातो सागर, सारी नदियाँ तथा कुल तालाब पानी से भरे रहते है, फिर भी वह उनका जल नही पीता। स्वाति की बूँदो के लिए चोच फैलाये रहता है। स्वाति की बूँदो को छोड़ उसके लिए और सब पानी धूल है।

"कहते है, दोनो ओर बचाकर चलेगे। दुअन्नी भर शराब पीकर आदमी दोनो तरफ की रक्षा चाहे कर ले, परन्तु कसकर शराब पी ले तो कैसे रक्षा हो सकेगी?

"ईश्वर का आनन्द पा जाने पर फिर और अच्छा नही लगता। तब कामिनी और काचन की बात हृदय मे चोट कर जाती है। (श्रीरामकृष्ण कीर्तन के स्वर मे कह रहे है) – 'दूसरे आदमियो की और और बाते तो अब अच्छी ही नही लगती।' जब ईश्वर के लिए मनुष्य पागल होता है तब रुपया-पैसा कुछ अच्छा नही लगता।"

त्रैलोक्य – संसार मे रहना है तो धन का भी तो संचय चाहिए। दान-ध्यान आदि संसार मे लगे ही रहते है।

श्रीरामकृष्ण – क्या! पहले धन का संचय करके फिर ईश्वर! और दान-ध्यान-दया भी कितनी! अपनी लड़की के विवाह मे तो हजारो रुपयो का खर्च – और पड़ोसी भूखो मरता है, उसे मुट्ठी भर अन्न देते कलेजा चिर जाता है! संसारी मनुष्य दान भी बडे हिसाब से करते है। लोग खाने को नही पाते –-तो क्या हुआ, साले मरे या बचे, – मै और मेरे घरवाले बस अच्छे रहे, बस हो गया! सब जीवा पर दया, उनका जबानी जमा-खर्च है।

त्रैलोक्य – संसार मे अच्छे आदमी भी तो है, – पुण्डरीक विद्यानिधि चैतन्यदेव के शिष्य थे। ये संसार म ही नो थे।

श्रीरामकृष्ण – उसके गले तक शराब आ गयी थी। अगर थोडीसी और पी ली होती तो फिर संसार मे नही रह सकता था।

त्रैलोक्य चुप हो गये। मास्टर गिरीश से अकेले मे कह रहे है – 'तो इन्होने जो कुछ लिखा है, वह ठीक नही है।'

गिरीश – तो आपने जो कुछ लिखा हे, इस सम्बन्ध मे वह ठीक नही है। क्यो?

त्रैलोक्य – नही क्यो? क्या ये यह नही मानते कि संसार मे धर्म होता है?

श्रीरामकृष्ण – होता है, परन्तु ज्ञानलाभ से पश्चात् संसार मे रहना चाहिए, – ईश्वर को प्राप्त करके तब रहना चाहिए। तब 'कलक' के समुद्र मे तैरते रहने पर भी कलक देह मे नही छू जाना। फिर वह कोच के भीतर रहनेवाली मछली की तरह रह सकता है। ईश्वरलाभ के बाद जो संसार है, वह विद्या का संसार है। उसमे कामिनी और कांचन का स्थान नही है। है केवल भक्ति, भक्त और भगवान। मेरे भी स्त्री है, – घर मे लोटा-थाली भी है, – घुरू और लुच्छू को भोजन भी दे दिया जाता है, और फिर जब 'हाबी की माँ' और ये लोग आते है, तब इन लोगो के लिए भी सोचता हूँ।

(७)

श्रीरामकृष्ण तथा अवतार-तत्त्व

एक भक्त – (त्रैलोक्य से) – आपकी पुस्तक मे मैने देखा, आप अवतार नही मानते। यह चैतन्यदेव के प्रसंग मे पाया।

त्रैलोक्य – उन्होने स्वयं प्रतिवाद किया है। पुरी मे जब अद्वैत और उनके दूसरे भक्त उन्हे ही भगवान कहकर गाने लगे, तब गाना सुनकर चैतन्यदेव ने अपने घर के दरवाजे बन्द कर लिये थे। ईश्वर के ऐश्वर्य की इति नही है। ये जैसा कहते है, भक्त भगवान का बैठकखाना है, और बात भी यही जॅचती है। बैठकखाना खूब सजाया हुआ है, तो क्या उसके अतिरिक्त उनके और कोई ऐश्वर्य नही है?

गिरीश – ये कहते है, प्रेम ही ईश्वर का सारांश है। जिस आदमी के भीतर से प्रेम का आविर्भाव होता है, हमे उसी की जरूरत है। ये कहते है, गौ का दूध उसके स्तनो से आता है। अतएव हमे स्तनो की जरूरत है। गौ के दूसरे अंगो की आवश्यकता नही, – उसके पैरो या सीगो की जरूरत नही।

त्रैलोक्य – उनका प्रेम-दुग्ध अनन्त मार्गो से होकर निकलता है। – उनमे अनन्त शक्ति है।

गिरीश – उस प्रेम के सामने और दूसरी कौनसी शक्ति ठहर सकती है?

त्रैलोक्य – परन्तु फिर भी यदि उस सर्वशक्तिशाली ईश्वर की इच्छा हो तो सब कुछ हो सकता है। सब कुछ उनके हाथ में है।

गिरीश – और सब शक्तियाँ तो उनकी हैं, – परन्तु अविद्याशक्ति?

त्रैलोक्य – अविद्या भी कोई वस्तु है! वह तो अभावमात्र है। जैसे अँधेरे में उजाले का अभाव। इसमे कोई शक नहीं कि हम प्रेम को बहुत बड़ा मानते हैं। पर साथ ही वह ईश्वर के लिए केवल एक बूँद के समान है, यद्यपि हमारे लिए समुद्रतुल्य। पर यदि तुम यह कहो कि ईश्वर के सम्बन्ध में प्रेम अन्तिम शब्द है, तब तो तुम ईश्वर को सीमित कर देते हो।

श्रीरामकृष्ण – (त्रैलोक्य तथा दूसरे भक्तों से) – हाँ, हाँ, यह ठीक है; परन्तु थोड़ीसी शराब के पीने पर जब हमें काफी नशा हो जाता है, तो शराबवाले की दूकान में कितनी शराब है, इसके जानने की हमें क्या जरूरत? अनन्त शक्ति की खबर से हमें क्या काम?

गिरीश (त्रैलोक्य से) – आप अवतार मानते हैं?

त्रैलोक्य – भक्त में ही भगवान अवतीर्ण होते हैं, अनन्त शक्ति का आविर्भाव नही होता, – न हो सकता है। ऐसा किसी भी मनुष्य में नहीं हो सकता।

गिरीश – यदि अपने बच्चों को 'ब्रह्मगोपाल' कहकर पूजा की जा सकती है, तो क्या महापुरुष को ईश्वर कहकर पूजा नहीं की जा सकती?

श्रीरामकृष्ण (त्रैलोक्य से) – अनन्त को लेकर क्यों माथापच्ची कर रहे हो? तुम्हें छूने के लिए क्या तुम्हारे कुल शरीर को छूना होगा? अगर गंगास्नान करना है तो क्या हरिद्वार से गंगासागर तक गंगा को छू जाना चाहिए? 'मैं' मरा कि जंजाल दूर हुआ। जब तक 'मैं' है, तभी तक भेद-बुद्धि रहती है। 'मैं' के जाने पर क्या रहता है यह कोई नहीं कह सकता, - मुँह से यह बात नहीं कही जा सकती। जो कुछ है, बस वही है। तब, कुछ प्रकाश यहाँ हुआ है और बचा-खुचा वहाँ, – यह कुछ मुँह से नहीं कहा जाता। सच्चिदानन्द सागर है। उसके भीतर 'मैं' घट है। जब तक घट है तब तक पानी के दो भाग हो रहे हैं। एक भाग घट के भीतर है, एक बाहर। घट फूट जाने पर एक ही पानी है! यह भी नहीं कहा जा सकता – कहे कौन?

विचार हो जाने पर श्रीरामकृष्ण त्रैलोक्य के साथ मधुर शब्दों में वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – तुम तो आनन्द में हो?

त्रैलोक्य – कहाँ? यहाँ से उठा नहीं कि फिर ज्यों का त्यों। इस समय अच्छी ईश्वर की उद्दीपना हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – जूते पहने रहो तो काँटों के बन में कोई भय नहीं रहता। 'ईश्वर ही

सत्य है और सब अनित्य', इस बोध के रहने पर कामिनी और कांचन का फिर कोई भय नही रह जाता।

त्रैलोक्य को जलपान कराने के लिए बलराम उन्हे दूसरे कमरे मे ले गये। श्रीरामकृष्ण त्रैलोक्य और उनके मत के लोगो की अवस्था भक्तो से कह रहे है। रात के नौ बजे होगे।

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश, मणि और दूसरे भक्तो से) – ये कैसे है, जानते हो? कुएं के एक मेढक ने यह नही देखा कि पृथ्वी कितनी बड़ी है, वह बस कुआँ पहचानता है। इसीलिए वह यह विश्वास करता ही नही कि पृथ्वी भी कोई चीज है। ईश्वर के आनन्द का पता नही मिला, इसीलिए संसार-संसार रट रहा है।

(गिरीश से) "उनके साथ क्यो बकते हो? वे दोनो मे है। ईश्वर के आनन्द का स्वाद जब तक नही मिलता, तब तक उसकी बाते समझ मे नही आती। पांच साल के लड़के को क्या कोई रमणसुख समझा सकता है? विषयी लोग जो ईश्वर-ईश्वर रटते है, वह सुनी हुई बात है। जैसे घर की बड़ी दीदी और चाची को आपस मे लड़ाई करते हुए देखकर बच्चे उनसे सीखते है – 'मेरे लिए भगवान है' - 'तुझे भगवान की कसम है।'

"खैर, उनका दोष कुछ नही है। क्या सब लोग कभी उस अखण्ड सच्चिदानन्द को प्राप्त कर सकते है? श्रीरामचन्द्र को सिर्फ बारह ऋषियो ने समझा था, सब उन्हे नही समझ सके। अवतार को कोई साधारण मनुष्य सोचते है – कोई साधु समझते है, – दो ही चार आदमी उन्हे अवतार जान सकते है।

"जिसके पास जितनी पूँजी है, उतना ही दाम वह एक चीज के लिए खर्च करता है। एक बाबू ने अपने नौकर से कहा, 'यह हीरा तू बाजार मे ले जा, लौटकर मुझे बतलाना कि कौन कितनी कीमत देता है। पहले बैगनवाले के पास जाना।' नौकर पहले बैगनवाले के पास गया। बैगनवाले ने उसे उलट-पुलटकर देखा और कहा, 'भाई, इसके बदले नौ सेर बैगन मै दे सकता हूँ।' नौकर ने कहा, 'भाई जरा बढ़ो, भला दस सेर तो दो।' उसने कहा, 'मै बाजार-दर से ज्यादा कह चुका। इतने मे पट जाय तो दे दो।' तब नौकर ने हँसते हुए हीरा लौटाकर बाबू से कहा, 'बैगनवाला नौ सेर से एक भी बैगन अधिक नही देना चाहता। उसने कहा, मै बाजार-दर से ज्यादा कह चुका।

"बाबू ने हँसकर कहा, 'अच्छा अब की बार कपड़ेवाले के पास ले जा। बैगनवाला तो बैगनो मे पड़ा रहता है, वह और कहाँ तक समझेगा।' कपड़ेवाले की पूँजी कुछ अधिक है, देखे जरा – वह क्या कहता है।' नौकर कपड़ेवाले के पास गया और कहा, 'क्यो जी, यह चीज लोगे? क्या दोगे?' कपड़ेवाले ने कहा, 'हाँ, चीज तो अच्छी है, इससे स्त्रियों का कोई जेवर बन जायेगा। भाई, मै नौ सौ रुपया दे सकता हूँ।' नौकर ने कहा, 'भाई, कुछ और बढो, तो छोड भी दे। अच्छा, हजार तो पूरा कर दो।' कपड़ेवाले ने कहा, 'अब

कुछ न कहो, मैने बाजार-दर से ज्यादा कह दिया है। नौ सौ रुपये से अधिक एक भी रुपया मै न दूँगा।' नौकर लौटकर मालिक के पास हँसते हुए पहुँचा और कहा, 'कपड़ेवाला कहता है – नौ सौ से एक कौड़ी भी ज्यादा न दूँगा। उसने यह भी कहा कि मैने बाजार-दर से कीमत ज्यादा कह दी।' तब उसके मालिक ने हँसते हुए कहा, 'अब जौहरी के पास जाओ, देखें, वह क्या कहता है।' नौकर जौहरी के पास गया। जौहरी ने जरा देखकर ही एकदम कहा – 'एक लाख दूँगा।'

"संसार मे इन लोगो का धर्म-धर्म चिल्लाना उसी तरह है, जैसे किसी मकान के सब दरवाजे तो बन्द हो और छत के छेद से जरासी रोशनी आ रही हो। सिर पर छत के रहने पर क्या कोई सूर्य को देख सकता है? जरासा उजाला आया भी तो क्या हुआ? कामिनी-कांचन छत है। छत को गिराये बिना उस दशा मे सूर्य को देखना मुश्किल है। संसारी आदमी मानो घरो मे कैद है।

"अवतार आदि ईश्वर-कोटि है। वे खुली जगहो मे घूम रहे है। वे कभी संसार मे नही बंधते, – पकड़ मे नही आते। उनका 'मै' संसारियो का-सा भद्दा 'मै' नही है। संसारियो का अहंकार – संसारियो का 'मै' उसी तरह है, जैसे चारो ओर से चार दीवार और ऊपर छत हो। बाहर की कोई वस्तु नजर नही आती। अवतार-पुरुषो का 'मै' बारीक 'मै' है। इस 'मै' के भीतर से सदा ही ईश्वर दिखलायी देते है। जैसे एक आदमी चारदीवार के एक किनारे पर खड़ा हुआ है, और दीवार के दोनो ओर खुला हुआ खूब लम्बा-चौड़ा मैदान पड़ा हुआ है, उस चारदीवार मे एक जगह एक छेद है, जिससे दोनो ओर स्पष्ट दीख पड़ता है। छेद अगर कुछ बड़ा हुआ तो इधर-उधर आना-जाना भी हो सकता है। अवतार-पुरुषो का 'मै' वही छेदवाली चारदीवार है। चारदीवार के इधर रहने पर भी वही लम्बा मैदान दिखलायी देता है – इसका अर्थ यह है कि शरीर धारण करने पर भी वे सदा योग मे रहते है। फिर अगर इच्छा हुई तो बड़े छेद के उधर जाकर समाधिमग्न भी हो जाते है और छेद बड़ा रहा तो आना-जाना जारी भी रख सकते है। समाधिमग्न होने पर भी उतरकर आ सकते है।"

भक्तमण्डली विस्मय और बड़ी लगन के साथ चुपचाप अवतारतत्त्व सुन रही है।

परिच्छेद ११३

बलराम तथा गिरीश के मकान में

(१)

भक्तों के संग में

शुक्रवार, वैशाख शुक्ल दशमी, २४ अप्रैल, १८८५। श्रीरामकृष्ण आज कलकत्ता आये हुए हैं। मास्टर ने दिन के एक बजे के लगभग बलराम के बैठकखाने में जाकर देखा, श्रीरामकृष्ण निद्रा मे है। दो-एक भक्त पास ही विश्राम कर रहे है।

मास्टर एक पंखा लेकर धीरे धीरे हवा करने लगे, श्रीरामकृष्ण की नीद छूटी। ढीली-देह वे उठकर बैठ गये। मास्टर ने भूमिष्ट हो उन्हे प्रणाम किया और उनकी पदधूलि ली।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से, सस्नेह) – अच्छे हो? न जाने क्यो, मेरे गले की गिलटी फूल गयी है, पिछली रात से दर्द होता है। क्यों जी, यह कैसे अच्छी हो? (चिन्तित होकर) आम की खट्टी तरकारी बनी थी, और भी कई चीजे बनी थी, थोड़ी-थोड़ीसी सब चीजे मैंने खायी। (मास्टर से) तुम्हारी स्त्री कैसी है? उस दिन उसे देखा था, बहुत कमजोर है। कोई ठण्डी चीज थोड़ी-थोड़ी-सी दिया करो।

मास्टर - जी, कच्चा नारियल दिया करूँ?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, मिश्री का शरबत पिलाना अच्छा है।

मास्टर – मै रविवार से घर चला गया।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा किया। घर मे रहने पर तुम्हे सुविधा है, बाप भी है, तुम्हे संसार का काम अधिक न देखना होगा।

बातचीत करते हुए श्रीरामकृष्ण का मुँह सूखने लगा। तब वे बालक की तरह मास्टर से पूछने लगे – 'मेरा मुँह सूख रहा है, क्या सभी का मुँह सूख रहा है?'

मास्टर – योगीन्द्र बाबू, क्या आपका भी मुंह सूख रहा है?

योगीन्द्र – नही, इन्हे गरमी लगी होगी।

एँड़ेदा के योगीन्द्र श्रीरामकृष्ण के एक अन्तरंग त्यागी भक्त है। श्रीरामकृष्ण शिथिल भाव से बैठे हुए है। भक्तो मे कोई कोई हँस रहे है।

श्रीरामकृष्ण – मैं मानो दूध पिलाने के लिए बैठा हूँ। (सब हँसते हैं) अच्छा, मुँह सूख रहा है, मैं नासपाती या जमरूल* खाऊँ?

बाबूराम – हाँ वही ठीक है। मैं जमरूल ले आऊँ?

श्रीरामकृष्ण – धूप में अब न जा।

मास्टर पंखा झल रहे थे।

श्रीरामकृष्ण – तुम बड़ी देर से तो –

मास्टर – जी, मुझे कोई कष्ट नहीं हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण (सस्नेह) – नहीं हो रहा है।

मास्टर पास ही के एक स्कूल में पढ़ाते हैं। वे एक बजे पढ़ाने से जरा देर के लिए अवसर लेकर आये हैं। अब स्कूल में फिर जाने के लिए उठे। श्रीरामकृष्ण की पाद-वन्दना की।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – इस समय आओगे?

एक भक्त – स्कूल की छुट्टी अभी नहीं हुई। ये बीच में ही चले आये थे।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – जैसे गृहिणी, – सात-आठ बच्चे पैदा कर चुकी – संसार में रातदिन काम करना पड़ता है, – परन्तु उसी समय के भीतर एक-एकबार आकर पति की सेवा कर जाती है। (सब हँसते हैं)

(२)

चार बज जाने पर स्कूल की छुट्टी हो गयी। बलराम बाबू के बाहरवाले कमरे में मास्टर ने आकर देखा, श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक बैठे हैं। समाचार पाकर भक्त-मण्डली धीरे धीरे एकत्रित हो रही है। छोटे नरेन्द्र और राम आ गये हैं। नरेन्द्र आये हैं। मास्टर ने प्रणाम कर आसन ग्रहण किया। कमरे के भीतर से बलराम ने थाली में मोहनभोग भेज दिया है, इसलिए कि श्रीरामकृष्ण के गले में गिलटी पड़ गयी है, वे कड़ा भोजन न कर सकेंगे।

श्रीरामकृष्ण (मोहनभोग देखकर, नरेन्द्र से) – अरे माल आया है – माल-माल! खा खा! (सब हँसते हैं)

दिन ढलने लगा। श्रीरामकृष्ण गिरीश के घर जायेंगे। वहाँ आज उत्सव है। श्रीरामकृष्ण बलराम के दुमँजले के कमरे से उतर रहे हैं। साथ मास्टर हैं, पीछे और भी दो एक भक्त हैं। ड्योढ़ी के पास आकर उन्होंने एक उत्तर प्रदेश के भिक्षुक को गाते हुए देखा। रामनाम सुनकर श्रीरामकृष्ण खड़े हो गये, देखते ही देखते मन अन्तर्मुख होने लगा। इसी भाव में कुछ देर खड़े रहे। मास्टर से कहा, इसका स्वर बड़ा अच्छा है। एक भक्त ने भिक्षुक को चार पैसे दिये।

---

* एक प्रकार का फल

श्रीरामकृष्ण बोसपाड़ा की गली मे घुसे। हँसते हुए मास्टर से पूछा, "क्यो जी, क्या कहता है? – 'परमहंस-फौज' आ रही है? साले कहते क्या है!"

(३)

अवतार तथा सिद्ध-पुरुष में भेद

श्रीरामकृष्ण गिरीश के घर पधारे। गिरीश ने और भी बहुत से भक्तो को उस उत्सव मे बुलाया था। बहुत से लोग आये थे। श्रीरामकृष्ण जब आये तो सब लोगो ने उठकर उनका स्वागत किया। मुसकराते हुए उन्होने अपना आसन ग्रहण किया। भक्त लोग उनको घेरकर बैठ गये। गिरीश, महिमाचरण, राम, भवनाथ, बाबूराम, नरेन्द्र, योगेन, छोटे नरेन्द्र, चुनी, बलराम, मास्टर तथा अन्य भक्तगण श्रीरामकृष्ण के साथ बलराम के ही मकान से आये थे।

श्रीरामकृष्ण (महिम से) – मैंने गिरीश से तुम्हारे बारे मे बातचीत की थी, 'वह बहुत गहरा है, तुम सिर्फ घुटने तक हो।' अच्छा, देखे तो भला जो मैने कहा वह ठीक है या नही। मै चाहता हूँ कि तुम दोनो मे बहस हो। पर देखो, आपस मे समझौता न कर लेना! (सब हँसते है)

गिरीश और महिमाचरण मे वाद-विवाद होने लगा। थोड़ी देर मे राम ने कहा, "अब काफी हो गया। आइये, अब हम लोगो का कीर्तन हो।"

श्रीरामकृष्ण (राम से) – नही नही, इस वाद-विवाद मे बड़ा अर्थ है। ये लोग इंग्लिशमैन है। मै सुनना चाहता हूँ कि ये क्या कहते है।

महिमाचरण कहते थे कि साधना के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति श्रीकृष्ण हो सकता है। पर गिरीश कहते थे कि श्रीकृष्ण ईश्वर के अवतार थे और कोई मनुष्य चाहे कितनी भी साधना करे वह कभी अवतार नही हो सकता।

महिम – तुम समझे, मै क्या कहता हूँ? मै उदाहरण देकर तुम्हे समझाता हूँ। एक बेल का वृक्ष आम का वृक्ष बन सकता है, केवल यदि उसमे कुछ बाधाएँ हटा दी जायँ। और यह योगाभ्यास द्वारा सम्भव है।

गिरीश – तुम चाहे जो कुछ कहो, परन्तु ऐसा न तो योग द्वारा हो सकता है और न किसी और ही तरह से। केवल भगवान श्रीकृष्ण ही कृष्ण हो सकते है। यदि किसी व्यक्ति में किसी दूसरे व्यक्ति के समस्त भाव है, उदाहरणार्थ श्रीराधा के, तो वह व्यक्ति श्रीराधा के सिवाय और कोई हो ही नही सकता। वह स्वयं श्रीराधा ही है। इसी प्रकार यदि किसी व्यक्ति मे मैं श्रीकृष्ण के समस्त भाव देखूँ तो मैं यही निष्कर्ष निकालूँगा कि मै साक्षात् श्रीकृष्ण ही को देख रहा हूँ।

इसके बाद महिमाचरण बहस मे कुछ ढीले पड़ गये और अन्त मे उन्हे गिरीश का

ही मत मान लेना पड़ा।

महिम (गिरीश से) - हाँ, दोनो मत ठीक है। ईश्वर ने ज्ञान-मार्ग बनाया है और भक्ति-मार्ग भी। (श्रीरामकृष्ण की ओर संकेत करके) जैसा आप कहते है भिन्न भिन्न पन्थो से अन्त मे सब मनुष्य एक ही ध्येय को पहुँच जाते है।

श्रीरामकृष्ण (महिम के प्रति) – देखा तुमने? जो मैंने कहा था वही ठीक निकला।

महिम – हाँ महाराज! जैसा आप कहते है, दोनो मार्ग ठीक है।

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश की ओर संकेत करके) – तुमने देखा नही इसका विश्वास कितना गहरा है? वह अपना जलपान करना भी भूल गया। यदि तुम उसका मत स्वीकार न करते तो कुत्ते की तरह वह तुम्हारा गला फाड डालता। लेकिन खैर, हम लोगो को इस वाद-विवाद मे आनन्द आ गया। तुम लोगो ने भी एक दूसरे को जान लिया है और मुझे भी कई बाते मालूम हो गयी।

(४)

कीर्तनानन्द में

इतने में गवैये लोग आ पहुँचे और वे लोग कमरे के बीच में बैठ गये। प्रमुख गवैया श्रीरामकृष्ण की ओर देख रहा था कि वे उससे कीर्तन करने का संकेत करे। श्रीरामकृष्ण ने उसे आज्ञा दे दी।

राम (श्रीरामकृष्ण से) – कृपया उन्हे बता दीजिये कि वे क्या गावे।

श्रीरामकृष्ण – मै क्या बताऊँ? (कुछ सोचकर) अच्छा, उनसे कहो कि पूर्व-राग (श्रीराधाकृष्ण-मिलन) गावे।

गवैये ने गाना शुरू किया।

"मेरा गोरा (गौरांग), मेरा सर्वस्व जो मनुष्यो मे रत्न है, श्रीराधा का नाम उच्चारण करते ही रोने लगता है, जमीन पर लोटने लगता है - असीम प्रेम मे युक्त हो पुनःपुन उन्ही का नाम जपता है। उसकी प्रेमपूर्ण आँखो से आसुओ की धारा बह चलती है। वह जमीन पर फिर लोटने लगता है। और उनका नाम उच्चारण करते करते बेहोश हो जाता है। उसे रोमांच हो जाता है। उसके मुँह से केवल एक ही शब्द निकलता है। वसु कहते है, गौरांग इतने व्याकुल क्यो है?"

कीर्तन जारी रहा।

राधा, कृष्ण से यमुना के किनारे कदम्ब के नीचे मिल चुकी है। उनकी सखियाँ अब उनकी मानसिक और शारीरिक अवस्था का वर्णन करती है।

"प्रत्येक क्षण कितने ही बार वे कमरे के भीतर और बाहर जाती है, कैसी बेचैन है, लम्बी लम्बी साँसे भरती है और वही एकटक कदम्ब की ओर दृष्टि लगी है। शंका उत्पन्न

होती है – क्या वे अपने बडे-बूढो के डर से भयभीत है अथवा उन्हे कोई विकार हो गया है – कैसी व्याकुल है वे! अपने वस्त्रो का भी ध्यान नही है। उनके आभूषण इधर-उधर गिर गये है। शरीर कम्पायमान हो रहा है और खेद तो यह है कि अभी वे इतनी अल्प-वयस्क है। ये एक राजकुमारी रही है और किसी की पत्नी भी है, ऐसा क्या है जिसके लिए ये लालायित है। उनके मन मे क्या है – हमे कुछ समझ नही आता। हमे तो इतना ही प्रतीत होता है कि वे चन्द्रमा को पकडने के लिए हाथ बढा रही है। चण्डीदास कहते है, राधा, कृष्ण के जाल मे फॅस गयी है।''

कीर्तन जारी है।

राधा की सखियॉ उनसे कह रही है –

''ऐ सुकुमारि चन्द्रवदनि राधा, हमे यह तो बताओ तुम्हे कोनसी व्यथा है? तुम्हारा मन क्यो, और कहां घूम रहा है? तुम जमीन क्यो कुरेद रही हो? हमे बताओ तो सही तुम्हारा यह सुकुमार फूल-सा मुखड़ा क्यों कुम्हला गया है? उसकी कान्ति क्यों फीकी पड़ गयी है? उसमे सॉवलापन कैसे आ गया है? तुम्हारी लाल चुंदरी भी जमीन पर गिर पड़ी है। सखि राधा, देखो तो, तुम्हारी ऑखे रोते रोते लाल हो गयी है। तुम्हारा कमल-सा मुखडा कुम्हला गया है। बताओ तो सही, तुम्हे कोनसा दर्द है और देखो तो, हमारे हृदय भी तो दु:ख से विदीर्ण हुए जा रहे है।''

राधा अपनी सखियो से कहती है – 'मै कृष्ण का मुखडा देखने के लिए छटपटा रही हूँ।'

गवैये ने फिर गाया।

''कृष्ण की बॉसुरी सुनते ही राधा बावली हो गयी थी। व अपनी सखियो से कहती है, 'वह कौन जादूगर है जो उस कदम्बकुंज मे रहता है। उसकी बन्सी की ध्वनि एकाएक मेरे कान मे पडती है और हृद्-तन्त्री को झकार देती है, मेरी आत्मा को मानो भेद जाती है। मेरा धर्म न जाने कहॉ भूल जाता है और मै बावली हो जाती हू। इस व्यथित मन और तृषित ऑखो से मुझे सॉस भी तो लेने नही बनता। कैसा जादू है उसकी बसरी मे, जिसकी ध्वनि मेरी आत्मा तक को हिला देती है। वह मेरी दृष्टि के बाहर है उसमे मेरा हृदय बैठा जाता है। मै घर पर कैसे ठहर सकती हूँ? मेरी आत्मा उसके लिए छटपटा रही है, कितना दर्द होता है। उसकी एक झलक – बस एक झलक पाने के लिए मै छटपटा रही हूँ।' उद्धव कहते है, 'पर राधा, जानती हो, उसे एक बार देख लेने पर फिर तुम क्या जीवित रह सकती हो?' ''

गवैया गाता रहा।

'राधा का हृदय कृष्ण की एक झलक के लिए व्याकुल है। वे अपनी सखियो से कहती है, 'पहली बार मैने उनकी बसरी की ध्वनि कदम्ब-कुज मे आती हुई सुनी और

दूसरे दिन राजगवैये ने भी आकर उनका सन्देशा दिया – मेरी आत्मा तो मचल उठी। दूसरे दिन, ऐ मेरी प्यारी सखि, तुमने उनका दिव्य नाम हमारे सामने लिया। आह! कैसा मधुर, कैसा मीठा, कैसा सरस है वह पुण्यनाम – कृष्ण। कितने ही विद्वान् लोगों ने भी मुझसे उनके अगणित गुणों का वर्णन किया, पर हाय, मै क्या करूँ! मैं एक सीधी-सादी बालिका हूँ, और फिर घर में बड़े-बूढ़े भी तो हैं। मैं क्या करूँ, उन मेरे प्राणसर्वस्व के लिए मेरा प्रेम बढ़ता जा रहा है। उनके बिना मैं एक क्षण भी कैसे रह सकती हूँ! लेकिन इतने समय के बाद क्या मुझे अब यही दिखेगा कि उनको बिना देखे ही मुझे मर जाना होगा – ये दुखिया अँखियाँ अधखुली रह जायेंगी, ऐ सखि, कोई ऐसा उपाय तो बताओ जिससे मैं एक बार तो उन्हें देख लूँ। एक ही बार सही।' "

श्रीरामकृष्ण ने जैसे ही यह वाक्य सुना – "आह! कैसा मधुर, कैसा मीठा, कैसा सरस है वह पुण्यनाम – कृष्ण" वे अधिक बैठे नहीं रह सके। वे खड़े हो गये और बाह्यशून्य हो उन्हें गहरी समाधि लग गयी। छोटे नरेन्द्र उनकी दाहिनी ओर खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण जब किंचित् प्रकृतिस्थ हुए तो उन्होंने बड़े मधुर स्वर में श्रीकृष्ण का नाम उच्चारण किया। उनकी आँखों से प्रेमाश्रु बहने लगे और वे फिर बैठ गये।

गवैये का गाना जारी रहा। राधा की एक सखी विशाखा दौड़ कर जाती है और श्रीकृष्ण का एक चित्र ले आती है और उसे राधा की आँखों के सामने कर देती है। राधा कहती है, 'मैं उन्हीं का चित्र देख रही हूँ जिन्हें मैंने जमुना के किनारे देखा था। तभी से मेरी यह दशा हो गयी है।' फिर वे कह रही हैं –

"मैं उन्ही का चित्र देख रही हूँ जिन्हें मैंने कालिन्दी के तट पर देखा था। जिनका नाम विशाखा ने लिया है वे वही हैं जिनका यह चित्र है। जिन्होंने बाँसुरी बजायी थी, वे ही मेरे प्राणों के प्यारे है। राजगवैये उनका गुणगान मुझसे कर चुके है। उन्होंने मेरे हृदय पर जादू कर दिया है। यह और कोई नहीं, ... वे .. ही ... हैं।" यह कहते ही राधा बेहोश हो गयी। थोड़ी देर बाद जब उनकी सखियाँ उन्हें होश में लायी तो उनके मुँह से यही निकला, 'सखियों, मुझे उन्हीं को दिखा दो जिनकी झलक मैंने अपनी आत्मा में देखी है।' सखियों ने वादा किया, 'अच्छा, जरूर दिखा देंगी।'

अब श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र तथा अन्य भक्तों के साथ बड़े ऊँचे स्वर मे कीर्तन गान करने लगे। उन्होंने गाया –

"देखो, वे दोनों भाई आ गये हैं जो हरि का नाम लेते लेते रोने लगते हैं।"

उन्होंने फिर कहा –

"और देखो, श्रीगौरांग के प्रेम के कारण समस्त नदिया (श्री गौरांग का निवासस्थान) झूम रहा है।"

इतना कहकर फिर श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। समाधि उतरने पर वे अपने

आसन पर बैठ गये। 'एम'. की ओर देखकर उन्होने कहा, 'मुझे स्मरण नही कि मै पहले किस ओर मुँह करके बैठा था।' फिर वे भक्तो से बातचीत करने लगे।

(५)

श्रीरामकृष्ण तथा नरेन्द्र। हाजरा की कथा

नरेन्द्र – (श्रीरामकृष्ण से) – हाजरा अब भला आदमी हो गया है।

श्रीरामकृष्ण – तुम नही जानते कि लोग ऐसे भी होते है जिनके मुँह मे तो रामनाम रहता है पर बगल मे छुरी होती है।

नरेन्द्र – महाराज, इस बात मे मै आपसे सहमत नही हूँ। मैने स्वयं उससे उन बातो की जॉच की जिनके बारे मे लोग शिकायत करते है, पर उसने साफ इन्कार किया।

श्रीरामकृष्ण – वह भक्ति मे जरूर दृढ़ है। थोडा-बहुत जप भी करता है, पर कभी कभी उसका व्यवहार विचित्र होता है। गाड़ीवाले का भाड़ा नही देता।

नरेन्द्र – महाराज, नही, ऐसी बात नही है। वह कहता था, उसने दे दिया है।

श्रीरामकृष्ण – उसके पास पैसा कहॉ से आया?

नरेन्द्र – रामलाल अथवा और किसी ने दिया होगा।

श्रीरामकृष्ण – क्या तुमने उससे सब बाते विस्तारपूर्वक पूछी थी? एक बार मैंने जगदम्बा से प्रार्थना की थी, 'मॉ! यदि हाजरा ढोगी है, तो बड़ी कृपा होगी यदि तुम यहॉ से उसे हटा दो।' उसके बाद मैने हाजरा से कह भी दिया था कि मैंने तुम्हारे बारे मे मॉ से ऐसी प्रार्थना की है। थोड़े दिनो बाद वह फिर आया और मुझसे कहा, 'देखिये, मै तो अब भी यहॉ बना हूँ।' (श्रीरामकृष्ण तथा अन्य सब हॅसे) पर शीघ्र ही कुछ दिनो बाद उसने यहॉ आना बन्द कर दिया।

"हाजरा की बेचारी मॉ ने मेरे पास रामलाल द्वारा कहलाया कि मै हाजरा से कह दूँ कि वह कभी कभी जाकर अपनी बूढ़ी मॉ को देख आया करे। वह बेचारी करीब करीब अन्धी ही थी और रोती रहती थी। मैने हाजरा को तरह तरह से समझाया कि वह जाकर देख आया करे। मैने उससे कहा,. 'देखो, तुम्हारी मॉ वृद्धा है, कम से कम उसे एक बार जाकर तो देख आओ।' पर मेरे कहने पर भी नही गया। अन्त मे वह बेचारी बुढ़िया रोते रोते मर गयी।"

नरेन्द्र – पर इस बार वह घर जायेगा।

श्रीरामकृष्ण – हॉ हॉ, मुझे मालूम है वह घर जायेगा। वह बड़ा दुष्ट है, धूर्त है, तुम उसे नही जानते। गोपाल कहता था कि हाजरा सीती मे कुछ दिन रहा था। लोग उसके लिए घी लाते थे, चावल लाते थे और भी तरह तरह की खाद्य-सामग्री उसे लाकर देते थे, पर उसकी उद्दण्डता तो देखो कि वह उन लोगो से कह देता था, 'मै ऐसा मोटा चावल नही

खा सकता। मुझे ऐसा खराब घी नही चाहिये।' भाटपारा का ईशान भी उसके साथ गया था। उसने ईशान से कहा, 'शौच के लिए पानी ले आओ।' इससे वहाँ के अन्य ब्राह्मण उससे बहुत नाराज हो गये थे।

नरेन्द्र – मैंने उससे यह बात पूछी थी। वह कहता था, ईशान बाबू मेरे लिए खुद पानी लाये थे। और इतना ही नही, वह कहता था कि भाटपारा के बहुत से ब्राह्मण लोग भी उसे मान देते है और श्रद्धा करते हैं।

श्रीरामकृष्ण (मुसकराते हुए) - यह सब उसके जप और तपस्या का फल था। जानते हो, मनुष्य की शारीरिक बनावट का उसके चरित्र पर अपना बहुत प्रभाव डालती है। नाटा कद और शरीर मे इधर उधर गड्ढे या कूबड़ अच्छे लक्षण नही है। जिन लोगों के ऐसे लक्षण होते है उन्हे आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने को बहुत समय लगता है।

भवनाथ – खैर महाराज, जाने दीजिये इन बातो को।

श्रीरामकृष्ण – नही, मुझे गलत न समझना। (नरेन्द्र से) तुम कहते हो कि तुम्हे लोगो की पहचान है, इसीलिए यह सब तुम्हे बता रहा हू। जानते हो, हाजरा-ऐसे लोगो को मै किस दृष्टि से देखता हू?

"जिस प्रकार ईश्वर सत्पुरुषों के रूप में अवतार लेता है उसी प्रकार वह धोखेबाज और दुष्टों के रूप मे भी अवतीर्ण होता है। (महिमाचरण से) क्यो, तुम्हारी क्या राय है? वैसे तो सभी ईश्वर है।

महिम – हाँ महाराज, सभी ईश्वर है।

(८)

गोपीप्रेम

गिरीश (श्रीरामकृष्ण से) – महाराज एकांगी प्रेम क्या चीज है?

श्रीरामकृष्ण - इसका अर्थ है केवल एक ओर से प्रेम। उदाहरणार्थ, पानी बतक को ढूढने नहीं जाता वरन् बतक ही पानी को चाहता है। प्रेम और भी कई प्रकार के होते है, जैसे 'साधारण' 'समंजस' और 'समर्थ'। पहला जो 'साधारण' प्रेम है उसमे प्रेमी केवल अपना ही सुख देखता है। वह इस बात की चिन्ता नही करता कि दूसरे व्यक्ति को भी उससे सुख है अथवा नही। इस प्रकार का प्रेम चन्द्रावली का श्रीकृष्ण के प्रति था। दूसरा प्रेम जो 'सामंजस्य' रूप होता है उसमे दोनो एक दूसरे के सुख के इच्छुक होते है। यह एक ऊँचे दर्जे का प्रेम है, परन्तु तीसरा प्रेम सबसे उच्च है। इस 'समर्थ' प्रेम मे प्रेमी अपनी प्रेमिका से कहता है, 'तुम सुखी रहो, मुझे चाहे कुछ भी हो।' राधा मे यह प्रेम विद्यमान था। श्रीकृष्ण के सुख मे ही उन्हें सुख था। गोपियो ने भी यह उच्चावस्था प्राप्त की थी।

"जानते हो गोपियाँ कौन थी? श्रीरामचन्द्रजी उस घने जंगल मे घूमते थे जिसमे

सात हजार ऋषि रहते थे। वे सब श्रीरामजी को देखने के लिए बड़े उत्सुक थे। उन्होने उन सब पर एक दिव्य दृष्टि डाल दी। कुछ पुराणो का कथन है कि बाद मे वे ही सब ऋषि वृन्दावन मे गोपियो के रूप मे अवतीर्ण हुए।''

एक भक्त – महाराज, अन्तरंग किसे कहते है?

श्रीरामकृष्ण – मै एक उदाहरण देकर समझाता हूँ। एक सभामण्डप मे भीतर भी खम्भे होते है और बाहर भी। अन्तरंग भीतरवाले खम्भो के सदृश है। जो सदैव गुरु के समीप रहते है वे अन्तरंग कहलाते है।

(महिमाचरण से) ''ज्ञानी अपने लिए न तो ईश्वर का रूप चाहता है, न अवतार ही। श्रीरामचन्द्रजी जब वन मे घूम रहे थे तो उन्होने कुछ ऋषियो को देखा। ऋषियो ने बड़े स्नेह मे उनका अपने आश्रम मे स्वागत किया और कहा, 'प्रभो, आज तुम्हारे दर्शन प्राप्त करके हमारा जीवन कृतकृत्य हो गया, पर हम जानते हैं कि तुम दशरथ के पुत्र हो। भरद्वाज तथा अन्य ऋषि तुमको ईश्वरी अवतार कहते है, पर हमारा वह दृष्टिकोण नही है। हम तो निर्गुण, निराकार सच्चिदानन्द का ध्यान करते है।' श्रीराम यह सुनकर प्रसन्न हुए और मुस्करा दिये।

''ओह! मुझे भी कैसी कैसी मानसिक परिस्थितियो मे से होकर गुजरना पड़ा। मेरा मन कभी कभी निराकार परमेश्वर मे लीन हो जाता था। कितने ही दिन मैने इस अवस्था मे बिताये। मैने भक्ति और भक्त का भी त्याग कर दिया था। मै जड़वत् हो गया था। मुझे अपने सिर तक का ध्यान नही था। मै मरणासन्न हो गया था। तब तो मैने रामलाल की चाची* को अपने पास रखने का सोचा था। मैने अपने कमरे से सभी चित्रो को हटाने के लिए कह दिया। जब मुझे बाह्य ज्ञान प्राप्त हुआ और जब मेरा मन उस अवस्था से उतरकर साधारण अवस्था पर आ गया तो मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मानो एक डूबते हुए मनुष्य के समान मेरा दम घुट रहा हो। अन्त मे मैने अपने मन मे कहा 'मै तो लोगो का अपने पास रहना भी नही सह सकता हूँ, फिर मै जीवित कैसे रहूँगा?' तब मेरा मन एक बार फिर भक्ति और भक्त की ओर झुक गया। मै लोगो से यही लगातार पूछता था कि मुझे क्या हो गया है। भोलानाथ† ने मुझसे कहा, 'आपकी इस मानसिक स्थिति का वर्णन महाभारत मे है।' समाधि-अवस्था से उतरने के बाद फिर भला मनुष्य कैसे रह सकता है? निश्चय ही उसे ईश्वर-भक्ति की आवश्यकता होती है तथा ईश्वर-भक्तो का संग। नही तो वह अपना मन किस बात मे लगायेगा?''

महिमाचरण (श्रीरामकृष्ण से) – महाराज, क्या कोई व्यक्ति समाधि की अवस्था से फिर साधारण सांसारिक अवस्था पर आ सकता है?

* श्रीरामकृष्ण की लीलासहधर्मिणी। † दक्षिणेश्वर-मन्दिर के एक मुन्शी।

श्रीरामकृष्ण (महिम से, धीरे से) – मैं तुम्हें एकान्त में समझाऊँगा। केवल तुम्हीं इस योग्य हो कि तुमसे कहा जाय।

"कुँवर सिंह ने भी मुझसे यही प्रश्न किया था। तुम जानते हो कि जीव और ईश्वर में बड़ा अन्तर है। उपासना तथा तपस्या द्वारा जीव अधिक से अधिक समाधि-अवस्था प्राप्त कर सकता है। पर फिर वह उस अवस्था से वापस नहीं आ सकता। परन्तु जो ईश्वर का अवतार होता है वह समाधि-अवस्था से नीचे उतर भी सकता है। उदाहरणार्थ, जीव उसी प्रकार का है जैसे किसी राजा के यहाँ एक अफसर। वह राजा के सातमंजिला महल मे अधिक से अधिक बाहर के दरबार तक जा सकता है, परन्तु राजा के लड़के की पहुँच सातों मंजिलों तक होती है, और वह बाहर भी जा सकता है। यह बात हरएक आदमी कहता है कि समाधि की अवस्था से फिर कोई लौट नही सकता, अगर ऐसी बात है तो शंकर तथा रामानुज जैसे महात्माओं के बारे में तुम क्या कहोगे? उन्होंने 'विद्या का मैं' रखा था।"

महिम – हाँ, यह बात सचमुच ठीक है; नहीं तो वे इतने बड़े ग्रन्थ कैसे लिख सकते थे?

श्रीरामकृष्ण – और देखो, प्रह्लाद, नारद तथा हनुमान जैसे ऋषियों के भी उदाहरण है। उन्होंने भी समाधि प्राप्ति कर लेने के बाद भक्ति रखी थी।

महिम – हाँ महाराज, यह बात ठीक है।

श्रीरामकृष्ण – बहुतसे लोग ऐसे होते हैं कि वे दार्शनिक वादविवाद में ही पड़े रहते हैं और अपने को बहुत बड़ा समझते हैं। शायद वे थोड़ा-बहुत वेदान्त भी जान लेते हैं, परन्तु यदि किसी मनुष्य में सच्चा ज्ञान है तो उसमें अहंकार नहीं हो सकता, अर्थात् समाधि-अवस्था में यदि मनुष्य ईश्वर से एकरूप हो जाय तो उसमें अहंकार नहीं रह जाता। समाधि के बिना सच्चा ज्ञान असम्भव है। समाधि में मनुष्य ईश्वर से एक हो जाता है। फिर उसमें अहंकार नहीं रह जाता।

"जानते हो यह किस प्रकार से होता है? देखो, जैसे दोपहर को सूरज बिलकुल ठीक सिर पर होता है। उस समय यदि तुम अपने चारों ओर देखो तो तुम्हें अपनी परछाई नहीं दिखायी देगी। इसी प्रकार तुममें ज्ञान अथवा समाधि प्राप्त कर लेने के बाद अहंकार की परछाई नहीं रह जाती।

"परन्तु यदि तुम किसी में सत्यज्ञान-प्राप्ति के बाद भी अहंकार का भास देखो तो समझ लो कि या तो यह 'विद्या का मैं' है अथवा 'भक्ति का मैं' अथवा 'दास मैं'; वह 'अविद्या का मैं' नहीं होता।

"फिर यह भी समझ लो कि ज्ञान और भक्ति दोनों समानान्तर मार्ग हैं। इनमें से तुम किसी का भी अनुसरण करो, अन्त में पहुँचोगे ईश्वर को ही। ज्ञानी ईश्वर को एक दृष्टि

से देखता है और भक्त दूसरी से। ज्ञानी का ईश्वर तेजोमय होता है और भक्त का रसमय।''

भवनाथ श्रीरामकृष्ण के पास ही बैठे ये सब बाते सुन रहे थे।

भवनाथ (श्रीरामकृष्ण से) – महाराज, क्या मै एक प्रश्न पूछूँ? 'चण्डी' को मै ठीक से नही समझ सका। उसमे ऐसा लिखा है कि जगदम्बा सब जीवो का संहार करती है – इसका क्या अर्थ है?

श्रीरामकृष्ण – यह सब उनकी लीला है। यह विचार मेरे मन मे भी आया करता था, पर बाद में मै समझ गया कि यह सब माया है। उत्पत्ति और संहार ईश्वर की माया है।

गिरीश श्रीरामकृष्ण तथा अन्य भक्तो को ऊपर छत पर ले गये जहाँ भोजन परोसा गया। आकाश मे अच्छी चाँदनी छिटकी हुई थी। सब भक्त अपने अपने स्थान पर बैठ गये। उन सबके सामने श्रीरामकृष्ण एक आसन पर बैठे। सब लोग बड़े प्रसन्नचित्त थे। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। वे उनके सामने की पंक्ति में बैठे। बीच-बीच मे श्रीरामकृष्ण उनसे पूछने जाते थे, 'कहो क्या हाल है – आनन्द से होने दो।' श्रीरामकृष्ण भोजन कर ही रहे थे कि बीच मे से उठकर वे नरेन्द्र के पास आये और अपनी थाली मे से कुछ तरबूज का शरबत और दही लेकर उनको दिया और बड़े मधुर शब्दो मे उनसे कहा, 'लो, यह खा लो।' इसके बाद वे फिर अपने आसन पर चले गये।

परिच्छेद ११४

नरेन्द्र आदि भक्तों को उपदेश

(१)

नरेन्द्र तथा हाजरा महाशय

श्रीरामकृष्ण बलराम के दुमँजले के बैठकखाने मे भक्तो के बीच मे प्रसन्नतापूर्वक बैठे हुए उनसे वार्तालाप कर रहे है। नरेन्द्र, मास्टर, भवनाथ, पूर्ण, पल्टू, छोटे नरेन्द्र, गिरीश, रामबाबू, द्विज, विनोद आदि बहुत से भक्त चारो ओर से घेरकर बैठे हुए है।

आज शनिवार है। दिन के तीन बजे होगे। वैशाख की कृष्णा दशमी है। ९ मई, १८८५।

बलराम घर मे नही है। शरीर अस्वस्थ होने के कारण वायुपरिवर्तन के लिए मुँगेर गये हुए है। उनकी बडी कन्या ने श्रीरामकृष्ण और भक्तो को बुलाकर महोत्सव किया है। भोजन के पश्चात् श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से बार बार पूछ रहे है, 'बताओ तो सही, क्या मै उदार हूं?' भवनाथ ने हँसकर कहा, 'ये और क्या कहेगे, चुप रहने के सिवा?

उत्तरप्रदेश का एक भिक्षुक गाने के लिए आया। भक्तो ने दो गाने सुने। गाने नरेन्द्र को अच्छे लगे। उन्होने गानेवाले से कहा, 'और गाओ।'

श्रीरामकृष्ण – बस बस, अब रहने दो, पैसे कहाँ है? – (नरेन्द्र से) – कह तो दिया तूने।

भक्त (हँसकर) – महाराज, आपको इसने अमीर समझा है। आप तकिये के सहारे बैठे हुए है न – (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – यह भी तो सोच सकता है कि बीमार है।

हाजरा के अहंकार की बात होने लगी। किसी कारण से दक्षिणेश्वर के कालीमन्दीर से हाजरा को चला जाना पड़ा।

नरेन्द्र – हाजरा अब मानता है कि उसे अहंकार हुआ था!

श्रीरामकृष्ण – इस बात पर विश्वास न करना। दक्षिणेश्वर मे फिर से आने के लिए उस तरह की बाते कह रहा होगा। (भक्तो से) नरेन्द्र केवल यही कहता है कि हाजरा तो

बड़ा अच्छा है।

नरेन्द्र – मैं अब भी कहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – क्या इतनी बातें सुनने पर भी?

नरेन्द्र – दोष कुछ ही है, परन्तु गुण उसमे बहुतसे हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, निष्ठा है। उसने मुझसे कहा – अभी तो मैं तुम्हें नहीं सुहाता, परन्तु पीछे से फिर मुझे खोजना होगा। श्रीरामपुर से अद्वैतवंश का एक गोस्वामी आया हुआ था। दक्षिणेश्वर में दो-एक रात रहने की उसकी इच्छा थी। मैने उसकी खातिर की और उससे रहने के लिए कहा। हाजरा ने कहा, इसे खजांची के पास भेज दो। उसके इस तरह कहने का मतलब यह था कि कही वह गोस्वामी कुछ माँग बैठे तो हाजरा के हिस्से मे ही न देना हो! मैंने कहा – 'क्यों रे साला, उसे गोस्वामी समझकर मैं तो लम्बा दण्डवत करता हूँ और तू संसार मे रहकर कामिनी और कांचन लेकर अब कुछ जप करके इतना अहंकार कर रहा है? – तुझे लज्जा नही आती?'

"सतोगुण से ईश्वर मिलते है, रजोगुण और तमोगुण ईश्वर से अलग कर देते हैं। सतोगुण की उपमा सफेद रंग से दी गयी है, रजोगुण की लाल और तमोगुण की काले से। मैंने एक दिन हाजरा से पूछा – 'तुम बताओ, किसमें कितना सतोगुण हुआ है?' उसने कहा, 'नरेन्द्र को सोलह आना और मुझे एक रुपया दो आना।' मैंने अपने लिए पूछा, 'मुझमे कितना है?' उसने कहा, 'तुम्हारी तो ललाई अभी हट रही है, – तुम्हें बारह आना है।' (सब हँसे)

"दक्षिणेश्वर में बैठकर हाजरा जप करता था और उसी के भीतर से दलाली की भी कोशिश करता था। घर में कुछ हजार रुपया कर्ज था – उस कर्ज के अदा करने की फिक्र में था। भोजन पकानेवाले ब्राह्मणों के सम्बन्ध में उसने कहा था, 'इस तरह के आदमियों से क्या हम कभी बातचीत करते है?'

"बात यह है कि थोड़ी भी कामना के रहते ईश्वर को कोई पा नहीं सकता। धर्म की गति सूक्ष्म है। सुई के छेद में सूत डाल रहे हो, परन्तु अगर जरा भी सूत उकसा हुआ हो तो छेद के भीतर कदापि नही जा सकता।

"तीस साल तक लोग माला फेरते रहते है, फिर भी कुछ नहीं होता – क्यों?

"विषैला घाव होने पर कण्डे की आग से सेंका जाता है। साधारण दवा से आराम नहीं होता।

"कामना के रहते हुए चाहे जितनी साधना करो, सिद्धि नहीं मिल सकती। परन्तु एक बात है, ईश्वर की कृपा होने पर, उनकी दया होने पर क्षण भर में सिद्धि मिलती है; जैसे हजार साल का अन्धेरा कमरा – एकाएक अगर कोई दिया ले जाता है तो क्षण भर में प्रकाशित हो जाता है।

"जैसे गरीब का लड़का बड़े आदमी की दृष्टि में पड़ गया हो; उसके साथ उसने अपनी लड़की का विवाह कर दिया। एक साथ ही गाड़ी-घोड़े, दास-दासी, माल-असबाब, घर-द्वार, सब कुछ हो गया।"

एक भक्त – महाराज, कृपा किस तरह होती है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर बालस्वभाव हैं, जैसे कोई लड़का अपनी धोती के पल्ले में रत्न भरे बैठा हो। कितने ही आदमी रास्ते से चले जा रहे हैं। उससे बहुतेरे रत्न माँग रहे हैं, परन्तु वह कपड़े मे हाथ डाले हुए कहता है, 'नहीं, मैं न दूँगा।' पर किसी एक ने चाहा ही नही, अपने रास्ते चला जा रहा है। उसके पीछे दौड़कर उसने उसकी स्वयं खुशामद करके उसे रत्न दे दिये।

"त्याग के बिना ईश्वर नहीं मिलते।

"मेरी बात कौन लेता है? मैं आदमी खोज रहा हूँ, – अपने भाव का आदमी। जिसे अच्छा भक्त देखता हूँ, उसके लिए सोचता हूँ कि वह शायद मेरा भाव ले सके। फिर देखता हूँ, वह एक दूसरे ढँग का हो जाता है।

"एक भूत अपना साथी खोज रहा था। शनिवार या मंगल को अपघात मृत्यु होने पर भूत होता है। भूत जब कभी देखता था कि शनिवार या मंगल को उसी तरह किसी की मृत्यु होनेवाली है तब उसके पास दौड़ जाता था। सोचता था, अब मुझे एक साथी मिला। परन्तु वह उसके पास गया नहीं कि वह आदमी उठकर बैठ जाता था। छत से गिरकर कोई बेहोश हुआ भी किसी तरह होश में आ जाता था।

"मथुरबाबू को भावावेश हुआ। वे सदा मतवाले की तरह रहते थे – कोई काम न कर सकते थे। तब लोग कहने लगे, 'इस तरह रहोगे तो जायदाद कौन सम्हालेगा? छोटे भट्टाचार्य (श्रीरामकृष्ण) ने ही कोई यन्त्र-मन्त्र किया होगा।'

"नरेन्द्र जब पहले-पहल आया था, तब इसकी छाती पर हाथ रखते ही यह बेहोश हो गया। फिर होश में आकर रोते हुए कहने लगा – 'अजी, मुझे तुमने ऐसा क्यों कर दिया? – मेरे बाबूजी हैं – मेरी माँ जो हैं।' 'मेरा-मेरा' करना, वह अज्ञान से होता है।

"गुरु ने शिष्य से कहा, 'संसार मिथ्या है, तू मेरे साथ निकल चल।' शिष्य ने कहा, 'महाराज, ये सब मुझे इतना चाहते हैं – मेरे बाबूजी, मेरी माँ, मेरी स्त्री – इन्हें छोड़कर मै कैसे जाऊँ? गुरु ने कहा, 'तू मेरा-मेरा करता तो है, और कहता है कि ये सब प्यार करते हैं, परन्तु यह सब भूल है। मैं तुझे एक उपाय बतलाता हूँ, उसे करके देख, तो तू समझ जायेगा कि ये लोग तुझे सचमुच प्यार करते हैं या इसमें दिखावट है।' यह कहकर एक दवा उन्होंने उसके हाथ में दी और कहा, 'इसे खा लेना, खाने पर तू मुर्दे की तरह हो जायेगा। तेरा ज्ञान नष्ट न होगा, तू सब देख-सुन सकेगा। फिर मेरे आने पर क्रमशः तेरी पहले की अवस्था हो जायेगी।'

"शिष्य ने ठीक वैसा ही किया। घर में सब रोने लगे। उसकी माता, स्त्री, सब के सब उल्टी पछाड़ें खाने लगी। इसी समय एक ब्राह्मण ने आकर पूछा, 'यहाँ क्या हुआ है?' उन लोगों ने कहा, 'महाराज, इस लड़के को राम ले गये।' ब्राह्मण ने उस मुर्दे का हाथ देखकर कहा, 'यह क्या – यह तो मरा नही है। मैं एक दवा देता हूँ, उसके खाने से यह अभी चंगा हो जायेगा।' उस समय डूबते हुए को जैसे सहारा मिल गया, – घरवाले बड़े प्रसन्न हुए। तब ब्राह्मण ने कहा, 'परन्तु एक बात है, पहले एक दूसरे आदमी को दवा खानी पड़ेगी, फिर इसे। परन्तु पहले जो दवा खायेगे, उनकी मृत्यु अनिवार्य है। इसके तो अपने आदमी बहुत है, कोई न कोई दवा अवश्य ही खा लेगा। इसकी माँ और इसकी स्त्री बहुत रो रही हैं, ये लोग तो अनायास ही दवा खा लेगी।'

"तब वे सब की सब रोना-धोना बन्द करके चुप हो रही। माता ने कहा, 'ऐं, यह इतना बड़ा परिवार, मै अगर मर गयी तो इन सब की देख-रेख के लिए कौन रहेगा?' – यह कहकर वे सोचने-विचारने लगी। उसकी स्त्री कुछ देर पहले रो रही थी – 'अरी मेरी दीदी, मुझे यह क्या हो गया – री –' उसने कहा, 'अरे उन्हें जो होना था, सो तो हो चुका, मेरे दो-तीन नाबालिग लड़के-बच्चे है, मै अगर मर गयी तो फिर इन्हें कौन देखेगा?'

"शिष्य सब देख-सुन रहा था। वह उठकर खड़ा हो गया और कहा, 'गुरुजी, चलिये, आपके साथ चलता हूँ।' (सब हँसते हैं)

"एक शिष्य और था। उसने अपने गुरु से कहा था, 'मेरी स्त्री मेरी बड़ी सेवा करती है, गुरुजी, मै उसी के लिए संसार नही छोड़ सकता।' वह शिष्य हठयोग करता था। गुरु ने उसे भी एक उपाय बतलाया। एकाएक उसके घर में खूब रोना-धोना मच गया। पड़ोसवालो ने आकर देखा, घर में आसन लगाकर हटयोगी बैठा हुआ था, - देह के पुर्जे-पुर्जे टेढ़े हो गये थे। सब ने समझा, उसके प्राण निकल गये हैं। स्त्री पछाडें खा रही थी – 'अरे, मेरे भाग्य में क्या यही लिखा था रे – हम अनाथों को छोड़कर तुम कहाँ चले गये – राम – अरी मेरी दीदी री – ऐसा होगा यह मैं नही जानती थी री –' इधर उसके आत्मीय और मित्र खाट ले आये। उसे घर से निकालने लगे।

"इसी समय एक अड़चन हुई। सब देह टेढ़ी हो जाने के कारण, लाश कोठरी के द्वार से निकलती न थी। तब एक पड़ोसी दौड़कर कटारी लेकर चौखट काटने लगा। स्त्री अधीर होकर रो रही थी। वह काटने की आवाज सुनकर दौड़ी हुई आयी। रोते हुए उसने पूछा – 'यह क्या करते हो – दा – दा –' उन लोगों ने कहा, 'ये नहीं निकलते इसलिए चौखट काट रहा हूँ।' तब स्त्री ने कहा – 'अरे मेरे दादा – ऐसा काम न करो, मैं तो राँड़ अब हो ही गयी हूँ! मेरे घर का सम्हालनेवाला तो अब कोई रहा ही नही, कुछ नाबालिग बच्चे है, उन्हें पालकर आदमी बनाना है! यह दरवाजा चला जायेगा तो दूसरा होने का है

ही नही, उन्हे जो होना था, सो तो हो ही चुका – उन्ही के हाथ-पैर काट दो।' तब हठयोगी उठकर खड़ा हो गया। तब दवा का असर जाता रहा था। खड़ा होकर उसने कहा – 'क्यो री साली, हाथ-पैर कटाती है?' यह कहकर घर छोड़ गुरु के पास चला गया। (सब हँसते है)

"बड़ा ढोग करके स्त्रियाँ रोती है। रोने की खबर मिलती है, तो पहले नथ खोल डालती है, फिर और और गहने खोलकर सन्दूक के अन्दर ताला लगाकर सुरक्षित रख देती है। फिर पछाड खा-खाकर रोती है – 'अरी दीदी – मेरा यह क्या हुआ री –' "

(२)

अवतार का स्वरूप

नरेन्द्र –Proof(प्रमाण) के बिना कैसे विश्वास करूँ कि ईश्वर आदमी होकर आते है?

गिरीश – विश्वास ही Sufficient Proof (यथेष्ट प्रमाण) है। यह वस्तु यहाँ है, इसका क्या प्रमाण है? विश्वास ही इसका प्रमाण है।

एक भक्त - External World (बहिर्जगत्) बाहर है, इस बात को क्या कोई Philosopher (दार्शनिक) Prove (प्रमाणित) कर सका है? केवल कहा है – Irresistible Belief (अनिवार्य विश्वास)।

गिरीश (नरेन्द्र से) – ईश्वर सामने आने पर भी तो तुम विश्वास नही करोगे। यदि ईश्वर कहेगे, 'मै ईश्वर हूँ, मनुष्य के शरीर मे आया हुआ हूँ', तुम शायद कहोगे कि वे झूठ बोल रहे है – धोखा दे रहे है।

अब यह बात चली कि देवता अमर है।

नरेन्द्र – इसका प्रमाण क्या है?

गिरीश – पर तुम्हारे सामने आने पर भी तो विश्वास नही करोगे।

नरेन्द्र – अमर, अतीतकाल मे थे इसका प्रमाण भी तो चाहिए। मणि पल्टू से कुछ कह रहे हैं।

पल्टू (नरेन्द्र से, हँसकर) – अमर के लिए अनादि की क्या जरूरत है? होना है तो अनन्त होना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – नरेन्द्र वकील का लड़का है, पल्टू डिप्टी का लड़का है। (सब हँसते है)

सब कुछ देर चुप हो रहे।

योगीन्द्र (गिरीश आदि भक्तो से, सहास्य) – नरेन्द्र की बातो मे ये (श्रीरामकृष्ण) अब नही आते।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – मैने एक दिन कहा था, चातक आकाश के पानी के सिवा और पानी नही पीता। नरेन्द्र ने कहा, 'चातक यह पानी भी पीता है।' तब मैने माँ से कहा, 'माँ, ये सब बाते क्या झूठ हो गयी?' मुझे बड़ी चिन्ता थी। एक दिन नरेन्द्र आया। कमरे के भीतर कुछ चिडियाँ उड़ रही थी। देखकर उसने कहा, 'यही है – यही है!' मैने पूछा, 'क्या?' उसने कहा, 'यही चातक है।' मैने देखा, कुछ चमगीदड़ उड़ रहे थे! तभी से मै उसकी बातों को ग्रहण नही करता। (सब हँसते है)

"यदु मल्लिक के बगीचे मे नरेन्द्र ने कहा, 'तुम ईश्वर के रूप जितने देखते हो, सब तुम्हारे मन का भ्रम है।' तब आश्चर्य मे आकर मैने उससे कहा, 'क्यो रे, वे बातचीत जो करते है।' नरेन्द्र ने कहा, 'मनुष्य ऐसा ही सोचता है।' तब माँ के पास आकर मै रोने लगा। कहा, 'माँ, यह क्या हुआ? – क्या सब झूठ है? नरेन्द्र ऐसी बाते कहता है।' तब माँ ने दिखलाया, चैतन्य – अखण्ड चैतन्य – चैतन्यमय रूप। और उन्होने कहा, 'अगर ये बाते झूठ होंगी, तो ये सब मिलती किस तरह है?' तब मैने नरेन्द्र से कहा, 'साला, तूने अविश्वास पैदा कर दिया था। तू साला अब यहाँ मत आना।' "

फिर विचार होने लगा। नरेन्द्र विचार कर रहे हैं। नरेन्द्र की उम्र इस समय बाईस वर्ष चार मास की है।

नरेन्द्र (गिरीश, मास्टर आदि से) – शास्त्रो पर भी कैसे विश्वास करूँ? महानिर्वाण-तन्त्र एक बार तो कहता है, ब्रह्मज्ञान के बिना नरक होगा। फिर कहता है, पार्वती की उपासना को छोड़ और उपाय नही है। मनुसंहिता मे मनुजी कुछ लिखते है – वे उन्ही की अपनी बाते है। Moses (मूसा) लिखते है Pentateuch (पेन्टट्यूच), – उसमे भी उन्होने अपनी ही मृत्यु का वर्णन लिखा है।

"सांख्यदर्शन लिखते है, 'ईश्वरासिद्धेः', ईश्वर है यह कोई प्रमाणित नही कर सकता। फिर कहते है, वेद मानना चाहिए, वेद नित्य है।

"इससे मै यह नही कह रहा हूँ कि ये सब नही है। मै समझ नही सकता, मुझे समझा दो। शास्त्रो का अर्थ जिसके जी मे जैसा आया उसने वैसा ही किया है। अब मै किस-किसका ग्रहण करूँ? White light (सफेद रोशनी) red medium (लाल शीशे) के भीतर से आती है तो लाल दीख पड़ती है और green medium (हरे शीशे) के भीतर से आती है तो हरी दीख पड़ती है!"

एक भक्त – गीता भगवान की उक्ति है।

श्रीरामकृष्ण – गीता सब शास्त्रो का सार है। संन्यासी के पास और चाहे कुछ न रहे, परन्तु एक छोटी-सी गीता जरूर रहेगी।

एक भक्त – गीता श्रीकृष्ण की उक्ति है।

नरेन्द्र – श्रीकृष्ण की उक्ति है या दूसरे किसी की।

श्रीरामकृष्ण निर्वाक् रहकर नरेन्द्र की ये सब बातें सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – ये सब अच्छी बातें हो रही हैं।

"शास्त्रों के दो अर्थ हैं, एक शब्दार्थ और दूसरा मर्मार्थ। ग्रहण मर्मार्थ का ही करना चाहिए, जो अर्थ ईश्वर की वाणी के साथ मिलता हो। चिट्ठी की बातों में, और जिसने चिट्ठी लिखी है उसकी बातों में बड़ा अन्तर है। शास्त्र हैं – चिट्ठी की बातें। ईश्वर की वाणी है – उनके मुख की बातें। मै उस बात को ग्रहण नही करता जो माँ की बात से नही मिलती।"

अब अवतार की बात होने लगी।

नरेन्द्र – ईश्वर पर विश्वास होने से ही होगा। फिर वे कहाँ झूल रहे है, या क्या कर रहे हैं इससे हमें क्या काम? ब्रह्माण्ड अनन्त है और अवतार भी अनन्त है।

नरेन्द्र की यह बात सुनकर श्रीरामकृष्ण ने हाथ जोड़ उन्हें नमस्कार करके कहा – 'अहा!'

मणि भवनाथ से कुछ कह रहे है।

भवनाथ – ये कहते हैं, हाथी को जब हमने नहीं देखा तो वह सुई के छेद के अन्दर से जा सकता है या नहीं, यह हमे कैसे विश्वास हो? ईश्वर को हम जानते नहीं, फिर वे आदमी के रूप में अवतार ले सकते हैं या नहीं, किस तरह हम इसका विचार करके समझें?

श्रीरामकृष्ण – सब कुछ है। वे जादू चला देते है। बाजीगर गले में छूरी मार लेता है, उसे फिर निकाल लेता है। कंकड़-पत्थर खा जाता है।

(३)

श्रीरामकृष्ण तथा कर्म

भक्त – ब्राह्मसमाज के आदमी कहते हैं, संसार में कर्म करना ही अपना कर्तव्य है। इस कर्म के त्याग करने से कुछ न होगा।

गिरीश – मैंने देखा, 'सुलभसमाचार' में यही बात लिखी है। परन्तु ईश्वर को जानने के लिए जो कर्म हैं, वे ही तो पूरे नहीं हो पाते, फिर ऊपर से दूसरे कर्म!

श्रीरामकृष्ण जरा मुस्कराकर मास्टर की ओर देखकर इशारा कर रहे हैं – 'वह जो कुछ कहता है, वही ठीक है।'

मास्टर समझ गये, कर्मकाण्ड बड़ा ही कठिन है।

पूर्ण आये हैं।

श्रीरामकृष्ण – किसने तुम्हें खबर दी?

पूर्ण – शारदा ने।

श्रीरामकृष्ण – (पास की स्त्री-भक्तों से) – इसे कुछ जलपान करने के लिए देना।

अब नरेन्द्र का गाना होगा। श्रीरामकृष्ण तथा भक्तो की सुनने की इच्छा है। नरेन्द्र गा रहे है –

(१) "परवत पाथार। व्योमे जागो रुद्र उद्यत बाज। देवदेव महादेव, कालकाल महाकाल, धर्मराज शंकर शिव तारो हर पाप।"

(२) "हे दीनो को शरण देनेवाले! तुम्हारा नाम बड़ा सुन्दर है। ऐ प्राणों में रमण करनेवाले! अमृत की धारा बह रही है, श्रवण शीतल हो जाते है।"

(३) "जो विपत्ति और भय से परित्राण करनेवाले है, ऐ मन, तुम उन्हे क्यो नही पुकारते? मिथ्या भ्रम मे पड़े हुए इस घोर संसार में डूब रहे हो. यह बड़े दु:ख की बात है।"

पल्टू – यह गाना आप गाइयेगा?

नरेन्द्र – कौनसा?

पल्टू – "देखिले तोमार सेई अतुल प्रेम-आनने।
कि भय संसार शोक घोर विपद शासने।।"

नरेन्द्र गा रहे हैं –

"देखिले तोमार सेई अतुल प्रेम-आनने।
कि भय संसार शोक घोर विपद शासने।।
अरुण उदये आँधार जेमन जाय जगत् छाड़िये।
तेमनि देव तोमार ज्योति मंगलमय विराजिले।
भगत-हृदय वीतशोक तोमार मधुर सान्त्वने।।
तोमार करुणा तोमार प्रेम हृदये प्रभु भाविले।
उथले हृदये नयनवारि राखे के निवारिये।।
जय करुणामय, जय करुणामय, तोमार प्रेम गाहिये।
जाय यदि जाक प्राण तोमार कर्म साधने।।"

मास्टर के अनुरोध से फिर गा रहे है। मास्टर और भक्तगण हाथ जोड़े हुए गाना सुन रहे है –

(१) "ऐ मेरे मन! हरि-रस मदिरा का पान करके तुम मत्त हो जाओ। पृथ्वी पर लोटते हुए तुम उनका नाम ले लेकर रोओ।"

(२) "आसमान थाली है उसमे सूर्य और चन्द्र दिये जल रहे है, नक्षत्र मोतियो की तरह चमक रहे है। मलयानिल धूप है। पवन चमर डुला रहा है। वन-राजियाँ उसकी जीती-जागती ज्योति है। हे भवखण्डन, यह तुम्हारी कैसी सुन्दर आरती हो रही है। अनाहत नाद के द्वारा तुम्हारी भेरी बज रही है।"

(३) "उसी एक पुरुषपुरातन – निरंजन पर तुम अपने चित्त को समाहित करो।"

नारायण के अनुरोध करने पर नरेन्द्र ने फिर गाया।

(भावार्थ) "ऐ हृदयरमा माँ – प्राणों की पुतली! आओ, तुम हृदय के आसन पर आसीन हो जाओ मै दृष्टि को तृप्त करता हुआ तुम्हें देखूँ। जन्म से ही मैं तुम्हारा मुँह जोह रहा हूँ। ऐ माँ, तुम जानती हो, मै कितना दु:ख भोग चुका हूँ। ऐ आनन्दमयी, एक बार तो हृदय-पद्म को विकसित करके वहाँ अपना प्रकाश दिखा दो।"

नरेन्द्र मन ही मन गा रहे है –

(भावार्थ) "माँ, तेरा अपरूप रूप घोर अँधेरे मे चमक रहा है। इसीलिए गिरि-गुहाओ मे योगीजन तुम्हारा ध्यान करते है।"

समाधि का यह संगीत सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये।

श्रीरामकृष्ण को भावावेश है। उत्तरास्य हो, दीवार के सहारे, पैर लटकाये हुए तकिये पर बैठे हुए है। चारो ओर भक्तगण बैठे हैं।

भावावेश मे श्रीरामकृष्ण माता से बातें कर रहे है। कह रहे है – "भोजन करके इस समय चला जाऊँगा। तू आयी? पोटली बाँधकर, जहा रहेगी वह घर ठीक करके तू आयी है क्या?

"अब मुझे कोई नही सुहाता।

"माँ, गाना क्यो सुनूं? उससे तो मन कुछ बाहर चला जाता है।"

क्रमश: श्रीरामकृष्ण को बाह्य संसार का ज्ञान हो रहा है।

भक्तों की ओर देखकर उन्होने कहा, – "हण्डी मे पानी भरकर किसी को उसमें मछलियो को रखते हुए देख पहले मुझे बड़ा आश्चर्य होता था। मैं सोचता था, ये लोग बडे हत्यारे है, अन्त मे इन मछलियों को मार डालेंगे। अवस्था जब बदलने लगी, तब मैंने देखा, यह शरीर ऊपर का ढक्कन है। न इसके रहने से कुछ बनता-बिगड़ता है, न जाने से।"

भवनाथ -- तो क्या मनुष्यों की हिसा की जा सकती है? हत्या की जा सकती है?

श्रीरामकृष्ण – हा, उस अवस्था मे की जा सकती है। वह अवस्था सब की नहीं होती। वह ब्रह्मज्ञान की अवस्था है।

"दो-एक स्तर उतरने पर भक्ति और भक्त अच्छे लगते है।

"ईश्वर मे विद्या और अविद्या दोनो है। यह विद्या-माया जीव को ईश्वर की ओर ले जाती है, अविद्या-माया ईश्वर से जीव को दूर बहकाकर ले जाती है। विद्या की क्रीड़ा ज्ञान, भक्ति, दया और वैराग्य है। इनका आश्रय लेने पर मनुष्य ईश्वर के पास पहुँच सकता है।

"एक सीढ़ी और चढ़ने पर ईश्वर मिलते है – ब्रह्मज्ञान होता है। इस अवस्था में

सच्चा ज्ञान होता है – तब वास्तव मे समझ पड़ता है कि मै ठीक देख रहा हूँ, वे ही सब कुछ हुए है। उस समय त्याज्य और ग्राह्य नही रहते। किसी पर क्रोध करने की जगह नही रहती।

मै बग्घी पर चला जा रहा था। एक जगह बरामदे के ऊपर देखा, दो वेश्याएँ खड़ी थी। देखा – साक्षात् भगवती। देखकर मैने प्रणाम किया।

"जब पहले-पहल यह अवस्था हुई तब काली माई की न मै पूजा कर सका और न उन्हे भोग ही दे सका। हलधारी और हृदय ने कहा, 'खजांची कह रहा है – भट्टाचार्यजी भोग नही देगे तो और कौन देगा?' उसने कटूक्ति की, यह सुनकर मै हँसने लगा, मुझे क्रोध नही आया। यह ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके फिर लीला का स्वाद लेते रहो। कोई साधु एक शहर मे तमाशा देखता हुआ घूम रहा था। उसी समय एक दूसरे परिचित साधु से भेट हो गयी। उसने पूछा, 'तुम मौज से घूम रहे हो, तुम्हारा सामान कहाँ है? उधर सामान लेकर कोई नौ-दो ग्यारह तो नही हो गया?' पहले साधु ने कहा, 'नही महाराज, पहले डेरे की तलाश करके, डेरा-डण्डा वहाँ रखकर, ताला बन्द करके फिर शहर का रंग-ढंग देखने के लिए निकला हूँ।' " (सब हँसते है)

भवनाथ – यह बहुत ऊँची बात है।

मणि – (स्वगत) ब्रह्मज्ञान के बाद लीला का स्वाद लेना, – समाधि के बाद नीचे उतरना।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि से) – अजी! ब्रह्मज्ञान क्या ऐसे सहज ही हो जाता है? मन का नाश बिना हुए नही होता। गुरु ने शिष्य से कहा था, तुम मुझे मन दो, मै तुम्हे ज्ञान देता हूँ। नागा कहता था, 'अरे मन इधर-उधर न लगाना चाहिए।'

"इस अवस्था मे केवल ईश्वर की बाते सुहाती है और भक्तो का संग।

(राम से) "तुम तो डाक्टर हो, जब खून के साथ मिलकर एक हो जाती है, तभी दवा फायदा करती है – है न? उसी तरह इस अवस्था मे भीतर और बाहर ईश्वर ही ईश्वर है। वह देखेगा, वे ही देह, मन, प्राण और आत्मा है।

"मन का नाश होने से ही ब्रह्मज्ञान की अवस्था होती है। मन का नाश होने ही से 'अहं' का नाश होता है, – उस 'अहं' का, जो 'मै-मै' कर रहा है। यह अवस्था भक्ति के मार्ग से भी होती है और ज्ञान-मार्ग या विचार-मार्ग से भी। 'नेति-नेति' अर्थात् यह सब माया है, स्वप्नवत् है, इस तरह का विचार ज्ञानी करते है। यह संसार 'नेति-नेति' – माया है। संसार जब न रहा, तब बाकी रह गये कुछ जीव – 'मै' रूपी घट के भीतर।

"सोचो कि पानी से भरे हुए दस घड़े है, उनमे सूर्य का बिम्ब पड़ रहा है। कितने सूर्य दिखलायी देते है?"

भक्त – दस प्रतिबिम्ब, और एक यथार्थ सूर्य तो है ही।

श्रीरामकृष्ण – सोचो, तुमने एक घड़ा फोड़ डाला, अब कितने सूर्य दीख पड़ते है?

भक्त – नौ, और एक सत्य सूर्य तो है ही।

श्रीरामकृष्ण – आठ और घड़े फोड़ डाले गये। अब कितने सूर्य है?

भक्त – एक प्रतिबिम्ब सूर्य और एक सत्य सूर्य।

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश से) – उस रहे-सहे घट को भी फोड डालो, अब क्या रह जाता है?

गिरीश – जी, वही सत्य सूर्य।

श्रीरामकृष्ण – नही, क्या रहता है, वह कोई मुख से नही बता सकता। जो है, वही है। प्रतिबिम्बो के बिना रहे, सत्य सूर्य है यह बात मनुष्य कैसे जान सकता है? समाधि के होने पर अहं-तत्त्व का नाश हो जाता है। समाधिस्थ पुरुष उतरकर कह नही सकता कि उसने क्या देखा।

(४)

ईश्वरदर्शन तथा व्याकुलता

सन्ध्या हुए बड़ी देर हो गयी। बलराम के बैठकखाने मे दिये जल रहे है। श्रीरामकृष्ण अब भी भावमग्न है। भावावेश मे कह रहे है –

"यहाँ और कोई नही है, इसीलिए तुम लोगो से कह रहा हूँ, आन्तरिकता के साथ जो मनुष्य ईश्वर को जानना चाहेगा, उसका उद्देश्य अवश्य सफल होगा। जो व्याकुल है, ईश्वर के सिवा और कुछ नही चाहता, वह उन्हे अवश्य ही पायेगा।

"यहाँ के जितने आदमी थे – जिन्हे-जिन्हे आना था, वे सब आ चुके। इसके बाद जो आयेगे वे बाहर के आदमी है। ऐसे लोग कभी कभी आ जाया करेंगे। माँ उन्हे बता दिया करेगी कि तुम यह करो, वह करो, इस तरह ईश्वर को पुकारो आदि।

"ईश्वर की ओर मन क्यो नही जाता? ईश्वर से उनमे (महामाया मे) बल अधिक है। जज से उसके चपरासी मे शक्ति अधिक है। (सब हँसते है)

"नारद से राम ने कहा, 'नारद, तुम्हारी स्तुति से मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है, तुम कोई वर लो।' नारद ने कहा, 'राम! यह करो, तुम्हारे पादपद्मो मे मेरी श्रद्धा-भक्ति रहे और तुम्हारी भुवनमोहिनी माया मे न पड़ जाऊँ।' राम ने कहा, 'तथास्तु, कोई वर और लो।' नारद ने कहा, 'राम! और कोई वर मुझे नही चाहिए।'

"इस भुवनमोहिनी माया मे सभी मुग्ध हो रहे है। ईश्वर जब देह धारण करते है, तो वे भी मुग्ध हो जाते है। सीता के लिए राम कितना रोये थे। 'पंचभूत के पिंजड़े में पड़कर ब्रह्म को रोना पड़ता है।'

"परन्तु एक बात है – ईश्वर जब चाहे तभी मुक्त हो सकते है।"

भवनाथ –Guard(गार्ड) अपनी इच्छा से रेलगाड़ी के भीतर अपने को कैद करता है। परन्तु वह जब चाहे तब उतर सकता है।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वरकोटि – जैसे अवतार आदि – जब चाहें तब मुक्त हो सकते हैं। जो जीवकोटि हैं, वे नहीं हो सकते। जीव कामिनी और कांचन में बद्ध है। कमरे के द्वार और झरोखे स्क्रू (पेंच) से कसे हुए हैं। कैसे निकल सकते हैं?

भवनाथ – (सहास्य) जैसे रेल के तीसरे दर्जे के मुसाफिर, दरवाजे में चाभी लगा देने पर फिर नहीं निकल सकते।

गिरीश – जीव अगर इस तरह बँधा हुआ है तो उसके लिए कोई उपाय है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, गुरु के रूप से ईश्वर अगर स्वयं ही मायापाशों का छेदन करें तो फिर भय की कोई बात नहीं।

□□□

परिच्छेद ११५

राम के मकान में

(१)

नित्य तथा लीला। साधना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण राम के यहाँ आये हुए है। उनके नीचे के बैठकखाने मे भक्तो के साथ बैठे हुए है। मुख पर प्रसन्नता झलक रही है। आनन्दपूर्वक भक्तो से बातचीत कर रहे है।

आज शनिवार है, जेठ की शुक्ला दशमी, २३ मई १८८५। शाम के पाँच बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण के सामने महिमाचरण बैठे है। बायी ओर मास्टर हैं, चारो ओर पल्टू, भवनाथ, नृत्यगोपाल और हरमोहन है। आते ही श्रीरामकृष्ण भक्तों के बारे मे पूछने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – छोटा नरेन्द्र नही आया?

कुछ देर बाद छोटे नरेन्द्र आ गये।

श्रीरामकृष्ण – वह नही आया?

मास्टर – जी, कौन?

श्रीरामकृष्ण – किशोरी? – गिरीश घोष नही आयेगा? – और नरेन्द्र?

कुछ देर बाद नरेन्द्र ने आकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो से) – केदार (चटर्जी) अगर रहता तो खूब आनन्द आता। गिरीश घोष से उसकी खूब बनती है। (महिमा से, सहास्य) वह भी वही बात दुहराता है (अर्थात् अवतार मानता है)।

कमरे मे कीर्तन होने का बन्दोबस्त कर रखा गया है। कीर्तनिया हाथ जोड़कर श्रीरामकृष्ण से कह रहा है, 'आप आज्ञा दे तो कीर्तन आरम्भ हो।'

श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'थोड़ा-सा पानी पीऊँगा।'

पानी पीकर मसाले की थैली से आपने कुछ मसाला निकालकर खाया। मास्टर से थैली बन्द करने के लिए कहा।

कीर्तन हो रहा है। खोल की आवाज से श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। गौरचन्द्रिका सुनते सुनते वे समाधिमग्न हो गये। पास ही नृत्यगोपाल थे, उनकी गोद पर

श्रीरामकृष्ण ने अपने पैर फैला दिये। नृत्यगोपाल भी भावावेश मे रो रहे है। भक्तगण चुपचाप यह समाधि की अवस्था देख रहे है।

कुछ प्रकृतिस्थ होकर श्रीरामकृष्ण वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – नित्य से लीला और लीला से नित्य, – (नृत्य गोपाल से) तेरा क्या भाव है?

नृत्यगोपाल – दोनो अच्छे है।

श्रीरामकृष्ण आँखे बन्द करके कह रहे है, "क्या केवल इस तरह ही रहना है? क्या आँखे बन्द कर लेने पर वे है और आँखे खोलने पर वे नही है? जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्ही की है, जिनकी लीला है, उन्ही की नित्यता है।

(महिमा से) "अजी, तुम्हे एक बात बतलानी है –"

महिमाचरण – जी, दोनो ईश्वर की इच्छाएँ है।

श्रीरामकृष्ण – कोई ऊपर चढकर फिर उतर नही सकता, और कोई ऊपर चढ़कर नीचे उतरकर घूम-फिर सकता है।

"उद्धव ने गोपियो से कहा था, तुम जिन्हे अपना कृष्ण बना रही हो वे सर्वभूतो मे है वे ही जीव-जगत् हुए है।

"इसीलिए कहता हूँ, क्या आँखे बन्द करने से ही ध्यान होता है और आँखे खोलने मे कुछ नही?"

महिमा – एक प्रश्न है। जो भक्त है उन्हे भी किसी समय निर्वाण की आवश्यकता है?

श्रीरामकृष्ण – निर्वाण चाहिए ही, ऐसी कोई बात नही। इस तरह भी है कि कृष्ण भी नित्य है और भक्त भी नित्य है – चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम।

"जैसे जहाँ चन्द्र है, वही तारे भी है। कृष्ण भी नित्य है और भक्त भी नित्य है। तुम्ही तो कहते हो – 'अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्' – और तुमसे तो मैने कहा है कि जिस भक्त मे विष्णु का अंश रहता है उसमे भक्ति का बीज नष्ट नही होता। मै एक ज्ञानी (न्यांगटा) के पंजे मे फँस गया, उसने ग्यारह महीने तक वेदान्त सुनाया। परन्तु वह मुझमे भक्ति का बीज बिलकुल नष्ट नही कर सका। घूम-फिरकर वही 'माँ-माँ'। जब मै गाता था तब (न्यांगटा) रोने लगता था। कहता था – 'अरे, यह तूने क्या सुनाया!' देखो, इतना बड़ा ज्ञानी भी रोने लगता था। (छोटे नरेन्द्र आदि से) इतना समझ रखना, अलख लता का रस जब पेट मे जाता है तो पेड होता ही है। भक्ति का बीज अगर पड़ गया, तो उससे क्रमशः पेड़ और फूल-फल होते ही है।

"'मूषलं कुलनाशनम्।' मूषल घिसकर जरा-सा रह गया था। उस थोडे-से अंश से यदुवंश का ध्वंस हो गया। चाहे लाख ज्ञान और विचार करो, भक्ति का बीज अगर

भीतर रहा, घूम-फिरकर वही 'भज राम – भज सीताराम।' "

भक्तगण चुपचाप सुन रहे है। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए महिमाचरण से कह रहे है – तुमको क्या अच्छा लगता है?

महिमाचरण (हँसकर) – कुछ भी नही, आम अच्छा लगता है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – अकेले अकेले? न, आप भी खाओ और दूसरो को भी कुछ दो?

महिमा (सहास्य) – देने की विशेष इच्छा तो नही है, अकेले खाया तो बुरा क्या है।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु मेरा भाव क्या है, जानते हो? – क्या आँख खोलने ही से वे गायब हो जाते है? मै 'नित्य' और 'लीला' दोनो को लेता हूँ। उन्हे प्राप्त करने पर यह समझ मे आ जाता है कि वे ही स्वराट् है और वे ही विराट् है। वे ही अखण्ड सच्चिदानन्द है और वे ही जीव-जगत् हुए है।

"साधना चाहिए। केवल शास्त्र रटने से नही होता। मैने विद्यासागर को देखा, वह पढ़ा-लिखा खूब है, परन्तु अपने भीतर मे क्या है उसने नही देखा। बच्चो को पढा-लिखाकर ही उसे आनन्द मिलता है। ईश्वर के आनन्द का स्वाद उसने नही पाया, केवल पढने से क्या होगा? धारणा कहाँ? पंचांग मे लिखा है वर्षा पूरी होगी, परन्तु पंचांग दबाओ तो कही बूँद भर भी पानी नही निकलता!"

महिमा – संसार मे कितने ही काम है, अवसर कहाँ मिलता है?

श्रीरामकृष्ण – क्यो? तुम तो सब स्वप्नवत् बतलाते हो।

"सामने सागर देखकर लक्ष्मण ने धनुष लेकर कहा था, 'मै वरुण का वध करूँगा। यही समुद्र हमे लंका नही जाने दे रहा है।' राम ने समझाया, 'लक्ष्मण, यह जो सब देख रहे हो, यह स्वप्नवत् अनित्य है न? – अतएव समुद्र भी अनित्य है और तुम्हारा क्रोध भी अनित्य है। मिथ्या को मिथ्या के द्वारा मारना भी मिथ्या है।' "

महिमाचरण चुप हो रहे।

महिमाचरण को बहुत से पारिवारिक काम करने पड़ते है। और उन्होने परोपकार के लिए एक नया स्कूल खोला है।

श्रीरामकृष्ण (महिमा से) – शम्भु ने कहा, 'मेरी इच्छा है, ये रुपये सत्कार्य मे लगाऊँ – स्कूल, दवाखाना खोल दूँ, रास्ताघाट तैयार करा दूँ।' मैने कहा, 'निष्काम भाव से कर सको तो अच्छा है, परन्तु निष्काम कर्म करना बड़ा कठिन है, न जाने किस तरफ से कामना निकल पड़ती है। तुमसे एक बात और पूछता हूँ, अगर ईश्वर तुम्हे मिल जायँ तो क्या तुम उनसे कुछ स्कूल, अस्पताल, दवाखाने ये सब माँगने लगोगे?'

एक भक्त – महाराज, संसारियो के लिए क्या उपाय है?

श्रीरामकृष्ण – साधु-संग – ईश्वर की बाते सुनना।

"संसारी मतवाले हो रहे है, कामिनी और कांचन मे मत्त है। मतवाले को भात का पानी थोड़ा-थोड़ासा पिलाते रहने पर वह अच्छा हो जाता है – उसे होश आ जाता है।

"और सद्गुरु के पास उपदेश लेना चाहिए। सद्गुरु के लक्षण है। जो वाराणसी गया हो और वाराणसी जिसने देखी हो, उसी से वाराणसी की बाते सुननी चाहिए। केवल पण्डित होने से नही होता। जिसे यह बोध नही हुआ कि संसार अनित्य है, उससे उपदेश न लेना चाहिए। पण्डित मे विवेक और वैराग्य के रहने पर ही वह उपदेश दे सकता है।

"सामाध्यायी ने कहा था, ईश्वर नीरस है। जो रसस्वरूप है, उन्हें बतलाता था नीरस! जैसे किसी ने कहा था – मेरे मामा के यहाँ गोशाले मे बहुत घोड़े है! (सब हँसते है)

"संसारी मतवाले हो रहे है। वे सदा सोचते है, मै ही यह सब कर रहा हूँ, और घर-द्वार यह सब मेरा है। दाँत निकालकर कहता है – 'इनके (स्त्री आदि के) लिए फिर क्या होगा? मै न रहूँगा तो इनके दिन कैसे कटेंगे! मेरी स्त्री को और मेरे परिवार को कौन सम्हालेगा?' राखाल ने कहा, 'मेरी स्त्री की फिर क्या दशा होगी?' "

हरमोहन – राखाल ने ऐसी बात कही?

श्रीरामकृष्ण – इस तरह नही कहेगा तो क्या करेगा? जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है। लक्ष्मण ने राम से कहा, 'भाई! बड़े आश्चर्य की बात है, साक्षात् वशिष्ठदेव भी पुत्रो के शोक से विकल हो रहे है!' राम ने कहा, 'भाई, जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है। भाई! ज्ञान और अज्ञान के पार हो जाओ।'

"जैसे किसी के पैर मे एक काँटा लगा है। वह उस काँटे को निकालने के लिए एक और काँटा ले आता है। फिर उस काँटे से काँटा निकालकर दोनो काँटे फेक देता है। अज्ञान-काँटे को निकालने के लिए ज्ञान-काँटे की जरूरत होती है। फिर ज्ञान और अज्ञान दोनो काँटो को फेक देने पर जो कुछ रह जाता है वह विज्ञान है। ईश्वर है, इसका आभासमात्र लेकर उन्हे अच्छी तरह जानना पड़ता है, और उनसे खास तौर से बातचीत की जाती है, यह विज्ञान है। इसीलिए श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है, 'भाई, तीनो गुणो से पार हो जाओ।'

"इस विज्ञान को प्राप्त करने के लिए विद्यामाया को अपनाना पड़ता है। ईश्वर सत्य है, संसार अनित्य है, यह विचार है, अर्थात् विवेक और वैराग्य है। और उनके नामो और गुणो का कीर्तन, ध्यान, साधुसंग, प्रार्थना ये सब विद्यामाया के अन्दर है। विद्यामाया जैसे छत की ऊपरवाली कुछ सीढ़ियाँ है, और एक सीढ़ी उठने ही से छत है। (छत मे उठने का अर्थ है ईश्वरलाभ)

"विषयी लोग मतवाले हो रहे है। कामिनी और कांचन मे मत्त है, होश नही।

इसीलिए तो इन लड़को को मैं प्यार करता हूँ। उनमें कामिनी-कांचन का प्रवेश अभी नही हुआ। आधार अच्छा है, ईश्वर के पास पहुँच सकते हैं। संसारियों मे काँटे चुनते ही चुनते सब साफ हो जाता है – मछली नहीं मिलती।

''संसारी लोग ओले की चोट खाये हुए आम के सदृश होते है। यदि तुम उन आमों को ईश्वर को अर्पण करना चाहते हो तो उन्हे गंगाजल से धोकर शुद्ध कर लेना पड़ता है। परन्तु फिर भी ऐसे फल बहुत कम पूजा मे चढ़ाये जाते हैं। परन्तु उन्हें यदि चढ़ाना ही पड़े तो ब्रह्मज्ञान के सहित, अर्थात् तुम्हें यह समझ लेना पड़ता है कि सब कुछ ईश्वर ही हुए हैं।''

श्रीयुत अश्विनीकुमार दत्त तथा श्रीयुत विहारी भादुड़ी के पुत्र के साथ एक थियोसाफिस्ट आये हुए हैं। मुखर्जियां ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। आँगन में संकीर्तन का आयोजन हो रहा है। ज्योंही खोल बजा, श्रीरामकृष्ण घर छोड़कर आँगन मे जा बैठे। साथ ही साथ भक्तगण भी उठ गये।

भवनाथ अश्विनी का परिचय दे रहे है। श्रीरामकृष्ण ने अश्विनी की ओर इशारा करके मास्टर मे कुछ कहा। मास्टर और अश्विन में कुछ बाते होने लगी। नरेन्द्र भी आँगन मे आये। श्रीरामकृष्ण अश्विनी से कह रहे है, इसी का नाम नरेन्द्र है।'

□□□

परिच्छेद ११६

श्रीरामकृष्ण तथा अहंकार का त्याग

(१)

श्रीरामकृष्ण की ज्ञान तथा भक्ति की अवस्था

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे उसी परिचित कमरे में विश्राम कर रहे है। आज शनिवार है, १३ जून १८८५, जेठ की शुक्ला प्रतिपदा, जेठ की संक्रान्ति। दिन के तीन बजे होगे। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद तखत पर जरा विश्राम कर रहे है।

एक पण्डितजी जमीन पर चटाई पर बैठे हुए है। शोक से विह्वल एक ब्राह्मणी कमरे के उत्तर तरफवाले दरवाजे के पास खड़ी हुई है। किशोरी भी है। मास्टर ने आकर प्रणाम किया। साथ मे द्विज आदि है। अखिलबाबू के पड़ोसी भी बैठे हुए है। उनके साथ आसाम का एक लड़का अभी पहले-पहल आया हुआ है।

श्रीरामकृष्ण कुछ अस्वस्थ है। गले मे गिलटी पड़ गयी है, कुछ जुकाम भी हो गया है। उनकी गले की बीमारी बस यही से शुरू होती है।

अधिक गरमी पडने के कारण मास्टर का भी शरीर अस्वस्थ रहता है। श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए वे इधर लगातार दक्षिणेश्वर नही आ सके।

श्रीरामकृष्ण – यह लो तुम तो आ गये। तुमने जो बेल भेजा था वह बड़ा अच्छा था। तुम कैसे हो?

मास्टर – जी, पहले से अब कुछ अच्छा हूँ।

श्रीरामकृष्ण – बड़ी गरमी पड़ रही है। कुछ कुछ बर्फ खाया करो।

"गरमी से मुझे भी बड़ा कष्ट हो रहा है। गरमी मे कुलफी बर्फ – यह सब बहुत खाया गया। इसीलिए गले मे गिलटी पड़ गयी है। गले से बड़ी बदबू निकल रही है।

"माँ से मैने कहा, अच्छा कर दो, अब कुलफी बर्फ न खाऊँगा।

"इसके बाद यह भी कहा है कि बर्फ न खाऊँगा।

"माँ से जब कह दिया है कि अब न खाऊँगा तो खाना अवश्य ही न होगा। परन्तु एकाएक भूल भी ऐसी हो जाती है।

"परन्तु जानते मे भूल नही होने पाती। उस दिन गडुआ लेकर एक आदमी को

झाऊतल्ले की ओर आने के लिए मैने कहा। उस समय वह जंगल गया था, इसलिए एक दूसरा आदमी ले आया। मैने जंगल से आकर देखा, एक दूसरा ही आदमी गडुआ लिए हुए खड़ा था। अब क्या करूँ? हाथ मे मिट्टी लगाये खड़ा रहा जब तक उसी ने आकर पानी नही दिया।

"माता के पादपद्मो मे फूल चढ़ाकर जब मै सब कुछ त्याग करने लगा तब कहा, 'माँ, यह लो अपनी शुचिता और यह लो अशुचिता, यह लो अपना धर्म और यह लो अधर्म, यह लो अपना पाप और यह लो पुण्य, यह लो अपना भला और यह लो बुरा, – मुझे शुद्धा भक्ति दो।' परन्तु यह लो अपना सत्य और यह अपना असत्य, यह मै नही कह सका!"

एक भक्त बर्फ ले आये है। श्रीरामकृष्ण बार बार मास्टर से पूछ रहे है 'क्यो जी, क्या खा लूँ?'

मास्टर ने विनयपूर्वक कहा, 'तो आप माँ की आज्ञा बिना लिये न खाइये।' श्रीरामकृष्ण ने अन्त मे बर्फ नही खायी।

श्रीरामकृष्ण – शुचिता और अशुचिता का विचार भक्त के लिए है, ज्ञानी के लिए नही। विजय की सास ने कहा, 'मेरा क्या हुआ? अब भी तो मै सब की जूठन नही खा सकती।' मैने कहा, सब की जूठन खाने ही से ज्ञान होता है? कुत्ते जो पाते हं वही खा लेते है, इसलिए क्या कुत्ते को बड़ा ज्ञानी कहे?'

(मास्टर से) "मै पाच तरह की तरकारियाँ इसलिए खाया करता हूँ कि सब तरह की रुचि रहे – कही एक ही ढर्रे मे पड़ गया तो इन्हे (भक्तों को) छोड़ न देना पडे।

"केशव सेन से मैने कहा, 'और भी बढ़कर अगर बातचीत की जायेगी तो तुम्हारा यह दल फिर न रह जायेगा। ज्ञान की अवस्था मे दल-बल सब स्वप्नवत् मिथ्या है।'

"पक्षी का घोसला अगर कोई जला देता है, तो वह उडता फिरता है, आकाश मे आश्रय लेता है। अगर देह, संसार यह सब मिथ्या भासित हो, तो आत्मा समाधिमग्न हो जाती है।

"पहले मेरी ज्ञानी की अवस्था थी। आदमी अच्छे नही लगते थे। हाटखोला मे एक ज्ञानी है अथवा अमुक स्थान पर एक भक्त है, इस तरह की बात मै सुनता था, फिर कुछ दिन मे सुनता, वह तो गुजर गया। इसीलिए आदमी अच्छे नही लगते थे। फिर उन्होने (जगदम्बा ने) मन को उतारा, भक्ति और भक्तो मे मन को लगा दिया।"

मास्टर अवाक् है। श्रीरामकृष्ण की अवस्थाओ के बदलने की बाते सुन रहे है। अब श्रीरामकृष्ण यह बतला रहे है कि ईश्वर आदमी होकर क्यो अवतार लेते है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – भगवान मनुष्य-रूप मे क्यो अवतार लेते है, जानते हो? नरदेह के भीतर उनकी बाते सुनने को मिलती है। इसके भीतर उनका विलास है,

इसके भीतर वे रसास्वादन करते हैं।

"और अन्य सब भक्तों में उनका थोड़ा-थोड़ासा प्रकाश हैं। जैसे किसी चीज को खूब चूसने पर कुछ रस मिलता है, अथवा फूल को चूसने पर कुछ मधु। (मास्टर से) तुम यह बात समझे?"

मास्टर – जी हाँ, मैं खूब समझा।

श्रीरामकृष्ण द्विज के साथ बातचीत कर रहे हैं। द्विज की उम्र १५-१६ साल की है। उनके पिता ने अपना दूसरा विवाह किया है। द्विज प्राय: मास्टर के साथ आया करते हैं। श्रीरामकृष्ण उन पर स्नेह करते हैं। द्विज कह रहे हैं कि उनके पिता उन्हें दक्षिणेश्वर नहीं आने देते।

श्रीरामकृष्ण (द्विज से) – क्या तेरे भाई भी मुझे अवज्ञा की दृष्टि से देखते हैं?

द्विज चुप हैं।

मास्टर – संसार की कुछ ठोकरें खाने पर जिनमें कुछ अवज्ञा है भी वह भी दूर हो जायेगी।

श्रीरामकृष्ण – विमाता हैं, धक्के तो मिलते ही होंगे।

सब कुछ देर चुप रहे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – पूर्ण के साथ इसे तुम मिला क्यों नही देते?

मास्टर – जी हाँ, मिला दूँगा। (द्विज से) पानीहाटी जाना।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, इसीलिए मैं सबसे कहा करता हूँ – इसे भेज देना, उसे भेज देना। (मास्टर से) तुम जाओगे या नहीं?

श्रीरामकृष्ण पानीहाटी के महोत्सव में जायेंगे। इसीलिए भक्तों से वहाँ जाने की बात कह रहे हैं।

मास्टर – जी हाँ, इच्छा तो है।

श्रीरामकृष्ण – बड़ी नाव किराये से ले ली जायेगी। वह डॉवाडोल न होगी। गिरीश घोष क्या नहीं जायेगा?

श्रीरामकृष्ण एकदृष्टि से द्विज को देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा इतने लड़के हैं, उनमें यही आता है – यह क्यों? कहो – पहले का कुछ जरूर रहा होगा।

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – संस्कार। गतजन्म मे कर्म किया हुआ है।

अन्तिम जन्म में मनुष्य सरल होता है। अन्तिम जन्म में पागलपन का भाव रहता है।

"परन्तु है यह उनकी इच्छा। उनकी 'हाँ' से संसार के कुछ काम होते हैं और उनकी 'ना' से होनहार भी बन्द हो जाता है। इसीलिए तो आदमी को आशीर्वाद नहीं देना चाहिए।

"मनुष्य की इच्छा से कुछ नही होता। उन्हीं की इच्छा से होता जाता है।

"उस दिन मै कप्तान के यहाँ गया था। देखा, रास्ते से कुछ लड़के जा रहे थे। वे सब एक खास तरह के थे। एक लड़के को मैंने देखा, उन्नीस या बीस साल की उम्र रही होगी, बाल सँवारे हुए था, सीटी बजाता हुआ चला जा रहा था। कोई 'नगेन्द्र – क्षीरोद' कहता हुआ जा रहा था। देखा, कोई तमोगुण मे पड़ा हुआ है, बाँसुरी बजा रहा है, उसी के कारण कुछ अहंकार हो गया है। (द्विज से) जिसे ज्ञान हो गया है, उसे निन्दा की क्या परवाह है? उसकी बुद्धि कूटस्थ है – लौहार की निहाई जैसे, उस पर कितनी ही चोट पड़ चुकी, परन्तु उसका कही कुछ नही बिगड़ा।

"मैंने (अमुक के) बाप को देखा, रास्ते से चला जा रहा था।"

मास्टर – बड़ा सरल आदमी है।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु आँखे लाल रहती है।

श्रीरामकृष्ण कप्तान के यहाँ गये हुए थे। वही की बाते कर रहे हैं। जो लड़के श्रीरामकृष्ण के पास आते है, कप्तान ने उनकी निन्दा की थी। हाजरा महाशय ने कप्तान के पास उनकी निन्दा की होगी।

श्रीरामकृष्ण – कप्तान से बातं हो रही थी। मैने कहा, पुरुष और प्रकृति के सिवा और कुछ भी नही है। नारद ने कहा था, 'हे राम, जितने पुरुष देखते हो सब मे तुम्हारा अंश है, और जितनी स्त्रियाँ देखते हो सब मे सीता का अंश है।'

"कप्तान को बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने कहा, 'आप ही को यथार्थ बोध हुआ है। सब पुरुष राम के अंश से हुए अतएव राम है और सब स्त्रियाँ सीता के अंश से हुई अतएव सीता है।' फिर थोड़ी ही देर मे वह लड़को की निन्दा करने लगा। कहा, 'वे लोग अंग्रेजी पढ़ते है, जो पाते है वही खाते है, – वे लोग आपके पास सर्वदा जाते है, यह अच्छा नही। इससे आप पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है। हाजरा ही एक सच्चा आदमी है। लड़को को अपने पास अधिक आने-जाने न दिया कीजिये। पहले तो मैंने कहा, 'आते है – मै क्या कहूँ?'

"फिर मैने उसे खूब सुनाया। उसकी लड़की हँसने लगी। मैने कहा, 'जिसमे विषय-बुद्धि है, उससे ईश्वर बहुत दूर हैं। विषय-बुद्धि अगर न रही तो ईश्वर उस आदमी की मुट्ठी मे है – बहुत निकट हैं।' कप्तान ने राखाल की बात पर कहा, 'वह सब के यहाँ खाता है।' हाजरा से उसने सुना होगा। तब मैंने कहा, 'कोई चाहे लाख जप-तप करे, यदि उसमें विषय-बुद्धि है तो कही कुछ न होगा, और शूकर-मांस खाने पर भी अगर किसी का मन ईश्वर पर है तो वह मनुष्य धन्य है। क्रमश: ईश्वर की प्राप्ति उसे होगी ही। हाजरा इतना जप-तप करता है परन्तु भीतर दलाली करने की फिक्र में रहता है।'

"तब कप्तान ने कहा, 'हाँ, यह बात तो ठीक है।' मैंने कहा, 'अभी अभी तो तुमने

कहा, – सब पुरुष राम के अंश से हुए अतएव राम है, और सब स्त्रियाँ सीता के अंश से हुई अतएव सीता है, इस तरह कहकर अब ऐसी बात कह रहे हो?'

"कप्तान ने कहा, 'हाँ ठीक है – मगर आप भी तो सब को प्यार नही करते।'

"मैने कहा, 'आपो नारायण – सभी जल है, परन्तु कोई जल पिया जाता है, किसी मे बरतन धोये जाते है, कोई शौच के काम आता है। यह जो तुम्हारी बीबी और लड़की बैठी हुई देख रहा हूँ, ये साक्षात् आनन्दमयी है।' कप्तान कहने लगा, 'हाँ हाँ, यह ठीक है।' तब मेरे पैर पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाने लगा।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण हँसने लगे। अब श्रीरामकृष्ण कप्तान के गुणो की बात कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – कप्तान मे बहुतसे गुण है। रोज नित्य-कर्म करता है, स्वयं देवता की पूजा करता है। नहाते समय कितने ही मन्त्र जपा करता है। कप्तान एक बहुत बड़ा कर्मी है। पूजा, जप, आरती, पाठ, ये सब नित्यकर्म हमेशा किया करता है।

"फिर मै कप्तान को सुनाने लगा। मैने कहा, 'पढ़कर ही तुमने सब मिट्टी मे मिलाया, अब हरगिज न पढ़ना।'

"मेरी अवस्था के सम्बन्ध मे कप्तान ने कहा, 'यह आसमान मे चक्कर मारनेवाला भाव है।' जीवात्मा और परमात्मा, जीवात्मा एक पक्षी है और परमात्मा आकाश – चिदाकाश। कप्तान कहता है, 'तुम्हारा जीवात्मा चिदाकाश मे उड़ जाता है, इसीलिए समाधि होती है। (हँसकर) कप्तान ने बंगालियो की निन्दा की। कहा, 'बंगाली बेवकूफ है। पास ही मणि है और उन लोगो ने न पहचाना!'

"कप्तान का बाप बड़ा भक्त था। अंग्रेजो की फौज मे सूबेदार था, एक हाथ से शिव की पूजा करता था और दूसरे से बन्दूक चलाता था।

(मास्टर से) "परन्तु बात यह है कि विषय के कामो मे दिन-रात फँसा रहता है। जब जाता हूँ, देखता हूँ, बीबी और बच्चे घेरे रहते है। और कभी कभी हिसाब की बही भी लोग ले आते है। परन्तु कभी कभी ईश्वर की ओर भी मन जाता है। जैसे सन्निपात का रोगी, विकार-ग्रस्त बना ही रहता है परन्तु कभी जब होश मे आता है, तब 'पानी पिऊँगा, पानी पिऊँगा' कहकर चिल्ला उठता है। पर उसे जब तक पानी दो तब तक वह फिर बेहोश हो जाता है। इसीलिए मैने उससे कहा, तुम कर्मी हो। कप्तान ने कहा, 'जी, मुझे तो पूजा आदि के करने मे ही आनन्द आता है। जीवो के लिए कर्म के सिवा और उपाय भी नही है।'

"मैने कहा, 'तो क्या सदा ही कर्म करते रहना होगा? मधुमक्खी तभी तक भन्भन् करती है जब तक वह फूल पर नही बैठ जाती। मधु पीते समय भन्भन् करना छूट जाता है।' कप्तान ने कहा, 'आपकी तरह हम लोग पूजा और कर्म छोड़ थोड़े ही सकते है?'

परन्तु उसकी बात कुछ ठीक नही रहती। कभी तो कहता है, 'यह सब जड़ है' और कभी कहता है, 'सब चैतन्य है।' पर मै कहता हूँ, 'जड़ कहाँ है? सभी कुछ तो चैतन्य है।' "

श्रीरामकृष्ण मास्टर से पूर्ण की बात पूछने लगे।

श्रीरामकृष्ण – पूर्ण को एक बार और देख लूँ तो मेरी व्याकुलता कम हो जाय। कितना चतुर है! – मेरी ओर आकर्षण भी खूब है।

"वह कहता है, 'आपको देखने के लिए मेरे हृदय मे भी न जाने कैसा हुआ करता है।'

(मास्टर से) "तुम्हारे स्कूल से उसके घरवालो ने उसे निकाल लिया, इससे तुम्हारे ऊपर कुछ बात तो न आयेगी?'

मास्टर – अगर वे (विद्यासागर) कहे – 'तुम्हारे लिए उसको स्कूल से निकाल लेना पड़ा' – तो मेरे पास भी कुछ जवाब है।

श्रीरामकृष्ण – क्या कहोगे?

मास्टर – यही कहूँगा कि साधुओ के साथ ईश्वर-चिन्ता होती है, यह कोई बुरा कर्म नही, और आप लोगो ने जो पुस्तक पढ़ाने के लिए दी है, उसी मे है – ईश्वर को हृदय खोलकर प्यार करना चाहिए। (श्रीरामकृष्ण हँसने लगे)

श्रीरामकृष्ण – कप्तान के यहाँ छोटे नरेन्द्र को मैने बुलाया। पूछा, 'तेरा घर कहाँ है? – चल चले।' उसने कहा, 'चलिये।' परन्तु डरता हुआ साथ जा रहा था कि कही बाप को खबर न लग जाय। (सब हँसते है)

(अखिलबाबू के पड़ोसी से) "क्यो जी, तुम बहुत दिनो से नही आये, सात-आठ महीने तो हुए होगे?"

पड़ोसी – जी, एक साल हुआ होगा।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारे साथ एक और आते थे।

पड़ोसी – जी हाँ, नीलमणिबाबू।

श्रीरामकृष्ण – वे सब क्यो नही आते? – एक बार उनसे आने के लिए कहना – उनसे मुलाकात करा देना। (पड़ोसी के साथ के बच्चे को देखकर) यह बच्चा कौन है?

पड़ोसी – यह आसाम का है।

श्रीरामकृष्ण – आसाम कहाँ है? किस ओर है?

द्विज आशुतोष की बात करने लगे। कहा, 'आशुतोष के पिता उसका विवाह करनेवाले है, परन्तु उसकी इच्छा नही है।'

श्रीरामकृष्ण – देखो तो, उसकी इच्छा नही है और बलपूर्वक उसका विवाह किया जाता है।

श्रीरामकृष्ण एक भक्त से बड़े भाई पर भक्ति करने के लिए कह रहे है। कहा –

वड़ा भाई पिता से समान होता है, उसका बड़ा सम्मान करना चाहिए।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा श्रीराधिका-तत्त्व। जन्ममृत्यु-तत्त्व

पण्डितजी बैठे हुए है। वे उत्तर प्रदेश के है।

श्रीरामकृष्ण (हॅसकर, मास्टर से) – भागवत के ये बड़े अच्छे पण्डित है।

मास्टर और भक्तगण एकदृष्टि से पण्डितजी को देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण (पण्डितजी से) – क्यो जी, योगमाया क्या है?

पण्डितजी ने योगमाया की एक तरह की व्याख्या की।

श्रीरामकृष्ण – राधिका को योगमाया क्यो नही कहते?

पण्डितजी ने इस प्रश्न का उत्तर भी एक खास तरह का दिया। तब श्रीरामकृष्ण ने कहा – "राधिका विशुद्ध सत्त्व की थी – वे प्रेममयी थी। योगमाया के भीतर तीनो गुण है, सत्त्व, रज और तम, परन्तु राधिका के भीतर शुद्ध सत्त्व के सिवाय और कुछ न था। (मास्टर से) नरेन्द्र अब श्रीमती को बहुत मानता है। वह कहता है, 'सच्चिदानन्द को प्यार करने की शिक्षा अगर किसी को लेनी है तो राधिका से लेनी चाहिए।'

"सच्चिदानन्द ने स्वयं ही अपना रसास्वादन करने के लिए राधिका की सृष्टि की थी। राधिका सच्चिदानन्द कृष्ण के अंग से निकली थी। 'आधार' सच्चिदानन्द कृष्ण ही है और श्रीमती के रूप मे स्वयं ही 'आधेय' है – अपना रसास्वादन करने के लिए अर्थात् सच्चिदानन्द को प्यार करके आनन्द-सम्भोग करने के लिए।

"इसीलिए वैष्णवो के ग्रन्थ मे है, राधा ने जन्मग्रहण के बाद ऑखे नही खोली थी। यह भाव था कि इन ऑखो से और किसे देखूँ! राधिका को देखने के लिए यशोदा जब कृष्ण को गोद मे लेकर गयी थी, तब उन्होने कृष्ण को देखने के लिए ऑखे खोली थी। कृष्ण ने क्रीडा के बहाने राधिका की ऑखो पर हाथ फेरा था। (नये आये हुए आसाम के लड़के से) तूने देखा है, छोटा-सा बच्चा दूसरो की ऑखो पर हाथ फेरता है?"

पण्डितजी बिदा होने लगे।

पण्डितजी – मै घर जाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण (सस्नेह) – कुछ प्राप्त हुआ?

पण्डितजी – भाव गिरा हुआ है – रोजगार नही चलता।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके पण्डितजी बिदा हुए।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – देखो, विषयी लोगो और बच्चो मे कितना अन्तर है। यह पण्डित दिन-रात रुपया-रुपया कर रहा है। पेट के लिए कलकत्ता आया हुआ है। नही तो घर के आदमियो को भोजन नही मिलता। इसीलिए इसके-उसके दरवाजे दौड़ना पड़ता

है। मन को एकाग्र करके ईश्वर की चिन्ता कब करे? परन्तु लड़को मे कामिनी और कांचन नही है। इच्छा करने से ही ये ईश्वर पर मन लगा सकते है।

"लडके विषयी मनुष्यों का संग पसन्द भी नही करते। राखाल कहता था, 'विषयी आदमी को आते हुए देखकर भय होता है।'

"मुझे जब पहले-पहल यह अवस्था हुई तब विषयी आदमी को आते हुए देखकर कमरे का दरवाजा बन्द कर लेता था।

"कामारपुकुर मे श्रीराम मल्लिक को इतना मै प्यार करता था, परन्तु जब वह यहाँ आया तब उसे छू भी न सका।

"श्रीराम से बचपन मे बड़ा मेल था। दिनरात हम दोनो एक साथ रहते थे। एक साथ सोते थे। तब सोलह-सत्रह साल की उम्र थी। लोग कहते थे, इनमे से अगर एक औरत होता तो साथ ही विवाह भी हो जाता। उसके घर मे हम दोनो खेलते थे। उस समय की सब बाते याद आ रही है। उनके सम्बन्धी पालकी पर चढ़कर आया करते थे, कहार 'हिजोड़ा हिजोड़ा' कहा करते थे।

"श्रीराम को देखने के लिए कितने ही बार मैने बुला भेजा। अब चानक मे उसने दूकान खोली है। उस दिन आया था, यहाँ दो दिन रहा था।

"श्रीराम ने कहा, 'मेरे तो लड़के-बाले नही हुए, भतीजे को पालकर आदमी कर रहा था कि वह भी गुजर गया।' कहते ही कहते श्रीराम ने लम्बी साँस छोड़ी, आँखो मे पानी भर आया। भतीजे के लिए दु:ख करने लगा।

"फिर उसने कहा, 'लड़का नही हुआ था, इसलिए स्त्री का पूरा प्यार उसी भतीजे पर पड़ा था। अब वह शोक से अधीर हो रही है। मै उसे बहुत समझाता हूँ, पगली, अब शोक करने से क्या होगा? तू वाराणसी जायेगी?'

"अपनी स्त्री को वह पागल कहता था। भतीजे के लिए दु:ख करने से वह एकदम dilute हो गया (गल गया)।

"मै उसे छू नही सका। देखा, उसमे कोई माद्दा (तत्त्व) नही है।"

श्रीरामकृष्ण शोक के सम्बन्ध मे यही सब बाते कह रहे है। इधर कमरे के उत्तर ओरवाले दरवाजे के पास वह शोक-विह्वल ब्राह्मणी खड़ी हुई है। ब्राह्मणी विधवा है। उसके एक मात्र लड़की थी। उसका विवाह बहुत बड़े घराने मे हुआ था। उस लड़की के पति राजा की उपाधि पाये हुए है। कलकत्ते मे रहते है, जमीदार है। लड़की जब अपने मायके आती थी, तब साथ सशस्त्र सिपाही पालकी के आगे-पीछे लगे हुए आते थे। माता की छाती उस समय गज भर की हो जाती थी। वह एकलौती लड़की, कुछ दिन हुए, गुजर गयी है।

ब्राह्मणी खड़ी हुई भतीजे के वियोग से राम मल्लिक की क्या दशा थी, सुन रही थी।

कई दिनो से वह लगातार बागबाजार से पागल की तरह श्रीरामकृष्ण के पास दौड़ी हुई आती थी, इसलिए कि अगर कोई उपाय हो जाय – अगर वे इस दुर्जेय शोक के निराकरण की कोई व्यवस्था कर दे। श्रीरामकृष्ण फिर बातचीत करने लगे –

(ब्राह्मणी और भक्तो मे) ''एक आदमी यहाँ आया था। कुछ देर बैठने के बाद कहा, 'जाऊँ, जरा बच्चे का चाँदमुख भी देखूँ।'

''तब मुझसे नही रहा गया। मैने कहा, 'क्या कहा रे, उठ यहाँ से, ईश्वर के चाँदमुख से बढकर बच्चे का चाँदमुख?'

(मास्टर से) ''बात यह है कि ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य। जीव-जगत्, घर-द्वार, लड़के-बच्चे, यह सब बाजीगर का इन्द्रजाल है। बाजीगर डण्डे से ढोल पीटता है और कहता है, 'देख तमाशा मेरा – तू देख तमाशा मेरा।' बस ढक्कन खोला नही कि कुछ पक्षी उसमे से निकलकर आकाश मे उड गये। परन्तु बाजीगर ही सत्य है और सब अनित्य – अभी है, थोडी देर मे गायब।

''कैलास मे शिव बैठे हुए थे। पास ही नन्दी थे। उसी समय एक बहुत बड़ा शब्द हुआ। नन्दी ने पूछा, 'भगवन्, यह कैसी आवाज है?' शिव ने कहा, 'रावण पैदा हुआ है, यह उसी की आवाज है।' कुछ देर बाद फिर एक आवाज आयी। नन्दी ने पूछा, 'यह कैसी आवाज है?' शिव ने हँसकर कहा, 'यह रावण मारा गया।' जन्म और मृत्यु, यह सब इन्द्रजाल-सा है। अभी है, अभी गायब। ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य। पानी ही सत्य है, पानी के बुलबुले अभी हैं, अभी नही – बुलबुले पानी मे ही मिल जाते है, – जिस जल मे उनकी उत्पत्ति होती है, उसी जल मे अन्त मे वे लीन भी हो जाते है।

''ईश्वर महासमुद्र है, जीव बुलबुले, उसी मे पैदा होते है, उसी मे लीन हो जाते है। लड़के-बच्चे एक बडे बुलबुले के साथ मिले हुए कई छोटे छोटे बुलबुले है।

''ईश्वर ही सत्य है। उन पर कैसे भक्ति हो, उन्हे किस तरह प्राप्त किया जाय, इस समय यही चेष्टा करो। शोक करने से क्या होगा?''

सब चुप है। ब्राह्मणी ने कहा, 'तो अब मै जाऊँ?'

श्रीरामकृष्ण (ब्राह्मणी से, सस्नेह) – तुम इस समय जाओगी? धूप बहुत तेज है, क्यो इन लोगो के साथ गाड़ी पर जाना।

आज जेठ की संक्रान्ति है। दिन के तीन-चार बजे का समय होगा। गरमी बड़े जोर की पड़ रही है। एक भक्त श्रीरामकृष्ण के लिए चन्दन का एक नया पंखा लाये है। श्रीरामकृष्ण पंखा पाकर बड़े प्रसन्न हुए, कहा, ''वाह-वाह। ॐ तत् सत् काली!'' यह कहकर पहले देवताओ को पंखा झलने लगे। फिर मास्टर से कह रहे है, 'देखो, कैसी हवा आती है!' मास्टर भी प्रसन्न होकर देख रहे है।

(३)

दास 'मै'। अवतारवाद

बच्चे को साथ लेकर कप्तान आये है। श्रीरामकृष्ण ने किशोरी से कहा, इन्हे सब दिखा लाओ – ठाकुरबाडी आदि।

श्रीरामकृष्ण कप्तान से बातचीत कर रहे हैं। मास्टर, द्विज आदि भक्त जमीन पर बैठे हुए है। दमदम के मास्टर भी आये है। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर उत्तर की ओर मुँह किये बैठे है। कप्तान से उन्होंने तखत के एक ओर अपने सामने बैठने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण – इन लोगो से तुम्हारी बाते कह रहा था। तुममे कितनी भक्ति है, कितनी पूजा करते हो, कितने प्रकार से आरती करते हो, यह सब बतला रहा था।

कप्तान (लज्जित होकर) – मै क्या पूजा और आरती करूँगा? मै क्या हूँ?

श्रीरामकृष्ण – जो 'मै' कामिनी और काचन मे पड़ा हुआ है, उसी 'मै' मे दोष है। मै ईश्वर का दास हूँ, इस 'मै' मे दोष नही। और बालक का 'मै' – बालक किसी गुण के वश नही है, अभी लडाई कर रहा है, देखते-देखते, मेल हो गया। कितने ही यत्न से अभी अभी खेलने का घरौंदा बनाया, फिर बात की बात मे उसे बिगाड डाला। दास 'मै' और बच्चे के 'मै' मे दोष नही है। यह 'मै' 'मै' मे नही गिना जाता, जैसे मिश्री मिठाई मे नही गिनी जाती – दूसरी मिठाई से बीमारी फैलती है, परन्तु मिश्री अम्लनाश करती है – जैसे ओकार की गणना शब्दो मे नही है।

''इस अहं से ही सच्चिदानन्द को प्यार किया जाता है। अहं जाने का है ही नही – इसीलिए दास 'मै' और भक्त का 'मै' है। नही तो आदमी क्या लेकर रहे? गोपियो का प्रेम कितना गहरा था। (कप्तान से) तुम गोपियो की बात कुछ कहो – तुम इतना भागवत पढ़ते हो।''

कप्तान – श्रीकृष्ण वृन्दावन मे थे, कोई ऐश्वर्य नही था, तो भी गोपियाँ उन्हे प्राणो से अधिक प्यार करती थी। इसीलिए श्रीकृष्ण ने कहा था, 'मै कैसे उनका ऋण शोध करूँगा, जिन गोपियो ने मुझे सब कुछ समर्पित कर दिया है – देह, मन, चित्त?'

श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। 'गोविन्द, गोविन्द, गोविन्द' कहकर भावाविष्ट हो रहे है। प्राय: ब्राह्यज्ञान-शून्य है। कप्तान विस्मयावेश मे 'धन्य है, धन्य है' कह रहे है।

[illegible] अन्य भक्तगण श्रीरामकृष्ण की यह अद्भुत प्रेमावस्था देख रहे है। जब [illegible], तब तक वे चुपचाप एकदृष्टि से [illegible] है।

[illegible] बाद?

[illegible]गियों के लिए भी अगम्य है, 'योगिभिरगम्यम्'। आपकी तरह [illegible]अगम्य है, गोपियो के लिए गम्य है। योगियो ने वर्षो तक योग-साधना

करके जिन्हें नहीं पाया, गोपियों ने अनायास ही उन्हें प्राप्त कर लिया।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – गोपियों के पास भोजन-पान, हँसना-रोना, क्रीड़ा-कौतुक, यह सब हो चुका।

एक भक्त ने कहा, 'श्रीयुत बंकिम ने कृष्ण-चरित्र लिखा है।'

श्रीरामकृष्ण – बंकिम कृष्ण को मानता है, श्रीमती को नही मानता।

कप्तान – वे शायद श्रीकृष्ण-लीला नहीं मानते।

श्रीरामकृष्ण – सुना, वह कहता है, काम आदि की जरूरत है!

दमदम के मास्टर – 'नवजीवन' में बंकिम ने लिखा है, धर्म की आवश्यकता शारीरिक, मानसिक और अध्यात्मिक प्रवृत्तियों की स्फूर्ति के लिए है।

कप्तान – 'कामादि की आवश्यकता है' – यह कहते है, फिर भी लीला नही मानते! ईश्वर मनुष्य के रूप में वृन्दावन मे आये थे, पर राधा और कृष्ण की लीला हुई थी यह नहीं मानते?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – ये सब बातें संवाद-पत्रो मे नही है, फिर किस तरह मान ली जायँ?

"एक ने अपने मित्र से आकर कहा, 'देखो जी, कल उस मुहल्ले से मै जा रहा था, उसी समय देखा, वह मकान भरभराकर गिर गया।' मित्र ने कहा, 'जरा ठहरो, अखबार देखूँ।' घर के भरभराकर गिरने की बात अखबार में तो कही कुछ न थी। तब उस आदमी ने कहा, 'क्यों जी, अखबार में तो कहीं कुछ नही लिखा। तुम्हारा कहना सच नही दिखता।' उस आदमी ने कहा, 'मैं स्वयं देखकर आ रहा हूँ।' उसने कहा, 'यह हो सकता है, परन्तु अखबार में यह बात नहीं लिखी, इसलिए लाचार होकर मुझे इस पर विश्वास नही आता।' ईश्वर आदमी होकर लीला करते है, यह बात कैसे वे लोग मानेंगे? यह बात उनकी अंग्रेजी शिक्षा के घेरे में नहीं जो है। पूर्ण अवतार का समझाना बहुत मुश्किल है, क्यो जी? साढ़े तीन हाथ के भीतर अनन्त का समा जाना?"

कप्तान – 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' कहते समय पूर्ण और अंश इस तरह कहना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण – पूर्ण और अंश, जैसे अग्नि और उसका स्फुलिंग। अवतार भक्तों के लिए हैं – ज्ञानी के लिए नहीं। अध्यात्मरामायण में है, 'हे राम! तुम्ही व्याप्य हो, तुम्हीं व्यापक हो' – 'वाच्यवाचकभेदेन त्वमेव परमेश्वर।'

कप्तान – वाच्य-वाचक अर्थात् व्याप्य-व्यापक।

श्रीरामकृष्ण – व्यापक अर्थात जैसे एक छोटासा रूप – जैसे अवतार आदमी का रूप धारण करते हैं।

(४)

अहंकार ही विनाश का कारण तथा ईश्वर-लाभ में विघ्न है

सब बैठे हुए है। कप्तान और भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे है। इसी समय ब्राह्मसमाज के जयगोपाल सेन और त्रैलोक्य आये, प्रणाम करके उन्होने आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए त्रैलोक्य की ओर देखकर बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – अहंकार है, इसीलिए तो ईश्वर के दर्शन नही होते। ईश्वर के घर के दरवाजे के रास्ते मे अहंकाररूपी ठूँठ पड़ा हुआ है। इस ठूँठ के उस पार गये बिना कमरे मे प्रवेश नही किया जा सकता।

"एक आदमी प्रेतसिद्ध हो गया था। सिद्ध होकर उसने पुकारा नही कि भूत आ गया। आकर कहा, 'बतलाओ, कौनसा काम करना होगा? अगर नही कह सकोगे तो तुम्हारी गरदन मरोड दूँगा।' उस आदमी ने, जितने काम थे, एक एक करके सब करा लिये। फिर उसे कोई नया काम ही नही सूझता था। प्रेत ने कहा, 'अब तुम्हारी गरदन मरोडता हूँ।' उसने कहा, 'जरा ठहरो, अभी आया।' इतना कहकर वह अपने गुरु के पास गया और उनसे कहा, 'महाराज, मैं बडी विपत्ति मे हूँ, और सब हाल कह सुनाया। तब गुरु ने कहा, 'तू एक काम कर, उसे एक छल्लेदार बाल सीधा करने के लिए दे।' प्रेत दिन-रात वही काम करने लगा। पर छल्लेदार बाल भी कभी सीधा होता है? ज्यो का त्यो टेढा बना रहा। इसी तरह अहंकार भी देखते ही देखते गया और देखते ही देखते फिर आ गया।

"अहंकार का त्याग हुए बिना ईश्वर की कृपा नही होती।

"जिस मकान में कोई काम-काज (ब्राह्मण-भोजन, विवाह आदि) रहता है तो जब तक भाण्डार मे कोई भण्डारी बना रहता है, तब तक मालिक का चक्कर उधर नही लगता। पर जब भण्डारी स्वयं भाण्डार छोड़कर चला जाता है, तब मालिक उस भाण्डार-घर मे ताला लगा देता है और उसका इन्तजाम खुद करने लगता है।

"ईश्वर मानो बच्चे का वली - बच्चा अपनी जायदाद खुद नही सम्हाल सकता। राजा उसका भार लेते है। अहंकार के गये बिना ईश्वर भार नही लेते।

"वैकुण्ठ मे श्रीलक्ष्मी और नारायण बैठे हुए थे। एकाएक नारायण उठकर खड़े हो गये। श्रीलक्ष्मी चरणसेवा कर रही थी। उन्होने पूछा, 'महाराज, कहाँ चले?' नारायण ने कहा, 'मेरा एक भक्त बड़ी विपत्ति मे पड़ गया है, उसकी रक्षा के लिए जा रहा हूँ।' यह कहकर नारायण चले गये। परन्तु उसी समय फिर आ गये। लक्ष्मी ने पूछा, 'भगवन्, इतनी जल्दी कैसे आ गये?' नारायण ने हँसकर कहा, 'प्रेम से विह्वल वह भक्त रास्ते से चला जा रहा था। रास्ते मे धोबियो ने सूखने के लिए कपड़े फैलाये थे। वह भक्त उन

कपडो के ऊपर से जा रहा था, यह देखकर लाठी लेकर धोबी लोग मारने के लिए चले, इसीलिए मै गया था।' श्रीलक्ष्मी ने पूछा, 'तो इतनी जल्दी फिर कैसे आ गये?' नारायण ने हँसते हुए कहा, 'जाकर मैने देखा, उस भक्त ने धोबियो को मारने के लिए खुद ही पत्थर उठा लिया है। (सब हँसते है) इसीलिए मै फिर नही गया।'

"केशव सेन से मैने कहा था, 'अहं' का त्याग करना होगा। इस पर केशव ने कहा, 'तो महाराज, दल फिर कैसे रह सकता है?'

"मैने कहा, यह तुम्हारी कैसी बुद्धि है, – तुम 'कच्चे मै' का त्याग करो, – जो 'मै' कामिनी और कांचन की ओर ले जाता है। परन्तु मै 'पक्के मै' – 'भक्त के मै' – 'दास के मै' का त्याग करने के लिए नही कहता। मै ईश्वर का दास हूँ, – ईश्वर की सन्तान हूँ, इसका नाम है 'पक्का मै'। इसमे कोई दोष नही।"

त्रैलोक्य – अहंकार का जाना बहुत कठिन है। लोग सोचते है, अहंकार मुझमे नही है।

श्रीरामकृष्ण – कही अहंकार न हो जाय, इसलिए गौरी 'मै' का प्रयोग ही नही करता था – 'ये' कहता था। मै भी उसकी देखादेखी 'ये' कहने लगा, 'मैने खाया है' यह न कहकर कहता था, 'इसने खाया है।' यह देखकर एक दिन मथुरबाबू ने कहा, 'यह क्या है बाबा – तुम ऐसा क्यो कहते हो? यह सब उन लोगो को कहने दो, उनमे अहंकार है। तुम्हारे कुछ अहंकार थोडे ही है, तुम्हे इस तरह बोलने की कोई जरूरत नही।'

"केशव से मैने कहा, 'मै' जाने का तो है ही नही, अतएव उसे दासभाव से पड़ा रहने दो – जैसे दास पडा रहता है। प्रह्लाद दो भावो से रहते थे। कभी 'सोऽहम्' का अनुभव करते थे – तुम्ही 'मै हो – मै ही 'तुम' हूँ। फिर जब अहं-बुद्धि आती थी, तब देखते थे, मै दास हूँ – तुम प्रभु हो। एक बार पक्का सोऽहम् अगर हो गया, तो फिर दासभाव से रहना आसान हो जाता है – मै तुम्हारा दास हूँ इस भाव से।

(कप्तान से) "ब्रह्मज्ञान होने पर कुछ लक्षणो से समझ मे आ जाता है। श्रीमद्भागवत मे ज्ञानी की चार अवस्थाओ की बाते लिखी है – पहली बालवत्, दूसरी जडवत्, तीसरी उन्मत्तवत्, चौथी पिशाचवत्। पॉच साल के लडके जैसी अवस्था हो जाती है। फिर कभी वह पागल की तरह व्यवहार करता है।

"कभी जड़ की तरह रहता है। इस अवस्था मे वह कर्म नही कर सकता, कर्म छूट जाते है। परन्तु अगर कहो कि जनक आदि ने तो कर्म किया था, तो असल बात यह है कि उस समय के आदमी कर्मचारियो पर भार देकर निश्चिन्त रहते थे, और उस समय के आदमी भी बडे विश्वासी होते थे।"

श्रीरामकृष्ण कर्मत्याग की बाते करने लगे। और जिनकी काम पर आसक्ति है, उन्हे अनासक्त होकर कर्म करने का उपदेश देने लगे।

श्रीरामकृष्ण – ज्ञान के होने पर मनुष्य अधिक कर्म नहीं कर सकता।

त्रैलोक्य – क्यों? पवहारी बाबा इतने योगी तो हैं, परन्तु लोगों के झगड़े और विवादों का फैसला कर दिया करते हैं – यहाँ तक कि मुकदमे का भी फैसला कर देते हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह ठीक है, दुर्गाचरण डाक्टर इतना शराबी तो है, परन्तु काम के समय उसके होश दुरुस्त ही रहते हैं – चिकित्सा के समय किसी तरह की भूल नही होने पाती। भक्ति प्राप्त करके कर्म किया जाय तो कोई दोष नहीं होता। परन्तु है यह बड़ी कठिन बात, बड़ी तपस्या चाहिए।

"ईश्वर ही सब कुछ कर रहे हैं, मैं यन्त्र-स्वरूप हूँ। कालीमन्दिर के सामने सिक्ख लोग कह रहे थे, 'ईश्वर दयामय हैं।' मैंने पूछा, 'दया किन पर करते हैं?

"सिक्खों ने कहा, 'महाराज, हम सब पर उनकी दया है।'

"मैंने कहा, 'सब उनके लड़के हैं तो लड़कों पर फिर दया कैसी? वे अपने लड़कों की देखरेख कर रहे हैं, वे नही देखेगे तो क्या अड़ोसी-पड़ोसी आकर देखेंगे?' अच्छा देखो, जो लोग ईश्वर को दयामय कहते हैं वे यह नहीं समझते कि वे किसी दूसरे के लड़के नहीं, ईश्वर की ही सन्तान हैं।"

कप्तान – जी हाँ, ठीक है, पर वे ईश्वर को अपना नहीं मानते।

श्रीरामकृष्ण – तो क्या हम ईश्वर को दयामय न कहें? अवश्य कहना चाहिए – जब तक हम साधना की अवस्था में है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर अपने माँ-बाप पर जो भाव रहता है, वही उन पर भी हो जाता है। जब तक ईश्वर-लाभ नहीं होता, तब तक जान पड़ता है, हम बहुत दूर के आदमी हैं, – दूसरे के बच्चे हैं।

"साधना की अवस्था में उनसे सब कुछ कहना चाहिए। हाजरा ने एक दिन नरेन्द्र से कहा था, 'ईश्वर अनन्त हैं। उनका ऐश्वर्य अनन्त है। वे क्या कभी सन्देश और केले खाने लगेंगे? या गाना सुनेंगे? यह सब मन की भूल है।'

"सुनते ही नरेन्द्र मानो दस हाथ धँस गया। तब मैंने हाजरा से कहा, 'तुम कैसे पाजी हो? अगर बाल-भक्तों से ऐसी बात कहोगे तो वे ठहरेंगे कहाँ?' भक्ति के जाने पर आदमी फिर क्या लेकर रहे? उनका ऐश्वर्य अनन्त है, फिर भी वे भक्ताधीन हैं, बड़े आदमी का दरवान बाबुओं की सभा में एक ओर खड़ा हुआ है, हाथ में एक चीज है – कपड़े से ढकी हुई, वह बड़े संकोच भाव से खड़ा हुआ है। बाबू ने पूछा, 'क्यों दरवान, तुम्हारे हाथ में यह क्या है?' दरवान ने संकोच के साथ एक शरीफा निकालकर बाबू के सामने रखा – उसकी इच्छा थी कि बाबू उसे खायँ। दरवान का भक्तिभाव देखकर बाबू ने शरीफा बड़े आदर के साथ ले लिया, और कहा, 'वाह! बड़ा अच्छा शरीफा है। तुम कहाँ से इतना कष्ट करके इसे लाये?'

"वे भक्ताधीन हैं। दुर्योधन ने इतनी खातिर की और कहा, 'महाराज, यहीं जलपान

कीजिये।' परन्तु श्रीठाकुरजी विदुर की कुटी पर चले गये। वे भक्तवत्सल है, विदुर का शाकान्न बड़े प्रेम से अमृत समझकर खाया।

"पूर्ण ज्ञानी का एक लक्षण और है, – पिशाचवत् – न खानेपीनेका विचार है, न शुचिता, न अशुचिता का। पूर्ण ज्ञानी और पूर्ण मूर्ख, दोनो के बाहरी लक्षण एक ही तरह के हैं। पूर्ण ज्ञानी को देखो, गंगा नहाकर कभी मन्त्र जपता ही नही; ठाकुर-पूजा करते समय सब फूल एक साथ ठाकुरजी के पैरों पर चढ़ा दिये और चला आया, कोई तन्त्र-मन्त्र नही जपा।

"जितने दिन संसार मे भोग करने की इच्छा रहती है, उतने दिनो तक मनुष्य कर्मो का त्याग नहीं कर सकता। जब तक भोग की आशा है, तब तक कर्म है।

"एक पक्षी जहाज के मस्तूल पर अन्यमनस्क बैठा था। जहाज गंगागर्भ मे था। धीरे-धीरे महासमुद्र मे आ गया तब पक्षी को होश आया, उसने चारो ओर देखा, कही भी किनारा दिखलायी नही पड़ता था। तब किनारे की खोज करने के लिए वह उत्तर की ओर उड़ा। बहुत दूर जाकर थक गया। फिर भी किनारा उसे नही मिला। तब क्या करे, लौटकर फिर मस्तूल पर आकर बैठा। कुछ देर के बाद, वह पक्षी फिर उड़ा, इस बार पूर्व की ओर गया। उस तरफ भी उसे कहीं छोर न मिला। चारों ओर समुद्र ही समुद्र था। तब बहुत ही थककर फिर जहाज के मस्तूल पर आ बैठा। फिर कुछ विश्राम करके दक्षिण ओर गया, पश्चिम ओर गया। पर उसने देखा कि कहीं ओर-छोर ही नही है। तब लौटकर वह फिर उसी मस्तूल पर बैठ गया। इसके बाद फिर नही उड़ा। निश्चेष्ट होकर बैठा रहा। तब मन मे किसी प्रकार की चंचलता या अशान्ति नहीं रही। निश्चिन्त हो गया, फिर कोई चेष्टा भी नही रही।"

कप्तान – वाह! कैसा दृष्टान्त है!

श्रीरामकृष्ण – संसारी आदमी सुख के लिए जब चारों ओर भटके फिरते हैं, और नही पाते, तो अन्त में थक जाते है। जब कामिनी और कांचन पर आसक्त होकर केवल दु:ख ही दु:ख उनके हाथ लगता है, तभी उनमें वैराग्य आता है – तभी त्याग का भाव पैदा होता है। बहुतेरे ऐसे हैं जो बिना भोग किये त्याग नही कर सकते। कुटीचक और बहूदक, ये दो होते है। साधकों में भी बहुतेरे ऐसे हैं, जो अनेक तीर्थो की यात्रा किया करते है। एक जगह पर स्थिर होकर नहीं बैठ सकते। बहुतसे तीर्थों का उदक अर्थात् पानी पीते हैं। जब घूमते हुए उनका क्षोभ मिट जाता है तब किसी एक जगह कुटी बनाकर स्थिर हो जाते है और निश्चिन्त तथा चेष्टाशून्य होकर परमात्मा का चिन्तन किया करते है।

"परन्तु संसार में कोई भोग भी क्या करेगा? – कामिनी और कांचन का भोग? वह तो क्षणिक आनन्द है। अभी है, अभी नही।

"प्राय: मेघ छाये रहते हैं, वर्षा लगी हुई है; सूर्य नही दीख पड़ता। दु:ख का भाग

ही अधिक है। कामिनी-कांचनरूपी मेघ सूर्य को देखने नही देता।

"कोई कोई मुझसे पूछते है, 'महाराज, ईश्वर ने क्यो इस तरह के ससार की सृष्टि की? हम लोगो के लिए क्या कोई उपाय नही है?'

(५)

उपाय - व्याकुलता। त्याग।

"मै कहता हूँ, उपाय है क्यो नही? उनकी शरण मे जाओ और व्याकुल होकर प्रार्थना करो, ताकि अनुकूल वायु चलने लगे, जिससे शुभ योग आ जायँ। व्याकुल होकर पुकारोगे तो वे अवश्य सुनेगे।

"एक के लडके का अब-तब हो रहा था। वह आदमी व्याकुल होकर इधर-उधर उपाय पूछता फिरता था। एक ने कहा, 'तुम अगर एक उपाय कर सको तो लडका अच्छा हो जायेगा। अगर स्वाति नक्षत्र का पानी मुर्दे की खोपडी पर गिरे और उसी मे रुक जाय, फिर अगर एक मेढक उस पानी को पीने के लिए बढे और साँप उसे खदेडे, खदेडकर पकडते समय मेढक उछलकर उस खोपडी को पार कर जाय और साँप का विष उसी खोपडी मे गिर जाय, और वह विषेला पानी अगर रोगी को थोडासा पिला सको, तो वह अच्छा हो सकता है।' वह आदमी उसी समय स्वाति नक्षत्र मे उस दवा की तलाश के लिए निकला। उसी समय पानी बरसना भी शुरू हो गया। तब वह व्याकुल होकर ईश्वर से कहने लगा, 'भगवन्, अब मुर्दे की खोपडी भी कही से ला दो।' खोजते हुए उसे मुर्दे की खोपडी भी मिल गयी। उसमे स्वाति नक्षत्र का पानी भी पडा हुआ था। तब वह प्रार्थना करके कहने लगा, 'जय हो तुम्हारी भगवन्, अब और जो कुछ रह गया है वह भी सब जुटा दो - मेढक और साँप।' उसकी जैसी व्याकुलता थी, वैसी ही शीघ्रता से सब सामान भी इकट्ठे होते गये। देखते ही देखते एक साँप मेढक का पीछा करते हुए आने लगा। और काटते समय उसका विष भी उसी खोपडी मे गिर गया।

"ईश्वर की शरण मे जाकर, उन्हे व्याकुल होकर पुकारने पर वे उस पुकार पर अवश्य ही ध्यान देगे, – सब सुयोग वे स्वयं जुटा देगे।"

कप्तान – कैसा सुन्दर दृष्टान्त है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, वे स्वय सब सुयोग जुटा देते है। कभी ऐसा भी होता है कि विवाह नही हुआ, सब मन ईश्वर पर चला गया। कभी यह होता है कि भाई रोजगार करते है, या एक लडका तैयार हो जाता है, तो फिर उस व्यक्ति को स्वयं संसार का काम नही सम्हालना पडता, तब वह अनायास ही सोलहो आना मन ईश्वर को समर्पित कर सकता है। परन्तु बात यह है कि कामिनी और कांचन का त्याग हुए बिना कही कुछ नही होता। त्याग होने पर ही अज्ञान और अविद्या का नाश होता है। आतशी शीशे पर सूर्य की किरणो

के पड़ने पर कितनी चीजे जल जाती है, परन्तु कमरे के भीतर छाया है, वहाँ आतशी शीशे के ले जाने पर यह बात नही होती। घर छोड़कर बाहर निकलकर खड़े होना चाहिए।

"परन्तु ज्ञान-लाभ के बाद कोई कोई संसार मे रहते भी है। वे घर और बाहर दोनो देखते है। ज्ञान का प्रकाश संसार पर पड़ता है, इसीलिए वे भला-बुरा, नित्य-अनित्य, सब उसके प्रकाश मे देख सकते है।

"जो अज्ञानी है, ईश्वर को नही मानते और संसार मे रहते है उनका रहना मिट्टी के घरो मे ही रहने के समान है। क्षीण प्रकाश से वे घर का भीतरी हिस्सा ही देखते है। परन्तु जिन्होने ज्ञान-लाभ कर लिया है, ईश्वर को जान लिया है, और फिर ससार मे रहते है, वे मानो शीशे के मकान मे रहते है। वे घर के भीतर भी देखते है और बाहर भी। ज्ञान-सूर्य का प्रकाश घर के भीतर खूब प्रवेश करता है। वह आदमी घर के भीतर की चीजे बहुत ही स्पष्ट देखता है – कौनसी चीज अच्छी है, कौन बुरी, क्या नित्य है और क्या अनित्य, यह सब वह स्पष्ट रीति से देख लेता है।

"ईश्वर ही कर्ता है, और सब उनके यन्त्र की तरह है।

"इसीलिए ज्ञानी के लिए अहंकार करने की जगह नही है।

जिसने महिम्न-स्तव लिखा था, उसे अहंकार हो गया था। शिव के नन्दी बैल ने जब दाँत दिखलाये तब उसका अहंकार गया था। उसने देखा, एक एक दाँत उसके स्तव का एक एक मन्त्र था। इसका अर्थ क्या है, जानते हो? ये सब मन्त्र अनादिकाल मे है, तुमने इनका उद्धार मात्र किया है।

"गुरुआई करना अच्छा नही। ईश्वर का आदेश पाये बिना कोई आचार्य नही हो सकता। जो स्वयं कहता है, मै गुरु हूँ, उसकी बुद्धि मे नीचता है। तराजू तुमने देखा है न? जिधर हलका होता है, उधर ही का पलड़ा उठ जाता है। जो आदमी खुद ऊँचा होना चाहता है, वह हलका है। सभी गुरु बनना चाहते है! – शिष्य कही खोजने पर भी नही मिलता।"

त्रैलोक्य छोटे तखत के उत्तर ओर बैठे हुए है। त्रैलोक्य गाना गायेगे। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, 'वाह! तुम्हारा गाना कितना सुन्दर होता है!' त्रैलोक्य तानपूरा लेकर गा रहे हैं –

गाना – तुमसे हमने दिल लगाया, जो कुछ है सो तू ही है।

गाना – तुम मेरे सर्वस्व हो – प्राणाधार हो – सार वस्तु के सार भाग हो।

गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण भाव मे मग्न हो रहे है। कह रहे है – 'वाह! तुम्ही सब कुछ हो – वाह!!'

गाना समाप्त हो गया। छः बज गये। श्रीरामकृष्ण हाथ-मुँह धोने के लिए झाऊतल्ले की ओर जा रहे है। साथ मे मास्टर है।

श्रीरामकृष्ण हँस-हँसकर बातें करते हुए जा रहे है। एकाएक मास्टर से पूछा, "क्यो जी, तुम लोगों ने खाया नही? और उन लोगों ने भी नहीं खाया?"

आज सन्ध्या के बाद श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ता जाने का सोचा है। झाऊतल्ले से लौटते समय मास्टर से कह रहे हैं – 'परन्तु किसकी गाड़ी में जाऊँ?'

शाम हो गयी। श्रीरामकृष्ण के कमरे मे दिया जलाया गया और धूना दिया जा रहा हैं। कालीमन्दिर मे सब जगह दिये जल गये। शहनाई बज रही है। मन्दिरो मे आरती होगी।

तखत पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण नाम-कीर्तन करके माँ का ध्यान कर रहे है। आरती हो गयी। कुछ देर बाद कमरे में श्रीरामकृष्ण इधर-उधर टहल रहे हैं। बीच-बीच में भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं, और कलकत्ता जाने के लिए मास्टर से परामर्श कर रहे है।

इतने मे ही नरेन्द्र आये। साथ शरद तथा और भी दो-एक लड़के थे। उन लोगों ने आते ही भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

नरेन्द्र को देखकर श्रीरामकृष्ण का स्नेह उमड़ चला। जिस तरह छोटे बच्चे को प्यार किया जाता है, श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के मुख पर हाथ फेरकर उसी तरह प्यार करने लगे। स्नेहपूर्ण स्वरों मे कहा – तू आ गया?

कमरे के भीतर श्रीरामकृष्ण पश्चिम की ओर मुँह करके खड़े हुए है। नरेन्द्र तथा अन्य लड़के श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके पूर्व की ओर मुँह करके उनके सामने वार्तालाप कर रहे है। श्रीरामकृष्ण मास्टर की ओर मुँह फेरकर कह रहे है, "नरेन्द्र आया है तो अब कैसे जाना होगा? आदमी भेजकर उसे बुला लिया है। अब कैसे जाना होगा? तुम क्या कहते हो?"

मास्टर – जैसी आपकी आज्ञा, चाहे तो आज रहने दिया जाय।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, कल चला जायेगा नाव से या गाड़ी से। (दूसरे भक्तो से) तुम आज जाओ – रात हो गयी है।

भक्त एक एक करके प्रणाम कर बिदा हुए।

□□□

परिच्छेद ११७

रथ-यात्रा के दिन बलराम के मकान में

(१)

पूर्ण, छोटे नरेन्द्र, गोपाल की माँ

श्रीरामकृष्ण बलराम के बैठकखाने में भक्तो के साथ बैठे हुए है। आज आषाढ़ की शुक्ला प्रतिपदा है, सोमवार, जुलाई १८८५, सबेरे ९ बजे का समय होगा।

कल रथ-यात्रा है। रथ-यात्रा के उपलक्ष्य में बलराम ने श्रीरामकृष्ण को आमन्त्रित किया है। उनके घर में श्रीजगन्नाथजी की नित्य सेवा हुआ करती है। एक छोटासा रथ भी है। रथ-यात्रा के दिन रथ बाहर के बरामदे में चलाया जायेगा।

श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ बातचीत कर रहे हैं। पास ही नारायण, तेजचन्द्र तथा अन्य दूसरे भक्त भी है। पूर्ण के सम्बन्ध मे बातचीत हो रही है। पूर्ण की उम्र पन्द्रह साल की होगी। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखने के लिए अत्यन्त उत्सुक हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – अच्छा, वह किस रास्ते से आकर मिलेगा? द्विज और पूर्ण के मिला देने का भार तुम्हीं पर रहा।

"एक ही प्रकृति तथा एक ही उम्र के आदमियो को मै मिला दिया करता हूँ। इसका एक विशेष अर्थ है। इससे दोनों की उन्नति होती है। पूर्ण मे कैसा अनुराग है, तुमने देखा?"

मास्टर – जी हॉ, मैं ट्राम पर जा रहा था, छत से मुझे देखकर दौड़ा हुआ आया और व्याकुल होकर वहीं से उसने नमस्कार किया।

श्रीरामकृष्ण (अश्रूपूर्ण नेत्रों से) – अहाहा! मतलब यह कि तुमने परमार्थ-लाभ के लिए उसका मेरे साथ संयोग करा दिया है। ईश्वर के लिए व्याकुल हुए बिना ऐसा नही होता।

"नरेन्द्र, छोटा नरेन्द्र और पूर्ण, इन तीनों की सत्ता पुरुष-सत्ता है। भवनाथ मे यह बात नहीं – उसके स्वभाव में जनानापन है, प्रकृति-भाव है।

"पूर्ण की जैसी अवस्था है, इससे बहुत सम्भव है, उसकी देह का नाश बहुत जल्द हो जाय – इस विचार से कि ईश्वर तो मिल गये, अब किसलिए यहाँ रहा जाय? – या

यह भी सम्भव है कि थोड़े ही दिनो मे वह बडे जोरो की बाढ़ बढ़ेगा।

"उसका है देव-स्वभाव – देवता की प्रकृति। इसमे लोकभय कम रहता है। अगर गले में माला डाल दी जाय या देह मे चन्दन लगा दिया जाय अथवा धूप-धूना जलाया जाय, तो उस प्रकृतिवाले को समाधि हो जाती है। – उसे जान पड़ता है, हृदय मे नारायण है – वे ही देहधारण करके आये हुए है। मुझे इसका ज्ञान हो गया है।

"दक्षिणेश्वर मे पहले-पहल जब मेरी यह अवस्था हुई, तब कुछ दिनो के बाद एक भले ब्राह्मण-घर की लड़की आयी थी। वह बडी सुलक्षणी थी। ज्योही उसके गले मे माला डाली और धूप-धूना दिया, त्योही वह समाधिमग्न हो गयी। कुछ देर बाद उसे आनन्द मिलने लगा – और आँखो से अश्रुधारा बह चली। तब मैने प्रणाम करके पूछा, 'माँ, क्या मुझे भी लाभ होगा?' उसने कहा, 'हाँ।'

"पूर्ण को एक बार और देखने की इच्छा है। परन्तु देखने की सुविधा कहाँ?

"जान पड़ता है कला है। कैसा आश्चर्यजनक। केवल अंश नही, कला है।

"कितना चतुर है! – सुना है, लिखने-पढ़ने मे भी बड़ा तेज है। – तब तो मेरा अन्दाजा पूरा उतर गया।

"तपस्या के प्रभाव से नारायण भी सन्तान होकर जन्म लेते है। कामारपुकुर के रास्ते मे एक तालाब पडता है, नाम है रणजित राय का तालाब। रणजित राय के यहाँ भगवती ने कन्या होकर जन्म लिया था। अब भी चैत्र के महीने मे वहाँ मेला लगता है। जाने की मेरी बड़ी इच्छा होती है, परन्तु अब नही जाया जाता।

"रणजित राय वहाँ का जमीदार था। तपस्या के प्रभाव से उसने भगवती को कन्या के रूप मे पाया था। कन्या पर उसका बड़ा स्नेह था। उसी स्नेह के कारण वह अपने पिता का संग नही छोडती थी। एक दिन रणजित अपनी जमीदारी का काम कर रहा था, – फुरसत नही थी। लड़की, बच्चो का स्वभाव जैसा होता है, बार बार पूछ रही थी – 'बाबूजी, यह क्या है? – वह क्या है?' पिता ने बड़े मधुर स्वर से कहा, – 'बेटी, अभी जाओ, बड़ा काम है।' पर लड़की वहाँ से किसी तरह नही टली। अन्त मे ध्यानरहित हो उसके बाप ने कहा, 'तू यहाँ से दूर हो जा।' कन्या वहाँ से चली आयी। उसी समय एक शंख की चूड़ियाँ बेचनेवाला वहाँ से जा रहा था। उसे बुलाकर उसने शंख की चूड़ियाँ पहनी। दाम देने की बात पर उसने कहा, 'घर की अमुक अलमारी की बगल मे रुपये रखे है, माँग लेना।' और यह कहकर वहाँ से चली गयी, फिर नही दीख पड़ी। उधर घर मे चूड़ीवाला पुकार रहा था। तब लड़की को घर मे न देख, सब इधर-उधर दौड़ पड़े। रणजित राय ने खोज करने के लिए जगह-जगह आदमी भेजे। चुड़ीवाले का रुपया उसी जगह मिला। रणजित राय रोते हुए घूम रहे थे, इतने मे ही किसी ने कहा, 'तालाब मे कुछ दीख पड़ता है।' लोगो ने उसके किनारे पर खड़े होकर देखा, एक हाथ जिसमे वही शंख

की चूड़ियाँ थी, पानी के ऊपर उठा हुआ था। फिर वह हाथ भी न दीख पड़ा। अब भी मेले के समय भगवती की पूजा होती है, – वारुणी के दिन। (मास्टर से) यह सब सत्य है।''

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – नरेन्द्र अब यह सब मानता है।

''पूर्ण का जन्म विष्णु के अंश से है। मन ही मन बिल्व-पत्र से मैंने पूजा की – पूजा ठीक न हुई, तब चन्दन और तुलसीदल लिया। तब पूजा ठीक हुई।

''वे अनेक रूपो से दर्शन देते हैं। कभी नररूप से, कभी चिन्मय ईश्वर के रूप से। रूप मानना चाहिए – क्यों जी?''

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – कामारहाटी की ब्राह्मणी (गोपाल की माँ) तरह तरह के रूप देखती है, गंगा के किनारे, एक निर्जन कुटिया में अकेली रहती है और जप किया करती है। गोपाल के पास सोती है। (कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण चौंके) कल्पना में नहीं, साक्षात्। उसने देखा, गोपाल के हाथ लाल हो रहे हैं! गोपाल उसके साथ साथ घूमते हैं! – उसका दूध पीते हैं! – बातचीत करते है! नरेन्द्र रोने लगा!

''पहले मै भी बहुत कुछ देखा करता था। इस समय भाव मे उतना दर्शन नहीं होता। अब प्रकृति-भाव घट रहा है। पुरुष-भाव आ रहा है। इसीलिए अन्तर में ही भाव रहता है, बाहर उतना प्रकाश नहीं हो पाता।

''छोटे नरेन्द्र का पुरुष-भाव है, – इसीलिए मन लीन हो जाया करता है। भावादि नहीं होते। नित्यगोपाल का प्रकृति-भाव है; इसीलिए टेढ़ा-मेढ़ा बना रहता है – भावावेश में शरीर लाल हो जाता है।''

(२)

कामिनी-कांचन-त्याग

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – अच्छा, आदमियों का त्याग तिल तिल करके होता है, परन्तु इनकी (लड़कों की) कैसी अवस्था है?

''विनोद ने कहा, 'स्त्री के साथ सोना पड़ता है, मन को जरा भी नहीं रुचता।'

''देखो, संग हो या न हो, एक साथ सोना भी बुरा है। देह का संघर्ष – देह की गरमी तो लगती ही है।

''द्विज की कैसी अवस्था है! बस देह हिलाता हुआ मेरी ओर देखता रहता है! यह क्या कम बात है? सब मन सिमटकर अगर मुझमें आ गया तो समझो सब कुछ हो गया।

''मैं और क्या हूँ? – वे ही हैं। मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री। इसके (मेरे) भीतर ईश्वर की सत्ता है, इसीलिए आकर्षण इतना बढ़ रहा है, लोग खिंचे आते हैं। छूने से ही हो जाता

है। वह आकर्षण ईश्वर का ही आकर्षण है।

"तारक (बेलघर के) वहाँ से (दक्षिणेश्वर से) घर लौट रहा था। मैने देखा, इसके (मेरे) भीतर से शिखा की तरह जलता हुआ कुछ निकल गया – उसके पीछे पीछे!

"कुछ दिनों बाद तारक फिर आया। तब समाधिस्थ होकर उसकी छाती पर पैर रख दिया – उन्होंने, जो इसके (मेरे) भीतर हैं।

"अच्छा, इन लड़कों की तरह क्या और लड़के है?"

मास्टर – मोहित अच्छा है। आपके पास दो-एक बार आया था। दो परीक्षाओ के लिए तैयारी कर रहा है और ईश्वर पर अनुराग भी है।

श्रीरामकृष्ण – यह हो सकता है, परन्तु इतना ऊंचा स्थान उसका नही है। शरीर के लक्षण उतने अच्छे नही है – मुँह चिपटा है।

"इसका स्थान ऊँचा है। परन्तु शरीर-धारण करने से ही आफतो मे पड़ना है। और शाप रहा तब तो सात बार जन्म लेना ही होगा। बड़ी सावधानी से रहना पड़ता है। वासनाओं के रहने से ही शरीर-धारण होता है।"

एक भक्त – जो अवतार हैं और देहधारण करके आये है, उनमें कौनसी वासना है?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – मैंने देखा है, मेरी सब वासनाएँ नही गयी। एक साधु का शाल देखकर मेरी इच्छा हुई थी कि मै भी इस तरह का शाल ओढ़ूं। अब भी है। कौन जाने, एक बार कही फिर न आना पड़े।

बलराम (सहास्य) – आपका जन्म होगा शाल के लिए?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – एक अच्छी कामना रखनी चाहिए। उसी की चिन्ता करते हुए शरीर का त्याग हो, इसलिए। साधु चार धामो में एक धाम बाकी रख छोड़ते हैं। बहुतेरे जगन्नाथक्षेत्र बाकी रखते है। इसलिए कि जगन्नाथ की चिन्ता करते हुए शरीर-पात हो।

गेरुआ पहने हुए एक व्यक्ति कमरे के भीतर आये और नमस्कार किया। ये भीतर ही भीतर श्रीरामकृष्ण की निन्दा किया करते है। इसीलिए बलराम हँस रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अन्तर्यामी है, बलराम से कह रहे हैं – 'कोई चिन्ता नही, यदि वे मुझे ढोगी कहते हैं तो कहने दो।'

श्रीरामकृष्ण तेजचन्द्र के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (तेजचन्द्र से) – तुझे इतना बुला भेजता हूँ, तू आता क्यों नहीं? अच्छा, ध्यान आदि करता है? इसी से मुझे प्रसन्नता होगी। मैं तुझे अपना जानता हूँ इसलिए बुला भेजता हूँ।

तेजचन्द्र – जी, आफिस जाना पड़ना है। काम भी बहुत रहता है।

मास्टर (सहास्य) – घर मे शादी थी, दस दिन की इन्होने छुट्टी ली थी।

श्रीरामकृष्ण – तो फिर, अवकाश नही है, अवकाश नही है – ऐसा क्यो कहा? अभी तो तूने कहा था कि संसार छोड दूगा।

नारायण – मास्टर ने एक दिन कहा था – संसार का अरण्यभाव।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – तुम वह कहानी जरा कहो तो। इन लोगो का उपकार होगा। शिष्य दवा खाकर अचेत हो रहा। गुरु ने आकर कहा, 'इसके प्राण बच सकते है, अगर यह गोली कोई और खा ले। यह तो बच जायेगा परन्तु जो खायेगा, उसके प्राण निकल जायगे।'

"और वह भी कहो, – टेढ़ा-मेढा हो गया था। उस हठयोगी के बारे मे, जिसने सोचा था, स्त्री-पुत्र यही सब अपने आदमी है।"

दोपहर को श्रीरामकृष्ण ने जगन्नाथजा का प्रसाद पाया। श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'बलराम का अन्न शुद्ध है।' भोजन के बाद कुछ देर के लिए वे विश्राम कर रहे है।

दोपहर ढल चुकी है। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ उसी कमरे में बैठे हुए है। कर्ताभजा चन्द्रबाबू और वे रसिक ब्राह्मण भी है। ब्राह्मण का स्वभाव एक तरह भॉड जैसा है। – वे एक बात कहते है और हॅसते हॅसते लोगो का पेट फूलने लगता है।

श्रीरामकृष्ण ने कर्ताभजा सम्प्रदाय के लोगो पर बहुतसी बाते कही – रूप, स्वरूप, रज, वीर्य, पाकक्रिया आदि बहुतसी बातो का उल्लेख किया।

श्रीरामकृष्ण की भावावस्था

लगभग छ: बजे का समय है। गिरीश के भाई अतुल और तेजचन्द्र के भाई आये हुए है। श्रीरामकृष्ण भाव-समाधि में मग्न है। कुछ देर बाद भावावेश मे कह रहे है – "चैतन्य की चिन्ता करके क्या कोई कभी अचेतन होता है? – ईश्वर की चिन्ता करके क्या कभी किसी को मस्तिष्क-विकार हो सकता है? – वे बोधस्वरूप जो है - नित्य, शुद्ध और बोधरूप।"

आये हुए लोगो मे से कोई कोई सोचते रहे होगे कि ईश्वर की चिन्ता करके लोग पागल हो जाते है – शायद इन्हे भी कोई मस्तिष्क-विकार हो गया है।

श्रीरामकृष्ण कृष्णधन नाम के उसी रसिक ब्राह्मण से कह रहे है – "साधारण-से ऐहिक विषय को लेकर तुम दिनरात मजाक कर-करके समय क्यो बिता रहे हो? उसी को ईश्वर की ओर लगा दो। जो नमक का हिसाब लगा सकता है, वह मिश्री का भी लगा लेता है।"

कृष्णधन – (हॅसकर) – आप खीच लीजिये।

श्रीरामकृष्ण – मै क्या करूँगा, सब तुम्हारी ही चेष्टा पर अवलम्बित है। 'यह मन्त्र

नहीं, – अब मन तेरा है।'

"उस साधारण-सी रसिकता को छोड़कर ईश्वर की ओर बढ़ जाओ। आगे एक से एक बढ़कर चीजें मिलेंगी। ब्रह्मचारी ने लकड़हारे से बढ़ जाने के लिए कहा था। उसने बढ़कर देखा, चन्दन का वन था – फिर चाँदी की खान थी, और फिर आगे बढ़कर सोने की खान, – फिर हीरे और मणि की खानें।"

कृष्णधन – इस मार्ग का अन्त नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – जहाँ शान्ति हो, वहीं रुक जाओ।

श्रीरामकृष्ण एक आये हुए व्यक्ति के सम्बन्ध में कह रहे हैं –

"उसके भीतर कोई वस्तु मुझे नहीं दीख पड़ी, जैसे जंगली बेर।"

शाम हो गयी। कमरे में दिया जला दिया गया। श्रीरामकृष्ण जगन्माता की चिन्ता करते हुए मधुर स्वर से उनका नाम ले रहे हैं। भक्तगण चारों ओर बैठे हुए हैं।

कल रथ-यात्रा है। आज श्रीरामकृष्ण यहीं रहेंगे।

अन्त:पुर से कुछ जलपान करके श्रीरामकृष्ण फिर बड़े कमरे मे आये। रात के दस बजे होगे। श्रीरामकृष्ण मणि से कह रहे हैं – उस कमरे से अँगौछा तो ले आओ।

उसी छोटे कमरे में श्रीरामकृष्ण के सोने का प्रबन्ध किया गया है। रात के साढ़े दस का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण शयन करने के लिए गये।

गरमी का मौसम है। श्रीरामकृष्ण ने मणि से पंखा ले आने के लिए कहा। मणि पंखा झल रहे हैं। रात के बारह बजे श्रीरामकृष्ण की नींद उचट गयी, कहा, 'पंखा बन्द कर दो, जाड़ा लग रहा है।'

(३)

विचार के अन्त में मन का नाश तथा ब्रह्मज्ञान

आज रथ-यात्रा है। दिन मंगलवार। प्रात:काल उठकर श्रीरामकृष्ण नृत्य करते हुए मधुर कण्ठ से नाम ले रहे हैं।

मास्टर ने आकर प्रणाम किया। क्रमश: भक्तगण आकर प्रणाम करके श्रीरामकृष्ण के पास बैठे। श्रीरामकृष्ण पूर्ण के लिए बहुत व्याकुल हो रहे हैं। मास्टर को देखकर उन्हीं की बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – तुम पूर्ण को देखकर क्या कोई उपदेश दे रहे थे?

मास्टर – जी, मैंने चैतन्य-चरितामृत पढ़ने के लिए उससे कहा था। उस पुस्तक की बातें वह खूब बतला सकता है। और आपने कहा था सत्य को पकड़े रहने के लिए; वह बात भी मैंने कही थी।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, 'ये (श्रीरामकृष्ण) अवतार हैं' इन सब बातों के बताने पर

क्या कहता था?

मास्टर – मैने कहा था, 'चैतन्यदेव की तरह एक और आदमी देखना हो तो चलो।'

श्रीरामकृष्ण – और भी कुछ?

मास्टर – आपकी वही बात। छोटी-सी गड़ही मे हाथी उतर जाता है तो पानी मे उथल-पुथल मच जाती है, – आधार के छोटे होने पर उसमे से भाव छलककर गिरता है।

लगभग साढे छ· का समय है। बलराम के घर से मास्टर गंगा नहाने के लिए जा रहे है। रास्ते मे एकाएक भूकम्प होने लगा। वे उसी समय श्रीरामकृष्ण के कमरे मे लौट आये। श्रीरामकृष्ण बैठकखाने मे खड़े हुए है। भक्तगण भी खडे है। भूकम्प की बात हो रही है। कम्प कुछ अधिक हुआ था। भक्तो मे बहुतो को भय हो गया था।

मास्टर – तुम सब लोगो को नीचे चले जाना चाहिए था।

श्रीरामकृष्ण – जिस घर मे रहते है, उसी की तो यह दशा है। इस पर फिर आदमियो का अहंकार! (मास्टर से) तुम्हे वह आश्विन की आँधी याद है?

मास्टर – जी हॉ, तब मेरी उम्र बहुत थोडी थी – नौ-दस साल की रही होगी – मै कमरे मे अकेला देवताओ का नाम ले रहा था।

मास्टर विस्मय मे आकर सोच रहे है, 'श्रीरामकृष्ण ने एकाएक आश्विन की आँधी की बात क्यो चलायी? मै व्याकुल होकर एक कमरे मे बैठा हुआ ईश्वर की प्रार्थना कर रहा था, श्रीरामकृष्ण क्या सब जानते है? वे क्या मुझे उसकी याद दिला दे रहे है? मेरे जन्म के समय से ही वे क्या गुरु-रूप से मेरी रक्षा कर रहे है?'

श्रीरामकृष्ण – जब दक्षिणेश्वर मे आँधी आयी, उस समय दिन बहुत चढ़ गया था, पर कैसा भी करके भोग पकाया गया था। देखो, जिस घर मे निवास है, उसी की यह हालत है!

"परन्तु पूर्ण ज्ञान के होने पर मरना और मारना एक जान पड़ता है। मरने पर भी कुछ नही मरता – मार डालने पर भी कुछ नही मारता। जिनकी लीला है, नित्यता भी उन्ही की है। एक रूप मे नित्यता है और दूसरे रूप मे लीला। लीला का रूप नष्ट हो जाने पर भी उसकी नित्यता नही जाती। पानी के स्थिर रहने पर भी वह पानी है। और हिलने-डुलने पर भी पानी ही है। फिर हिलकर, उस हिलने के बन्द हो जाने पर भी वह वही पानी है।"

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठकखाने मे बैठे हुए है। महेन्द्र मुखर्जी, हरिबाबू, छोटे नरेन्द्र तथा अन्य कई बालक-भक्त बैठे हुए है। हरिबाबू अकेले ही रहते है, वेदान्त की चर्चा किया करते है, उम्र २३-२४ साल की होगी। विवाह नही किया है। श्रीरामकृष्ण इन्हे बड़ा प्यार करते है। सदा दक्षिणेश्वर आने के लिए कहा करते है। वे अकेले ही रहना

पसन्द करते है, इसलिए श्रीरामकृष्ण के पास भी अधिक नही जाया करते।

श्रीरामकृष्ण (हरिबाबू से) – क्यो जी, तुम बहुत दिन नही आये?

"वे एक रूप मे नित्य है, एक रूप से लीला। वेदान्त मे क्या है? ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या। परन्तु जब तक उन्होने 'भक्त का मै' रख दिया है, तब तक लीला भी सत्य है। 'मै' को जब वे पोछ डालेगे, तब जो कुछ है, वही है। मुँह से उसका वर्णन नही हो सकता। 'मै' को जब तक उन्होने रखा है, तब तक सब मानना होगा। केले के पेड़ के खोलो को निकालते रहने पर उसका माझा मिलता है। अतएव खोलो के रहने पर माझा का रहना भी सिद्ध होता है और माझे के रहने पर खोलो का। खोलो का ही माझा है और माझे का ही खोल है। नित्य है, यह कहने मे लीला का अस्तित्व सिद्ध होता है, और लीला है, यह कहने पर नित्य का अस्तित्व।

"वे ही जीव और जगत् हुए है, चौबीसो तत्त्व हुए है। जब वे निष्क्रिय है, तब उन्हे लोग ब्रह्म कहते है और जब सृष्टि, स्थिति और संहार करते है तब उन्हे शक्ति कहते है। ब्रह्म और शक्ति दोनो अभेद है। पानी स्थिर रहने पर भी पानी है और हिलने-डुलने पर भी पानी ही है।

" 'मै' का भाव दूर नही होता। जब तक 'मै' का भाव है, तब तक जीव-जगत् को मिथ्या कहने का अधिकार नही है। बेल के खोपड़े और बीजो को फेक देने पर, कुल बेल का वजन समझ नही आता।

"जिस ईंट, चूना और सुर्खी से छत बनी है, उसी से सीढियाँ भी बनी है। जो ब्रह्म है उन्ही की सत्ता से यह जीव-जगत् भी बना है।

"भक्त और विज्ञानी निराकार और साकार दोनो मानते है – अरूप और रूप दोनो को ग्रहण करते है, भक्तिरूपी हिम के लगने मे उसी जल का कुछ अंश बर्फ बन जाता है। फिर ज्ञान-सूर्य के उगने पर वह बर्फ गलकर जल का फिर जल ही हो जाता है।

"जब तक मनुष्य मन के द्वारा विचार करता है, तब तक वह नित्य को नही प्राप्त कर सकता। जब तक तुम अपने मन का सहारा लेकर विचार करते हो तब तक तुम संसार के परे नही जा सकते, तथा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द आदि इन्द्रिय-विषयो को भी नही छोड़ सकते। विचार के बन्द होने पर ही ब्रह्मज्ञान होता है। इस मन से कोई आत्मा को जान नही सकता। आत्मा के द्वारा ही आत्मा का ज्ञान प्राप्त होता है। शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि, शुद्ध आत्मा, ये सब एक ही वस्तु है।

"देखो न, एक ही वस्तु को देखने के लिए कितनी चीजो की आवश्यकता होती है। आँखे चाहिए, उजाला चाहिए और मन का संयोग होना चाहिए। इन तीनो मे से किसी एक को छोड़ देने से दर्शन नही होता। मन का यह काम जब तक चल रहा है, तब तक किस तरह कहोगे कि संसार नही है या मै नही हूँ?

"मन का नाश होने पर, संकल्प और विकल्प के चले जाने पर समाधि होती है – ब्रह्मज्ञान होता है। परन्तु – सा, रे, ग, म, प, ध, नि – 'नि' मे बडी देर तक नही रहा जाता।"

छोटे नरेन्द्र की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है, " 'ईश्वर है' – केवल इतना ही आभास पाने से क्या होगा? ईश्वर की केवल झलक से ही सब कुछ हो जाता हो, सो बात नही।

'उन्हे अपने घर ले आना चाहिए – उनसे जान-पहचान करनी चाहिए।

"किसी ने दूध की बात सुनी ही है, किसी ने दूध देखा है और किसी ने पिया है।

"राजा को किसी किसी ने देखा है, परन्तु दो एक आदमी उन्हे अपने मकान ले आ सकते है और उन्हे खिला-पिला सकते है।"

मास्टर गंगा-स्नान के लिए गये।

(४)

वाराणसी में शिव तथा अन्नपूर्णा दर्शन

दिन के दस बजे का समय हो गया। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ वार्तालाप कर रहे है। मास्टर ने गंगा-स्नान करके श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया और उनके पास बैठे।

श्रीरामकृष्ण भाव के पूर्णावेश मे कितनी ही बाते कह रहे है। बीच बीच मे दर्शन की गुह्य बाते कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – मथुरबाबू के साथ मै वाराणसी गया था। मणिकर्णिका के घाट से हमारी नाव जा रही थी, एकाएक मुझे शिव के दर्शन हुए। मै नाव के एक सिरे पर खड़ा हुआ समाधिमग्न हो गया। मल्लाह हृदय से कहने लगे, 'अरे! पकड़ो!' उन्होने सोचा, मैं कही गिर न जाऊँ। देखा, शिव मानो संसार की कुल गम्भीरता लिए हुए खड़े है। पहले मैने उन्हे दूर खडे हुए देखा था, फिर मेरे पास आने लगे और मेरे भीतर विलीन हो गये।

"भावावेश मे मैने देखा, एक संन्यासी मेरा हाथ पकड़कर मुझे लिए जा रहा है। एक ठाकुर-मन्दिर मे मै घुसा, वहाँ सोने की अन्नपूर्णा देखी।

"वे ही यह सब हुए है, – किसी किसी वस्तु मे उनका प्रकाश अधिक है।

(मास्टर से) "तुम लोग शायद शालग्राम मे विश्वास नही करते – इंग्लिशमैन भी नही करते। तुम लोग मानो चाहे न मानो, कोई बात नही। शालग्राम अगर सुलक्षणयुक्त हो – उनमे अच्छे चक्र आदि हो – तभी ईश्वर के प्रतीक रूप मे उनकी पूजा हो सकती है।"

मास्टर – जी, जैसे उत्तम लक्षणवाले मनुष्य के भीतर ईश्वर का प्रकाश अधिक है।

श्रीरामकृष्ण – नरेन्द्र पहले इन सब बातो को मन की भूल कहा करता था; अब सब मानने लगा है।

ईश्वर-दर्शन की बाते कहते हुए श्रीरामकृष्ण को भाव की अवस्था हो रही है। धीरे-धीरे आप भाव-समाधि मे लीन हो गये। भक्तगण चुपचाप एकटक दृष्टि से देख रहे है। बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण ने भाव को रोका और फिर बातचीत करने लगे!

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – मै देख रहा था, ब्रह्माण्ड एक शालग्राम है। उसके भीतर तुम्हारी दो आँखे देख रहा था।

मास्टर और भक्तगण यह अद्भुत और अश्रुतपूर्व दर्शन आश्चर्यचकित होकर सुन रहे है। इसी समय एक और बालक-भक्त सारदा आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (सारदा से) – तू दक्षिणेश्वर क्यों नहीं आता? मैं जब कलकत्ता आया करता हूँ, तो तू दक्षिणेश्वर क्यो नही आता?

सारदा – मुझे खबर नही मिलती।

श्रीरामकृष्ण – अब तुझे खबर दूँगा। (मास्टर से, सहास्य) लड़कों की एक फेहरिस्त तो बनाओ। (मास्टर और भक्त हँसते हैं)

सारदा – घरवाले विवाह कर देना चाहते है। ये (मास्टर) विवाह की बात पर कितने ही बार मना कर चुके है।

श्रीरामकृष्ण – अभी विवाह क्यों?

(मास्टर से) "सारदा की अच्छी अवस्था हो गयी है, पहले संकोच का भाव था, अब मुख पर आनन्द आ गया है।"

श्रीरामकृष्ण एक भक्त से पूछ रहे हैं – "तुम क्या एक बार पूर्ण को ले आओगे?"

नरेन्द्र आये। श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को जलपान कराने के लिए कहा। नरेन्द्र को देखकर श्रीरामकृष्ण को बड़ा आनन्द हो रहा है। नरेन्द्र को खिलाकर मानो वे साक्षात् नारायण की सेवा करते हैं। उनकी देह पर हाथ फेरकर उन्हें प्यार कर रहे हैं। गोपाल की मॉ कमरे के भीतर आयीं। श्रीरामकृष्ण ने बलराम से कामारहाटी आदमी भेजकर गोपाल की मॉ को ले आने के लिए कहा था। इसीलिए वे आयी हुई है। कमरे के भीतर आते ही गोपाल की मॉ कह रही हैं, 'मारे आनन्द के मेरी आँखों से ऑसू बह रहे हैं।' यह कहकर श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो उन्होंने प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण – यह क्या है, तुम मुझे गोपाल भी कहती हो और प्रणाम भी करती हो?

"जाओ, घर मे कोई तरकारी बनाओ जाकर, खूब बघार देना जिससे यहाँ तक सुगन्ध आये।" (सब हँसते हैं)

गोपाल की माँ – ये लोग (घर के लोग) क्या सोचेंगे?

घर के भीतर जाने से पहले उन्होने नरेन्द्र से कातर स्वर मे कहा, 'भैया, मेरी बन गयी या अभी कुछ बाकी है?'

आज रथ-यात्रा है। श्रीजगन्नाथजी के भोग आदि के होने मे कुछ देर हो गयी। अब श्रीरामकृष्ण भोजन करेंगे, अन्त:पुर की ओर जा रहे है। भक्त-स्त्रियॉ उनके दर्शन करने के लिए उत्सुक है।

बहुतसी स्त्रियॉ श्रीरामकृष्ण की भक्ति करती थी। परन्तु उनकी बाते वे पुरुष-भक्तो से न कहते थे। कोई भक्त-स्त्री अगर किसी भक्त से पास आती-जाती थी तो वे उससे कहते थे – "उसके पास ज्यादा न जाया कर, गिर जायेगी।" कभी कभी कहते थे, "अगर मारे भक्ति के कोई स्त्री जमीन मे लोटती भी रहे तो भी उसके पास न जाना चाहिए।" स्त्री-भक्त अलग रहेगी – पुरुष-भक्त अलग, तभी दोनो की भलाई है। कभी कहते थे, "स्त्रियो के गोपाल-भाव – वात्सल्य-भाव – का अतिरेक अच्छा नही। उसी वात्सल्य से एक दिन बुरा भाव पैदा हो जाता है।"

(५)

नरेन्द्रादि भक्तों के साथ कीर्तनानन्द में

दिन के एक बजे का समय है। भोजन करके श्रीरामकृष्ण फिर बैठकखाने मे आकर भक्तो के बीच मे बैठे। एक भक्त पूर्ण को बुला लाये है। श्रीरामकृष्ण बड़े आनन्द मे आकर कहने लगे, 'यह देखो, पूर्ण आ गया।' नरेन्द्र, छोटे नरेन्द्र, नारायण, हरिपद और दूसरे भक्त श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए उनसे वार्तालाप कर रहे है।

छोटे नरेन्द्र – अच्छा, हम लोगो मे स्वाधीन इच्छा है या नही?

श्रीरामकृष्ण – मै क्या हूँ – कौन हूँ, पहले इसे खोज तो लो। 'मै' की खोज करते ही करते 'वे' निकल पड़ेगे। 'मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री!' चीन का बना हुआ (कलवाला) पुतला चिट्ठी लेकर दूकान चला जाता है, तुमने सुना है? ईश्वर ही कर्ता है। अपने को अकर्ता समझकर कर्ता की तरह काम करते रहो।

"जब तक उपाधियॉ है, तभी तक अज्ञान है। मै पण्डित हूँ, मै ज्ञानी हूँ, मै धनी हूँ, मै मानी हूँ, मै कर्ता हूँ, पिता हूँ, गुरु हूँ, यह बस अज्ञान से होता है। 'मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो,' यह ज्ञान है। उस समय सब उपाधियॉ दूर हो जाती है। काठ के जल जाने पर फिर शब्द नही होता, न ताप रहता है। सब ठण्डा हो जाता है। – शान्ति: शान्ति: शान्ति:।"

(नरेन्द्र से) "कुछ गाओ न।"

नरेन्द्र – घर जाऊँगा, कई काम है।

श्रीरामकृष्ण – हॉ भाई, हम लोगो की बात तुम क्यो सुनने लगे। जिसके पास पूँजी है, उसी के पीछे लोग लगे रहते है, और जिसके एक धोती भी साबित नही है उसकी बात

भला कौन सुनता है? (सब हँसते हैं)

"तुम गुहों के बगीचे तो जा सकते हो! जब कभी मैं पूछता हूँ, 'नरेन्द्र कहाँ है?' – तो सुनता हूँ, 'गुहों के बगीचे में।' – यह बात मैं न कहता, तूने ही तो निकाली।"

नरेन्द्र कुछ देर चुप रहे। फिर कहा, 'बाजा नहीं हैं, कैसे गाऊँ?'

श्रीरामकृष्ण – हमारी जैसी हालत! – इसी में रहकर गा सको तो गाओ। इस पर बलराम का बन्दोबस्त।

"बलराम कहता है, 'आप नाव पर ही कलकत्ता आया कीजिये, अगर कभी न बने तभी गाड़ी से आया कीजिये।' (सब हँसते हैं) देखते हो, आज उसने खिलाया है, इसीलिए आज तीसरे पहर भर हम सबों को कसकर नचायेगा। (हास्य) यहाँ से एक दिन उसने गाड़ी की – बारह आने में! मैंने पूछा, 'क्या बारह आने में दक्षिणेश्वर तक गाड़ी जायेगी?' उसने कहा, 'हाँ, ऐसा होता है।' रास्ते में जाते जाते गाड़ी का कुछ हिस्सा ही अलग हो गया! (उच्च हास्य) घोड़ा भी बीच-बीच में पैर अड़ाता था। किसी तरह चलता ही न था, गाड़ीवान जब कसकर चाबुक मारता था तब घोड़े के पैर उठते थे। इधर राम खोल बजायेगा और हम लोग नाचेंगे – राम को ताल का भी ज्ञान नही है। (सब हँसे) बलराम का यह भाव है, – आप लोग गाइये, बजाइये, नाचिये और मौज कीजिये!" (सब हँसते हैं)

घर से भोजन कर क्रमश: भक्तगण आते जा रहे हैं।

महेन्द्र मुखर्जी को दूर से प्रणाम करते हुए देखकर श्रीरामकृष्ण उन्हें प्रणाम कर रहे है – फिर सलाम किया। पास के एक नवयुवक भक्त से कह रहे हैं, "उसे बताओ कि इन्होंने सलाम किया – वह 'अल्काट' 'अल्काट' (थिऑसफी के एक महात्मा) ही रटता है।"

गृही भक्तो में से अनेको ने अपने घर की स्त्रियों को भी साथ लाया है – वे श्रीरामकृष्ण के दर्शन करेगी और रथ के सामने श्रीरामकृष्ण का कीर्तनानन्द देखेंगी। राम और गिरीश आदि भक्त भी आ गये है। नवयुवक भक्त भी बहुतसे आ गये हैं।

नरेन्द्र गाने लगे –

"वह प्रेम का संचार और कितने दिनो में होगा?"

बलराम ने आज कीर्तन का बन्दोबस्त किया है – वैष्णवचरण और बनवारी का कीर्तन है। वैष्णवचरण ने गाया – "ऐ मेरी रसने, सदा दुर्गा-नाम का जप कर।"

गाने का कुछ अंश सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। खड़े होकर समाधिस्थ हुए थे – छोटे नरेन्द्र पकड़े हुए है। मुख पर हास्य की रेखा प्रकट हो गयी। कमरे भर के भक्त आश्चर्यचकित हो देख रहे हैं। स्त्रियाँ चिक के भीतर से श्रीरामकृष्ण की यह अवस्था देख रही है।

नाम जपते जपते बड़ी देर के बाद समाधि छूटी। श्रीरामकृष्ण के आसन ग्रहण करने पर वैष्णवचरण ने फिर गाया –

"ऐ वीणे, तू हरिनाम कर।"

अब एक दूसरे कीर्तनिये बनवारी 'रूप' गा रहे है। परन्तु वे गाते ही गाते 'आहा हा, आहा हा' कहकर भूमिष्ठ होकर प्रणाम करने लगते है। इससे कोई श्रोता हॅसते है, किसी को विरक्ति होती हैं।

पिछला प्रहर हो आया। इस समय बरामदे मे श्रीजगन्नाथदेव का वही छोटा रथ ध्वजा-पताकाओ से सुसज्जित करके लाया गया है। श्रीजगन्नाथ, सुभद्रा तथा बलराम चन्दन-चर्चित तथा वसन-भूषण और पुष्पमालाओ से सुशोभित है। श्रीरामकृष्ण बनवारी का कीर्तन छोड़कर बरामदे मे रथ के सामने चले गये। साथ साथ भक्तगण भी गये। श्रीरामकृष्ण ने रथ की रस्सी पकड़ जरा खीचा, फिर रथ के सामने भक्तो के साथ नृत्य और कीर्तन करने लगे।

छोटे बरामदे मे रथ चलने के साथ ही कीर्तन और नृत्य हो रहा है। उच्च संकीर्तन और खोल का शब्द सुनकर बहुतसे बाहर के लोग वहॉ आ गये। श्रीरामकृष्ण भगवत्प्रेम से मतवाले हो रहे है। भक्तगण प्रेमोन्मत्त हो साथ-साथ नाच रहे है।

(६)

भावावेश में श्रीरामकृष्ण

रथ के सामने कीर्तन और नृत्य करके श्रीरामकृष्ण कमरे मे आकर बैठे। मणि आदि भक्त उनकी चरण-सेवा कर रहे है।

भावमग्न होकर नरेन्द्र तानपूरा लेकर फिर गाने लगे – "ऐ प्राणो की पुतली, मॉ, हृदयरमा, तू हृदय-आसन मे आकर आसीन हो, मै तेरा निरीक्षण करूँ।"

"त्रिगुणरूपधारिणी, परात्परा तारा तुम्ही हो।"

"तुम्ही को मैने अपने जीवन का ध्रुवतारा बना लिया है।"

एक भक्त ने नरेन्द्र से कहा – क्या तुम वह गाना गाओगे – 'ऐ अन्तर्यामिनी मॉ, तुम हृदय मे सदा ही जाग रही हो।'

श्रीरामकृष्ण – चल, इस समय ये सब गाने क्यो? इस समय आनन्द के गीत हो – 'श्यामा सुधा-तरंगिणी।'

नरेन्द्र गा रहे है। श्रीरामकृष्ण गाना सुनते ही प्रेमोन्मत्त होकर नृत्य करने लगे। बडी देर तक नृत्य करने के बाद उन्होने आसन ग्रहण किया। भावावेश मे नरेन्द्र की ऑखो मे ऑसू आ गये। श्रीरामकृष्ण को देखकर बड़ा आनन्द हुआ। रात के नौ बजे का समय होगा। अब भी भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण बेठे हुए वैष्णवचरण का गाना सुन रहे है।

वैष्णवचरण ने दो गाने और गाये। तब तक रात के दस-ग्यारह बजे का समय हो गया। भक्तगण प्रणाम करके बिदा हो रहे है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, अब सब लोग घर जाओ। (नरेन्द्र और छोटे नरेद्र की ओर इशारा करके) इन दोनो के रहने ही से हो जायेगा। (गिरीश से) क्या घर जाकर भोजन करोगे? रहना चाहो तो कुछ देर रहो। तम्बाकू! – अरे, बलराम का नौकर भी वैसा ही है। बुलाकर देखो – हरगिज न देगा। (सब हँसते है) परन्तु तुम तम्बाकू पीकर जाना।

श्रीयुत गिरीश के साथ चश्मा लगाये हुए उनके एक मित्र आये है। वे सब कुछ देख-सुनकर चले गये। श्रीरामकृष्ण गिरीश से कह रहे है – "तुमसे तथा अन्य सभी से कहता हूँ, जबरदस्ती किसी को न ले आया करो, – बिना समय के आये कुछ नही होता।"

एक भक्त ने प्रणाम किया। साथ एक छोटा लड़का है। श्रीरामकृष्ण सस्नेह कह रहे है – "अच्छा, बड़ी देर हो गयी है, फिर यह लड़का भी साथ है।" नरेन्द्र, छोटे नरेन्द्र तथा दो-एक भक्त और कुछ देर रहकर घर गये

(७)

मधुर नृत्य तथा नामसंकीर्तन

श्रीरामकृष्ण बैठकखाने के पश्चिम ओर खाट पर लेटे हुए है। रात के चार बजे का समय होगा। कमरे के दक्षिण ओर बरामदा है, उसमे एक स्टूल पड़ा हुआ है। उस पर मास्टर बैठे है।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण बरामदे मे गये। मास्टर ने भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। आज संक्रान्ति है, बुधवार, १५ जुलाई १८८५।

श्रीरामकृष्ण – मै एक बार और उठा था। अच्छा, क्या सबेरे दक्षिणेश्वर जाऊँ?

मास्टर – प्रात:काल गंगा बहुत कुछ शान्त रहती है।

सबेरा हो गया है। भक्तो का आगमन अभी नही हुआ। श्रीरामकृष्ण हाथ-मुख धोकर मधुर स्वर मे नाम ले रहे है। पश्चिमवाले कमरे के उत्तर तरफ के दरवाजे के पास खडे होकर नाम ले रहे है। पास ही मास्टर है। थोड़ी देर बाद कुछ दूरी पर गोपाल की माँ आकर खड़ी हुई। अन्त:पुर के द्वार के पास दो-एक स्त्रियाँ श्रीरामकृष्ण को आकर देख रही है।

राम-नाम करके श्रीरामकृष्ण कृष्ण का नाम ले रहे है। "कृष्ण कृष्ण! गोपी कृष्ण! गोपी! गोपी! राखालजीवन कृष्ण! नन्दनन्दन कृष्ण! गोविन्द! गोविन्द!"

फिर गौरांग का नाम लेने लगे – "गौरांग प्रभु नित्यानन्द, हरे कृष्ण हरे राम राधे गोविन्द!"

फिर कह रहे है – 'अलख निरंजन।' निरंजन कहकर रो रहे है। उनका रोना और

करुण कण्ठ सुनकर पास मे खड़े हुए सब भक्त भी रोने लगे। वे रोते हुए कह रहे है – "निरंजन! आ बेटा, कब तुझे भोजन कराकर जन्म सफल करूँ! देह धारण करके मनुष्य के रूप मे तू मेरे लिए आया हुआ है।"

जगन्नाथजी को अपनी विनय सुना रहे है – "जगन्नाथ! जगद्बन्धो! दीनबन्धो! मै संसार से अलग तो हूँ ही नही नाथ, मुझ पर दया करो।"

प्रेमोन्मत्त होकर गा रहे है – "उड़ीसा जगन्नाथपुरी मे भले बिराजे जी।"

अब नारायण का नाम-कीर्तन करते हुए नाच रहे है -- "श्रीमन्नारायण! नारायण! नारायण!"

अब श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ छोटे कमरे मे बैठे। दिगम्बर! – जैसे पाँच साल का बच्चा। बलराम, मास्टर और भी दो-एक भक्त बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर के रूप के दर्शन होते है। जब सब उपाधियाँ चली जाती है, विचार बन्द हो जाता है तब दर्शन होता है। तब मनुष्य निर्वाक् हो समाधि मे लीन हो जाता है। थिएटर मे जाकर, वहाँ बैठे हुए आदमी कितनी ही गप्पे सुनते-सुनाते रहते है। पर्दा उठा नही कि सब गप्पे बन्द हो जाती है। जो कुछ देखते है, उसी मे मग्न हो जाते है।

"तुम्हे यह मै गुह्य बात सुना रहा हूँ। पूर्ण और नरेन्द्र आदि को प्यार करता हूँ, इसका एक खास अर्थ है। जगन्नाथ को मधुरभाव मे आकर भेटने के लिए मैने हाथ बढ़ाया नही कि गिरकर हाथ टूट गया। उसने समझा दिया – 'तुमने शरीर धारण किया है, इस समय नर-रूपो मे ही सख्य, वात्सल्य आदि भावो को लेकर रहो।'

"रामलला पर जो जो भाव होते थे, वे ही अब पूर्णादि को देखकर होते है। रामलला को मै नहलाता था, खिलाता था, सुलाता था, साथ लेकर घूमता था। रामलला के लिए बैठकर रोता था, इन सब लड़को को लेकर ठीक वे ही बाते हो रही है। देखो न, निरंजन किसी मे लिप्त नही है। खुद रुपया लगाकर गरीबो को दवाखाने ले जाया करता है। विवाह की बात पर कहता है, 'बाप रे! विशालाक्षी नदी का भंवर है।' उसे मै देखता हूँ, एक ज्योति पर बैठा हुआ है।

"पूर्ण साकार ईश्वर के राज्य का है। उसका जन्म विष्णु के अंश से है। आहा! – कैसा अनुराग है!

(मास्टर से) "देखा नहीं, वह तुम्हारी तरफ देखने लगा – जैसे गुरुभाई पर दृष्टि हो – जैसे कोई अपना सगा हो? एक बार और मिलने के लिए कहा है। उसने कहा है, कप्तान के यहाँ भेट होगी।

"नरेन्द्र का स्थान बहुत उँचा है – निराकार का घर है। – पुरुष की सत्ता है। इतने भक्त आ रहे है, उसकी तरह एक भी नही है।

"एक एक बार मै बैठकर हिसाब लगाता हूँ। देखता हूँ – दूसरो मे से कोई तो पद्म

मे दस दल का है, कोई सोलह दल का, कोई सौ दल का, परन्तु नरेन्द्र सहस्र दल का है।

"दूसरे लोग यदि लोटा, घड़ा आदि है तो नरेन्द्र खूब बड़ा मटका है।

"गड़हियों और तालाबो मे नरेन्द्र सरोवर है। – जैसे हालदार सरोवर।

"मछलियो मे नरेन्द्र लाल आँखों की रोहू है तथा अन्य सब तरह-तरह की छोटी मछलियाँ है।

"नरेन्द्र बहुत बड़ा आधार है – उसमे बहुतसी चीजे समा जाती है। बड़े छेदवाला बाँस है।

"नरेन्द्र किसी के वश नही है। वह आसक्ति और इन्द्रिय-सुख के वश नही है। नर-कबूतर है। नर-कबूतर की चोच पकड़ने पर वह चोच खीचकर छुड़ा लेता है, – मादा चुपचाप रह जाती है।

"बेलघर के तारक को 'मृगाल' (एक प्रकार की मछली, चालाक और बड़ी) कह सकते है।

"नरेन्द्र पुरुष है, इसीलिए गाड़ी मे दाहिनी ओर बैठता है। भवनाथ का जनाना भाव है, इसलिए उसे दूसरी ओर बैठाता हूँ।

"नरेन्द्र सभा मे रहता है तो मुझे भरोसा रहता है।"

श्रीयुत महेन्द्र मुखर्जी आये और प्रणाम किया। दिन के आठ बजे होगे। हरिपद, तुलसीराम भी क्रमश: आये और प्रणाम किया। बाबूराम को बुखार है। इसलिए वे नही आ सके।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – छोटा नरेन्द्र नही आया? उसने सोचा होगा – वे चले गये। (मुखर्जी से) कितने आश्चर्य की बात है, वह (छोटा नरेन्द्र) बचपन मे, स्कूल से लौटकर ईश्वर के लिए रोता था। (ईश्वर के लिए) रोना क्या सहज ही होता है?

"फिर बुद्धि भी खूब है। बाँसो मे बड़े छेदवाला बाँस है।

"और सब मन मुझ पर रहता है। गिरीश घोष ने कहा, 'नवगोपाल के यहाँ जिस दिन कीर्तन हुआ था, उस दिन (छोटा नरेन्द्र) गया था, – परन्तु 'वे कहाँ' कहकर बेहोश हो गया, लोग उसके ऊपर से चले जाते थे!'

"उसे भय भी नही है कि घरवाले नाराज होगे। दक्षिणेश्वर मे लगातार तीन रात रहा था।"

(८)

भक्तियोग का रहस्य। ज्ञान तथा भक्ति का समन्वय।

मुखर्जी – हरि (बागबाजार के हरिबाबू) आपकी बात सुनकर आश्चर्य मे पड़ गये। कहते है, सांख्यदर्शन मे, पातंजलि मे, वेदान्त मे ये सब बाते है। ये कोई साधारण व्यक्ति

नही हैं।

श्रीरामकृष्ण – सांख्य और वेदान्त तो मैंने नही पढ़ा।

"पूर्ण ज्ञान और पूर्ण भक्ति एक ही हैं। 'नेति नेति' के द्वारा जहाँ विचार का अन्त हो जाता है, वहीं ब्रह्मज्ञान है। – फिर जो कुछ छोड़कर जाना पड़ा था, लौटते हुए उसी को ग्रहण करना पड़ता है। छत पर चढ़ते समय बड़ी सावधानी से चढ़ना चाहिए। फिर वह देखता है, जिन चीजों से छत बनी है, उन्ही से सीढ़ियाँ भी बनी हुई हैं – उन्हीं ईंटो से – उसी सुर्खी और चूने से।

"जिसे उच्च का ज्ञान है, उसे निम्न का भी ज्ञान है। ज्ञान के बाद ऊँचा-नीचा एक जान पड़ता है।

"प्रह्लाद को जब तत्त्व-ज्ञान होता था, तब वे 'सोऽहम्' होकर रहते थे। जब देह-बुद्धि आती थी, तब 'दासोऽहम्' – 'मैं दास हूँ' यह भाव रहता था।

"हनुमान को भी कभी 'सोऽहम्' का भाव रहता था, कभी 'दास मैं', कभी 'मैं तुम्हारा अंश हूँ' यह भाव रहता था।

"भक्ति लेकर क्यो रहना? – इसे छोड़ दे तो मनुष्य फिर क्या लेकर रहे? – क्या लेकर दिन पार किया करे?

" 'मै' जाने का तो है ही नही। 'मैं' रूपी घट के रहते 'सोऽहम्' नहीं होता। समाधिमग्न होने पर 'मैं' पूर्ण रूप से चला जाता है। – तब जो कुछ है, वही है। रामप्रसाद ने कहा है – 'फिर मै अच्छा हूँ या तुम, यह तुम्ही समझो।'

"जब तक 'मैं' है तब तक भक्त की तरह ही रहना अच्छा है। 'मैं ईश्वर हूँ', यह भाव अच्छा नही। हे जीव! भक्तवत् न तु कृष्णवत्! – परन्तु अगर वे खुद खींच लें तो वह बात और है। जिस तरह मालिक नौकर को प्यार करके कहता है - 'आ, पास बैठ, मै जो कुछ हूँ, वही तू भी है।'

"तरंगें गंगा की है, परन्तु गंगा तरंगों की नहीं।

"शिव की दो अवस्थाएँ हैं। जब वे आत्माराम रहते हैं, तब उनकी 'सोऽहम्' अवस्था होती है – योग मे सब कुछ स्थिर है। जब 'मैं' – ज्ञान रहता है, तब 'राम राम' कहकर नृत्य करते हैं।

"जिनमें स्थिरता है, उनमें अस्थिरता भी है।

"अभी तुम स्थिर हो, फिर थोड़ी देर बाद तुम काम करने लगोगे।

"ज्ञान और भक्ति एक ही वस्तु हैं। अन्तर इतना ही है कि कोई कहता है पानी और कोई कहता है पानी का एक बड़ा ढेला (बर्फ)।

"साधारणतया समाधियाँ दो तरह की हैं। ज्ञान-मार्ग पर विचार करते हुए अहं के नष्ट हो जाने के बाद जो समाधि होती है, उसे स्थिर समाधि या जड़-समाधि कहते हैं।

भक्तिपथ की समाधि को भाव-समाधि कहते है। भाव-समाधि मे भोग के लिए 'अह' की एक रेखा रह जाती है, भक्त को ईश्वरानन्द देने के लिए। कामिनी और कांचन मे आसक्ति के रहने पर इन सब बातो की धारणा नही होती।

"केदार से मैने कहा, कामिनी और कांचन मे मन के रहने पर कुछ होगा नही। इच्छा हुई, एक बार उसकी छाती पर हाथ फेर दूँ, – परन्तु फेर न सका। भीतर टेढ़ापन था। उसके हृदयरूपी कमरे मे मानो विष्ठा की दुर्गन्ध थी, मै घुस नही सका। उसमे की आसक्ति मानो स्वयंम्भू लिग जैसी है, वाराणसी तक उसकी जड़ फैली हुई है। संसार मे आसक्ति – कामिनी और कांचन मे आसक्ति के रहते हुए कुछ हो नही सकता।

"इन लड़को मे कामिनी और कांचन का प्रवेश अभी तक नही हो पाया। इसीलिए तो उन्हे मै इतना प्यार करता हूँ। हाजरा कहता है, 'धनी लोगो के सुन्दर लड़के देखकर तुम उन्हे प्यार करते हो।' अगर यही बात है तो हरीश, लाटू, नरेन्द्र, इन्हे मै क्यो प्यार करता हूँ? नरेन्द्र को तो रोटी खाने के लिए नमक खरीदने के लिए भी पैसे नही मिलते।

"इन लड़को मे विषय-बुद्धि अभी नही पैठी। इसीलिए उनका मन इतना शुद्ध है।

"और बहुतेरे उनमे नित्य-सिद्ध भी है। जन्म से ही ईश्वर की ओर मन लगा हुआ है। जैसे तुमने एक बगीचा खरीदा। साफ करते हुए कही जल का स्रोत तुम्हे मिल गया। मिट्टी हटी नही कि कलकल स्वर से पानी निकलने लगा।"

बलराम – महाराज, संसार मिथ्या है, यह ज्ञान पूर्ण को एकदम कैसे हो गया?

श्रीरामकृष्ण – जन्मगत। पिछले जन्मो मे सब किया हुआ है। शरीर ही छोटा और वृद्ध होता रहता है, पर आत्मा के लिए वह बात नही।

"वे कैसे है, जानते हो? – जैसे पहले फल लगकर फिर फूल हो। पहले दर्शन, फिर गुण-महिमा आदि का श्रवण, फिर मिलन।

"निरंजन को देखो – न लेना है, न देना। – जब पुकार होगी तभी चला जा सकता है। परन्तु जब तक मनुष्य की माँ जीवित है, तब तक उसे उसका भरण-पोषण करना चाहिए। मै अपनी माँ की फूल-चन्दन से पूजा करता था। वह जगन्माता ही है जो हमारे लिए सांसारिक माता के रूप मे विराजमान है।

"जब तक अपने शरीर की परवा है, तब तक माता की खबर लेनी चाहिए; इसीलिए मै हाजरा से कहता हूँ, अपने शरीर मे अगर खाँसी की बीमारी हो गयी तो मिश्री और मरिच की व्यवस्था की जाती है – मरिच और नमक की जरूरत होती है – अतएव, जब तक अपने शरीर के लिए यह इतना किया जाता है, तब तक माता की खबर भी रखना उचित है।

"परन्तु जब अपने शरीर की भी खबर नही रख सकते तब दूसरे के लिए बात ही क्या है? तब सब भार ईश्वर ले लेते है।

[illegible] हो सकता। इसीलिए उसके एक अभिभावक होता है।

नाबालिग अवस्था और चैतन्यदेव की अवस्था दोनों एक हैं।"

मास्टर गंगा-स्नान करने के लिए गये।

(९)

श्रीरामकृष्ण का ईश्वर-दर्शन

श्रीरामकृष्ण भक्तो से उसी कमरे में बातचीत कर रहे हैं। महेन्द्र मुखर्जी, बलराम, तुलसी, हरिपद, गिरीश आदि भक्तगण बैठे हुए है। गिरीश श्रीरामकृष्ण की कृपा प्राप्त कर सात-आठ महीने से आते-जाते हैं। मास्टर गंगा-स्नान करके आ गये, श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उनके पास बैठे। श्रीरामकृष्ण अपने अपूर्व दर्शन की बातें सुना रहे हैं –

"कालीमन्दिर मे एक दिन नागा और हलधारी अध्यात्मरामायण पढ़ रहे थे। मैंने एकाएक एक नदी देखी, उसके पास ही वन था – हरे रंग के पेड़-पौधे, और जाँघिया पहने हुए राम और लक्ष्मण चले जा रहे थे। एक दिन मैंने कोठी के सामने अर्जुन का रथ देखा था। सारथी के वेश में श्रीकृष्णजी बैठे हुए थे। वह अब भी मुझे याद है।

"एक दिन और, देश में (कामारपुकुर में) कीर्तन हो रहा था। सामने मैंने गौरांग की मूर्ति देखी।

"एक नंगा आदमी मेरे साथ घूमता था। उससे मै खूब मजाक करता था। वह नंगी मूर्ति मेरे ही भीतर से निकलती थी, परमहंस मूर्ति, बालकवत्।

"ईश्वर के कितने रूपो के दर्शन हो चुके हैं, कुछ कहा नही जा सकता। उस समय मुझे पेट की सख्त बीमारी थी। और वह उन सब दर्शनों के समय और भी अधिक बढ़ जाती थी। इसलिए जब मुझे वे दर्शन होते थे तब मै उन पर 'थू थू' करने लगता था, – परन्तु वे तो मेरे पीछे भूत के समान लग जाते थे। इन रूपो के भावावेश में मैं मस्त रहा करता था और रात-दिन न जाने कहाँ बीत जाते थे। दूसरे दिन फिर दस्त आने लगते थे।" (हास्य)

गिरीश (सहास्य) – आप की जन्मपत्री देख रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – द्वितीया के चन्द्र में जन्म है। और रवि, चन्द्र और बुध को छोड़ और कोई बड़ी बात नही है।

गिरीश – कुम्भराशि है। कर्क और वृष मे राम और कृष्ण का जन्म है – सिंह में चैतन्यदेव का।

श्रीरामकृष्ण – मुझमें दो वासनाएँ थीं, – पहली यह कि मै भक्तों का राजा होऊँगा; दूसरी, तपस्या के मारे सूख जानेवाला साधु न होऊँगा।

गिरीश – आपको साधना क्यों करनी पड़ी?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – भगवती ने शिव के लिए बड़ी कठोर साधना की थी –

पंचाग्नि तापना, जाड़े मे पानी के भीतर गले तक डूबकर रहना, सूर्य की ओर एकदृष्टि से ताकते रहना।

"स्वयं कृष्ण ने राधायन्त्र लेकर बहुतसी साधनाएँ की थी। यन्त्र ब्रह्मयोनि है – उसी की पूजा और ध्यान। इस ब्रह्मयोनि से कोटि-कोटि ब्रह्माण्डो की सृष्टि हो रही है।

"बड़ी गुप्त बात है। बेल के नीचे मै उसे चमकते हुए देखा करता था।

"वहाँ तन्त्र की बहुतसी साधनाएँ मैने की थी, मुर्दे की खोपडी लेकर। ब्राह्मणी (श्रीरामकृष्ण की तान्त्रिक आराधना की आचार्या) सब सामग्री इकट्ठा कर देती थी।

"एक अवस्था और होती थी। जिस दिन मै अहंकार करता था उसके दूसरे ही दिन बीमार पड़ता था।"

सब लोग चुपचाप बैठे हुए है।

तुलसी – ये (मास्टर) नही हँसते।

श्रीरामकृष्ण – भीतर हँसी है, फल्गु-नदी के ऊपर बालू रहती है और खोदने पर भीतर पानी मिलता है।

(मास्टर से) "तुम जीभ नही छीलते। रोज जीभ छीला करो।"

बलराम – अच्छा, इनके (मास्टर के) द्वारा पूर्ण आपकी बहुतसी बाते सुन चुके है –

श्रीरामकृष्ण – पहले की बाते ये जानते है, मुझे याद नही।

बलराम – पूर्ण स्वभावसिद्ध है, और ये (मास्टर)?

श्रीरामकृष्ण – ये साधन मात्र है।

नौ बज चुके है। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर जानेवाले है। इसी का प्रबन्ध हो रहा है। बागबाजार के अन्नपूर्णा-घाट मे नाव ठीक की गयी है। श्रीरामकृष्ण को भक्तगण भूमिष्ठ हो प्रणाम करने लगे।

श्रीरामकृष्ण दो-एक भक्तो को लेकर नाव पर बैठे। गोपाल की माँ भी उसी नाव पर बैठी – दक्षिणेश्वर मे कुछ देर विश्राम करके पिछले पहर चलकर कामारहाटी जायेगी।

श्रीरामकृष्ण की कैम्प-खाट भी नाव पर चढ़ा दी गयी। इस पर श्रीयुत राखाल सोया करते थे।

अगले शनिवार को श्रीरामकृष्ण फिर बलराम के यहाँ आयेगे।

□ □ □

परिच्छेद ११८

श्री नन्द वसु के मकान में शुभागमन

(१)

बलराम के मकान में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बलराम के बैठकखाने मे बैठे हुए है। मुख पर प्रसन्नता विराज रही है। इस समय दिन के तीन बजे होगे। विनाद, राग्वाल, मास्टर आदि श्रीरामकृष्ण के पास बैठे है। छोटे नरेन्द्र भी आये।

आज मंगलवार है, २८ जुलाई, १८८५, आषाढ की कृष्ण प्रतिपदा। श्रीरामकृष्ण सबेरे से बलराम के यहाँ आये है। भक्तो के साथ भोजन भी उन्होने वही किया है।

नारायण आदि भक्तो ने कहा है, 'नन्द वसु के घर मे ईश्वरसम्बन्धी चित्र बहुतसे है।' आज दिन के पिछले पहर उनके घर जाकर श्रीरामकृष्ण चित्र देखेगे। एक ब्राह्मणी भक्त नन्द वसु के घर के पास ही रहती है, श्रीरामकृष्ण उसके घर भी जायेगे। कन्या के गुजर जाने पर ब्राह्मणी दुखी रहा करती है। प्राय· दक्षिणेश्वर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए जाया करती है। अत्यन्त व्याकुलता के साथ उसने श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण भेजा है। उसके घर तथा एक और स्त्री-भक्त – गनू की माँ – के घर भी श्रीरामकृष्ण जानेवाले है।

श्रीरामकृष्ण बलराम के यहाँ आते ही बालक-भक्तो को बुला भेजते है। छोटे नरेन्द्र ने अभी उस दिन कहा था, 'मुझे काम रहता है, इसलिए सदा मै नही आ सकता, परीक्षा के लिए भी तैयारी करनी पड़ रही है।' छोटे नरेन्द्र के आने पर श्रीरामकृष्ण उनसे बातचीत करते हुए कह रहे है – "तुझे बुलाने के लिए मैने आदमी नही भेजा।'

छोटे नरेन्द्र (हँसते हुए) – तो इससे क्या होता है?

श्रीरामकृष्ण – नही भाई, तुम्हारा नुकसान होता है, जब अवकाश हो तब आया करो।

श्रीरामकृष्ण ने जैसे अभिमान करके ये बाते कही। पालकी आयी है। श्रीरामकृष्ण श्रीयुत नन्द बसु के यहाँ जायेगे।

ईश्वर का नाम लेते हुए श्रीरामकृष्ण पालकी पर बैठे, पैरो मे काली चट्टी, लाल

धारीदार धोती पहने। मणि ने जूतों को पालकी की बगल में एक ओर रख दिया। पालकी के साथ साथ मास्टर जा रहे हैं। इतने मे परेश भी आ गये।

पालकी नन्द बसु के फाटक के भीतर गयी। क्रमशः घर का लम्बा आँगन पार करके पालकी मकान के द्वार पर पहुँची।

गृहस्वामी के आत्मीयों ने श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से चट्टियाँ निकाल देने के लिए कहा। पालकी से उतरकर वे ऊपर के दालान में गये। दालान बहुत लम्बा-चौड़ा है। चारो ओर देवी-देवताओं के चित्र टँगे हुए है।

गृहस्वामी और उनके भाई पशुपति ने श्रीरामकृष्ण से सम्भाषण किया। पालकी के पीछे पीछे भक्तगण भी आ रहे थे। अब वे भी उसी दालान मे एकत्र होने लगे। गिरीश के भाई अतुल भी आये हुए हैं। प्रसन्न के पिता श्रीयुत नन्द वसु के यहाँ अक्सर आया-जाया करते हैं। वे भी वहाँ मौजूद हैं।

(२)

चित्रों का दर्शन

श्रीरामकृष्ण अब चित्रो को देखने के लिए उठे। साथ मास्टर हैं तथा कुछ भक्तगण। गृहस्वामी के भ्राता श्रीयुत पशुपति साथ साथ रहकर तस्वीरे दिखा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण पहले चतुर्भुज विष्णुमूर्ति देख रहे है। देखकर ही भावावेश में परिपूर्ण हो गये। खड़े थे, बैठ गये। कुछ काल भावाविष्ट रहे।

दूसरा चित्र श्रीरामचन्द्रजी की भक्तवत्सल मूर्ति का है। श्रीराम हनुमान के सिर पर हाथ रखकर उन्हें आशीर्वाद दे रहे हैं। हनुमान की दृष्टि श्रीरामचन्द्रजी के पादपद्मों पर लगी हुई है। श्रीरामकृष्ण बड़ी देर तक यह चित्र देखते रहे। भावावेश में कह रहे हैं – "आहा! आहा!"

तीसरा चित्र वंशीधर श्रीमदनगोपाल का है। कदम्ब के नीचे खड़े हुए हैं।

चौथा चित्र वामनावतार का हैं, छाता लगाये हुए बलि के यज्ञ में जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – 'वामन', और टकटकी लगाये देख रहे हैं।

फिर नृसिंहमूर्ति देखकर श्रीरामकृष्ण गो-चारण देख रहे हैं। श्रीकृष्ण गोपाल बालकों के साथ गौएँ चरा रहे हैं। श्रीवृन्दावन और यमुनापुलिन! मणि कह उठे, 'बड़ी सुन्दर तस्बीर है!'

सप्तम चित्र देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – 'धूमावती! 'अष्टम, 'षोड़शी'; नवम, 'भुवनेश्वरी'; 'दशम', तारा; एकादश, 'काली'। इन सब मूर्तियो को देखकर श्रीरामकृष्ण कहते हैं – "ये सब उग्र मूर्तियाँ हैं, उन्हे घर में न रखना चाहिए। इन्हें यदि घर पर रखे तो इनकी पूजा करना उचित है, साथ ही भोग भी चढ़ाना चाहिए। परन्तु आप

लोगों के भाग्य अच्छे है, आप रख सकते है।"

श्रीअन्नपूर्णा के दर्शन कर श्रीरामकृष्ण भावावेश मे कह रहे हैं – 'वाह! वाह!'

फिर देखा राधिका का राजा-वेश, सखियो के साथ वन में सिंहासन पर बैठी हुई है। श्रीकृष्ण द्वार पर कोतवाल बनकर बैठे हुए हैं।

फिर झूलना-चित्र। श्रीरामकृष्ण बड़ी देर तक इसके बाद का चित्र देख रहे है। ग्लास-केस के भीतर वीणावादिनी का चित्र है। देवी हाथ मे वीणा लिये हुए आनन्द से रागिनी अलाप रही है।

तस्बीरों का देखना समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण फिर गृहस्वामी के पास गये। खड़े हुए गृहस्वामी से कह रहे है, "आज बड़ा आनन्द आया। वाह! आप तो पूरे हिन्दू है। अंग्रेजी चित्र न रखकर इन चित्रो को रखा है, यह सचमुच बड़े आश्चर्य की बात है।"

श्रीयुत नन्द बसु बैठे हुए हैं, वे श्रीरामकृष्ण से कह रहे है – "बैठिये, आप खड़े क्यों हैं?"

श्रीरामकृष्ण (बैठकर) – ये चित्र काफी बड़े हैं। तुम अच्छे हिन्दू हो।

नन्द बसु – अंग्रेजी चित्र भी है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – वे ऐसे नहीं हैं। अंग्रेजी की ओर तुम्हारी वैसी दृष्टि नही है।

कमरे की दीवार पर श्रीयुत केशचन्द्र सेन के नवविधान की तस्बीर लटकी हुई थी। श्रीयुत सुरेश मित्र ने वह चित्र बनाया था। वे श्रीरामकृष्ण के एक प्रिय भक्त हैं। उस चित्र में दिखाया है कि श्रीरामकृष्ण केशव को दिखा रहे हैं कि भिन्न-भिन्न मार्गो से सब धर्मो के लोग ईश्वर की ही ओर अग्रसर होते जा रहे हैं। गम्यस्थान एक है, केवल मार्ग पृथक्-पृथक् हैं।

श्रीरामकृष्ण – वह तो सुरेन्द्र का बनाया हुआ चित्र है।

प्रसन्न के पिता (हँसकर) – आप भी उसके भातर हैं।

श्रीरामकृष्ण – वह एक विशेष ढंग का है, उसके भीतर सब कुछ है – वह आधुनिक भाव का चित्र है।

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण को एकाएक भावावेश हो रहा है। श्रीरामकृष्ण जगन्माता से वार्तालाप कर रहे है।

कुछ देर बाद मतवाले की भाँति कह रहे हैं – "मैं बेहोश नहीं हुआ।" घर की ओर दृष्टि करके कह रहे हैं, "बड़ा मकान, इसमें क्या हैं, – ईंटें, काठ और मिट्टी।"

कुछ देर बाद उन्होंने कहा, "देव-देवताओं के ये सब चित्र देखकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ।" फिर कहने लगे – "उग्र मूर्ति, काली, तारा (शव और शिवा के बीच श्मशान में रहनेवाली) रखना अच्छा नहीं, रखने पर पूजा चढ़ानी चाहिए।"

पशुपति (हँसकर) – वे जितने दिन चलायेगी, उतने दिन तो चलेगा ही।

श्रीरामकृष्ण – यह ठीक है। परन्तु ईश्वर मे मन रखना अच्छा है, उन्हे भूलकर रहना अच्छा नही।

नन्द बसु – उनमे मति होती कहाँ है?

श्रीरामकृष्ण – उनकी कृपा होने पर सब हो जाता है।

नन्द बसु – उनकी कृपा होती कहाँ है? उनमे कृपा करने की शक्ति भी हो तब न?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – मै समझा, तुम्हारा मत पण्डितो जैसा है कि जो जैसा कर्म करेगा, उसे वैसा फल मिलता रहेगा, यह सब छोड़ दो। ईश्वर की शरण मे जाने पर कर्मो का क्षय हो जाता है। मैने माता के पास हाथ मे फूल लेकर कहा था, 'माँ, यह लो अपना पाप और यह लो अपना पुण्य, मै कुछ नही चाहता, तुम मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना भला और यह लो अपना बुरा, मै भला-बुरा कुछ नही चाहता, मुझे बस अपनी शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना धर्म और यह लो अपना अधर्म, मै धर्माधर्म कुछ नही चाहता, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना ज्ञान और यह लो अपना अज्ञान, मै ज्ञान-अज्ञान कुछ नही चाहता, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपनी शुचिता और यह लो अपनी अशुचिता, मुझे शुचिता-अशुचिता नही चाहिए, मुझे शुद्धा भक्ति दो।'

नन्द बसु – क्या वे कानून रद्द कर सकते है?

श्रीरामकृष्ण – यह क्या! वे ईश्वर है, वे सब कुछ कर सकते है। जिन्होने कानून बनाया है, वे कानून बदल भी सकते है।

"परन्तु यह बात तुम कह सकते हो। तुम्हारी शायद भोग करने की इच्छा है, इसीलिए तुम ऐसी बात कह रहे हो। यह एक मत है भी, – ठीक है, भोग की शान्ति बिना हुए चैतन्य नही होता, परन्तु भोग भी क्या करोगे? – कामिनी और कांचन का भोग? – वह तो अभी है, अभी नही, क्षणिक। कामिनी और कांचन मे है ही क्या? छिलका और गुठली ही है – खाने पर अम्लशूल होता है। सन्देश निगलने के साथ ही स्वाद भी गायब!"

नन्द बसु चुप हो रहे। फिर कहा – 'यह सब कहते तो है, परन्तु क्या ईश्वर पक्षपात करनेवाले है? अगर उनकी कृपा से होता है, तो कहना पड़ता है कि ईश्वर मे पक्षपात है।'

श्रीरामकृष्ण – वे स्वयं ही सब कुछ है। ईश्वर स्वयं ही जीव जगत् हुए है। जब पूर्ण ज्ञान होगा, तब यह बोध होगा। वे मन, बुद्धि और देह हुए है – चौबीसो तत्त्व सब वे ही हुए है। वे पक्षपात करे भी तो किस पर करे?

नन्द बसु – अनेक रूपो का धारण उन्होने क्यो किया? – कोई ज्ञानी और कोई अज्ञानी क्यो है?

श्रीरामकृष्ण – उनकी इच्छा।

अतुल – केदार ने अच्छा कहा है। एक ने उनसे पूछा, 'ईश्वर ने सृष्टि का निर्माण क्यो किया?' इस पर वे बोले, 'जिस मीटिग मे ईश्वर ने सृष्टि बनाने का ठहराया, उस मीटिग मे मै हाजिर नही था।' (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण – उनकी इच्छा।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे।

" 'मब तुम्हारी ही इच्छा है, तुम इच्छामयी तारा हो। माँ, अपने कर्म तुम खुद करती हो, परन्तु लोग कहते है कि मै करता हूँ। ऐ काली, हाथी को तो तुम दलदल मे फँसा देती हो और किसी पंगु से गिरि का उल्लंघन करा देती हो। किसी को तुम ब्रह्मपद दे देती हो और किसी को तुम अधोगामी कर देती हो।'

"वे आनन्दमयी है। इसी सृष्टि, स्थिति और प्रलय की लीला कर रही है। जीव असंख्य है, उनमे दो ही एक मुक्त हो रहे है, उससे भी उन्हे आनन्द होता है। कोई संसार मे बँध रहा है, कोई मुक्त हो रहा है।"

नन्द बसु – उनकी इच्छा तो है, परन्तु इधर तो जान निकली जा रही है।

श्रीरामकृष्ण – तुम लोग हो कहाँ? वे ही सब कुछ हुए है। जब तक उन्हे तुम नही समझ मकते हो, तभी तक 'मै मै' कर रहे हो।

"सब लोग अगर उन्हे जान ले तो तर जायँ। परन्तु बात यह है कि किमी को दिन निकलते ही खाने को मिल जाता है, कोई दोपहर के समय भोजन पाता है और कोई शाम को, परन्तु खाना सभी को मिल जाता है – कोई बिना खाये हुए नही रहता। इसी तरह अपने स्वरूप का ज्ञान सभी प्राप्त करेगे।"

पशुपति – जी हाँ, जान पड़ता है, वे ही सब कुछ हुए है।

श्रीरामकृष्ण – मै क्या हूँ, इसे जरा खोजो तो। क्या मै हाड़ हूँ? माँस, खून या आँत हूँ? 'मै' को खोजते ही खोजते 'तुम' आ जाता है, अर्थात् अन्दर मे उस ईश्वर की शक्ति के सिवा और कुछ नही है। 'मै' नही है, 'वे' है (नन्द बसु के प्रति) तुममे अभिमान नही है – इतना ऐश्वर्य होकर भी।

" 'मै' का सम्पूर्ण त्याग नही होता। यह सब जाने का नही तो रहने दो इसे ईश्वर का दास बना। मै ईश्वर का भक्त हूँ, ईश्वर का दास हूँ, ईश्वर का पुत्र हूँ, यह अभिमान अच्छा है। जो 'मै' कामिनी और कांचन मे फँसता है वह कच्चा 'मै' है, उसी का त्याग करना चाहिए।"

अहंकार की यह व्याख्या सुनकर गृहस्वामी और दूसरे लोग बहुत प्रसन्न हुए।

श्रीरामकृष्ण – ज्ञान के लक्षण है। पहला यह कि अभिमान न रह जायेगा। दूसरा, स्वभाव शान्त बना रहेगा। तुममे दोनो लक्षण है। अतएव तुम पर ईश्वर का अनुग्रह है।

"अधिक ऐश्वर्य के होने पर ईश्वर को लोग भूल जाते है. ऐश्वर्य का स्वभाव ही

ऐसा है। यदु मल्लिक को बहुत ऐश्वर्य हुआ है, वह आजकल ईश्वर की बात ही नही करता। पहले ईश्वर-चर्चा खूब किया करता था।

"कामिनी और कांचन एक तरह की शराब है। अधिक शराब पीने पर फिर चाचा और दादा का विचार नही रह जाता। उन्हे ही कह डालता है – 'तेरी ऐसी की तैसी।' मतवाले को बडे-छोटे का ज्ञान नही रहता।"

नन्द बसु – हाँ, यह ना ठीक है।

पशुपति – ये सब क्या ठीक है? – स्पिरिच्युएलिज्म, थियोसफी, सूर्यलोक, नक्षत्रलोक?

श्रीरामकृष्ण – नही भाई, मैं नही जानता। इतना हिसाब-किताब क्यो? आम खाओ। आम के कितने पेड है, कितनी लाख डालियाँ है, कितने करोड पत्ते है, इसके हिसाब लगाने की क्या जरूरत? मै बगीचे मे आम खाने के लिए आया करता हूँ, आम खाकर चला जाऊँगा।

"एक बार भी अगर चैतन्य हो, अगर एक बार भी ईश्वर को कोई समझ सके, तो दूसरी व्यर्थ बातो के जानने की इच्छा भी नही होती। विकार के होने पर लोग बहुत कुछ बका करते है – 'अरे! मै तो पाँच सेर चावल का भात खाऊँगा, मै दस घडा पिऊँगा रे!' – यह सब। वैद्य कहता है – 'खायेगा! अच्छा खा लेना' – यह कहकर वह तम्बाकू पीने लगता है। विकार अच्छा हो जाने पर, रोगी जो कुछ कहता है उसकी ओर वह ध्यान देता है।"

पशुपति – जान पडता है, हम लोगो का विकार चिरकाल तक बना रहेगा।

श्रीरामकृष्ण – क्यो, ईश्वर पर मन रखो, चैतन्य प्राप्त होगा।

पशुपति (सहास्य) – हम लोगो का ईश्वर से योग क्षणिक है। तम्बाकू पीने मे जितनी देर लगती है, बस उतनी ही देर तक। (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण – तो क्या हुआ, थोड़ी देर के लिए भी उनसे योग हो गया तो मुक्ति होगी ही।

"अहिल्या ने कहा, 'राम, चाहे शूकर-योनि मे जन्म हो, अथवा और कही, ऐसा करो कि तुम्हारे श्रीचरणो मे मन लगा रहे – शुद्धा भक्ति बनी रहे।'

पाप तथा परलोक। मृत्युकाल के समय ईश्वर-चिन्ता

"नारद ने कहा, 'राम! तुमसे मै और कोई वर नही चाहता। मुझे बस शुद्धा भक्ति दो। और यह आशीर्वाद करो कि फिर कभी तुम्हारी भुवनमोहिनी माया मे बद्ध न होऊँ।' उनसे आन्तरिक प्रार्थना करने पर उन पर मन भी लगता है और शुद्धा भक्ति भी उनके श्रीचरणो मे होती है।

" 'क्या हमारा विकार दूर होगा? – हम पापी जो है,' यह सब बुद्धि दूर करो। (नन्द बसु से) चाहिए यह भाव कि एक बार हमने उनका नाम लिया है, अब हममें पाप कहाँ रह गया?"

नन्द बसु – क्या परलोक है? और पाप का शासन?

श्रीरामकृष्ण – तुम आम खाते तो जाओ। इन सब बातों के हिसाब से तुम्हें क्या काम? – परलोक है या नही – वहाँ क्या होता है, क्या नही – इन सब बातों से क्या प्रयोजन?

"आम खाओ, आम की जरूरत है – उनमें भक्ति की जरूरत है।"

नन्द बसु – आम का पेड़ है कहाँ? – आम मिलता कहाँ है?

श्रीरामकृष्ण – पेड़! वे अनादि और अनन्त ब्रह्म है। वे तो है ही – वे नित्य है। एक बात और – वे कल्पतरु हैं।

"उस कल्पतरु के नीचे तुम्हे चारों फल मिलेगे।

"कल्पतरु के पास जाकर प्रार्थना करनी चाहिए, फल तभी मिलता है। तब देखोगे, पेड़ के नीचे फल हैं; तब बीन लेना। चार फल है – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

"ज्ञानी मुक्ति चाहते हैं, भक्त भक्ति चाहते है – अहैतुकी भक्ति, वे धर्म, अर्थ, काम नही चाहते।

"परलोक की बात कहते हो। गीता का मत है, मृत्यु के समय जो कुछ सोचोगे, वही होओगे। राजा भरत ने हरिण-हरिण कहकर दु:ख मे देह छोड़ी थी। दूसरे जन्म मे वे हरिण हुए भी थे। इसीलिए जप, ध्यान और पूजा आदि का दिन-रात अभ्यास किया जाता है, इस तरह अभ्यास के गुण से मृत्यु के समय ईश्वर की याद आती है। इस तरह से अगर मृत्यु होती है तो ईश्वर का स्वरूप मिलता है। केशव सेन ने भी परलोक की बात पूछी थी। मैंने केशव से कहा, 'इन सब बातों का हिसाब लगाकर क्या करोगे? फिर कहा, 'जब तक ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती, तब तक बार बार संसार मे आना-जाना होगा। कुम्हार मिट्टी के बासन धूप में सुखाता है। बकरी या गाय के पैरों से दबकर जो फूट जाते है उनमें जो पक्के बासन होते है उन्हें तो कुम्हार फेंक देता है, परन्तु कच्चे बासनो को वह फिर से गढ़ता है।' "

(३)

ज्ञानमार्ग तथा शुद्धा भक्ति

अब तक गृहस्वामी ने श्रीरामकृष्ण के जलपान के लिए कोई व्यवस्था नहीं की। श्रीरामकृष्ण स्वयं उनसे कह रहे हैं – "कुछ खाना चाहिए। यदु की माँ से उस दिन इसीलिए मैंने कहा, 'कुछ खाने को दो।' नहीं तो गृहस्थ का कहीं अमंगल न हो।"

गृहस्वामी ने कुछ मिष्टान्न मँगाया। श्रीरामकृष्ण मिष्टान्न खा रहे हैं। नन्द बसु तथा अन्य लोग श्रीरामकृष्ण की ओर एकदृष्टि से ताक रहे हैं। देख रहे है, वे क्या करते हैं।

श्रीरामकृष्ण हाथ धोयेंगे। जिस तश्तरी में मिठाई दी गयी थी वह दरी पर बिछी हुई चद्दर पर रखी थी, इसलिए श्रीरामकृष्ण वहीं अपने हाथ नही धो सके। हाथ धोने के लिए एक आदमी एक बरतन (पीकदान) ले आया।

पीकदान रजोगुण का चिह्न है। श्रीरामकृष्ण देखकर कह उठे, "ले जाओ – ले जाओ।" गृहंस्वामी ने कहा, "हाथ धोइये।"

श्रीरामकृष्ण अन्यमनस्क हैं। कहा, "क्या? – हाथ धोऊँगा।"

श्रीरामकृष्ण बरामदे के दक्षिण ओर उठ गये। मणि को हाथ पर पानी डालने के लिए आज्ञा की। मणि गडुए से पानी छोड़ने लगे। श्रीरामकृष्ण अपनी धोती में हाथ पोछकर फिर बैठने की जगह पर आ गये। समागत सज्जनो के लिए तश्तरी में पान लाये गये थे। उसी में के पान श्रीरामकृष्ण के पास ले जाये गये। उन्होंने पान नहीं लिया।

नन्द वसु (श्रीरामकृष्ण से) – एक बात कहूँ?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – क्या?

नन्द बसु – पान आपने क्यों नही खाया? सब तो ठीक हुआ, इतना यह अन्याय हो गया।

श्रीरामकृष्ण – इष्ट को देकर खाता हूँ। यह एक अपना भाव है।

नन्द बसु – वह तो इष्ट ही में जाता।

श्रीरामकृष्ण – ज्ञानमार्ग और चीज है, और भक्तिमार्ग दूसरी।

ज्ञानी के मत से सभी चीजें ब्रह्मज्ञान की दृष्टि से ली जा सकती हैं, भक्तिमार्ग में कुछ भेद-बुद्धि होती है।

नन्द बसु – तो यह दोष हुआ है।

श्रीरामकृष्ण – यह एक मेरा भाव है। तुम जो कुछ कहते हो ठीक है, वैसा भी है।

श्रीरामकृष्ण गृहस्वामी को चापलूसो के सम्बन्ध मे सावधान कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – एक बात के बारे में सावधान रहना। चापलूस अपने स्वार्थ की ताक में रहते है। (प्रसन्न के पिता से) आप क्या यहाँ रहते हैं?

प्रसन्न के पिता – जी नही, परन्तु इसी मुहल्ले में रहता हूँ।

नन्द बसु का मकान बहुत बड़ा है, इस पर श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – "यदु का मकान इतना बड़ा नही है। इसीलिए उससे उस दिन मैंने कहा।"

नन्द – हाँ, उन्होने (जोड़ासाखों मे) एक नया मकान बनवाया है।

श्रीरामकृष्ण नन्द वसु का उत्साह बढ़ा रहे है, कह रहे हैं –

"तुम संसार मे रहकर ईश्वर की ओर मन रखे हुए हो, क्या यह कुछ कम बात है?

जिसने संसार का त्याग कर दिया है वह तो ईश्वर को पुकारेगा ही। उसमे बहादुरी क्या है? जो संसार मे रहकर पुकारता है, धन्य वही है।

"किसी एक भाव का आश्रय लेकर उन्हे पुकारना चाहिए। हनुमान मे ज्ञान और भक्ति दोनो थे, नारद मे शुद्धा भक्ति थी।

"राम ने पूछा, 'हनुमान, तुम किस भाव से मेरी पूजा करते हो?' हनुमान ने कहा, 'कभी तो देखता हूँ, तुम पूर्ण हो और मै अंश हूँ, कभी देखता हूँ, तुम प्रभु हो और मै दास हूँ, और राम, जब तत्त्व का ज्ञान होता है, तब देखता हूँ, तुम्ही 'मै हो और मै ही 'तुम' हूँ।'

"राम ने नारद से कहा, 'तुम वर लो।' नारद ने कहा, 'राम, यह वर दो कि तुम्हारे पादपद्मो मे शुद्धा भक्ति हो जिससे फिर तुम्हारी भुवन-मोहिनी माया से मुग्ध न होऊँ।' "

श्रीरामकृष्ण अब उठनेवाले है।

श्रीरामकृष्ण (नन्द बसु से) – गीता का मत है, बहुत-से आदमी जिसे मानते और पूजते है उसमे ईश्वर की विशेष शक्ति है। तुममे ईश्वर की शक्ति है।

नन्द बसु – शक्ति सभी मनुष्यो मे बराबर है।

श्रीरामकृष्ण (विरक्ति से) – यही तुम लोगो की एक रट है। सब आदमियो की शक्ति कभी बराबर हो सकती है? विभुरूप से वे सर्वभूतो मे विराजमान है, यह ठीक है, परन्तु शक्ति की विशेषता है।

"यही बात विद्यासागर ने भी कही थी। उसने कहा था, 'क्या उन्होने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम?' तब मैने कहा, 'अगर शक्ति की भिन्नता न रहती, तो तुम्हे हम लोग देखने क्यो आते? क्या तुम्हारे सिर पर दो सीग है?' "

श्रीरामकृष्ण उठे। साथ-साथ सब भक्त भी उठे। पशुपति साथ साथ दरवाजे तक आये।

(४)

ब्राह्मणी के मकान में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण बागबाजार की एक शोकातुरा ब्राह्मणी के यहाँ आये हुए है। मकान पुराना है, पर पक्का है। छत पर बैठने का प्रबन्ध किया गया है। छत पर कतार बाँधकर कुछ लोग खडे है, कुछ लोग बैठे हुए है। सब उत्सुक है कि श्रीरामकृष्ण को कब देखे।

ब्राह्मणी दो बहने है, दोनो विधवा है, घर मे उनके भाई सपत्नीक रहते है। ब्राह्मणी के एक ही कन्या थी। उसके निधन से वह अत्यन्त दु:खी रहा करती है। आज श्रीरामकृष्ण पधारेगे, यह सुनकर दिन भर से वह उनके स्वागत की तैयारी कर रही है। जब तक श्रीरामकृष्ण नन्द बसु के यहाँ थे तब तक ब्राह्मणी भीतर-बाहर कर रही थी कि कब वे

आये। आने में विलम्ब होते देख वह निराश हो रही थी।

भक्तों के साथ आकर छत पर बैठने के स्थान पर श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण किया। पास चटाई पर मास्टर, नारायण, योगीन्द्र सेन, देवेन्द्र तथा योगीन बैठे हुए है। कुछ देर बाद छोटे नरेन्द्र आदि बहुत से भक्त आ गये। ब्राह्मणी की बहन छत पर आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके कह रही है – "दीदी नन्द बसु के यहाँ खबर लेने के लिए अभी थोड़ी देर हुई, गयी है। आती ही होगी।"

नीचे एक शब्द सुनकर उसने कहा, 'वह – दीदी आयी।' यह कहकर वह देखने लगी, परन्तु ब्राह्मणी नही आयी थी।

श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक भक्तो के बीच में बैठे हुए है।

मास्टर (देवेन्द्र से) – कितना सुन्दर दृश्य है! लड़के बच्चे, पुरुष, स्त्री – सब लोग कतार बाँधकर खड़े हुए है। सब लोग इन्हे देखने के लिए कितने उत्सुक हो रहे है -- और इनकी बात सुनने के लिए!

देवेन्द्र – (श्रीरामकृष्ण से) – मास्टर महाशय कहते है, 'नन्द बसु के वहाँ से यह जगह अच्छी है, - इन लोगो मे कितनी भक्ति है!'

श्रीरामकृष्ण हँस रहे है।

अब ब्राह्मणी की बहन कह रही है, 'दीदी वह आ रही है।'

ब्राह्मणी श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके, कुछ सोच न सकी कि क्या कहे।

वह अधीर होकर कहने लगी – "अरी, देख, इतना आनन्द मैं कहाँ रखूँ? – बताओ री - जब मेरी चण्डी आती थी, सिपाहियों को साथ लेकर, और वे लोग रास्ते पर पहरा देते थे, तब भी तो मुझे इतना आनन्द नही हुआ – अरी, अब मुझे चण्डी का दुःख जरा भी नही है। मैने सोचा था, जब वे नही आये, तब जो कुछ आयोजन मैने किया, सब गंगा मे फेक दूँगी – फिर कभी उनसे (श्रीरामकृष्ण से) बोलूँगी भी नही – जहाँ आयेंगे, आड़ से एक बार देख भर लूँगी, बस चली आऊँगी।

"जाऊँ, सब से कहूँ, तुम आकर मेरा सुख देख जाओ, – जाऊँ योगीन से कहूँ, मेरा सुख देख जा –"

मारे आनन्द के अधीर होकर ब्राह्मणी फिर कहने लगी – "खेल (लाटरी) मे एक रुपया लगाकर किसी कुली को एक लाख रुपये मिले थे। एक लाख रुपये मिले है, सुनकर मारे आनन्द से वह मर गया था – सचमुच मर गया था! – अरी! मेरी भी तो वही दशा हो गयी है। तुम लोग सब आशीर्वाद दो, नही तो मै भी सचमुच मर जाऊँगी।"

मणि ब्राह्मणी की व्याकुलता और भाव की अवस्था देखकर मुग्ध हो गये है। वे उसके पैरो की धूल लेने के लिए बढ़े। ब्राह्मणी ने कहा, 'अजी, यह क्या?' – उसने मणि को भी बदले मे प्रणाम किया।

ब्राह्मणी भक्तों को आये हुए देखकर मारे आनन्द के कह रही है – "तुम सब लोग आये हो, छोटे नरेन्द्र को भी मैं ले आयी हूँ, नहीं तो हँसेगा कौन?" ब्राह्मणी इसी तरह की बातें कह रही है, इसी समय उसकी बहन ने आकर कहा, 'दीदी, तुम जरा नीचे भी तो आओ, हम लोग अकेले क्या क्या करें?'

ब्राह्मणी आनन्द में अपने को भूली हुई है। श्रीरामकृष्ण तथा भक्तों को देख रही है। उन्हें अब छोड़कर जा नहीं सकती।

इस तरह की बातों के पश्चात् बड़ी भक्ति से ब्राह्मणी श्रीरामकृष्ण को एक दूसरे कमरे में ले गयी और खाने के लिए अनेक मिष्टान्न आदि दिये। भक्तों को भी छत पर बैठाकर खिलाया।

रात के आठ बजे। श्रीरामकृष्ण बिदा हो रहे हैं। नीचे के मँजले में कमरे के साथ बरामदा भी है। बरामदे से पश्चिम की ओर आँगन मे आया जाता है, फिर दाहिनी ओर गोओं के रहने की जगह छोड़कर सदर दरवाजे को रास्ता है। उस समय ब्राह्मणी जोर से पुकार रही थी – 'ओ बहू, जल्दी आ – पैरों की धूल ले।' बहू ने प्रणाम किया। ब्राह्मणी के एक भाई ने भी आकर प्रणाम किया।

ब्राह्मणी श्रीरामकृष्ण से कह रही है – 'यह एक दूसरा भाई है – अनाड़ि है।'

श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'नहीं, सब भलेमानस हैं।'

एक व्यक्ति साथ साथ दिया दिखाते हुए आ रहे है, आते आते एक जगह प्रकाश ठीक नहीं पहुँचा, तब छोटे नरेन्द्र ऊँचे स्वर से कहने लगे – 'दिया दिखाओ – दिया दिखाओ – यह न सोचो दिया दिखाना अब बस है।' (सब हँसते हैं)

अब गौओं की जगह आयी। ब्राह्मणी श्रीरामकृष्ण से कहती है, 'यहाँ मेरी गौएँ' रहती है।' श्रीरामकृष्ण वहाँ जरा खड़े हो गये, और चारों ओर भक्तगण। मणि ने भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया और पैरों की धूल ली।

अब श्रीरामकृष्ण गनू की माँ के घर जायेंगे।

(५)

गनू की माँ के मकान में श्रीरामकृष्ण

गनू की माँ के बैठकखाने में श्रीरामकृष्ण बैठे हुए है। कमरा एक मॅजले पर है, बिलकुल रास्ते पर। उस कमरे में बजानेवालों का अखाड़ा (Concert) लगा करता है। कुछ नवयुवक श्रीरामकृष्ण के आनन्द के लिए वाद्ययन्त्र लेकर बीच बीच में बजाते भी हैं।

रात के साढ़े आठ बजे का समय होगा। आज आषाढ़ की कृष्णा प्रतिपदा है। चाँदनी में आकाश, गृह, राजपथ, सब कुछ प्लावित हो रहा है। श्रीरामकृष्ण के साथ भक्तगण आकर उसी कमरे में बैठे।

साथ साथ ब्राह्मणी भी आयी हुई है, वह कभी घर के भीतर जा रही है, कभी बाहर बैठकखाने के दरवाजे के पास खड़ी होती है। मुहल्ले के कुछ लड़के झरोखों पर चढ़कर श्रीरामकृष्ण को झाँककर देख रहे हैं। मुहल्ले भर के लड़के, बूढ़े और जवान श्रीरामकृष्ण के आगमन की बात सुनकर उनके दर्शन करने के लिए आये हैं।

झरोखे पर बच्चों को देखकर छोटे नरेन्द्र कह रहे हैं, 'अरे, तुम लोग वहाँ क्यों खड़े हो, जाओ अपने अपने घर।' श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'नहीं, नहीं रहने दो।'

श्रीरामकृष्ण बीच बीच में 'हरि ॐ – हरि ॐ' कह रहे हैं।

दरी पर एक आसन बिछाया गया है। श्रीरामकृष्ण उसी पर बैठे है। वाद्य बजानेवाले लड़कों से गाने के लिए कहा गया। उनके लिए बैठने की सुविधा नही है। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें अपने पास दरी पर बैठने के लिए बुलाया।

श्रीरामकृष्ण कहते हैं, 'इसी पर आकर बैठो। मैं इसे समेटे लेता हूँ।' यह कहकर उन्होंने अपना आसन समेट लिया। नवयुवक गा रहे हैं – "केशव कुरु करुणा दीने कुंजकाननचारी।"

श्रीरामकृष्ण – अहा! कितना मधुर गाना है! – बेला भी कितना सुन्दर बज रहा है! और गाना भी कैसा स्वरयुक्त हो रहा है!

एक लड़का फ्लुट (बंसी) बजा रहा था। उसकी ओर तथा एक दूसरे लड़के की ओर उँगली से इशारा करके श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'ये इनके जोड़ीदार हैं।'

अब वाद्य बजने लगे। श्रीरामकृष्ण आनन्दित होकर कह रहे है – "वाह! कितना सुन्दर है!"

एक लड़के की ओर उँगली से इशारा करके कह रहे हैं – "इनको सब तरह का बाजा बजाना आता है।"

मास्टर से कह रहे है – "ये सब बड़े अच्छे आदमी हैं।"

बालक-भक्त जब खुद गा-बजा चुके तब भक्तों से उन्होंने कहा, 'आप लोग भी कुछ गाइये।' ब्राह्मणी खड़ी हुई है। उसने दरवाजे के पास ही से कहा, 'ये लोग कोई गाना नही जानते। एक है महिनबाबू, परन्तु उनके (श्रीरामकृष्ण के) सामने वे भी नही गायेंगे।'

एक बालक-भक्त – क्यों, मैं तो अपने बाबूजी के सामने गा सकता हूँ।

छोटे नरेन्द्र (जोर से हँसकर) – इतनी दूर ये नहीं बढ़ सके।

सब हँस रहे हैं। कुछ देर बाद ब्राह्मणी ने आकर कहा, "आप भीतर आइये।" श्रीरामकृष्ण ने पूछा – "क्यों?"

ब्राह्मणी – वहाँ जलपान की व्यवस्था की गयी है।

श्रीरामकृष्ण – यहीं न ले आओ।

ब्राह्मणी – गनू की माँ ने कहा है, 'घर में ले आओ, पैरों की धूल पड़ जायेगी तो

मेरा घर वाराणसी हो जायेगा, इस घर में मरूँगी तो फिर किसी बात की चिन्ता न रहेगी।'

श्रीरामकृष्ण घर के लड़को के साथ मकान के भीतर गये। भक्तगण चाँदनी में टहलने लगे। मास्टर और विनोद घर के दक्षिण ओर सदर रास्ते पर बातें करते हुए टहल रहे हैं।

(६)

गुह्य कथा। 'तीनों एक'

श्रीरामकृष्ण बलराम के घर लौट आये है। बलराम के बैठकखाने के पश्चिम ओरवाले कमरे मे विश्राम कर रहे है, अब वे सोयेंगे। गनू की माँ के घर से लौटते हुए बड़ी रात हो गयी है। रात के पौने ग्यारह बजे होंगे।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – "योगीन, जरा पैरों पर हाथ तो फेर दो।" पास ही मास्टर भी बैठे हुए हैं।

योगीन पैरों पर हाथ फेर रहे हैं, इतने मे ही श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'मुझे भूख लगी है, थोड़ीसी सूजी खाऊँगा।'

ब्राह्मणी यहाँ भी साथ-साथ आयी हुई है। ब्राह्मणी के भाई तबला बहुत अच्छा बजाते हैं। श्रीरामकृष्ण ब्राह्मणी को देखकर फिर कह रहे हैं, 'अगली बार नरेन्द्र या किसी दूसरे गवैये के आने पर इनके भाई भी बुला लिये जायेंगे।'

श्रीरामकृष्ण ने थोड़ीसी सूजी खायी। क्रमशः योगीन आदि भक्तगण कमरे से चले गये। मणि श्रीरामकृष्ण के पैरों पर हाथ फेर रहे हैं, श्रीरामकृष्ण उनसे बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अहा, इन्हे (ब्राह्मणी आदि को) कितना आनन्द हुआ है!

मणि – कैसे आश्चर्य की बात है, ईसा मसीह के समय भी ऐसा ही हुआ था। वे भी दो बहनें थी – परम भक्त मारथा (Martha) और मेरी (Mary)।

श्रीरामकृष्ण (आग्रह से) – उनकी कहानी क्या है, जरा कहो तो।

मणि – ईशू उनके यहाँ भक्तो के साथ बिलकुल इसी तरह गये थे। एक बहन उन्हें देखकर भाव और आनन्द के पारावार मे मग्न हो गयी थी। यह मुझे गौरांग के बारे में एक गीत की याद दिलाती है : 'गौर के रूप-सागर में मेरे नयन डूब गये, फिर लौटकर मेरे पास न आये; मेरा मन भी, तैरना भूलकर, एकदम तल में पैठ गया।'

"दूसरी बहन अकेली जलपान का प्रबन्ध कर रही थी। उसने अपनी बहन से कोई मदद न पा ईशू के पास शिकायत की, कहा, 'प्रभु, देखिये तो, दीदी का यह कितना बड़ा अन्याय है! आप यहाँ अकेली चुपचाप बैठी हुई हैं और मैं अकेली यह सब काम कर रही हूँ!'

"तब ईशू ने कहा, 'तुम्हारी दीदी धन्य हैं, क्योंकि मनुष्यजीवन में जो कुछ चाहिए

(ईश्वर-प्रेम) वह उन्हे हो गया है।' "

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, यह सब देखकर तुम्हे क्या जान पड़ता है?

मणि – मुझे जान पड़ता है, ईशू, चैतन्य और आप एक ही है।

श्रीरामकृष्ण – एक! एक। एक ही तो। वे (ईश्वर) – देखते नही हो – इसमे किस तरह से है!

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने अपने शरीर की ओर उँगली से इशारा किया।

मणि – उस दिन आप इस अवतीर्ण होने की बात को बहुत अच्छी तरह समझा रहे थे।

श्रीरामकृष्ण – किस तरह, कहो तो।

मणि – जैसे खूब लम्बा-चौड़ा मैदान पडा हुआ है। सामने चारदीवार है। इसलिए वह मैदान हमे देखने को नही मिलता। उस चारदीवार मे एक गोलाकार छेद है। उस छेद मे उस मैदान का कुछ अंश दिखायी पडता है।

श्रीरामकृष्ण – कहो भला वह छेद क्या है?

मणि – वह छेद आप है, आपके भीतर से सब दीख पडता है, – वह दिगन्तव्यापी मैदान भी दिखायी पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण सन्तुष्ट होकर मणि की पीठ ठोकने लगे और कहा, 'तुमने इसे समझ लिया, अच्छा हुआ।'

मणि – उसे समझना सचमुच बड़ा कठिन है। पूर्ण ब्रह्म होते हुए भी उतने के भीतर किस तरह रहते है, यह नही समझ मे आता।

श्रीरामकृष्ण – उसे किसी ने न पहचाना, वह पागल की तरह जीवो के घरो मे घूम रहा है।

मणि – और आपने ईशू की बात कही थी।

श्रीरामकृष्ण – क्या-क्या?

मणि – यदु मल्लिक के बगीचे मे ईशू की तस्बीर देखकर भावसमाधि हुई थी, आपने देखा था – ईशू की मूर्ति तस्बीर से निकलकर आपमे आकर लीन हो गयी।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप है। फिर मणि से कह रहे है – 'गले मे यह जो हुआ है, सम्भव है इसका कोई अर्थ हो। यदि यह न होता तो मै सब स्थानो मे जाता, गाता और नाचता, और इस प्रकार स्वयं को खिलवाड़-सा बना लेता।'

श्रीरामकृष्ण द्विज की बात कह रहे है। कहा – 'द्विज नही आया।'

मणि – मैने तो आने के लिए कहा था। आज आने की बात भी थी, परन्तु क्यो नही, आया, कुछ समझ मे नही आता।

श्रीरामकृष्ण – उसमे अनुराग खूब है। अच्छा, वह यहाँ का (सांगोपांग मे से) कोई

एक होगा, न?

मणि – जी हॉ, होगा जरूर। नही तो इतना अनुराग फिर कैसे होता?

मणि मसहरी के भीतर श्रीरामकृष्ण को पंखा झल रहे है।

श्रीरामकृष्ण करवट बदलकर फिर बातचीत करने लगे। आदमी के भीतर अवतीर्ण होकर वे लीला करते है, यही बात हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – पहले मुझे रूपदर्शन नही होता था, ऐसी अवस्था भी हो चुकी है। इस समय भी देखते नही हो? रूपदर्शन घटता जा रहा है।

मणि - लीलाओ मे नरलीला मुझे अधिक पसन्द है।

श्रीरामकृष्ण – तो बस ठीक है। – और तुम मुझे देखते ही हो!

उपरोक्त कथन से क्या श्रीरामकृष्ण का यही संकेत है कि ईश्वर नररूप मे अवतीर्ण होकर इस शरीर मे लीला कर रहे है?

□□□

परिच्छेद ११९

श्रीरामकृष्ण के आध्यात्मिक अनुभव

(१)

द्विज तथा द्विज के पिताजी। मातृऋण तथा पितृऋण

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर मे अपने उसी कमरे मे राखाल, मास्टर आदि भक्तों के साथ बैठे हुए है। दिन के ३-४ बजे का समय होगा।

श्रीरामकृष्ण के गले की बीमारी की जड़ जमने लगी है। तथापि दिन भर वे भक्तो की मंगलकामना करते रहते है। किस तरह वे संसार मे बद्ध न हो, किस तरह उनमे ज्ञान और भक्ति हो – ईश्वर की प्राप्ति हो, इसी की चिन्ता किया करते है।

श्रीयुत राखाल वृन्दावन से आकर कुछ दिन घर पर थे। आजकल वे श्रीरामकृष्ण के पास रहते है। लाटू, हरीश और रामलाल भी श्रीरामकृष्ण के पास रहते है।

श्रीमाताजी (श्रीरामकृष्ण की धर्मपत्नी) भी कई महीने हुए श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए देश से आयी हुई है। वे नौबतखाने मे रहती है। शोकातुरा ब्राह्मणी कई रोज से उनके पास रहती है।

श्रीरामकृष्ण के पास द्विज, द्विज के पिता और भाई, मास्टर आदि बैठे हुए है। आज ९ अगस्त है, १८८५।

द्विज की उम्र सोलह साल की होगी। उनकी माता के निधन के बाद उनके पिता ने दूसरा विवाह कर लिया है। द्विज मास्टर के साथ प्रायः श्रीरामकृष्ण के पास आया करते है। परन्तु उनके पिता को इससे बड़ा असन्तोष है।

द्विज के पिता श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए आयेगे, यह बात उन्होने बहुत दिन पहले ही कही थी। आज इसीलिए आये भी है। वे कलकत्ते के किसी विदेशी बनिये के ऑफिस के मैनेजर हैं।

श्रीरामकृष्ण (द्विज के पिता से) – आपका लड़का यहाँ आता है, इससे आप कुछ और न सोचियेगा।

"मै तो कहता हूँ, चैतन्य प्राप्त करके संसार मे रहो। बड़ी मेहनत के बाद अगर कोई सोना पा ले, तो वह उसे चाहे मिट्टी मे गाड़ रखे, सन्दूक मे बन्द कर रखे, अथवा पानी

मे रखे, सोने का इससे कुछ बनता-बिगड़ता नही।

"मै कहता हूँ, अनासक्त होकर संसार करो। हाथो मे तेल लगाकर कटहल काटो, तो हाथ मे दूध न चिपकेगा।

"कच्चे 'मैं' को संसार मे रखने पर मन मलिन हो जाता है। ज्ञानलाभ करके संसार मे रहना चाहिए।

"पानी मे दूध को डाल रखने पर दूध नष्ट हो जाता है। परन्तु उसी का मक्खन निकालकर पानी मे डालने पर फिर कोई झंझट नही रह जाती।"

द्विज के पिता – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – आप जो इन्हे डाँटते है, इसका मतलब मै समझता हूँ। आप इन्हे डरवाते है। ब्रह्मचारी ने साँप से कहा, 'तू तो बड़ा मूर्ख है! मैने तुझे बस काटने ही के लिए मना किया था, फुफकारने के लिए नही। तूने अगर फुफकारा होता तो तेरे शत्रु तुझे मार न सकते।' इसी तरह आप जो लड़को को डाँटते है, वह केवल फुफकारना ही है। (द्विज के पिता हँस रहे है)

"लड़के का अच्छा होना पिता के पुण्य के लक्षण है। अगर कुएँ का पानी अच्छा निकला तो वह कुएँ के मालिक के पुण्य का चिह्न है।

"बच्चे को आत्मज कहते है। तुममे और तुम्हारे बच्चे मे कोई भेद नही। एक रूप से बच्चा तुम्ही हुए हो। एक रूप से तुम विषयी हो, ऑफिस का काम करते हो, संसार का भोग करते हो, एक दूसरे रूप से तुम्ही भक्त हुए हो – अपने सन्तान के रूप से। मैने सुना था, तुम घोर विषयी हो। परन्तु बात ऐसी तो नही है। (सहास्य) यह सब तो तुम जानते ही हो। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि शायद तुम बहुत अधिक सतर्क हो, इसीलिए जो कुछ मै कहता हूँ उस पर तुम सिर हिला-हिलाकर अपनी राय देते हो। (द्विज के पिता मुसकराते है)

"यहाँ आने पर तुम क्या हो, यह ये लोग समझ सकेगे। पिता का स्थान कितना ऊँचा है! माता-पिता को धोखा देकर जो धर्म करना चाहता है उसे क्या खाक हो सकता है?

"आदमी के बहुत से ऋण है, पितृऋण, देवऋण, ऋषिऋण; इसके अतिरिक्त मातृऋण भी है। फिर स्त्री के ऋण का भी उल्लेख है – इसे भी मानना चाहिए। अगर वह सती है तो पति को अपनी मृत्यु के बाद उसके भरण-पोषण के लिए व्यवस्था कर जानी चाहिए।

"मै अपनी माँ के कारण वृन्दावन मे न रह सका। ज्योही याद आया कि माँ दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे है, फिर वृन्दावन मे मन न लगा।

"मै इन लोगो से कहता हूँ, संसार भी करो और ईश्वर मे भी मन रखो। संसार

छोड़ने के लिए मैं नहीं कहता, यह करो और वह भी करो।''

पिता – मैं उससे यही कहता हूँ कि वह लिखना-पढ़ना भी करे, आपके यहाँ आने से मैं मनाई तो नही करता। परन्तु लड़कों के साथ हँसी-मजाक में समय नष्ट न किया करे –

श्रीरामकृष्ण – इसमें अवश्य ही संस्कार था। इसके दूसरे दो भाइयों में वह बात न होकर इसी में यह क्यों पैदा हुई?

''जबरदस्ती क्या तुम मना कर सकोगे? जिसमें जो कुछ है, वह होकर ही रहेगा।''

पिता – हॉ, यह तो है।

श्रीरामकृष्ण द्विज के पिता के पास चटाई पर आकर बैठे। बातचीत करते हुए एक बार उनकी देह पर हाथ लगा रहे हैं।

सन्ध्या हो आयी। श्रीरामकृष्ण मास्टर आदि से कह रहे हैं, 'इन्हें सब देवता दिखा ले आओ – अच्छा रहता तो मै भी साथ चलता।'

लड़कों को सन्देश देने के लिए कहा। द्विज के पिता से कह रहे हैं – 'ये कुछ जलपान करेंगे, कुछ जलपान करना चाहिए।' द्विज के पिता देवालय देखकर बगीचे मे जरा टहल रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे में भूपेन, द्विज और मास्टर आदि के साथ आनन्द-पूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं। कौतुक करते हुए भूपेन और मास्टर की पीठ में मीठी चपत मार रहे है। द्विज से हँसते हुए कह रहे हैं, ''कैसा कहा मैंने तेरे बाप से?''

सन्ध्या के बाद द्विज के पिता श्रीरामकृष्ण के कमरे में फिर आये। कुछ देर में बिदा होनेवाले है।

द्विज के पिता को गरमी लग रही है। श्रीरामकृष्ण अपने हाथों से पंखा झल रहे है।

द्विज के पिता बिदा हुए। श्रीरामकृष्ण उठकर खड़े हो गये।

(२)

समाधि के प्रकार

रात के आठ बजे हैं। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से बातचीत कर रहे हैं। कमरे में राखाल, मास्टर और महिमाचरण के दो-एक मित्र बैठे हैं।

महिमाचरण आज रात को यहीं रहेंगे।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, केदार को कैसा देख रहे हो? – उसने दूध देखा ही है या पिया भी है?

महिमा – हाँ, आनन्द पा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – और नृत्यगोपाल?

महिमा – सुन्दर। अच्छा अवस्था है।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, अच्छा गिरीश घोष कैसा हुआ है?

महिमा – अच्छा हुआ है, परन्तु लडको का दर्जा और है।

श्रीरामकृष्ण – और नरेन्द्र?

महिमा – मै पन्द्रह साल पहले जैसा था, यह वैसा ही है।

श्रीरामकृष्ण – और छोटा नरेन्द्र? कैसा सरल है।

महिमा – जी हॉ, खूब सरल।

श्रीरामकृष्ण – तुमने ठीक कहा है। (सोचते हुए) और कौन है?

"जो सब लडके यहॉ आ रहे है, उन्हे बस दो बातो को जानने से ही हुआ। ऐसा होने से फिर अधिक साधन-भजन न करना होगा। पहली बात – मै कौन हूॅ, दूसरी – वे कौन है। इन लडको मे बहुतेरे अन्तरंग है।

"जो अन्तरग है, उनकी मुक्ति न होगी। वायव्य दिशा मे एक बार और (मुझे) देह धारण करना होगा।

"बच्चो को देखकर मेरे प्राण शीतल हो जाते है। और जो लोग बच्चे पैदा कर रहे है, मुकदमा और मामलेबाजी कर रहे है, उन्हे देखकर कैसे आनन्द हो सकता है? शुद्ध आत्मा को बिना देखे रहूॅ कैसे?"

महिमाचरण शास्त्रो से श्लोको की आवृत्ति करके सुना रहे है, और तन्त्रो से भूचरी, खेचरी और शाम्भवी, कितनी ही मुद्राओ की बाते कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, समाधि के बाद मेरी आत्मा महाकाश मे पक्षी की तरह उडती हुई घूमती है, ऐसी बात कोई कोई कहते है।

"हृषीकेश का साधु आया था। उसने कहा, 'समाधियॉ पॉच प्रकार की होती है, – देखता हूॅ तुम्हे तो सभी समाधियॉ होती है। पिपीलिकावत्, मीनवत्, कपिवत्, पक्षीवत्, तिर्यग्वत्।'

"कभी वायु चढकर चीटी की तरह सुरसुराया करती है। कभी समाधि-अवस्था मे भाव समुद्र के भीतर आत्मारूपी मीन आनन्द से क्रीडा करता है।

"कभी करवट बदलकर पडा हुआ हूॅ, देखा, महावायु बन्दर की तरह मुझे ठेलकर आनन्द करती है। मै चुपचाप पडा रहता हूॅ। वही वायु एकाएक बन्दर की तरह उछलकर सहस्रार मे चढ जाती है। इसीलिए तो मै उछलकर खड़ा हो जाता हूॅ।

"फिर कभी पक्षी की तरह इस डाल से उस डाल पर, उस डाल से इस डाल पर महावायु चढती रहती है। जिस डाल पर बैठती है वह स्थान आग की तरह जान पड़ता है। कभी मूलाधार से स्वाधिष्ठान, स्वाधिष्ठान से हृदय, और इस तरह क्रमश: सिर मे चढ़ती है।

"कभी महावायु की तिर्यक्-गति होती है – टेढ़ी-मेढ़ी चाल। उसी तरह चलकर अन्त मे जब सिर में आती है तब समाधि होती है।

"कुण्डलिनी के जागृत हुए बिना चैतन्य नही होता।

"कुण्डलिनी मूलाधार में रहती है। चैतन्य होने पर वह सुषुम्ना नाड़ी के भीतर से स्वाधिष्ठान, मणिपुर, इन सब का भेद करके अन्त मे मस्तक मे पहुँचती है, इसे ही महावायु की गति कहते हैं। अन्त में समाधि होती है।

"केवल पुस्तक पढ़ने से चैतन्य नही होता। उन्हें पुकारना चाहिए। व्याकुल होने पर कुलकुण्डलिनी जागृत होती है। सुनकर या किताबे पढ़कर जो ज्ञान होता हैं उससे क्या होगा ?

"जब यह अवस्था हुई, उससे ठीक पहले मुझे दिखलाया गया किस तरह कुलकुण्डलिनी शक्ति के जागृत होने पर क्रमश: सब पद्म खिलने लगे, और फिर समाधि हुई। यही बड़ी गुप्त बात है। मैंने देखा, बिलकुल मेरी तरह का २२-२३ साल का एक युवक सुषुम्ना नाड़ी के भीतर जाकर, जिह्वा के द्वारा योनिरूप पद्मो के साथ रमण कर रहा है। पहले गुह्य, लिंग और नाभि – चतुर्दल, षड्दल और दशदल पद्म, पहले ये सब अधोमुख थे, फिर वे ऊर्ध्वमुख हो गये।

"जब वह हृदय में आया, मुझे खूब याद है, जीभ से रमण करने के बाद द्वादशलदल अधोमुख पद्म ऊध्वमुख होकर खिल गया, फिर कण्ठ में षोड़षदल और कपाल मे द्विदल पद्म के खुलने के बाद सिर मे सहस्रदल पद्म प्रस्फुटित हो गया। तभी से मेरी यह अवस्था है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण के आध्यात्मिक अनुभव

श्रीरामकृष्ण यह बात कहते हुए उतरकर महिमाचरण के पास जमीन पर बैठे। पास मास्टर हैं, तथा दो-एक भक्त और। कमरे में राखाल भी है।

श्रीरामकृष्ण (महिमा से) – आपसे कहने की इच्छा बहुत दिनों से थी, पर कह नही सका, आज कहने की इच्छा हो रही है।

"मेरी जो अवस्था आप बतलाते हैं, साधना करने ही से ऐसा नही हुआ करता। इसमे (मुझमें) कुछ विशेषता है।

"बातचीत की! – केवल दर्शन ही नही, बातचीत की! बट के नीचे मैंने देखा, गंगाजी के भीतर से निकलकर कितनी हँसी – कितना मजाक किया। हँसी ही हँसी में मेरी उँगली मरोड़ दी गयी! फिर बातचीत हुई, – वे (भगवान्) बोले!

"तीन दिन लगातार मैं रोया, उन्होंने वेदों, पुराणों और तन्त्रों मे क्या है, सब

दिखला दिया!

"महामाया क्या है, यह भी एक दिन दिखला दिया। कमरे के भीतर छोटीसी ज्योति क्रमशः बढ़ने लगी और संसार को आच्छन्न करने लगी।

"फिर उन्होने दिखलाया – मानो बहुत बड़ा तालाब काई से भरा हुआ है। हवा से काई कुछ हट गयी और पानी जरा दीख पड़ा, परन्तु देखते ही देखते चारो ओर से नाचती हुई काई फ़िर आ गयी और पानी को ढक लिया। दिखलाया, वह जल सच्चिदानन्द है और काई माया। माया के कारण सच्चिदानन्द को कोई देख नही सकता। अगर एक बार देखता भी है तो पल भर के लिए, फिर माया उसे ढक लेती है।

"किस तरह का आदमी यहाँ आ रहा है, उसके आने से पहले ही वे मुझे दिखा देते हैं। बट के नीचे से बकुल के पेड़ तक उन्होने चैतन्यदेव के संकीर्तन का दल दिखलाया। उसमे मैने बलराम को देखा था – नही तो भला मिश्री और यह सब मुझे कौन देता? और इन्हे (मास्टर को) भी देखा था।

"केशव सेन से मुलाकात होने के पहले उसे मैने देखा! समाधि-अवस्था में मैने देखा केशव सेन और उसके दल को। कमरे में ठसाठस भरे हुए आदमी मेरे सामने बैठे हुए थे। केशव को मैने देखा, उन लोगों में मोर की तरह अपने पंख फैलाये बैठा हुआ था। पंख अर्थात् दल-बल। केशव के सिर मे, देखा, एक लाल मणि थी। वह रजोगुण का लक्षण है। केशव अपने चेलों से कह रहा था – 'ये (श्रीरामकृष्ण) क्या कह रहे है, तुम लोग सुनो।' माँ से मैने कहा, 'माँ, इन लोगो का अंग्रेजी मत है, इनसे क्या कहना है?' फिर 'माँ ने समझाया, कलिकाल में ऐसा ही होता है। तब यहाँ से (मेरे पास से) वे लोग हरिनाम तथा माता का नाम ले गये। इसीलिए माता ने विजय को केशव के दल से अलग कर लिया। परन्तु विजय आदि-समाज में सम्मिलित नहीं हुआ।

(अपने को दिखाकर) "इसके भीतर कोई एक हैं। गोपाल सेन नाम का एक लड़का आया करता था, बहुत दिन हो गये। इसके भीतर जो है, उन्होंने गोपाल की छाती पर पैर रख दिया। वह भावावेश में कहने लगा, 'अभी तुम्हें देर है; परन्तु मै संसारी आदमियो के बीच मे नही रह सकता।' – फिर 'अब जाता हूँ' कहकर वह घर चला गया। बाद मे मैने सुना, उसने देह छोड़ दी है। जान पड़ता है, वही नित्यगोपाल है!

"सब बड़े आश्चर्यपूर्ण दर्शन हुए हैं। अखण्ड सच्चिदानन्द-दर्शन भी हो चुका है। उसके भीतर मैंने देखा है, बीच में घेरा लगाकर उसके दो हिस्से कर दिये गये हैं। एक हिस्से मे केदार, चुन्नी तथा अन्य साकारवादी भक्त है; घेरे के दूसरी ओर खूब लाल सुर्खी की ढेरी की तरह प्रकाश है, उसके बीच मे समाधिमग्न नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) बैठा हुआ है।

"ध्यानस्थ देखकर मैने पुकारा – 'नरेन्द्र!', उसने जरा आँख खोली। – मै समझ

गया, वही एक रूप मे, सिमला (कलकत्ता) मे, कायस्थ के यहाँ पैदा होकर रह रहा है। तब मैने कहा, 'माँ, उसे माया मे बाँध लो, नही तो समाधि मे वह देह छोड़ देगा।' केदार साकारवादी है, उसने झाँककर देखा, उसे रोमांच हो आया और वह भागा।

"यही सोचता हूँ, इस शरीर के भीतर माँ स्वयं है, भक्तो को लेकर लीला कर रही है। जब पहले-पहल यह अवस्था हुई, तब ज्योति से देह दमका करती थी। छाती लाल हो जाती थी। तब मैने कहा, 'माँ बाहर प्रकाशित न होओ – भीतर समा जाओ।' इसीलिए अब यह देह मलिन हो रही है।

"नही तो आदमी जला डालते। आदमियो की भीड़ लग जाती अगर वैसी ज्योतिर्मय देह बनी रहती। अब बाहर प्रकाश नही है। इससे तमाशबीन भाग जाते है – जो शुद्ध भक्त है, वे ही रहेगे। यह बीमारी क्यो हुई, इसका अर्थ यही है। जिनकी भक्ति सकाम है, वे बीमारी देखकर भाग जायेगे।

"मेरी एक इच्छा थी। मैने माँ से कहा था – 'माँ, मै भक्तो का राजा होऊँगा।'

"फिर मेरे मन मे यह बात उठी कि हृदय से जो ईश्वर को पुकारेगा, उसे यहाँ आना होगा – आना ही होगा। देखो, वही हो रहा है, वे ही सब लोग आते है।

"इसके भीतर कौन है, यह मेरे पिता आदि जानते थे। पिताजी ने गया मे स्वप्न देखा था। स्वप्न मे आकर रघुवीर ने कहा था, 'मै तेरा पुत्र होकर पैदा होऊँगा।'

"इसके भीतर वे ही है। कामिनी और कांचन का त्याग! – यह क्या मेरा कर्म है? स्त्री-सम्भोग स्वप्न मे भी नही हुआ।

"नागे ने वेदान्त का उपदेश दिया। तीन ही दिन मे समाधि हो गयी। माधवीलता के नीचे उस समाधि-अवस्था को देखकर उसने कहा - 'अरे! यह क्या है!' फिर उसने समझा था, इसके भीतर कौन है। तब उसने मुझसे कहा, 'मुझे तुम छोड़ दो।' यह बात सुनकर मेरी भावावस्था हो गयी। उसी अवस्था मे मैने कहा, वेदान्त का बोध हुए बिना तुम यहाँ से नही जा सकते।'

"तब मै दिन-रात उसी के पास रहता था। केवल वेदान्त की चर्चा होती थी। ब्राह्मणी (श्रीरामकृष्ण की तन्त्र-साधना की आचार्या) कहती थी, 'बच्चा, वेदान्त पर ध्यान न दो, इससे भक्ति की हानि होती है।'

"माँ से मैने कहा, 'माँ, इस देह की रक्षा किस तरह होगी? – और साधुओ तथा भक्तो को लेकर भी किस तरह रह सकूँगा? – एक बड़ा आदमी ला दो।' इसीलिए मथूरबाबू ने चौदह वर्ष तक सेवा की।

"इसके भीतर जो है, वे पहले से ही बतला देते है, किस श्रेणी का भक्त आनेवाला है। ज्योही देखता हूँ गौरांग का रूप सामने आया कि समझ जाता हूँ, कोई गौरांग-भक्त आ रहा है। अगर कोई शाक्त आता है तो शक्तिरूप – कालीरूप दीख पड़ता है।

"कोठी की छत पर मे आरती के समय मै चिल्लाया करता था, 'अरे, तुम सब लोग कहाँ हो? - आओ। देखो, अब क्रम क्रम से सब आ गये है।

"इसके भीतर वे खुद है – स्वयं ही मानो इन सब भक्तो को लेकर काम कर रहे हैं।

"एक-एक भक्त की अवस्था कितने आश्चर्य की है। छोटा नरेन्द्र – इसे कुम्भक आप ही आप होता है और फिर समाधि भी। एक-एक बार कभी-कभी ढाई घण्टे तक। कभी और देर तक। – कैसे आश्चर्य की बात है।

"यहाँ सब तरह की साधनाएँ हो चुकी है – ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग। उम्र बढाने के लिए हठयोग भी किया जा चुका है। इस शरीर के भीतर कोई और (ईश्वर) वास कर रहा है, नही तो समाधि के बाद फिर मै भक्तो के साथ कैसे रह सकता तथा ईश्वर-प्रेम का आनन्द कैसे उठा सकता? कुँवरसिह कहता था, 'समाधि के बाद लौटा हुआ आदमी कभी मेने नही देखा – तुम नानक हो।

"चारो ओर संसारी आदमी है – चारो ओर कामिनी-काचन – इस तरह की परिस्थिति के भीतर यह अवस्था है। – समाधि और भाव लगे ही रहते है। इसी पर प्रताप ने (ब्राह्मसमाज के प्रतापचन्द मुजुमदार) – कुक साहब जब आया था – जहाज मे मेरी अवस्था देखकर कहा, 'बाप रे। जैसे भूत लगा ही रहता हो।' "

राखाल, मास्टर आदि अवाक् होकर ये सब बाते सुन रहे हैं।

क्या महिमाचरण ने श्रीरामकृष्ण के इस इशारे को समझा? इन सब बातो को सुनकर भी वे कह रहे है – 'जी, आपके प्रारब्ध के कारण यह सब हुआ है।' उनका मनोभाव यह है कि श्रीरामकृष्ण एक साधु या भक्त है। श्रीरामकृष्ण उनकी बात पर अपनी सम्मति देते हुए कह रहे है – 'हॉ, प्रारब्ध – जैसे बाबू के बहुत से बैठकखाने हो, यहाँ भी उनका एक बैठकखाना है। भक्त उनका बैठकखाना है।'

(४)

स्वप्न-दर्शन

रात के नौ बजे है। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए है। महिमाचरण की इच्छा है – कमरे मे श्रीरामकृष्ण के रहते हुए वे ब्रह्मचक्र की रचना करे। राखाल, मास्टर, किशोरी तथा और दो-एक भक्तो को साथ लेकर जमीन पर उन्होने चक्र बनाया। सब लोगो से उन्होने ध्यान करने के लिए कहा। राखाल को भावावस्था हो गयी। श्रीरामकृष्ण उतरकर उनकी छाती मे हाथ लगाकर माता का नाम लेने लगे। राखाल का भाव संवरण हो गया।

रात के एक बजे का समय होगा। आज कृष्णपक्ष की चतुर्दशी है। चारो ओर घोर

अन्धकार है। दो-एक भक्त गंगा के तट पर अकेले टहल रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उठे। वे बाहर आये। भक्तों से कहा, "नागा कहा करता था, 'इस समय – गम्भीर रात्रि की इस निस्तब्धता मे – अनाहत शब्द सुन पड़ता है।' "

रात के पिछले पहर मे महिमाचरण और मास्टर श्रीरामकृष्ण के कमरे मे जमीन पर ही लेट गये। कैम्पखाट पर राखाल थे।

श्रीरामकृष्ण पाँच वर्ष के बच्चे की तरह दिगम्बर होकर कभी कभी कमरे के भीतर टहल रहे हैं।

सबेरा हुआ। श्रीरामकृष्ण माता का नाम ले रहे है। पश्चिम के गोल बरामदे मे जाकर उन्होने गंगादर्शन किया। कमरे के भीतर जितने देव-देवियो के चित्र थे, सब के पास जा-जाकर प्रणाम किया। भक्तगण शय्या से उठकर प्रणाम आदि करके प्रात:क्रिया करने के लिए गये।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी में एक भक्त के साथ बातचीत कर रहे हैं। उन्होंने स्वप्न में चैतन्यदेव को देखा था।

श्रीरामकृष्ण (भावावेश में) – आहा! आहा!

भक्त – जी स्वप्न में –।

श्रीरामकृष्ण – स्वप्न क्या कम है?

श्रीरामकृष्ण की ऑखों में ऑसू आ गये। स्वर गद्गद है।

जागृत अवस्था में एक भक्त के दर्शन की बात सुनकर कह रहे हैं, 'इसमे आश्चर्य क्या है? आजकल नरेन्द्र भी ईश्वरी रूप देखता है।'

प्रात: क्रिया समाप्त करके महिमाचरण ठाकुर-मन्दिर के उत्तर-पश्चिम ओर के शिवमन्दिर मे जाकर निर्जन में वेद-मन्त्रों का उच्चारण कर रहे है।

दिन के आठ बजे का समय है। मणि गंगा नहाकर श्रीरामकृष्ण के पास आये। सन्तप्त ब्राह्मणी भी श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आयी है।

श्रीरामकृष्ण (ब्राह्मणी से) – इन्हें (मास्टर को) कुछ प्रसाद देना, पूड़ी-मिठाई – ताक पर रखा है।

ब्राह्मणी – पहले आप पाइये। फिर वे भी पा लेगे।

श्रीरामकृष्ण – तुम पहले जगन्नाथजी का भात खाओ, फिर प्रसाद पाना।

प्रसाद पाकर मणि शिवमन्दिर में शिवदर्शन करके श्रीरामकृष्ण के पास लौट आये और प्रणाम करके बिदा हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (सस्नेह) – तुम चलो। तुम्हें काम पर जाना है।

(५)

मौनधारी श्रीरामकृष्ण और माया का दर्शन

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर मे प्रातः आठ बजे से दिन के तीन बजे तक मौन व्रत धारण किये हुए है। आज मंगलवार है, ११ अगस्त १८८५ ई। कल अमावस्या थी।

श्रीरामकृष्ण कुछ अस्वस्थ है। क्या उन्होने जान लिया है कि शीघ्र ही वे इस धाम को छोड़ जायेगे? क्या इसीलिए मौन धारण किये हुए है? उन्हे बात न करते देख श्री मां रो रही है। राखाल और लाटू रो रहे है। बागबाजार की ब्राह्मणी भी इस समय आयी थी। वह भी रो रही है। भक्तगण बीच बीच मे पूछ रहे है, "क्या आप हमेशा के लिए चुप रहेगे?"

श्रीरामकृष्ण इशारे से कह रहे है, 'नही।' नारायण आये है – दिन के तीन बजे के समय।

श्रीरामकृष्ण नारायण से कह रहे है, "माँ तेरा कल्याण करेगी।"

नारायण ने आनन्द के साथ भक्तो को समाचार दिया। श्रीरामकृष्ण ने अब बात की है। राखाल आदि भक्तो की छाती पर से मानो एक पत्थर उतर गया। वे सभी श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (राखाल आदि भक्तो के प्रति) – माँ दिखा रही थी कि सभी माया है। वे ही सत्य है और शेष सभी माया का ऐश्वर्य है।

"और एक बात देखी, भक्तो मे से किसका कितना हुआ है।"

नारायण आदि भक्त – अच्छा, किसका कितना हुआ है?

श्रीरामकृष्ण – इन सभी को देखा – नित्यगोपाल, राखाल, नारायण, पूर्ण, महिमा चक्रवर्ती आदि।

(६)

श्रीरामकृष्ण गिरीश, शशधर पण्डित आदि भक्तो के साथ

श्रीरामकृष्ण की बीमारी का समाचार कलकत्ते के भक्तो को प्राप्त हुआ, उन्होने सोचा कि शायद वह उनके गले मे एक प्रकार का घाव मात्र है।

रविवार, १६ अगस्त। अनेक भक्त उनके दर्शन के लिए आये है – गिरीश, राम, नित्यगोपाल, महिमा चक्रवर्ती, किशोरी (गुप्त), पण्डित शशधर तर्कचूड़ामणि आदि।

श्रीरामकृष्ण पहले जैसे ही आनन्दमय है तथा भक्तो के साथ वार्तालाप कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – रोग की बात माँ से कह नही सकता, कहने मे लाज लगती है।

गिरीश – मेरे नारायण अच्छा करेगे।

राम – ठीक हो जायेगा।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – हाँ यही आशीर्वाद दो। (सभी का हास्य)

गिरीश आजकल नये नये आ रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं, "तुम्हें अनेक झमेलों में रहना होता है, तुम्हें अनेक काम रहते हैं। तुम और तीन बार आओ।" अब शशधर के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (शशधर के प्रति) – तुम शक्ति की बात कुछ कहो।

शशधर – मैं क्या जानता हूँ?

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – एक आदमी एक व्यक्ति की बहुत भक्ति करता था। उसने उस भक्त से तम्बाकू भर लाने के लिए कहा। इस पर भक्त ने कहा, 'क्या मैं आपकी आग लाने के योग्य हूँ?' फिर आग भी नहीं लाया। (सभी हँसे)

शशधर – जी, वे ही निमित्त-कारण हैं, वे ही उपादान-कारण हैं। उन्होंने ही जीव और जगत् को पैदा किया और फिर वे ही जीव तथा जगत् बने हुए हैं, जैसे मकड़ा ... स्वयं जाला तैयार किया (निमित्त-कारण) और उस जाले को अपने ही अन्दर से निकाला (उपादान-कारण)।

श्रीरामकृष्ण – फिर यह भी है कि जो पुरुष है, वे ही प्रकृति है, जो ब्रह्म है, वे ही शक्ति है। जिस समय निष्क्रिय है, सृष्टि, स्थिति ... कर रहे हैं, उस समय उन्हें हम ब्रह्म कहते हैं, पुरुष कहते हैं। और जब वे उन ... करते हैं, उस समय उन्हें शक्ति कहते हैं, प्रकृति कहते हैं। परन्तु जो ब्रह्म है ... है। जो पुरुष है, वे ही प्रकृति बने हुए हैं।

"जल स्थिर रहने पर भी जल है और हिलने ... साँप टेढ़ा-मेढ़ा होकर चलने पर भी साँप है और फिर चुपचाप कुण्डलाकार ... साँप है।

भोग और कर्म

"ब्रह्म क्या है यह ... नहीं कहा जा सकता, ... हो जाता है। 'निताई मेरा मतवाला हाथी है, निताई मेरा मतवाला हाथी है' – ऐसा ... कहते अन्त में कीर्तनिया और कुछ भी नहीं कह सकता, केवल कहता है 'हाथी-हाथी', फिर 'हाथी-हाथी' कहते कहते केवल 'हा-हा' कहता है, और अन्त में वह भी नहीं कह सकता – बाह्यशून्य।"

ऐसा कहते कहते श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। खड़े-खड़े ही समाधिमग्न!

समाधि-भंग होने के थोड़ी देर बाद कह रहे हैं – " 'क्षर' व 'अक्षर' से परे क्या है मुँह से कहा नहीं जाता।"

सभी चुप हैं, श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, "जब तक कुछ भोग बाकी रहता है या कर्म बाकी है तब तक समाधि नहीं होती।

(शशधर के प्रति) "इस समय ईश्वर तुममें कर्म करा रहे है, व्याख्यान देना आदि। अब तुम्हे वही सब करना होगा।

"कर्म समाप्त हो जाने पर ही तुम्हे शान्ति प्राप्त होगी। घरवाली घर का काम-काज समाप्त करके जब नहाने जाती है तो फिर बुलाने पर भी नही लौटती।"

□□□

परिच्छेद १२०

दक्षिणेश्वर मन्दिर में

(१)

पण्डित श्यामपद पर कृपा

श्रीरामकृष्ण दो-एक भक्तों के साथ कमरे में बैठे हुए हैं। शाम के पाँच बजे का समय है। श्रावण कृष्णा द्वितीया, २७ अगस्त १८८५।

श्रीरामकृष्ण की बीमारी का सूत्रपात्र हो चुका है। फिर भी भक्तों के आने पर वे शरीर पर ध्यान नही देते, उनके साथ दिन भर बातचीत करते रहते हैं, – कभी गाना गाते हैं।

श्रीयुत मधु डाक्टर प्राय: नाव पर चढ़कर आया करते हैं – श्रीरामकृष्ण की चिकित्सा के लिए। भक्तगण बहुत ही चिन्तित हो रहे है, उनकी इच्छा है, मधु डाक्टर रोज देख जाया करें। मास्टर श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं, 'ये अनुभवी हैं, ये अगर रोज देखें तो अच्छा हो।'

पण्डित श्यामापद भट्टाचार्य ने आकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन किये। ये आँटपुर मौजे में रहते है। सन्ध्या हो गयी, अतएव 'सन्ध्या कर लूँ' कहकर पण्डित श्यामापदजी गंगा की ओर – चाँदनीघाट चले गये।

सन्ध्या करते करते पण्डितजी को एक बड़ा अद्भुत दर्शन हुआ। सन्ध्या समाप्त कर वे श्रीरामकृष्ण के कमरे में आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण माता का नाम-स्मरण समाप्त करके तखत पर बैठे हुए हैं। पाँवपोश पर मास्टर बैठे हैं, राखाल और लाटू आदि कमरे में आ-जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से, पण्डितजी को इशारे से बताकर) - ये बड़े अच्छे आदमी हैं। (पण्डितजी से) 'नेति नेति' करके जहाँ मन को विराम मिलता है, वहीं वे हैं।

"राजा सात ड्योढ़ियों के पार रहते हैं। पहली ड्योढ़ी में किसी ने जाकर देखा, एक धनी मनुष्य बहुत से आदमियों को लेकर बैठा हुआ है, बड़े ठाट-बाट से। राजा को देखने के लिए जो मनुष्य गया हुआ था, उसने अपने साथवाले से पूछा, 'क्या राजा यही है?' साथवाले ने जरा मुस्कराकर कहा, 'नहीं।'

"दूसरी ड्योढ़ी तथा अन्य ड्योढ़ियो में भी उसने इसी तरह कहा। वह जितना ही

बढ़ता था, उसे उतना ही ऐश्वर्य दीख पड़ता था, उतनी ही तड़क-भड़क। जब वह सातो ड्योढ़ियो को पार कर गया तब उसने अपने साथवाले से फिर नही पूछा, – राजा के अतुल ऐश्वर्य को देखकर अवाक् होकर खड़ा रह गया। – समझ गया राजा यही है, इसमे कोई सन्देह नही।''

पण्डितजी – माया के राज्य को पार कर जाने से उनके दर्शन होते है।

श्रीरामकृष्ण – उनके दर्शन हो जाने के बाद दिखता है कि यह जीव-जगत् वे ही हुए है। यह संसार 'धोखे की टट्टी' है – स्वप्नवत् है। यह बोध तभी होता है जब साधक 'नेति-नेति' का विचार करता है। उनके दर्शन हो जाने पर यही संसार 'मौज की कुटिया' हो जाता है।

''केवल शास्त्रो के पाठ से क्या होगा? पण्डित लोग सिर्फ विचार किया करते है।''

पण्डितजी – मुझे कोई पण्डित कहता है, तो घृणा होती है।

श्रीरामकृष्ण – यह उनकी कृपा है। पण्डित लोग केवल विचार करते है। परन्तु किसी ने दूध का नाम मात्र सुना है और किसी ने दूध देखा है। दर्शन हो जाने पर सब को नारायण देखोगे – देखोगे, नारायण ही सब कुछ हुए है।

पण्डितजी नारायण का स्तव सुना रहे है। श्रीरामकृष्ण आनन्द मे मग्न है।

पण्डितजी – सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि। ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः।।

श्रीरामकृष्ण – आपने अध्यात्म-रामायण देखी है?

पण्डितजी – जी हॉ, कुछ-कुछ देखी है।

श्रीरामकृष्ण – ज्ञान और भक्ति से वह पूर्ण है। शबरी का उपाख्यान, अहिल्या की स्तुति, सब भक्ति से पूर्ण है।

''परन्तु एक बात है। वे विषय-बुद्धि से बहुत दूर है।''

पण्डितजी – जहॉ विषय बुद्धि है, वे वहॉ से 'सुदूरम्' है। और जहॉ वह बात नही है, वहॉ वे 'अदूरम्' है। उत्तरपाड़ा के एक जमीदार मुखर्जी को मैने देखा, उम्र पूरी हो गयी है और वह बैठा हुआ उपन्यास सुन रहा था।

श्रीरामकृष्ण – अध्यात्म मे एक बात और लिखी है वह यह कि जीव-जगत् वे ही हुए है।

पण्डितजी आनन्दित होकर, यमलार्जुन के द्वारा की गयी इसी भाव की स्तुति की आवृत्ति कर रहे है, श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध से – 'कृष्ण कृष्ण महायोगिन् त्वमाद्यः पुरुषः परः। व्यक्ताव्यक्तमिदं विश्वं रूपं ते ब्रह्मणो विदुः।। त्वमेकः सर्वभूतानां देहस्वात्मेन्द्रियेश्वरः। त्वं महान् प्रकृतिः सूक्ष्मा रजः सत्त्वतमोमयी।। त्वमेव पुरुषोऽध्यक्षः सर्वक्षेत्रविचारवित्।।'

स्तुति सुनकर श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। खड़े हुए हैं। पण्डितजी बैठे हैं। पण्डितजी की गोद और छाती पर एक पैर रखकर श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।

पण्डितजी चरण धारण करके कह रहे है, 'गुरो, चैतन्यं देहि।' श्रीरामकृष्ण छोटे तखत के पास पूर्वास्य खड़े हुए हैं।

कमरे से पंडितजी के चले जाने पर श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं, "मैं जो कुछ कहता हूँ, वह पूरा उतर रहा है न? जो लोग अन्तर से उन्हें पुकारेंगे, उन्हें यहाँ आना होगा।"

रात के दस बजे सूजी की थोड़ीसी खीर खाकर श्रीरामकृष्ण ने शयन किया। मणि से कहा, 'पैरो में जरा हाथ तो फेर दो।'

कुछ देर बाद उन्होंने देह और छाती मे भी हाथ फेर देने के लिए कहा।

एक झपकी के बाद उन्होंने मणि से कहा, 'तुम आओ – सोओ। देखूँ, अगर अकेले मे आँख लगे।' फिर रामलाल से कहा, 'कमरे के भीतर ये (मणि) और राखाल चाहे तो सो सकते हैं।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा ईशू

सबेरा हुआ। श्रीरामकृष्ण उठकर माता का स्मरण कर रहे हैं। शरीर अस्वस्थ रहने के कारण भक्तों को वह मधुर नाम सुनायी न पड़ा। प्रात:कृत्य समाप्त करके श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे। मणि से पूछ रहे हैं, 'अच्छा, रोग क्यों हुआ?'

मणि – जी, आदमी की तरह अगर सब बाते न होगी तो जीवों में साहस फिर कैसे होगा? वे देखते हैं, इस देह में इतनी बीमारी है, फिर भी आप ईश्वर को छोड़ और कुछ भी नही जानते।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – बलराम ने भी कहा, 'आप ही को अगर यह है तो हमें फिर क्यो नहीं होगा?'

"सीता के शोक से जब राम धनुष्य न उठा सके तब लक्ष्मण को बड़ा आश्चर्य हुआ। परन्तु पंचभूतों के फन्दे में पड़कर ब्रह्म को भी आँसू बहाना पड़ता है।"

मणि – भक्तों का दु:ख देखकर ईशू भी साधारण मनुष्यों की तरह रोये थे।

श्रीरामकृष्ण – क्या हुआ था?

मणि – जी, मार्था और मेरी दो बहनें थीं। उनके एक भाई थे – लैजेरस। ये तीनों ईशू के भक्त थे। लैजेरस का देहान्त हो गया। ईशू उनके घर जा रहे थे। रास्ते में एक बहन, मेरी, दौड़ी हुई गयी और उनके पैरों पर गिरकर रोने लगी और कहा, 'प्रभो, तुम अगर आ जाते तो वह न मरता।' उसका रोना देखकर ईशू भी रोये थे।

"फिर वे कब्र के पास जाकर उसका नाम ले-लेकर पुकारने लगे। लैजेरस जीकर उनके पास आ गया।"

श्रीरामकृष्ण – मै ये सब बाते नही कर सकता।

मणि – आप खुद नही करते, क्योकि आपकी इच्छा नही होती। ये सब सिद्धियाँ हे, इसीलिए आप नही करते। उनका प्रयोग करने पर आदमी का मन देह की ओर चला जाता है, शुद्धा भक्ति की ओर नही। इसीलिए आप नही करते।

"आपके साथ ईशू का बहुत कुछ मेल होता है।"

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – और क्या क्या मिलता है?

मणि – आप भक्तो से न तो व्रत करने के लिए कहते हैं, न किसी दूसरी कठोर साधना के लिए। खाने-पीने के लिए भी कोई कठोर नियम नही है। ईशू के शिष्यो ने रविवार को नियमानुकूल भोजन नही किया, इसलिए जो लोग शास्त्र मानकर चलते थे, उन लोगो ने उनका तिरस्कार किया। ईशू ने कहा, 'वे लोग खायेगे और खूब खायेगे। जब तक वर के साथ है तब तक बरातवाले आनन्द तो करेगे ही।'

श्रीरामकृष्ण – इसका क्या अर्थ है?

मणि – अर्थात् जब तक अवतारी पुरुष के साथ है तब तक अन्तरंग शिष्य सब आनन्द मे ही रहेगे। – क्यो वे निरानन्द का भाव लाये? जब वे निजधाम चले जायेगे, तब उनके (अन्तरंग शिष्यो के) निरानन्द के दिन आयेगे।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – और भी कुछ मिलता है?

मणि – जी, आप जिस तरह कहते हैं, 'लड़को मे कामिनी और कांचन का प्रवेश नही हुआ; वे उपदेशो की धारणा कर सकेगे, – जैसे नयी हण्डी मे दूध रखना, दही जमायी हण्डी मे रखने से दूध बिगड़ सकता है', ईशू भी इसी तरह कहते थे।

श्रीरामकृष्ण – क्या कहते थे?

मणि – 'पुरानी बोतल मे शराब रखने से बोतल फूट सकती है। पुराने कपड़े मे नया पेवन लगाने पर कपड़ा जल्दी फट जाता है।'

"आप जैसा कहते है, 'माँ और आप एक हैं', उसी तरह वे भी कहते थे, 'पिता और मै एक हूँ'।"

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – और कुछ?

मणि – आप जैसा कहते है', 'व्याकुल होकर पुकारने से वे सुनेगे।' वे भी कहते थे, 'व्याकुल होकर द्वार पर धक्का मारो, द्वार खुल जायेगा।'

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, यदि ईश्वर फिर अवतार के रूप मे प्रकट हुए है तो वे पूर्ण रूप मे है, अथवा अंश रूप मे अथवा कला रूप में?

मणि – जी, मै तो पूर्ण, अंश और कला, यह अच्छी तरह समझता ही नही, परन्तु

जैसा आपने कहा था, चारदीवार मे एक गोल छेद, यह खूब समझ गया हूँ।

श्रीरामकृष्ण – क्या, बताओ तो जरा?

मणि – चारदीवार के भीतर एक गोल छेद है। उस छेद से चारदीवार के उस तरफ के मैदान का कुछ अंश दीख पड़ता है। उसी तरह आप के भीतर से उस अनन्त ईश्वर का कुछ अंश दीख पडता है।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, दो-तीन कोस तक बराबर दीख पडता है।

चॉदनी घाट मे गंगास्नान कर मणि फिर श्रीरामकृष्ण के पास आये। दिन के आठ बजे होगे।

मणि लाटू से श्रीजगन्नाथजी के सीत (भात) मॉग रहे है।

श्रीरामकृष्ण मणि के पास आकर कह रहे है – 'इसका (प्रसाद खाने का) नियमपूर्वक पालन करते रहना। जो लोग भक्त है, प्रसाद बिना पाये वे कुछ खा नही सकते।'

मणि – मै बलरामबाबू के यहॉ से सीत ले आया हूँ, कल से रोज दो-एक सीत पा लिया करता हूँ।

मणि भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर रहे है। फिर बिदा होने लगे। श्रीरामकृष्ण सस्नेह कह रहे है – 'तुम कुछ सबेरे आ जाया करो, भादो की धूप बड़ी खराब होती है।'

□□□

परिच्छेद १२१

पूर्ण आदि भक्तों को उपदेश

(१)

पूर्ण, मास्टर आदि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे विश्राम कर रहे है। रात के आठ बजे होगे। मोमवार. श्रावण की कृष्णा षष्ठी है, ३१ अगस्त १८८५।

श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ रहते है। गले की बीमारी का वही हाल है, परन्तु दिनरात भक्तो के लिए शुभ-कामना और ईश्वर-चिन्तन किया करते है। कभी कभी बालक की तरह विकल हो जाते है, परन्तु वह थोडी देर के लिए। उसी क्षण उनका वह भाव बदल जाता है और वे ईश्वर के आनन्द मे मग्न हो जाते है। भक्तो के प्रति स्नेह और वात्सल्य के आवेश मे पागल रहते है।

दो दिन हुए – पिछले शनिवार की रात को – पूर्ण ने पत्र लिखा है, 'मुझे खूब आनन्द मिल रहा है। कभी-कभी रात को मारे आनन्द के ऑख नही लगती।'

श्रीरामकृष्ण ने पत्र सुनकर कहा – 'सुनकर मुझे रोमांच हो रहा है। उसके आनन्द की वह अवस्था बाद मे भी ज्यो की त्यो बनी रहेगी। अच्छा, देखूँ तो जरा पत्र।'

पत्र को हाथ मे लेकर उसे मरोड़ते-दबाते हुए कह रहे है – 'दूसरे का पत्र मै नही छू सकता, पर इसकी चिट्ठी बहुत अच्छी है।'

उसी रात को वे जरा सोये ही थे कि एकाएक देह से पसीना बह चला। पलंग से उठकर कहने लगे – 'मुझे जान पड़ता है कि यह बीमारी अब अच्छी न होगी।'

यह बात सुनकर भक्त सब चिन्ता मे पड़ गये।

श्रीमाताजी श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए आयी हुई है और बहुत ही एकान्त मे नौबतखाने मे रहती है। वे नौबतखाने मे रहती है, यह बात किसी भक्त को भी मालूम न थी। एक भक्त-स्त्री (गोलाप माँ) भी कई दिनो से नौबतखाने मे रहती है। वे प्राय: श्रीरामकृष्ण के कमरे मे आती और दर्शन कर जाया करती है।

श्रीरामकृष्ण उनसे दूसरे दिन रविवार को कह रहे है, 'तुम बहुत दिनो से यहाँ पर हो, लोग क्या समझेगे? बल्कि दस दिन घर मे भी जाकर रहो।' मास्टर ने इन सब बातो

को सुना।

आज सोमवार है। श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ हैं। रात के आठ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर, पीछे की ओर फिरकर, दक्षिण की ओर सिरहाना करके लेटे हुए हैं। सन्ध्या के बाद मास्टर के साथ गंगाधर कलकत्ते से आये। वे उनके पैरों की ओर एक किनारे बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – दो लड़के आये हुए थे। एक तो शंकर घोष के नाती का लड़का है – सुबोध, और दूसरा उसी के टोले का एक लड़का क्षीरोद। दोनों बड़े अच्छे लड़के हैं। उनसे मैंने कहा, 'मेरी तबीयत इस समय अच्छी नहीं।' फिर मैंने तुम्हारे पास आकर उपदेश लेने के लिए कहा। उन्हें जरा देखना।

मास्टर – जी हाँ, मेरे ही मुहल्ले में वे रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – उस दिन फिर देह से पसीना निकला और नींद उचट गयी। यह क्या बीमारी हो गयी?

मास्टर – जी, हम लोगों ने एक बार डा. भगवान रुद्र को दिखलाने का निश्चय किया है। वे एम. डी. 'पास' बड़े अच्छे डाक्टर हैं।

श्रीरामकृष्ण – कितना लेगा?

मास्टर – दूसरी जगह बीस-पच्चीस रुपये लेते हैं।

श्रीरामकृष्ण – तो रहने दो।

मास्टर – जी, हम लोग अधिक से अधिक चार या पाँच रुपये देंगे।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, इतने पर ठीक करके एक बार कहो, 'कृपा कर उन्हें चलकर देखिये जरा।' यहाँ की बात क्या उसने कुछ सुनी नहीं?

मास्टर – शायद सुनी है। एक तरह से कुछ भी न लेने के लिए कहा है। परन्तु हम लोग देंगे, क्योंकि इस तरह वे फिर आयेंगे।

श्रीरामकृष्ण – निताई डाक्टर को ले आओ तो और अच्छा है। दूसरे डाक्टर आकर करते ही क्या हैं? घाव दबाकर और बढ़ा देते हैं।

रात के नौ बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण सूजी की खीर खाने के लिए बैठे। खाने में कोई कष्ट नहीं हुआ। इसलिए हँसते हुए मास्टर से कह रहे हैं, "कुछ खाया गया, इससे मन को आनन्द है।"

(२)

नरेन्द्र, राम आदि भक्तों के संग में

आज जन्माष्टमी है, मंगलवार, १ सितम्बर १८८५।

श्रीरामकृष्ण स्नान करेंगे। एक भक्त उनकी देह में तेल लगा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण

दक्षिण के बरामदे में बैठकर तेल लगवा रहे हैं। गंगास्नान करके मास्टर ने श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया।

स्नान करके एक अंगौछा पहनकर श्रीरामकृष्ण ने बरामदे से ही देवताओं को प्रणाम किया। शरीर अस्वस्थ रहने के कारण कालीमन्दिर या विष्णुमन्दिर में नहीं जा सके।

आज जन्माष्टमी है। राम आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के लिए आज नया वस्त्र ले आये है।

श्रीरामकृष्ण ने नया वस्त्र पहना – वृन्दावनी धोती, और ओढ़ने के लिए लाल दुपट्टा। उनका शुद्ध पुण्य शरीर नये वस्त्रों से अपूर्व शोभा दे रहा है। वस्त्र पहनकर उन्होंने देवताओं को प्रणाम किया।

आज जन्माष्टमी है। गोपाल की माँ गोपाल (श्रीरामकृष्ण) को खिलाने के लिए कुछ भोजन कामारहाटी से लेकर आयी हैं। श्रीरामकृष्ण के पास दुःख प्रकट करते हुए वे कह रही हैं – 'तुम तो खाओगे ही नही।'

श्रीरामकृष्ण – यह देखो, मुझे यह बीमारी हो गयी है।

गोपाल की माँ – मेरा दुर्भाग्य! अच्छा, हाथ में थोड़ासा ले लो।

श्रीरामकृष्ण – तुम आशीर्वाद दो।

गोपाल की माँ श्रीरामकृष्ण को ही गोपाल कहकर सेवा करती थीं।

भक्तगण मिश्री ले आये हैं। गोपाल की माँ कह रही हैं, 'यह मिश्री मैं नौबतखाने में लिये जा रही हूँ।' श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'यहाँ भक्तो के लिए खर्च होती है, कौन सौ बार माँगता रहेगा। यहीं रहने दो।'

दिन के ग्यारह बजे का समय है। क्रमशः भक्तगण कलकत्ते से आते जा रहे हैं। श्रीयुत बलराम, नरेन्द्र, छोटे नरेन्द्र, नवगोपाल, काटवा के एक वैष्णव भक्त, सब क्रमशः आ गये। आजकल राखाल और लाटू यहीं रहते हैं। एक पंजाबी साधु कुछ दिनों से पंचवटी में टिके हुए हैं।

छोटे नरेन्द्र के मत्थे में एक उभरी हुई गुल्थी है। श्रीरामकृष्ण पंचवटी में टहलते हुए कह रहे हैं, 'तू इस गुल्थी को कटा क्यों नहीं डालता? वह गले में तो है ही नहीं – सिर पर ही है। इससे कष्ट क्या हो सकता है? – लोग तो बढ़ा हुआ अण्डकोश तक कटा डालते हैं।' (हास्य)

पंजाबी साधु बगीचे के रास्ते से जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – 'मैं उसे नहीं खींचता। उसका भाव ज्ञानी का है। देखता हूँ, जैसे सूखी लकड़ी।'

श्रीरामकृष्ण कमरे में लौटे। श्यामपद भट्टाचार्य की बात हो रही है।

बलराम – उन्होंने कहा है, 'नरेन्द्र की छाती पर पैर रखने से नरेन्द्र को जैसा

भावावेश हुआ था, वैसा मेरे लिए तो नही हुआ।'

श्रीरामकृष्ण – बात यह कि कामिनी और कांचन में मन के रहने पर विक्षिप्त मन को एकत्र करना बड़ा कठिन हो जाता है। उसने कहा है, उसे 'सालिसिटर'-पन (वकालत) करनी पड़ती है और घर के बच्चो के लिए भी चिन्ता करनी पड़ती है। नरेन्द्र आदि का मन विक्षिप्त थोड़े ही है! – उनमें अभी कामिनी और कांचन का प्रवेश नहीं हो पाया।

"परन्तु वह (श्यामपद) है बड़ा चोखा आदमी।"

कटोवा के वैष्णव श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे हैं। वैष्णवजी कुछ कंजे हैं।

वैष्णव – महाराज, क्या पुनर्जन्म होता है?

श्रीरामकृष्ण – गीता मे है, मृत्यु के समय जिस चिन्ता को लेकर मनुष्य देह छोड़ता है, उसी को लेकर वह पैदा होता है। हरिण की चिन्ता करते हुए देह छोड़ने के कारण महाराज भरत को हरिण होकर जन्म लेना पड़ा था।

वैष्णव – यह बात होती है इसे अगर कोई ऑख से देखकर कहे तो विश्वास भी हो।

श्रीरामकृष्ण – यह मैं नहीं जानता, भाई। मैं अपनी बीमारी ही तो अच्छी नही कर सकता, तिसपर मरकर क्या होता है – यह प्रश्न!

"तुम जो कुछ कह रहे हो, ये हीन बुद्धि की बाते है। किस तरह ईश्वर मे भक्ति हो, यह चेष्टा करो। भक्ति-लाभ के लिए ही आदमी होकर पैदा हुए हो। बगीचे में आम खाने के लिए आये हो, कितनी हजार डालियाँ है, कितने लाख पत्ते हैं, इसकी खबर लेकर क्या करोगे? – जन्मान्तर की खबर!"

श्रीयुत गिरीश घोष दो-एक मित्रो के साथ गाड़ी पर चढ़कर आये। कुछ शराब भी उन्होने पी थी। रोते हुए आ रहे हैं। श्रीरामकृष्ण के पैरो पर मस्तक रखकर रो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण सस्नेह उनकी देह मे मीठी थपकियॉ मारने लगे। एक भक्त को पुकारकर कहा, – 'अरे, इसे तम्बाकू पिला।'

गिरीश सिर उठाकर हाथ जोड़ कह रहे हैं – "तुम्हीं पूर्ण ब्रह्म हो, यह अगर सत्य न हो तो सब मिथ्या है।

"बड़ा खेद रहा, मैं तुम्हारी सेवा न कर सका। (ये बातें वे एक ऐसे स्वर में कह रहे हैं कि भक्तों की आँखों में आँसू आ गये – वे फूट-फूटकर रो रहे है।)

"भगवन्! यह वर दो कि साल भर तुम्हारी सेवा करता रहूँ। मुक्ति क्या चीज है! – वह तो मारी मारी फिरती है – उस पर मैं थूकता हूँ। कहिये सेवा एक साल के लिए करूँगा।"

श्रीरामकृष्ण – यहाँ के आदमी अच्छे नहीं हैं। कोई कुछ कहेगा।

गिरीश – वह बात न होगी, आप कह दीजिये –

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, तुम्हारे घर जब जाऊँ तब सेवा करना।

गिरीश – नही, यह नही। यही करूँगा।

श्रीरामकृष्ण ने हठ देखकर कहा, 'अच्छा, ईश्वर की जैसी इच्छा।'

श्रीरामकृष्ण के गले मे घाव है। गिरीश फिर कहने लगे, "कह दीजिये, अच्छा हो जाय। अच्छा, मै इसे झाड़े देता हूँ – काली! काली!"

श्रीरामकृष्ण – मुझे लगेगा।

गिरीश – अच्छा हो जा (फूक मारते है)

"क्या अच्छा नही हुआ? – अगर आपके चरणो मे मेरी भक्ति होगी तो अवश्य अच्छा हो जायेगा – कहिये अच्छा हो गया।"

श्रीरामकृष्ण (विरक्ति से) – जाओ भाई, ये सब बाते मुझसे नही कही जाती। रोग के अच्छे होने की बात माँ से मै नही कह सकता।

"अच्छा, ईश्वर की इच्छा स होगा।"

गिरीश – आप मुझे बहका रहे है। आपकी ही इच्छा से होगा।

श्रीरामकृष्ण – छि:, ऐसी बात नही कहनी चाहिए। भक्तवत् न तु कृष्णवत्। तुम्हे जैसा रुचे सोच सकते हो – अपने गुरु को भगवान समझ सकते हो; परन्तु इन सब बातो के कहने से अपराध होता है। ऐसी बाते फिर नही कहना।

गिरीश – कहिये, अच्छा हो जायेगा।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, जो कुछ हुआ है वह चला जायेगा।

गिरीश शायद अब भी अपने नशे मे है। कभी कभी बीच में वे श्रीरामकृष्ण से कहते है, "क्या बात है कि इस बार आप अपने दैवी सौन्दर्य को लेकर पैदा नही हुए?"

कुछ देर बाद फिर कह रहे है – "अबकी बार जान पड़ता है, बंगाल का उद्धार है।"

एक भक्त अपने आप से कह रहे है, "केवल बगाल का ही क्यों? समस्त जगत् का उद्धार होगा।"

गिरीश फिर कह रहे है – "ये यहाँ क्यों हैं, इसका अर्थ किसी की समझ मे आया? जीवो के दु:ख से विकल होकर आये है, उनका उद्धार करने के लिए।"

गाड़ीवान पुकार रहा था। गिरीश उठकर उसके पास जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं – "देखो, कहाँ जाता है – गाड़ीवान को मारेगा तो नहीं?" मास्टर भी साथ जा रहे हैं।

गिरीश फिर लौटे, श्रीरामकृष्ण की स्तुति करने लगे – "भगवन्, मुझे पवित्रता दो, जिससे कभी थोड़ीसी भी पाप-चिन्ता न हो।"

श्रीरामकृष्ण – तुम पवित्र तो हो ही। तुममें इतनी भक्ति और विश्वास जो है! तुम तो आनन्द में हो न?

गिरीश – जी नही, मन खराब रहता है – बड़ी अशान्ति रहती है, इसीलिए तो शराब पी और खूब पी।

कुछ देर बाद गिरीश फिर कह रहे हैं – "भगवन्, आश्चर्य हो रहा है, मै पूर्णब्रह्म भगवान की सेवा कर रहा हूं! ऐसी कौनसी तपस्या मैंने की जिससे इस सेवा का अधिकारी हुआ?"

दोपहर हो गयी है, श्रीरामकृष्ण ने भोजन किया। बीमारी के होने से बहुत थोड़ासा भोजन किया।

श्रीरामकृष्ण की सदैव भावावस्था रहती है – जबरदस्ती उन्हे शरीर की ओर मन को ले आना पड़ता है। परन्तु बालक की तरह वे खुद अपने शरीर की रक्षा नही कर सकते। बालक की तरह भक्तो से कह रहे हैं, "जरासा भोजन किया, अब थोड़ी देर के लिए लेटूँगा। तुम लोग जरा बाहर जाकर बैठो।"

श्रीरामकृष्ण ने थोड़ा विश्राम किया। भक्तगण कमरे में फिर आये।

श्री गुरु ही इष्ट हैं। दो प्रकार के भक्त।

गिरीश – गुरु और इष्ट। मुझे गुरुरूप बहुत अच्छा लगता है – उसका भय नही होता – क्यो भला? मै भावावेश से दूर भागता हूँ – उससे मुझे भय लगना है।

श्रीरामकृष्ण – जो इष्ट हैं, वे ही गुरु के रूप मे आते है। शवसाधना के पश्चात् जब इष्टदेव के दर्शन होते है, तब गुरु स्वयं शिष्य से आकर कहते हैं – 'ऐ (शिष्य), वह देख (इष्ट को)।' यह कहकर वे इष्ट के रूप मे लीन हो जाते है। शिष्य तब गुरु को नहीं देखता। जब पूर्ण ज्ञान हो जाता है तब कौन गुरु और कौन शिष्य? 'वह बड़ी कठिन अवस्था है; वहाँ गुरु और शिष्य एक दूसरे को नही देख पाते।'

एक भक्त – गुरु का सिर और शिष्य के पैर।

गिरीश (आनन्द से) – हाँ, हाँ, सच है।

नवगोपाल – इसका अर्थ सुन लो। शिष्य का सिर गुरु की वस्तु है और गुरु के पैर शिष्य की वस्तु। सुना?

गिरीश – नही, यह अर्थ नही है। बाप के कन्धे पर क्या लड़का चढ़ता नही? इसीलिए शिष्य के पैर और गुरु का सिर, ऐसा कहा है।

नवगोपाल – वह शिष्य अगर वैसा ही छोटासा हो, तब न?

श्रीरामकृष्ण – भक्त दो तरह के हैं – एक वे जिनका भाव बिल्ली के बच्चे जैसा होता है, सारा अवलम्ब माता पर।

"बिल्ली का बच्चा बस 'मिऊं मिऊँ' करता रहता है। कहाँ जाना है, क्या करना है, वह कुछ नही जानता। माँ कभी उसे कण्डौरे मे रखती है और कभी बिस्तरे पर ले जाकर

रखती है। इस तरह का भक्त ईश्वर को अपना आममुख्तार बना लेता है। उन्हे मुख्तारी सौपकर वह निश्चिन्त हो जाता है।

"सिक्खो ने कहा था, 'ईश्वर दयालु है।' मैने कहा, 'वे हमारे माँ-बाप है; उनका दयालु होना फिर कैसा? बच्चो को पैदा करके माँ-बाप उनका पालन-पोषण नही करेगे तो क्या टोलेवाले आकर करेगे?' इस तरह के भक्तो को दृढ विश्वास है – 'वे हमारी माँ है, हमारे पिता है।'

"एक दर्जे के भक्त और है। उनका स्वभाव बन्दर के बच्चे की तरह है। बन्दर का बच्चा खुद किसी तरह माँ को पकड़े रहता है। इस दर्जे के लोगो को कुछ कर्तृत्व का विचार रहता है। मुझे तीर्थ करना है, जप-तप करना है, षोड़शोपचार पूजा करनी है तब ईश्वर मिलेगे, – इनका यह भाव है।

"भक्त दोनो है। (भक्तो से) जितना ही बढ़ोगे, उतना ही देखोगे, वे ही सब कुछ हुए है – वे ही सब कुछ करते है। वे ही गुरु है और वे ही इष्ट भी है। वे ही ज्ञान और भक्ति सब दे रहे है।

"जितना ही आगे बढ़ोगे उतना ही अधिक पाओगे। देखोगे, चन्दन की लकड़ी फिर आगे और भी बहुत कुछ है – चाँदी-सोने की खान, हीरे और मणि की खान; इसीलिए कहता हूँ, 'आगे बढ़ते जाओ।'

"और 'बढ़ते जाओ' यह बात भी किस तरह कहूँ? – संसारी आदमी अगर अधिक बढ़ जायँ तो घर और गृहस्थी सब साफ हो जाय। केशव सेन उपासना कर रहा था, कहा, 'हे ईश्वर, ऐसा करो जिससे तुम्हारी भक्ति की नदी मे हम डूब जायँ।' जब उपासना समाप्त हो गयी तब मैने कहा, 'क्यो जी, तुम भक्ति की नदी मे डूब कैसे जाओगे? डूब जाओगे तो जो चिक के भीतर बैठी हुई है, उनकी क्या दशा होगी? एक काम करो – कभी कभी डूब जाना और कभी कभी निकलकर फिर किनारे पर सूखे मे आ जाना।' " (सब हँसते है)

कटोवा के वैष्णव तर्क कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे है – "तुम कलकलाना छोड़ो। घी जब तक कच्चा रहता है तभी तक कलकलाया करता है।

"एक बार उनका आनन्द मिलने से विचार-बुद्धि दूर हो जाती है। जब मधु-पान का आनन्द मिलने लगता है तो गूँजना बन्द हो जाता है।

"किताब पढ़कर कुछ बातो के कह सकने से क्या होगा? पण्डित कितने ही श्लोक कहते है – 'शीर्णा गोकुलमण्डली' आदि सब।

" 'भंग-भंग' रटते रहने से क्या होगा? उसकी कुल्ली करने से भी कुछ न होगा। पेट मे पड़ना चाहिए – नशा तभी होगा। निर्जन में और एकान्त मे व्याकुल होकर ईश्वर को बिना पुकारे इन सब बातो की धारणा कोई कर नही सकता।"

डाक्टर राखाल श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए आये है। श्रीरामकृष्ण व्यस्त भाव से कह रहे है – "आइये, बैठिये।"

वैष्णव से बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – मनुष्य और 'मन-होश'। जिसे चैतन्य हुआ है, वह 'मन-होश' है। बिना चैतन्य के मनुष्य-जन्म वृथा है!

"हमारे देश (कामारपुकुर) मे मोटे पेट और बड़ी बड़ी मूछोवाले आदमी बहुत है, फिर भी वहाँ के लोग दस कोस से अच्छे आदमी को पालकी पर चढ़ाकर क्यो ले आते हैं? – उन्हे धार्मिक और सत्यवादी देखकर; वे झगड़े का फैसला कर देगे, इसलिए। जो लोग केवल पण्डित हैं, उन्हे नही लाते।

"सत्य बोलना कलिकाल की तपस्या है। सत्य वचन, ईश्वर पर निर्भरता तथा पर-स्त्री को माता के समान देखना – ये सब ईश्वर-दर्शन के उपाय है।"

श्रीरामकृष्ण बच्चे की तरह डाक्टर से कह रहे है – "भाई, इसे अच्छा कर दो।"

डाक्टर – मै अच्छा करूँगा?

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – डाक्टर नारायण है। मै सब मानता हूँ।

"अगर कहो – सब नारायण है, तो चुप मारकर क्यो नही रहते? – तो उत्तर यह है कि मै महावत नारायण को भी मानता हूँ।

"शुद्ध मन और शुद्ध आत्मा एक ही वस्तु है।

"शुद्ध मन मे जो बात पैदा होती है वह उन्ही की वाणी है। 'महावत नारायण' वे ही है।

"उनकी बात फिर क्यो न मानूँ? वे ही कर्ता है। 'मै' को जब तक उन्होने रखा है, तब तक उनकी आज्ञा को सुनकर काम करूँगा।"

अब डाक्टर श्रीरामकृष्ण के गले की बीमारी की परीक्षा करेगे। श्रीरामकृष्ण कह रहे है – "महेन्द्र सरकार ने जीभ दबायी थी – जैसे बैल की जीभ दबायी जाती है!"

श्रीरामकृष्ण बालक की तरह बार-बार डाक्टर के कुर्ते मे हाथ लगाते हुए कह रहे है – "भाई! तुम इसे अच्छा कर दो।"

Laryngoscope (गला देखने का आईना) को देखकर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कह रहे है – "इसमे छाया पड़ेगी, समझ गया।"

नरेन्द्र ने गाया। परन्तु श्रीरामकृष्ण की बीमारी के कारण अधिक संगीत नही हुआ।

(३)

डा. रुद्र तथा श्रीरामकृष्ण

दोपहर के भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण अपनी चारपाई पर बैठे हुए डाक्टर भगवान

रुद्र और मास्टर से वार्तालाप कर रहे हैं। कमरे मे राखाल, लाटू आदि भक्त भी हैं।

आज बुधवार है, श्रावण की अष्टमी-नवमी तिथि, २ सितम्बर १८८५। डाक्टर ने श्रीरामकृष्ण की बीमारी का कुल विवरण सुना। श्रीरामकृष्ण जमीन पर उतरकर डाक्टर के पास बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण – देखो जी, दवा नही सही जाती। मेरी प्रकृति कुछ और है।

"अच्छा, यह तुम्हें क्या जान पड़ता है? रुपया छूने पर हाथ टेढ़ा हो जाता है। और अगर मै धोती में गॉठ दे दूँ, तो जब तक वह खोल न दी जाय तब तक के लिए सॉस बन्द हो जाती है।"

यह कहकर उन्होंने एक रुपया ले आने के लिए कहा। डाक्टर को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि रुपये को हाथ पर रखते ही हाथ टेढ़ा हो गया और साँस बन्द हो गयी। रुपये को हटा लेने पर तीन बार सॉस कुछ जोर से चली तब हाथ कहीं ठीक हुआ। डाक्टर ने मास्टर से कहा, "Action on the nerves." (स्नायु के ऊपर क्रिया)

श्रीरामकृष्ण डाक्टर से कह रहे है – "एक अवस्था और है। कुछ संचय नही किया जाता। एक दिन मैं शम्भु मल्लिक के बगीचे में गया था। उस समय पेट मे बड़ी पीड़ा थी। शम्भु ने कहा, 'जरा जरा अफीम खाया कीजिये तो ठीक हो जायेगा।' मेरी धोती के छोर मे जरासी अफीम उसने बॉध दी। जब लौटा आ रहा था तब फाटक के पास न जाने चक्कर आने लगा। रास्ता नही मिल रहा था। फिर जब अफीम खोलकर फेक दी गयी तब फिर ज्यों की त्यों अवस्था हो गयी और मैं बगीचे में लौट आया।

"देश मे मैं आम तोड़कर लिये आ रहा था, थोड़ी दूर जाने के बाद फिर चल न सका। खड़ा हो गया। फिर आमो को एक गढ़े मे जब रख दिया तब कही घर आ सका। अच्छा, यह क्या है?"

डाक्टर – इसके पीछे एक शक्ति और है, मन की शक्ति।

मणि – ये कहते है, यह ईश्वर की शक्ति है और आप बतलाते है, मन की शक्ति।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – ऐसी भी अवस्था है – अगर कोई कहता है, 'पीड़ा घट गयी,' तो साथ ही साथ कुछ घट भी जाती है। उस दिन ब्राह्मणी ने कहा, 'आठ आना बीमारी अच्छी हो गयी;' उसके कहने के साथ ही मैं नाचने लगा।

डाक्टर का स्वभाव देखकर श्रीरामकृष्ण को प्रसन्नता हुई। वे डाक्टर से कह रहे हैं – "तुम्हारा स्वभाव अच्छा है। ज्ञान के दो लक्षण हैं, स्वभाव का शान्त हो जाना और अभिमान का लोप हो जाना।"

मणि – इन्हें पत्नी-वियोग हो गया है।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – मै कहता हूँ, इन तीन आकर्षणो के एकत्र होने पर

ईश्वर मिलते हैं – माता का बच्चे पर, सती का पति पर तथा विषयी मनुष्य का विषय पर जैसा आकर्षण होता है।

"कुछ भी हो, भाई, मेरी यह बीमारी अच्छी कर दो।"

डाक्टर अब गला देखेंगे। गोल बरामदे में एक कुर्सी पर श्रीरामकृष्ण बैठे। श्रीरामकृष्ण पहले डाक्टर सरकार की बात कह रहे हैं – "उसने खूब जोर से जीभ दबायी – जैसे बैल की हो!"

डाक्टर – उन्होंने इच्छापूर्वक वैसा न किया होगा।

श्रीरामकृष्ण – नही, ठीक ठीक जाँच करने के लिए उसने जीभ को दबाया।

(४)

अस्वस्थ श्रीरामकृष्ण तथा डाक्टर राखाल। भक्तों के साथ नृत्य।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तो के साथ अपने कमरे में बैठे हैं। रविवार, २० सितम्बर, १८८५ ई., शुक्ला एकादशी। नवगोपाल, हिन्दू स्कूल के शिक्षक हरलाल, राखाल, लाटू, कीर्तनकार गोस्वामी तथा अन्य लोग उपस्थित हैं। बड़ा बाजार के डाक्टर राखाल को साथ लेकर मास्टर आ पहुँचे। डाक्टर से श्रीरामकृष्ण के रोग की जाँच करायेगे।

डाक्टर देख रहे हैं कि श्रीरामकृष्ण के गले में क्या रोग हुआ है। वे मोटे आदमी हैं, उँगलियाँ मोटी मोटी हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए, डाक्टर से) – जो लोग ऐसा ऐसा करते हैं (अर्थात् कुश्ती लड़ते हैं) उनकी तरह हैं, तुम्हारी उँगलियाँ! महेन्द्र सरकार ने देखा था, परन्तु जीभ को इतने जोर से दबा दिया था कि बहुत तकलीफ हुई। जैसे गाय की जीभ दबाकर पकड़ी हो!

डाक्टर राखाल – जी, मैं देखता हूँ, आपको कुछ कष्ट न होगा।

डाक्टर द्वारा दवा की व्यवस्था करने के बाद श्रीरामकृष्ण फिर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति) – भला, लोग कहते हैं, ये यदि साधु हैं तो इन्हें रोग क्यों होता है?

तारक – भगवानदास बाबाजी बहुत दिनों तक रोग से बिस्तर पर पड़े रहे।

श्रीरामकृष्ण – मधु डाक्टर साठ वर्ष की अवस्था में वेश्या के लिए उसके घर पर खाना लेकर जाता है, और इधर उसे कोई रोग नहीं है।

गोस्वामी – जी, आपका जो रोग है, यह दूसरों के लिए है। जो लोग आपके यहाँ आते हैं, उनका अपराध आपको लेना पड़ता है। उन्हीं सब अपराध-पापों को लेने से *आपको रोग होता है।*

एक भक्त – यदि आप माँ से कहें, 'माँ, इस रोग को मिटा दो', तो जल्द ही मिट

जाय।

श्रीरामकृष्ण – रोग मिटाने की बात कह नही सकता; फिर हाल मे सेव्य-सेवक भाव कम हो रहा है। एक बार कहता हूँ, 'माँ, तलवार के खोल की जरा मरम्मत कर दो', परन्तु उस प्रकार की प्रार्थना कम होती जा रही है। आजकल 'मै' को खोजने पर भी नही पाता। देखता हूँ, वे ही इस खोल मे विद्यमान है।

कीर्तन के लिए गोस्वामी को लाया गया है। एक भक्त ने पूछा, 'क्या कीर्तन होगा?'

श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ है, कीर्तन होने पर भावावस्था आयेगी, यही सब को भय है।

श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "होने दो थोड़ासा। कहते है, मेरा भाव होता है – इसीलिए भय होता है। भाव होने पर गले के उसी स्थान मे जाकर लगता है।"

कीर्तन सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण भाव को सम्हाल न सके। खड़े हो गये और भक्तो के साथ नृत्य करने लगे।

डाक्टर राखाल ने सब देखा, उनकी किराये की गाड़ी खड़ी है। वे और मास्टर उठ खडे हुए, – कलकत्ता जायेगे। दोनो ने श्रीरामकृष्णदेव को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (स्नेह के साथ, मास्टर के प्रति) – क्या तुमने खाया है?

मास्टर के प्रति आत्मज्ञान का उपदेश - 'देह' खोल मात्र है

बृहस्पतिवार, २८ सितम्बर, पूर्णिमा की रात को श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे छोटे तख्त पर बैठे है। गले के रोग से पीड़ित है।

मास्टर आदि भक्तगण जमीन पर बैठे है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – कभी कभी सोचता हूँ, यह देह केवल खोल है। उस अखण्ड (सच्चिदानन्द) के अतिरिक्त और कुछ नही है।

"भाव का आवेश होनेपर गले का रोग एक किनारे पड़ा रहता है। अब थोड़ा-थोड़ा वह भाव हो रहा है और हँसी आ रही है।"

द्विज की बहन और छोटी दादी श्रीरामकृष्ण की अस्वस्थता का समाचार पाकर देखने के लिए आयी है। वे प्रणाम करके कमरे के एक कोने मे बैठी। द्विज की दादी को श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "ये कौन है? जिन्होने द्विज को पाला-पोसा है? अच्छा, द्विज ने एकतारा क्यो खरीदा है?"

मास्टर – जी, उसमे दो तार है।

श्रीरामकृष्ण – उसके पिता उसके विरोधी है। सब लोग क्या कहेगे? उसको तो गुप्त रूप से ईश्वर को पुकारना ही ठीक है।

श्रीरामकृष्ण के कमरे की दीवाल पर टँगा हुआ गौर-निताई का एक चित्र था। गौर-

निताई दल-बल के साथ नवद्वीप में संकीर्तन कर रहे हैं – वह इसी का चित्र है।

रामलाल (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – तो फिर, यह चित्र इन्हें ही (मास्टर को) देता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – बहुत अच्छा, दे दो।

श्रीरामकृष्ण कुछ दिनों से प्रताप की दवा ले रहे हैं। आज रात रहते ही उठ पड़े हैं, इसलिए मन बेचैन है। हरीश सेवा करते हैं, उसी कमरे में हैं, वहीं राखाल भी हैं। श्रीरामलाल बाहर के बरामदे में सो रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने बाद में कहा, 'प्राण बेचैन होने से हरीश को बाँह में लेने की इच्छा हुई। मध्यम नारायण तेल मालिश करने से अच्छा हुआ, तब फिर नाचने लगा।'

□□□

परिच्छेद १२२

श्यामपुकुर में श्रीरामकृष्ण

(१)

सुरेन्द्र की भक्ति। गीता

आज विजयादशमी है। १८ अक्टूबर १८८५। श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुरवाले मकान में है। शरीर अस्वस्थ रहता है, कलकत्ते मे चिकित्सा कराने के लिए आये हैं। भक्तगण निरन्तर रहते और उनकी सेवा किया करते है। भक्तो मे से अभी तक किसी ने संसार का त्याग नही किया। वे लोग अपने घर से आया-जाया करते है।

जाड़े का मौसम है, सबेरे आठ बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ हैं, बिस्तर पर बैठे हुए है, जैसे पॉच वर्ष का बालक जो माता के सिवा और कुछ नही जानता। सुरेन्द्र आये और आसन ग्रहण किया। नवगोपाल, मास्टर तथा और भी कई लोग उपस्थित हैं। सुरेन्द्र के यहाँ दुर्गापूजा हुई थी। श्रीरामकृष्ण नही जा सके; भक्तो को प्रतिमा के दर्शन करने के लिए भेजा था। आज विजयादशमी है, इसीलिए सुरेन्द्र का मन कुछ उदास है।

सुरेन्द्र – मैं घर से भाग आया।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – प्रतिमा पानी मे डाल दी गयी तो क्या, माँ बस हृदय में विराजती रहे।

सुरेन्द्र 'माँ मॉ' करके जगदीश्वरी के सम्बन्ध मे बहुत कुछ कहने लगे। श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र को देखते हुए ऑसू बहाने लगे। मास्टर की ओर देखकर गद्गद स्वर से कहने लगे, "अहा! कैसी भक्ति है! ईश्वर के लिए कैसा अगाध प्रेम!"

श्रीरामकृष्ण – कल साढ़े सात बजे के लगभग मैने देखा, तुम्हारे दालान में श्रीदेवीप्रतिमा है, चारों ओर ज्योति ही ज्योति है। सब एकाकार हो गया है – यह और वह। दोनों जगह के बीच मानो ज्योति की एक तरंग बह रही है – इस घर से तुम्हारे उस घर तक।

सुरेन्द्र – उस समय मैं देवीजीवाले दालान मे खड़ा हुआ 'माँ माँ' कहकर उन्हें पुकार रहा था। मेरे भाई मुझे छोड़कर ऊपर चले गये थे। मेरे मन में ऐसा जान पड़ा कि मॉ कह रही हैं, 'मैं फिर आऊँगी।'

दिन के ग्यारह बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण को पथ्य दिया गया। मणि मुँह धुलाने के लिए उनके हाथों पर पानी डाल रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – चने की दाल खाकर राखाल कुछ अस्वस्थ है। आहार सात्त्विक करना अच्छा है। तुमने गीता में नहीं देखा? क्या तुम गीता नहीं पढ़ते?

मणि – जी हाँ, युक्ताहार की बातें हैं। सात्त्विक आहार, राजसिक आहार और तामसिक आहार; और सात्त्विक दया, राजसिक दया और तामसिक दया भी हैं। सात्त्विक अहं आदि सब है।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारे पास गीता है?

मणि – जी हाँ, है।

श्रीरामकृष्ण – उसमें सब शास्त्रों का सार है।

मणि – जी हाँ, ईश्वर को अनेक प्रकार से देखने की बातें लिखी हैं; आप जैसा कहते है, अनेक मार्गों से उनके पास जाना; ज्ञान, भक्ति, कर्म, ध्यान आदि अनेक मार्गों से।

श्रीरामकृष्ण – कर्मयोग का अर्थ जानते हो? सब कर्मो का फल ईश्वर को समर्पण कर देना।

मणि – जी हाँ, मैंने देखा है। गीता में लिखा है, कर्म भी तीन तरह से किये जा सकते हैं।

श्रीरामकृष्ण – किस किस तरह से?

मणि – प्रथम, ज्ञान के लिए। दूसरा, लोक-शिक्षा के लिए। तीसरा, स्वभाववश।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा अवतारवाद

श्रीरामकृष्ण मास्टर से डाक्टर सरकार की बातें कह रहे हैं। पहले दिन मास्टर श्रीरामकृष्ण का हाल लेकर डाक्टर सरकार के पास गये थे।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारे साथ क्या-क्या बातें हुई?

मास्टर – डाक्टर के यहाँ बहुतसी पुस्तकें हैं। मैं वहाँ बैठा हुआ एक पुस्तक पढ़ रहा था। उसी से कुछ अंश पढ़कर डाक्टर को सुनाने लगा। सर हम्फ्रे डेवी की पुस्तक है। उसमें अवतार की आवश्यकता पर लिखा गया है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ? तुमने क्या कहा था?

मास्टर – उसमें एक बात यह है कि ईश्वर की वाणी आदमी के भीतर से होकर बिंना आये मनुष्य उसे समझ नहीं सकते। इसीलिए अवतार की आवश्यकता है।

श्रीरामकृष्ण – वाह! ये सब तो बड़ी अच्छी बातें हैं।

मास्टर – लेखक ने उपमा दी है कि सूर्य की ओर कोई देख नही सकता, परन्तु सूर्य की किरणे जिस जगह पर पड़ती है (Reflected Rays) वहाँ लोग देख सकते है।

श्रीरामकृष्ण – यह तो बड़ी अच्छी बात है, कुछ और है?

मास्टर – एक दूसरी जगह लिखा था, यथार्थ ज्ञान विश्वास है।

श्रीरामकृष्ण – ये तो बहुत सुन्दर बाते है। विश्वास हुआ तब तो सब कुछ हो गया।

मास्टर – लेखक ने स्वप्न मे रोमन देव-देवियो को देखा था।

श्रीरामकृष्ण – क्या इस तरह की पुस्तके निकल रही है? ऐसी जगह वे ही (ईश्वर) काम कर रहे है। और भी कोई बात हुई?

मास्टर – वे लोग कहते है, हम संसार का उपकार करेंगे। तब मैने आपकी बात कही।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – कौनसी बात?

मास्टर – शम्भु मल्लिक-वाली बात। उसने आपसे कहा था, 'मेरी इच्छा होती है कि रुपये लगाकर कुछ अस्पताल और दवाखाने, स्कूल आदि बनवा दूँ। इससे बहुतों का उपकार होगा।' आपने उससे कहा था, 'अगर ईश्वर सामने आये तो क्या तुम कहोगे, मेरे लिए कुछ अस्पताल, दवाखाने और स्कूल बनवा दो?' एक बात मैंने और कही थी।

श्रीरामकृष्ण – जो कर्म करने के लिए आते है उनका दर्जा अलग है। हाँ, और कौनसी बात?

मास्टर – मैने कहा, 'यदि आपका उद्देश्य श्रीकाली की मूर्ति का दर्शन करना है तो सड़क के किनारे खड़े होकर गरीबो को भीख बाँटने मे ही अपना सब समय लगा देने से क्या लाभ होगा? पहले आप किसी प्रकार मूर्ति के दर्शन कर ले। फिर जी भर के भीख दे!'

श्रीरामकृष्ण – और भी कोई बात हुई?

मास्टर – आपके पास जो लोग आते है, उनमे बहुतो ने काम को जीत लिया है, यह बात हुई। डाक्टर ने कहा, 'मेरा भी कामभाव दूर हो गया है, इतना समझ लेना।' मैंने कहा, 'आप तो बड़े आदमी है। आपने काम को जीत लिया तो कोई आश्चर्य की बात नही। क्षुद्र प्राणियो मे भी, उनके पास रहकर, इन्द्रियों को जीतने की शक्ति आ रही है, यही आश्चर्य है!' फिर मैने वह बात कही जो आपने गिरीश घोष से कही थी।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – क्या कहा था?

मास्टर – आपने गिरीश घोष से कहा था, 'डाक्टर तुमसे ऊँचे नही चढ़ सका।' वही अवतारवाली बात।

श्रीरामकृष्ण – अवतार की बात उससे (डाक्टर से) कहना। अवतार वे हैं जो तारते है। इस तरह दस अवतार हैं, चौबीस अवतार है और असंख्य अवतार भी हैं।

मास्टर – गिरीश घोष की वे (डा. सरकार) खूब खबर रखते हैं। यही पूछते रहे कि गिरीश घोष ने क्या बिलकुल शराब पीना छोड़ दिया? उन पर खूब नजर है।

श्रीरामकृष्ण – क्या गिरीश घोष से यह बात तुमने कही थी?

मास्टर – जी हाँ, कही थी, और बिलकुल शराब छोड़नेवाली बात भी।

श्रीरामकृष्ण – उसने क्या कहा?

मास्टर – उन्होंने कहा, 'तुम लोग जब कह रहे हो, तो इस दशा में इसे श्रीरामकृष्ण की बात समझकर मान लेता हूं – परन्तु मैं स्वयं अब जोर देकर कोई बात न कहूँगा।'

श्रीरामकृष्ण – (आनन्दपूर्वक) – कालीपद ने कहा है, उसने एकदम शराब पीना छोड़ दिया है।

(३)

नित्य-लीला-योग

दिन का पिछला पहर है, डाक्टर आये हुये हैं। अमृत (डाक्टर के लड़के) और हेम भी डाक्टर के साथ आये हैं। नरेन्द्र आदि भक्त भी उपस्थित हैं। श्रीरामकृष्ण एकान्त में अमृत के साथ बातचीत कर रहे हैं। पूछ रहे हैं, 'क्या तुम्हें ध्यान जमता है?' और कह रहे हैं, 'क्या जानते हो, ध्यान की अवस्था कैसी होती है? मन तैलधारा की तरह हो जाता है। ईश्वर की ही चिन्ता रह जाती है। उसमें कोई दूसरी चिन्ता नहीं आती।' अब श्रीरामकृष्ण दूसरों से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – तुम्हारा लड़का अवतार नहीं मानता। यह अच्छी बात है। नहीं मानता तो न सही।

"तुम्हारा लड़का बड़ा अच्छा है। और होगा भी क्यों नहीं? बम्बई-आम के पेड़ में कभी खट्टे आम भी लगते हैं? ईश्वर पर उसका कैसा विश्वास है! ईश्वर पर जिसका मन है, आदमी तो बस वही है। मनुष्य और मन-होश। जिसमें होश है – चैतन्य है, जो निश्चयपूर्वक जानता है कि ईश्वर सत्य हैं और सब अनित्य, वही वास्तव में मनुष्य है। अवतार नहीं मानता तो इसमें क्या दोष? 'ईश्वर हैं, यह सम्पूर्ण जीव-जगत् उनका ऐश्वर्य है,' इसे मानने से ही हो गया। – जैसे कोई बड़ा आदमी और उसका बगीचा।

"बात यह है कि दस अवतार हैं, चौबीस अवतार हैं और फिर असंख्य अवतार भी हैं। जहाँ कहीं उनकी शक्ति का विशेष प्रकाश है, वहीं अवतार है। मेरा यही मत है।

"एक बात और है, जो कुछ देख रहे हो यह सब वे ही हुए हैं। – जैसे बेल के बीज, खोपड़ा, गूदा, तीनों को मिलाकर एक बेल है। जिनकी नित्यता है, उन्हीं की लीला भी है। नित्य को छोड़कर केवल लीला समझ में नहीं आती। लीला के रहने के कारण ही, लीला को छोड़-छोड़कर लोग नित्य में जाया करते हैं।

"जब तक अहं-बुद्धि रहती है तब तक लीला के परे मनुष्य नहीं जा सकता। 'नेति नेति' करके ध्यान-योग द्वारा नित्य में लोग पहुँच सकते हैं, परन्तु कुछ भी छोड़ा नहीं जा सकता, क्योंकि यह सब वे ही हुए हैं – जैसा मैंने कहा – बेल।"

डाक्टर – बहुत ठीक है।

श्रीरामकृष्ण – कचदेव निर्विकल्प समाधि में थे। जब समाधि छूटी तब एक ने पूछा, 'आप इस समय क्या देखते हैं?' कचदेव ने कहा, 'मैं देख रहा हूँ, संसार मानो उनसे मिला हुआ है। वे ही पूर्ण हैं। जो कुछ देख रहा हूँ, सब वे ही हुए हैं। इसमें से क्या छोड़ूँ और क्या पकड़ूँ, कुछ समझ में नहीं आता।'

"बात यह है कि नित्य और लीला का दर्शन करके दास-भाव में रहना चाहिए। हनुमान ने साकार और निराकार दोनों का साक्षात्कार किया था। इसके बाद, दास-भाव से – भक्त के भाव से रहे थे।"

मणि (स्वगत) – नित्य और लीला, दोनों को लेना होगा। जर्मनी में वेदान्त के प्रवेश के समय से यूरोपीय पण्डितो में भी किसी किसी का मत ऐसा ही है; परन्तु श्रीरामकृष्ण ने तो कहा है कि सम्पूर्ण रूप से त्याग – कामिनी-कांचन का त्याग – हुए बिना नित्य और लीला का साक्षात्कार नहीं होता। सच्चे साधक को ठीक ठीक त्यागी, सम्पूर्ण अनासक्त होना चाहिए। यहीं पर उनमें तथा हेगल जैसे यूरोपीय पण्डितों में भेद है।

(४)

श्रीरामकृष्ण तथा ज्ञानयोग

डाक्टर कह रहे हैं, 'ईश्वर ने हमारी सृष्टि की है, और हम सब लोगों की आत्माएँ अनन्त उन्नति करेंगी।' वे यह मानने के लिए राजी नहीं कि एक आदमी किसी दूसरे आदमी से बड़ा है। इसीलिए वे अवतार नही मानते।

डाक्टर – अनन्त उन्नति। यह अगर न हो तो पाँच-सात वर्ष और बचकर क्या होगा? इससे तो मैं गले में रस्सी की फाँसी लगाकर मर जाना बेहतर समझता हूँ!

"अवतार फिर है क्या? जो मनुष्य शौच जाता है – पेशाब करता है, उसके पैरों सिर झुकाऊँ! हाँ, परन्तु यह मानता हूँ कि मनुष्य में ईश्वर की ज्योति प्रतिबिम्बित होती है।"

गिरीश (हँसकर) – आपने ईश्वरी ज्योति कभी देखी नहीं –

डाक्टर उत्तर देने से पहले कुछ इधर-उधर करने लगे। पास ही एक मित्र बैठे हुए थे – धीरे धीरे उन्होंने कुछ कहा।

डाक्टर (गिरीश के प्रति) – आपने भी तो प्रतिबिम्ब के सिवा और कुछ नहीं देखा।

गिरीश – मैं देखता हूँ! वह ज्योति मैं देखता हूँ! श्रीकृष्ण अवतार हैं, यह मैं

प्रमाणित कर दूँगा, नहीं तो अपनी जीभ काटकर फेंक दूँगा!

श्रीरामकृष्ण – यह सब जो बातचीत हो रही है, कुछ भी नहीं है।

"यह सब सन्निपात-ग्रस्त रोगी की बकवाद है। विकार के रोगी ने कहा था, 'मैं घड़ा भर पानी पिऊँगा, हण्डी भर भात खाऊँगा।' वैद्य ने कहा, 'अच्छा, खाना तब खाना। अच्छे हो जाने के बाद जो कुछ तू कहेगा, वैसा ही किया जायगा।'

"जब घी कच्चा रहता है, तभी तक उसमें कलकलाहट होती है। पक जाने पर फिर आवाज नहीं निकलती। जिसका जैसा मन है, वह ईश्वर को उसी तरह देखता है। मैंने देखा है, बड़े आदमी के घर में रानी की तस्वीर आदि – यह सब है और भक्तों के यहाँ देव-देवियों की तस्वीरें हैं।

"लक्ष्मण ने कहा था, 'हे राम, वशिष्ठदेव जैसे पुरुष को भी पुत्रों का शोक हो रहा है।' राम ने कहा, 'भाई, जिसमें ज्ञान है उसमें अज्ञान भी है। जिसे उजाले का ज्ञान है, उसे अँधेरे का भी ज्ञान है। इसलिए ज्ञान ओर अज्ञान से परे हो जाओ।' ईश्वर को विशेष रूप से जान लेने पर यह अवस्था प्राप्त हो जाती है। इसे ही विज्ञान कहते हैं।

"पैर में काँटा चुभ जाने से, उसे निकालने के लिए एक और काँटा ले आना पड़ता है। निकालने के बाद फिर दोनों काँटे फेंक दिये जाते हैं। ज्ञानरूपी काँटे से अज्ञानरूपी काँटा निकालकर, ज्ञान और अज्ञानरूपी दोनों काँटे फेंक दिये जाते हैं।

"पूर्ण ज्ञान के कुछ लक्षण हैं। उस समय विचार बन्द हो जाता है। पहले जैसा कहा, कच्चा रहने से ही घी में कलकलाहट रहती है।"

डाक्टर – पूर्ण ज्ञान रहता कहाँ है? सब ईश्वर हैं, तो फिर आप परमहंस का काम क्यों करते हैं? और ये लोग आकर आपकी सेवा क्यों करते हैं? आप चुप क्यों नहीं रहते?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – पानी स्थिर रहने पर भी पानी है, और तरंग-रूप से हिलने-डुलने पर भी वह पानी ही है।

"एक बात और। महावत-नारायण की बात भी क्यों न मानी जाय? गुरु ने शिष्य को समझाया था कि सब नारायण हैं। पागल हाथी आ रहा था, शिष्य गुरु की बात पर विश्वास करके वहाँ से नहीं हटा। यही सोचकर कि हाथी भी नारायण है! महावत इधर चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा था, 'सब लोग हट जाओ – रास्ते से सब हट जाओ।' पर शिष्य नहीं हटा। हाथी आया और उसे एक ओर फेंककर चला गया। शिष्य को बड़ी चोट लगी, केवल जान ही नहीं निकली। मुँह पर पानी के छींटे लगाने से उसे चेत हुआ। जब उससे पूछा गया कि तुम हटे क्यों नहीं, तब उसने कहा, 'क्यों, गुरु महाराज ने तो कहा था – सब नारायण हैं।' गुरु ने कहा, 'बेटा, अगर ऐसा ही था तो तुमने महावतनारायण की बात क्यों नहीं मानी? महावत भी तो नारायण हुआ।' वे ही शुद्ध मन और शुद्ध बुद्धि होकर भीतर वास करते हैं। मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं। मैं घर हूँ, वे मालिक। वे ही

महावतनारायण हैं।''

डाक्टर – और एक बात कहूँगा, आप फिर ऐसा क्यों कहते हैं कि रोग अच्छा कर दो?

श्रीरामकृष्ण – जब तक 'मैं'रूपी घट है, तभी तक ऐसा हो रहा है। सोचो, एक महासमुद्र है, ऊपर-नीचे जल से पूर्ण है। उसके भीतर एक घट है। घट के भीतर और बाहर पानी है; परन्तु उसे बिना फोड़े यथार्थ में एकाकार नहीं होता। उन्हीं ने इस 'मैं'-घट को रख छोड़ा है।

डाक्टर – तो यह 'मैं' जो आप कह रहे हैं, यह सब क्या है? इसका भी तो अर्थ कहना होगा। क्या वे (ईश्वर) हमारे साथ कोई मजाक कर रहे हैं?

गिरीश – (डाक्टर से) – महाशय, आपको कैसे मालूम हुआ कि वह मजाक नहीं हैं?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – इस 'मैं' को उन्हीं ने रख छोड़ा है। उनकी क्रीड़ा – उनकी लीला!

''एक राजा के चार लड़के थे। सब थे तो राजा के लड़के, परन्तु उन्हीं मे कोई मन्त्री, कोई कोतवाल, इसी तरह बन-बनकर खेल रहे थे। राजा के लड़के होकर कोतवाल का खेल!

(डाक्टर से) ''सुनो, यदि तुम्हें आत्म-साक्षात्कार हो जाय तो यह सब तुम मानने लग जाओगे। उनके दर्शन से सब संशय दूर हो जाते हैं।''

डाक्टर – सब सन्देह कहाँ जाता है?

श्रीरामकृष्ण – मेरे पास इतना ही सुन जाओ। इससे अधिक कुछ जानना चाहो तो अकेले में उनसे (ईश्वर से) कहना। उनसे पूछना, क्यों उन्होंने ऐसा किया है।

''लड़का भिक्षुक को मुट्ठी भर चावल ही दे सकता है। अगर रेल के किराये की उसे आवश्यकता होती है, तो यह बात मालिक के कान तक पहुँचायी जाती है।''

डाक्टर चुप हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, तुम्हें विचार प्यारा है, तो सुनो कुछ विचार करता हूँ। ज्ञानी के मत से अवतार नहीं है। कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, 'तुम मुझे अवतार-अवतार कह रहे हो, आओ, तुम्हें एक दृश्य दिखलाऊँ।' अर्जुन साथ-साथ गये। कुछ दूर जाने पर कृष्ण ने पूछा, 'क्या देखते हो?' अर्जुन ने कहा, 'एक बहुत बड़ा पेड़ है और उसमें गुच्छे के गुच्छे जामुन लटक रहे हैं।' कृष्ण ने कहा, वे जामुन नहीं हैं। जरा और बढ़कर देखो।' तब अर्जुन ने देखा, गुच्छों में कृष्ण फले हुए थे। कृष्ण ने कहा, 'अब देखा? – मेरी तरह कितने कृष्ण फले हुए हैं!'

''कबीरदास ने कृष्ण की बात पर कहा था, 'वह तो गोपियों की तालियों पर बन्दर-

नाच नाचा था!'

"जितना ही बढ़ जाओगे, ईश्वर की उपाधि उतनी ही कम देखोगे। भक्त को पहले दशभुजा के दर्शन हुए। और भी बढ़कर उसने देखा, षड्भुजा मूर्ति। और भी बढ़कर देखा, द्विभुज गोपाल। जितना ही बढ़ रहा है, उतना ही ऐश्वर्य घट रहा है। और भी बढ़ा तब ज्योति के दर्शन हुए – कोई उपाधि नहीं।

"जरा वेदान्त का भी विचार सुनो। किसी राजा को एक आदमी इन्द्रजाल दिखाने के लिए आया था। उसके जरा हट जाने पर राजा ने देखा, एक सवार आ रहा है – घोड़े पर बड़े रोब-दाब से, हाथ में अस्त्र-शस्त्र लिये हुए। सभा भर के आदमी और राजा विचार करने लगे कि इसके भीतर क्या सत्य है। वह घोड़ा तो सत्य नहीं है, वह साज-बाज भी सत्य नहीं है, वे अस्त्र-शस्त्र भी सत्य नहीं है। अन्त में सचमुच देखा, सवार ही अकेला खड़ा था और कुछ नहीं। अर्थात् ब्रह्म सत्य है, संसार मिथ्या। विचार करना चाहो तो फिर और कोई चीज नहीं टिकती।"

डाक्टर – इसमें मेरी ओर से कोई आपत्ति नहीं।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु यह भ्रम सहज ही दूर नही होता। ज्ञान के बाद भी कुछ कुछ रहता है। स्वप्न में अगर कोई बाघ देखता है तो आँख खुलने के बाद भी छाती धड़कती रहती है।

"चोर खेत में चोरी करने के लिए गये हुए थे। वहाँ आदमी के आकार का पुतला बनाकर खड़ा कर दिया गया था, डरवाने के लिए। चोर मारे डर के घुस नही रहे थे। एक ने पास जाकर देखा तो केवल घास! – आदमी के शक्ल की बाँधकर खड़ी कर दी गयी थी। उसने वहाँ से आकर अपने साथियों से कहा कि डरने की कोई बात नहीं। किन्तु फिर भी वे लोग मारे डर के कदम आगे नही बढ़ा रहे थे। कहते थे, 'छाती धड़कती है।' तब जिसने पास जाकर देखा था, उसने उस गड़े हुए आकर को जमीन मे सुला दिया और कहने लगा, 'यह कुछ नहीं है, यह कुछ नहीं है' – 'नेति' 'नेति'।"

डाक्टर – यह तो बड़ी सुन्दर बात है!

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – हाँ, कैसी बात है?

डाक्टर – बड़ी सुन्दर है।

श्रीरामकृष्ण – एक बार थैन्क यू (Thank you) भी तो कहो।

डाक्टर – क्या आप मेरे मन का भाव नहीं समझ रहे हैं? इतना कष्ट करके आपको यहाँ देखने के लिए आता हूँ!

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – नहीं जी, मूर्ख के कल्याण के लिए भी तो कुछ कहो। विभीषण ने लंका का राजा होना अस्वीकृत कर दिया था, कहा था, 'राम, मैं तुम्हें जब पा गया तो अब राज्य से क्या काम?' सब ने कहा, "विभीषण, तुम मूर्खों के लिए राजा बनो।

जो लोग कह रहे हैं, 'तुमने राम की इतनी सेवा की, परन्तु तुम्हें ऐश्वर्य क्या मिला?' – उनकी शिक्षा के लिए तुम राजा बनो।''

डाक्टर – यहाँ उस तरह का मूर्ख है कौन?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – नहीं जी, यहाँ शंख भी हैं और शम्बुक भी हैं! (सब हँसते हैं)

(५)

डाक्टर के प्रति उपदेश

डाक्टर ने श्रीरामकृष्ण के लिए दवा दी, दो गोलियॉं; कहने लगे, 'ये गोलियाँ दी हैं – पुरुष और प्रकृति!' (सब हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – हाँ, पुरुष और प्रकृति एक ही साथ रहते हैं। तुमने कबूतरों को नहीं देखा? नर तथा मादी अलग नही रह सकते। जहाँ पुरुष है, वहीं प्रकृति भी है। जहाँ प्रकृति है, वहीं पुरुष भी है।

आज विजयादशमी है। श्रीरामकृष्ण ने डाक्टर से कुछ मिष्टान्न खाने के लिए कहा। भक्तगण मिष्टान्न लाकर देने लगे।

डाक्टर (खाते हुए) – भोजन के लिए थैन्क यू (Thank you) कहता हूँ; आपने जो ऐसा उपेदश दिया, उसके लिए नहीं। वह थैन्क यू मुँह से क्यों निकाला जाय?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – उनमें मन रखना। और क्या कहूँ, और थोड़ी थोड़ी देर के लिए ध्यान करना। (छोटे नरेन्द्र को दिखलाकर) देखो, इसका मन ईश्वर में बिलकुल लीन हो जाता है। जो सब बातें तुमसे कही गयी थी –

डाक्टर – अब इन लोगों से कहिये।

श्रीरामकृष्ण – जिसे जैसा सह्य है उसके लिए वैसी ही व्यवस्था की जाती है। वे सब बातें ये सब लोग कभी समझ सकते हैं? तुमसे कही गयी थी, वह और बात है। लड़के को जो भोजन रुचता है और जो उसे सह्य है वही भोजन उसके लिए माँ पकाती है। (सब हँसते हैं)

डाक्टर चले गये। विजया के उपलक्ष्य में सब भक्तों ने श्रीरामकृष्ण को साष्टांग प्रणाम करके उनके पैरों की धूल लेकर सिर से लगायी। फिर एक दूसरे को सप्रेम भेंटने लगे। आनन्द की मानो सीमा नहीं रही। श्रीरामकृष्ण को इतनी सख्त बीमारी है, परन्तु वे जैसे सब भूल गये हों। प्रेमालिंगन और मिष्टान्न भोजन बड़ी देर तक चल रहा है। श्रीरामकृष्ण के पास छोटे नरेन्द्र, मास्टर तथा दो-चार भक्त और बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण आनन्द से बातचीत कर रहे हैं। डाक्टर के बारे में बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – डाक्टर को और अधिक कुछ कहना न होगा। पेड़ का काटना जब

समाप्त हो आता है तब जो आदमी काटता है वह जरा हटकर खड़ा हो जाता है। कुछ देर बाद पेड़ आप ही गिर जाता है।

(मास्टर से) "डाक्टर बहुत बदल गया है।"

मास्टर – जी हाँ! यहाँ आने पर उसकी अक्ल ही मारी जाती है। क्या दवा दी जानी चाहिए, इसकी बात ही नहीं उठाते। हम लोग जब याद दिलाते हैं, तब कहते हैं – 'हाँ-हाँ, दवा देनी है।'

बैठकखाने में कोई कोई भक्त गा रहे थे। श्रीरामकृष्ण जिस कमरे में हैं, उसी में सब के आने पर श्रीरामकृष्ण कहने लगे – "तुम सब गा रहे थे – ताल ठीक क्यों नहीं रहता था? कोई एक बेतालसिद्ध था – यह भी वैसी ही बात हुई!" (सब हँसते हैं)

छोटे नरेन्द्र का आत्मीय एक लड़का आया हुआ है। खूब भड़कीली पोशाक पहने और नाक पर चश्मा लगाये। श्रीरामकृष्ण छोटे नरेन्द्र से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – देखो, इसी रास्ते से एक जवान आदमी जा रहा था। उसकी कमीज की आस्तीनों में 'प्लेट' पड़ी थीं। उसके चलने का ढंग भी कैसा था! रह-रहकर वह चादर हटाकर अपनी कमीज दिखाता था और इधर-उधर देखता था कि कोई उसकी कमीज देखता भी है या नहीं! परन्तु जब वह चलता था तो साफ मालूम हो जाता था कि उसके पैर टेढ़े हैं! मोर अपने पंख तो दिखलाता है, पर उसके पैर बड़े गन्दे होते हैं। इसी प्रकार ऊँट भी बड़ा भद्दा होता है, उसके सब अंग कुत्सित होते हैं।

नरेन्द्र का आत्मीय – परन्तु आचरण अच्छे होते हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा है, परन्तु ऊँट कँटीली घास खाता है – मुख से धर-धर खून गिरता है, फिर भी वही घास खाता जाता है। आँख के सामने लड़का मरा, फिर भी संसारी 'लड़का-लड़का' की ही रट लगाये रहता है।

□□□

परिच्छेद १२३

गृहस्थाश्रम तथा संन्यासाश्रम

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा गृहस्थाश्रम

आज आश्विन की शुक्ला चतुर्दशी है। सप्तमी, अष्टमी और नवमी ये तीन दिन श्रीजगन्माता की पूजा और उत्सव मे कटे है। दशमी को विजया थी। उस समय पारस्परिक मिलने-जुलने का जो शुभ संयोग था, वह भी हो चुका। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ कलकत्ते के श्यामपुकुर नामक स्थान मे रहते है। शरीर मे कठिन व्याधि है। गले मे कैन्सर हो गया है। जब वे बलराम के घर पर थे तब कविराज गंगाप्रसाद देखने के लिए आये थे। श्रीरामकृष्ण ने उनसे पूछा था – 'यह रोग साध्य है या असाध्य?' इसका कोई उत्तर कविराज ने नही दिया। चुप हो रहे थे। अंग्रेजी चिकित्सा के डाक्टरो ने भी रोग के असाध्य होने का इशारा किया था। इस समय डाक्टर सरकार चिकित्सा कर रहे हैं।

आज बृहस्पतिवार है, २२ अक्टूबर १८८५। श्यामपुकुर के एक दुमँजले मकान मे श्रीरामकृष्ण का पलंग बिछाया गया है, उसी पर श्रीरामकृष्ण बैठे हुए है। डाक्टर सरकार, श्रीयुत ईशानचन्द्र मुखोपाध्याय और भक्तगण सामने तथा चारो ओर बैठे हुए है। ईशान बड़े दानी है, पेन्शन लेकर भी दान किया करते है, ऋण करके दान करते है और सदा ईश्वर की चिन्ता मे रहने है। पीडा का हाल सुनकर वे देखने के लिए आये हुए है। डाक्टर सरकार चिकित्सा के लिए आते है तो छ सात घण्टे तक रहते है। श्रीरामकृष्ण पर उनकी बड़ी श्रद्धा है और भक्तो को तो वे अपने आत्मीयो की तरह मानते है।

शाम के सात बजे का समय है। बाहर चाँदनी छिटकी हुई है। पूर्णाग निशानाथ चारो ओर सुधावृष्टि कर रहे है। भीतर दीपक का प्रकाश है। कमरे मे बहुतसे आदमी बैठे हुए है। बहुतसे लोग श्रीरामकृष्णदेव के दर्शन करने के लिए आये है। सब के सब एकदृष्टि से उनकी ओर देख रहे है। उनकी बाते सुनने के लिए लोगो की इच्छा प्रबल हो रही है। उनके कार्य देखने के लिए लोग उत्सुक हो रहे है। ईशान को देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है –

"जो संसारी व्यक्ति ईश्वर के पादपद्मो में भक्ति करके संसार का काम करता है,

वह धन्य है, वह वीर है। जैसे किसी के सिर पर दो मन का बोझा रखा हुआ हो, और एक बरात जा रही हो। इधर तो सिर पर इतना बड़ा बोझा है, फिर भी वह खड़े होकर बरात को देखता है। इस प्रकार संसार मे रहना बिना अधिक शक्ति के नहीं होता। जैसे पाँकाल मछली, रहती तो कीच के भीतर है, परन्तु देह में कीच छू नही जाता। 'पनडुब्बी' पानी में डुबकियाँ लगाया करती है, परन्तु एक ही बार परों को झाड़ने से फिर पानी नहीं रह जाता।

"परन्तु संसार मे यदि निर्लिप्त भाव से रहना है तो कुछ साधना चाहिए। कुछ दिन निर्जन में रहना जरूरी है, एक वर्ष के लिए हो या छ: महीने के लिए, अथवा तीन महीने के लिए या महीने ही भर के लिए। उसी एकान्त मे ईश्वर की चिन्ता करनी चाहिए। और मन ही मन कहना चाहिए – 'इस संसार में मेरा कोई नहीं है, जिन्हें मैं अपना कहता हूँ, वे दो दिन के लिए हैं, भगवान ही मेरे अपने हैं, वे ही मेरे सर्वस्व हैं। हाय! किस तरह मै उन्हें पाऊँ?'

"भक्तिलाभ के पश्चात् संसार में रहा जा सकता है। जैसे हाथ में तेल लगाकर कटहल काटने से फिर उसका दूध हाथ में नहीं चिपकता। संसार पानी की तरह है और मनुष्य का मन जैसे दूध। पानी में अगर दूध रखना चाहते हो तो दूध और पानी एक हो जायेगा; इसीलिए निर्जन स्थान में दही जमाना चाहिए। दही जमाकर मक्खन निकालना चाहिए। मक्खन निकालकर अगर पानी में रखो तो फिर वह पानी में नहीं मिलता, निर्लिप्त होकर तैरता रहता है।

"ब्रह्मसमाजवालों ने मुझसे कहा था, 'महाराज, हमारा वह मत है जो राजर्षि जनक का था। हम लोग उनकी तरह निर्लिप्त रहकर संसार करेंगे।' मैंने कहा, 'निर्लिप्त भाव से संसार करना बड़ा कठिन है। मुँह से कहने से ही जनक राजा नहीं हो सकते। राजर्षि जनक ने सिर नीचे और पैर ऊपर करके वर्षों तपस्या की थी। तुम्हें सिर नीचे और पैर ऊपर नहीं करना होगा। परन्तु साधना करनी चाहिए, निर्जन में वास करना चाहिए। निर्जन में ज्ञान और भक्ति प्राप्त करके फिर संसार कर सकते हो। दही एकान्त में जमाया जाता है। हिलाने-डुलाने से दही नही जमता।'

"जनक निर्लिप्त थे, इसलिए उनका एक नाम विदेह भी था – अर्थात् देह में बुद्धि नहीं रहती थी, – संसार में रहकर भी जीवन्मुक्त होकर घूमते थे। परन्तु देह-बुद्धि का नाश होना बहुत दूर की बात है। बड़ी साधना चाहिए।

"जनक बड़े वीर थे। वे दो तलवारें चलाते थे। एक ज्ञान की, दूसरी कर्म की।

श्रीरामकृष्ण तथा संन्यासाश्रम

"अगर पूछो, 'गृहस्थाश्रम के ज्ञानी और संन्यासाश्रम के ज्ञानी में कोई अन्तर है या

नहीं', तो उसका उत्तर यह है कि दोनों वास्तव में एक ही है – यह भी ज्ञानी है और वह भी ज्ञानी है; परंतु इतना ही है कि संसार में गृहस्थ ज्ञानी के लिए एक भय रह जाता है। कामिनी और कांचन के भीतर रहने से ही कुछ न कुछ भय है। तुम चाहे जितने ही बुद्धिमान होओ, पर काजल की कोठरी मे रहने से देह मे स्याही का थोड़ासा दाग लग ही जायगा।

"मक्खन निकालकर अगर नयी हण्डी में रखो तो मक्खन के नष्ट होने की सम्भावना नहीं रहती। अगर मट्ठे की हण्डी में रखो तो सन्देह होता है। (सब हँसे)

"धान के लावे जब भूने जाते है तब दो-चार भाड़ के बाहर चिकटकर गिर पड़ते है। वे चमेली के फूल की तरह शुभ्र होते है, देह में कहीं एक भी दाग नही रहता। जो लावे कड़ाही मे रहते हैं, वे भी अच्छे होते है, परन्तु उन बाहरवालो के समान नहीं होते, देह मे कुछ दाग होते हैं। संसार-त्यागी संन्यासी अगर ज्ञानलाभ करता है तो ठीक इसी चमेली के फूल की तरह बेदाग होता है, और ज्ञान के पश्चात् संसाररूपी कड़ाही में रहने पर देह मे ऊपर से कुछ लाल दाग लग सकता है। (सब हँसते हैं)

"जनक राजा की सभा मे एक भैरवी आयी हुई थी। स्त्री देखकर जनक राजा ने सिर झुका लिया। यह देखकर भैरवी ने कहा, 'जनक! स्त्री को देखकर अब भी तुम डरते हो!' पूर्ण ज्ञान होने पर पाँच साल के बच्चे का स्वभाव हो जाता है, तब स्त्री और पुरुष में भेद-बुद्धि नहीं रह जाती।

"कुछ भी हो, संसार मे रहनेवाले ज्ञानी की देह पर दाग चाहे लग जाय, परन्तु उससे उसकी कोई हानि नही होती। चाँद में कलंक तो है, परन्तु उससे किरणो के निकलने में कोई रुकावट नही होती।

"कोई कोई लोग ज्ञानलाभ के पश्चात् लोक-शिक्षा के लिए कर्म करते है, जैसे जनक और नारद आदि। लोक-शिक्षा के लिए शक्ति के रहने की जरूरत है। ऋषिगण अपने-ही-अपने ज्ञानोपार्जन में व्यस्त रहते थे। नारदादि आचार्य दूसरों के हित के लिए विचरण किया करते थे। वे वीर पुरुष थे।

"सड़ी हुई लकड़ी जब बह जाती है, तो उस पर कोई चिड़िया के बैठने से ही वह डूब जाती है, परन्तु मोटी लकड़ी का लट्ठा जब बहता है, तब गौ, आदमी, यहाँ तक कि हाथी भी उसके ऊपर चढ़कर पार हो सकता है।

"स्टीम बोट खुद भी पार होता है और कितने ही आदमियों को भी पार कर देता है।

"नारदादि आचार्य काठ के लट्ठे की तरह हैं, स्टीम बोट की तरह।

"कोई खाकर अँगौछे से मुँह पोंछकर बैठा रहता है कि कही किसी को खबर न लग जाय। (सब हँसते है) और कोई कोई अगर एक आम पाते है तो जरा जरासा सब को देते हैं और आप भी खाते है।

"नारदादि आचार्य सब के कल्याण के लिए ज्ञानलाभ के बाद भी भक्ति लेकर रहे थे।"

(२)

भक्तियोग तथा ज्ञानयोग

डाक्टर – ज्ञान होने पर मनुष्य अवाक् हो जाता है, आँखें मुँद जाती हैं और आँसू बह चलते हैं। तब भक्ति की आवश्यकता होती है।

श्रीरामकृष्ण – भक्ति स्त्री है। इसीलिए अन्त:पुर तक उसकी पैठ है। ज्ञान बहिर्द्वार तक ही जा सकता है। (सब हँसते हैं)

डाक्टर – परन्तु अन्त:पुर में हरएक स्त्री को घुसने नही दिया जाता, वेश्याएँ वहाँ नहीं जाने पातीं। ज्ञान चाहिए।

श्रीरामकृष्ण – यथार्थ मार्ग जो नही जानता, परन्तु ईश्वर पर जिसकी भक्ति है – उन्हे जानने की जिसे इच्छा है, वह भक्ति के बल पर ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है। एक आदमी बड़ा भक्त था, वह जगन्नाथजी के दर्शन करने के लिए घर से निकला। पुरी का कोई रास्ता वह जानता नही था, – दक्षिण की ओर न जाकर वह पश्चिम की ओर चला गया। रास्ता भूल गया था सही, परन्तु व्याकुल होकर आदमियों से वह पूछा करता था। उन लोगों ने कह दिया, 'यह मार्ग नहीं है, उस मार्ग से जाओ।' अन्त में वह भक्त पुरी पहुँच ही गया और वहाँ उसने जगन्नाथजी के दर्शन भी किये। देखो, न जानने पर भी कोई न कोई मार्ग बतला ही देता है।

डाक्टर – वह भूल तो गया था।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ऐसा हो जाता है जरूर, परन्तु अन्त में वह पाता भी है।

एक ने पूछा – ईश्वर साकार भी है या निराकार?

श्रीरामकृष्ण – वे साकार भी है और निराकार भी। एक संन्यासी जगन्नाथजी के दर्शन करने गया था। जगन्नाथजी के दर्शन करके उसे सन्देह हुआ कि ईश्वर साकार हैं या निराकार। हाथ में उसके दण्ड था, उसी दण्ड को वह जगन्नाथजी की देह में छुआने लगा, यह देखने के लिए कि दण्ड छू जाता है या नहीं। एक बार दण्ड के एक सिरे से छुआया तो दण्ड नहीं लगा, फिर दूसरे सिरे से छुआया तो वह उनकी देह से लग गया। तब संन्यासी ने समझा कि ईश्वर साकार भी हैं और निराकार भी।

"परन्तु इसकी धारणा करना बड़ा कठिन है। जो निराकार हैं, वे फिर साकार कैसे हो सकते हैं? यह सन्देह मन मे उठता है। और यदि वे साकार हों भी, तो ये अनेक रूप क्यों हैं?"

डाक्टर – उन्होंने नाना रूपों की सृष्टि की है, इसलिए वे साकार है। उन्होंने मन की

सृष्टि की है, इसलिए वे निराकार है। वे सब कुछ हो सकते है।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर को प्राप्त किये बिना ये सब बाते समझ मे नही आती। साधक को वे अनेक भावो में और अनेक रूपो मे दर्शन देते है। एक के पास गमला भर रंग था। बहुतेरे उसके पास कपड़े रँगाने के लिए आया करते थे। वह आदमी पूछा करता था, 'तुम किस रंग से रँगाना चाहते हो?' किसी ने कहा, 'लाल रंग से।' बस, वह आदमी गमले में कपड़ा छोड़ देता था और निकालकर कहता था, 'यह लो, तुम्हारा कपड़ा लाल रंग से रँग गया।' कोई दूसरा कहता था, 'मेरा कपड़ा पीले रंग से रँग दो।' रंगरेज उसी समय उसका कपड़ा भी उसी गमले मे डुबाकर कहता था. 'यह लो, तुम्हारा पीले रंग से रँग गया।' अगर कोई आसमानी रंग से रँगाना चाहता था, तो वह रंगरेज फिर उसी गमले मे डुबाकर कहता, 'यह लो, तुम्हारा आसमानी रंग मे रँग गया।' इसी तरह, जो जिस रंग से कपड़ा रँगाना चाहता था, उसका कपड़ा उसी रंग से और उसी गमले में डालकर वह रँग देता था। एक आदमी यह आश्चर्यजनक कार्य देख रहा था। रंगरेज ने उससे पूछा, 'क्यो जी, तुम्हारा कपड़ा किस रंग से रँगना होगा?' तब उस देखनेवाले ने कहा, 'भाई, तुमने जो रंग इस गमले मे डाल रखा है, वही रंग मुझे दो।' (सब हँसते है)

"एक आदमी जंगल गया था। उसने देखा, पेड़ पर एक बहुत सुन्दर जीव बैठा है। उसने एक आदमी से आकर कहा, 'भाई, अमुक पेड़ पर मैंने एक लाल रंग का जीव देखा है।' उस आदमी ने कहा, 'मैंने भी देखा है। पर वह लाल क्यो होने लगा? वह तो हरा है।' तीसरे ने कहा, 'नही जी, वह हरा नही, पीला है।' अन्त मे लड़ाई ठन गयी। तब उन लोगो ने पेड़ के नीचे जाकर देखा, वहाँ एक आदमी बैठा हुआ था। पूछने पर उसने कहा, 'मै इसी पेड़ के नीचे रहता हूँ। उस जीव को मै खूब पहचानता हूँ। तुम लोगो ने जो कुछ कहा सब ठीक है। वह कभी तो लाल होता है, कभी आसमानी, और भी न जाने क्या क्या होता है। फिर कभी देखता हूँ, उसमे कोई रंग नही।'

"जो आदमी सदा ही ईश्वर-चिन्तन करता है, वही समझ सकता है कि उनका स्वरूप क्या है। वही मनुष्य जानता है कि ईश्वर अनेक रूपो से दर्शन देते है। वे सगुण भी है और निर्गुण भी। जो आदमी पेड़ के नीचे रहता है, वही जानता है कि उस बहुरूपिये के अनेक रंग है और कभी कोई रंग नही रहता। दूसरे आदमी तर्क-वितर्क करके केवल कष्ट ही उठाते हैं।

"वे साकार है और निराकार भी। यह किस प्रकार है, जानते हो? जैसे सच्चिदानन्द एक समुद्र हो, जिसका कही ओर छोर नही। भक्ति की हिम-शक्ति से उस समुद्र का पानी जगह जगह जमकर बर्फ बन गया हो, – मानो पानी बर्फ के आकार मे बँधा हुआ हो, अर्थात् भक्त के पास वे कभी कभी साकार रूप मे दर्शन देते है। ज्ञान-सूर्य के उगने पर वह बर्फ गलकर फिर पानी हो जाता है!"

डाक्टर – सूर्य के उगने पर बर्फ गलकर पानी हो जाता है; और आप जानते हैं – बाद में सूर्य की उष्णता से पानी निराकार बाष्प बन जाता है?

श्रीरामकृष्ण – अर्थात् 'ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या' इस विचार के बाद समाधि के होने पर रूप आदि कुछ नहीं रह जाते। तब फिर ईश्वर के सम्बन्ध में किसी को यह नहीं मालूम होता कि वे व्यक्ति हैं अथवा अन्य कुछ। वे क्या हैं, यह मुख से नहीं कहा जा सकता। कहे भी कौन? जो कहेंगे, वे ही नहीं रह गये! वे अपने 'मैं' को फिर खोजकर भी नहीं पाते! उनके लिए ब्रह्म निर्गुण है। तब केवल बोध रूप में ब्रह्म का बोध होता है। मन और बुद्धि के द्वारा कोई उसे पकड़ नही सकता।

"इसीलिए कहते हैं, भक्ति चन्द्र है और ज्ञान सूर्य। मैंने सुना है, बिलकुल उत्तर में और दक्षिण में समुद्र हैं। वहाँ इतनी ठण्डक है कि पानी पर बर्फ की चट्टानें बन जाती हैं। जहाज नहीं चलते। वहाँ जाकर अटक जाते हैं।"

डाक्टर – भक्ति के मार्ग में आदमी अटक जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ऐसा होता तो है, परन्तु इससे हानि नहीं होती। उस सच्चिदानन्द-सागर का पानी ही बर्फ के आकार में जमा हुआ है। यदि और भी विचार करना चाहो, यदि 'ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या' यह विचार करना चाहो तो इसमें भी कोई हानि नहीं है। ज्ञानसूर्य से वह बर्फ गल जायेगा, और वह गलकर भी उसी सच्चिदानन्द-सागर में रहेगा।

"ज्ञान-विचार के बाद समाधि के होने पर 'मैं' 'मेरा' यह कुछ नहीं रह जाता। परन्तु समाधि का होना बहुत मुश्किल है। 'मैं' किसी तरह जाना नहीं चाहता। और जाना नहीं चाहता, इसीलिए फिर-फिरकर इस संसार में उसे आना पड़ता है।

"गौ 'हम्बा' (हम-हम) करती है, इसलिए उसे इतना दु:ख मिलता है। बैल को दिन भर हल जोतना पड़ता है – गरमी हो या वर्षा। और फिर उसे कसाई काटते हैं। इतने पर भी बचाव नहीं होता, चमार चमड़े से जूते बनाते हैं। अन्त में आँत की ताँत बनती है। धुनिया के हाथ में जब वह 'तूँ तूँ' करती है, तब कहीं उसका निस्तार होता है।

"जब जीव कहता है, 'नाहं नाहं नाहं, हे ईश्वर, मैं कुछ भी नहीं हूँ, तुम्हीं कर्ता हो; मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो', तब उसका निस्तार होता है, तभी उसकी मुक्ति होती है।"

डाक्टर – परन्तु धुनिये के हाथ में पड़े तब तो! (सब हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण – जब 'मैं' जाने का है ही नहीं, तो पड़ा रहे दास 'मैं' बना हुआ! (सब हँसते हैं)

"समाधि के बाद भी किसी किसी का 'मैं' रह जाता है – 'दास मैं', 'भक्त का मैं'। शंकराचार्य ने लोकशिक्षा के लिए 'विद्या का मैं' रख छोड़ा था। 'दास मैं, विद्या का मैं, भक्त का मैं' यह पक्का 'मैं' है।

"कच्चा 'मैं' क्या है, जानते हो ? मैं कर्ता हूँ, मैं इतने बड़े आदमी का लड़का हूँ, विद्वान् हूँ, धनवान हूँ, मुझे ऐसी बात कही जाय! – ये सब कच्चे 'मैं' के भाव हैं। अगर कोई घर में चोरी करे और उसे अगर कोई पकड़ ले, तो पहले सब चीजें उससे छुड़ा लेता है, फिर मार-पीटकर उसे सीधा कर देता है, फिर पुलिस को सौंप देता है। कहता है, 'हॅं:, नही जानता किसके घर में चोरी की!'

"ईश्वर-प्राप्ति होने पर पाँच वर्ष के बच्चे जैसा स्वभाव हो जाता है। 'बालक का मैं' और 'पक्का मैं'। बालक किसी गुण के वश नहीं है। वह तीनों गुणों से परे है। सत्त्व, रज और तम मे से किसी गुण के वश नही। देखो, बच्चा तमोगुण के वश में नही है। अभी तो उसने लड़ाई की और देखते ही देखते फिर गले से लिपट गया। कितना प्रेम और कितना खेल! वह रजोगुण के भी वश मे नही है। अभी उसने घरौंदा बनाया, कितनी मेहनत की, पर कुछ देर में सब पड़ा रह गया! वह माता के पास दौड़ चला। कभी देखो तो एक सुन्दर धोती पहने हुए घूम रहा है, पर कुछ देर बाद देखो तो वह कपड़ा खुलकर गिर गया है। कभी देखो, वह कपड़े की बात ही बिलकुल भूल गया है या उसे बगल में ही दबाये घूम रहा है। (हास्य)

"अगर बच्चे से कहो, 'यह बड़ी अच्छी धोती है, यह किसकी धोती है ?' तो वह कहेगा, 'यह मेरी धोती है – मेरे बाबूजी ले आये हैं।' अगर कहो, 'वाह, बच्चू, तू बड़ा अच्छा है, बच्चू, मुझे यह धोती दे दे' तो वह कहेगा – 'नहीं, मेरी धोती है, मेरे बाबूजी की दी हुई है। उँहूँ, मैं न दूँगा।' फिर उसे एक खिलौने पर या एक बाजे पर फुसला लो – वह पाँच रुपये की धोती तुम्हें देकर चला जायगा। पाँच वर्ष का बच्चा सत्त्वगुण के भी वश में नहीं है, पड़ोस के बच्चों से कितना प्यार है, बिना देखे रहा नहीं जाता, परन्तु माँ-बाप के साथ अगर किसी दूसरी जगह चला गया तो वहाँ नये साथी मिल जाते हैं, उन्हीं पर सब प्यार हो जाता है, पुराने साथियों को एक प्रकार से एकदम भूल जाता है। बच्चे को फिर जाति आदि का अभिमान भी नहीं होता। माता ने कह दिया है कि वह तेरा दादा है, बस उसे पूरा विश्वास हो गया कि यह मेरा दादा है। चाहे एक ब्राह्मण का लड़का हो और दूसरा कुम्हार का, दोनों एक ही पत्तल पर खा सकते हैं। बच्चे में शुचिता और अशुचिता का भी विचार नहीं है, न लोक-लज्जा ही है।

"और 'वृद्ध का मैं' भी है। (डाक्टर हँसते हैं) वृद्ध के बहुत से पाश हैं, – जाति, अभिमान लज्जा, घृणा, भय, विषय-बुद्धि, पटवारी-बुद्धि, कपटाचरण। अगर किसी से वह नाराज हो जाता है तो सहज ही उसका रंज नहीं मिटता। सम्भव है, जीवन भर के लिए वह कसकता रहे। तिसपर पाण्डित्य का अहंकार और धन का अहंकार भी है। 'वृद्ध का मैं' कच्चा 'मैं' है।

(डाक्टर से) "चार-पाँच आदमी ऐसे हैं जिन्हें ज्ञान नहीं होता। जिसे विद्या का

अहंकार है, जिसे धन का अहंकार है, पाण्डित्य का अहंकार है, उसे ज्ञान नहीं होता। इस तरह के आदमियों से अगर कहा जाय, 'वहाँ एक बहुत अच्छे महात्मा आये हैं, दर्शन करने चलोगे ?' – तो कितने ही बहाने करके कहता है, 'न:, मै न जाऊँगा।' और मन ही मन कहता है, 'मैं इतना बड़ा आदमी हूँ, मैं क्यों जाऊँ ?'

सत्त्वगुण से ईश्वर-लाभ। इन्द्रियसंयम के उपाय।

''तमोगुण का स्वभाव अहंकार है। अहंकार, अज्ञान, यह सब तमोगुण से होता है।

''पुराणों में है, रावण में रजोगुण था, कुम्भकर्ण में तमोगुण और विभीषण मे सतोगुण। इसीलिए विभीषण श्रीरामचन्द्रजी को पा सके थे। तमोगुण का एक और लक्षण है क्रोध। क्रोध में उचित और अनुचित का ज्ञान नही रहता। हनुमान ने लंका जला दी, परन्तु यह ज्ञान नही था कि इससे सीताजी की कुटी भी जल जायेगी।

''तमोगुण का एक लक्षण और है, काम। पथरियाघट्टे के गिरीन्द्र घोष ने कहा था, 'काम, क्रोध आदि रिपु जब कि नही हटने के, तो इनका मोड़ फेर दो।' ईश्वर की कामना करो। सच्चिदानन्द के साथ रमण करो। क्रोध अगर न जाता हो तो भक्ति का तम धारण करो। 'क्या! मैंने उनका नाम लिया और मेरा उद्धार न होगा ? मुझे फिर पाप कैसा ? – बन्धन कैसा ?' ईश्वर की प्राप्ति के लिए लोभ करो। ईश्वर के रूप पर मुग्ध हो जाओ। अगर अहंकार करना है तो इस तरह का अहंकार करो, 'मै ईश्वर का दास हूँ, मैं ईश्वर का पुत्र हूँ।' इस तरह छहों रिपुओं का मोड़ फेर दिया जाता है।''

डाक्टर – इन्द्रियों का संयम करना बड़ा कठिन है। घोड़े की आँख के दोनों बगल आड़ लगायी जाती है, किसी किसी घोड़े की आँखें बिलकुल बन्द कर दी जाती है।

श्रीरामकृष्ण – अगर एक बार भी उनकी कृपा हो जाय, एक बार भी अगर ईश्वर के दर्शन मिल जायँ, आत्मा का साक्षात्कार हो जाय, तो फिर कोई भय नहीं रह जाता। छहों रिपु फिर कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।

''नारद और प्रह्लाद जैसे नित्यसिद्ध महापुरुषों को उस तरह दोनों ओर से आँखों में आड़ लगाने की आवश्यकता नहीं थी। जो लड़का स्वयं ही बाप का हाथ पकड़कर खेत की मेड़ पर से चल रहा है, वह, सम्भव है, असावधानी के कारण पिता का हाथ छोड़कर गड्ढे में गिर पड़े, परन्तु पिता जिस लड़के का हाथ पकड़ता है, वह कभी गड्ढे मे नहीं गिरता।''

डाक्टर – परन्तु बच्चे का हाथ बाप पकड़े यह अच्छा नहीं मालूम होता।

श्रीरामकृष्ण – बात ऐसी नहीं। महापुरुषों का स्वभाव बालकों जैसा होता है। ईश्वर के पास वे सदा ही बालक हैं, उनमें अहंकार नहीं है। उनकी सब शक्ति ईश्वर की शक्ति है, पिता की शक्ति है, अपनी स्वयं की शक्ति कुछ भी नहीं। यही उनका दृढ़ विश्वास है।

डाक्टर – घोड़े के दोनो ओर आँखों मे आड़ लगाये बिना क्या घोड़ा कभी बढ़ना चाहता है ? रिपुओं को वशीभूत किये बिना क्या ईश्वर कभी मिल सकते हैं ?

श्रीरामकृष्ण – तुम जो कुछ कहते हो, उसे विचार-मार्ग कहते हैं – ज्ञानयोग। उस रास्ते से भी ईश्वर मिलते हैं। ज्ञानी कहते हैं, पहले चित्त की शुद्धि आवश्यक है। पहले साधना चाहिए तब ज्ञान होता है।

"भक्तिमार्ग से भी वे मिलते हैं। यदि ईश्वर के पादपद्मो मे एक बार भक्ति हो, यदि उनका नाम लेने मे जी लगे तो फिर प्रयत्न करके इन्द्रियों का संयम नहीं करना पड़ता। रिपु आप ही आप वशीभूत हो जाते हैं।

"यदि किसी को पुत्र का शोक हो, तो क्या उस दिन वह किसी से लड़ाई कर सकता है? – या न्योते में खाने के लिए जा सकता है ? वह क्या लोगों के सामने अहंकार कर सकता है या सुख-सम्भोग कर सकता है?

"कीड़े अगर एक बार उजाला देख लें तो क्या फिर वे कभी अँधेरे में रह सकते हैं?"

डाक्टर (सहास्य) – चाहे जल जायँ, फिर भी उजाला नहीं छोड़ेंगे!

श्रीरामकृष्ण – नही जी, भक्त कीड़े की तरह जलकर नही मरते। भक्त जिस उजाले को देखकर उसके पीछे दौड़ते है, वह मणि का उजाला है। मणि का उजाला बहुत उज्ज्वल तो है, परन्तु स्निग्ध और शीतल है। इस उजाले से देह नहीं जलती। इससे शान्ति और आनन्द होता है।

"विचार-मार्ग से – ज्ञानयोग के मार्ग से भी वे मिलते हैं; परन्तु यह पथ बड़ा कठिन है। मैं न शरीर हूँ, न मन, न बुद्धि; मन में न रोग है, न शोक, न अशान्ति; मैं सच्चिदानन्दस्वरूप हूँ, मैं सुख और दुःख से परे हूँ, मै इन्द्रियों के वश में नहीं हूँ – इस तरह की बातें मुख से कहना बहुत सीधा है, परन्तु कार्य में इन्हें परिणत करना या इनकी धारणा करना बहुत कठिन है। काँटे से हाथ छिदा जा रहा है, धर धर खून गिर रहा है, परन्तु फिर भी यह कहे जा रहा है कि 'कहाँ हाथ में काँटा चुभा? मैं तो बहुत अच्छी तरह हूँ।' ये सब बातें शोभा नहीं देती। पहले उस काँटे को ज्ञानाग्नि में जलाना होगा, नहीं?

"बहुतेरे यह सोचते हैं कि बिना पुस्तकें पढ़े ज्ञान नहीं होता, विद्या नहीं होती; परन्तु पढ़ने की अपेक्षा सुनना अधिक अच्छा है और सुनने की अपेक्षा देखना अच्छा है। वाराणसी के सम्बन्ध में पढ़ने या सुनने तथा दर्शन करने में बड़ा अन्तर है।

"जो लोग खुद शतरंज खेलते हैं, वे खुद चाल उतनी नहीं समझते, परन्तु जो लोग खेलते नही और तटस्थ रहकर चाल बतला देते हैं, उनकी चाल खेलनेवालों की चाल से बहुत अंशों मे ठीक होती है। संसारी लोग सोचते हैं, हम बड़े बुद्धिमान हैं, परन्तु वे विषयासक्त हैं, वे खुद खेल रहे हैं। अपनी चाल स्वयं नही समझ सकते; परन्तु संसार-

त्यागी साधु-महात्मा विषयों से अनासक्त हैं, वे संसारियों से बुद्धिमान हैं। खुद नहीं खेलते, इसीलिए चाल अच्छी बतला सकते हैं।''

डाक्टर (भक्तों से) – पुस्तक पढ़ने से इनको (श्रीरामकृष्ण को) इतना ज्ञान न होता। फैरडे (एक वैज्ञानिक) खुद प्रकृति का दर्शन किया करता था, इसीलिए वह इस तरह के वैज्ञानिक सत्यों का आविष्कार कर सका। किताबी ज्ञान के होने पर इतना न हो सकता था। गणित के नियम मस्तिष्क को उलझन में डाल देते हैं, मौलिक आविष्कार के रास्ते में वे विघ्न ला खड़ा कर देते हैं।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – जब पंचवटी में जमीन पर लोटता हुआ मैं माँ को पुकारा करता था तब मैंने माँ से कहा था, 'माँ, मुझे वह सब दिखा दो जो कर्मियों ने कर्म के द्वारा पाया है, योगियों ने योग के द्वारा और ज्ञानियों के ज्ञान के द्वारा।' और भी बहुतसी बातें हैं, उनके सम्बन्ध में अब क्या कहूँ?

''अहा! कैसी अवस्था बीत गयी है! नींद बिलकुल चली गयी थी!'' यह कहकर श्रीरामकृष्णदेव गाने लगे – 'नींद टूट गयी है, अब मैं कैसे सो सकता हूँ? योग और याग में जाग रहा हूँ . . .।'

''मैंने तो पुस्तक एक भी नहीं पढ़ी! परन्तु देखो, माता का नाम लेता हूँ, इसलिए सब लोग मुझे मानते हैं। शम्भु मल्लिक ने मुझसे कहा था, 'न ढाल है, न तलवार, और शान्तिराम सिंह बने हैं!' '' (सब हँसते हैं)

श्रीयुत गिरीश घोष के बुद्धदेव-चरित के अभिनय की चर्चा होने लगी। उन्होंने डाक्टर को निमन्त्रण देकर वह अभिनय दिखलाया था। डाक्टर को अभिनय देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई थी।

डाक्टर (गिरीश से) – तुम बड़े बुरे आदमी हो, अब मुझे रोज थिएटर देखने के लिए जाना होगा!

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – क्या कहता है? मैं नहीं समझा।

मास्टर – थिएटर उन्हें बहुत अच्छा लगा है।

(३)

अवतार तथा जीव

श्रीरामकृष्ण – (ईशान के प्रति) – तुम कुछ कहो; यह (डाक्टर) अवतार नहीं मान रहा है।

ईशान – जी, अब क्या विचार करूँ? विचार अब नहीं सुहाता।

श्रीरामकृष्ण (विरक्ति से) – क्यों? यथार्थ बात भी नहीं कहोगे?

ईशान (डाक्टर से) – अहंकार के कारण हम लोगों में विश्वास कम है।

काकभुषुण्डि ने श्रीरामचन्द्रजी को पहले अवतार नहीं माना था। अन्त में जब चन्द्रलोक, देवलोक और कैलाश में उसने भ्रमण करके देखा कि राम के हाथ से उसका किसी प्रकार निस्तार ही नही हो रहा है, तब खुद वह राम की शरण में आया। राम उसे पकड़कर निगल गये। भुषुण्डि ने तब देखा कि वह अपने पेड़ ही पर बैठा हुआ है! उसका अहंकार जब चूर्ण हो गया तब उसने समझा कि राम देखने में तो मनुष्य की तरह हैं, परन्तु ब्रह्माण्ड उनके उदर मे समाया हुआ है। उन्ही के पेट मे आकाश, चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र, समुद्र, पर्वत, जीव-जन्तु, पेड़-पौधे आदि है।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – इतना समझना ही मुश्किल है कि वे ही स्वराट् है और वे ही विराट् हैं। जिनकी नित्यता है, उन्ही की लीला भी है। 'वे आदमी नहीं हो सकते' यह बात क्या हम अपनी क्षुद्र बुद्धि द्वारा कह सकते हैं? हमारी क्षुद्र बुद्धि में क्या इन सब बातों की धारणा हो सकती है? एक सेर भर के लोटे में क्या चार सेर दूध समा सकता है?

"इसीलिए जिन साधु और महात्माओं ने ईश्वर को प्राप्त कर लिया है उनकी बात पर विश्वास करना चाहिए। साधु-महात्मा ईश्वर की ही चिन्ता लेकर रहते हैं, जैसे वकील मुकदमे की चिन्ता लेकर। क्या काकभुषुण्डि की बात पर तुम्हें विश्वास होता है?"

डाक्टर – जितना अच्छा है, उतने पर मैंने विश्वास कर लिया। पकड़ में आ जाने से ही हुआ, फिर कोई शिकायत नहीं रहती; परन्तु राम को कैसे हम अवतार मानें? पहले बालि का वध देखो। छिपकर चोर की तरह तीर चलाकर उसे मारा। यह तो मनुष्य का काम है, ईश्वर का कैसे कहा जाय?

गिरीश घोष – महाशय, यह काम ईश्वर ही कर सकते हैं।

डाक्टर – फिर देखो, सीता का परित्याग।

गिरीश घोष – महाशय, यह काम भी ईश्वर ही कर सकते हैं, आदमी नहीं।

ईशान (डाक्टर से) – आप अवतार क्यों नहीं मानते? अभी तो आपने कहा, जिन्होंने नाना रूपों की सृष्टि की है वे साकार हैं, जिन्होंने मन की सृष्टि की है वे निराकार हैं। अभी अभी तो आपने कहा, ईश्वर के लिए सब कुछ सम्भव है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – ईश्वर अवतार ले सकते हैं, यह बात इनके Science (विज्ञान) में नहीं जो है, फिर भला कैसे विश्वास हो? (सब हँसते हैं)

"एक कहानी सुनो। किसी ने आकर कहा, 'अरे, उस टोले में मैं देखकर आ रहा हूँ – अमुक का घर धँसकर बैठ गया है!' जिससे उसने यह बात कही, वह अंग्रेजी पढ़ा हुआ था। उसने कहा, 'ठहरो, जरा अखबार देख लूँ।' अखबार उलटकर उसने देखा, वहाँ कहीं कुछ न था। तब उसने कहा, 'चलो जी, तुम्हारी बात का हमें विश्वास नहीं। कहाँ, घर के धँसकर बैठ जाने *की बात अखबार में तो नहीं लिखी है? यह सब झूठ खबर है!'* "
(सब हँसे)

गिरीश (डाक्टर से) – आपको कृष्ण को तो अवतार मानना ही होगा। आपको मैं उन्हें आदमी नहीं मानने दूँगा। कहिये, Demon or God (शैतान हैं या ईश्वर)?

श्रीरामकृष्ण – सरल हुए बिना जल्दी किसी को ईश्वर पर विश्वास नहीं होता, विषय-बुद्धि से ईश्वर बहुत दूर हैं। विषय-बुद्धि के रहते अनेक प्रकार के संशय आकर उपस्थित हो जाते हैं। और अनेक तरह के अहंकार आ जाते हैं, पाण्डित्य का अहंकार, धन का अहंकार, आदि आदि। परन्तु ये (डाक्टर) सरल हैं।

गिरीश (डाक्टर से) – महाशय, आप क्या कहते हैं? टेढ़ों को क्या कभी ज्ञान हो सकता है?

डाक्टर – राम कहो, ऐसा भी कभी हो सकता है?

श्रीरामकृष्ण – केशव सेन कितना सरल था! एक दिन वहाँ (दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर) गया था। अतिथिशाला देखकर दिन के चार बजे उसने पूछा, 'क्यों जी, अतिथि और कंगालों को कब भोजन दिया जायगा?' विश्वास जितना बढ़ेगा, ज्ञान भी उतना ही बढ़ता जायगा। जो गौ चुन-चुनकर घास चरती है उसकी दूध की धार खूब नही फूटती, और जो गौ लता-पत्ता, घास-फूस, चोकर-भूसा आदि सब कुछ पेट में भर लेती है, उसकी धार नहीं टूटती – घर्र-घर्र खूब दूध देती है! (सब हँसते हैं)

"बालक की तरह जब तक विश्वास नहीं होता, तब तक ईश्वर नहीं मिलते। माता ने कह दिया है – वह तेरा दादा है, बस बालक को सोलहों आने विश्वास हो गया कि वह मेरा दादा है। माता ने कह दिया – उस कमरे में 'हौआ' रहता है, बालक सोलहों आने विश्वास करता है कि सचमुच उस कमरे में 'हौआ' रहता है। इस तरह बालक-जैसा विश्वास देखकर ही ईश्वर को दया उत्पन्न होती है। संसार-बुद्धि से वे नहीं मिलते।"

डाक्टर (भक्तों से) – जो कुछ सामने आया वही खाकर गौ का दूध बनना अच्छी बात नहीं। मेरे एक गौ थी, उसके आगे इसी तरह सब कुछ डाल दिया जाता था। अन्त में मैं सख्त बीमार हो गया। तब सोचा कि इसका कारण क्या है। बड़ी ढूँढ़-तलाश के बाद पता चला कि गौ कितनी ही ऐसी-वैसी चीजें खा गयी थी। तब बड़ी आफत हुई, मुझे लखनऊ जाना पड़ा। अन्त तक बारह हजार रुपयों पर पानी फिर गया! (सब लोग बड़े जोर से हँसे)

"किससे क्या हो जाता है, कुछ कहा नहीं जाता। पाकापाड़ा के बाबुओं के यहाँ सात साल की एक लड़की बीमार पड़ी। उसे कूकर-खाँसी आती थी। मैं देखने के लिए गया। बीमारी के कारण का पता मुझे किसी तरह नहीं मिल रहा था। अन्त में पता चला, वह गधी भीग गयी थी जिसका दूध वह लड़की पीती थी!" (सब हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण – कहते क्या हो? इमली के पेड़ के नीचे से मेरी गाड़ी निकल गयी

थी, इससे मेरा हाजमा बिगड गया था! (सब हँसे)

डाक्टर (हँसते हँसते) – जहाज के कप्तान को बड़े जोर से सिर-दर्द हो रहा था। तब डाक्टरो ने सलाह करके जहाज को दवा (ब्लिस्टर) लगा दी। (सब हँसते है)

साधु-संग तथा त्याग

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – साधु-संग की सदैव आवश्यकता है। रोग लगा ही हुआ है। साधुओ के उपदेश के अनुसार काम करना चाहिए। केवल सुनने से क्या होगा? दवा का सेवन करना होगा और भोजन का भी परहेज रखना होगा। उस समय पथ्य आवश्यक है।

डाक्टर – पथ्य से ही बीमारी अच्छी होती है।

श्रीरामकृष्ण – वैद्य तीन तरह के होते है, उत्तम, मध्यम और अधम। जो वैद्य नाड़ी देखकर, 'दवा खाते रहना' कहकर चला जाता है, वह अधम वैद्य है, – रोगी ने दवा का सेवन किया या नही, इसकी खबर वह नही रखता। और जो वैद्य रोगी को दवा खाने के लिए बहुत तरह से समझाता है, मीठी बातो द्वारा कहता है – 'अजी, दवा नही खाओगे तो भला अच्छे कैसे होगे? भलेमानस, मै खुद दवा पीसकर देता हूँ, लो खाओ' वह मध्यम वैद्य है। जो वैद्य रोगी को किसी तरह दवा न खाते देखकर छाती पर घुटना रखकर जबरदस्ती दवा खिलाता है, वह उत्तम वैद्य है।

डाक्टर – दवा ऐसी भी होती है जिससे छाती पर घुटना रखने की जरूरत नही होती, जैसे होमियोपैथिक।

श्रीरामकृष्ण – उत्तम वैद्य अगर छाती पर घुटना रख भी दे तो कोई भय की बात नही।

"वैद्य की तरह आचार्य भी तीन प्रकार के है। जो धर्मोपदेश देकर शिष्यो की फिर कोई खबर नही लेते, वे अधम आचार्य है। जो शिष्य के कल्याण के लिए बार बार उसे समझाते है, जिससे वह उपदेशो की धारणा कर सके, बहुत कुछ निवेदन और प्रार्थना करते है, प्यार दिखलाते है, वे मध्यम आचार्य है। और शिष्यो को किसी तरह अपनी बात न मानते हुए देखकर कोई कोई आचार्य जबरदस्ती उनसे काम लेते है, वे उत्तम श्रेणी के आचार्य है।

(डाक्टर से) "संन्यासी के लिए आवश्यक है कामिनी और कांचन का त्याग करना। संन्यासी को स्त्रियो का चित्र भी न देखना चाहिए। स्त्री कैसी है, जानते हो? – जैसा इमली का अचार। उसकी याद ही से लार टपक पड़ती है। उसे सामने नही लाना पड़ता।

"परन्तु यह आप लोगो के लिए नही – यह संन्यासियो के लिए है। आप लोग जहाँ तक हो सके, स्त्री के साथ अनासक्त होकर रहिये – कभी कभी निर्जन मे ईश्वर का ध्यान

किया कीजिये। वहाँ वे (स्त्रियाँ) न रहें। ईश्वर पर विश्वास और भक्ति होने पर, बहुत कुछ अनासक्त होकर रह सकोगे। दो-एक बच्चे हो जाने पर स्त्री और पुरुष मे भाई-बहन जैसा व्यवहार रहना चाहिए, और ईश्वर से प्रार्थना करते रहना चाहिए जिससे इन्द्रिय-सुख की ओर मन न जाय – लड़के-बच्चे और न हो।''

गिरीश (सहास्य, डाक्टर से) – आप तीन-चार घण्टे से यहाँ है रोगियो की चिकित्सा के लिए न जाइयेगा?

डाक्टर – कहाँ रही डाक्टरी और कहाँ रहे रोगी! ऐसे परमहंस से पाला पड़ा है कि मेरा तो सर्वस्व ही स्वाहा हुआ। (सब हँसे)

श्रीरामकृष्ण – देखो, कर्मनाशा नाम की एक नदी है। उस नदी मे डुबकी लगाना एक महाविपत्ति है। इससे कर्मो का नाश हो जाता है! फिर वह मनुष्य कोई काम नही कर सकता। (डाक्टर आदि सब हँसते है)

डाक्टर (मास्टर, गिरीश तथा दूसरे भक्तो से) – मित्रो, तुम मुझे अपने मे से ही एक समझो – यह बात मै डाक्टर की हैसियत से नही कह रहा हूँ, परन्तु यदि तुम मुझे अपना समझो तो मै तुम्हारा ही हूँ।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – एक है अहेतुकी भक्ति। यह अगर हो तो बहुत अच्छा है। यह अहैतुकी भक्ति प्रह्लाद मे थी। उस तरह का भक्त कहता है, 'हे ईश्वर, मै धन-मान, देह-सुख, यह कुछ नही चाहता। ऐसा करो कि तुम्हारे पादपद्मो मे मेरी शुद्धा भक्ति हो।'

डाक्टर – हॉ, कालीतले मे लोगो को प्रणाम करते हुए मैने देखा है; उनके भीतर कामना ही कामना रहती है – कही मेरी नौकरी लगा दो, कही मेरा रोग अच्छा कर दो, यही सब।

(श्रीरामकृष्ण से) ''आपको जो बीमारी है, इससे लोगो से बातचीत करना बन्द कर देना होगा। हॉ, जब मै जाऊँ, तब मेरे साथ बातचीत अवश्य कीजिये!'' (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण – यह बीमारी अच्छी कर दो, उनका नाम-गुण-कीर्तन नही कर पाता हूँ।

डाक्टर – ध्यान करने ही से उद्देश्य पूरा होता है।

श्रीरामकृष्ण – यह कैसी बात? मै एक ही ढर्रे पर क्यो चलूँ? मै कभी पूजा करता हूँ, कभी जप, कभी ध्यान, कभी उनका नाम लिया करता हूँ और कभी उनके गुण गा-गाकर नाचता हूँ।

डाक्टर – मै भी एक ढर्रे का आदमी नही हूँ।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारा लड़का, अमृत, अवतार नही मानता। परन्तु इसमे कोई दोष नही। ईश्वर को निराकार मानकर अगर उनमे विश्वास रहे तो भी वे मिलते है। और साकार

मानकर अगर उनमे विश्वास हो तो भी वे मिलते है। उनमे विश्वास का रहना और उनकी शरण मे जाना ये दोनो बाते आवश्यक है। आदमी तो अज्ञानी है, उससे भूल हो जाती है। एक सेर भर के लोटे मे क्या कभी चार सेर दूध समा सकता है? परन्तु चाहे जिस मार्ग मे रहो, व्याकुल होकर उन्हे पुकारना चाहिए। वे अन्तर्यामी है – अन्तर की पुकार वे सुनेंगे ही। व्याकुल होकर चाहे साकारवादी के मार्ग से जाओ, चाहे निराकारवादी के मार्ग से, उन्हे ही पाओगे।

"मिश्री की रोटी चाहे सीधी तरह से खाओ या टेढी करके, मीठी जरूर लगेगी। तुम्हारा लडका अमृत बड़ा अच्छा है।"

डाक्टर – वह आपका ही चेला है।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – कोई साला मेरा चेला-वेला नही है। मै खुद सब का चेला हूँ। सब ईश्वर के बच्चे है, ईश्वर के दास है – मै भी ईश्वर का बच्चा हूँ, ईश्वर का दास हूँ।

"चन्दा मामा सब का मामा है।" (सब हँसते है)

□□□

परिच्छेद १२४

श्रीरामकृष्ण तथा डा. सरकार

(१)

पूर्वकथा

श्रीरामकृष्ण चिकित्सा के लिए श्यामपुकुरवाले मकान में भक्तों के साथ रहते हैं। आज शरद पूर्णिमा है, शुक्रवार, २३ अक्टूबर १८८५। दिन के दस बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ बातचीत कर रहे हैं। मास्टर उनके पैरों में मोजा पहना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – मफलर को काटकर पैरों में न पहन लिया जाय? वह खूब गरम है।

मास्टर हँस रहे हैं।

कल बृहस्पतिवार की रात को डाक्टर सरकार के साथ बहुतसी बातें हुई थीं। उनका वर्णन करते हुए श्रीरामकृष्ण हँसकर मास्टर से कह रहे हैं – 'कल कैसा मैंने तूँऊँ-तूँऊँ कहा!'

कल श्रीरामकृष्ण ने कहा था, "त्रिताप की ज्वाला में जीव झुलस रहे हैं, फिर भी कहते हैं – 'हम बड़े मजे में हैं।' हाथ मे काँटा चुभ गया है, धर-धर खून बह रहा है, फिर भी कहते हैं, 'हमारे हाथ में कहीं कुछ नहीं हुआ।' ज्ञानाग्नि में इस काँटे को जलाना होगा।"

इन बातों को याद कर छोटे नरेन्द्र कह रहे हैं – "कल के टेढ़े काँटेवाले की बात बड़ी अच्छी थी। ज्ञानाग्नि में जला देना।"

श्रीरामकृष्ण – उन सब अवस्थाओं को मैं खुद भोग चुका हूँ।

"कुटीर के पीछे से जाते हुए जान पड़ा कि देह में मानो होमाग्नि जल उठी!

"पद्मलोचन ने कहा था, 'सभा करके मैं तुम्हारी अवस्था का हाल लोगों से कहूँगा।' परन्तु इसके बाद उसकी मृत्यु हो गयी।"

ग्यारह बजे के लगभग श्रीरामकृष्ण का संवाद लेकर डाक्टर सरकार के यहाँ मणि गये। हाल सुनकर डाक्टर उन्हीं के सम्बन्ध में बातचीत करने लगे और उनका हाल सुनने के लिए उत्सुकता प्रकट करने लगे।

डाक्टर (सहास्य) – मैने कल कैसा कहा, 'तूँऊँ-तूँऊँ कहने के लिए धुनिये के हाथ मे जाना पड़ता है!

मणि – जी हाँ, उस तरह के गुरु के हाथ मे बिना पड़े अहंकार दूर नही होता।

"कल भक्तिवाली बात कैसी रही। भक्ति स्त्री है, वह अन्त:पुर तक जा सकती है।"

डाक्टर – हाँ, वह बड़ी अच्छी बात है। परन्तु इसलिए कही ज्ञान थोड़े ही छोड़ दिया जा सकता है।

मणि – श्रीरामकृष्णदेव यह कहते भी तो नही है। वे ज्ञान और भक्ति दोनो लेते है, – साकार और निराकार। वे कहते है, 'भक्ति की शीतलता से जल का कुछ अंश बर्फ बना, फिर ज्ञानसूर्य के उगने पर वह बर्फ गल गया, अर्थात् भक्तियोग से साकार और ज्ञानयोग से निराकार।'

"और आपने देखा है, ईश्वर को वे इतना समीप देखते है कि उनसे बातचीत भी करते है। छोटे बच्चे की तरह कहते है - 'माँ, दर्द बहुत होता है।

"और उनका Observation (दर्शन) भी कितना अद्भुत है। म्यूजियम मे उन्होने लकड़ी तथा जानवरो को देखा था जो फॉसिल (पत्थर) हो गये है। बस वही उन्हे साधु-संग की उपमा मिल गयी। जिस तरह पानी और कीच के पास रहते हुए लकड़ी आदि पत्थर हो गये है, उसी तरह साधु के पास रहते हुए आदमी साधु बन जाता है।"

डाक्टर – ईशानबाबू कल अवतार-अवतार कर रहे थे। अवतार कौनसी बला है – आदमी को ईश्वर कहना?

मणि – उन लोगो का जैसा विश्वास हो, इस पर तर्कवितर्क क्यों?

डाक्टर – हाँ, क्या जरूरत?

मणि – और उस बात से कैसा हँसाया उन्होने! – एक आदमी ने देखा था कि मकान धँस गया है, परन्तु अखबार मे वह बात लिखी नही थी, अतएव उस पर विश्वास कैसे किया जाता!

डाक्टर चुप है, क्योकि श्रीरामकृष्ण ने कहा था, 'तुम्हारे Science (विज्ञान) मे अवतार की बात नही है, अतएव तुम्हारी दृष्टि से अवतार नही हो सकता।'

दोपहर का समय है। डाक्टर मणि को साथ लेकर गाड़ी पर बैठे। दूसरे रोगियो को देखकर अन्त मे श्रीरामकृष्ण को देखने जायेगे।

डाक्टर उस दिन गिरीश का निमन्त्रण पाकर 'बुद्धलीला' अभिनय देखने गये थे। वे गाड़ी मे बैठे हुए मणि से कह रहे है, 'बुद्ध को दया का अवतार कहना अच्छा था; – विष्णु का अवतार क्यो कहा?'

डाक्टर ने मणि को हेदुए के चौराहे पर उतार दिया।

(२)

श्रीरामकृष्ण की परमहंस अवस्था

दिन के तीन बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण के पास दो-एक भक्त बैठे हुए हैं। बालक की तरह अधीर होकर श्रीरामकृष्ण बार बार पूछ रहे हैं, 'डाक्टर कब आयेगा? क्या बजा है?' आज सन्ध्या के बाद डाक्टर आनेवाले हैं। एकाएक श्रीरामकृष्ण की बालक जैसी अवस्था हो गयी, – तकिया गोद मे लेकर वात्सल्य-रस से भरकर बच्चे को जैसे दूध पिला रहे हों। भावावेश मे हैं, बालक की तरह हँस रहे है, और एक खास ढंग से धोती पहन रहे है।

मणि आदि आश्चर्य में आकर देख रहे हैं।

कुछ देर बाद भाव का उपशम हुआ। श्रीरामकृष्ण के भोजन का समय आ गया। उन्होंने थोड़ी सूजी की खीर खायी।

मणि को एकान्त में बहुत ही गुप्त बातें बतला रहे है।

श्रीरामकृष्ण (मणि से, एकान्त मे) – अब तक भावावस्था में मैं क्या देख रहा था, जानते हो? – ।सऊड़ के रास्ते में तीन-चार कोस का एक मैदान है, वहाँ मैं अकेला हूँ। बड़ के नीचे मैंने जो १५-१६ साल के लड़के की तरह एक परमहंस देखा था, फिर ठीक उसी तरह देखा। चारों ओर आनन्द का कुहरा-सा छाया है – उसी के भीतर से १३-१४ साल का एक लड़का निकला, केवल उसका मुँह दीख पड़ता था। पूर्ण की तरह का था। हम दोनों ही दिगम्बर! – फिर आनन्दपूर्वक मैदान में दोनों ही दौड़ने और खेलने लगे। दौड़ने से पूर्ण को प्यास लगी। एक पात्र में उसने पानी पिया, पानी पीकर मुझे देने के लिए आया। मैंने कहा, 'भाई, तेरा जूठा पानी तो मैं न पी सकूँगा।' तब वह हँसते हुए गिलास धोकर मेरे लिए पानी ले आया।

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हैं। कुछ देर बाद प्राकृत अवस्था में आकर मणि के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अवस्था फिर बदल रही है। अब मैं प्रसाद नहीं ले सकता। सत्य और मिथ्या एक हुए जा रहे हैं! – फिर क्या देखा, जानते हो? – ईश्वरी रूप! भगवती मूर्ति! – पेट के भीतर बच्चा है – उसे निकालकर फिर निगल रही हैं! – भीतर बच्चे का जितना अंश जा रहा है, उतना बिलकूल शून्य हुआ जा रहा है। मुझे दिखला रही थीं कि सब शून्य है।

"मानो कह रही हैं, देख, तू भानुमती का खेल देख!"

मणि श्रीरामकृष्ण की बात सोच रहे हैं, 'बाजीगर ही सत्य है और सब मिथ्या है।'

श्रीरामकृष्ण – उस समय पूर्ण पर मैंने आकर्षण का प्रयोग किया, परन्तु क्यों कुछ न हुआ? उससे विश्वास घटा जा रहा है।

मणि – ये तो सब सिद्धियाँ है।

श्रीरामकृष्ण – निरी सिद्धि!

मणि – उस दिन अधर सेन के यहाँ से गाड़ी पर हम लोग आपके साथ जब दक्षिणेश्वर जा रहे थे, तब बोतल फूट गयी थी। एक ने कहा, 'आप बतलाइये, इससे क्या हानि होगी?' आपने कहा, 'मुझे क्या गरज जो यह सब बतलाऊँ? – यह सब तो सिद्धि का काम है।'

श्रीरामकृष्ण – हाँ, लोग बीमार बच्चो को जमीन पर लिटा देते है और फिर कुछ लोग भगवान का नाम लेकर मन्त्र जपने लगते है जिससे वह अच्छा हो जाय। इसी प्रकार लोग अन्य बीमारियाँ भी मन्तर-जन्तर से अच्छी कर देते है। ये सब विभूतियाँ है। जिनका स्थान बहुत ही निम्न है वे ही लोग रोग अच्छा करने के लिए ईश्वर को पुकारते है।

(३)

श्रीमुखकथित चरितामृत

शाम हो गयी। श्रीरामकृष्ण चारपाई पर बैठे हुए जगन्माता की चिन्ता करते हुए उनका नाम ले रहे है। कई भक्त चुपचाप उनके पास बैठे हुए है।

कुछ देर बाद डाक्टर सरकार आये। कमरे मे लाटू, शशि, शरद, छोटे नरेन्द्र, पल्टू, भूपति, गिरीश आदि बहुतसे भक्त बैठे हुए है। गिरीश के साथ थिएटर के श्रीयुत रामतारण भी आये है – ये गाना गायेगे।

डाक्टर (श्रीरामकृष्ण से) – कल रात तीन बजे तुम्हारे लिए मुझे बड़ी चिन्ता हुई थी। पानी बरसने लगा, तब मैने सोचा, 'परमात्मा जाने, तुम्हारे कमरे की दरवाजे-खिड़कियाँ खुली है या बन्द कर दी गयी है।'

डाक्टर का स्नेह देखकर श्रीरामकृष्ण प्रसन्न हुए। कहा – "कहते क्या हो! जब तक देह है, तब तक उसके लिए प्रयत्न करना पड़ता है।

"परन्तु देख रहा हूँ, यह एक अलग बात है। कामिनी और कांचन से प्यार अगर बिलकुल दूर हो जाय, तो ठीक ठीक समझ मे आ जाता है कि देह अलग है और आत्मा अलग। नारियल का सब पानी जब सूख जाता है तब खोपड़ा अलग और गोला अलग हो जाता है। तब नारियल को हिलाने से ही यह समझ मे आ जाता है कि भीतर गोला खोपड़े से छूटकर खड़खड़ा रहा है, – जैसे म्यान और तलवार, म्यान अलग है और तलवार अलग।

"इसीलिए देह की बीमारी के लिए उनसे अधिक कुछ कहा भी नही जाता।"

गिरीश (भक्तो के प्रति) – पण्डित शशधर ने इनसे कहा था, 'आप समाधि की अवस्था मे शरीर की ओर मन को ले आया करे तो बीमारी अच्छी हो जाय।' और इन्हे

भाव में ऐसा दिखा कि शरीर केवल हाड़-माँस का एक ढेर है।

श्रीरामकृष्ण – बहुत दिन हुए, मुझे उस समय सख्त बीमारी थी। कालीमन्दिर में मैं बैठा हुआ था। माता के पास प्रार्थना करने की इच्छा हुई। पर ठीक ठीक खुद न कह सका। कहा, 'माँ, हृदय मुझसे कहता है कि मैं तुम्हारे पास अपनी बीमारी की बात कहूँ।' पर और अधिक मैं न कह सका। कहते ही कहते सोसायटी के अजायबघर (Asiatic Society's Museum) की याद आ गयी। वहाँ का तारों से बँधा हुआ मनुष्य का अस्थिपंजर आँखों के सामने आ गया। झट मैंने कहा, 'माँ, मैं केवल यही चाहता हूँ कि तुम्हारा नाम-गुण गाता रहूँ। इतने के लिए अस्थिपंजर को तारों से कसे भर रखना, उस अजायबघर के अस्थिपंजर की तरह।'

"सिद्धि की प्रार्थना मुझसे होती ही नहीं। पहले-पहल हृदय ने कहा था – मैं हृदय के 'अण्डर' (आधीन) था न – 'माँ से कुछ विभूति माँगो।' मैं कालीमन्दिर में प्रार्थना करने के लिए गया। जाकर देखा एक अधेड़ विधवा, कोई ३०-३५ वर्ष की होगी, तमाम मल से सनी हुई है। तब मुझे यह स्पष्ट हुआ कि सिद्धियाँ इस मल के सदृश ही हैं। तब तो हृदय पर मुझे बड़ा क्रोध आया, – क्यों उसने मुझसे कहा कि मैं सिद्धियों के लिए प्रार्थना करूँ?"

रामतारण का गाना हो रहा है। गिरीश घोष के 'बुद्धदेव' नाटक का एक गीत वे गा रहे हैं।

(भावार्थ) "मेरी यह वीणा मुझे बड़ी प्रिय है। उसके तार बड़े यत्न से गूँथे हुए हैं। उस वीणा को जो यत्नपूर्वक रखना जानता है वही उसे बजाता है, और तब उससे अनवरत सुधा-धारा बह चलती है। ताल-मान के साथ उसके तारों को कसने पर माधुरी शत धाराओं से होकर प्रवाहित होने लगती है। तारों के ढीले रहने पर वह नहीं बजती, और अधिक खींचने से उसके कोमल तार टूट जाते हैं।"

डाक्टर (गिरीश से) – क्या यह सब गान मौलिक है?

गिरीश – नहीं, ये एड्विन आर्नल्ड के भाव हैं।

रामतारण गा रहे हैं, 'बुद्धदेव' नाटक का एक गीत :

"जुड़ाना चाहता हूँ, परन्तु कहाँ जुड़ाऊँ? न जाने कहाँ से आकर कहाँ बहा जा रहा हूँ! बार बार आता हूँ, न जाने कितना हँसता और कितना रोता हूँ! सदा मुझे यही सोच लगा रहता है कि मैं कहाँ जा रहा हूँ। ... ऐ जागनेवाले, मुझे भी जगा दो। हाय! कब तक और यह स्वप्न चलता रहेगा? क्या तुम सचमुच जाग रहे हो, यदि नहीं तो अब अधिक मत सोओ? ऐ सोनेवाले! नींद से उठो, और कहीं फिर मत सो जाना। यह घोर निबिड़ अन्धकार बड़ा दारुण है, बड़ा कष्टदायी है। इस अन्धकार का नाश करो, हे प्रकाश! तुम्हारे बिना और कोई उपाय ही नहीं है – तुम्हारे श्रीचरणों में मैं शरण चाहता हूँ!"

यह गीत सुनते ही सुनते श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है।

गाना – "सन् सन् सन् चल री आँधी।"

गाने के समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "यह क्या किया? खीर खिलाकर फिर नीम की तरकारी?

"इन्होंने ज्योंही गाया 'करो तमोनाश' त्योंही मैंने देखा सूर्य! – उदय होने के साथ ही चारों ओर का अन्धकार दूर हो गया। और उसी के चरणो में सब लोग शरणागत होकर गिर रहे है!"

रामतारण फिर गा रहे है –

गाना – दीनतारिणी, दुरितवारिणी, सत्त्वरजस्तम त्रिगुणधारिणी, सृजनपालन-निधनकारिणी, सगुणा निर्गुणा सर्वस्वरूपिणी ...

गाना – मेरा धर्म और कर्म सब तो चला गया, परन्तु मेरी श्यामापूजा शायद पूरी नही हुई! ...

यह गीत सुनकर श्रीरामकृष्ण फिर भावाविष्ट हो गये।

गवैये ने फिर गाया, "ओ माँ, तेरे चरणो में लाल जवा फूल किसने चढ़ाया?..."

(४)

संन्यासी तथा गृहस्थ के कर्तव्य

गाना समाप्त हो गया। भक्तों में बहुतो को भावावेश हो गया है। सब चुपचाप बैठे हैं। छोटे नरेन्द्र ध्यानमग्न हो काठ के पुतले की तरह बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण – (छोटे नरेन्द्र को दिखाकर, डाक्टर से) – यह बहुत ही शुद्ध हैं। इसमें विषय-बुद्धि छू भी नहीं गयी।

डाक्टर नरेन्द्र को देख रहे हैं। अब भी उनका ध्यान नहीं छूटा।

मनोमोहन (डाक्टर से हँसकर) – आपके बच्चे की बात पर ये (श्रीरामकृष्ण) कहते हैं, 'बच्चा अगर मिल जाय तो मुझे उसके बाप की चाह नहीं है।'

डाक्टर – यही तो! इसीलिए तो कहता हूँ, तुम लोग बच्चे को लेकर भूल जाते हो! (अर्थात् मनुष्य बच्चे को – अवतार को – लेकर, पिता को - ईश्वर को – भूल जाता है।)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – मैं यह नहीं कहता कि मुझे बाप की कुछ भी चाह नही हैं।

डाक्टर – यह मैं समझ गया, इस तरह दो-एक बातें बिना कहे काम कैसे चल सकेगा?

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारा लड़का बड़ा सरल है। शम्भु ने मुँह लाल करके कहा था, 'सरल भाव से उन्हें पुकारने पर वे अवश्य ही सुनेंगे।' मैं लड़कों को इतना प्यार क्यों करता हूँ, जानते हो? वे सब निखालिस दूध हैं – थोड़ासा गरम कर लेने से ही श्रीठाकुरजी की सेवा में लगाया जा सकता है।

"जिस दूध में पानी मिला रहता है, उसे बड़ी देर तक गरम करना पड़ता है, बहुत लकड़ी खर्च होती है।

"बच्चे सब मानो नयी हण्डियाँ हैं, पात्र अच्छा है, इसलिए निश्चिन्त होकर दूध रखा जा सकता है। उन्हें ज्ञानोपदेश देने पर बहुत शीघ्र चैतन्य होता है। विषयी आदमियों को शीघ्र होश नहीं होता। जिस हण्डी में दही जमाया जा चुका है, उसमें दूध रखते भय होता है कि कहीं दूध नष्ट न हो जाय।

"तुम्हारे लड़के में अभी विषय-बुद्धि – कामिनी-कांचन का प्रवेश नही हुआ।"

डाक्टर – बाप की कमाई उड़ा रहे हैं न! अपने को करना पड़ता तब मैं देखता कि ये अपने को सांसारिकता से कैसे अलग रख सकते थे।

श्रीरामकृष्ण – यह ठीक है। परन्तु बात यह है कि विषय-बुद्धि से वे बहुत दूर हैं, नहीं तो वे मुट्ठी में ही हैं। (सरकार और डाक्टर दोकौड़ी से) कामिनी और कांचन का त्याग आप लोगों के लिए नहीं हैं। आप लोग मन ही मन त्याग करेंगे। गोस्वामियों से इसलिए मैंने कहा, 'तुम लोग त्याग की बात क्यों कर रहे हो? – त्याग करने से तुम्हारा काम नहीं चल सकता – श्यामसुन्दर की सेवा जो है।'

"त्याग संन्यासी के लिए है। उसके लिए स्त्रियों का चित्र भी देखना निषिद्ध है। स्त्री उसके लिए विष की तरह है। कम से कम दस हाथ की दूरी पर रहना चाहिए। अगर बिलकुल न निर्वाह हो तो एक हाथ का अन्तर स्त्रियों से हमेशा रखना चाहिए। स्त्री चाहे लाख भक्त हो, परन्तु उससे अधिक बातचीत नहीं करनी चाहिए।

"यहाँ तक कि संन्यासी को ऐसी जगह रहना चाहिए जहाँ स्त्रियाँ बिलकुल नहीं या बहुत कम जाती हों।

"रुपया भी संन्यासी के लिए विषवत् है। रुपये के पास रहने से ही चिन्ताएँ, अहंकार, देह-सुख की चेष्टा, क्रोध आदि सब आ जाते हैं। रजोगुण की वृद्धि होती है। और रजोगुण के रहने से ही तमोगुण होता है। इसलिए संन्यासी कांचन का स्पर्श नहीं करते। कामिनी-कांचन ईश्वर को भुला देते हैं।

"तुम्हें यह समझना चाहिए कि रुपये से दाल-रोटी मिलती है, पहनने के लिए वस्त्र मिलता है, रहने की जगह मिलती है, श्रीठाकुरजी की सेवा होती है और साधुओं तथा भक्तों की सेवा होती है।

"धन-संचय की चेष्टा मिथ्या है। मधुमक्खी बड़े कष्ट से छत्ता तैयार करती है, और कोई दूसरा आकर उसे तोड़ ले जाता है।"

डाक्टर – लोग रुपये इकट्ठा करते हैं। किसके लिए? – एक बदमाश बच्चे के लिए।

श्रीरामकृष्ण – लड़का ही आवारा निकला या बीबी किसी दूसरे के साथ फँस गयी – शायद तुम्हारी ही घड़ी और चेन अपने यार को लगाने के लिए दे दे!

"परन्तु स्त्री का बिलकुल त्याग करना तुम्हारे लिए नहीं है। अपनी पत्नी से उपभोग करने में दोष नहीं है; परन्तु लड़के-बच्चे हो जाने पर भाई-बहन की तरह रहना चाहिए।

"कामिनी और कांचन में आसक्ति के रहने पर विद्या का अहंकार, धन का अहंकार, उच्च पद का अहंकार – यह सब होता है।"

(५)

अहंकार तथा विद्या का 'मैं'

श्रीरामकृष्ण – अहंकार के बिना गये ज्ञानलाभ नहीं होता। ऊँचे टीले पर पानी नहीं रुकता। नीची जमीन में ही चारों ओर का पानी सिमटकर भर जाता है।

डाक्टर – परन्तु नीची जमीन में जो चारों ओर का पानी आता है, उसके भीतर अच्छा पानी भी रहता है और दूषित भी। पहाड़ के ऊपर भी नीची जमीन है। नैनीताल, मानसरोवर ऐसे स्थान हैं जहाँ आकाश का ही शुद्ध पानी रहता है।

श्रीरामकृष्ण – आकाश का ही शुद्ध पानी – यह बहुत अच्छा है!

डाक्टर – और ऊँची जगह का पानी चारो ओर काम में भी लाया जा सकता है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – एक सिद्ध ने मन्त्र पाया था। उसने पहाड़ पर खड़े होकर चिल्लाते हुए कह दिया – 'तुम लोग इस मन्त्र को जपकर ईश्वर-लाभ कर सकोगे।'

डाक्टर – हाँ।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु एक बात है, जब ईश्वर के लिए प्राण विकल होते हैं, तब यह विचार नहीं रहता कि यह पानी अच्छा है और यह बुरा। तब उन्हें जानने के लिए कभी भले आदमी के पास जाया जाता है, कभी बुरे आदमी के पास। उनकी कृपा होने पर गँदले पानी से कोई नुकसान नहीं होता। जब वे ज्ञान देते हैं, तब यह सुझा देते हैं कि कौन अच्छा है और कौन बुरा।

"पहाड़ के ऊपर नीची जमीन रह सकती है, परन्तु वैसी जमीन बदजात 'मैं' -रूपी पहाड़ पर नहीं रहती। विद्या का 'मैं', भक्त का 'मैं' यदि हो, तभी आकाश का शुद्ध पानी आकर जमता है।

"ऊँची जगह का पानी चारों ओर काम में लगाया जा सकता है, यह ठीक है। परन्तु यह काम विद्या के 'मैं'-रूपी पहाड़ से ही सम्भव है।

"उनके आदेश के बिना लोक-शिक्षा नहीं होती। शंकराचार्य ने ज्ञान के बाद विद्या का 'मैं' रखा था – लोक-शिक्षा के लिए। उन्हें प्राप्त किये बिना ही लेक्चर! इससे आदमियों का क्या उपकार होगा?

"मैं नन्दनबाग के ब्राह्मसमाज में गया था। उपासना आदि के बाद उनके प्रचारक ने एक वेदी पर बैठकर लेक्चर दिया। उन्होंने वह लेक्चर घर पर तैयार किया था। लेक्चर वे

पढ़ते जाते थे और चारों ओर देखते भी जाते थे। ध्यान करते समय वे कभीकभी आँखें खोलकर लोगों को देखते जाते थे!

"जिसने ईश्वर के दर्शन नहीं किये, उसका उपदेश असर नही करता। एक बात अगर ठीक हुई, तो दूसरी बेसिर-पैर की निकल जाती है।

"सामाध्यायी ने लेक्चर दिया। कहा, 'ईश्वर वाणी और मन से परे है। उनमें कोई रस नहीं है – तुम लोग अपने प्रेम और भक्तिरस से उनकी अर्चना किया करो।' देखो, जो रसस्वरूप हैं, आनन्द-स्वरूप हैं, उनके लिए ऐसी बातें कही जा रही थीं। इस तरह के लेक्चर से क्या होगा? इसमें क्या कभी लोक-शिक्षा होती है? एक आदमी ने कहा था 'मेरे मामा के यहाँ गोशाले भर घोड़े हैं।' गोशाले में घोड़ा! (सब हँसते है) इससे समझना चाहिए कि घोड़ा-वोड़ा कहीं कुछ भी नहीं है!"

डाक्टर (सहास्य) – गौएँ भी न होंगी! (सब हँसते है)

जिन भक्तों को भावावेश हो गया था, उनकी प्राकृत अवस्था हो गयी है। भक्तों को देखकर डाक्टर आनन्द कर रहे हैं।

डाक्टर मास्टर से भक्तों का परिचय पूछ रहे हैं। पल्टू, छोटे नरेन्द्र, भूपति, शरद, शशी आदि लड़कों का, एक एक करके, मास्टर ने परिचय दिया।

श्रीयुत शशी के सम्बन्ध में मास्टर ने कहा, 'ये बी. ए. की परीक्षा देंगे।' डाक्टर कुछ अन्यमनस्क हो रहे थे।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – देखो जी, ये क्या कह रहे हैं। डाक्टर ने शशी का परिचय सुना।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर को बताकर, डाक्टर से) – ये स्कूल के लड़कों को उपदेश देते हैं।

डाक्टर – यह मैंने सुना है।

श्रीरामकृष्ण – कितने आश्चर्य की बात है ! मैं मूर्ख हूँ, फिर भी पढ़े-लिखे लोग यहाँ आते हैं। यह कितने आश्चर्य की बात है ! इससे तो मानना पड़ता है कि यह ईश्वर की लीला है।

आज शरद पूर्णिमा है। रात के नौ बजे का समय होगा। डाक्टर छ: बजे से बैठे हुए ये सब बातें सुन रहे हैं।

गिरीश – (डाक्टर से) – अच्छा महाशय, आपको ऐसा कभी होता है कि यहाँ आने की इच्छा न होते हुए भी मानो कोई शक्ति खींचकर यहाँ ले आती हो ? मुझे तो ऐसा होता है और इसीलिए आपसे भी पूछ रहा हूँ।

डाक्टर – पता नहीं, परन्तु हृदय की बात हृदय ही जानता है। (श्रीरामकृष्ण से) और बात यह है कि यह सब कहने में लाभ ही क्या है?

□□□

परिच्छेद १२५

श्रीरामकृष्ण तथा डाक्टर सरकार

(१)

डा. सरकार तथा धर्मचर्चा

नरेन्द्र, महिमाचरण, मास्टर, डाक्टर सरकार आदि भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुर के दुमँजले पर कमरे में बैठे हुए है। दिन के एक बजे का समय होगा। २४ अक्टूबर १८८५, कार्तिक नवमी।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारी यह (होमियोपैथिक) चिकित्सा अच्छी है।

डाक्टर – इसमे रोगी की अवस्था पुस्तक में लिखे चिह्नों के साथ मिलायी जाती है। जैसे अंग्रेजी बाजा बजाने की लिपि, – वह पढ़ी जाती है और साथ ही साथ गायी भी।

"गिरीश घोष कहाँ है? – परन्तु रहने दो। कल का जगा हुआ होगा।"

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, भाव की अवस्था में भंग जैसा नशा चढ़ता है, यह क्या है?

डाक्टर (मास्टर से) – स्नायुओं के केन्द्र है, उनकी क्रिया बन्द हो जाती है, इसीलिए सब जड़ हो जाता है – इधर पैर लड़खड़ाते रहते हैं। सब शक्ति मस्तिष्क की ओर जाती है। इसी स्नायविक क्रिया से जीवन है। गरदन के पास मेडूला आब्लांगेटा (Medulla Oblongata) है, इसकी क्षति होने पर जीवन का दीपक बुझा हुआ जानो।

श्रीयुत महिमाचरण चक्रवर्ती सुषुम्ना नाड़ी के भीतर कुण्डलिनी शक्ति की बात कह रहे हैं – 'मेरुदण्ड के भीतर सूक्ष्म भाव से सुषुम्ना नाम की एक नाड़ी है – इसे कोई देख नहीं सकता। यह महादेवजी का वाक्य है।'

डाक्टर – शिव ने मनुष्य की परीक्षा उसकी पूर्ण अवस्था में की। परन्तु युरोपियनों ने तो मनुष्य की जाँच गर्भावस्था से लेकर पूर्ण अवस्था तक सभी में की है। इसका तुलनात्मक इतिहास समझ लेना अच्छा है। भीलों का इतिहास पढ़कर पता चला है कि काली एक भीलनी थी, वह खूब लड़ी थी! (सब हँसते हैं)

"तुम लोग हँसो मत। तुलनात्मक जीवशरीर विद्या (Anatomy) से कितना उपकार हुआ है, सुनो। पहले पाचनशक्ति पैदा करनेवाले रस और पित्त का भेद समझ में नहीं आ रहा था। फिर क्लाड बरनार्ड ने खरगोश की यकृत आदि की परीक्षा करके देखा कि पित्त

और उस रस की क्रिया में अन्तर है।

"इससे सिद्ध होता है कि छोटे छोटे प्राणियों की ओर भी हमें ध्यान देना चाहिए। केवल मनुष्य को देखने से काम न चलेगा।

"इसी तरह तुलनात्मक धर्म से भी बड़ा उपकार होता है।

"ये (श्रीरामकृष्णदेव) जो कुछ कहते हैं, हृदय पर उसका असर अधिक क्यों होता है! सब धर्म इनके देखे हुए हैं। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, वैष्णव, शाक्त सब धर्मों को इन्होंने स्वयं साधना करके देखा है। मधुमक्खी जब अनेक फूलों से मधु-संचय करती है तभी उसके छत्ते में अच्छा मधु तैयार होता है।"

मास्टर (डाक्टर से) – इन्होंने (महिमाचरण ने) विज्ञान का अध्ययन खूब किया है।

डाक्टर (हँसकर) – कौनसा विज्ञान? क्या मैक्समूलर का साइन्स ऑफ रिलिजन (धर्मविज्ञान)?

महिमा (श्रीरामकृष्ण से) – आपकी बीमारी में डाक्टर क्या करेंगे? जब मैंने सुना, आप बीमार हैं, तब सोचा, डाक्टरों का आप अहंकार बढ़ा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – ये बड़े अच्छे डाक्टर हैं, और बहुत बड़े विद्वान् भी हैं।

महिमा – जी हाँ, वे जहाज हैं और हम सब डोंगे हैं।

विनयपूर्वक डाक्टर हाथ जोड़ रहे हैं।

महिमा – परंन्तु वहाँ (श्रीरामकृष्ण के पास) सब बराबर हैं।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से गाने के लिए कह रहे हैं। नरेन्द्र गा रहे हैं –

गाना – तुम्हें ही मैंने अपने जीवन का ध्रुवतारा बनाया है ...।

गाना – अहंकार में मत्त हो रहा हूँ, अपार वासनाएँ उठ रही हैं ...।

गाना – तुम्हारी रचना अपार है, चमत्कारों से भरी हुई है ...।

गाना – महान् सिंहासन पर बैठे हुए हे विश्वपिता, तुम अपने ही रचित छन्दों में विश्व के महान् गीत सुन रहे हो। मर्त्य की मृत्तिका बनकर, इस क्षुद्र कण्ठ को लेकर, तुम्हारे द्वार पर मैं भी आया हुआ हूँ ...।

गाना – हे राजराजेश्वर, दर्शन दो! मैं तुम्हारी करुणा का भिक्षुक हूँ, मेरी ओर कृपाकटाक्ष करो। तुम्हारे श्रीचरणों में मैं अपने इन प्राणों का उत्सर्ग कर रहा हूँ, परन्तु ये भी संसार के अनलकुण्ड में झुलसे हुए हैं ...।

गाना – हरिरस-मदिरा पीकर, ऐ मेरे मन-मानस, मत्त हो जाओ। पृथ्वी पर लोटते हुए उनका नाम लो और रोओ ...।

श्रीरामकृष्ण – और वह गाना – "जो कुछ है सब तू ही है।"

डाक्टर – अहा!

गाना समाप्त हो गया। डाक्टर मुग्ध हो गये। कुछ देर बाद डाक्टर बड़े भक्तिभाव से हाथ जोड़कर श्रीरामकृष्ण से कह रहे है – तो आज आज्ञा दीजिये, कल फिर आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – अभी कुछ देर और ठहरो। गिरीश घोष के पास खबर भेजी गयी है। (महिमा की ओर संकेत करके) "ये विद्वान् है, और ईश्वर के कीर्तन में नाचते भी हैं। इनमें अहंकार छू नहीं गया। ये कोन्नगर चले गये थे, इसलिए कि हम लोग वहाँ चले गये थे। स्वाधीन हैं, धनवान हैं, किसी की नौकरी नहीं करते। (नरेन्द्र को दिखलाकर) यह कैसा है?"

डाक्टर – जी, बहुत अच्छे हैं।

श्रीरामकृष्ण – और ये –

डाक्टर – अहा!

महिमा – हिन्दुओं के दर्शन अगर न पढ़े गये तो मानो दर्शनों का पढ़ना ही अधूरा रह गया। सांख्य के चौबीस तत्त्वों को यूरोप न तो जानता है और न समझ ही सकता है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – तुम कौन से तीन मार्गो की बात कहते हो?

महिमा – सत्पथ – ज्ञानमार्ग। चित्पथ – योगमार्ग, कर्ममार्ग; इसमें चार आश्रमों की क्रिया, कर्तव्य आदि वर्णित हैं। तीसरा है आनन्दपथ – भक्ति और प्रेम का मार्ग। आपमें तीनों मार्ग हैं – आप तीनों मार्ग की खबर बतलाते हैं। (श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।)

महिमा – मैं और क्या कहूँ? वक्ता जनक और श्रोता शुकदेव!

डाक्टर बिदा हो गये।

नित्यगोपाल तथा नरेन्द्र। 'जपात् सिद्धि।'

सन्ध्या के बाद चन्द्रोदय हुआ है। आज शनिवार, शरद पूर्णिमा का दूसरा दिन है। श्रीरामकृष्ण खड़े हुए समाधिमग्न हैं। नित्यगोपाल भी उनके पास भक्तिभाव से खड़े हैं।

श्रीरामकृष्ण बैठे। नित्यगोपाल पैर दबा रहे हैं। कालीपद, देवेन्द्र आदि भक्त पास बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण (देवेन्द्र आदि से) – मेरे मन में यह भासित हो रहा है कि नित्यगोपाल की ये अवस्थाएँ अब चली जायेंगी। उसका सब मन सिमटकर मुझमें आ जायेगा – जो मेरे भीतर हैं, उनमें।

"नरेन्द्र को देखते हो न, उसका सब मन सिमटकर मुझपर आ रहा है।"

भक्तों में बहुतेरे बिदा हो रहे हैं। श्रीरामकृष्ण खड़े हुए एक भक्त को जप की बातें बतला रहे हैं – "जप करने का अर्थ है निर्जन में चुपचाप उनका नाम लेना। एकाग्र होकर उनका नामजप करते रहने से उनके रूप के भी दर्शन होते हैं और उनसे साक्षात्कार भी होता है। जंजीर से बँधी लकड़ी गंगा में जैसे डुबायी हुई हो और जंजीर का दूसरा छोर तट

पर बँधा हुआ हो। जंजीर की एक एक कड़ी पकड़कर कुछ दूर बढ़कर, फिर पानी में डुबकी मारकर, उसी प्रकार और आगे बढ़ते हुए लोग लकड़ी को अवश्य ही छू सकते हैं। इसी तरह जप करते हुए मग्न हो जाने पर धीरे-धीरे ईश्वर के दर्शन होते हैं।''

कालीपद (सहास्य, भक्तों से) – हमारे ये अच्छे ठाकुर हैं! – जप, ध्यान, तपस्या, कुछ करना ही नहीं पड़ता!

इसी समय श्रीरामकृष्ण ने एकाएक कहा – ''यहाँ (गले में) न जाने कैसा हो रहा है।''

श्रीरामकृष्ण के गले में दर्द हो रहा है। देवेन्द्र ने कहा, ''हम इस तरह की बातों में नही आनेवाले।'' देवेन्द्र का भाव यह है कि श्रीरामकृष्ण ने लोगों को धोखे में डालने के लिए रोग का आश्रय लिया है।

भक्तगण बिदा हो गये। रात में कुछ बालक-भक्त बारी बारी से जागकर श्रीरामकृष्ण की सेवा करेंगे। आज रात को मास्टर भी यहीं रहेंगे।

(२)

डाक्टर सरकार तथा मास्टर

आज रविवार है, कार्तिक, कृष्णद्वितीया, २५ अक्टूबर, १८८५। श्रीरामकृष्ण कलकत्ते के श्यामपुकुरवाले मकान में रहते हैं। गले में पीड़ा (Cancer) है, उसी की चिकित्सा हो रही है। आजकल डाक्टर सरकार देख रहे हैं।

डाक्टर को श्रीरामकृष्णदेव की अवस्था की खबर देने के लिए रोज मास्टर जाया करते है। आज सुबह साढे छ: बजे के समय प्रणाम करके मास्टर ने पूछा – ''आप कैसे हैं?'' श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – ''डाक्टर से कहना, रात के पिछले भाग में मुँह कुल्ला भर पानी से भर जाता है, खाँसी है। पूछना, नहाऊँ या नहीं।''

सात बजे के बाद मास्टर डाक्टर सरकार से मिले और कुल हाल उनसे कहा। डाक्टर के वृद्ध शिक्षक तथा दो-एक मित्र वहाँ उपस्थित थे। डाक्टर ने वृद्ध शिक्षक से कहा, 'महाशय, रात तीन बजे से मुझे परमहंस की चिन्ता है, नींद नहीं आयी, अब भी परमहंस की चिन्ता है।' (सब हँसते हैं)

डाक्टर के मित्र डाक्टर से कह रहे हैं, ''महाशय, मैंने सुना है, कोई कोई उन्हें अवतार कहते हैं। आप तो रोज देखते हैं, आपको क्या जान पड़ता है?'' डाक्टर ने कहा, ''मनुष्य की दृष्टि से उनकी मैं अत्यन्त भक्ति करता हूँ।''

मास्टर (डाक्टर के मित्र से) – डाक्टर महाशय बड़ी कृपा करके उनकी चिकित्सा कर रहे हैं।

डाक्टर – कृपा करके?

मास्टर – हम लोगों पर आप कृपा करते हैं, श्रीरामकृष्णदेव पर मैं नहीं कह रहा।

डाक्टर – नहीं जी, ऐसा भी नहीं, तुम लोग नही जानते। वास्तव में मेरा नुकसान हो रहा है, दो-तीनCall (बुलावा) रोज ही रह जाते हैं – जा नहीं पाता। उसके दूसरे दिन रोगी के यहाँ खुद जाता हूँ और फीस(Fees) नहीं लेना, – खुद जाकर फीस लूँ भी कैसे?

श्री मैहिमाचरण चक्रवर्ती की बात चली। शनिवार को जब डाक्टर परमहंसदेव को देखने के लिए गये थे, तब चक्रवर्ती महाशय उपस्थित थे। डाक्टर को देखकर उन्होंने श्रीरामकृष्ण से कहा था, 'महाराज, डाक्टर का अहंकार बढ़ाने के लिए आपने रोग की सृष्टि की है।'

मास्टर (डाक्टर से) – महिमा चक्रवर्ती आपके यहाँ पहले आया करते थे। आप घर में डाक्टरी विज्ञान पर लेक्चर देते थे, वे सुनने के लिए आया करते थे।

डाक्टर – ऐसी बात? परन्तु उस मनुष्य में तमोगुण भी कितना है! देखा था तुमने? – मैंने नमस्कार किया था जैसे वह तमोगुणी ईश्वर हो। और ईश्वर के भीतर तो तीनों गुण हैं। उसकी उस बात पर तुमने ध्यान दिया था? – 'आपने डाक्टरों का अहंकार बढ़ाने के लिए रोग का आश्रय लिया है।'

मास्टर – महिमा चक्रवर्ती को विश्वास है कि श्रीरामकृष्णदेव अगर खुद चाहें तो बीमारी अच्छी कर सकते हैं।

डाक्टर – अजी, ऐसा भी कभी होता है? – आप ही आप बीमारी अच्छी कर लेना? हम लोग डाक्टर हैं, हम लोग तो जानते हैं न, कि उस बीमारी के भीतर क्या क्या है।

"हम ही जब इस तरह की बीमारी अच्छी नहीं कर सकते – तब वे तो कुछ जानते भी नहीं, वे किस तरह अच्छी करेंगे? (मित्रों से) देखिये, रोग दु:साध्य है, परन्तु इतना अवश्य है कि ये लोग उनकी सेवा भी खूब कर रहे हैं।"

(३)

श्रीरामकृष्ण तथा मास्टर

डाक्टर से आने के लिए कहकर मास्टर लौटे। भोजन आदि करके दिन के तीन बजे वे श्रीरामकृष्ण से मिले और डाक्टर की कुल कथा कह सुनायी। कहा, 'डाक्टर ने आज बहुतसी बातें सुनायीं।'

श्रीरामकृष्ण – क्यों, क्या कहा?

मास्टर – महाराज, कल वे यहाँ सुन गये थे कि आपने यह रोग डाक्टर का अहंकार बढ़ाने के लिए स्वयं ही पैदा किया है।'

श्रीरामकृष्ण – किसने कहा था?

मास्टर – महिमा चक्रवर्ती ने।

श्रीरामकृष्ण – फिर?

मास्टर – वह महिमा चक्रवर्ती को तमोगुणी ईश्वर कहने लगा। अब डाक्टर ने मान लिया है कि ईश्वर में तत्त्व, रज, तम तीनों गुण हैं। (श्रीरामकृष्णदेव का हास्य) फिर मुझसे उन्होंने कहा, 'आज रात को तीन बजे मेरी नींद उचट गयी और तभी से श्रीरामकृष्णदेव का चिन्तन कर रहा हूँ।' जब मैं उनसे मिला था तब आठ बजे थे, और उन्होंने कहा, 'अभी भी श्रीरामकृष्ण का मैं चिन्तन कर रहा हूँ।'

श्रीरामकृष्ण – देखो, तुम जानते हो, वह अंग्रेजी पढ़ा-लिखा है, उससे यह नहीं कहा जा सकता कि तुम मेरी चिन्ता करो। परन्तु अच्छा है, वह आप ही कर रहा है।

मास्टर – फिर उन्होंने कहा, 'मैं उन्हें अवतार नहीं कहता, परन्तु मनुष्य समझकर उन पर मेरी सबसे अधिक भक्ति है।'

श्रीरामकृष्ण – कुछ और बात हुई है?

मास्टर – मैंने पूछा, 'आज बीमारी के लिए क्या बन्दोबस्त किया जाय?' डाक्टर ने कहा, 'बन्दोबस्त मेरा सर होगा! आज मुझे फिर जाना पड़ेगा और क्या!' (श्रीरामकृष्ण का हँसना)

"उन्होंने इतना और कहा, 'तुम लोग नहीं जानते, मेरे कितने रुपयों पर पानी फिर जाता है। रोज दो-तीन जगह जाना नहीं हो पाता।' "

(४)

विजय आदि भक्तों के संग में

कुछ देर बाद श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी श्रीरामकृष्णदेव के दर्शन करने के लिए आये। साथ कई ब्राह्म भक्त भी हैं। विजयकृष्ण बहुत दिनों तक ढाके में थे। इधर पश्चिम के बहुतसे तीर्थों में भ्रमण करके अभी थोड़े ही दिन हुए कलकत्ता आये हैं। आते ही उन्होंने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। बहुतसे लोग उपस्थित हैं, – नरेन्द्र, महिमाचरण चक्रवर्ती, नवगोपाल, भूपति, लाटू, मास्टर, छोटे नरेन्द्र आदि बहुतसे भक्त।

महिमा चक्रवर्ती (विजय से) – महाशय, आप तीर्थ कर आये, बहुतसे देश देखकर आये, अब कहिये, आपने क्या क्या देखा।

विजय – क्या कहूँ? मैं अनुभव कर रहा हूँ कि जहाँ अभी मैं बैठा हुआ हूँ, यहीं सब कुछ है। इधर-उधर भटकना व्यर्थ है। और जहाँ जहाँ मैं गया, कहीं इनका (श्रीरामकृष्ण का) एक आना, कहीं दो आने या चार आने अंश ही पाया, परन्तु पूरे सोलह आने तो केवल यहीं पा रहा हूँ।

महिमा – आप ठीक कहते है। फिर, ये ही चक्कर लगवाते हैं और ये ही बैठाते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – देख, विजय की कैसी अवस्था हो गयी है! लक्षण सब बदल गये हैं, मानो उबाला हुआ है। मैं परमहंस की गरदन और कपाल देखकर बतला सकता हूँ कि वह परमहंस है या नही।

महिमा – महाराज, क्या आपका भोजन घट गया है?

विजय – हाँ, शायद घट गया है। (श्रीरामकृष्ण से) आपकी पीड़ा का हाल पाकर देखने के लिए आया हूँ। और फिर ढाके में –

श्रीरामकृष्ण – क्या?

विजय ने कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ देर चुप हो रहे।

विजय – अगर अपने आप को वे (श्रीरामकृष्ण) खुद न पकड़वा दें तो पकड़ना मुश्किल है। यहीं सोलहों आना (प्रकाश) है।

श्रीरामकृष्ण – केदार ने कहा, 'दूसरी जगह खाने को नहीं मिलता, परन्तु यहाँ आते ही पेट भर जाता है।'

महिमा – पेट भरना ही नहीं – इतना मिलता है कि पेट में समाता नहीं – बाहर गिर जाता है!

विजय – (हाथ जोड़कर, श्रीरामकृष्ण से) – आप कौन हैं, यह मैं समझ गया, अब कहना न होगा।

श्रीरामकृष्ण – (भावस्थ) – अगर ऐसा है तो यही सही।

विजय ने कहा, 'मैं समझा।' यह कहकर श्रीरामकृष्ण के पैर पर गिर पड़े और उनके चरणों को अपनी छाती से लगा लिया।

श्रीरामकृष्ण ईश्वरावेश में बाह्यशून्य हो चित्रवत् बैठे हुए हैं।

इस प्रेमावेश को, इस अद्भुत दृश्य को देखकर, भक्तों में किसी की आँखों से आँसू बह रहे हैं और कोई स्तुति-पाठ कर रहे हैं। जिसका जैसा भाव है, वह उसी भाव से श्रीरामकृष्ण की ओर हेर रहा है। कोई उन्हें परम भक्त देखता है, कोई साधु, कोई देह धारण करके आये हुए साक्षात् ईश्वरावतार, जिसका जैसा भाव।

महिमाचरण गाने लगे। गाते हुए आँखों में पानी भर आया – 'देखो देखो प्रेममूर्ति।' और बीच-बीच में इस भाव से श्लोकों की आवृत्ति करने लगे जैसे ब्रह्म का साक्षात् दर्शन कर रहे हों – 'तुरीयं सच्चिदानन्द द्वैताद्वैतविवर्जितम्।'

नवगोपाल रोने लगे। एक दूसरे भक्त भूपति ने गाया।

गाना – हे परब्रह्म, तुम्हारी जय हो, तुम अपार हो, अगम्य हो, परात्पर हो ...। मुझे ज्ञान दो, भक्ति और प्रेम दो, और अपने श्रीचरणों में मुझे आश्रय दो।

भूपति फिर गा रहे है –

गाना – चिदानन्द-सिन्धु-सलिल मे प्रेम और आनन्द की लहरें उठ रही हैं। रासलीला के महान् भाव में कैसी सुन्दर माधुरी है!...

बड़ी देर के बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – आवेश में न जाने क्या हो जाता है। इस समय लज्जा आ रही है। उस समय जैसे भूत सवार हो जाता है, 'मैं' फिर 'मैं' नहीं रह जाता।

"इस अवस्था के बाद गिनती नहीं गिनी जा सकती। गिनने लगो तो १, ७, ९ इस तरह की गणना होती है।"

नरेन्द्र – सब एक ही है, इसलिए।

श्रीरामकृष्ण – नही, एक और दो से परे।

महिमाचरण – जी हॉ, द्वैताद्वैतविवर्जितम्।

श्रीरामकृष्ण – वहॉ तर्क-विचार नष्ट हो जाता है। पाण्डित्य द्वारा उन्हें कोई पा नहीं सकता। वे शास्त्रो, वेदों, पुराणों और तन्त्रों से परे हैं। किसी के हाथ में अगर मैं एक पुस्तक देखता हूॅ तो उसके ज्ञानी होने पर भी मैं उसे राजर्षि कहता हूँ। ब्रह्मर्षि का कोई बाह्य लक्षण नही रहता। शास्त्रों का उपयोग क्या है, जानते हो? एक ने चिट्ठी लिखी थी, उसमें था, पाँच सेर सन्देश और एक धोती भेजना। जिसे वह चिट्ठी मिली उसने पाँच सेर सन्देश और एक धोती, इतना याद करके चिट्ठी फेंक दी। चिट्ठी की क्या जरूरत थी?

विजय – सन्देश भेजे गये, यह समझ लिया!

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर आदमी की देह धारण करके आते हैं। यह सच है कि वे सब जगहों में और सर्व भूतों में हैं, परन्तु अवतार के बिना जीवों की आकांक्षा की पूर्ति नहीं होती, उनकी आवश्यकताएँ नहीं मिटती। वह इस तरह कि गौ को चाहे जहाँ छुओ वह गौ को ही छूना हुआ, सीग छूने पर भी गौ को छूना हुआ, परन्तु दूध गौ के थनों से ही आता है। (हास्य)

महिमा – दूध की अगर जरूरत हो तो गौ के सींगों में मुँह लगाने से क्या होगा? उसके थनों में मुँह लगाना चाहिए। (सब हँसते हैं)

विजय – परन्तु बछड़ा पहले पहले इधर-उधर ही हूँथा मारता है।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – बछडे को उस तरह भटकते हुए देखकर कोई कोई ऐसा भी करते हैं कि उसका मुँह थनों में लगा देते हैं (सब हँसते हैं)

(५)

भक्तों के साथ प्रेमानन्द में

ये सब बातें हो रही थीं कि श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए डाक्टर आ पहुँचे और

आसन ग्रहण किया। वे कह रहे है, 'कल रात तीन बजे से मेरी आँख नही लगी। बस तुम्हारी ही चिन्ता थी कि कही ऐसा न हो कि सर्दी लग जाय। और भी मै बहुत कुछ सोच रहा था।'

श्रीरामकृष्ण – खाँसी हुई है, गले मे भी सूजन हैं। सबेरे तड़के मुँह मे पानी आ गया था। मेरा पूरा शरीर टूट रहा है।

डाक्टर – सुबह को सब खबर मुझे मिली है।

महिमाचरण अपने भारतवर्ष-भ्रमण की चर्चा कर रहे है। कहा, 'लकाद्वीप मे हँसता हुआ आदमी नही दीख पड़ता। डाक्टर सरकार ने कहा, 'हाँ होगा, परन्तु इसकी खोज होनी चाहिए।' (सब हँसते है)

डाक्टरी कार्य की बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – बहुतो का यह ख्याल है कि डाक्टरी का स्थान अन्य कार्यो से बहुत ऊँचा है। यदि रुपया न लेकर, दूसरे का दु:ख देखकर कोई चिकित्सा करे तब तो वह महान् व्यक्ति है, उसका कार्य भी महत्त्वपूर्ण है, नही तो जो लोग रुपया लेकर यह सब काम करते है, वे तो निर्दय है, और निर्दय होते जाते है। व्यवसाय की दृष्टि से मल-मूत्र देखना तो नीचो का काम है।

डाक्टर – महाराज, आप बिलकुल ठीक कहते है। डाक्टर के लिए उस भाव से काम करना तो सचमुच बहुत बुरा है। परन्तु आपके सम्मुख मै अपने ही मुँह से क्या कहूँ –

श्रीरामकृष्ण – हाँ, डाक्टरी मे नि:स्वार्थ भाव से अगर दूसरे का उपकार किया जाय, तब तो बहुत अच्छा है।

"चाहे जो काम आदमी करे, संसारी मनुष्य के लिए बीच-बीच मे साधुसग की बड़ी आवश्यकता है। ईश्वर मे भक्ति रहने पर लोग साधुसंग आप खोज लेते है। मै उपमा दिया करता हूँ – गँजेड़ी गँजेड़ी के साथ ही रहता है। दूसरे आदमी को देखता है तो वह सिर झुकाकर चला जाता है या छिप रहता है, परन्तु एक दूसरे गँजेड़ी को देखकर उसे परम प्रसन्नता होती है। कभी तो मारे प्रेम के दोनो गले लग जाते है। (सब हँसते है) और, गीध भी गीध ही के साथ रहता है।"

डाक्टर – परन्तु कौए के डर से ही गीध भाग जाता है। मै कहता हूँ, सिर्फ मनुष्य की ही नही, सब जीवो की सेवा करनी चाहिए। मै प्राय: गौरैयो को आटे की गोलियाँ दिया करता हूँ। और छत पर हजारो गौरैयाँ इकट्ठी हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण – वाह! यह तो बड़ी अच्छी बात है। जीवो को खिलाना तो साधुओ का काम है। साधु-महात्मा चीटियो को शक्कर देते है।

डाक्टर – *आज गाना नही होगा?*

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र से) – कुछ गाओ।

नरेन्द्र गा रहे हैं, हाथ में तानपूरा लिए हुए। आज बाजा भी बज रहा है।

गाना – हे दीनों के शरण! तुम्हारा नाम बड़ा सुन्दर है। ऐ प्राणों में रमण करनेवाले! अमृत की धारा बरस रही है, कर्ण शीतल बन जाते हैं ...।

नरेन्द्र फिर गा रहे हैं –

गाना – माँ! मुझे पागल कर दे, ज्ञान और विचार की अब कोई आवश्यकता नहीं है ...।

गाने के साथ ही इधर अद्भुत दृश्य दिखायी देने लगा – भावावेश में सब लोग पागल हो रहे हैं। पण्डित अपने पाण्डित्य का अभिमान छोड़कर खड़े हो गये। कह रहे हैं – 'माँ, मुझे पागल कर दे, ज्ञान और विचार की अब कोई आवश्यकता नहीं है।' सब से पहले आसन छोड़कर भावावेश में विजय खड़े हुए, फिर श्रीरामकृष्ण। श्रीरामकृष्ण देह की कठिन असाध्य व्याधि को बिलकुल भूल गये हैं। सामने डाक्टर हैं। वे भी खड़े हो गये। न रोगी को होश है, न डाक्टर को। छोटे नरेन्द्र और लाटू दोनों को भावसमाधि हो गयी। डाक्टर ने साइन्स (विज्ञान) पढ़ी है, परन्तु यह विचित्र अवस्था देखते हुए अवाक् हो रहे हैं। देखा, जिन्हें भावावेश है उनमे बाह्यज्ञान बिलकुल नहीं रह गया। सब के सब स्थिर और निःस्पन्द हो रहे हैं। भाव का उपशम होने पर कोई हँस रहे हैं, कोई रो रहे हैं, मानो कुछ मतवाले इकट्ठे हो गये हों।

(६)

भक्त के संग में। श्रीरामकृष्ण तथा क्रोध-जय।

इस घटना के बाद लोगों ने आसन ग्रहण किया। रात के आठ बज गये हैं। फिर बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से) – यह जो भाव तुमने देखा, इसके सम्बन्ध में तुम्हारी साइन्स क्या कहती है? तुम्हें क्या यह जान पड़ता है कि यह सब ढोंग है?

डाक्टर (श्रीरामकृष्ण से) – जहाँ इतने आदमियों को ऐसा हो रहा है, वहाँ तो स्वाभाविक ही जान पड़ता है; ढोंग नहीं मालूम होता। (नरेन्द्र से) जब तुम गा रहे थे, 'माँ, पागल कर दे, अब ज्ञान और विचार की आवश्यकता नहीं है', तब मुझसे रहा नहीं गया, खड़ा हो गया, फिर बड़ी मुश्किल से भाव को दबाना पड़ा। मैंने सोचा कि बाहरी दिखाव न होने देना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (डाक्टर से, हँसकर) – तुम तो अटल, अचल और सुमेरुवत् हो। (सब हँसते हैं) तुम गम्भीरात्मा हो। रूपसनातन का भाव किसी को मालूम न हो पाता था। अगर किसी गड़ही में हाथी उतर जाता है तो पानी में उथल-पुथल मच जाती है, परन्तु बड़े

सरोवर में कहीं कुछ नही होता। किसी को मालूम भी नही होता। श्रीमती ने सखियों से कहा, 'सखियों, कृष्ण के विरह में तुम लोग इतना रो रही हो, परन्तु मुझे देखो, मेरी आँखों में कहीं एक बूँद भी आँसू नही है।' तब वृन्दा ने कहा, 'सखि, तेरी आँखों में आँसू नही है, इसका बहुत बड़ा अर्थ है। तेरे हृदय में विरह की आग सदा जल रही है, आँखो में आँसू आते है पर उस अग्नि की ज्वाला से सूख जाते है।

डाक्टर – आपके साथ बातचीत मे पार पाना कठिन है। (हास्य)

फिर दूसरी चर्चा होने लगी। श्रीरामकृष्ण भावावेश की अपनी पहली अवस्था बतला रहे हैं। और काम, क्रोध आदि को किस तरह वश में लाया जाय, ये बाते भी बतला रहे है।

डाक्टर – आप भावावेश में पड़े हुए थे, एक दूसरे ने उस समय आपको बूट से पाद-प्रहार किया था, ये सब बातें मैं सुन चुका हूँ।

श्रीरामकृष्ण – वह कालीघाट का चन्द्र हालदार था। वह मथुरबाबू के पास प्राय: आया करता था। मै ईश्वरावेश में अँधेरे में जमीन पर पड़ा हुआ था। चन्द्र हालदार पहले ही से सोचा करता था कि यह ढोग किया करता है, मथुरबाबू का प्रिय पात्र बनने के लिए। वह अँधेरे में आकर जूते पहने हुए पैरों से ठेलने लगा। देह में निशान बन गये थे। सब ने कहा, 'मथुरबाबू से कह दिया जाय।' मैंने मना कर दिया।

डाक्टर – यह भी ईश्वर की लीला है। इससे भी लोगों को शिक्षा होगी। क्रोध किस तरह जीता जाता है, क्षमा किसे कहते है, लोग समझेंगे।

श्रीरामकृष्ण के सामने विजय के साथ भक्तों की बातचीत हो रही है।

विजय – न जाने कौन मेरे साथ सब समय रहते हैं, मेरे दूर रहने पर भी वे मुझे बतला देते हैं, कहाँ क्या हो रहा है!

नरेन्द्र – स्वर्गीय दूत की तरह रखवाली करते हुए!

विजय – ढाके में इन्हें (श्रीरामकृष्ण को) मैंने देखा है देह छूकर!

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – तो वह कोई दूसरा होगा।

नरेन्द्र – मैंने भी इन्हें कई बार देखा है। (विजय से) अतएव किस तरह कहूँ कि आपकी बात पर मुझे विश्वास नहीं होता?

परिच्छेद १२६

भक्ति, विवेक-वैराग्य तथा पाण्डित्य

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा शिष्य-प्रेम

आज आश्विन की कृष्ण तृतीया है, सोमवार, २६ अक्टूबर १८८५। श्रीरामकृष्णदेव की चिकित्सा डाक्टर सरकार उसी श्यामपुकुर के घर मे कर रहे है। रोज आते हैं। आदमी भी संवाद लेकर रोज जाता है।

शरद ऋतु है। कुछ दिन हुए, शारदीय पूजा हो गयी है। श्रीरामकृष्ण की शिष्यमण्डली को हर्ष और विषाद में वह समय बिताना पड़ा था। श्रीरामकृष्ण की पीड़ा तीव्र है। डाक्टर सरकार ने सूचित किया है कि रोग असाध्य है। शिष्यों को तब से हार्दिक दु:ख है। वे सदा ही चिन्तित और व्याकुल रहा करते हैं। कुमार-अवस्था से ही वैराग्ययुक्त उनके नरेन्द्र आदि शिष्यगण अभी कामिनी और कांचन के त्याग की शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

इतनी पीड़ा है फिर भी दल के दल आदमी श्रीरामकृष्ण के पास आते रहते हैं। उनके पास आते ही उन्हें आनन्द मिलता है। वे समागत मनुष्यों की मंगल-कामना करते हुए, अपनी असाध्य व्याधि को भूलकर उन्हें शिक्षा और उपदेश देते हैं। डाक्टरों ने, विशेषत: डाक्टर सरकार ने, बातचीत करने के लिए मना कर दिया है। परन्तु डाक्टर सरकार खुद छ:-सात घण्टे तक रहते है। वे कहते है, 'किसी दूसरे के साथ बातचीत नही करने पाओगे, बस हमारे साथ किया करो।'

श्रीरामकृष्ण की बातें सुनते-सुनते डाक्टर एकदम मुग्ध हो जाते हैं। इसीलिए वे इतनी देर तक बैठे रहते है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – बीमारी बहुत कुछ अच्छी-सी हो गयी है, इस समय तबीयत खूब अच्छी है। अच्छा, तो क्या दवा से ऐसा हुआ है? तो इसी दवा का सेवन क्यों न किया जाय?

मास्टर – मैं डाक्टर के पास जा रहा हूँ, उनसे सब हाल कह दूँगा। वे जो कुछ अच्छा सोचेंगे, कहेंगे।

श्रीरामकृष्ण – देखो, दो-तीन दिन से पूर्ण नहीं आया। मन में न जाने कैसा हो रहा है।

मास्टर – कालीबाबू, तुम जाओ न जरा पूर्ण को बुलाने।

काली – अभी जाता हूँ।

पूर्ण की उम्र १४-१५ साल की होगी।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – डाक्टर का लड़का अच्छा है। जरा एक बार आने के लिए कहना।

(२)

मास्टर तथा डाक्टर का सम्भाषण

डाक्टर के घर पर पहुँचकर मास्टर ने देखा, डाक्टर दो-एक मित्रो के साथ बैठे हुए हैं।

डाक्टर (मास्टर से) – अभी मिनट भर हुआ होगा, मैं तुम्हारी ही बातें कर रहा था। दस बजे आने के लिए तुमने कहा था, मैं डेढ़ घण्टे से बैठा हुआ हूँ। कैसे हैं, क्या हुआ, इसी सोच में पड़ा था। (मित्र से) अजी, जरा वही गाना गाओ तो।

मित्र गा रहे हैं –

गाना – देह मे जब तक प्राण हैं तब तक उनके नाम और गुणों का कीर्तन करते रहो। उनकी महिमा एक ज्वलन्त ज्योति है – संसार को प्रकाशित करनेवाली। सकल जीवों को सुख देनेवाला प्रेमामृत-प्रवाह बह रहा है। उनकी अपार करुणा का स्मरण कर शरीर पुलकित हो जाता है। वाणी क्या कभी उनकी थाह पा सकती है? उनकी कृपा से पल भर मे समस्त शोक दूर हो जाते हैं। मनुष्य उन्हें सर्वत्र – ऊपर, नीचे, देश-देशान्तर, जल-गर्भ, आकाश में – अक्लान्त ढूँढ़ते रहते हैं, और अनवरत जिज्ञासा करते रहते हैं, 'उनका अन्त कहाँ है, उनकी सीमा कहाँ तक है?' वे चेतन-निकेतन हैं, पारस-मणि हैं, सदा जाग्रत और निरंजन हैं। उनके दर्शन से दु:ख का लेशमात्र भी नहीं रह जाता।

डाक्टर (मास्टर से) – गाना बहुत अच्छा है, है न? विशेषत: उस जगह, जहाँ यह है – "लोक अनवरत जिज्ञासा करते रहते हैं, 'उनका अन्त कहाँ है, उनकी सीमा कहाँ तक है?' "

मास्टर – हाँ, वह भाग बड़ा सुन्दर है, अनन्त के खूब भाव हैं।

डाक्टर – (सस्नेह) – दिन बहुत चढ़ गया। तुमने भोजन किया या नहीं? मैं दस बजे के भीतर भोजन कर लेता हूँ, फिर डाक्टरी करने निकलता हूँ। बिना खाये अगर निकल जाता हूँ, तो तबीयत खराब हो जाती है। एक दिन तुम लोगों को भोजन कराने की बात सोच रहा हूँ।

मास्टर – यह तो बड़ी अच्छी बात है।

डाक्टर – अच्छा, यहाँ या वहाँ? तुम लोग जैसा कहो।

मास्टर – महाशय, यहाँ हो चाहे वहाँ; सब लोग आनन्द से भोजन करेंगे।

अब जगन्माता काली की बात चलने लगी।

डाक्टर – काली तो एक भीलनी थी। (मास्टर हँसते हैं)

मास्टर – यह बात कहाँ लिखी है?

डाक्टर – मैंने ऐसा ही सुना है। (मास्टर हँसते हैं)

पिछले दिन विजयकृष्ण और दूसरे भक्तों को भावसमाधि हुई थी। उस समय डाक्टर भी थे। वही बात हो रही है।

डाक्टर – भावावेश तो मैंने देखा। पर क्या अधिक भावावेश होना अच्छा है?

मास्टर – श्रीरामकृष्णदेव कहते हैं, ईश्वर की चिन्ता करके जो भावावेश होता है, उसके अधिक होने पर कोई हानि नहीं होती। वे कहते हैं, मणि की ज्योति से जो उजाला होता है उससे शरीर स्निग्ध हो जाता है, जलता नहीं।

डाक्टर – मणि की ज्योति; वह तो प्रतिबिम्बित ज्योति (Reflected light) है।

मास्टर – वे और भी कहते हैं कि अमृत-सरोवर में डूबने से कोई मरता नहीं। ईश्वर अमृत-सरोवर है, उनमें डूबने से आदमी का अनिष्ट नहीं होता, वरन् वह अमर हो जाता है; परन्तु तभी, अगर ईश्वर पर विश्वास हो।

डाक्टर – हाँ, यह बात ठीक है।

डाक्टर गाड़ी में बैठे, दो-चार रोगियों को देखकर श्रीरामकृष्णदेव को देखने जायेंगे। रास्ते में फिर मास्टर के साथ बातचीत होने लगी। चक्रवर्ती के अहंकार की बात डाक्टर ने चलायी।

मास्टर – श्रीरामकृष्णदेव के पास वे आया-जाया करते हैं। अहंकार अगर उनमें हो भी, तो कुछ दिनों में न रह जायगा। श्रीरामकृष्णदेव के पास बैठने से जीवों का अहंकार दूर हो जाता है, क्योंकि उनमें स्वयं में अहंकार नहीं है। नम्रता रहने से अहंकार नहीं रह सकता। विद्यासागर महाशय इतने बड़े आदमी हैं, फिर भी उन्होंने उस समय विनय और नम्रता प्रदर्शित की जब श्रीरामकृष्णदेव उन्हें देखने गये थे – उनके बादुड़बागानवाले मकान में। जब वहाँ से बिदा हुए तब रात के नौ बजे का समय था। विद्यासागर महाशय लाइब्रेरीवाले कमरे से बराबर साथ-साथ हाथ में बत्ती लिये हुए उन्हें गाड़ी पर चढ़ा गये थे, और बिदा होते समय हाथ जोड़े हुए थे।

डाक्टर – अच्छा इनके (श्रीरामकृष्ण के) सम्बन्ध में विद्यासागर महाशय का क्या मत है?

मास्टर – उस दिन बड़ी भक्ति की थी, परन्तु बातचीत करके मैंने देखा, वैष्णवगण

जिसे भाव कहते है, इस तरह की बाते उन्हे पसन्द नही, – जैसा आपका मत है।

डाक्टर – हाथ जोड़ना, पैरों पर सिर रखना यह सब मुझे पसन्द नही। सिर जो कुछ है, पैर भी वही है। परन्तु जिसे यह ज्ञान है कि सिर कुछ है और पैर कुछ, वह ऐसा कर सकता है।

मास्टर – आपको भाव पसन्द नही है। श्रीरामकृष्णदेव आपको कभी कभी गम्भीरात्मा कहा करते है, आपको शायद याद हो। उन्होने कल आपके लिए कहा था, 'छोटीसी गड़ही मे हाथी उतर जाता है तो पानी मे उथलपुथल मच जाती है, परन्तु बड़े सरोवर मे कही कुछ नही होता।' गम्भीरात्मा के भीतर भाव-हाथी के उतरने पर उसका कही कुछ नही होता। वे कहते है, आप गम्भीरात्मा है।

डाक्टर – मै किसी तरह की प्रशंसा नही चाहता। आखिर भाव और है क्या? यह केवल एक प्रकार की 'feelings' है। इसी प्रकार की अन्य 'feelings' भी होती है, उदाहरणार्थ 'भक्ति'। जब यह अत्यधिक हो जाती है तो कोई तो उसे दबाकर रख सकता है, और कोई नही।

मास्टर – 'भाव' का अर्थ कोई एक तरह से समझाता है, और कोई समझा ही नही सकता। परन्तु महाशय, यह बात तो माननी ही होगी कि भाव और भक्ति ये अपूर्व वस्तुएँ है। मैने आपके पुस्तकालय मे डारविन के सिद्धान्तो पर लिखी हुई स्टेबिग की एक पुस्तक देखी है। स्टेबिग साहब का मत है कि मनुष्य का मन बड़ा ही आश्चर्यजनक है – उसका निर्माण चाहे क्रम-विकास (Evolution) द्वारा हुआ हो, अथवा ईश्वर के एक खास सृष्टि-उत्पादन से। स्टेबिग साहब ने एक बड़ी अच्छी उपमा दी है। उन्होने कहा है, 'प्रकाश को ही लीजिये। चाहे आप प्रकाश की तरंगो के सिद्धान्त को जाने या न जाने, प्रत्येक दशा मे प्रकाश आश्चर्यजनक ही है।'

डाक्टर – हाँ, और देखते हो, स्टेबिग डारविन के सिद्धान्त को मानता है, फिर ईश्वर को भी मानता है!

फिर श्रीरामकृष्णदेव की बात चली।

डाक्टर – देखता हूँ, ये (श्रीरामकृष्णदेव) काली के उपासक है।

मास्टर – उनका काली का अर्थ और कुछ है। वेद जिन्हे परब्रह्म कहते है, वे उन्हे ही काली कहते है। मुसलमान जिन्हे अल्ला कहते है, ईसाई जिन्हे गॉड (God) कहते है, उन्हे ही वे काली कहते है। वे बहुतसे ईश्वर नही देखते, एक देखते है। पुराने ब्रह्मज्ञानी जिन्हे ब्रह्म कह गये है, योगी जिन्हे आत्मा कहते है, भक्त जिन्हे भगवान कहते है, श्रीरामकृष्णदेव उन्ही को काली कहते है।

"उनसे मैने सुना है, एक आदमी के पास एक गमला था, उसमे रंग घोला हुआ था। किसी को अगर कपडा रँगाने की जरूरत होती थी, तो वह उसके पास जाता था।

रँगनेवाला पूछता था, 'तुम किस रंग मे कपड़ा रँगाना चाहते हो?' रँगानेवाला अगर कहता, 'हरे रंग मे', तो वह गमले में डुबाकर कपड़ा निकाल लेता और कहता था, 'यह लो अपना हरे रंग का कपड़ा।' अगर कोई कहता, 'मेरी धोती लाल रंग से रँगो', तो भी यह उसी गमले में डुबाकर निकाल लेता और कहता था, 'यह लो तुम्हारी धोती लाल रंग से रँग गयी।' इस एक ही गमले के रंग से वह लाल, पीला, हरा, आसमानी, सब रंगो के कपड़े रँगा करता था। यह विचित्र तमाशा देखकर एक ने कहा, 'भाई, मुझे तो वही रंग चाहिए जो तुमने इस गमले मे घोल रखा है।' उसी तरह श्रीरामकृष्णदेव के भीतर सब भाव है, – सब धर्मों और सब सम्प्रदायों के आदमी उनके पास शान्ति और आनन्द पाते हैं। उनका खास भाव क्या है, वे कितने गहरे है, यह भला कौन समझ सकता हैं?''

डाक्टर – 'सब मनुष्यों के लिए सब चीजे।' यह मुझे अच्छा नही लगता, यद्यपि सेन्ट पॉल ऐसा ही कहते है।

मास्टर – श्रीरामकृष्णदेव की अवस्था कौन समझेगा? उनके श्रीमुख से मैंने सुना है, सूत का व्यवसाय बिना किये, कौन सूत ४० नम्बर का है और कौन ४१ नम्बर का, यह समझ मे नही आता। चित्रकार हुए बिना चित्रकार की कुशलता समझ मे नही आती। महापुरुषों का भाव गम्भीर होता है। ईशु की तरह बिना हुए, ईशु के सारे भाव समझ में नही आते। श्रीरामकृष्णदेव का यह गम्भीर भाव, बहुत सम्भव है, वही है जो ईशु ने कहा था – 'अपने स्वर्गस्थ पिता की तरह पवित्र होओ।'

डाक्टर – अच्छा, उनकी बीमारी में तुम लोग किस तरह उनकी सेवा और देखभाल करते हो?

मास्टर – जिनकी उम्र अधिक है, सेवा करने का भार उन्ही पर रहता है। किसी दिन गिरीशबाबू परिदर्शक रहते है, किसी दिन रामबाबू, किसी दिन बलराम, किसी दिन सुरेशबाबू, किसी दिन नवगोपाल, और किसी दिन कालीबाबू, इस तरह।

(३)

पाण्डित्य तथा विवेक-वैराग्य

इस तरह बाते करते हुए, श्रीरामकृष्ण जिस मकान मे रहते थे उसके सामने आकर गाड़ी खड़ी हुई। दिन के एक बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण दुमँजलेवाले कमरे मे बैठे हुए है। बहुत से भक्त सामने बैठे है। उनमे श्रीयुत गिरीश घोष, छोटे नरेन्द्र, शरद आदि भी है। सब की दृष्टि उस महायोगी सदानन्द महापुरुष की ओर लगी हुई है।

डाक्टर को देखकर हँसते हुए श्रीरामकृष्ण कह रहे है, 'आज बहुत अच्छी है तबीयत।'

धीरे धीरे भक्तो के साथ ईश्वरीय चर्चा होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – सिर्फ पाण्डित्य से क्या लाभ, अगर उसमें विवेक और वैराग्य न हों? ईश्वर के पादपद्मों की चिन्ता करते हुए मेरी एक ऐसी अवस्था होती है कि कमर से धोती खुल जाती है, पैरों से सिर तक न जाने क्या सरसरता हुआ चढ़ जाता है। तब सब लोग तृण के समान जान पड़ते हैं। उन पण्डितों को जिनमें विवेक, वैराग्य और ईश्वर प्रेम नही है, मैं घास-फूस की तरह देखता हूँ।

"रामनारायण डाक्टर ने मेरे साथ तर्क किया था। एकाएक मुझे वही अवस्था हो गयी। तब मैंने कहा, 'तुम क्या कहते हो? उन्हें तर्क करके क्या खाक समझोगे? उनकी सृष्टि भी क्या समझोगे? तुम्हारी तो यह बड़ी हीन बुद्धि है!' मेरी अवस्था देखकर वह रोने लगा, और मेरे पैर दबाने लगा।"

डाक्टर – रामनारायण डाक्टर हिन्दू हैं न! और फूल-चन्दन भी धारण करता है! [illegible]चा हिन्दू है!

श्रीरामकृष्ण – बंकिम* तुम लोगों के दल का एक पण्डित है। बंकिम के साथ मुलाकात हुई थी। मैंने पूछा, 'आदमी का कर्तव्य क्या है?' तब उसने कहा, 'आहार, निद्रा और मैथुन।' इस तरह की बातें सुनकर मुझे घृणा हो गयी। मैंने कहा, 'तुम्हारी ये कैसी बातें हैं? तुम तो बड़े छिछोड़े हो! तुम दिन-रात जैसी चिन्ताएँ किया करते हो, वही मुँह से भी निकल रहा है! मूली खाने से मूली ही की डकार आती है।' फिर बहुत सी ईश्वरीय बातें हुईं। कमरे में संकीर्तन हुआ। मैं नाचा भी। तब उसने कहा, 'महाराज, एक बार हमारे यहाँ भी पधारियेगा।' मैंने कहा, 'देखो, ईश्वर की इच्छा।' तब उसने कहा, 'हमारे यहाँ भी भक्त हैं, आप देखियेगा।' मैंने हँसते हुए कहा, 'किस तरह के भक्त हैं जी? गोपाल-गोपाल जिन लोगों ने कहा था, वैसे?'

डाक्टर – 'गोपाल-गोपाल' क्या है?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – एक सुनार की दूकान थी। उस दूकान के सब लोग बड़े भक्त दिखते थे – परम वैष्णव। गले में माला, माथे में तिलक, हाथ में सुमिरनी, लोग विश्वास करके उन्हीं की दूकान में आते थे। वे सोचते थे, ये परम भक्त हैं, कभी ठग नहीं सकते। खरीददारों का एक दल जब वहाँ पहुँचता तो सुनता कि कोई कारीगर 'केशव-केशव' कह रहा है, एक दूसरा कुछ देर बाद 'गोपाल-गोपाल' रट रहा है, फिर थोड़ी देर बाद कोई 'हरि-हरि' बोल रहा है, फिर कुछ देर में कोई 'हर-हर' आदि आदि। ईश्वर के इतने नाम एक साथ सुनकर खरीददार सहज ही सोचते थे, इस घराने के सुनार बड़े अच्छे हैं। परन्तु इसका असल मतलब क्या था, जानते हो? जिसने 'केशव-केशव' कहा था, उसका मतलब यह पूछने का था कि ये सब कौन हैं? जिसने कहा था 'गोपाल-गोपाल',

* बंकिमचन्द्र चटर्जी – बंगाल प्रांत के एक प्रसिद्ध लेखक।

उसका अर्थ यह है कि मैं समझ गया, ये सब गौओं के दल (पाल) हैं। (हास्य) जिसने कहा 'हरि-हरि', उसका अर्थ यह है – अगर ये गौओ के दल हैं तो क्या हम इनका हरण करें? (हास्य) जिसने कहा 'हर-हर', उसने इशारा किया कि हॉ, हरण करो; हाँ, हरण करो; यह तो गौओं का दल ही है। (हास्य)

"मथुरबाबू के साथ मैं एक जगह और गया था। कितने ही पण्डित मेरे साथ विचार करने के लिए आये थे। मै तो मूर्ख हूँ ही। (सब हँसते हैं।) उन लोगों ने मेरी वह अवस्था देखी, और मेरे साथ बातचीत होने पर उन लोगो ने कहा, 'महाराज! पहले जो कुछ हमने पढ़ा है, तुम्हारे साथ बातचीत करने पर उस सारी विद्या से जी हट गया। अब समझ में आया, उनकी कृपा होने पर [illegible] जाता; मूर्ख भी विद्वान हो जाता है, मूक मे भी बोलने की शक्ति आ जाती है।' इसीलिए कह रहा हूं, पुस्तकें पढ़ने से ही कोई पण्डित नही हो जाता।

"हॉ, उनकी कृपा होने पर फिर ज्ञान की कमी नही रह जाती। देखो न, मैं तो मूर्ख हूॅ, कुछ भी नही जानता, परन्तु ये सब बातें कौन कहता है? फिर इस ज्ञान का भाण्डार अक्षय है। उस देश (कामारपुकुर) मे लोग जब धान नापते हैं, तो 'राम-राम राम-राम' कहते जाते है। एक आदमी नापता है और एक दूसरा आदमी राशि पूरी करता जाता है। उसका काम यही है कि जब राशि घट जाय तब पूरी करता रहे। मैं भी जो बाते कह जाता हूँ, जब वे घटने पर आ जाती है, तब माँ अपने अक्षय ज्ञान-भाण्डार से राशि पूरी कर देती है।

"जब मैं बच्चा था, उस समय मेरे भीतर उनका आविर्भाव हुआ था। उम्र ग्यारह साल की थी। मैदान में एक विचित्र तरह का दर्शन हुआ। सब कहते थे, मैं उस समय बेहोश हो गया था। कोई भी अंग हिलता-डुलता न था। उसी दिन से मैं एक दूसरी तरह का हो गया। अपने भीतर एक दूसरे व्यक्ति को देखने लगा। जब श्रीठाकुरजी की पूजा करने के लिए जाता था, तब हाथ बहुधा ठाकुरजी की ओर न जाकर अपनी ही ओर आता था, और मैं अपने ही सिर पर फूल चढ़ा लेता था! जो लड़का मेरे पास रहता था, वह मेरे पास न आता था। कहता था, 'तुम्हारे मुख पर एक न जाने कैसी ज्योति देख रहा हूँ! तुम्हारे पास अधिक जाते भय उत्पन्न होता है।' "

(४)

ईश्वरेच्छा तथा स्वाधीन इच्छा

श्रीरामकृष्ण – मैं तो मूर्ख हूँ, कुछ जानता ही नहीं, तो यह सब कहता कौन हैं? मैं कहता हूँ, 'माँ, मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो; मैं गृह हूँ, तुम गृहस्वामिनी हो; मैं रथ हूँ, तुम रथी हो; तुम जैसा कराती हो, मैं वैसा ही करता हूँ; जैसा चलाती हो वैसा ही चलता हूँ;

नाहम्-नाहम्, तुम हो, तुम हो।' उन्ही की जय है, मै तो केवल यन्त्र मात्र हूँ। श्रीमती जब सहस्र छेदवाला घट लेकर जा रही थी, तब उसमे से जरा भी पानी नही गिरा। यह देखकर सब लोग उनकी प्रशंसा करने लगे, कहा, 'ऐसी सती दूसरी न होगी।' तब श्रीमती ने कहा, 'तुम लोग मेरी जय क्यो मनाते हो? कहो, कृष्ण की जय हो। मै तो उनकी एक दासी मात्र हूँ।' एक दिन ऐसी ही भाव की अवस्था मे विजय की छाती पर मैने एक पैर रख दिया। इधर तो विजय पर मेरी श्रद्धा है, परन्तु उस अवस्था मे उस पर पैर रख दिया, इसके लिए भला क्या किया जाय।

डाक्टर – उसके बाद से सावधान रहना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (हाथ जोडकर) – मै क्या करूँ? उस अवस्था के आने पर बेहोश हो जाता हूँ। क्या करता हूँ, कुछ समझ मे नही आता।

डाक्टर – सावधान रहना चाहिए। हाथ जोड़ने से क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण – तब मुझमे करने-धरने की शक्ति थोडे ही रह जाती है! – परन्तु मेरी अवस्था के सम्बन्ध मे क्या सोचते हो? यदि इसे ढोग समझते हो तो मै कहूँगा, तुम्हारी साइन्स-वाइन्स सब खाक है।

डाक्टर – महाराज, यदि मै ढोग समझता तो क्या कभी इस तरह आया करता? देखो न, सब काम छोड़कर यहाँ आता हूँ। कितने ही रोगियो के यहाँ जा नही पाता। यहाँ आकर छः-सात घण्टे तक रह जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – मथुरबाबू से मैने कहा था, 'तुम यह न सोचना कि तुम एक बड़े आदमी हो, मुझे मानते हो, इसलिए मै कृतार्थ हो गया। तुम मानो या न मानो।' परन्तु एक बात है, आदमी क्या कर सकता है, वे (ईश्वर) स्वयं आकर मनायेगे। ईश्वरीय शक्ति के सामने मनुष्य घास-फूस की तरह है।

डाक्टर – क्या आप यह सोचते है कि अमुक मछुआ* आपको मानता था इसलिए मै भी मानूँगा? ... परन्तु हाँ, आपका सम्मान जरूर करता हूँ, आपके प्रति भक्ति करता हूँ, परन्तु वैसी ही, जैसी मनुष्य के प्रति की जाती है –

श्रीरामकृष्ण – अजी, क्या मै मानने के लिए कह रहा हूँ?

गिरीश घोष – क्या वे आपको मानने के लिए कह रहे है?

डाक्टर – (श्रीरामकृष्ण से) – आप क्या कहते है? ईश्वर की इच्छा?

श्रीरामकृष्ण – और नही तो क्या कह रहा हूँ? ईश्वरीय शक्ति के निकट मनुष्य क्या कर सकता है? कुरुक्षेत्र मे अर्जुन ने कहा, 'लड़ाई मुझसे न होगी, अपने ही भाइयों का वध मै न कर सकूँगा।' श्रीकृष्ण ने कहा, 'अर्जुन, तुम्हे लड़ना ही होगा। तुम्हारा

* यहाँ पर डॉक्टर मथुरबाबू के सम्बन्ध मे कह रहे है, क्योकि मथुरबाबू मछुआ जाति के थे।

स्वभाव तुमसे युद्ध करायेगा।' श्रीकृष्ण ने सब दिखला दिया कि ये सब आदमी मरे हुए हैं। ठाकुरबाड़ी में कुछ सिक्ख आये थे। उनके मत से पीपल का पत्ता भी ईश्वर की इच्छा से डोलता है – बिना उनकी इच्छा के पीपल का पत्ता तक नहीं डोल सकता।

डाक्टर – यदि ईश्वर की ही सब इच्छा है तो आप बातचीत क्यों करते हैं? लोगों को ज्ञान देने के लिए इतनी बातें क्यों कहते हैं?

श्रीरामकृष्ण – कहलवाते हैं, इसलिए कहता हूँ। मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं।

डाक्टर – आप अपने को यन्त्र कह रहे हैं। यह ठीक है। या चुप ही रहिये, क्योंकि सब कुछ तो ईश्वर ही हैं।

गिरीश (डाक्टर के प्रति) – महाशय, आप कुछ भी सोचें, परन्तु वे कराते है इसीलिए हम लोग करते हैं। क्या उस सर्वशक्तिमान ईश्वर की इच्छा के प्रतिकूल कोई एक पग भी चल सकता है?

डाक्टर – स्वाधीन इच्छा भी तो उन्होंने दी है। मैं यदि चाहूँ तो ईश्वर-चिन्ता कर भी सकता हूँ, और न चाहूँ तो नही भी कर सकता।

गिरीश – आप ईश्वर की चिन्ता या सत्कर्म इसलिए करते हैं कि वह आपको अच्छा लगता है। अतएव वह कर्म आप स्वयं नहीं करते, वह अच्छा लगना ही आपसे करवाता है।

डाक्टर – क्यों, मैं कर्तव्य समझकर करता हूँ –

गिरीश – वह भी इसलिए कि मन कर्तव्य कर्म करना पसन्द करता है –

डाक्टर – सोचो कि एक लड़का जला जा रहा है। उसे बचाने के लिए जाना कर्तव्य के विचार से ही तो होता है।

गिरीश – बच्चे को बचाते हुए आपको आनन्द मिलता है, इसलिए आप आग में कूद पड़ते हैं, आनन्द आपको खींच ले जाता है। मिठाई का मजा लेने के लिए जैसे पहले अफीम खाना। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण – कर्म करने के पहले उस पर विश्वास चाहिए, उसके साथ वस्तु की याद करने पर आनन्द होता है, तभी काम करने में उस आदमी की प्रवृत्ति होती है। मिट्टी के नीचे एक घड़े में अशर्फियाँ भरी हैं, यह ज्ञान – यह विश्वास पहले होना चाहिए। घड़े को सोचने से ही आनन्द मिलता है – फिर खोदा जाता है। खोदते हुए घड़े में कुदाल के लगने पर जब ठनकार होती है, तब आनन्द और भी बढ जाता है। फिर जब घड़े की कोर दीख पड़ती है तब आनन्द और बढ़ता है। इसी तरह आनन्द बढ़ता ही जाता है। मैंने स्वयं ठाकुरबाड़ी के बरामदे में खड़े होकर देखा है – साधुओं ने गाँजा मलकर तैयार किया कि चिलम पर चढ़ाते चढ़ाते उनका आनन्द उमड़ने लगा।

डाक्टर – परन्तु आग गरमी भी पहुँचाती है और प्रकाश भी। प्रकाश से पदार्थ दीख

तो पड़ते हैं, परन्तु गरमी देह को जलाती है। कर्तव्य करते हुए आनन्द ही आनन्द मिलता हो सो बात नहीं, कष्ट भी होता है।

मास्टर (गिरीश से) – पेट में दाना पड़ता है तो मार सहने के लिए पीठ भी मजबूत रहती है। कष्ट में भी आनन्द है।

गिरीश – (डाक्टर से) – कर्तव्य रूखा है।

डाक्टर – क्यों?

गिरीश – तो सरस सही! (सब हँसते हैं)

मास्टर – फिर हम उसी बात पर आ गये – मिठाई के लाभ से अफीम खाना!

गिरीश – (डाक्टर से) – कर्तव्य सरस है, अन्यथा आप वह करते क्यों हैं?

डाक्टर – मन की गति उसी ओर है।

मास्टर – (गिरीश से) – अभागा स्वभाव खींचता है। (हास्य) अगर एक ही ओर मन का झुकाव रहा तो स्वाधीन इच्छा फिर कहाँ रही?

डाक्टर – मैं बिलकुल स्वाधीन नहीं कहता। गौ खूँटी से बँधी है, रस्सी की पहुँच जहाँ तक है, वहीं तक स्वाधीन है। परन्तु जहाँ उसे रस्सी का खिंचाव लगा तो –

श्रीरामकृष्ण – यह उपमा यदु मल्लिक ने भी दी थी। (छोटे नरेन्द्र से) क्या यह अंग्रेजी में है?

(डाक्टर से) – "देखो, ईश्वर ही सब कुछ कर रहे हैं। 'वे यन्त्री हैं, मैं यन्त्र हूँ', अगर किसी मे यह विश्वास आ जाय, तब तो वह जीवन्मुक्त हो गया। 'हे ईश्वर, अपना काम तुम खुद करते हो, परन्तु लोग कहते हैं मैं करता हूँ।' यह किस तरह, जानते हो? वेदान्त में एक उपमा है, – एक हण्डी में तुमने चावल चढ़ाये, आलू और भटे उसमें छोड़ दिये। कुछ देर बाद आलू, भटे और चावल उछलने लगते हैं, मानो अभिमान कर रहे हों कि 'मैं उछलता हूँ – मैं कूदता हूँ।' छोटे बच्चे आलू और परवरों को उछलते हुए देखकर उन्हें जीवित समझ लेते हैं। किन्तु जो जानते हैं वे समझा देते हैं कि आलू, भटे और परवरों में जान नहीं है, वे खुद नहीं उछल रहे; हण्डी के नीचे आग जल रही है, इसलिए वे उछल रहे हैं; अगर लकड़ी निकाल ली जाय, तो फिर वे नहीं हिलते। उसी तरह जीवों का यह अभिमान कि 'मैं कर्ता हूँ', अज्ञान से होता है। ईश्वर की ही शक्ति से सब में शक्ति है। जलती हुई लकड़ी निकाल लेने पर सब चुप हैं! कठपुतलियाँ बाजीगर के हाथ से खूब नाचती हैं; किन्तु हाथ से छोड़ देने पर वे हिलती-डुलती तक नहीं!

"जब तक ईश्वर के दर्शन न हों, जब तक उस पारसमणि का स्पर्श न किया जाय, तब तक 'मैं कर्ता हूँ' यह भ्रम रहेगा ही 'मैं सत् कार्य कर रहा हूँ, मैं असत् कर्म कर रहा हूँ', इस तरह की भूलें होंगी ही। यह भेद-बोध उन्हीं की माया है; और इस मिथ्या संसार को चलाने के लिए इस माया का प्रयोजन है। किन्तु विद्यामाया का आश्रय लेने पर, सत्-

मार्ग को पकड़ लेने पर लोग उन्हे प्राप्त कर सकते है। जो ईश्वर को प्राप्त कर लेता है, जो उनके दर्शन करता है वही माया को पार कर सकता है। 'वे ही एकमात्र कर्ता है, मै अकर्ता हूँ' यह विश्वास जिसे है, वही जीवन्मुक्त है। यह बात मैने केशव सेन से कही थी।''

गिरीश – (डाक्टर से) – स्वाधीन इच्छा का ज्ञान आपको कैसे हुआ?

डाक्टर – यह युक्ति के द्वारा नही जानी गयी – मै इसका अनुभव कर रहा हूँ।

गिरीश – हम तथा दूसरे लोग बिलकुल इसके विपरीत भाव का अनुभव करते है, अर्थात् यह कि हम परतन्त्र है। (सब हँसते है।)

डाक्टर – कर्तव्य मे दो बाते है। एक तो कर्तव्य के विचार से उसे करने के लिए जाना, और दूसरा बाद मे आनन्द का होना। परन्तु आरम्भिक अवस्था मे ही आनन्द होगा यह सोचकर हम कर्म करने नही जाते। मुझे स्मरण है कि जब मै छोटा था तब भोग की मिठाई मे चींटियो को देखकर पुरोहित महाराज को बड़ी चिन्ता हो जाती थी। उन्हे पहले से ही मिठाइयो को देखकर आनन्द नही होता था। (हास्य) पहले तो उन्हे चिन्ता ही होती थी।

मास्टर – (स्वगत) – बाद मे आनन्द मिलता है या साथ-साथ, यह कहना कठिन है। आनन्द के बल से यदि कार्य होता रहा तो स्वाधीन इच्छा फिर कहाँ रह गयी?

(५)

अहैतुकी भक्ति। श्रीरामकृष्ण का दास्य-भाव

श्रीरामकृष्ण – ये (डाक्टर) जो कुछ कह रहे है, इसका नाम है अहैतुकी भक्ति। महेन्द्र सरकार से मै कुछ चाहता नही – कोई और आवश्यकता भी नही है; महेन्द्र सरकार को देखकर ही मुझे आनन्द होता है, यही अहैतुकी भक्ति है। जरा आनन्द मिलता है तो क्या करूँ?

''अहल्या ने कहा था, 'हे राम! यदि शूकर-योनि मे मेरा जन्म हो तो उसके लिए भी कोई चिन्ता नही, परन्तु ऐसा करना कि तुम्हारे पादपद्मों मे मेरी शुद्धा भक्ति बनी रहे। मै और कुछ नही चाहती।'

''रावण को मारने की बात याद दिलाने के लिए नारद अयोध्या में श्रीरामचन्द्र से मिले थे। सीता और राम के दर्शन कर वे स्तुति करने लगे। उनकी स्तुति से सन्तुष्ट होकर श्रीरामचन्द्र ने कहा, 'नारद, तुम्हारी स्तुति से मैं प्रसन्न हूँ, अब कोई वर की प्रार्थना करो।' नारद ने कहा, 'राम, यदि मुझे वर दोगे ही तो यही वर दो कि तुम्हारे पादपद्मों मे मेरी शुद्धा भक्ति बनी रहे, और ऐसा करो कि फिर कभी तुम्हारी भुवन-मोहनी माया में मुग्ध न हो जाऊँ।' राम ने कहा, 'और कोई वर लो।' नारद ने कहा, 'मै और कुछ भी नहीं चाहता,

मुझे केवल तुम्हारे चरण-कमलों में शुद्धा भक्ति चाहिए।'

"इनका भी वही हाल है, जैसे ईश्वर को ही देखने की प्रार्थना करते हैं; देह-सुख, धन और मान यह कुछ नहीं चाहते। इसी का नाम शुद्धा भक्ति है।

"आनन्द कुछ होता है जरूर, परन्तु वह विषय का आनन्द नहीं है। वह भक्ति और प्रेम का आनन्द है। शम्भु ने कहा था, 'आप मेरे यहाँ अक्सर आते हैं, और यदि असल में देखा जाय तो आप इसीलिए आते है कि आपको मुझसे बातचीत करने मे आनन्द आता है।' हाँ, इतना आनन्द तो है ही।

"परन्तु इससे बढ़कर एक और अवस्थाहै। तब साधक बालक की तरह इधर-उधर घूमता है – इसका कोई कारण नहीं। कभी एक पतिंगे को ही पकड़ने लगता है।

(भक्तों से) "इनके (डाक्टर के) मन का भाव क्या है, तुमने समझा? वह है ईश्वर से यह प्रार्थना कि 'हे ईश्वर, सत्कर्म में मेरी मति हो, असत् कर्म से बचा रहूँ।'

"मेरी भी वही अवस्था थी। इसे दास्य-भाव कहते हैं। मैं 'माँ, माँ' कहकर इतना रोता था कि लोग खड़े हो जाते थे। मेरी इस अवस्था के बाद मुझे बिंगाड़ने के लिए और मेरा पागलपन अच्छा कर देने के विचार से एक आदमी मेरे कमरे में एक वेश्या ले आया – वह सुन्दरी थी, आँखें बड़ी बड़ी थीं। मैं 'माँ, माँ' कहता हुआ कमरे से निकल आया और हलधारी को पुकारकर कहा, 'दादा, आओ देखो तो, मेरे कमरे में कोई है!' हलधारी तथा अन्य लोगों से मैंने कह दिया। इस अवस्था में 'माँ, माँ' कहकर मैं रोता था और कहता था, 'माँ! मुझे बचा; माँ, मुझे निर्दोष कर दे; सत् को छोड़ असत् में मेरा मन न जाय।' तुम्हारा यह भाव तो अच्छा है – सच्चा भक्ति-भाव है दास-भाव।

"यदि किसी में शुद्ध सत्त्व आता है, तो बस वह ईश्वर की ही चिन्ता करता रहता है, उसे फिर और कुछ अच्छा नहीं लगता। कोई कोई प्रारब्ध के बल से जन्म के आरम्भ से ही सत्त्व गुण पाते हैं। कामनाशून्य होकर यदि कर्म करने का यत्न किया जाय, तो अन्त में शुद्ध सत्त्व का लाभ होता है।

"रजोमिश्रित सत्त्व गुण रहने से मन भिन्न भिन्न वस्तुओं की ओर खिंच जाता है। तब 'मैं संसार का उपकार करूँगा' यह अभिमान उत्पन्न होता है। मनुष्य जैसे क्षुद्र प्राणी के लिए संसार का उपकार करना बहुत ही कठिन है, परन्तु निष्काम भाव से परहित करने में दोष नहीं। यही निष्काम कर्म कहलाता है। उस तरह के कर्म करने की चेष्टा करना बहुत अच्छा है। परन्तु सब लोग नहीं कर सकते, बड़ा कठिन है। सभी को कार्य करना ही होगा, दो-एक आदमी ही कर्मों को छोड़ सकते हैं। दो-एक आदमियों में ही शुद्ध सत्त्व देखने को मिलता है। यह निष्काम कर्म करते करते रज से मिला हुआ सत्त्व गुण क्रमश: शुद्धसत्त्व हो जाता है।

"शुद्धसत्त्व होने पर उनकी कृपा से ईश्वर-प्राप्ति भी होती है।

"साधारण आदमी शुद्धसत्त्व की यह अवस्था नही समझ सकते। हेम ने मुझसे कहा था, 'क्यों भट्टाचार्य महाशय, संसार मे सम्मान की प्राप्ति ही मनुष्य-जीवन का मुख्य उद्देश्य है – क्यों? ' "

□□□

परिच्छेद १२७

ज्ञान-विज्ञान विचार

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा नरेन्द्र

नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुरवाले मकान में बैठे हुए हैं। दिन के दस बजे का समय होगा – २७ अक्टूबर १८८५, मंगलवार, आश्विन कृष्ण चतुर्थी।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र तथा मणि आदि से बातचीत कर रहे हैं।

नरेन्द्र – डाक्टर कल कैसी कैसी बातें कर गया!

एक भक्त – मछली काँटे में पड़ गयी थी, पर डोर तोड़कर निकल गयी।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – नहीं, तोड़ते समय काँटा उसके मुँह में रह गया। इसलिए वह लापता नहीं हो सकती; देखो मरकर, अभी उतरायेगी।

नरेन्द्र जरा बाहर गये, फिर आयेंगे। श्रीरामकृष्ण मणि के साथ पूर्ण के सम्बन्ध में बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – भक्त स्वयं को प्रकृति तथा भगवान को पुरुष मानकर उसे गले लगाने तथा चुम्बन करने की इच्छा करता है। पर यह तुम्हीं से कह रहा हूँ, सामान्य जीवों के सुनने की यह बात नहीं।

मणि – ईश्वर अनेक तरह से लीलाएँ करते हैं – आपका रोग भी लीला ही है। इस रोग के होने के कारण यहाँ नये नये भक्त आ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – भूपति कहता है, 'अगर आपको रोग न होता और किराये से मकान लेकर सिर्फ यहाँ रहते होते तो लोग क्या कहते?' – अच्छा, डाक्टर की क्या खबर है?

मणि – इधर दास्य-भाव मानता भी है – 'तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ', उधर यह भी कहता है कि आदमी के लिए ईश्वर की उपमा क्यों ले आते हो?

श्रीरामकृष्ण – खैर, क्या आज भी तुम उसके पास जा सकोगे?

मणि – खबर देने की अगर आवश्यकता होगी तो जाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – भला बंकिम कैसा लड़का है? यहाँ अगर वह न आ सके तो तुम्हीं

उसे कुछ बता देना। उससे उसका आध्यात्मिक ज्ञान जागृत होगा।

नरेन्द्र पास आकर बैठे। नरेन्द्र के पिता का स्वर्गवास हो जाने के कारण नरेन्द्र बड़ी चिन्ता में पड़ गये हैं। माँ और छोटे भाई हैं, उनके भरण-पोषण की चिन्ता रहती है। नरेन्द्र कानून की परीक्षा के लिए तैयारी कर रहे हैं। इधर कुछ दिन विद्यासागर के बहूबाजारवाले स्कूल में अध्यापक रह चुके हैं। घर का कोई प्रबन्ध करके निश्चिन्त होने की चेष्टा में लगे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण को सब कुछ मालूम है। वे नरेन्द्र की ओर स्नेह की दृष्टि से देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – अच्छा, केशव सेन से मैंने कहा, 'यदृच्छालाभ' (जो कुछ मिल जाय)। जो बड़े घराने का लड़का है, उसे भोजन की चिन्ता नहीं रहती – वह हर महीना जेब-खर्च पाता ही रहता है; परन्तु नरेन्द्र इतने ऊँचे घराने का है, उसके लिए कोई व्यवस्था क्यों नहीं हो जाती? ईश्वर को मन दे देने पर वे सब व्यवस्था कर देते हैं।

मास्टर – जी हाँ, कर देंगे। अभी सब समय बीता भी तो नहीं।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु तीव्र वैराग्य होने पर यह सब हिसाब नही रहता। 'घर का कुल प्रबन्ध करके तब साधना करूँगा' – तीव्र वैराग्य के होने पर इस तरह की बात पर ध्यान नहीं जाता। (सहास्य) गोसाई ने लेक्चर दिया था। उसने कहा, 'दस हजार रुपये हों तो इतने से भोजन-वस्त्र का प्रबन्ध आनन्द से हो सकता है और तब निश्चिन्त होकर ईश्वर का चिन्तन किया जा सकता है।'

"केशव सेन ने भी ऐसा ही इशारा किया था। उसने पूछा था – 'महाराज, कोई कुछ पूँजी जोड़कर अगर ईश्वर की उपासना करे तो क्या वह कर सकता है या नहीं? और इससे क्या किसी तरह का पाप-स्पर्श हो सकता है?'

"मैंने कहा, तीव्र वैराग्य होने पर संसार कुआँ और आत्मीय साँप की तरह जान पड़ते हैं। तब 'रुपये इकट्ठा करूँगा,' 'विषय संचय करूँगा' यह हिसाब नहीं रह जाता। ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु। ईश्वर को छोड़कर विषय की चिन्ता!

"एक स्त्री के ऊपर कोई बड़ा शोक आ पड़ा। पहले उसने अपनी नथ नाक से उतारकर सावधानी से कपड़े में लपेटकर बाँध ली, और फिर लगी रोने 'अरी मेरी मैया – मुझे यह क्या हुआ?' – और यह कहकर पछाड़ खाकर गिर पड़ी, – परन्तु वह भी सावधानी से कि कहीं बँधी हुई नथ टूट न जाय!"

सब हँस रहे हैं। नरेन्द्र पर ये बातें तीर की तरह चोट करने लगीं – वे एक ओर लेट रहे। उनके मन की अवस्था समझकर मास्टर ने हँसकर कहा, 'लेट क्यों रहे हो?'

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से, सहास्य) – यहाँ मुझे उस स्त्री की याद आती है जो अपने बहनोई के साथ रहने में लाज के कारण मरी जाती थी। उसे यह समझ में ही नहीं आता था कि जब उसे इतनी शरम है तो अन्य स्त्रियों को, जो पर-पुरुषों के साथ रहती

है, कैसे शरम नही लगती। वह कहती थी, 'आखिर बहनोई तो अपने ही घर का आदमी है, परन्तु फिर भी तो मै शरम से मरी जाती हूँ। – और इन औरतो की हिम्मत कैसे पड़ती है कि ये दूसरे आदमियो के साथ रहे।'

मास्टर खुद संसार मे है, उसके लिए उन्हे लज्जित होना चाहिए। वैसा न होकर वे नरेन्द्र पर हॅस रहे है। अपना दोष कोई नहीं देखता, दूसरो के दोष देखने के लिए सब दौड़ पड़ते है, यही बात श्रीरामकृष्ण के वाक्य से सूचित हो रही है। इसीलिए उन्होने उस स्त्री की बात चलायी जिसने दूसरी स्त्रियो के तो दोष देखे थे, यद्यपि वह स्वयं अपने बहनोई के साथ रहकर चरित्रभ्रष्ट हो गयी थी।

नीचे एक वैष्णव गा रहा था। गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होने वैष्णव को कुछ पैसे देने के लिए कहा। एक भक्त नीचे गया। बाद मे श्रीरामकृष्ण ने पूछा, 'कितने पैसे दिये?' उन्हे जब मालूम हुआ कि उस भक्त ने सिर्फ दो ही पैसे दिये तो वे बोले, "दो ही पैसे? हॉ, ठीक है। बड़ी मेहनत के रुपये है – मालिक की कितनी खुशामद करके उसने कमाया होगा। – अरे, मैंने सोचा था, कम से कम चार आने तो देगा!"

छोटे नरेन्द्र ने श्रीरामकृष्ण से कहा था, "मै यन्त्र लाकर आपको दिखलाऊँगा, विद्युत्-प्रवाह कैसा होता है।" आज वह यन्त्र लाकर उन्होने दिखाया।

दिन के दो बजे होगे। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठे हुए है। अतुल एक मित्र मुनसिफ को ले आये है। शिकदारपारा के प्रसिद्ध चित्रकार बागची आये हुए है। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को कई चित्र भेट किये।

श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक चित्र देख रहे है। षड्भुजा मूर्ति देखकर भक्तो से कह रहे है – 'देखो, देखो, कैसा है यह चित्र!' भक्तो ने फिर से देखने के लिए अहल्या-पाषाणी का चित्र ले आने के लिए कहा। चित्र मे श्रीरामचन्द्र को देखकर सब लोग प्रसन्न हो रहे है।

श्रीयुत बागची के केश स्त्रियो की तरह लम्बे है। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "बहुत दिन हो गये, दक्षिणेश्वर मे एक संन्यासी को मैने देखा था। उसके बाल नौ हाथ लम्बे थे। संन्यासी 'राधे-राधे' जपता था, कोई ढोग उसमे न था।"

कुछ देर बाद नरेन्द्र गाने लगे। गाने वैराग्य के भावो से ओत-प्रोत है। श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से तीव्र वैराग्य और संन्यास की बाते सुनकर नरेन्द्र को मानो उद्दीपन हो गया है। नरेन्द्र गा रहे है –

गाना – क्या मेरे दिन विफल ही बीत जायेगे? ...

गाना – ऐ अन्तर्यामिनी मॉ, तू अन्तर मे सदा ही जाग रही है।...

गाना – हे दयामय, हे नाथ, यदि तुम्हारे चरण-सरोजो मे मेरा मन-मधुप चिरकाल

के लिए मग्न न हुआ तो मेरे जीवन में सुख ही क्या है? ...

(२)

भजनानन्द में

साढ़े पाँच बजे का समय है। नरेन्द्र, श्याम बसु, गिरीश, डाक्टर दोकड़ी, छोटे नरेन्द्र, राखाल, मास्टर आदि बहुतसे भक्त उपस्थित हैं। डाक्टर सरकार ने आकर नाड़ी देखी और औषधि की व्यवस्था की।

पीड़ा-सम्बन्धी बातो के पश्चात्, श्रीरामकृष्ण के औषधि-सेवन के बाद डाक्टर सरकार ने कहा – 'अब आप श्यामबाबू से बातचीत कीजिये, मैं अब चलूँ।' श्रीरामकृष्ण और एक भक्त बोल उठे, 'गाना सुनियेगा?'

डाक्टर सरकार – आप गाते गाते जो नाचने लगते हैं वह भाव दबाना होगा।

डाक्टर फिर बैठ गये। नरेन्द्र मधुर कण्ठ से गा रहे है। साथ ही तानपूरा और मृदंग बज रहे है।

गाना – तुम्हारी रचना अपार चमत्कारों से भरी हुई है। यह विश्व-संसार शोभा का आगार हो रहा है। ....

गाना – माँ! घोर अन्धकार मे तुम्हारी अरूपराशि चमक रही है।...

डाक्टर मास्टर से कह रहे हैं – 'यह गाना उनके (श्रीरामकृष्ण के) लिए खतरनाक है।'

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से पूछा – 'ये क्या कह रहे हैं?' मास्टर ने कहा, 'डाक्टर को भय हो रहा है कि कहीं आपको भाव-समाधि न हो जाय।'

कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण भावस्थ हो रहे हैं। डाक्टर के मुँह की ओर हेर हाथ जोड़कर कह रहे है – 'नहीं, नहीं, क्यों भाव होगा?' परन्तु कहते ही कहते वे गम्भीर भावसमाधि में मग्न हो गये। शरीर निश्चल और नेत्र स्थिर हो गये! काठ के पुतले की तरह निर्वाक् बैठे हुए हैं! बाह्य जगत् का ज्ञान लेश मात्र नहीं है। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार, सब अन्तर्मुख हैं। अब ये पहलेवाले मनुष्य नहीं दीख पड़ते। नरेन्द्र मधुर कण्ठ से गा रहे हैं –

गाना – यह कैसी सुन्दर शोभा है! तुम्हारा कैसा सुन्दर मुख देख रहा हूँ! आज मेरे घर में हृदयनाथ आये हैं, प्रेम का फुहारा छूट रहा है। ...

गाना – हे दयामय, हे नाथ, यदि तुम्हारे चरण-सरोजों में मेरा मन-मधुप चिरकाल के लिए मग्न न हुआ तो मेरे जीवन में सुख ही क्या है? ...

इस गीत को सुनकर डाक्टर मुग्ध हो अश्रुपूर्ण लोचनों से बोल उठे, 'अहा! अहा!' नरेन्द्र ने पुनः गाया –

गाना – वह शुभ प्रभात कब आयेगा जब मेरे हृदय मे उस प्रेम का संचार होगा, जब मेरी कामनाएँ पूर्ण हो जायेगी, मैं मधुर हरिनाम करता रहूँगा और आँखो से प्रेमाश्रु-धारा बह चलेगी? ...

(३)

ज्ञान-विज्ञान विचार। ब्रह्मदर्शन।

श्रीरामकृष्ण को अब बाहरी संसार का ज्ञान हो गया है। गाना भी समाप्त हो गया। पण्डित, मूर्ख तथा आबाल-वृद्ध-वनिता सभी के मन को मुग्ध करनेवाली उनकी बातचीत फिर होने लगी। सभी मनुष्य स्तब्ध है। सब लोग उस मुख की ओर एकटक देख रहे है। अब वह कठिन पीडा कहाँ है? मुख अभी भी खिले हुए अरविन्द के समान प्रफुल्ल है – मुख से मानो ईश्वरी ज्योति निकल रही है।

श्रीरामकृष्ण डाक्टर से कहने लगे – "लज्जा छोड़ो, ईश्वर का नाम लोगे, इसमे लज्जा क्या है? लज्जा, घृणा और भय, इन तीनो के रहते ईश्वर नही मिलते। 'मै इतना बड़ा आदमी, और ईश्वर नाम लेकर नाचूं? यह बात जब बडे बड़े आदमी सुनेगे, तब मुझे क्या कहेंगे? अगर वे कहे, अजी, डाक्टर तो अब ईश्वर का नाम लेकर नाचने लगा, तो यह मेरे लिए बड़ी ही लज्जा की बात होगी।' इन सब भावो को छोड़ो।"

डाक्टर – मैं उस तरह का आदमी नही हूँ। लोग क्या कहेगे, इसकी मुझे रत्ती भर परवाह नही।

श्रीरामकृष्ण – इतना तो तुममे खूब है। (सब हँसते है)

"देखो, ज्ञान और अज्ञान के पार हो जाओ, तब उन्हे समझोगे। बहुत कुछ जानने का नाम है अज्ञान। पाण्डित्य का अहंकार भी अज्ञान है। एक ईश्वर ही सर्वभूतो मे है, इस निश्चयात्मिका बुद्धि का नाम है ज्ञान। उन्हे विशेष रूप से जानने का नाम है विज्ञान। पैर मे काँटा गड़ गया है, उसको निकालने के लिए एक दूसरे काँटे की जरूरत होती है। काँटे को काँटे से निकालकर फिर दोनो काँटे फेक दिये जाते है। पहले अज्ञानरूपी काँटे को दूर करने के लिए ज्ञानरूपी काँटे को लाना होता है। इसके बाद ज्ञान और अज्ञान दोनो को ही फेक देना पड़ता है; क्योकि वे ज्ञान और अज्ञान से परे है। लक्ष्मण ने कहा था, 'राम, यह कैसा आश्चर्य है! इतने बड़े ज्ञानी वशिष्ठ देव भी पुत्रो के शोक से विव्हल होकर रो रहे थे!' राम ने कहा, 'भाई, जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है, जिसे एक वस्तु का ज्ञान है, उसे अनेक वस्तुओ का भी ज्ञान है। जिसे उजाले का अनुभव है; उसे अँधेरे का भी है। ब्रह्म ज्ञान तथा अज्ञान से परे है; पाप और पुण्य, शुचिता और अशुचिता से परे है।' "

यह कहकर श्रीरामकृष्ण रामप्रसाद के गाने की आवृत्ति करके कहने लगे –

"आ मन। चल टहलने चले। काली-कल्पतरु के नीचे तुझे चारो फल पड़े मिल

जायेंगे ...।''

श्याम बसु – दोनो काँटों के फेंक देने पर फिर क्या रह जायेगा?

श्रीरामकृष्ण – नित्यशुद्धबोधरूपम्। यह तुम्हे भला कैसे समझाऊँ? अगर कोई पूछे कि तुमने जो घी खाया वह कैसा था, तो उसे किस तरह समझाया जाय? अधिक से अधिक इतना ही कह सकते हो कि घी जैसा होता है, बस वैसा ही था।

''एक स्त्री से उसकी एक सखी ने पूछा था, 'क्यो सखि, तेरा तो पति आया है, भला बता तो सही, पति के आने पर कैसा आनन्द मिलता है?' उस स्त्री ने कहा, 'यह तो तू तभी समझेगी जब तेरे भी स्वामी होगा; इस समय मै तुझे भला कैसे समझाऊँ!' पुराण में है, भगवती जब हिमालय के यहाँ पैदा हुई तब माता ने गिरिराज को अनेक रूपो से दर्शन दिया। गिरीन्द्र ने सब रूपो के दर्शन करके भगवती से कहा, 'बेटी, वेद में जिस ब्रह्म की बात है, अब मुझे उस ब्रह्म के दर्शन हों।' तब भगवती ने कहा, 'पिताजी, अगर ब्रह्म के दर्शन करना चाहते हो तो साधुओं का संग करो।' ब्रह्म क्या वस्तु है यह मुख से नही कहा जा सकता। एक ने कहा था, 'सब जूठा हो गया है, पर ब्रह्म जूठा नही हुआ।' इसका अर्थ यह है कि वेदो, पुराणों, तन्त्रों और शास्त्रो का मख से उच्चारण करने के कारण वे सब जूठे हो गये है ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ब्रह्म क्या वस्तु है, यह कोई अभी तक मुख से नही कह सका। इसीलिए ब्रह्म अभी तक जूठे नही हुए। सच्चिदानन्द के साथ क्रीड़ा और रमण कितने आनन्दपूर्ण है, यह मुख से नही कहा जा सकता। जिसे यह सौभाग्य मिला है, वही जानता है।''

(४)

पण्डित का अहंकार। पाप तथा पुण्य।

श्रीरामकृष्ण ने डाक्टर से फिर कहा – ''देखो, अहंकार के बिना गये ज्ञान नही होता। मनुष्य मुक्त तभी होता है जब 'मैं' दूर हो जाता है। 'मै' और 'मेरा' – यही अज्ञान है। 'तुम' और 'तुम्हारा' – यही ज्ञान है। जो सच्चा भक्त है, वह कहता है, 'हे ईश्वर! तुम्हीं कर्ता हो, तुम्हीं सब कुछ कर रहे हो, मै तो बस यन्त्र ही हूँ। मुझसे जैसा कराते हो, मैं वैसा ही करता हूँ। यह सब धन तुम्हारा है, ऐश्वर्य तुम्हारा है, संसार तुम्हारा है। तुम्हारा ही घर-परिवार है, मेरा कुछ भी नहीं, मैं दास हूँ। तुम्हारी जैसी आज्ञा होगी, उसी के अनुसार सेवा करने का मेरा अधिकार है।'

''जिन लोगों ने थोड़ीसी पुस्तकें पढ़ी हैं, उनमें अहंकार समा जाता है। कालीकृष्ण ठाकुर के साथ ईश्वरीय बाते हुई थीं। उसने कहा, 'वह सब मुझे मालूम है।' मैंने कहा, 'जो दिल्ली हो आया है, क्या वह कहता फिरता है कि मै दिल्ली हो आया – मैं दिल्ली हो आया? – क्या उसे इसके लिए घमण्ड हो सकता है? जो बाबू है, क्या वह कहता

फिरता है, मै बाबू हूँ?' "

श्याम बसु – वे (कालीकृष्ण ठाकुर) आपको बहुत मानते है।

श्रीरामकृष्ण – अजी क्या कहूँ, दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर की एक भंगिन को क्या ही अहंकार था। उसकी देह मे दो-एक गहने थे। वह जिस रास्ते से आ रही थी, उसी रास्ते से दो-एक आदमी उसकी बगल से निकल रहे थे। भंगिन ने उनसे कहा, 'ए, हट जा।' तब फिर दूसरे आदमियो के अहंकार की बात क्या कहूँ!

श्याम बसु – महाराज, जब ईश्वर ही सब कुछ कर रहे है तो फिर पाप का दण्ड कैसा?

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारी तो सुनार की-सी बुद्धि है।

नरेन्द्र – सुनार की बुद्धि अर्थात् calculating (बनियाई) बुद्धि।

श्रीरामकृष्ण – अरे भाई, तू आम खा ले और प्रसन्न हो जा। बगीचे मे कितने सौ पेड है, कितने हजार डालियाँ है, कितने कोटि पत्ते है, इन सब के हिसाब से तुझे क्या काम? तू आम खाने के लिए आया है, आम खा जा। (श्याम वसु से) तुम्हे इस संसार मे मनुष्य का शरीर ईश्वरप्राप्ति की साधना करने के लिए मिला है। ईश्वर के पाद-पद्मो मे किस तरह भक्ति हो उसी की चेष्टा करो। तुम्हे इन सब वृथा बातो से क्या मतलब? फिलॉसफी (दर्शन-शास्त्र) लेकर विचार करने से तुम्हारा क्या होगा? देखो, आध पाव शराब से ही तुम्हे नशा होता है, फिर शराबवाले की दूकान मे कितने मन शराब है, इसका हिसाब लगाकर क्या करोगे?

डाक्टर – और ईश्वर की शराब अनन्त है। कुछ पता ही नही कि कितनी है!

श्रीरामकृष्ण – (श्याम वसु से) – ईश्वर को आममुख्तारी क्यो नही दे देते? उस पर सारा भार छोड दो। अच्छे आदमी को अगर कोई भार दे दे, तो क्या वह कभी अन्याय कर सकता है? पाप का दण्ड वे देगे या नही यह वे जाने।

डाक्टर – उनके मन मे क्या है, यह वे जाने। आदमी हिसाब लगाकर क्या कहेगा? वे हिसाब से परे है।

श्रीरामकृष्ण – (श्याम बसु से) – तुम कलकत्तेवाले बस यही एक राग अलापते हो। तुम लोग यही कहा करते हो, 'ईश्वर मे पक्षपात है', क्योंकि एक को उन्होने सुख मे रखा है, और दूसरे को दु:ख मे। ये मूर्ख खुद जैसे है, उनके स्वयं के भीतर जैसा है, वैसा ही ये ईश्वर के भीतर भी देखते है।

"हेम दक्षिणेश्वर जाया करता था। मुलाकात होने पर ही मुझसे कहता था, 'क्यो भट्टाचार्य महाशय, संसार मे एक ही वस्तु है – मान – क्यो?' मनुष्य जीवन का उद्देश्य ईश्वर-लाभ है, यह इने-गिने लोग ही कहते है।".

(५)

स्थूल, सूक्ष्म, कारण तथा महाकारण

श्याम बसु – क्या कोई सूक्ष्म शरीर को दिखला सकता है? क्या कोई यह दिखला सकता है कि वह शरीर बाहर चला जाता है?

श्रीरामकृष्ण – जो सच्चे भक्त है, उन्हे क्या गरज कि वे तुम्हे यह सब दिखलाये? कोई साला माने या न माने, उनका इससे क्या बनता-बिगड़ता है! उनमे इस तरह की इच्छा नही रहती कि कोई बड़ा आदमी उन्हे माने।

श्याम बसु – अच्छा, स्थूल देह, सूक्ष्म देह, इन सब मे भेद क्या है?

श्रीरामकृष्ण – पंचभूत को लेकर जो देह है, वही 'स्थूल देह' है। मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त को लेकर 'सूक्ष्म शरीर' है। जिस शरीर से ईश्वर का आनन्द मिलता है और ईश्वर से सम्भोग किया जाता है, वह 'कारण शरीर' है। तन्त्रो मे उसे 'भगवती तनु' कहा है। सब से अतीत है 'महाकारण' (तुरीय), यह मुख से नही कहा जा सकता।

"केवल सुनने से क्या होगा? कुछ करो भी।

"भंग-भंग रटने से क्या होगा? उससे क्या कभी नशा हो सकता है?

"भंग को कूटकर देह मे लगाने से भी नशा नही होता। कुछ खाना चाहिए! कौनसा सूत चालीस नम्बर का है, और कौनसा इकतालीस नम्बर का, यह सब सूत का व्यवसाय बिना किये क्या कभी कहा जा सकता है? जिनका सूत का व्यवसाय है उनके लिए सूत की पहचान करना कोई कठिन बात नही। इसीलिए कहता हूँ, कुछ साधना करो, तब स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण किसे कहते है, यह समझ सकोगे। जब ईश्वर से प्रार्थना करोगे तब उनके पादपद्मो मे केवल भक्ति की प्रार्थना करना।

"अहल्या के शापमोचन के बाद श्रीरामचन्द्र ने उससे कहा, 'तुम मुझसे कोई वर-याचना करो।' अहल्या ने कहा, 'राम, यदि वर देना ही है, तो यही वर दो कि चाहे शूकर-योनि मे भी मेरा जन्म क्यो न हो, फिर भी तुम्हारे पादपद्मो मे मेरा मन लगा रहे।'

"मैने माता के पास एकमात्र भक्ति की प्रार्थना की थी। श्री माता के पादपद्मो मे फूल चढ़ाकर हाथ जोड़ मैने कहा था – 'माँ, यह लो तुम अपना ज्ञान और यह लो अज्ञान, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपनी शुचिता और यह लो अपनी अशुचिता, मुझे शुद्धा भक्ति दो, यह लो अपना पाप और यह लो अपना पुण्य, यह लो अपना भला और यह लो अपना बुरा, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना धर्म और यह लो अपना अधर्म, मुझे शुद्धा भक्ति दो।'

"धर्म अर्थात् दानादि कर्म, धर्म को लेने ही से अधर्म को लेना होगा, पुण्य को लेने ही से पाप को लेना होगा, ज्ञान को लेने ही से अज्ञान को लेना होगा, शुचिता को लेने ही

से अशुचिता को भी लेना होगा। जैसे, जिसे उजाले का ज्ञान है, उसे अँधेरे का भी ज्ञान है। जिसे एक का ज्ञान है, उसे अनेक का भी ज्ञान है। जिसे भले का विचार है, उसे बुरे का भी है।

"यदि शूकर का माँस खाकर भी ईश्वर के पादपद्मों में किसी की भक्ति हो, तो वह पुरुष धन्य है। और यदि हविष्य भोजन करके भी संसार में आसक्ति रही –"

डाक्टर – तो वह अधम है। यहाँ एक बात कहता हूँ। बुद्ध ने शूकर-मॉस खाया था। शूकर-माँस खाया नहीं कि पेट में शूल होने लगा! इस बीमारी में बुद्ध अफीम का सेवन करते थे! निर्वाण-सिर्वाण जानते हो क्या है? – बस अफीम खाकर पीनक मे पड़े रहते थे – बाह्य संसार का कुछ ज्ञान नहीं रहता था, – यही निर्वाण हो गया!

बुद्धदेव के निर्वाण की यह अनोखी व्याख्या सुनकर सब लोग हँसने लगे। फिर दूसरी बातचीत होने लगी।

(६)

गृहस्थ तथा निष्काम कर्म। थियॉसफी।

श्रीरामकृष्ण – (श्याम बसु से) – संसार-धर्म में दोष नहीं; परन्तु ईश्वर के पादपद्मों में मन रखकर, कामनारहित होकर कर्म करना चाहिए। देखो न, अगर किसी की पीठ में एक फोड़ा हो जाता है तो सब के साथ वह बातचीत भी करता है और घर के काम-काज भी देखता है, परन्तु उसका मन फोड़े पर ही लगा रहता है; इसी तरह, घर का कार्य करते हुए भी ईश्वर की ओर मन को लगाये रखना चाहिए।

"संसार में बदचलन औरत की तरह रहो। उसका मन तो यार पर लगा रहता है, पर वह घर का सब काम-काज सम्भालती रहती है। (डाक्टर से) समझे?"

डाक्टर – वह भाव अगर न रहे तो कैसे समझूँगा?

श्याम बसु – कुछ तो अवश्य ही समझते हो! (सब हॅसते हैं)

श्रीरामकृष्ण (हॅसते हुए) – और यह व्यवसाय (समझने का) वे बहुत दिनो से कर रहे हैं! क्यों जी? (सब हँसते हैं)

श्याम बसु – महाराज! थियॉसफी का क्या मत है?

श्रीरामकृष्ण – असल बात यह है कि जो लोग चेला बनाते फिरते हैं, वे हलके दर्जे के हैं। और जो लोग सिद्धि अर्थात् अनेक तरह की शक्तियाँ चाहते हैं, वे भी हलके दर्जे के हैं। जैसे, पैदल गंगा पार कर जाना, यह सिद्धि है। दूसरे देश में एक आदमी क्या बातचीत कर रहा है, यह कह सकना एक सिद्धि है। इन सब आदमियों के लिए ईश्वर पर भक्ति होना बहुत कठिन है।

श्याम बसु – परन्तु वे लोग (थियॉसफी सम्प्रदायवाले) हिन्दू धर्म को फिर से

स्थापित करने की चेष्टा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – मुझे उनके सम्बन्ध में काफी ज्ञान नहीं है।

श्याम बसु – मृत्यु के बाद जीवात्मा कहाँ जाता है – चन्द्रलोक में, नक्षत्रलोक में या अन्य किसी लोक में – ये सब बातें थियॉसफी से समझ में आ जाती हैं।

श्रीरामकृष्ण – होगा! मेरा भाव कैसा है, जानते हो? हनुमान से एक आदमी ने पूछा था, 'आज कौनसी तिथि है?' हनुमान ने कहा, 'मैं वार, तिथि, नक्षत्र, यह कुछ नहीं जानता, मै तो बस श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण किया करता हूँ।' मेरा भी ठीक ऐसा ही भाव है।

श्याम बसु – उन लोगों का 'महात्माओं' के अस्तित्व में विश्वास है। क्या आपका भी है?

श्रीरामकृष्ण – यदि तुम मेरी बात पर विश्वास करो तो हाँ, मुझे है। परन्तु ये सब बातें इस समय रहने दो। मेरी बीमारी कुछ अच्छी होने पर फिर आना। यदि तुम्हें मुझ पर विश्वास है तो तुम्हारे लिए ऐसा कोई मार्ग निकल आयगा जिससे तुम्हें मन की शान्ति प्राप्त हो जायगी। तुम तो देखते ही हो कि मैं धन या वस्त्र की कोई भेंट स्वीकार नही करता। यहाँ कोई अन्य भेंट भी नहीं देनी पड़ती, इसलिए यहाँ इतने लोग आया करते हैं! (सब हँसते हैं)

(डाक्टर से) "यदि तुम बुरा मत मानो तो तुमसे एक बात कहूँ। – यह सब तो बहुत किया – रुपया, मान, लेक्चर; अब थोड़ासा मन ईश्वर पर भी लगाओ। और यहाँ कभी कभी आया करो। ईश्वर की बातें सुनकर उद्दीपन होगा।"

कुछ देर बाद डाक्टर चलने के लिए उठे। इसी समय श्रीयुत गिरीशचन्द्र घोष आ गये और उन्होंने श्रीरामकृष्ण के चरणों की धूलि धारण कर आसन ग्रहण किया। उन्हें देखकर डाक्टर को प्रसन्नता हुई, वे फिर बैठ गये।

डाक्टर – मेरे रहते रहते ये नहीं आयेंगे! ज्योंही चलने का समय आया कि आकर हाजिर हो गये! (सब हँसते हैं)

गिरीश के साथ डाक्टर की विज्ञान-सभा (Science Association)-सम्बन्धी बातें होने लगीं।

श्रीरामकृष्ण – मुझे एक दिन वहाँ ले चलोगे?

डाक्टर – आप अगर वहाँ जायेंगे तो ईश्वर की आश्चर्यपूर्ण कारीगरी देखकर बेहोश हो जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण – हँ?

डाक्टर – (गिरीश से) – और चाहे सब काम करो, पर ईश्वर समझकर इनकी पूजा न किया करो। ऐसे भले आदमी को क्यों बिगाड़ रहे हो?

गिरीश – क्या करूँ महाशय? जिन्होंने इस संसार-समुद्र और सन्देह-सागर से मुझे पार किया, उन्हें और क्या मानूं बतलाइये। उनमें ऐसी एक भी चीज नहीं है जिसे मैं पवित्र न मानूँ। उनकी विष्ठा तक को तो मै गन्दी नहीं मानता।

डाक्टर – मै विष्ठा के लिए नहीं कहता; मुझे भी उससे घृणा नही है। एक दिन एक दूकानदार अपने बच्चे को दिखाने मेरे पास आया था। उस बच्चे ने वहीं टट्टी कर डाली। सब लोग कपड़े से नाक ढकने लगे। मै वहीं बाजू से आध घण्टे बैठा रहा, पर नाक में कपड़ा तक न लगाया। फिर, जब मेहतर मैले की टोकरी लिये मेरे पास से निकल जाता है, तब भी मै अपना नाक नहीं ढकता। मैं जानता हूँ, वह जो है मैं भी वही हूँ – मुझमें और उसमे कोई अन्तर नहीं। तब फिर उस पर क्यों घृणा करूँ? क्या मै इनके पैरों की धूलि नहीं ले सकना! – यह देखो – (श्रीरामकृष्ण की पद-धूलि धारण करते हैं।)

गिरीश – इस शुभ मुहूर्त पर देवदूत भी बधाई दे रहे हैं!

डाक्टर – तो पैरों की धूल लेने मे इतना आश्चर्य क्या है? मैं तो सब के पैरों की धूल ले सकता हूँ। दीजिये, दीजिये – (सब के पैरों की धूलि लेते हैं।)

नरेन्द्र – (डाक्टर से) – इन्हें हम लोग ईश्वर की तरह मानते हैं। जैसे उद्भिद् और जीव-जन्तुओं के बीच मे कुछ ऐसे जीवधारी होते है जिन्हें उद्भिद् या जन्तु बतलाना मुश्किल है, उसी तरह नर-लोक और देव-लोक के बीच में एक ऐसा स्थल है जहाँ यह बतलाना कठिन है कि यह व्यक्ति मनुष्य है या ईश्वर।

डाक्टर – अजी, ईश्वर की बात पर उपमा नहीं काम करती।

नरेन्द्र – मैं ईश्वर तो कह नहीं रहा, ईश्वर-तुल्य मनुष्य कह रहा हूँ।

डाक्टर – अपने इस तरह के भावों को दबा रखना चाहिए, खोलना अच्छा नहीं। मेरा भाव किसी ने नहीं समझा। मेरे परम मित्र मुझे घोर निर्दयी समझते हैं। और तुम्हीं लोग शायद एक दिन मुझे जूतों से मारकर भगा दोगे।

श्रीरामकृष्ण – (डाक्टर से) – यह क्या कहते हो? ऐसा मत कहो। ये लोग तुम्हें कितना प्यार करते हैं! नववधु जिस उत्सुकता से शयन-गृह में पति की प्रतीक्षा करती है, उसी उत्सुकता से ये लोग तुम्हारे आने की बाट जोहते रहते हैं!

गिरीश – (डाक्टर से) – सब लोगों की आप पर अत्यन्त श्रद्धा है।

डाक्टर – मेरा लड़का, यहाँ तक कि मेरी स्त्री भी मुझे निष्ठुर हृदय का मनुष्य समझती है। मेरा दोष केवल इतना ही है कि मैं किसी के पास अपने भाव प्रकट नहीं होने देता।

गिरीश – तब तो महाशय, आपके लिए यह अच्छा है कि आप अपने हृदय के कपाट खोल दें – कम से कम अपने मित्रों पर कृपा करके – यह सोचकर कि वे आपकी थाह नहीं पा रहे हैं।

डाक्टर – अजी कहूँ क्या, तुम्हारे से भी मेरा भाव अधिक उमड़ चलता है। (नरेन्द्र से) मैं एकान्त में आँसू बहाया करता हूँ।

(श्रीरामकृष्ण से) "अच्छा, भाव के आवेश में तुम दूसरों की देह पर पैर रख देते हो, यह अच्छा नहीं।"

श्रीरामकृष्ण – मुझे यह ज्ञान थोड़े ही रहता है कि मैं किसी की देह पर पैर रख रहा हूँ!

डाक्टर – वह अच्छा नही, इतना तो बोध होता होगा?

श्रीरामकृष्ण – भावावेश में मुझे क्या होता है, यह तुमसे कैसे कहूँ? उस अवस्था के बाद सोचता हूँ कि शायद इसीलिए मुझे रोग हो रहा है। ईश्वर के भावावेश में मुझे उन्माद हो जाता है। उन्माद में इस तरह हो जाता है, मैं क्या करूँ?

डाक्टर – ये (श्रीरामकृष्ण) मान गये। अपने कार्य के लिए ये पश्चात्ताप कर रहे हैं। यह कार्य अन्यायपूर्ण है, यह ज्ञान भी इन्हें है।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – तू तो बड़ा चण्ट है, इसका अर्थ इन्हें समझा क्यों नहीं देता?

गिरीश – (डाक्टर से) – महाशय, आपने समझने में भूल की है। उन्हें इस बात का दु:ख नहीं है कि उन्होंने समाधि-अवस्था में भक्तों के शरीर को स्पर्श किया। उनका स्वयं का शरीर नितान्त शुद्ध तथा पापरहित है। वे जो दूसरों को इस प्रकार छूते हैं, यह उन्हीं लोगों के कल्याणार्थ है। कभी कभी उनके मन में यह बात उठती है कि शायद उन लोगों के पाप अपने ऊपर ले लेने के कारण ही उन्हें यह शारीरिक कष्ट हुआ हो।

"आप अपनी ही बात सोचिये। एक बार आप को उदरशूल हुआ था। उस समय क्या आप दु:खित नहीं होते थे कि रात को इतनी इतनी देर तक जगकर क्यों पढ़ा? परन्तु इसका अर्थ क्या यह हुआ कि रात को देर तक पढ़ना कोई बुरी बात है? इसी प्रकार वे (श्रीरामकृष्ण) भी, सम्भव है, दु:खित हों कि वे रुग्ण हैं। परन्तु उससे उनके मन में यह भाव नहीं आता कि दूसरों के कल्याण के लिए उन्होंने उन लोगों को जो स्पर्श किया वह ठीक न था।"

डाक्टर कुछ लज्जित से हुए और गिरीश से कहा, 'मैं तुमसे हार गया, अपनी चरण-धूलि मुझे लेने दो।' (गिरीश के पैरों की धूल लेते हैं) (नरेन्द्र से) 'कोई कुछ भी कहे, गिरीश की बुद्धिमत्ता को मानना पड़ता है।'

नरेन्द्र – (डाक्टर से) – एक बात और देखिये। एक वैज्ञानिक आविष्कार के लिए आप अपने जीवन का उत्सर्ग कर सकते हैं, उस समय अपने शरीर और सुख दु:ख पर ध्यान भी न देंगे परन्तु ईश्वर-सम्बन्धी विज्ञान सब विज्ञानों में बड़ा है। तब क्या यह उनके (श्रीरामकृष्ण के) लिए स्वाभाविक नहीं है कि वे ईश्वर की प्राप्ति के लिए अपना शरीर

और स्वास्थ्य भी लगा दें?

डाक्टर – जितने भी धर्माचार्य हुए है – ईशू, चैतन्य, बुद्ध, मुहम्मद इन सब मे अन्त अन्त में अहंकार आ गया था – कहा – 'जो कुछ मै कहता हूँ, वही ठीक है।' कैसा आश्चर्यजनक!

गिरीश – (डाक्टर से) – महाशय, वही दोष आप पर भी लागू है। आप इन सब पर अहंकार का दोष लगा रहे हैं; आप उनमें बुराई देख रहे हैं। बस इसीलिए तो आप पर भी अहंकार का दोष लगाया जा सकता है।

डाक्टर चुप हो गये।

नरेन्द्र – (डाक्टर से) – इन्हें जो हम लोग पूजते है, वह पूजा मानो ईश्वर की ही पूजा है।

इन बातों को सुनकर श्रीरामकृष्ण बालक की तरह हँस रहे है।

□□□

परिच्छेद १२८

संसारी लोगों के प्रति उपदेश

(१)

'आम खाओ'

आज बृहस्पतिवार है। आश्विन की कृष्णा षष्ठी, २९ अक्टूबर, १८८५। श्रीरामकृष्ण बीमार है। श्यामपुकुर मे है। डाक्टर सरकार चिकित्सा कर रहे है। उनका मकान शाँखारिटोला मे है। श्रीरामकृष्ण की हालत प्रति दिन कैसी रहती है, इसकी खबर लेकर डाक्टर के यहाँ रोज आदमी भेजा जाता है। दिन के दस बजे का समय होगा, कलकत्ते मे डा सरकार के मकान पर मास्टर श्रीरामकृष्ण की हालत बताने के लिए आ पहुँचे।

डाक्टर – देखो, डा. बिहारी भादुड़ी की एक धुन है! कहता है, गटे (एक विख्यात जर्मन लेखक) की 'स्पिरिट' (सूक्ष्म शरीर) निकल गयी और गटे स्वयं उसे देख रहा था। कितने आश्चर्य की बात है!

मास्टर – श्रीरामकृष्णदेव कहते है, इन सब बातो से हमे क्या मतलब? हम लोग संसार मे इसलिए आये है कि ईश्वर के पादपद्मो मे भक्ति हो। वे कहते हे, एक आदमी एक बगीचे मे आम खाने के लिए गया था। वह एक कागज और पेन्सिल लेकर कितने पेड़ है, कितनी डालियाँ है, कितने पत्ते है, गिन-गिनकर लिखने लगा। बगीचे के एक आदमी से उसकी भेट हुई। उस आदमी ने पूछा, 'यह तुम क्या कर रहे हो? – और यहाँ तुम आये भी क्यो?' तब उसने कहा, 'यहाँ कितने पेड़ है, कितनी डालियाँ है, कितने पत्ते है, यही गिन रहा हूँ। यहाँ आम खाने के लिए आया हूँ।' बगीचे के आदमी ने कहा, 'आम खाने आये हो तो आम खा जाओ, – कितने पत्ते है, कितनी डालियाँ है, इन सब बातो से तुम्हे क्या काम?'

डाक्टर – परमहंस ने सार पदार्थ ग्रहण किया है।

फिर डाक्टर अपने होमिओपैथिक अस्पताल के सम्बन्ध मे बहुतसी बाते कहने लगे। कितने रोगी रोज आते है उनकी तालिका दिखलायी, और कहा, 'पहले पहल डाक्टरो ने मुझे निरुत्साहित कर दिया था। वे लोग अनेक मासिक पत्रो मे भी मेरे विरोध

मे लिखते थे' – आदि।

डाक्टर गाड़ी पर बैठे। साथ मास्टर भी चढ़े। डाक्टर रोगियो को देखते हुए जाने लगे। पहले चोरबागान, फिर माथाघसा गली, फिर पथरियाघट्टा, सब जगह के रोगियो को देखकर श्रीरामकृष्ण को देखने जायेगे। डाक्टर पथरियाघट्टा में ठाकुरों के एक मकान मे गये। वहाँ कुछ देर हो गयी। गाड़ी मे आकर फिर गप्प लड़ाने लगे।

डाक्टर – इस बाबू के साथ मेरी श्रीरामकृष्णदेव के बारे में बातचीत हुई, थियॉसफी की बातचीत हुई और फिर कर्नल अलकट की। इस बाबू से श्रीरामकृष्णदेव नाराज रहते है। इसका कारण जानते हो? यह बाबू कहता है, 'मै सब जानता हूँ।'

मास्टर – नही, नाराज क्यो होंगे? परन्तु इतना मैने भी सुना है कि एक बार भेट हुई थी। श्रीरामकृष्णदेव ईश्वर की बातचीत कर रहे थे। तब इन्होंने कहा था, 'हॉ, यह सब मैं जानता हूँ।'

डाक्टर – इस बाबू ने विज्ञान परिषद को ३२५०० रुपये का दान दिया है।

गाड़ी चलने लगी। बड़ाबाजार होकर लौट रही है। डाक्टर श्रीरामकृष्ण की सेवा के सम्बन्ध मे बातचीत करने लगे।

डाक्टर – तुम लोगों की क्या यह इच्छा है कि इन्हें दक्षिणेश्वर भेज दिया जाय?

मास्टर – नही, इससे भक्तों को बड़ी असुविधा होगी। कलकने मे रहने से हर समय आना-जाना लगा रह सकता है – देखने मे सुविधा होती है।

डाक्टर – यहॉ खर्च तो बहुत हो रहा होगा।

मास्टर – इसके लिए भक्तो को कोई कष्ट नही है। वे लोग जिस प्रकार भी सेवा हो सके यही चेष्टा कर रहे है। खर्च तो यहॉ भी है, वहॉ भी है। वहॉ जाने पर हम लोग हमेशा देख नही सकेंगे, यही एक चिन्ता की बात है।

(२)

संसार का स्वरूप तथा ईश्वरलाभ का उपाय

डाक्टर और मास्टर श्यामपुकुर के दुमँजले मकान में गये। उस मकान के ऊपर बाहरवाले बारामदे में दो कमरे है। एक की लम्बाई पूर्व और पश्चिम की ओर है, दूसरे की उत्तर और दक्षिण की ओर। इनमे से पहलेवाले कमरे मे जाकर उन्होने देखा, श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक बैठे हुए है। पास मे डाक्टर भादुड़ी तथा दूसरे भक्त है।

डाक्टर ने नाड़ी देखी। पीड़ा का सब हाल उन्होंने पूछकर मालूम किया।

क्रमश: ईश्वर के सम्बन्ध मे बातचीत होने लगी।

भादुड़ी – बात जानते हो, क्या है? सब स्वप्नवत्।

डाक्टर – सब कुछ भ्रम है। परन्तु किसको भ्रम है और क्यो भ्रम है? और सब

लोग भ्रम जानकर भी फिर बातचीत क्यो करते हैं? 'ईश्वर सत्य है और उसकी सृष्टि मिथ्या है' इसमें मैं विश्वास नहीं कर सकता।

श्रीरामकृष्ण – 'तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ' यह बड़ा सुन्दर भाव है। जब तक यह बोध है कि देह सत्य है, जब तक 'मैं' और 'तुम' का भाव बना हुआ है, तब तक सेव्य और सेवक भाव ही अच्छा है। 'मैं वही हूँ' इस तरह की बुद्धि अच्छी नहीं।

"अच्छा, मैं तुम्हें एक और बात बताऊँ? किसी कमरे को चाहे तुम एक किनारे से देखो या कमरे के भीतर से देखो, कमरा वही है।"

भादुड़ी – (डाक्टर से) – ये सब बातें वेदान्त में है। शास्त्र पढ़ो, तब समझोगे।

डाक्टर – क्यों? क्या ये शास्त्रो को पढ़कर विद्वान् हुए है? और यही बात तो ये भी कहते हैं। क्या बिना शास्त्रों को पढ़े हो नहीं सकता?

श्रीरामकृष्ण – अजी, पर मैंने कितने शास्त्र सुने है!

डाक्टर – केवल सुनने से बहुतसी भूलें रह सकती हैं। आपने केवल सुना ही नहीं!

फिर दूसरी बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – (डाक्टर से) – मैंने सुना है, तुम कहते हो कि मै (श्रीरामकृष्ण) पागल हूँ। इसी से ये लोग (मास्टर आदि की ओर इशारा करके) तुम्हारे पास नही जाना चाहते।

डाक्टर – (मास्टर की ओर देखकर) – मैं इन्हें पागल क्यों कहने लगा?

"परन्तु हाँ इनके अहंकार की बात अवश्य कही थी। भला ये आदमियों को पैरों की धूल क्यों लेने देते हैं?"

मास्टर – नहीं तो लोग रोने लगते है।

डाक्टर – वह उनकी भूल है, उन्हें समझना चाहिए।

मास्टर – क्यों? सर्वभूतों में क्या नारायण नही है?

डाक्टर – इसके लिए मुझे कोई आपत्ति नहीं। तो फिर तुम्हे सब के पैरों की धूल लेनी चाहिए।

मास्टर – किसी किसी मनुष्य में उनका प्रकाश अधिक है। पानी सब जगह है, परन्तु तालाब में, नदी मे, समुद्र में वह अधिक है। आप फैराडे को जितना मानियेगा, उतना ही क्या किसी नये 'बैचेलर ऑफ साइन्स' (Bachelor of Science) को भी मानियेगा?

डाक्टर – हाँ, यह मैं मानता हूँ। परन्तु ईश्वर को बीच में क्यों लाते हो?

मास्टर – हम लोग एक दूसरे को नमस्कार इसलिए करते हैं कि सब के हृदय में ईश्वर का वास है। इन विषयों को आपने न तो अधिक पढ़ा है और न इन पर विचार ही किया है।

श्रीरामकृष्ण – (डाक्टर से) – किस किसी वस्तु मे उनका प्रकाश अधिक है। तुमसे तो मैने कहा, सूर्य की किरणे मिट्टी मे गिरती है तो प्रकाश एक तरह का होता है, पेड़ो मे और तरह का, फिर आईने मे एक दूसरा ही प्रकाश देखने को मिलता है। देखो न, प्रह्लाद आदि और ये लोग क्या बराबर है? प्रह्लाद का जीवन और मन, सर्वस्व ही ईश्वर को अर्पित हो चुका था।

डाक्टर चुप हो रहे। सब लोग चुप है।

श्रीरामकृष्ण – (डाक्टर से) – देखो, यहाँ के लिए (स्वयं को इंगित करके) तुम्हारे हृदय मे कुछ प्रेम का आकर्षण है। तुमने मुझसे कहा था कि तुम मुझे चाहते हो।

डाक्टर – तुम प्रकृति के शिशु हो, इसीलिए इतना कहता हूँ। लोग पैरो पर हाथ रखकर नमस्कार करते है, इससे मुझे कष्ट होता है। मै सोचता हूँ, ऐसे भले आदमी को भी ये लोग बिगाड रहे है। केशव सेन को उसके चेलो ने ऐसे ही बिगाडा था। तुम्हे यह बतलाता हूँ, सुनो –

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारी बात मै क्या सुनूँ? तुम लोभी, कामी और अहंकारी हो।

भादुडी – (डाक्टर से) – अर्थात् तुममे जीवत्व है। जीवो का धर्म यही है – रुपया-पैसा, मान-मर्यादा का लोभ, काम और अहंकार। सब जीवो का यही धर्म है।

डाक्टर – ऐसा अगर कहो तो बस तुम्हारे गले की बीमारी देखकर चला जाया करूँगा। दूसरी बातो की आवश्यकता न रह जायगी। तर्क अगर करना होगा तो ठीक ही ठीक कहूँगा।

सब चुप है। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर भादुडी से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – बात यह है कि ये (डा. सरकार) इस समय नेति-नेति करके अनुलोम मे जा रहे है। जब विलोम मे आयेंगे तब सब मानेंगे।

"केले के खोल निकालते रहने से उसका माझा मिलता है।

"खोल एक अलग चीज है ओर माझा एक अलग चीज। न माझा को कोई खोल कह सकता है और न खोल को माझा, परन्तु अन्त मे आदमी देखता है, खोल का ही माझा है और माझे का ही खोल। चौबीसो तत्त्व वे ही हुए है और मनुष्य भी वे ही हुए है। (डाक्टर से) भक्त तीन तरह के है – अधम भक्त, मध्यम भक्त और उत्तम भक्त। अधम भक्त कहता है, 'ईश्वर वहाँ दूर है, सृष्टि अलग है, ईश्वर अलग है।' मध्यम भक्त कहता है, 'वे अन्तर्यामी है, वे हृदय मे है।' वह हृदय के भीतर ईश्वर को देखता है। उत्तम भक्त देखता है, वे ही यह सब हुए है, चौबीसो तत्त्व वे ही हुए है। वह देखता है, ईश्वर ऊर्ध्व और अधोभाग मे पूर्ण रूप से विराजमान है।

"तुम गीता, भागवत, वेदान्त आदि पढो तो सब समझ सकोगे।

"क्या ईश्वर इस सृष्टि मे नही है?"

डाक्टर – नहीं, वे सब जगह है, और इसीलिए उनकी खोज हो नही सकती।

कुछ देर बाद दूसरी बाते होने लगी। श्रीरामकृष्ण को सदा ही ईश्वरभाव हुआ करता है, इससे बीमारी के बढ़ने की सम्भावना है।

डाक्टर – (श्रीरामकृष्ण से) – भाव को दबा रखिये। मुझे भी बहुत भाव होता है। तुमसे भी अधिक नाच सकता हूँ।

छोटे नरेन्द्र – (हँसकर) – भाव अगर कुछ और बढ़ जाय तब आप क्या करेंगे?

डाक्टर – उसके दबाने की मेरी शक्ति भी साथ ही बढ़ती जायगी।

श्रीरामकृष्ण तथा मास्टर – अभी आप वैसा कह सकते है।

मास्टर – भाव होने पर क्या आप कह सकते है?

कुछ देर बाद रुपये-पैसे की बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – (डाक्टर से) – मैं तो इसके बारे मे सोचता ही नही हूँ; और यह बात तुम भी जानते हो। क्यो ठीक है न? यह ढोग नही है।

डाक्टर – मेरा भी यही हाल है। आपकी बात तो अलग। मेरा रुपयो का सन्दूक तो खुला ही पड़ा रहता है।

श्रीरामकृष्ण – यदु मल्लिक भी इसी तरह दूसरे ख्याल मे पड़ा रहता है। जब भोजन करने बैठता है, उस समय भी इतना अन्यमनस्क रहता है कि भला-बुरा जो कुछ सामने आया वही खा लेता है। किसी ने अगर कहा, 'इसे मत खाना, यह अच्छी नही लगती', तब कहता है, 'क्या? यह तरकारी अच्छी नही? हाँ, सच ही तो है।'

क्या श्रीरामकृष्ण यह सूचित कर रहे है कि ईश्वर-चिन्तन से होनेवाली अन्यमनस्कता तथा विषय-चिन्तन से होनेवाली अन्यमनस्कता मे बहुत अन्तर है?

फिर भक्तो की ओर देख श्रीरामकृष्ण डाक्टर की ओर इशारा करके कह रहे है – "देखो, सिद्ध होने पर चीज नरम हो जाती है। पहले ये बड़े कड़े थे, अभी भीतर से नरम हो रहे है।"

डाक्टर – सिद्ध होने पर चीज ऊपर से ही नरम होती है, परन्तु इस जीवन मे मेरे लिए यह बात नही होने की! (सब हँसते है)

डाक्टर बिदा होनेवाले है। श्रीरामकृष्ण से कह रहे है –

"पैरों की धूल लोग लेते है, उन्हे क्या तुम मना नही कर सकते?"

श्रीरामकृष्ण – क्या सब लोग अखण्ड सच्चिदानन्द को पकड़ सकते है?

डाक्टर – इसलिए क्या जो मत ठीक है वह आप लोगो को नही बतलायेगे?

श्रीरामकृष्ण – लोगो की अलग अलग रुचि होती है। और फिर आध्यात्मिक जीवन के लिए सब लोग एक समान अधिकारी नही होते।

डाक्टर – वह किस प्रकार?

श्रीरामकृष्ण – रुचि-भेद किस तरह का है, जानते हो? जिसे जो भोजन रुचता है तथा सह्य है, उसी प्रकार का भोजन वह करता है। कोई मछली का शोरवा पसन्द करता है, तो किसी को तली हुई मछलियाँ अच्छी लगती है, कोई उनकी तरकारी बनाकर खाता है, तो कोई पुलावा बनाकर। उसी तरह अधिकारी-भेद भी है। मै कहता हूँ, पहले केले के पेड़ में निशाना साधो, फिर दीपक की लौ पर, बाद मे उड़ती हुई चिडिया पर।

शाम हो गयी। श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन मे मग्न हुए। इतनी पीड़ा है, परन्तु वह मानो एक ओर पड़ी रही। दो-चार अन्तरंग भक्त पास बैठे हुए सब देख रहे है श्रीरामकृष्ण बड़ी देर तक इसी अवस्था मे रहे।

श्रीरामकृष्ण प्राकृत अवस्था मे आये। मणि पास बैठे हुए है। उनसे एकान्त मे कह रहे है – "देखो, अखण्ड मे मन लीन हो गया था। इसके बाद जो कुछ देखा, उसके सम्बन्ध मे बहुतसी बाते है। डाक्टर को देखा, उसकी बन जायगी – कुछ दिन बाद। अब अधिक कुछ उससे कहने की आवश्यकता नही। एक आदमी को और देखा। मन मे यह उठा कि उसे भी ले लूँ। उसकी बात तुम्हे बाद मे बताऊँगा।"

श्रीयुत श्याम बसु, डा दोकडी तथा और भी दो-एक आदमी आये हुए है। अब श्रीरामकृष्ण उन लोगो के साथ बातचीत कर रहे है।

श्याम बसु – अहा! उस दिन वह बात जो आपने कही थी कितनी सुन्दर है!

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – वह कौनसी बात है?

श्याम बसु – वही, ज्ञान और अज्ञान से पार हो जाने पर क्या रहता है, इसके सम्बन्ध मे आपने जो कुछ कहा था।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – वह विज्ञान है। और अनेक प्रकार के ज्ञान का नाम अज्ञान है। सर्वभूतो मे ईश्वर का वास है, इसका नाम है ज्ञान। विशेष रूप से जानने का नाम है विज्ञान। ईश्वर के साथ आलाप, उनमे आत्मीयो जैसा भाव अगर हो तो वह विज्ञान है।

"लकड़ी मे आग है, अग्नितत्त्व है, इस बोध का नाम है ज्ञान। लकड़ी जलाकर रोटियाँ सेककर खाना और खाकर हृष्ट-पुष्ट होना यह है विज्ञान।"

श्याम बसु – (सहास्य) – और वह काँटो की बात!

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हाँ, जैसे पैर मे काँटा लग जाने से उसे निकालने के लिए एक और काँटा ले आया जाता है। फिर पैर मे गड़े हुए काँटे को निकालकर दोनो ही काँटे फेक दिये जाते है। उसी तरह अज्ञान-काँटे को निकालने के लिए ज्ञानकाँटे की खोज की जाती है। अज्ञान-नाश के बाद फिर ज्ञान और अज्ञान दोनो को फेक देना होता है। तब विज्ञान की अवस्था आती है।

श्रीरामकृष्ण श्याम बसु पर प्रसन्न हुए है। श्याम बसु की उम्र अधिक हो गयी है, अब उनकी इच्छा है, कुछ दिन ईश्वर-चिन्तन करे। श्रीरामकृष्णदेव का नाम सुनकर यहाँ आये

हुए है। इसके पहले वे एक दिन और आये थे।

श्रीरामकृष्ण – (श्याम बसु से) – विषय-चर्चा बिलकुल छोड़ देना। ईश्वरीय बातचीत छोड़ और किसी विषय की बातचीत न करना। विषयी आदमी को देखकर धीरे धीरे वहाँ से हट जाना। इतने दिन संसार करके तुमने देखा तो, सब खोखलापन है। ईश्वर ही वस्तु है, और सब अवस्तु। ईश्वर ही सत्य है, और सब दो दिन के लिए है। संसार मे है क्या? बस गुठली चाटना ही है। उसे चाटने की इच्छा तो होती है, परन्तु गुठली मे है क्या?

श्याम बसु – जी हॉ, आप सच कहते है।

श्रीरामकृष्ण – बहुत दिनो तक लगातार तुम विषय-कार्य करते रहे हो, अतएव इस समय इस गुल-गपाड़े मे ध्यान और ईश्वर की चिन्ता न होगी। जरा निर्जन मे रहना चाहिए। निर्जन के बिना मन स्थिर न होगा, इसीलिए घर से कुछ दूर पर ध्यान करने का स्थान तैयार करना चाहिए।

श्यामबाबू कुछ देर के लिए चुप हो रहे, जैसे कुछ सोचते हो।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – और देखो, तुम्हारे दॉत भी सब गिर गये है, अब दुर्गा-पूजा के लिए इतना उत्साह क्यो? (सब हँसते है)

"एक ने एक से पूछा, 'क्यो जी, तुम दुर्गा-पूजा अब क्यो नही करते?' उस आदमी ने उत्तर देते हुए कहा, 'भाई, अब दॉत नही रह गये, मॉस खाने की शक्ति अब नही रह गयी।' "

श्याम बसु – अहा! बातो मे मानो मिश्री घुली हुई है!

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – इस संसार मे बालू और शक्कर एक साथ मिले हुए है। चीटी की तरह बालू का त्याग करके चीनी को निकाल लेना चाहिए। जो चीनी ले सकता है, वही चतुर है। उनकी चिन्ता करने के लिए एक निर्जन स्थान ठीक करो – ध्यान करने की जगह तुम एक बार करो तो। मै भी आऊँगा।

सब लोग कुछ देर के लिए चुप है।

श्याम बसु – महाराज, क्या जन्मान्तर है? क्या फिर जन्म लेना होगा?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर से कहो, अन्तर से उन्हे पुकारो, वे सुझा देते है, सुझा देगे। यदु मल्लिक से बातचीत करो तो वह बता देगा कि उसके कितने मकान है और कितने रुपयो के कम्पनी के कागज है। पहले से इन सब बातो को जानने की चेष्टा करना ठीक नही। पहले ईश्वर को प्राप्त करो, फिर जो कुछ जानने की तुम्हारी इच्छा होगी, वे तुम्हे बतला देगे।

श्याम बसु – महाराज, मनुष्य संसार मे रहकर न जाने कितने अन्याय, कितने पापकर्म करता है। क्या वह मनुष्य ईश्वर को पा सकता है?

श्रीरामकृष्ण – देह-त्याग से पहले अगर कोई ईश्वर-दर्शन के लिए साधना करे और साधना करते हुए, ईश्वर को पुकारते हुए यदि देह का त्याग हो, तो पाप उसे कब स्पर्श कर सकेगा? हाथी का स्वभाव है कि नहला देने के बाद भी वह देह पर धूल डालने लगता है, परन्तु महावत अगर नहलाकर उसे फीलखाने मे बॉध दे, तो फिर हाथी देह पर धूल नही डाल सकता।

खुद को कठिन पीड़ा होते हुए भी अहैतुक कृपासिन्धु श्रीरामकृष्ण जीवो के दुःख से कातर हो उठा करते है, दिवानिशि जीवो की मंगल-कामना किया करते है। यह देखकर भक्तगण निर्वाक् है। श्रीरामकृष्ण श्याम बसु को हिम्मत बॅधा रहे है – "ईश्वर को पुकारते हुए अगर देह का नाश हो तो फिर पाप स्पर्श नही कर सकता।"

□□□

परिच्छेद १२९

योग तथा पाण्डित्य

(१)

श्यामपुकुर में भक्तों के संग में

आज शुक्रवार है, आश्विन की सप्तमी, ३० अक्टूबर १८८५। श्रीरामकृष्ण चिकित्सा के लिए श्यामपुकुर आये हुए हैं। दुमँजले के एक कमरे में बैठे हुए है, दिन के नौ बजे का समय होगा, मास्टर से एकान्त मे बातचीत कर रहे है। मास्टर डाक्टर सरकार के यहाँ जाकर पीड़ा की खबर देगे और उन्हे साथ ले आयेंगे। श्रीरामकृष्ण का शरीर इतना अस्वस्थ तो है, परन्तु इतने पर भी वे दिन-रात भक्तों की मंगल-कामना और उनके लिए चिन्ता किया करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से, सहास्य) – आज सबेरे पूर्ण आया था। बहुत अच्छा स्वभाव हो गया है। मणीन्द्र का प्रकृति-भाव है। कितने आश्चर्य की बात है! चैतन्य-चरित पढ़कर उसके मन में गोपीभाव, सखीभाव की धारणा हो गयी है - यह भाव कि 'ईश्वर पुरुष हैं और मैं मानो प्रकृति।'

मास्टर – जी हाँ।

पूर्णचन्द्र स्कूल में पढ़ता है, उम्र १५-१६ साल की होगी। पूर्ण को देखने के लिए श्रीरामकृष्ण बहुत व्याकुल होते है। परन्तु घरवाले उसे आने नहीं देते। पहले-पहल एक रात को पूर्ण को देखने के लिए वे इतने व्याकुल हुए थे कि उसी समय वे दक्षिणेश्वर से एकाएक मास्टर के घर चले गये थे। मास्टर ने पूर्ण को घर से ले आकर साक्षात् करा दिया था। ईश्वर को किस तरह पुकारना चाहिए आदि बातें उसके साथ करने के पश्चात् वे दक्षिणेश्वर लौटे थे।

मणीन्द्र की उम्र भी १५-१६ साल की होगी, भक्तगण उसे 'खोखा' कहकर पुकारते थे। वह बालक ईश्वर के नाम-संकीर्तन को सुनकर भावावेश में नाचने लगता था।

(२)

डाक्टर तथा मास्टर

दिन के साढ़े दस बजे का समय है। मास्टर डाक्टर सरकार के घर आये हुए हैं। रास्ते पर दुमँजले के बैठकखाने का बरामदा है, वहीं वे डाक्टर के साथ बेंच पर बैठे हुए बातचीत कर रहे हैं। डाक्टर के सामने ग्लास-केस में पानी है और उसमें लाल मछलियाँ क्रीड़ा कर रही हैं। डाक्टर रह-रहकर इलायची का छिलका पानी में डाल रहे हैं और मैदे की गोलियाँ बनाकर छत पर फेंक रहे हैं, गौरैयों को चुगाने के लिए। मास्टर बैठे हुए देख रहे हैं।

डाक्टर – (मास्टर से, सहास्य) – यह देखो, ये (लाल मछलियाँ) मेरी ओर देख रही है, जैसे भक्त भगवान की ओर देख रहे हों; परन्तु इन्होंने यह नहीं देखा कि मैंने इधर इलायची का छिलका फेंका है। इसीलिए कहता हूँ; केवल भक्ति से क्या होगा? ज्ञान चाहिए। (मास्टर हँस रहे हैं) और वह देखो, गौरैये उड़ गये; उधर मैंने मैदे की गोली फेंकी तो उन्हें इससे भय हो गया। उनमें भक्ति नहीं है, क्योंकि उनमें ज्ञान नही। वे जानती नहीं कि यह उनके खाने की चीज है।

डाक्टर बैठकखाने में आकर बैठे। चारों ओर आलमारी में ढेरों पुस्तकें रखी हैं। डाक्टर जरा विश्राम कर रहे हैं। मास्टर पुस्तक देख रहे हैं और एक एक पुस्तक लेकर पढ़ रहे हैं। अन्त में कैनन-फैरर की लिखी ईशु की जीवनी थोड़ी देर पढ़ते रहे।

डाक्टर बीच-बीच में गप्पें भी लड़ा रहे हैं। कितने कष्ट से होमियोपैथिक अस्पताल बना था, इस सम्बन्ध की चिट्ठियाँ और दूसरे दूसरे कागजात मास्टर से पढ़ने के लिए कहा। और कहा, "ये सब चिट्ठियाँ १८७६ के 'कलकत्ता जनरल ऑफ मेडीसीन्' में मिलेगी।" होमियोपैथी पर डाक्टर का बड़ा विश्वास है।

मास्टर ने एक और पुस्तक उठायी, मुँगर कृत 'नया धर्म' (Munger's New Theology)। डाक्टर ने उसे देखा।

डाक्टर – मुँगर के सिद्धान्त युक्तियों और तार्किक विचारों पर अवलम्बित हैं। इसमें ऐसा नहीं लिखा है कि चैतन्य, बुद्ध या ईशु ने अमुक बात कही है, अतएव इसे मानना चाहिए।

मास्टर – (हँसकर) – चैतन्य और बुद्ध की बातें नही, परन्तु मुँगर ने कही, इसलिए बात माननीय है!

डाक्टर – तुम्हारी इच्छा, चाहे जो कहो।

मास्टर – हाँ, किसी न किसी का नाम प्रमाण के लिए लेना ही पड़ता है, इसलिए मुँगर का ही नाम सही! (डाक्टर जोर से हँसते हैं)

डाक्टर गाड़ी पर बैठे, साथ साथ मास्टर भी। गाड़ी श्यामपुकुर की ओर जा रही है।

दोपहर का समय है। दोनों बातचीत करते हुए जा रहे हैं। डाक्टर भादुड़ी की चर्चा भी बीच-बीच में आती है, क्योंकि ये श्रीरामकृष्ण के पास कभी-कभी आते हैं।

मास्टर – (सहास्य) – आपके लिए भादुड़ी ने कहा है कि ईंट और पत्थर से जन्म फिर शुरू करना होगा।

डाक्टर – वह कैसा?

मास्टर – आप महात्मा, सूक्ष्म शरीर आदि बातें तो मानते नहीं। भादुड़ी महाशय, जान पड़ता है, थियोसफिस्ट हैं; इसके अतिरिक्त आप अवतार लीला भी नहीं मानते। इसीलिए उन्होंने शायद हँसी में कहा था कि अब की बार मरने पर आपका मनुष्य के घर जन्म तो होगा ही नहीं, कोई जीव-जन्तु, पेड़-पौधा भी आप न होंगे। आपको कंकड़-पत्थर से ही श्रीगणेश करना होगा! फिर बहुत से जन्मों के बाद आदमी हों तो हो।

डाक्टर – अरे बाप रे!

मास्टर – और यह भी कहा है कि साइन्स के सहारे आपका जो ज्ञान है, वह मिथ्या है; क्योंकि वह अभी अभी है और अभी अभी नहीं। उन्होंने उपमा भी दी है। जैसे दो कुएँ है। एक में नीचे स्रोत है, उसी से पानी आता है। दूसरे में स्रोत नहीं है, वह बरसात के पानी से भर गया है। वह पानी अधिक दिन रुक नहीं सकता। आपका साइन्स का ज्ञान भी बरसात के पानी की तरह है, वह सूख जायेगा।

डाक्टर – (जरा हँसकर) – अच्छा, यह बात! –

गाड़ी कार्नवालिस स्ट्रीट पर आयी। डाक्टर सरकारने डाक्टर प्रताप मुजुमदार को गाड़ी में बिठा लिया। डा. प्रताप कल श्रीरामकृष्ण को देखने गये थे। वे सब श्यामपुकुर आ पहुँचे।

(३)

ज्ञानी का ध्यान। जीवन का उद्देश्य

श्रीरामकृष्ण उसी दुमँजले के कमरे में बैठे हुए हैं। पास कोई भक्त भी हैं। डाक्टर और प्रताप के साथ बातचीत हो रही है।

डाक्टर – (श्रीरामकृष्ण से) – फिर खाँसी* हुई? (सहास्य) काशी जाना अच्छा भी तो है! (सब हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – उससे तो मुक्ति होती है। मैं मुक्ति नहीं चाहता, मैं तो भक्ति चाहता हूँ। (डाक्टर और भक्तगण हँस रहे हैं)

श्रीयुत प्रताप डाक्टर भादुड़ी के जामाता हैं। श्रीरामकृष्ण प्रताप को देखकर भादुड़ी

* बंगला में खाँसी को 'काशी' कहते हैं, और काशी बनारस का भी नाम है।

के गुणों का वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (प्रताप से) – अहा! वे कैसे सुन्दर आदमी हो गये हैं! ईश्वर-चिन्ता, शुद्धाचार और निराकार-साकार सब भावों को उन्होंने ग्रहण कर लिया है।

मास्टर की बड़ी इच्छा है कि कंकड़ और पत्थरों की बात फिर हो। छोटे नरेन्द्र से धीरे धीरे कह रहे है, 'कंकड़-पत्थरों की कौनसी बात भादुड़ी ने कही थी, तुम्हें याद है?' मास्टर ने इस ढंग से कहा जिससे श्रीरामकृष्ण भी सुन सकें।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य, डाक्टर से) – और तुम्हारे लिए उन्होंने (डा. भादुड़ी ने) क्या कहा है, जानते हो? उन्होंने कहा कि तुम यह सब विश्वास नहीं करते इसलिए अगले कल्प में कंकड़-पत्थर के रूप में जन्म लेकर तुम्हें आरम्भ करना होगा। (सब लोग हँसते हैं)

डाक्टर – (सहास्य) – अच्छा, मान लीजिये कि कंकड़-पत्थर से ही आरम्भ कर कितने ही जन्मों के बाद मैं मनुष्य हो जाऊँ, पर यहाँ (श्रीरामकृष्ण के पास) आने से तो मुझे फिर एक बार कंकड़-पत्थर से ही शुरू करना होगा! (डाक्टर और सब लोग हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण इतने अस्वस्थ हैं, फिर भी उन्हे ईश्वरीय भावों का आवेश होता है। वे सदा ईश्वरीय चर्चा किया करते हैं। इसी सम्बन्ध मे बातचीत हो रही है।

प्रताप – कल मैं देख गया, आपकी भाव की अवस्था थी।

श्रीरामकृष्ण – वह आप ही आप हो गयी थी, प्रबल, नहीं थी।

डाक्टर – बातचीत करना और भावावेश होना, ये इस समय आपके लिए अच्छे नहीं।

श्रीरामकृष्ण – (डाक्टर से) – कल जो भावावस्था हुई थी, उसमे मैंने तुम्हें देखा। देखा, ज्ञान का आकर है, परन्तु भीतर एकदम सूखा हुआ – आनन्द-रस नहीं मिला। (प्रताप से) ये (डाक्टर) यदि एक बार आनन्द पा जायँ तो अध:-ऊर्ध्व सब आनन्द से पूर्ण देखेगे। फिर 'मैं जो कुछ कहता हूँ वही ठीक है, और दूसरे जो कुछ कहते हैं वह ठीक नहीं', आदि बातें फिर ये बिलकुल ही न कहेंगे – और फिर इनकी लट्ठमार बाते भी छूट जायेंगी।

भक्तगण चुप हैं। एकाएक श्रीरामकृष्ण भावावेश में डाक्टर सरकार से कह रहे हैं –

"महीन्द्रबाबू, तुम क्या रुपया-रुपया कर रहे हो! – बीबी-बीबी! – मान-मान! ये सब इस समय छोड़कर एकचित्त हो ईश्वर में मन लगाओ और ईश्वर के आनन्द का उपभोग करो!"

डाक्टर सरकार चुप हैं। सब लोग चुप हैं।

श्रीरामकृष्ण – न्यांगटा ज्ञानी के ध्यान की बात कहता था। पानी ही पानी है, अधः-ऊर्ध्व उसी से पूर्ण है। जीव मानो मीन है, उस पानी में आनन्द से तैर रहा है। यथार्थ ध्यान होने पर इसे प्रत्यक्ष रूप से देख सकोगे।

"अनन्त समुद्र है, पानी का कही अन्त नही। उसके भीतर मानो एक घट है। उसके बाहर भी पानी है और भीतर भी। ज्ञानी देखता है, भीतर और बाहर वे ही परमात्मा है। तो फिर वह घट क्या वस्तु है? घट के रहने के कारण पानी के दो भाग जान पड़ते हैं। अन्दर और बाहर का बोध हो रहा है। 'मैं'-रूपी घट के रहते ऐसा ही बोध होता है। वह 'मैं' अगर मिट जाय, तो फिर जो कुछ है, वही रहेगा; मुख से वह कहा नही जा सकता।

"ज्ञानी का ध्यान और किस तरह का है, जानते हो? अनन्त आकाश है, उसमे आनन्द से पंख फैलाये हुए पक्षी उड़ रहा है। चिदाकाश में आत्मा-पक्षी इसी तरह विहार कर रहा है। वह पिंजड़े में नही है, चिदाकाश मे उड़ रहा है। आनन्द इतना है कि समाता ही नहीं।"

भक्तगण निर्वाक् होकर ध्यान-योग की बाते सुन रहे है। कुछ देर बाद प्रताप ने फिर बातचीत शुरू की।

प्रताप – (सरकार से) – सोचा जाय तो सब छाया ही छाया जान पड़ती है।

डाक्टर – छाया अगर कहते हो तो तीन चीजों की आवश्यकता है। सूर्य, वस्तु और छाया। बिना वस्तु के क्या छाया होती है? इधर कह रहे हो, ईश्वर सत्य है, और फिर सृष्टि को असत्य बतलाते हो! नहीं, सृष्टि भी सत्य है।

प्रताप – आईने मे जैसे तुम प्रतिबिम्ब देखते हो उसी तरह मनरूपी आईने मे यह संसार भासित हो रहा है।

डाक्टर – एक वस्तु के अस्तित्व के बिना क्या कोई प्रतिबिम्ब हो सकता है?

नरेन्द्र – क्यों, ईश्वर तो वस्तु है।

डाक्टर चुप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण – (डाक्टर से) – एक बात तुमने बहुत अच्छी कही। भावावस्था ईश्वर के साथ मन के संयोग से होती है, यह बात केवल तुमने ही कही और किसी ने नही कही।

"शिवनाथ ने कहा था, 'अधिक ईश्वर-चिन्तन करने पर मनुष्य का मस्तिष्क बिगड़ जाता है।' कहता है, संसार में जो चेतनस्वरूप हैं, उनके चिन्तन से अचेतन हो जाता है! जो बोधस्वरूप है, जिनके बोध से संसार को बोध हो रहा है, उनकी चिन्ता करके अबोध हो जाना!!

"और तुम्हारी साइन्स क्या कहती है? बस यही न कि इससे यह मिल जाय या उससे वह मिल जाय तो अमुक तैयार हो जाता है, आदि आदि। इन सब बातों की चिन्ता करके – जड़ वस्तुओं में पड़कर तो मनुष्य के और भी बोधहीन हो जाने की सम्भावना

रहती है।''

डाक्टर – उन जड़ वस्तुओ मे मनुष्य ईश्वर का दर्शन कर सकता है।

मणि – परन्तु मनुष्य मे यह दर्शन और भी स्पष्ट हो सकता है, और महापुरुषो मे और भी अधिक स्पष्ट। महापुरुषो मे उनका प्रकाश अधिक है।

डाक्टर – हॉ, मनुष्य मे दर्शन अवश्य हो सकता है।

श्रीरामकृष्ण – जिनके चैतन्य से जड़ भी चेतन हो रहे है, – हाथ, पैर और शरीर हिल रहे है, उनके चिन्तन से क्या कोई कभी अचेतन हो सकता है? लोग कहते है, 'शरीर हिल रहा है', परन्तु वे हिला रहे है, यह ज्ञान नही है। लोग कहते है, 'पानी से हाथ जल गया', पर पानी से कभी कुछ नही जलता। पानी के भीतर जो ताप है, जो अग्नि है, उसी से हाथ जल गया।

''हण्डी मे चावल उबल रहे है। आलू और भटे उछल रहे है। छोटे लड़के कहते है, 'आलू और भटे अपने आप उछल रहे है।' वे यह नही जानते कि नीचे आग है। मनुष्य कहते है, 'इन्द्रियॉ आप ही आप काम कर रही है'; भीतर जो चैतन्यस्वरूप है, उनकी बात नही सोचते।''

डाक्टर सरकार उठे। अब बिदा होगे। श्रीरामकृष्ण उठकर खड़े हो गये।

डाक्टर – लोगो पर जब कष्ट पड़ता है तब वे ईश्वर का स्मरण करते है। और नही तो क्या लोग केवल साध ही साध मे 'हे ईश्वर, तू ही, तू ही' करते रहते है? गले मे वह (घाव) हुआ है, इसलिए आप ईश्वर की चर्चा करते है। अब आप खुद धुनिये के हाथ मे पड़ गये है, अब उसी से कहिये। यह मै आप ही की कही हुई बात कह रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण – और क्या कहूँगा!

डाक्टर – क्यो, कहेगे क्यो नही? हम उनकी गोद मे है, उनकी गोद मे खाते-पीते है, बीमारी होने पर उनसे नही कहेगे तो किससे कहेगे?

श्रीरामकृष्ण – ठीक है, कभी कभी कहता हूँ। परन्तु कही कुछ होता नही।

डाक्टर – और कहना भी क्यो, क्या वे जानते नही?

योगी के लक्षण। बिल्वमंगल।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – एक मुसलमान नमाज पढ़ते समय 'हो अल्ला, हो अल्ला' कहकर अजान दे रहा था। उससे एक आदमी ने कहा, 'तू अल्ला को पुकार रहा है तो इतना चिल्लाता क्यो है? क्या तुझे नही मालूम कि उन्हे चीटी के पैरो के नूपुरो की भी आहट मिल जाती है?'

''जब उनमे मन लीन हो जाता है, तब मनुष्य ईश्वर को बहुत समीप देखता है। हृदय मे देखता है।

"परन्तु एक बात है। जितना ही यह योग होगा, उतना ही बाहर की चीजो से मन हटता जायगा। 'भक्तमाल' में बिल्वमंगल नामक एक भक्त की बात लिखी हुई है। वह वेश्या के घर जाया करता था। एक दिन बहुत रात हो गयी थी, और वह वेश्या के घर जा रहा था। घर मे मॉ-बाप का श्राद्ध था, इसलिए देर हो गयी थी। श्राद्ध की पूड़ियॉ वेश्या को खिलाने के लिए ले जा रहा था। वेश्या पर उसका इतना मन था कि किसके ऊपर से और कहाँ से होकर वह जा रहा था, उसे कुछ भी ज्ञान न था, कुछ होश ही न था। रास्ते मे एक योगी ऑखें बन्द किये ईश्वर का ध्यान कर रहा था, उसे भी बेहोशी की हालत मे वह लात मारकर निकल गया। योगी गुस्से मे आकर बोल उठा, 'क्या तू देखता नही? मै ईश्वर-चिन्तन कर रहा हूँ और तू लात मारकर चला जा रहा है!' तब उस आदमी ने कहा, 'मुझे क्षमा कीजिये; परन्तु मै आपसे एक बात पूछता हूँ, वेश्या की चिन्ता करके तो मुझे होश नही, और आप ईश्वर की चिन्ता कर रहे हैं, फिर भी आपको बाहरी दुनिया का होश है! यह कैसी ईश्वरचिन्ता है?' वह भक्त अन्त में संसार का त्याग करके ईश्वर की आराधना करने चला गया। वेश्या से उसने कहा था, 'तुम मेरी ज्ञानदात्री हो, तुम्ही ने मुझे सिखलाया कि ईश्वर पर किस तरह अनुराग किया जाता है।' वेश्या को माता कहकर उसने उसका त्याग किया था।"

डाक्टर – यह तान्त्रिक उपासना है, इसके अनुसार स्त्री को माता कहकर सम्बोधन किया जाता है।

श्रीरामकृष्ण – देखो, एक कहानी सुनो। एक राजा था। एक पण्डित के पास वह नित्य भागवत सुनता था। रोज भागवतपाठ के बाद पण्डित राजा से कहता था, 'राजा, तुम समझे?' राजा भी रोज कहता था, 'पहले तुम समझो।' भागवती पण्डित घर जाकर रोज सोचता था, 'राजा इस तरह क्यों कहता है? मै रोज इतना समझता हूँ और राजा उल्टा कहता है – तुम पहले समझो। यह क्या है?' पण्डित भजन-साधन भी करता था। कुछ दिनो बाद उसमें जागृति हुई, तब उसने समझा, ईश्वर ही वस्तु है और शेष सब – घर-द्वार, कुटुम्ब-परिवार, मान-मर्यादा – अवस्तु हैं। संसार मे सब विषय मिथ्या प्रतीत होने के कारण उसने संसार छोड़ दिया। जाते समय वह केवल एक आदमी से कह गया – 'राजा से कहना, अब मैं समझ गया हूँ।'

"एक कहानी और सुनो। एक आदमी को भागवत के एक पण्डित की जरूरत पड़ी, जो रोज जाकर उसे भागवत सुना सके। इधर भागवती पण्डित मिल नही रहा था। बहुत खोजने के बाद एक आदमी ने आकर कहा, 'भाई, एक बहुत अच्छा भागवती पण्डित मिला है।' उसने कहा, 'फिर तो काम बन गया। उसे ले आओ।' आदमी ने कहा, 'परन्तु जरा कठिनाई है। उसके कुछ हल और बैल हैं; उन्हीं को लेकर वह दिन-रात काम में लगा रहता है, काश्तकारी सम्हालनी पड़ती है, उसे बिलकुल अवकाश नही मिलता।'

तब जिसे पण्डित की जरूरत थी, उसने कहा, 'अजी, जिसे हल और बैलो के पीछे पड़ा रहना पड़ता है, उस तरह का पण्डित मै नही चाहता। मै तो ऐसा पण्डित चाहता हूँ जिसे अवकाश हो और जो मुझे भागवत सुना सके।' (डाक्टर से) समझे? (डाक्टर चुप है)

"परन्तु केवल पाण्डित्य से क्या होगा? पण्डित लोग जानते तो बहुत है – वेदो, पुराणो और तन्त्र की बाते। परन्तु कोरे पाण्डित्य से होता क्या है? विवेक और वैराग्य अगर किसी मे हो तो उसकी बातें सुनी जा सकती है। पर जिसने संसार को ही सार समझ लिया है, उसकी बातो को सुनकर क्या होगा?

"गीता के पाठ से क्या होता है? – वही, जो दस बार 'गीता' 'गीता' उच्चारण करने से। 'गीता' 'गीता' कहते रहने से 'तागी' (त्यागी) 'तागी' (त्यागी) निकलता है। संसार मे जिसकी कामिनी और कांचन पर आसक्ति छूट गयी है, जो ईश्वर पर सोलहो आने भक्ति कर सका है, उसी ने गीता का मर्म समझा है। गीता को पूरा पढने की आवश्यकता नही। 'त्यागी, त्यागी' कह सकने ही से हुआ – त्यागी बन सकने मे ही हुआ।"

डाक्टर – 'त्यागी' कहने के लिए एक 'य' अधिक जोड़ना पड़ता है।

मणि – परन्तु 'य' के बिना भी काम चल जाता है। जब ये (श्रीरामकृष्ण) टेनेटी मे महोत्सव देखने गये थे, तब वहाँ नवद्वीप के गोस्वामी से इन्होने गीता की यह बात कही थी। यह सुनकर गोस्वामी ने कहा था, "तग् धातु मे घञ प्रत्यय के लगने से 'ताग' होता है; फिर उसमे 'इन्' लगाने से 'तागी' बनता है, इस तरह 'त्यागी' और 'तागी' का अर्थ एक ही होता है।"

डाक्टर – मुझे एक ने राधा शब्द का अर्थ बतलाया था। कहा राधा का अर्थ क्या है, जानते हो? इस शब्द को उलट लो, अर्थात् 'धारा-धारा'। (सब हँसते है) (सहास्य) आज 'धारा' तक ही रहा।

(४)

ऐहिक ज्ञान अर्थात् साइन्स

डाक्टर चले गये। श्रीरामकृष्ण के पास मास्टर बैठे हुए है। एकान्त मे बातचीत हो रही है। मास्टर डाक्टर के यहाँ गये थे, वही सब बात हो रही है।

मास्टर – (श्रीरामकृष्ण से) – लाल मछलियों को इलायची का छिलका दिया जा रहा था, और गौरैयो को मैदे की गोलियाँ। डाक्टर ने मुझसे कहा – 'तुमने देखा, उन्होने (मछलियों ने) इलायची का छिलका नही देखा, इसलिए चली गयी! पहले ज्ञान चाहिए, फिर भक्ति। दो-एक गौरेयाँ भी मैदे की गोलियो को फेकते हुए देखकर उड़ गयी। उन्हे ज्ञान नही है, इसलिए भक्ति नही हुई।'

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – उस ज्ञान का अर्थ है ऐहिक ज्ञान – साइन्स का ज्ञान।

मास्टर – उन्होने फिर कहा, 'चैतन्य कह गये है, बुद्ध कह गये है या ईशु कह गये है, क्या इसलिए विश्वास करूँ? – यह ठीक नही।'

"उनके नाती हुआ है। नाती का मुँह देखकर वे अपनी पुत्रवधू की प्रशंसा करने लगे। कहा – 'घर मे इस तरह रहती है कि मुझे कही आहट भी नही मिलती। इतनी शान्त और लजीली है, –' "

श्रीरामकृष्ण – यहाँ की बाते ज्यो ज्यो सोच रहा है, त्यो त्यो उसमे श्रद्धा आ रही है। एकदम क्या कभी अहंकार जाता है? उसमे इतनी विद्या है, मान हे, धन है, परन्तु यहाँ की (स्वयं को इंगित करके) बातो से अश्रद्धा नही करता।

(५)

श्रीरामकृष्ण की उच्च अवस्था

दिन के पाँच बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण उसी दुमँजले के कमरे में बैठे हुए है। चारों ओर भक्तगण चुपचाप बैठे है। बहुत से बाहर के आदमी उन्हे देखने के लिए आये है। कोई बात नही हो रही है।

मास्टर पास ही बैठे हुए है। उनके साथ एकान्त मे बातचीत हो रही है। श्रीरामकृष्ण कुर्ता पहनेंगे। मास्टर ने कुर्ता पहना दिया।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – देखो, अब विशेष ध्यान आदि मुझे नही करना पड़ता। अखण्ड का एकदम ही बोध हो जाता है। ब्रह्मदर्शन निरन्तर ही चलता रहता है।

मास्टर चुप है। कमरा भी निस्तब्ध है।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण उनसे फिर एक बात कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, ये सब लोग एक ही आसन जमाकर चुपचाप बैठे हुए है और मुझे देख रहे है – न बोलते है, न गाना होता है; इस तरह ये मुझमे क्या देखते है?

श्रीरामकृष्ण क्या इंगित कर रहे हैं कि साक्षात् ईश्वर की शक्ति अवतीर्ण हुई है। इसीलिए इतने लोगो का आकर्षण है, इसीलिए भक्त लोग अवाक् होकर उनकी ओर एकटक दृष्टि से निहारते रहते है!

मास्टर ने कहा, "महाराज, ये लोग आपकी बात बहुत पहले ही सुन चुके है। ये लोग वह चीज देखते है जो कभी इन्हे देखने को नही मिल सकती। देखते है, सदा ही आनन्द मे मग्न रहनेवाले, निरहंकार, बालस्वभाव, ईश्वर के प्रेम मे मग्न रहनेवाले महापुरुष को। उस दिन आप ईशान मुखर्जी के यहाँ गये हुए थे। आप बाहर के कमरे मे टहल रहे थे, हम लोग भी गये हुए थे। एक ने आपसे आकर कहा, 'इस तरह का सदानन्द पुरुष हमने कभी देखा नही।' "

मास्टर फिर चुप हो रहे। कमरा फिर निस्तब्ध है। कुछ देर बाद धीमे स्वर मे मास्टर से श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा –

"अच्छा, डाक्टर का क्या हो रहा है? क्या यहाँ की सब बातों को वह ग्रहण करता है?"

मास्टर – यह अमोघ बीज कहाँ जायगा? किसी न किसी तरफ से कभी न कभी निकलेगा ही। उस दिन की एक-एक बात पर हँसी आ रही है।

श्रीरामकृष्ण – कौनसी बात?

मास्टर – आपने उस दिन कहा था, यदु मल्लिक यह नहीं समझ सकता कि किस तरकारी में नमक अधिक है, कौन तरकारी कैसी हुई। वह इतना अन्यमनस्क रहता है! जब कोई कह देता है कि अमुक व्यंजन मे नमक नही पड़ा, तब 'आयँ आयँ' करके कहता है, 'हॉ, ठीक तो है, नमक नहीं पड़ा।' डाक्टर को यह बात आप सुना रहे थे। उन्होंने कहा था न, कि वे बहुत ही अन्यमनस्क हो जाया करते हैं। आप समझा रहे थे कि वे विषय की चिन्ता करके अन्यमनस्क होते है, ईश्वर की चिन्ता करके नही।

श्रीरामकृष्ण – क्या इन बातो को वह न सोचेगा?

मास्टर – सोचेगे क्यों नहीं? परन्तु उन्हें बहुत से काम रहते है, इसलिए भूल भी जाते हैं। आज भी उन्होंने क्या ही अच्छा कहा कि स्त्री को मातृरूप देखना तान्त्रिकों की एक उपासना है।

श्रीरामकृष्ण – मैंने क्या कहा?

मास्टर – आपने बैलोंवाले भागवती पण्डित की बात कही थी। (श्रीरामकृष्ण हँसते हैं) और आपने कही थी उस राजा की बात, जिसने कहा था, 'तुम पहले समझो।' (श्रीरामकृष्ण हँसते हैं)

"फिर आपने गीता की बात कही थी। गीता का सार तत्त्व है कामिनी और कांचन का त्याग – कामिनी और कांचन पर आसक्ति का त्याग। आपने डाक्टर से कहा, 'संसारी होकर कोई क्या शिक्षा देगा?' यह बात शायद वे समझ नहीं सके। अन्त मे 'धारा-धारा' कहकर बात को दबा गये।"

श्रीरामकृष्ण भक्तों के कल्याण के लिए सोच रहे हैं, – पूर्ण और मणीन्द्र दोनो उनके बालक भक्तों मे से हैं। श्रीरामकृष्ण ने मणीन्द्र को पूर्ण से मिलने के लिए भेजा।

(६)

श्रीराधाकृष्ण-तत्त्व। नित्य-लीला

सन्ध्या हो गयी है। श्रीरामकृष्ण के कमरे में दीपक जल रहा है। कई भक्त जो श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए आये हैं, उसी कमरे में कुछ दूर पर बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण

का मन अन्तर्मुख हो रहा है, इस समय बातचीत बन्द है। कमरे मे जो लोग है, वे भी ईश्वर की चिन्ता करते हुए मौन हो रहे है।

कुछ देर बाद नरेन्द्र अपने एक मित्र को साथ लेकर आये। नरेन्द्र ने कहा, "ये मेरे मित्र है, इन्होने कई ग्रन्थो की रचना की है। ये 'किरणमयी' लिख रहे है।" किरणमयी के लेखक ने प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण के साथ बातचीत करेगे।

नरेन्द्र – इन्होने राधाकृष्ण के सम्बन्ध मे भी लिखा है।

श्रीरामकृष्ण – (लेखक से) – क्यो जी, क्या लिखा है? जरा कहो तो।

लेखक – राधाकृष्ण ही परब्रह्म है, ओंकार के बिन्दुस्वरूप है। उसी राधाकृष्ण – परब्रह्म – से महाविष्णु की सृष्टि हुई, महाविष्णु से पुरुष और प्रकृति, शिव और दुर्गा की।

श्रीरामकृष्ण – वाह! नन्दघोष ने नित्यराधा को देखा था। प्रेम-राधा ने वृन्दावन मे लीलाएँ की थी, काम-राधा चन्द्रावली है।

"काम-राधा और प्रेम-राधा। और भी बढ़ जाने पर है नित्य-राधा। प्याज के छिलके निकालते रहने पर पहले लाल छिलका निकलता है, फिर जो छिलके निकलते है उनमे ललाई नाम मात्र की रहती है, फिर बिलकुल सफेद छिलके निकलते है। ऐसा ही नित्य-राधा का स्वरूप है – वहाँ 'नेति नेति' का विचार रुक जाता है।

"नित्य-राधाकृष्ण, और लीला-राधाकृष्ण – जेसे सूर्य और उसकी किरणे। नित्य की तुलना सूर्य से की जा सकती है और लीला की, रश्मियो से।

"शुद्ध भक्त कभी 'नित्य' मे रहता है और कभी 'लीला' मे। जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्ही की है। वे केवल एक ही है – दो या अनेक नही।"

लेखक – जी, वृन्दावन के कृष्ण और मथुरा के कृष्ण, इस तरह दो कृष्ण क्यो कहे जाते है?

श्रीरामकृष्ण – वह गोस्वामियो का मत है। पश्चिम के पण्डित लोग ऐसा नही कहते। उनके मत मे कृष्ण एक ही है, राधा है ही नही। द्वारका के कृष्ण भी वैसे ही है।

लेखक – जी, राधाकृष्ण ही परब्रह्म है।

श्रीरामकृष्ण – वाह! परन्तु उनके द्वारा सब कुछ सम्भव है। वे ही निराकार है और वे ही साकार। वे ही स्वराट् है और वे ही विराट्। वे ही ब्रह्म है और वे ही शक्ति।

"उनकी इति नही हो सकती – उनका अन्त नही है, उनमे सब कुछ सम्भव है। चील या गीध चाहे जितना ऊपर चढ़े, पर आकाश को उसकी पीठ कभी छू नही सकती। अगर पूछो कि ब्रह्म कैसा है, तो यह कहा नही जा सकता। साक्षात्कार होने पर भी मुख से नही कहा जाता। अगर कोई पूछे कि घी कैसा है, तो इसका उत्तर है कि घी घी के सदृश ही है। ब्रह्म की उपमा ब्रह्म ही है, और कोई उपमा नही।

परिच्छेद १३०

सर्वधर्म-समन्वय

(१)

बलराम के लिए चिन्ता। श्री हरिवल्लभ वसु।

श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुरवाले मकान मे चिकित्सा के लिए भक्तों के साथ ठहरे हुए है। आज शनिवार है, आश्विन की कृष्णा अष्टमी, ३१ अक्टूबर १८८५। दिन के नो बजे का समय होगा।

यहाँ दिन-रात भक्तगण रहा करते हैं, श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए। अभी किसी ने संसार का त्याग नही किया है।

बलराम सपरिवार श्रीरामकृष्ण के सेवक है। उन्होने जिस वंश में जन्म लिया है, वह बड़ा ही भक्त-वंश है। इनके पिता वृद्ध होकर अब श्रीवृन्दावन मे अपने ही प्रतिष्ठित श्रीश्यामसुन्दर कुँज मे रहा करते है। उनके चचेरे भाई श्रीयुत हरिवल्लभ बसु और घर के दूसरे सब लोग वैष्णव है।

हरिवल्लभ कटक के सब से बड़े वकील है। उन्होने जब यह सुना कि बलराम श्रीरामकृष्णदेव के पास आया-जाया करते हैं और विशेषकर स्त्रियो को ले जाते है, तब वे बहुत नाराज हुए। उनसे मिलने पर बलराम ने कहा था, 'तुम पहले एक बार उनके दर्शन करो, फिर जो जी मे आये मुझे कहना।'

अतएव आज हरिवल्लभ आये है। उन्होने श्रीरामकृष्ण को बड़े भक्तिभाव से प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण – किस तरह बीमारी अच्छी होगी? आपकी राय मे क्या यह कोई कठिन बीमारी है?

हरिवल्लभ – जी, यह तो डाक्टर ही कह सकेंगे।

श्रीरामकृष्ण - स्त्रियाँ जब मेरे पैरो की धूलि लेती है तब यही सोचता हूँ कि भीतर तो वे ही है, वे उन्ही को प्रणाम कर रही है। इसी दृष्टि से मै देखता हूँ।

हरिवल्लभ – आप साधु है, आपको सब लोग प्रणाम करेंगे, इसमे दोष क्या है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, वह हो सकता था अगर ध्रुव, प्रह्लाद, नारद, कपिल, ये कोई

होते; पर मै क्या हूँ? अच्छा आप फिर आइयेगा।

हरिवल्लभ – जी, हम लोग आप ही खिचकर आयेगे, आप कहते क्यो है?

हरिवल्लभ बिदा होगे, प्रणाम कर रहे है। पैरो की धूलि लेने जा रहे है, श्रीरामकृष्ण ने पैर हटा लिये। परन्तु हरिवल्लभ ने छोड़ा नही, जबरदस्ती उन्होने पैरो की धूलि ली।

हरिवल्लभ उठे। श्रीरामकृष्ण उनकी खातिर करने के लिए उठकर खड़े हो गये। कह रहे है, "बलराम बहुत दु:ख करता है। मैने सोचा, एक दिन जाऊँ, जाकर तुम लोगो से मिलूँ। परन्तु भय भी होता है कि तुम लोग कही यह न कहो कि इसे कौन यहाँ लाया'!'

हरिवल्लभ – इस तरह की बाते कही किसने? आप कुछ सोचियेगा नही।

हरिवल्लभ चले गये।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – उसमे भक्ति है; नही तो जबरदस्ती पैरो की धूलि क्यो लेता?

"वह बात जो तुमसे मैने कही थी कि भाव मे मैने डाक्टर को देखा था तथा एक आदमी और था – यह वही है। इसीलिए देखो आया!"

मास्टर – जी, सचमुच वह भक्त है।

श्रीरामकृष्ण – कितना सरल है!

श्रीरामकृष्ण की बीमारी का हाल लेकर मास्टर डाक्टर सरकार के पास शॉकारिटोला आये हुए है। डाक्टर आज फिर श्रीरामकृष्ण को देखने जायेगे।

डाक्टर श्रीरामकृष्ण और महिमाचरण आदि की बाते कह रहे है।

डाक्टर – महिमाचरण वह पुस्तक तो नही लाये जिसे उन्होने दिखाने के लिए कहा था। उन्होने कहा, 'भूल गया।' हो सकता है। मै भी प्राय: इसी तरह भूल जाता हूँ।

मास्टर – उनका अध्ययन बहुत अच्छा है।

डाक्टर – तो फिर उनकी ऐसी दशा क्यो है?

श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध मे डाक्टर कह रहे है – "केवल भक्ति लेकर क्या होगा, अगर ज्ञान न रहा?"

मास्टर – श्रीरामकृष्ण तो कहते है, ज्ञान के बाद भक्ति है; परन्तु उनके ज्ञान और भक्ति मे आप लोगो के ज्ञान और भक्ति मे बड़ा अन्तर है।

"वे जब कहते है, ज्ञान के बाद भक्ति है तो उसका अर्थ यह है कि पहले तत्त्वज्ञान होता है और बाद मे भक्ति, पहले ब्रह्मज्ञान और बाद मे भक्ति; पहले भगवान का ज्ञान, फिर उनके प्रति प्रेम। आप लोगो के ज्ञान का अर्थ है, इन्द्रियजन्य ज्ञान। श्रीरामकृष्ण जिस ज्ञान की चर्चा करते है, उसकी परख हमारे मापदण्ड द्वारा नही हो सकती। परन्तु आपका ज्ञान तो इन्द्रियजन्य है, उसकी परख हो सकती है।"

डाक्टर कुछ देर चुप रहे, फिर अवतार के सम्बन्ध मे बातचीत करने लगे।

डाक्टर – अवतार क्या है? और पैरो की धूलि लेना, यह क्या है?

मास्टर – क्यो? आपही तो कहते है कि अपनी साइन्स की प्रयोगशाला मे अन्वेषण करते समय ईश्वर की सृष्टि के बारे मे सोचने से आपको भावावस्था हो जाती है, और फिर आदमी को देखने से भी आपमे उसी भाव का उद्रेक होता है। अगर यह ठीक है तो ईश्वर को फिर हम सिर क्यो न झुकावे? मनुष्य के हृदय मे ईश्वर है।

"हिन्दू धर्म के अनुसार सर्वभूतो मे ईश्वर का वास है। यह विषय आपको अच्छी तरह मालूम नही है। सर्वभूतो मे जब ईश्वर है तो मनुष्य को प्रणाम करने मे क्या बुराई है?

"श्रीरामकृष्णदेव कहते है किसी किसी वस्तु मे उनका प्रकाश अधिक है। सूर्य का प्रकाश पानी मे, आईने मे अधिक है। पानी सब जगह है, परन्तु नदी और सरोवर मे अधिक है। नमस्कार ईश्वर को ही किया जाता है, मनुष्य को नही। God is God, not, man is God (ईश्वर ही ईश्वर है, मनुष्य ईश्वर नही।)

"ईश्वर को कोई साधारण विचार द्वारा समझ ही नही सकता। सब विश्वास पर अवलम्बित है। ये ही सब बाते श्रीरामकृष्ण कहते है।"

आज डाक्टर ने मास्टर को अपनी लिखी पुस्तक 'मनोविज्ञान – शारीरिक' (Physiological Basis of Psychology) की एक प्रति उपहार-स्वरूप दी।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा ईशु

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठे हुए है। दिन के ग्यारह बजे का समय होगा। मिश्र नाम के एक ईसाई भक्त के साथ बातचीत हो रही है। मिश्र की आयु पैतीस वर्ष की होगी। इनका जन्म ईसाई वंश मे हुआ है। बाहर से तो ये साहबी वेश-भूषा धारण किये हुए है, परन्तु भीतर गेरुआ वस्त्र पहने है। इस समय इन्होने संसार का त्याग कर दिया है। इनका जन्म-स्थान पश्चिम है। इनके एक भाई के विवाह के दिन इनके दूसरे दो भाइयो की मृत्यु हो गयी थी, तब से मिश्र ने संसार का त्याग कर दिया है। येQuaker(क्वेकर) सम्प्रदाय के है।

मिश्र – 'वही राम घट-घट मे लेटा।'

श्रीरामकृष्ण छोटे नरेन्द्र से धीरे-धीरे कह रहे है, परन्तु इस ढंग से कि मिश्र भी सुने –

"राम एक ही है, परन्तु उनके नाम हजारो है।

"ईसाई जिन्हे गाड (God) कहते है, हिन्दू उन्हे ही राम, कृष्ण और ईश्वर कहकर पुकारते है। तालाब मे बहुत से घाट है। हिन्दू एक घाट मे पानी पीते हैं, कहते है 'जल',

ईसाई दूसरे घाट मे पानी पीते है, कहते है 'वाटर' (Water), मुसलमान तीसरे घाट मे पानी पीते है, कहते है 'पानी'।

"इसी प्रकार जो ईसाइयो का 'गाड' (God) है, वही मुसलमानो का 'अल्ला' है।"

मिश्र – ईशु मेरी का लड़का नही है, ईशु साक्षात् ईश्वर है।

(भक्तो से) "ये (श्रीरामकृष्ण) अभी तो ऐसे दिखते है, पर ये साक्षात् ईश्वर है। आप लोगो ने इन्हे पहचाना नही। मै पहले ही इनके दर्शन ध्यान मे कर चुका हूँ – अब इस समय इन्हे साक्षात् देख रहा हूँ। मैने देखा था, एक बगीचा है ये ऊँचे आसन पर बैठे हुए है, जमीन पर एक व्यक्ति और बैठे हुए है, – वे उतने पहुँचे हुए नही थे।

"इस देश मे ईश्वर के चार द्वारपाल है। बम्बई प्रान्त मे तुकाराम, काश्मीर मे रॉबर्ट माइकेल (Robert Michael), यहाँ ये, और पूर्व बंगाल मे एक और है।"

श्रीरामकृष्ण – क्या तुम्हे कुछ दर्शन होता है?

मिश्र – जी, जब मै घर पर था, तब ज्योति-दर्शन होता था। इसके बाद ईशु को मैने देखा। उस रूप की बात अब क्या कहूँ – उस सौन्दर्य के सामने स्त्री का सौन्दर्य खाक है।

कुछ देर बाद भक्तो के साथ बातचीत करते हुए मिश्र ने कोट और पतलून खोलकर भीतर गेरुए की कौपीन दिखलायी।

श्रीरामकृष्ण बरामदे से आकर कह रहे है – "इसे (मिश्र को) देखा, वीर की तरह खडा है।"

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो रहे है। पश्चिम की ओर मुँह करके खड़े हुए वे समाधिमग्न हो गये।

कुछ प्रकृतिस्थ होने पर मिश्र पर दृष्टि लगाकर हँस रहे है। अब भी खडे है। भावावेश मे मिश्र से हाथ मिलाते हुए हँस रहे है। हाथ पकड़कर कह रहे है, 'तुम जो चाहते हो, वह प्राप्त हो जायगा।'

श्रीरामकृष्ण ईशु के भाव मे है।

मिश्र – (हाथ जोड़कर) – उस दिन से मैने अपना मन, अपने प्राण, अपना शरीर, सब कुछ आपको समर्पित कर दिया है।

श्रीरामकृष्ण भावावस्था मे अब भी हँस रहे है। वे बैठे।

मिश्र भक्तो से अपने सांसारिक जीवन का वर्णन कर रहे है। उन्होने बताया कि किस प्रकार विवाह के समय शामियाना के नीचे गिर जाने से उनके दो भाइयो की मृत्यु हो गयी।

श्रीरामकृष्ण ने भक्तो से मिश्र की खातिर करने को कहा।

डाक्टर सरकार आये। डाक्टर को देखकर श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भाव का कुछ उपशम होने पर श्रीरामकृष्ण कह रहे है – "कारणानन्द के बाद है सच्चिदानन्द!

– कारण का कारण!''

डाक्टर कह रहे हैं – ''जी, हाँ।''

श्रीरामकृष्ण – मैं बेहोश नही हूँ।

डाक्टर समझ गये कि श्रीरामकृष्ण को ईश्वरावेश है। इसीलिए उत्तर में कहा – ''हाँ, आप खूब होश में हैं!''

श्रीरामकृष्ण हँसकर गाने लगे – ''मैं सुरा-पान नहीं करता, किन्तु 'जय काली' कह-कहकर सुधापान करता हूँ। इससे मेरा मन मतवाला हो जाता है, पर लोग बोलते हैं कि मैं सुरा-पान करके मत्त हो गया हूँ! गुरुप्रदत्त रस को लेकर, उसमें प्रवृत्तिरूपी मसाला छोड़कर, ज्ञान-कलार शराब बनाकर भाँड़े में छान लेता है। मूलमन्त्ररूपी बोतल से ढालकर मै 'तारा-तारा' कहकर उसे शुद्ध कर लेता हूँ; और मेरा मन उसका पान कर मतवाला हो जाता है। प्रसाद कहता है, ऐसी सुरा का पान करने से चारों फलों की प्राप्ति होती है।''

गाना सुनकर डाक्टर को भावावेश-सा हो गया। श्रीरामकृष्ण को भी पुन: भावावेश हो गया। उसी आवेश में उन्होंने डाक्टर की गोद में एक पैर बढ़ाकर रख दिया। कुछ देर बाद भाव का उपशम हुआ। तब पैर खींचकर उन्होंने डाक्टर से कहा – ''अहा, तुमने कैसी सुन्दर बात कही है! 'उन्हीं की गोद में बैठा हुआ हूँ। बीमारी की बात उनसे नहीं कहूँगा तो और किससे कहूँगा?' – बुलाने की आवश्यकता होगी तो उन्हें ही बुलाऊँगा।''

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण की आँखें आँसुओं से भर गयीं। वे फिर भावाविष्ट हो गये। उसी अवस्था में डाक्टर से कह रहे हैं – ''तुम खूब शुद्ध हो। नही तो मैं पैर न रख सकता!'' फिर कह रहे हैं – '' 'शान्त वही है जो रामरस चखे।'

''विषय है क्या? – उसमें क्या है? – रुपया, पैसा, मान, शरीर-सुख इनमें क्या रखा है? 'ऐ दिल, जिसने राम को नहीं पहचाना, उसने फिर पहचाना ही क्या?' ''

बीमारी की इस अवस्था में श्रीरामकृष्ण को भावावेश में रहते देखकर भक्तों को चिन्ता हो रही है। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – ''उस गाने के हो जाने पर मैं रुक जाऊँगा – 'हरि-रस-मदिरा –'।'' नरेन्द्र एक दूसरे कमरे में थे, बुलाये गये। गन्धर्वोपम कण्ठ से नरेन्द्र गाने लगे – (भावार्थ) - ''ऐ मेरे मन हरि-रस-मदिरा का पान करके तुम मस्त हो जाओ। मधुर हरिनाम करते हुए धरती पर लोटो और रोओ। हरि-नाम के गम्भीर निनाद से गगन को छा दो। 'हरि-हरि' कहते हुए दोनों हाथ ऊपर उठाकर नाचो, और सब में इस मधुर हरि-नाम का वितरण कर दो। ऐ मन, हरि के प्रेमानन्द-रसरूपी समुद्र में रात्रन्दिवा तैरते रहो। हरि का पावन नाम ले-लेकर नीच वासना का नाश कर दो और पूर्णकाम बन जाओ।''

श्रीरामकृष्ण – और वह गाना, 'चिदानन्द-सागर में ...?'

नरेन्द्र गा रहे हैं – (भावार्थ) – "चिदानन्द-सागर में आनन्द और प्रेम की तरंगें उठ रही हैं; उस महाभाव और रासलीला की कैसी सुन्दर माधुरी है! ..."

डाक्टर सरकार ने गानों को ध्यानपूर्वक सुना। जब गाना समाप्त हो गया तो उन्होंने कहा, "यह गाना अच्छा है – 'चिदानन्द-सागर में ...' "

डाक्टर को इस प्रकार प्रसन्न देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "लड़के ने बाप से कहा, 'पिताजी, आप थोड़ीसी शराब चख लीजिये और उसके बाद यदि मुझसे कहेंगे कि मैं शराब पीना छोड़ दूँ, तो छोड़ दूँगा।' शराब चखने के बाद बाप ने कहा, 'बेटा, तुम चाहो तो शराब छोड़ दो, मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु मैं स्वयं तो अब निश्चय ही न छोड़ूँगा!'

(डाक्टर तथा अन्य सब हँसते हैं)

"उस दिन माँ ने मुझे दो व्यक्ति दिखाये थे। उनमें से एक तुम (डाक्टर) थे। उन्होने यह भी दिखाया कि तुम्हें बहुत ज्ञान होगा, पर वह शुष्क ज्ञान रहेगा। (डाक्टर के प्रति मुस्कराते हुए) पर धीरे-धीरे तुम नरम हो जाओगे।"

डाक्टर सरकार चुप रहे।

□□□

परिच्छेद १३१

कालीपूजा तथा श्रीरामकृष्ण

(१)

कालीपूजा के दिन भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुरवाले मकान के ऊपर दक्षिण के कमरे में खड़े हुए हैं। दिन के ९ बजे का समय होगा। आप शुद्ध वस्त्र पहने ललाट में चन्दन की बिन्दी लगाये हुए हैं। मास्टर आपकी आज्ञा पाकर सिद्धेश्वरी काली का प्रसाद ले आये हैं। प्रसाद को हाथ में ले, बड़े भक्ति-भाव से श्रीरामकृष्ण खड़े हुए उसका कुछ अंश ग्रहण कर रहे हैं और कुछ मस्तक पर धारण कर रहे हैं। प्रसाद ग्रहण करते समय आपने पादुकाओं को पैरों से उतार दिया। मास्टर से कह रहे हैं – "बहुत अच्छा प्रसाद है।" आज शुक्रवार है, आश्विन की अमावस्या, ६ नवम्बर १८८५। आज कालीपूजा का दिन है।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर को आदेश दिया था ठनठनिया की सिद्धेश्वरी काली मूर्ति की पुष्प, नारियल, शक्कर और सन्देश चढ़ाकर पूजा करने के लिए। मास्टर स्नान करके नंगे पैर सबेरे पूजा समाप्त करके नंगे पैर ही श्रीरामकृष्ण के लिए प्रसाद लेकर आये हैं।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर को रामप्रसाद और कमलाकान्त की संगीत-पुस्तकें खरीद लाने के लिए कहा था। वे डाक्टर सरकार को ये पुस्तकें देना चाहते थे।

मास्टर कह रहे हैं – "ये पुस्तकें भी लाया हूँ – रामप्रसाद और कमलाकान्त के गाने की पुस्तकें।" श्रीरामकृष्ण ने कहा, "डाक्टर के भीतर इन गीतों का भाव संचारित कर देना होगा।"

गाना – ऐ मेरे मन! ईश्वर का स्वरूप जानने के लिए तुम यह कैसी चेष्टा कर रहे हो? तुम तो अँधेरे कमरे में बन्द पागल की तरह भटक रहे हो ...।

गाना – कौन कह सकता है कि काली कैसी है? षड्दर्शनों को भी जिसके दर्शन नहीं हो पाते ...।

गाना – ऐ मन! तू खेती करना नहीं जानता। यह मनुष्यजन्म परती जमीन की तरह पड़ा रह गया! अगर तू खेती करता तो इसमें सोना फल सकता था!....

गाना – आ मन, चल, टहलने चलें। काली-कल्पतरु के नीचे तुझे चारों फल पड़े

मिल जायेंगे। ...

मास्टर ने कहा, 'जी हाँ।' श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ कमरे में टहल रहे है - पैरों में चट्टी-जूता है। इस तरह की कठिन बीमारी, परन्तु फिर भी श्रीरामकृष्ण सदा ही प्रसन्न रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – और वह गाना भी अच्छा है। 'यह संसार धोखे की टट्टी है।'

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण एकाएक चौंक पड़े। पादुकाओं को निकालकर वे स्थिर भाव से खड़े हो गये और गम्भीर समाधि में मग्न हो गये। आज जगन्माता की पूजा का दिन है, शायद इसीलिए बारम्बार उन्हें रोमांच हो रहा है और समाधि में भग्न हो रहे हैं। बड़ी देर बाद एक लम्बी साँस छोड़ मानो बड़े कष्ट से उन्होंने अपना भाव संवरण किया।

(२)

भजनानन्द में

श्रीरामकृष्ण उसी ऊपरवाले कमरे में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। दिन के दस बजे का समय होगा। बिस्तरे पर तकिये के सहारे बैठे हुए हैं, चारों ओर भक्तगण हैं। राम, राखाल, निरंजन, कालीपद, मास्टर आदि बहुतसे भक्त हैं। श्रीरामकृष्ण के भाँजे हृदय मुखर्जी की बात चल रही है।

श्रीरामकृष्ण – (राम आदि से) – हृदय अभी भी जमीनजमीन रट रहा है! जब वह दक्षिणेश्वर में था, तब उसने कहा था, 'दुशाला दो, नहीं तो मैं नालिश कर दूँगा।'

"माँ ने उसे दक्षिणेश्वर से हटा दिया। आदमी जब आते थे, तब बस रुपया-रुपया करता था। वह अगर रहता तो ये सब आदमी न आते। इसीलिए माँ ने उसे हटा दिया।

"गो. भी पहले पहले उसी तरह किया करता था। नाकभौं सिकोड़ता था। मेरे साथ गाड़ी में कही जाना पड़ता था तो देर करने लगता था। दूसरे लड़के अगर मेरे पास आते, तो उसे रंज होता था। उन्हे देखने के लिए अगर मैं कलकत्ते जाता था, तो मुझसे कहता था, 'क्या वे संसार छोड़कर आयेंगे जो उन्हें देखने के लिए जाइयेगा?' उन लड़कों को मिठाई आदि देने से पहले मैं उससे डरकर कहता था, 'तू भी खा और उन्हें भी दे।' अन्त में मालूम हो गया कि वह यहाँ न रहेगा।

"तब मैंने माँ से कहा, 'माँ, उसे हृदय की तरह बिलकुल न हटा देना।' फिर मैंने सुना वह वृन्दावन जायेगा।

"गो. अगर रहता तो इन सब लड़कों का कुछ न होता। वह वृन्दावन चला गया, इसीलिए वे सब लड़के आने-जाने लगे।"

गो. – (विनयपूर्वक) – पर वैसी कोई बात मेरे मन में नहीं थी, आप सच जानिये।

राम दत्त – तुम्हारे मन के सम्बन्ध मे वे जितना समझेगे, उतना क्या तुम समझ सकोगे?

गो. चुप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण – (गो. से) – तू क्यो ऐसा सोचता है? – मै तुझे पुत्र से भी अधिक प्यार करता हूँ!....

"अब तू चुप रह। ... अब तुझमे वह भाव नही रह गया।"

भक्तो के साथ बातचीत होने के पश्चात्, उन लोगो के दूसरे कमरे मे चले जाने पर, श्रीरामकृष्ण ने गो. को बुलवाया और पूछा – 'तूने कुछ और तो नही सोच लिया?' गो. ने कहा – 'जी नही।'

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा, 'आज कालीपूजा है, पूजा के लिए कुछ आयोजन किया जाय तो अच्छा हो। उन लोगो से एक बार कह आओ।'

मास्टर ने बैठकखाने मे जाकर भक्तो से कहा। कालीपद तथा दूसरे भक्त पूजा के लिए प्रबन्ध करने लगे।

दिन के दो बजे के लगभग डाक्टर श्रीरामकृष्ण को देखने आये, साथ में अध्यापक नीलमणि भी है। श्रीरामकृष्ण के पास बहुत से भक्त बैठे हुए है। गिरीश, कालीपद, निरंजन, राखाल, खोखा (मणीन्द्र), लाटू, मास्टर, आदि बहुतसे भक्त है। श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक बैठे हुए है। डाक्टर से पहले बीमारी और दवा की बाते हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'तुम्हारे लिए ये पुस्तके मँगवायी गयी हैं।' डाक्टर को मास्टर ने दोनो पुस्तके दे दी। डाक्टर ने गाना सुनना चाहा। श्रीरामकृष्ण की आज्ञा पा मास्टर और एक भक्त रामप्रसाद का गाना गा रहे है –

गाना – ऐ मेरे मन! ईश्वर का स्वरूप जानने के लिए तुम यह कैसी चेष्टा कर रहे हो! तुम तो अँधेरे कमरे मे बन्द पागल की तरह भटक रहे हो ...।

गाना – कौन जानता है कि काली कैसी है? षड्दर्शनो को भी जिनके दर्शन नही हो पाते। ...

गाना – ऐ मन, तू खेती करना नही जानता। ...

गाना – आ मन, चल घूमने चले। ...

डाक्टर गिरीश से कह रहे है – 'तुम्हारा वह गाना बड़ा सुन्दर है – वीणावाला – बुद्धचरित का गाना।' श्रीरामकृष्ण का इशारा पाकर गिरीश और काली दोनो मिलकर गाना सुना रहे है –

गाना – मेरी यह बड़ी ही साध की वीणा है, बड़े यत्नपूर्वक इसके तारो का हार गूँथा गया है। ...

गाना – मै शान्ति के लिए व्याकुल हूँ, पर वह मिलती कहाँ है? न जाने कहाँ से

आकर कहाँ बहा जा रहा हूँ। ...

गाना – ऐ निताई, मुझे पकड़ो! मेरे प्राणो में आज न जाने यह क्या हो रहा है! ...

गाना – आओ, आओ, ऐ जगाई-माधाई, प्राण भरकर, आओ, हरि का नाम लें!...

गाना – यदि तुझे किशोरी राधा का प्रेम लेना है तो चला आ, प्रेम की ज्वार बही जा रही है। ...

गाना सुनते सुनते दो-तीन भक्तों को भावावेश हो गया। गाना हो जाने पर श्रीरामकृष्ण के साथ डाक्टर फिर बातचीत करने लगे। कल डा. प्रताप मजूमदार ने श्रीरामकृष्ण को नक्स वोमिका (Nux Vomica) दी थी। डाक्टर सरकार को यह सुनकर क्षोभ हो रहा है।

डाक्टर – मैं मर तो गया नही था! फिर नक्स वोमिका कैसे दी गयी!

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – तुम क्यों मरोगे? तुम्हारी अविद्या की मृत्यु हो!

डाक्टर – मेरे किसी समय अविद्या नहीं थी!

डाक्टर ने अविद्या का अर्थ भ्रष्ट-स्त्री समझ लिया था।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – नहीं जी, संन्यासी की अविद्या-माँ मर जाती है, और विवेक-पुत्र हो जाता है। अविद्या-माँ के मर जाने पर अशौच होता है, इसीलिए कहते हैं – संन्यासी को छूना नहीं चाहिए।

हरिवल्लभ आये हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'तुम्हें देखकर आनन्द होता है।' हरिवल्लभ बड़े विनयशील हैं। चटाई से अलग जमीन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण को पंखा झल रहे हैं। हरिवल्लभ कटक के सब से बड़े वकील हैं।

पास ही अध्यापक नीलमणि बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण उनकी मान-रक्षा करते हुए कह रहे हैं, 'आज मेरा शुभ दिन है।' कुछ देर बाद डाक्टर और उनके मित्र नीलमणि बिदा हो गये। हरिवल्लभ भी उठे। चलते समय उन्होंने कहा, 'मैं फिर आऊँगा।'

(३)

श्रीकालीपूजा

शरद् ऋतु की अमावस्या है, – रात के आठ बजे होंगे। उसी ऊपरवाले कमरे में पूजा का सारा प्रबन्ध किया गया है। अनेक प्रकार के पुष्प, चन्दन, बिल्वपत्र, जवापुष्प, खीर तथा अनेक प्रकार की मिठाइयाँ भक्तगण ले आये हैं। श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। चारों ओर से भक्त-मण्डली घेरे हुए बैठी है। शरद, राम, गिरीश, चुन्नीलाल, मास्टर, राखाल, निरंजन, छोटे नरेन्द्र, बिहारी आदि बहुतसे भक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण ने कहा – 'धूना ले आओ।' कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने जगन्माता को

सब कुछ निवेदित कर दिया। मास्टर पास बैठे हुए है। मास्टर की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है – 'सब लोग थोड़ी देर ध्यान करो।' भक्तगण ध्यान करने लगे।

पहले गिरीश ने श्रीरामकृष्ण के श्रीचरणों में माला चढ़ायी, फिर मास्टर ने गन्ध-पुष्प चढ़ाये। तत्पश्चात् राखाल ने, फिर राम ने। इसी तरह सब भक्त श्रीचरणों मे पुष्प-दल चढ़ाने लगे।

श्रीचरणों में फूल चढ़ाकर निरंजन 'ब्रह्ममयी' कहकर भूमिष्ठ हो प्रणाम करने लगे। भक्तगण 'जय माँ, जय माँ' कह रहे है।

देखते ही देखते श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भक्तों की आँखों के सामने ही श्रीरामकृष्ण में एक आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया। उन लोगो ने उनके मुख-मण्डल पर दैवी ज्योति का अवलोकन किया। उनके दोनों हाथ इस प्रकार उठे हुए थे जैसे कि वे भक्तो को वरदान तथा अभय-दान दे रहे हों। उनका शरीर निश्चल है, बाह्य संसार का उन्हे बिलकुल ज्ञान नही। वे उत्तर की ओर मुँह किये हुए बैठे हैं। क्या इनके भीतर साक्षात् जगन्माता आविर्भूत हुई है? सभी अवाक् हो, एकटक दृष्टि से इस अद्भुत वराभयदायिनी जगन्माता की जीवन्त मूर्ति का दर्शन कर रहे है।

भक्तगण स्तुतिपाठ कर रहे हैं। पहले एक भक्त गाता है, उसके पीछे सब एक ही स्वर मे उसी पद की आवृत्ति करते हैं।

गिरीश गा रहे हैं –

(भावार्थ) – देवताओं के बीच वह कौन रमणी चमक रही है, जिसके घने काले केश मेघ-श्रेणी के समान जान पड़ते हैं? वह कौन है, जिसके रक्तोत्पल युगलचरण शिव की छाती पर विराजमान हैं? वह कौन है, जिसके नखों में रजनीकर का वास है और जिसके पैरों की दीप्ति सूर्य को भी मात कर रही है? वह कौन है, जिसके मुख पर मधुर हास्य शोभायमान है ओर जिसका विकट अट्टाहास रह-रहकर दसों दिशाओ को गुँजा दे रहा है?

उन्होने फिर गाया –

गाना – दीनतारिणी, दुरितहारिणी, सत्त्व-रजस्तम-त्रिगुणधारिणी।

सृजन-पालन-निधन-कारिणी, सगुणा निर्गुण सर्वस्वरूपिणी।...

बिहारी गा रहे हैं - (भावार्थ) –

"ऐ श्यामा! शवारूढ़ा माँ सुनो, मैं तुम्हारे पास अपने हृदय की आन्तरिक कामना व्यक्त करता हूँ। जब मेरी अन्तिम साँस इस देह को छोड़ चलेगी तब, ऐ शिवे, तुम मेरे हृदय में प्रकाशित होना। उस समय, माँ, मैं मन-मन वन-वन घूमकर सुन्दर जवा-कुसुम चुनकर ले आऊँगा, और उसमें भक्ति-चन्दन मिलाकर तुम्हारे श्रीचरणो मे पुष्पांजलि दूँगा।"

भक्तों के साथ मणि गा रहे हैं – (भावार्थ) –

"ओ माँ! सब कुछ तुम्हारी ही इच्छा से होता है। ऐ तारा! तुम इच्छामयी हो! तुम अपने कर्म आप ही करती हो, पर लोग बोलते हैं 'मैं करता हूँ।' माँ, तुम हाथी को कीचड़ में फँसा देती हो, पंगु को गिरि लाँघने में समर्थ कर देती हो, किसी को तुम इन्द्रत्वपद दे देती हो, तो किसी को अधोगामी बना देती हो। अम्बे! मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो. मैं गृह हूँ, तुम गृहिणी हो; मैं रथ हूँ, तुम रथी हो। माँ, तुम मुझे जैसा चलाती हो, वैसा ही चलता हूँ।"

पुनः –

"ऐ माँ, तुम्हारी करुणा से सभी कुछ सम्भव हो सकता है। अलंघ्य पर्वत के समान विघ्न-बाधा भी तुम्हारी कृपा से दूर हो जाती है। तुम मंगलनिधान हो, तुम सभी का मंगल करती हो - सभी को सुख और शान्ति प्रदान करती हो। तो फिर माँ, अपने फलाफल की चिन्ता करके मैं ही क्यों ही क्यों व्यर्थ जला जा रहा हूँ?"

पुनः –

"ओ माँ आनन्दमयी, मुझे निरानन्द न कर देना!..."

पुनः –

"निबिड़ अंधकार में, ऐ माँ, तेरी अरूप-राशि चमक उठती है।..."

श्रीरामकृष्ण अब प्रकृतिस्थ हो गये हैं। उन्होंने इस गीत को गाने को कहा – "ऐ श्यामा! सुधातरंगिणी! नहीं मालूम, तुम कब किस रंग में रहती हो।"

इस गाने के समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण 'शिव के साथ सदा ही रंग में रँगी हुई तुम आनन्द में मग्न हो' इस गीत को गाने के लिए आदेश कर रहे हैं।

भक्तों के आनन्द के लिए श्रीरामकृष्ण कुछ खीर अपने मुख में लगा रहे है, परन्तु उसी समय भाव में विभोर हो बिलकुल बाह्य संज्ञाशून्य हो गये।

कुछ देर बाद भक्तगण श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके प्रसाद लेकर बैठकखाने मे चले गये। सब एक साथ आनन्दपूर्वक प्रसाद पाने लगे।

रात के नौ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण ने कहला भेजा, 'रात हो गयी है, सुरेन्द्र के यहाँ आज कालीपूजा है, तुम लोगों का न्योता है, तुम लोग जाओ।'

भक्तगण आनन्द करते हुए सिमला में सुरेन्द्र के यहाँ पहुँचे। सुरेन्द्र ने आदरपूर्वक उन्हें ऊपरवाले बैठकखाने में ले जाकर बैठाया। घर में उत्सव है, सब लोग गीत और वाद्य के द्वारा आनन्द मना रहे हैं।

सुरेन्द्र के यहाँ से प्रसाद पाकर लौटते हुए भक्तों को आधी रात से अधिक हो गयी।

□□□

परिच्छेद १३२

काशीपुर में श्रीरामकृष्ण

(१)

कृपासिन्धु श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ काशीपुर मे रहते है। शुक्रवार, ११ दिसम्बर १८८५ को श्यामपुकुर का मकान छोड़कर उन्हे यहाँ ले आया गया। यहाँ आये आज बारह दिन हो गये। इतनी कठिन बीमारी होते हुए भी उन्हे यही चिन्ता रहती है कि किस तरह भक्तो का कल्याण हो। दिन-रात किसी-न-किसी भक्त के सम्बन्ध मे चिन्ता किया करते है।

श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए बालक भक्त क्रमश: काशीपुर मे आकर रह रहे है। अभी भी बहुतेरे भक्त अपने घर आया जाया करते है। गृही भक्त प्राय: रोज आकर देख जाया करते है, कभी कभी रात को भी रह जाते है।

इस समय तक लगभग सभी भक्त एकत्रित हो गये है। १८८१ ई मे भक्तो का समागम होने लगा था। अन्त के प्राय: सभी भक्त आ गये है। १८८४ ई. के अन्तिम भाग मे शरद और शशी ने श्रीरामकृष्ण का प्रथम दर्शन किया था। कालेज की परीक्षा के बाद, १८८५ ई. की मई-जून से वे सदा ही उनके पास आया-जाया करते है। गिरीश घोष ने श्रीरामकृष्ण का सर्वप्रथम दर्शन १८८४ ई. के सितम्बर मास मे स्टार थिएटर मे किया था, शारदा ने १८८४ दिसम्बर के अन्त मे, तथा सुबोध और क्षीरोद ने १८८५ अगस्त मे।

आज बुधवार है, २३ दिसम्बर १८८५। आज सुबह से प्रेम की मानो लूट मची हुई है। श्रीरामकृष्ण निरंजन से कह रहे है, 'तू मेरा बाप है, मै तेरी गोद मे बैठूगा।' कालीपद की छाती पर हाथ रखकर वे कह रहे है, 'चैतन्य हो', और उनकी ठुड्डी पकड़कर उनका दुलार कर रहे है। कह रहे है, 'जिसने हृदय मे ईश्वर को पुकारा होगा, जिसने सन्ध्योपासना की होगी, उसे यहाँ आना ही होगा।' आज प्रात.काल दो भक्त-स्त्रियो पर भी कृपादृष्टि हो गयी। समाधिस्थ होकर उन्होने अपने पैर से उनका स्पर्श किया। उस समय उन स्त्रियो की ऑखो मे ऑसू आ गये। एक ने रोते हुए कहा, 'आपकी इतनी कृपा।' सचमुच ही, आज श्रीरामकृष्ण ने प्रेम की लूट मचा रखी है। सीती के गोपाल पर कृपा करने की इच्छा है, इसलिए कह रहे है, 'उसे बुला ले आओ।'

सन्ध्या हो गयी है। श्रीरामकृष्ण जगन्माता की चिन्ता कर रहे हैं।

कुछ देर बाद बड़े ही धीमे स्वर में दो-एक भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं। कमरे में काली, चुन्नीलाल, मास्टर, नवगोपाल, शशी, निरंजन आदि भक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण – एक स्टूल खरीद लाना – यहाँ के लिए। कितना लगेगा?

मास्टर – जी, दो-तीन रुपये के भीतर आ जायगा।

श्रीरामकृष्ण – नहाने की चौकी जब बारह आने में मिलती है तो उसकी कीमत इतनी क्यों होगी?

मास्टर – कीमत ज्यादा न होगी – उतने के ही भीतर हो जायगा।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, कल तो बृहस्पतिवार है – तीसरा पहर अशुभ होगा। क्या तुम तीन बजे से पहले न आ सकोगे?

मास्टर – जी हाँ, आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, यह बीमारी कितने दिनों में अच्छी होगी?

मास्टर – जरा बढ़ गयी है, कुछ दिन लगेंगे।

श्रीरामकृष्ण – कितने दिन?

मास्टर – पाँच-छः महीने लग सकते है।

यह सुनकर श्रीरामकृष्ण बालक की तरह अधीर हो गये। कहते है – "कहते क्या हो?"

मास्टर – जी, मैंने जड़-समेत अच्छी होने के लिए इतने दिन बतलाये हैं।

श्रीरामकृष्ण – यह कहो। अच्छा, ईश्वरी रूपों के इतने दर्शन होते हैं, भाव और समाधि होती है, फिर ऐसी बीमारी क्यों हुई?

मास्टर – जी, आपको कष्ट तो बहुत हो रहा है, परन्तु इसका उद्देश्य है।

श्रीरामकृष्ण – क्या उद्देश्य है?

मास्टर – आपकी अवस्था में परिवर्तन हो रहा है। निराकार की ओर झुकाव हो रहा है। आपका 'विद्या का मैं' भी नष्ट हुआ जा रहा है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, लोक-शिक्षा बन्द हो रही है। अब और नहीं कहा जाता। सब राममय देख रहा हूँ। कभी कभी मन में आता है, किससे कहूँ? देखो न, यह मकान किराये पर लिया गया, इससे कितने प्रकार के भक्त आ रहे हैं।

"कृष्णप्रसन्न सेन या शशधर की तरह साइन-बोर्ड तो न लटकाया जायगा कि इतने समय से इतनी समय तक लेक्चर होगा!" (श्रीरामकृष्ण और मास्टर हँसते हैं)

मास्टर – एक उद्देश्य और है, भक्तों का चुनना। पाँच साल तक तपस्या करके जो कुछ न होता, वह इन्हीं कुछ दिनों में भक्तों को हो गया। उनका प्रेम, उनकी भक्ति आषाढ़ की बाढ़ के समान बढ़ती जा रही है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह तो हुआ। अभी निरंजन घर गया था।

(निरंजन से) "तू बता, तुझे क्या मालूम पड़ता है?"

निरंजन – जी, पहले प्यार ही था, परन्तु अब छोड़कर नही रहा जाता।

मास्टर – मैंने एक दिन देखा था, ये लोग कितना बढ़े-चढ़े हैं।

श्रीरामकृष्ण – कहाँ?

मास्टर – एक तरफ खड़ा हुआ श्यामपुकुरवाले मकान मे देखा था। जान पड़ा, ये लोग कितनी बड़ी बाधाओं को हटाकर वहाँ सेवा के लिए आकर बैठे हुए हैं।

यह बात सुनते ही श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। कुछ देर तक वे स्तब्ध रहे, फिर समाधिस्थ हो गये।

भाव का उपशम होने पर मास्टर से कह रहे हैं – "मैने देखा, साकार से सब निराकार मे जा रहे है। और सब बातें कहने की इच्छा हो रही है, परन्तु कहने की शक्ति नही है।

"अच्छा, यह निराकार की ओर का सुझाव केवल लीन होने के लिए है न?"

मास्टर – (आवाक् होकर) – जी, ऐसा ही होगा।

श्रीरामकृष्ण – अब भी देख रहा हूँ, निराकार अखण्ड सच्चिदानन्द – ठीक इसी तरह ... परन्तु बड़े कष्ट से मुझे भाव-संवरण करना पड़ रहा है।

"तुमने जो भक्तो के चुनने की बात कही, वह ठीक है। इस बीमारी में यह समझ मे आ रहा है कि कौन अन्तरंग है और कौन बहिरंग। जो लोग संसार को छोड़कर यहाँ पर है, वे अंतरंग हैं। और जो लोग एक बार आकर केवल पूछ जाते हैं, 'कैसे हैं, आप महाशय?' वे बहिरंग है।

"भवनाथ को तुमने देखा नही? श्यामपुकुर में दूल्हा-सा सजकर आया और पूछा – 'कैसे है आप?' बस तबसे फिर उसने इधर का नाम तक नही लिया। नरेन्द्र के कारण ही मैं उसका इतना ख्याल करता हूँ, परन्तु अब उस पर मेरा मन नही है।"

(२)

श्रीमुखकथित चरितामृत

श्रीरामकृष्ण – (मणि से) – जब ईश्वर भक्तों के लिए शरीर धारण करके आते हैं, तब उनके साथ साथ भक्त भी आते हैं। उनमें कोई अन्तरंग होते हैं, कोई बहिरंग, और कोई रसददार (आवश्यकताओं को पूरी करनेवाले) होते हैं।

"दस-ग्यारह साल की उम्र में विशालाक्षी के दर्शन करने के लिए जब मैं गया था, तब मैदान में मेरी पहली भावावस्था हुई थी। कितनी सुन्दर अवस्था थी वह! मैं बिलकुल बाह्यज्ञान शून्य हो गया था।

"जब बाईस-तेईस साल की उम्र थी तब उसने (जगन्माता ने) मुझसे कालीघर (दक्षिणेश्वर) में पूछा – 'क्या तू अक्षर होना चाहता है?' मैं अक्षर का अर्थ जानता ही न था। पूछने पर हलधारी ने बतलाया, 'क्षर का अर्थ है जीव और अक्षर का अर्थ है परमात्मा।'

"जब आरती होती थी, तब मैं कोठी के ऊपर से चिल्लाता था, 'अरे भक्तो, तुम सब कहाँ हो? आओ, जल्दी आओ। सांसारिक मनुष्यों के बीच में मेरे प्राण निकले जा रहे हैं।' इंग्लिशमैनों (अंग्रेजी पढ़े आदमियों) से अपना हाल कहा तो उन्होंने बतलाया, 'यह सब मन की भूल है।' तब, अपने मन में यह कहकर 'शायद ऐसा ही हो' मैं चुप हो गया। परन्तु अब तो वह सब ठीक उतर रहा है। – अब भक्त आकर एकत्रित हो रहे हैं।

"फिर माँ ने दिखलाया, पाँच आदमी सेवा करनेवाले हैं। पहला मथुरबाबू है। फिर शम्भु मल्लिक, उसे पहले मैंने कभी नहीं देखा था। भावावेश में मैंने देखा, गोरे रंग का आदमी, सिर पर टोपी पहने हुए। जब बहुत दिनों बाद शम्भु को देखा, तब याद आ गया कि इसी को मैंने भावावस्था में देखा था। सेवा करनेवाले और तीन आदमी अभी ठीक नहीं हुए; परन्तु सब गोरे रंग के हैं। सुरेन्द्र बहुत करके रसददार की तरह जान पड़ता है। यह अवस्था जब हुई, तब ठीक मेरी तरह का एक आदमी आकर मेरी इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियों को खूब हिला गया। षड्चक्रों के एक-एक पद्म के साथ जिह्वा के द्वारा रमण करता था, ऐसा करने से ही वे अधोमुख पद्म ऊर्ध्वमुख हो गये। अन्त में सहस्रार पद्म विकसित हो गया।

"कब किस तरह का आदमी आयेगा, यह पहले ही से माँ मुझे दिखा देती थीं। इन्हीं आँखों से मैं देखा करता था – भावावेश में नहीं। मैंने देखा, चैतन्यदेव का संकीर्तन बकुल वृक्ष से वट वृक्ष की ओर जा रहा है। उसमें मैंने बलराम को देखा था और शायद तुम्हें भी देखा था। मेरे पास बार बार आने से तुममें और चुन्नी में आध्यात्मिक जागृति हुई है।

"शशी और शरद को देखा था, ये ईशु के दल में थे।

"वट वृक्ष के नीचे एक बच्चे को देखा था। हृदय ने कहा, 'तब तो तुम्हारे एक लड़का होगा?' मैंने कहा, 'मेरे लिए तो सब मातृयोनि है, मेरे लड़का कैसे होगा?' वह लड़का राखाल है।

"मैंने कहा, 'माँ, जब तुमने मेरी ऐसी ही अवस्था कर दी है तब एक बड़ा आदमी भी मिला दो।' इसीलिए मथुरबाबू ने चौदह वर्ष तक सेवा की। और उसने कितना किया! – साधुओं की सेवा के लिए अलग भण्डार कर दिया; गाड़ी, पालकी, जो वस्तु जिसे देने के लिए मैं कहता था, वह तुरन्त दे देता था! ब्राह्मणी उसे प्रताप रुद्र* कहती थी।

---

* प्रताप रुद्र उड़ीसा के राजा तथा श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्त थे। उन्होंने श्रीचैतन्य देव की अत्यन्त श्रद्धा तथा भक्ति के साथ सेवा की थी।

"विजय ने इस रूप के (अपनी ओर इंगित कर) दर्शन किये थे। अच्छा, यह क्या है? – वह कहता है, तुम्हें इस समय छूने पर जैसा अनुभव होता है, वैसा ही मुझे उस समय हुआ था।

"लाटू ने गिना, इकतीस भक्त हैं। इतने तो बहुत नहीं हुए। पर हॉ, कुछ भक्त विजय तथा केदार के द्वारा भी बन रहे हैं।

"भावावेश में माँ ने दिखलाया, अन्तिम दिनों में मुझे पायस खाकर ही रहना होगा।

"इस बीमारी में वह (श्रीरामकृष्ण की धर्मपत्नी) मुझे एक दिन पायस खिला रही थी। तब यह कहकर मै रोने लगा, 'क्या यही मेरा अन्तिम दिनों का पायस खाना है, और इतने कष्टपूर्वक!' "

□□□

परिच्छेद १३३

भक्तों का तीव्र वैराग्य

(१)

ईश्वर के लिए नरेन्द्र की व्याकुलता

श्रीरामकृष्ण काशीपुर के बगीचे में, मकान के ऊपरवाले मँजले में बैठे हुए है। दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर से श्रीयुत राम चटर्जी उनका कुशल-समाचार लेने के लिए आये थे।

श्रीरामकृष्ण मणि के साथ इसी सम्बन्ध में बातचीत करते हुए पूछ रहे हैं – 'क्या इस समय वहाँ (दक्षिणेश्वर मे) ठण्डक ज्यादा है?'

आज पौष कृष्णा चतुर्दशी, सोमवार है, ४ जनवरी, १८८६। दिन के चार बजे का समय होगा।

नरेन्द्र आये और आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण उन्हें रह-रहकर देख रहे हैं और मुस्करा रहे हैं – मानो उनका स्नेह उछला जा रहा हो। श्रीरामकृष्ण ने मणि से इशारे से कहा कि नरेन्द्र रोये थे। फिर वे चुप हो गये। इसके बाद उन्होंने फिर इशारा किया कि नरेन्द्र घर से रास्ते भर रोते हुए आये थे।

सब लोग चुप हैं। अब नरेन्द्र बातचीत कर रहे हैं।

नरेन्द्र – सोच रहा हूँ, आज वहाँ चला जाऊँ।

श्रीरामकृष्ण – कहाँ?

नरेन्द्र – दक्षिणेश्वर के बेलतल्ले में, – वहाँ रात को धूनि जलाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, वे लोग (पड़ोस में 'मैगनीज' के पदाधिकारी) जलाने नहीं देंगे। पंचवटी बहुत अच्छी जगह है, – बहुत से साधुओं ने वहाँ जप-ध्यान किया है।

"परन्तु बहुत ठण्डा है, और अँधेरा भी है।"

सब लोग चुप हैं। श्रीरामकृष्ण फिर बोले।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से, सहास्य) – तू पढ़ेगा नहीं?

नरेन्द्र – (श्रीरामकृष्ण और मणि की ओर देखकर) – एक दवा पाऊँ तो जी में जी आये, – वह दवा ऐसी कि उससे जो कुछ मैंने पढ़ा है, सब भूल जाऊँ।

श्रीयुत गोपाल भी बैठे हुँए हैं। उन्होंने कहा – 'साथ मैं भी चलूँगा।' श्रीयुत कालीपद घोष श्रीरामकृष्ण के लिए अंगूर लाये है। अंगूरों का डब्बा श्रीरामकृष्ण के पास ही रखा था। श्रीरामकृष्ण भक्तो को अंगूर दे रहे हैं। नरेन्द्र को पहले दिया। फिर प्रसादी बताशों की तरह सब अंगूर लुटा दिये। भक्तों ने, जिसने जहाँ पाया, बीन लिया।

(२)

नरेन्द्र का तीव्र वैराग्य

शाम हो गयी है, नरेन्द्र नीचे बैठे हुए एकान्त में मणि से अपने प्राणो की विकलता के सम्बन्ध में बातें कर रहे हैं।

नरेन्द्र – (मणि से) – गत शनिवार को मैं यहाॅ ध्यान कर रहा था, एकाएक छाती के भीतर न जाने कैसा होने लगा।

मणि – कुण्डलिनी का जागरण हुआ होगा।

नरेन्द्र – सम्भव है, वही हो। इड़ा और पिगला का बिलकुल स्पष्ट अनुभव हुआ। हाजरा से मैने कहा, छाती पर हाथ रखकर देखने के लिए। कल रविवार था, ऊपर जाकर मै इनसे (श्रीरामकृष्ण से) मिला और सब बातें उन्हें कह सुनायीं।

मैंने कहा, "सब की तो बन गयी, कुछ मुझे भी दीजिये। सब का तो काम हो गया और मेरा क्या न होगा?"

मणि – उन्होंने तुमसे क्या कहा?

नरेन्द्र – उन्होने कहा, 'तू घर का कोई प्रबन्ध करके आ, सब हो जायगा। तू क्या चाहता है?'

मैने कहा, 'मेरी इच्छा है, लगातार तीन-चार दिन तक समाधि-लीन रहा करूँ। कभी कभी बस भोजन भर के लिए उठूँ!'

उन्होंने कहा, 'तू तो बड़ी नीच बुद्धि का है। उस अवस्था से भी ऊँची अवस्था है। तू गाता भी तो है – जो कुछ है, सो तू ही है।'

मणि – हाँ, वे तो सदा ही कहते है कि समाधि से उतरकर मन देखता है कि वे ही जीव और जगत् हुए है। यह अवस्था ईश्वरकोटि की हो सकती है। वे कहते हैं, जीवकोटि समाधिअवस्था को प्राप्त करते हैं, परन्तु फिर वे वहाँ से उतर नहीं सकते।

नरेन्द्र – उन्होंने कहा, 'तू घर के लिए कोई व्यवस्था करके आ। समाधिलाभ की अवस्था से भी ऊँची अवस्था हो सकेगी।'

"आज सबेरे मैं घर गया तो सब लोग डाँटने लगे और कहा, 'तुम क्या इधर-उधर घूमते रहते हो! कानून की परीक्षा सिर पर आ गयी और तुम्हें न पढ़ना न लिखना – आवारा घूमते फिरते हो!' "

मणि – तुम्हारी माँ ने भी कुछ कहा?

नरेन्द्र – नहीं, वे मुझे खिलाने के लिए व्यस्त हो रही थीं।

मणि – फिर?

नरेन्द्र – दीदी के घर में, उसी पढ़नेवाले कमरे में मैं पढ़ने लगा। पर पढ़ने बैठा तो हृदय में एक बहुत बड़ा आतंक छा गया, जैसे पढ़ना एक भय का विषय हो! छाती धड़कने लगी! – इस तरह मैं और कभी नहीं रोया।

"फिर पुस्तकें फेंककर भागा! – रास्ते से होकर भागता गया। जूते रास्ते में न जाने कहाँ पड़े रह गये! धान के पयाल के ढेर के पास से होकर भाग रहा था। देह भर में पयाल लिपट गया। मैं काशीपुर के रास्ते की ओर भाग रहा था।"

नरेन्द्र कुछ देर चुप रहे। फिर कहने लगे – "विवेकचूड़ामणि सुनकर मन और बिगड़ गया है। शंकराचार्य लिखते हैं – इन तीन संयोगों को बड़ी ही तपस्या का फल समझना चाहिए, ये बड़े भाग्य से मिलते हैं, – मनुष्यत्वं मुमुक्षत्वं महापुरुष संश्रय:।

"मैंने सोचा, मेरे लिए तीनों का संयोग हो गया है। बड़ी तपस्या का फल तो यह है कि मनुष्य-जन्म हुआ है, बड़ी तपस्या से मुक्ति की इच्छा हुई है, और सब से बड़ी तपस्या का फल यह है कि ऐसे महापुरुष का संग प्राप्त हुआ है!"

मणि – अहा!

नरेन्द्र – संसार अब अच्छा नहीं लगता। संसार में जो लोग हैं, उनसे भी जी हट गया है। दो-एक भक्तों को छोड़कर और कुछ अच्छा नहीं लगता।

नरेन्द्र फिर चुप हो रहे। नरेन्द्र के भीतर तीव्र वैराग्य है। इस समय भी प्राणों में उथल-पुथल मची हुई है। नरेन्द्र फिर बातचीत कर रहे हैं।

नरेन्द्र – (मणि के प्रति) – आप लोगों को तो शान्ति मिल गयी है, परन्तु मेरे प्राण अस्थिर हो रहे हैं। आप ही लोग धन्य हैं।

मणि ने कोई उत्तर नहीं दिया। चुप हैं। सोच रहे हैं – श्रीरामकृष्ण ने कहा था, ईश्वर के लिए व्याकुल होना चाहिए, तब उनके दर्शन होते हैं। सन्ध्या के बाद ही मणि ऊपरवाले कमरे में गये। देखा, श्रीरामकृष्ण सो रहे हैं।

रात के नौ बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण के पास निरंजन और शशी हैं। श्रीरामकृष्ण जागे। रह-रहकर वे नरेन्द्र की ही बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – नरेन्द्र की अवस्था कितने आश्चर्य की है! देखो, यही नरेन्द्र पहले साकार नहीं मानता था। अब इसके प्राणों में कैसी खलबली मची हुई है, तुमने देखा? जैसा उस कहानी में है – किसी ने पूछा था, 'ईश्वर किस तह मिल सकेंगे?' तब गुरु ने कहा, 'मेरे साथ चलो, मैं तुम्हें दिखलाता हूँ कि किस तरह की अवस्था में ईश्वर मिलते हैं।' यह कहकर गुरु ने एक तालाब में उसे ले जाकर डुबो दिया और ऊपर से दबाकर

रखा, फिर कुछ देर बाद उसे छोड़कर गुरु ने पूछा – 'कहो तुम्हारे प्राण कैसे हो रहे थे?' उसने कहा, 'प्राण छटपटा रहे थे – मानो अब निकलते ही हों।'

"ईश्वर के लिए प्राणों के छटपटाते रहने पर समझना कि अब दर्शन मे देर नही है। अरुणोदय होने पर, पूर्व मे लाली छा जाने पर समझ पड़ता है कि अब सूर्योदय होगा।"

आज श्रीरामकृष्ण की बीमारी बढ़ गयी है। शरीर को इतना कष्ट है, फिर भी नरेन्द्र के सम्बन्ध मे ये सब बाते संकेत द्वारा भक्तो को बतला रहे है।

आज रात को नरेन्द्र दक्षिणेश्वर चले गये। अमावस्या की रात्रि, घोर अन्धकारमयी हो रही है। नरेन्द्र के साथ दो-एक भक्त भी गये। रात को मणि बगीचे मे हो है। स्वप्न मे देख रहे है, वे संन्यासियो की मण्डली के बीच मे बैठे हुए है।

(३)

भक्तों का तीव्र वैराग्य

दूसरे दिन मंगलवार है, ५ जनवरी। दिन के चार बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण शय्या पर बैठे हुए मणि से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – क्षीरोद अगर गंगासागर जाय, तो उसे एक कम्बल खरीद देना।

मणि – जी महाराज, जो आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, इन लड़को को भला यह क्या हो रहा है? कोई पुरी भाग रहा है तो कोई गंगासागर जा रहा है!

"सब घर छोड़-छोड़कर आ रहे है! देखो न नरेन्द्र को। तीव्र वैराग्य के होने पर संसार कुआँ तथा आत्मीय काले साँप जैसे जान पड़ते है।"

मणि – जी, संसार मे बड़ा कष्ट है।

श्रीरामकृष्ण – जन्म से ही नरक-यन्त्रणा होती है। देख रहे हो न, बीबी और बच्चो को लेकर कितना कष्ट होता है!

मणि – जी हाँ, और आपने कहा था, उनको (बालक भक्तो को) न किसी से लेना है, न देना; इस लेने-देने के लिए ही अटका रहना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण – देखते हो न निरंजन को! उसका भाव है – 'यह ले अपना और इधर ला मेरा।' बस, और कोई सम्बन्ध नही, और कोई खिंचाव नही।

"कामिनी-कांचन, यही संसार है। देखो न, धन होता है तो तुम्हे उसे भविष्य के लिए सुरक्षित रख छोड़ने की सूझती है।"

यह सुनकर मणि ठहाका मारकर हँसने लगे। श्रीरामकृष्ण भी हँसे।

मणि – रुपया निकालते हुए बड़ा हिसाब पैदा होता है। (दोनो हँस पड़े) आपने

दक्षिणेश्वर में कहा था, त्रिगुणातीत होकर अगर कोई संसार में रह सके तो हो सकता है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, बालक की तरह।

मणि – जी, परन्तु है बड़ा कठिन, बड़ी शक्ति चाहिए।

श्रीरामकृष्ण कुछ चुप हैं।

मणि – कल वे लोग दक्षिणेश्वर में ध्यान करने के लिए गये। मैंने स्वप्न देखा।

श्रीरामकृष्ण – क्या देखा?

मणि – देखा, नरेन्द्र आदि संन्यासी हो गये हैं, धूनी जलाकर बैठे हुए हैं। उनके बीच में मैं भी बैठा हुआ हूँ।

श्रीरामकृष्ण – मन से त्याग होने से ही हुआ; अगर ऐसा कोई कर सका तो वह भी संन्यासी है।

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। फिर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु वासना में आग लगाओ, तब होगा।

मणि – बड़ाबाजार में मारवाड़ियो के पण्डित से आपने कहा था, 'मुझमें भक्ति की कामना है', – भक्ति की कामना की गणना शायद कामनाओं में नहीं होती।

श्रीरामकृष्ण – जैसे 'हिंचे' का साग सागों में नहीं गिना जाता, क्योंकि उससे पित्त का दमन होता है।

"अच्छा, इतना आनन्द-भाव था, वह सब कहाँ गया?"

मणि – गीता में जो त्रिगुणातीत अवस्था लिखी है, वही हुई होगी। सत्त्व, रज और तमोगुण आप ही आप काम कर रहे हैं, आप स्वयं निर्लिप्त हैं – सत्त्वगुण से भी आप निर्लिप्त हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, जगन्माता ने मुझे बालक की अवस्था में रखा है।

"क्या अबकी बार देह न रहेगी?"

श्रीरामकृष्ण और मणि चुप हैं। नरेन्द्र नीचे से आये। एक बार घर जायेंगे। वहाँ की व्यवस्था करके आयेंगे।

पिता के स्वर्गवास के बाद से नरेन्द्र की माँ और भाई बड़े कष्ट में हैं। कभी कभी फाके भी हो जाते हैं। नरेन्द्र ही उनका एकमात्र भरोसा है कि वे रोजगार करके उन्हें खिलायेंगे। परन्तु कानून की परीक्षा नरेन्द्र दे नहीं सके। इस समय उन्हें तीव्र वैराग्य है। इसीलिए आज का प्रबन्ध करने के लिए वे जा रहे हैं। एक मित्र ने उन्हें सौ रुपया कर्ज देने के लिए कहा है। उन्हीं रुपयों से घर के लिए तीन महीने तक के भोजन का प्रबन्ध करके आयेंगे।

नरेन्द्र – जरा घर जाता हूँ एक बार। (मणि से) महिम चक्रवर्ती के घर से होकर जाऊँगा, क्या आप चलेंगे?

मणि की जाने की इच्छा नही है। श्रीरामकृष्ण ने उनकी ओर देखकर नरेन्द्र से पूछा – 'क्यो?'

नरेन्द्र – उसी रास्ते से जा रहा हूँ, उनके साथ जरा बाते करता।

श्रीरामकृष्ण एकदृष्टि से नरेन्द्र को देख रहे है।

नरेन्द्र – यहाँ के एक मित्र ने सौ रुपये उधार देने के लिए कहा है। उन्ही रुपयो से घर का तीन महीने के लिए प्रबन्ध करके आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण चुप है। मणि की ओर उन्होने देखा।

मणि – (नरेन्द्र से) – नही, तुम लोग चलो, मै बाद मे आऊँगा।

परिच्छेद १३४

श्रीरामकृष्ण कौन हैं?

(१)

ज्ञानयोग तथा भक्तियोग का समन्वय

श्रीरामकृष्ण काशीपुर के बगीचे में भक्तों के साथ बड़े कमरे में रहते हैं। रात के आठ बजे का समय होगा। कमरे में नरेन्द्र, शशि, मास्टर, बूढ़े गोपाल और शरद हैं। आज बृहस्पतिवार है, फाल्गुन की शुक्ला षष्ठी, ११ मार्च, १८८६।

श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ हैं, जरा लेटे हुए हैं। पास ही भक्तगण बैठे हैं। शरद खड़े हुए पंखा झल रहे हैं। श्रीरामकृष्ण बीमारी की बातें कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – भोलानाथ के पास जाना, वह तेल देगा; और किस तरह लगाया जाय, यह भी बतला देगा।

बूढ़े गोपाल – तो कल सबेरे हम लोग जाकर ले आयेंगे।

मास्टर – यदि कोई आज शाम को जाय तो वही ले आयगा।

शशि – मैं जा सकता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – (शरद की ओर दिखाकर) – वह जा सकता है।

शरद कुछ देर बाद दक्षिणेश्वर मन्दिर के मुहर्रिर श्रीयुत भोलानाथ मुखोपाध्याय के पास से तेल लाने के लिए गये।

श्रीरामकृष्ण लेटे हुए हैं। भक्तगण चुपचाप बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण एकाएक उठकर बैठे गये। नरेन्द्र के साथ वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – ब्रह्म अलेप हैं। उनमें तीनों गुण हैं; किन्तु फिर भी वे निर्लिप्त हैं।

"जैसे वायु में सुगन्ध और दुर्गन्ध दोनों मिलती हैं, परन्तु वायु निर्लिप्त है।

"काशी में रास्ते से शंकराचार्य जा रहे थे। उधर से माँस का भार लेकर चाण्डाल आया और एकाएक उसने इन्हें छू लिया। शंकर ने कहा, 'छू लिया!' चाण्डाल ने कहा, 'भगवन्, न आपने मुझे छुआ और न मैंने आपको। आत्मा निर्लिप्त है। आप वही शुद्ध आत्मा हैं।'

"ब्रह्म और माया। ज्ञानी माया को अलग कर देता है।

"माया पर्दे की तरह है। यह देखो, इस अँगौछे की आड़ कर देता हूँ। अब तुम दीपक की लौ नहीं देख सकते।"

श्रीरामकृष्ण ने अपने तथा भक्तो के बीच अँगौछे की आड़ करके कहा, "यह देखो, अब तुम मेरा मुँह नहीं देख सकते।

"रामप्रसाद ने जैसा कहा है, 'मसहरी उठाकर देखो –'

"परन्तु भक्त माया को नहीं छोड़ता। वह महामाया की पूजा करता है। शरणागत होकर कहता है, 'माँ, रास्ता छोड़ दो, तुम जब रास्ता छोड़ोगी, तभी मुझे ब्रह्मज्ञान होगा!' जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति – इन तीनों अवस्थाओं को ज्ञानी अस्तित्वहीन कहकर हटा देते हैं। भक्त इन सब अवस्थाओं को लेते हैं – जब तक 'मैं' है, तब तक ये सब हैं।

"जब तक 'मैं' है, तब तक भक्त देखता है, जीव-जगत्, माया और चौबीस तत्त्व, सब कुछ वे ही हुए हैं।"

नरेन्द्र तथा अन्य भक्त चुपचाप सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण – पर मायावाद शुष्क है। (नरेन्द्र से) मैने क्या कहा, बतलाओ।

नरेन्द्र – माया शुष्क है।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के हाथ और मुख का स्पर्श करके कहने लगे – "ये सब भक्तो के लक्षण हैं। ज्ञानियों के लक्षण और हैं – मुखाकृति मे रूखापन रहता है।

"ज्ञान लाभ करने के बाद भी ज्ञानी विद्या-माया को लेकर रह सकता है – भक्ति, दया, वैराग्य, इन सब को लेकर रह सकता है। इसके दो उद्देश्य हैं। पहला, इससे लोक-शिक्षा होती है; दूसरा, रसास्वादन के लिए।

"ज्ञानी अगर समाधि लगाकर चुप हो जाय, तो लोक-शिक्षा नहीं होती। इसीलिए शंकराचार्य ने 'विद्या का मैं' रखा था।

"और ईश्वरानन्द का भोग करने के लिए भक्त भक्ति लेकर रहता है।

"इस 'विद्या के मैं' मे या 'भक्ति के मैं' में दोष नही है। दोष तो 'बदमाश मैं' में है। उनके दर्शन करने के बाद बालक-जैसा स्वभाव हो जाता है। 'बालक के मैं' में कोई दोष नही है, जैसे आईने का प्रतिबिम्ब। वह लोगों को गालियाँ नहीं दे सकता। जली रस्सी देखने ही में रस्सी की तरह है। फूँकने से वह उड़ जाती है। इसी तरह ज्ञानी और भक्त का अहंकार ज्ञानाग्नि में जल गया है। अब वह किसी की क्षति नहीं कर सकता। वह 'मैं' नाममात्र के लिए है।

"नित्य मे पहुँचकर फिर लीला में रहना। जैसे उस पार जाकर फिर इस पार लौटना। लोक-शिक्षा और विलास के लिए – उनकी लीला में सहयोग देने के लिए।"

श्रीरामकृष्ण बडे धीमे स्वर मे वार्तालाप कर रहे है। वे कुछ देर चुप ही रहे। भक्तों

से फिर कहने लगे –

"शरीर को यह रोग है, परन्तु उसने (माता ने) अविद्यामाया नहीं रखी। देखो न, रामलाल, घर या स्त्री, इनकी मुझे याद भी नहीं आती। हाँ, यदि कोई चिन्ता है तो उसी पूर्ण नामक कायस्थ बालक की – उसी के लिए सोच रहा हूँ। औरों के बारे में तो मुझे कोई चिन्ता नहीं।

"विद्या-माया उन्हीं ने रख दी है – लोगों के लिए, भक्तों के लिए।

"परन्तु विद्या-माया के रहते फिर आना पड़ता है। अवतार आदि विद्या-माया रख छोड़ते है। जरासी वासना के रहने पर फिर आना पड़ता है – बार बार आना पड़ता है। सब वासनाओं के मिट जाने पर मुक्ति होती है। भक्त मुक्ति नहीं चाहता।

"यदि काशी में किसी का देहान्त हो तो मुक्ति होती है; फिर उसे आना नहीं पड़ता। ज्ञानियों का लक्ष्य मुक्ति है।"

नरेन्द्र – उस दिन हम लोग महिम चक्रवर्ती के यहाँ गये थे।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – फिर?

नरेन्द्र – उसकी तरह का शुष्क ज्ञानी मैंने नहीं देखा।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – क्या हुआ?

नरेन्द्र – हम लोगो से गाने के लिए कहा। गंगाधर ने गाया – कृष्णगीत। गाना सुनकर उसने कहा, 'इस तरह का गाना क्यों गाते हो? प्रेम-प्रेम अच्छा नहीं लगता। इसके अलावा बीबी-बच्चों को लेकर यहाँ रहता हूँ, यहाँ इस तरह के गाने क्यों?'

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – देखा, उसे कितना भय है!

(२)

श्रीरामकृष्ण के देह-धारण का अर्थ

श्रीरामकृष्ण काशीपुर के बगीचे में हैं। शाम हो गयी है, वे अस्वस्थ हैं। ऊपरवाले बड़े कमरे में उत्तर की ओर मुँह किये बैठे हैं। नरेन्द्र और राखाल दोनों पैर दबा रहे हैं। पास ही मणि बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण ने इशारे से उन्हें पैर दबाने के लिए कहा। मणि चरण-सेवा करने लगे।

आज रविवार है, १४ मार्च १८८६, फागुन की शुक्ला नवमी। गत रविवार को श्रीरामकृष्ण की जन्म-तिथि की पूजा बगीचे में हो गयी है। गत वर्ष दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में बड़े समारोह के साथ जन्म-महोत्सव मनाया गया था। इस वर्ष वे अस्वस्थ हैं। भक्तों के हृदय में विषाद छाया है। इसलिए पूजा और उत्सव नाममात्र के लिए हुए।

भक्तगण सदा ही बगीचे में उपस्थित रहकर श्रीरामकृष्ण की सेवा किया करते हैं। श्रीमाताजी दिनरात उनकी सेवा में लगी रहती है। किशोर भक्तों में से बहुतेरे सदा ही वहाँ

उपस्थित रहते है – नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, शरद, शशि, बाबूराम, योगीन, काली, लाटू आदि।

जो कुछ अधिक उम्रवाले भक्त है, वे प्राय: नित्य आकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर जाते है। कभी कभी वे रह भी जाते है। तारक, सीती के गोपाल भी वहाँ हर समय रहते हैं तथा छोटे गोपाल भी।

श्रीरामकृष्ण आज बहुत अस्वस्थ है। आधी रात का समय है। ऊपर के हाल मे श्रीरामकृष्ण लेटे हुए है। तबीयत बहुत खराब है – आँख नही लगती। दो-एक भक्त चुपचाप पास बैठे हुए है – इसलिए कि कब कैसी जरूरत हो। एक आध बार झपकी आती है, और श्रीरामकृष्ण सोते हुए से जान पड़ते है।

मास्टर पास बैठे है। श्रीरामकृष्ण इशारा करके और भी पास आने के लिए कह रहे है। उन्हे इतना कष्ट है कि पत्थर का हृदय भी पानी-पानी हो जाय। वे धीरे धीरे बड़े कष्ट के साथ मास्टर से कह रहे है – "तुम लोग रोओगे, इसलिए इतना दु:ख-भोग कर रहा हूँ। सब लोग अगर कहो कि इतने कष्ट से तो देह का नाश हो जाना ही अच्छा है, तो देह नष्ट हो जाय।"

श्रीरामकृष्ण की इन बातो को सुनकर भक्तो का हृदय टूकटूक हो रहा है। वे भक्तों के माता-पिता और रक्षक है। वे ऐसी बाते कह रहे है! सब लोग चुप हो रहे।

गम्भीर रात्रि है। श्रीरामकृष्ण की बीमारी मानो और बढ़ रही है। अब क्या किया जाय? बहुत सोचकर, भक्तो ने एक आदमी को कलकत्ता भेजा। उसी गम्भीर रात्रि मे श्रीयुत उपेन्द्र डाक्टर तथा श्रीयुत नवगोपाल कविराज को लेकर गिरीश काशीपुर के घर में आये।

भक्तगण पास बैठे है। श्रीरामकृष्ण जरा स्वस्थ हो रहे हैं – कह रहे है – "देह अस्वस्थ है, पंचभूतो से बना शरीर, – ऐसा तो होगा ही!"

गिरीश की ओर देखकर कह रहे है, "बहुत से ईश्वरीय रूपो को देख रहा हूँ। उनमें एक यह रूप भी (अपने रूप को) देख रहा हूँ।"

(३)

श्रीरामकृष्ण के दर्शन

आज चैत्र तृतीया है, सोमवार, १५ मार्च १८८६। सबेरे ७-८ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण कुछ अच्छे है, भक्तो के साथ धीरे-धीरे, कभी इशारे से, बातचीत कर रहे है। पास मे नरेन्द्र, राखाल, मास्टर, लाटू, सीती के गोपाल आदि बैठे हुए है।

भक्तमण्डली मौन है। पिछली रात की अवस्था सोचकर भक्तो के चेहरे पर विषाद की गम्भीरता छायी हुई है। सब चुपचाप बैठे है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर की ओर देखकर, भक्तों से) – क्या देख रहा हूँ? – सुनो, सब वे ही हुए हैं। मनुष्य और जिस-जिस जीव को मैं देख रहा हूँ, मानो सब चमड़े के बने हुए हैं, उनके भीतर से वे ही हाथ, पैर और सिर हिला रहे हैं। जैसा एक बार मैंने देखा था – मोम का मकान, बगीचा, रास्ता, आदमी, बैल – सब मोम के – सब एक ही चीज के बने हुए थे।

"देखता हूँ, वे ही बलि हैं, वे ही बलि देनेवाले हैं तथा वे ही बलि का खम्भा है।"

यह कहते कहते श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर हो रहे हैं। वे ईश्वर की उस व्यापकता का अनुभव करते हुए कह रहे हैं – 'अहा! अहा!'

फिर वही भावावस्था हो गयी। श्रीरामकृष्ण का बाह्यज्ञान चला जा रहा है। भक्तगण किंकर्तव्यविमूढ़ हो चुपचाप बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ होकर कह रहे हैं – "अब मुझे कोई कष्ट नहीं है। बिलकुल पहले जैसी अवस्था है।"

श्रीरामकृष्ण की इस दु:ख और सुख से अतीत अवस्था को देखकर भक्तो को आश्चर्य हो रहा है। लाटू की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है – "यह लाटू है। सिर पर हाथ रखे बैठा है। मैं देख रहा हूँ, वे ही (ईश्वर ही) सिर पर हाथ रखे बैठे हुए है।"

श्रीरामकृष्ण भक्तों की ओर देख रहे हैं और स्नेहार्द्र हो रहे हैं। शिशु को जिस तरह प्यार किया जाता है, उसी तरह वे राखाल और नरेन्द्र के प्रति स्नेह-भाव दिखला रहे है – उनके मुख पर हाथ फेर रहे हैं।

कुछ देर बार मास्टर से कहते हैं – "शरीर अगर कुछ दिन और रहता तो बहुतसे लोगो में आध्यात्मिकता की जागृति हो जाती।" इतना कहकर वे चुपचाप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं – "पर अब यह न होगा – अब यह शरीर नही रहेगा।" भक्त सोच रहे हैं कि श्रीरामकृष्ण और क्या कहेगे।

श्रीरामकृष्ण – इस शरीर को अब वे (ईश्वर) न रहने देगे, इसलिए कि मुझे सरल और मूर्ख समझकर कहीं सब लोग घेर न ले, और मैं सरल और मूर्ख कही सभी को सब कुछ दे न डालूँ। कलिकाल में लोग तो ध्यान और जप से घृणा करते है।

राखाल – (सस्नेह) – आप उनसे कहिये जिससे आपका शरीर रहे।

श्रीरामकृष्ण – वह ईश्वर की इच्छा।

नरेन्द्र – आपकी इच्छा और ईश्वर की इच्छा दोनों एक हो गयी है।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप है, मानो कुछ सोच रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र और राखाल आदि से) – और कहने से भी क्या होगा?

"अब देखता हूँ, एक हो गया है। ननद के भय से राधिका ने श्रीकृष्ण से कहा, 'तुम हृदय के भीतर रहो।' जब फिर व्याकुल होकर श्रीकृष्ण को उन्होने देखना चाहा – ऐसी

व्याकुलता कि कलेजे में जैसे बिल्ली खरोंच रही हो – तब श्रीकृष्ण हृदय से बाहर निकले ही नहीं!"

राखाल – (भक्तों से, धीमे स्वर से) – यह बात इन्होंने श्रीगौरांगवतार के सम्बन्ध में कही है।

(४)

गुह्यकथा। श्रीरामकृष्ण कौन हैं।

भक्तगण चुपचाप बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण भक्तों को स्नेहभरी दृष्टि से देख रहे है। कुछ कहने के लिए उन्होंने अपनी छाती पर हाथ रखा।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्रादि से) – इसके भीतर दो व्यक्ति है। एक हैं जगन्माता –

भक्त उनकी ओर उत्सुक होकर देख रहे है, सोच रहे हैं, अब वे क्या कहेगे।

श्रीरामकृष्ण – हाँ एक वे हैं, और दूसरा है उनका भक्त, जिसका हाथ टूट गया था। वही अब बीमार है। समझे?

भक्तगण चुपचाप सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण – किससे कहूँ, और समझेगा भी कौन?

कुछ देर बाद फिर बोले –

"वे मनुष्य का आकार धारण करके, अवतार लेकर, भक्तों के साथ आया करते है। उन्ही के साथ फिर भक्तगण चले भी जाते हैं।"

राखाल – इसीलिए कहता हूँ आप हम लोगों को छोड़कर चले मत जाइयेगा।

श्रीरामकृष्ण मुस्करा रहे है, कहते है – "बाउलों का दल एकाएक आया, नाच-कूदकर गाया-बजाया और एकाएक चला गया। आया और गया, परन्तु किसी ने पहचाना नही।"

श्रीरामकृष्ण और दूसरे भक्त मन्द मन्द मुस्करा रहे हैं।

कुछ देर चुप रहकर श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं –

"देह-धारण करने पर कष्ट तो है ही।

"कभी कभी कहता हूँ, अब जैसे इस संसार में न आना पड़े।

"परन्तु एक बात है – निमन्त्रण में भोजन करते करते अब घर की बनी मटर की दाल अच्छी नहीं लगती, न घर के चावल ही अच्छे लगते हैं।

"और देह-धारण भक्तों के लिए है।"

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को स्नेह-भरी दृष्टि से देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – चाण्डाल माँस का भार लिये हुए जा रहा था। उधर से नहा-धोकर शंकराचार्य आ रहे थे, वे उसके पास से होकर निकले। एकाएक चाण्डाल ने

उन्हें छू लिया। शंकर ने विरक्ति-भाव से कहा – 'तूने मुझे छू लिया!' उसने कहा, 'भगवन्, न मैंने आपको छुआ और न आपने मुझे। विचार कीजिये, विचार कीजिये, क्या आप देह है, मन है या बुद्धि हैं? आप क्या हैं – विचार कीजिये। शुद्ध आत्मा निर्लिप्त है – सत्त्व, रज और तम इन तीनों गुणों में से किसी में लिप्त नहीं है।'

"ब्रह्म कैसा है, जानता है? – जैसे वायु। वायु में सुगन्ध और दुर्गन्ध दोनों हैं, परन्तु वायु निर्लिप्त है।"

नरेन्द्र – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – वे गुणातीत हैं, माया से परे हैं। अविद्या-माया और विद्या-माया इन दोनो से परे है। कामिनी और कांचन अविद्या हैं; ज्ञान, भक्ति, वैराग्य ये सब विद्या के ऐश्वर्य हैं। शंकराचार्य ने विद्या का ऐश्वर्य रखा था। तुम सब लोग जो मेरे लिए सोच रहे हो, यह चिन्ता विद्या-माया है।

"विद्या-माया के सहारे चलते रहने पर ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति होती है। जैसे ऊपरवाली सीढ़ी, उसके बाद ही छत। कोई कोई छत पर पहुँचने के बाद भी सीढ़ियो से चढ़ते-उतरते रहते है – ज्ञानप्राप्ति के बाद भी 'विद्या का मै' रख छोड़ते है – लोकशिक्षा के लिए और भक्ति का स्वाद लेने तथा भक्तो के साथ विलास करने के लिए भी।"

नरेन्द्र – त्याग करने की बात चलाने से कोई कोई मुझसे नाराज हो जाते है।

श्रीरामकृष्ण – (धीमे स्वर से) – त्याग आवश्यक है।

श्रीरामकृष्ण अपने शरीर के अंगों को दिखलाकर कह रहे है – "एक वस्तु के ऊपर अगर दूसरी वस्तु हो, तो एक को बिना हटाये दूसरी वस्तु कैसे मिल सकती है?"

नरेन्द्र – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से, धीमे स्वर में) – ईश्वरमय देखते रहने पर क्या फिर कोई दूसरी चीज दिखलायी पड़ सकती है?

नरेन्द्र – संसार का त्याग करना ही होगा?

श्रीरामकृष्ण – जैसा मैने अभी कहा, ईश्वरमय देखते रहने पर फिर क्या दूसरी वस्तु दीख पड़ती है? संसार आदि क्या कुछ दिखलायी पड़ सकता है?

"परन्तु त्याग मन से होना चाहिए। यहाँ जो लोग आते है, उनमे संसारी कोई नही है। किसी किसी की इच्छा थी – स्त्री के साथ रहने की – (राखाल और मास्टर का हँसना) वह भी पूरी हो गयी।"

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को स्नेहपूर्ण दृष्टि से देख रहे हैं। देखते ही देखते मानो आनन्द से पूर्ण हो गये। भक्तों की ओर देखकर कहने लगे – "खूब हुआ।' नरेन्द्र ने हँसकर पूछा – "क्या खूब हुआ?"

श्रीरामकृष्ण – (मुस्कराते हुए) – मै देख रहा हू कि महान् त्याग के लिए तैयारी

हो रही है।

नरेन्द्र और भक्तगण चुप है। सब के सब श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं।

अब राखाल बातचीत करने लगे।

राखाल – (श्रीरामकृष्ण से, सहास्य) – नरेन्द्र ने आपको खूब समझ लिया है।

श्रीरामकृष्ण हँसकर कह रहे हैं – "हाँ। और देखता हूँ, बहुतो ने समझ लिया है। (मास्टर से) क्यों जी?"

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र और मणि को देख रहे हैं और हाथ के इशारे राखाल आदि भक्तो को दिखा रहे हैं। पहले नरेन्द्र की ओर इशारा करके दिखलाया, फिर मास्टर की ओर। राखाल श्रीरामकृष्ण का इशारा समझ गये। उन्होने कहा – "आप कहते हैं, नरेन्द्र का वीर-भाव है और इनका (मास्टर का) सखी-भाव।" (श्रीरामकृष्ण हॅस रहे हैं)

नरेन्द्र – (सहास्य) – ये अधिक बोलते नही, और स्वभाव के लजीले हैं। शायद इसीलिए आप ऐसा कहते है।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से, हॅसकर) – अच्छा, मेरा क्या भाव है?

नरेन्द्र – वीरभाव, सखीभाव – सब भाव।

यह सुनकर मानो श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। हृदय पर हाथ रखकर कुछ कहनेवाले हैं।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्रादि भक्तों से) – देखता हूँ, जो कुछ है, सब इसी के भीतर से आया है।

नरेन्द्र से इशारा करके श्रीरामकृष्ण पृछ रहे हैं, "क्या समझे?"

नरेन्द्र – जो कुछ है, अर्थात् सृष्टि में जो कुछ पदार्थ है, सब आपके भीतर से ही आये हैं।

श्रीरामकृष्ण – (राखाल से, आनन्दपूर्वक) – देखा?

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से जरा गाने के लिए कह रहे हैं। नरेन्द्र स्वर अलापकर गा रहे हैं। नरेन्द्र का त्याग-भाव है। वे गा रहे है –

"नलिनीदलगतजलमतितरलम्।
तद्वज्जीवनमतिशयचपलम्।।
क्षणमिह सज्जनसंगतिरेका।
भवति भवार्णवतरणे नौका।।"...

दो-एक पद गाने के बाद ही श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से इशारे से कह रहे है, "यह क्या है? यह तो बहुत छोटा भाव है!"

नरेन्द्र अब सखी-भाव का एक सुन्दर गीत ग़ा रहे है -

(भावार्थ) – "अरी सखि! जीवन और मृत्यु का यह कैसा विधान है! व्रज-किशोर कहाँ भाग गये? इस व्रज-गोपी के तो प्राणों पर आ गयी है। सखि, माधव तो सुन्दर कन्याओं के प्रेम में बँधे हुए हैं। हाय! इस रूपविहीन गोप-कन्या को उन्होंने भुला दिया है। अरी, कौन जानता था कि वे रसमय प्रेमिक रूप के भिखारी होंगे? मैं मूर्ख थी जो पहले मैंने यह नहीं समझा; रूप देखकर भूल गयी, और उनके युगलचरणों को हृदय में स्थापित किया। री सखि, अब तो जी यह चाहता है कि यमुना में डूबकर मर जाऊँ या जहर लाकर खा लूँ, अथवा कुंजों की लताओं से गला फाँसकर किसी नये तमाल में लटककर प्राण दे दूँ, या श्याम-श्याम जपते-जपते इस अधम शरीर का नाश कर डालूँ।"

गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण और भक्तगण मुग्ध हो गये। श्रीरामकृष्ण और राखाल की आँखों से आँसू बह चले। नरेन्द्र व्रज की गोपियों के भाव में मस्त होकर फिर गा रहे हैं – (भावार्थ) –

"हे कृष्ण! प्रियतम! तुम मेरे हो। तुमसे मैं क्या कहूँ, मेरे नाथ, तुमसे मैं क्या बोलूँ? मैं नारी हूँ, अभागिनी हूँ, समझ नहीं पा रही हूँ कि मैं तुमसे क्या कहूँ। तुम मेरे हाथ के दर्पण हो, सिर के फूल हो। सखे, मैं तुम्हें फूल बनाकर केशों में खोंच लूँगी और खोपे में छिपा रखूँगी। श्याम-फूल खोंचने से तुम्हें कोई देख न पायेगा। तुम मेरी आँखों के अंजन हो, मुख के ताम्बूल हो। हे श्याम! हे कृष्ण! तुम्हें अंजन बनाकर आँखों में लगा लूँगी। श्याम-अंजन होने के कारण तुम्हें वहाँ कोई देख न सकेगा। तुम अंग की कस्तूरी हो, गले के हार हो। सखे, शरीर में श्यामचन्दन लेपकर मैं अपने प्राण शीतल करूँगी। प्रियतम, तुम्हें मैं हार बनाकर कण्ठ में पहनूँगी। तुम देह के सर्वस्व हो, गेह के सार हो। पक्षी के लिए जिस तरह पंख है, और मछली के लिए जिस तरह पानी है, उसी तरह, हे नाथ, तुम मेरे लिए हो।"

□□□

परिच्छेद १३५

श्रीरामकृष्ण तथा श्रीबुद्धदेव

(१)

क्या बुद्धदेव नास्तिक थे

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ काशीपुर के बगीचे मे है। आज शुक्रवार, शाम के पॉच बजे का समय होगा, चैत की शुक्ल पंचमी है, ९ अप्रैल, १८८६।

नरेन्द्र, काली, निरंजन और मास्टर नीचे बैठे हुए बातचीत कर रहे है।

निरंजन – (मास्टर से) – सुना है, विद्यासागर का एक नया स्कूल होनेवाला है। नरेन्द्र को इसमे अगर कोई काम –

नरेन्द्र – अब विद्यासागर के पास नौकरी करने की जरूरत नही है।

नरेन्द्र बुद्ध-गया से अभी ही लौटे है। वहॉ वे बुद्ध की मूर्ति के दर्शन कर उसके सामने गम्भीर ध्यान मे मग्न हो गये थे। जिस पेड़ के नीचे तपस्या करके बुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया था, उस पेड़ की जगह एक दूसरा पेड उगा है, इसे भी उन्होने देखा है। काली ने कहा, 'एक दिन गया के उमेशबाबू के यहॉ नरेन्द्र का गाना हुआ, मृदंग के साथ – ख्याल, ध्रुपद आदि।'

श्रीरामकृष्ण बडे कमरे मे बिस्तरे पर बैठे हुए है। सन्ध्या का समय है। मणि अकेले पंखा झल रहे है। लाटू भी वही आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण – (मणि से) – एक चद्दर और एक जोड़ा जूता लेते आना।

मणि – जी, बहुत अच्छा।

श्रीरामकृष्ण – (लाटू से) – चद्दर तो दस आने की हुई, और जूतो को मिलाकर कितने दाम होगे?

लाटू – एक रुपया दस आने।

श्रीरामकृष्ण ने मणि की ओर दामो की बात सुन लेने के लिए इशारा किया।

नरेन्द्र भी आकर बैठे। शशि, राखाल तथा दो-एक भक्त और आये।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से पैरो पर हाथ फेरने के लिए कह रहे है। इशारे से श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र से पूछा – तूने कुछ खाया?

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से, सहास्य) – यह वहाँ (बुद्ध-गया) गया था।

मास्टर – (नरेन्द्र से) – बुद्धदेव का क्या मत है?

नरेन्द्र – तपस्या करके उन्होंने जो कुछ पाया था, वह मुख से नहीं कह सके। इसीलिए सब लोग उन्हें नास्तिक कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (इशारा करके) – नास्तिक क्यो, नास्तिक नहीं। मुख से अपनी अवस्था का हाल वे नहीं कह सके। बुद्ध क्या है, जानते हो? बोधस्वरूप की चिन्ता करके वही हो जाना – बोधस्वरूप बन जाना।

नरेन्द्र – जी हाँ, इनके तीन दर्जे है, बुद्ध, अर्हत् और बोधिसत्त्व।

श्रीरामकृष्ण – यह उन्ही की क्रीड़ा है, एक नयी लीला।

"नास्तिक वे क्यों होने लगे? जहाँ स्वरूप का बोध होता है, वहाँ अस्ति और नास्ति की बीचवाली अवस्था है।"

नरेन्द्र – (मास्टर से) – यह वह अवस्था है, जिसमें विरोधी भावों का एकीकरण होता है। जिस हाईड्रोजन (Hydrogen) और ऑक्सीजन (Oxygen) से ठण्डा पानी तैयार होता है, उसी हाईड्रोजन और ऑक्सीजन से उष्ण अग्नि-शिखाएँ भी (Oxy-Hydrogen blow-pipe) उत्पन्न होती हैं।

"जिस अवस्था में कर्म और कर्मों का त्याग दोनों हो जाते हैं, अर्थात् निष्काम कर्म होता है, बुद्ध की वही अवस्था थी।

"जो लोग संसारी हैं, इन्द्रियो के विषयों को लेकर है, वे कहते हैं, सब 'अस्ति' है; उधर मायावादी कहते हैं – सब 'नास्ति' है; बुद्ध की अवस्था इस 'अस्ति' और 'नास्ति' से परे की है।"

श्रीरामकृष्ण – ये 'अस्ति' और 'नास्ति' प्रकृति के गुण हैं। जहाँ यथार्थ बोध है, वह 'अस्ति' और 'नास्ति' से परे की अवस्था है।

श्रीबुद्धदेव की दया तथा वैराग्य और नरेन्द्र

भक्तगण कुछ देर तक चुप हैं। श्रीरामकृष्ण फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – उनका (बुद्ध का) क्या मत है?

नरेन्द्र – ईश्वर है या नहीं, ये बातें बुद्ध नहीं कहते थे। परन्तु वे दया लेकर थे।

"एक बाज एक पक्षी को पकड़कर उसे खाना चाहता था। बुद्ध ने उस पक्षी के प्राणों को बचाने के लिए अपने शरीर का माँस काटकर बाज को खिला दिया था।"

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। नरेन्द्र उत्साह के साथ बुद्ध की और और बातें कह रहे हैं।

नरेन्द्र – उन्हें वैराग्य भी कितना था! राजपुत्र होकर भी उन्होंने सर्वस्व का त्याग किया! जिनके कुछ नही है, कोई ऐश्वर्य नहीं है, वे और क्या त्याग करेंगे?

"जब बुद्ध होकर, निर्वाण प्राप्त करके एक बार वे घर आये तब उन्होंने अपनी स्त्री को, पुत्र को और राजवंश के बहुतसे लोगों को वैराग्य धारण करने के लिए कहा। कैसा तीव्र वैराग्य था! परन्तु व्यास को देखो। उन्होने अपने पुत्र शुकदेव को संसार-त्याग करने से मना किया और कहा, 'वत्स' धर्म का पालन गृहस्थ बने रहकर ही करो।' "

श्रीरामंकृष्ण चुप रहे, अब तक उन्होंने एक शब्द भी न कहा।

नरेन्द्र – बुद्ध ने शक्ति अथवा अन्य किसी उस प्रकार की चीज की कभी परवाह नहीं की। वे तो केवल निर्वाण के ही इच्छुक थे। कैसा तीव्र उनका वैराग्य था! जब वे बोधि-वृक्ष के नीचे तपस्या करने के लिए बैठे तो कहा, 'इहैव शुष्यतु मे शरीरम्।' – अर्थात् अगर निर्वाण की प्राप्ति मैं न कर सकूँ तो मेरा शरीर यही शुष्क हो जाय – ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा!

"शरीर ही तो बदमाश है! – उसे काबू में बिना किये क्या कुछ हो सकता है?"

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर वार्तालाप करने लगे। उन्होंने इशारे से फिर बुद्धदेव की बात पूछी।

श्रीरामकृष्ण – बुद्धदेव के सिर मे क्या बड़े बड़े बाल थे?

नरेन्द्र – जी नही। बहुतसी रुद्राक्षो की मालाएँ एकत्र करने पर जैसा होता है, मालूम होता है, उनके सिर में वैसे ही बाल थे।

श्रीरामकृष्ण – और आँखें?

नरेन्द्र – ऑखे समाधिलीन।

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। नरेन्द्र तथा अन्य भक्त उन्हें एकदृष्टि से देख रहे हैं। एकाएक जरा मुस्कराकर वे फिर नरेन्द्र से बातचीत करने लगे। मणि पंखा झल रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – अच्छा, यहाँ तो सब कुछ है न? मसूर और चने की दाल, और इमली तक।

नरेन्द्र – उन सब अवस्थाओ का भोग करके आप कुछ नीचे की अवस्था मे रहते हैं।

मणि – (स्वगत) – उन सब उच्च अवस्थाओं का भोग करके भक्त की अवस्था में हैं।

श्रीरामकृष्ण – किसी ने मानो नीचे खींच रखा है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने मणि के हाथ से पंखा खीच लिया और कहने लगे –

"जैसे सामने यह पंखा देख रहा हूँ, प्रत्यक्ष रूप से, ठीक इसी तरह मैंने ईश्वर को प्रत्यक्ष देखा है। और देखा है –"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने अपने हृदय पर हाथ रखा, और इशारे से नरेन्द्र से पूछा – "बताओ, भला मैंने क्या कहा?"

नरेन्द्र – मै समझ गया।

श्रीरामकृष्ण – कहो तो सही?

नरेन्द्र – अच्छी तरह मैने नही सुना।

श्रीरामकृष्ण फिर इंगित कर रहे है – "मैने देखा, वे (ईश्वर) और हृदय में जो है, दोनो एक ही व्यक्ति है।"

नरेन्द्र – हॉ, हॉ, सोऽहम्।

श्रीरामकृष्ण – केवल एक रेखा मात्र है ('भक्त का मै' है) – सम्भोग के लिए।

नरेन्द्र – (मास्टर से) – महापुरुष स्वयं पार होकर जीवो को पार करने के लिए रहते है, इसीलिए वे अहंकार और शरीर के सुख-दु:खो को लेकर रहते है।

"जैसे कुलीगिरी – मजदूरी। हम लोग कुलीगिरी बाध्य होकर करते है, परन्तु महापुरुष तो कुलीगिरी अपने शौक से करते है।"

श्रीरामकृष्ण तथा गुरु-कृपा

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्रादि भक्तो से) – छत दीख तो पड़ती है, परन्तु छत पर चढ़ना जग कठिन काम है!

नरेन्द्र – जी हॉ।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु अगर कोई चढ़ा हो तो रस्सी डालकर वह दूसरे को भी चढ़ा ले सकता है।

"हृषीकेश का एक साधु आया था। उसने मुझसे कहा – यह बड़े आश्चर्य की बात है, तुममे पॉच तरह की समाधि मैने देखी।

"कभी तो कपिवत्, – देहरूपी वृक्ष पर बन्दर की तरह महावायु मानो इस डाल से उस डाल पर उछल-उछलकर चढ़ती है। और तब समाधि होती है।

"कभी मीनवत् – अर्थात् जिस प्रकार मछली पानी के भीतर फुर्ती से निकल जाती है और आनन्द से विहार करती रहती है, उसी तरह वायु भी देह के भीतर चलती रहती है और समाधि होती है।

"कभी पक्षीवत्, – देह-वृक्ष के भीतर महावायु पक्षी की तरह कभी इस डाल पर और कभी उस डाल पर फुदकते हुए चढ़ती है।

"कभी पिपीलिकावत्, – चीटी की तरह धीरे-धीरे महावायु ऊपर चढ़ती रहती है। सहस्रार मे चढ़ने पर समाधि होती है।

"और कभी तिर्यग्वत्, – अर्थात् महावायु की गति सर्प की तरह वक्र होती है, फिर सहस्रार में पहुँचकर समाधि होती है।"

राखाल – (भक्तो से) – अब बातचीत रहने दीजिये। बहुत देर हो गयी। उनकी बीमारी बढ़ जायगी।

□□□

परिच्छेद १३६

श्रीरामकृष्ण तथा कर्मफल

(१)

भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण काशीपुर के उद्यान-भवन के उसी ऊपरवाले कमरे मे बैठे हुए है। भीतर शशि और मणि है। श्रीरामकृष्ण मणि को इशारे से पंखा झलने के लिए कह रहे है। मणि पंखा झलने लगे।

शाम के पॉच-छः बजे का समय होगा। सोमवार, शुक्ल अष्टमी, १२ अप्रैल १८८६।

उस मुहल्ले मे संक्रान्ति का मेला भरा हुआ है। श्रीरामकृष्ण ने एक भक्त को मेले से कुछ चीज खरीद लाने के लिए भेजा है। भक्त के लौटने पर श्रीरामकृष्ण ने उससे सामान के बारे मे पूछा कि वह क्या क्या लाया।

भक्त – पॉच पैसे के बताशे, दो पैसे का एक चम्मच और दो पैसे का एक तरकारी काटनेवाला चाकू.

श्रीरामकृष्ण – और कलम बनानेवाला चाकू?

भक्त - वह दो पैसे मे नही मिला।

श्रीरामकृष्ण – (जल्दी से) – नही, नही, जा ले आ।

मास्टर नीचे बगीचे मे टहल रहे है। नरेन्द्र और तारक कलकत्ते से लौटे। वे गिरीश घोष के यहॉ तथा कुछ अन्य जगह भी गये थे।

तारक – आज तो भोजन बहुत हुआ।

नरेन्द्र – हॉ, हम लोगो का मन बहुत कुछ नीचे आ गया है। आओ, अब हम तपस्या करे।

(मास्टर से) "क्या शरीर और मन की दासता की जाय? बिलकुल जैसे गुलाम की-सी अवस्था हो रही है, शरीर और मन मानो हमारे नही, किसी और के है।"

शाम हो गयी है। ऊपर के कमरे मे और अन्य स्थानो मे दीये जलाये गये। श्रीरामकृष्ण बिस्तर पर उत्तरास्य बैठे हुए है। जगन्माता की चिन्ता कर रहे है। कुछ देर बाद

फकीर उनके सामने अपराध-भंजन स्तव पढ़ने लगे। फकीर बलराम के पुरोहित-वंश के हैं।

"प्राग्देहस्थो यदासं तव चरणयुगं नाश्रितो नार्चितोऽहम्।
तेनाद्येऽकीर्तिवर्गेर्जठरजदहनैर्बाध्यामानो बलिष्ठै:।।
स्थित्वा जन्मान्तरे नो पुनरिह भविता क्वाश्रय: क्वापि सेवा।
क्षन्तव्यो मेऽअपराध: प्रकटितरदने कामरूपे कराले।।" इत्यादि।

कमरे में शशि, मणि तथा दो-एक भक्त और हैं। स्तवपाठ समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण बड़े भक्ति-भाव से हाथ जोड़कर नमस्कार कर रहे हैं।

मणि पंखा झल रहे है। श्रीरामकृष्ण इशारा करके उनसे कह रहे हैं, "एक कूँड़ी ले आना। (यह कहकर कूँड़ी की गढ़न उँगलियों से लकीर खींचकर बता रहे हैं।) इसमे क्या एक पाव दूध आ जायगा? पत्थर सफेद हो।"

मणि – जी हाँ।

(२)

ईश्वर-कोटि तथा जीव-कोटि

दूसरे दिन मंगलवार है, रामनवमी, १३ अप्रैल, १८८६। सुबह का समय है; श्रीरामकृष्ण ऊपरवाले कमरे में छोटे तखत पर बैठे हुए हैं। दिन के आठ-नौ बजे का समय हुआ होगा। मणि रात को यहीं थे। सबेरे गंगा-स्नान करके आये और श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। राम दत्त भी आज सुबह आ गये हैं, उन्होंने भी श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर आसन ग्रहण किया। राम फूलों की एक माला ले आये हैं, श्रीरामकृष्ण की सेवा में उसका समर्पण कर दिया। अधिकांश भक्त नीचे के कमरे में बैठे हुए हैं, श्रीरामकृष्ण के कमरे में दो ही एक हैं। राम श्रीरामकृष्णदेव से वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (राम से) – किस तरह देख रहे हो?'

राम – आप में सब कुछ है। अब आपके रोग की चर्चा उठने ही वाली है।

श्रीरामकृष्ण जरा मुस्कराये। फिर राम ही से उन्होंने संकेत करके पूछा – "क्या रोग की बात भी उठेगी?"

श्रीरामकृष्ण के जो जूते हैं, वे अब पैरों में गड़ने लगे हैं। डाक्टर राजेन्द्र दत्त ने पैर की नाप माँगी है – आर्डर देकर वे जूते बनवा देना चाहते हैं। पैर की नाप ली गयी। (इस समय बेलुड़ मठ में इन्हीं पादुकाओं की पूजा हो रही है।)

श्रीरामकृष्ण मणि से संकेत से पूछ रहे हैं कि कूँड़ी कहाँ है। मणि कलकत्ते से कूँड़ी ले आने के लिए उसी समय उठकर खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण ने उस समय उन्हें रोका।

मणि – जी नहीं, ये लोग जा रहे हैं, इनके साथ मै भी चला जाऊँगा।

मणि ने जोड़ासाखों की एक दूकान से एक सफेद कूँड़ी खरीदी। दोपहर के समय वे काशीपुर लौट आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके कूँड़ी उनके सामने रखी। श्रीरामकृष्ण सफेद कूँड़ी हाथ में लेकर देख रहे है। डाक्टर राजेन्द्र दत्त, हाथ मे गीता लिए हुए डाक्टर श्रीनाथ, श्रीयुत राखाल हालदार तथा अन्य भी कई सज्जन आये है। कमरे में राखाल, शशि आदि कई भक्त हैं। डाक्टरों ने श्रीरामकृष्ण से पीड़ा के सम्बन्ध की कुल बाते सुनी।

डाक्टर श्रीनाथ – (मित्रों से) – सब लोग प्रकृति के अधीन है। कर्मफल से किसी का छुटकारा नहीं है। प्रारब्ध।

श्रीरामकृष्ण – क्यों, उनका नाम लेने पर, उनकी चिन्ता करने पर, उनकी शरण में जाने पर, –

श्रीनाथ – जी, प्रारब्ध कहाँ जायेगा? – पिछले जन्मो के कर्म?

श्रीरामकृष्ण – कुछ कर्म भोग होता तो है, परन्तु उनके नाम के गुण से बहुतसा कर्मपाश कट जाता है। एक मनुष्य को पिछले जन्म के कर्मों के लिए सात बार अन्धा होना पड़ता, परन्तु उसने गंगास्नान किया। गंगास्नान से मुक्ति होती है। इसलिए उस जन्म के लिए तो वह जैसे का वैसा ही अन्धा बना रहा, परन्तु अगले छ: जन्मों के लिए न तो उसे जन्म लेना पड़ा और न अन्धा होना पड़ा।

श्रीनाथ – जी, शास्त्रो में तो है कि कर्मफल से किसी का छुटकारा नही हो सकता।

डाक्टर श्रीनाथ तर्क करने के लिए तुल गये।

श्रीरामकृष्ण – (मणि से) – कहो न जरा, ईश्वर-कोटि और जीव-कोटि में बड़ा अन्तर है। ईश्वर-कोटि कभी पाप नहीं कर सकते – कहो।

मणि चुप हैं। वे राखाल से कह रहे है – तुम कहो।

कुछ देर बाद डाक्टर चले गये। श्रीरामकृष्ण श्रीयुत राखाल हालदार के साथ बातचीत कर रहे हैं।

हालदार – डाक्टर श्रीनाथ वेदान्तचर्चा किया करता है – योगवाशिष्ठ पढ़ता है।

श्रीरामकृष्ण – संसारी होकर 'सब स्वप्नवत् है' यह मत अच्छा नहीं।

एक भक्त – कालिदास नाम का वह जो आदमी है, वह भी वेदान्तचर्चा किया करता है। परन्तु मुकदमेबाजी में घर की लुटिया तक उसने बेच डाली!

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – सब माया भी है और उधर मुकदमेबाजी भी होती है! (राखाल से) जनाईवाले मुकर्जियों ने पहले बड़ी लम्बी-लम्बी बातें की थी, फिर अन्त में खूब समझ गये। मैं अगर अच्छा रहता तो उनसे कुछ देर और बातचीत करता। क्या 'ज्ञान-ज्ञान' की डींग मारने से ही ज्ञान हो जाता है?

हालदार – ज्ञान बहुत देखा है। कुछ भक्ति हो तो जी में जी आये। उस दिन मै एक

बात सोचकर आया था। उसकी आपने मीमांसा कर दी।

श्रीरामकृष्ण – (आग्रह से) – वह क्या है?

हालदार – जी, यह बच्चा आया तो आपने कहा कि यह जितेन्द्रिय है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, हॉ, उसके (छोटे नरेन्द्र के) भीतर विषयबुद्धि का लेशमात्र भी नहीं है। वह कहता है, 'मुझे नहीं मालूम कि काम किसे कहते हैं।'

(मणि से) "हाथ लगाकर देखो, मुझे रोमांच हो रहा है।"

काम नहीं है, इस शुद्ध अवस्था की याद करके श्रीरामकृष्ण को रोमांच हो रहा है।

राखाल हालदार बिदा हो गये। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अब भी बैठे हुए हैं। एक पगली उन्हें देखने के लिए बड़ा उपद्रव मचाया करती है। वह मधुरभाव की उपासना करती है। बगीचे में प्राय: आया करती है। आकर एकाएक श्रीरामकृष्ण के कमरे में घुस आती है। भक्तगण मारते भी है, परन्तु इससे भी वह मौका नहीं चूकती।

शशि – अबकी बार अगर पगली दीख पड़ी तो धक्के मारकर हटा दूँगा।

श्रीरामकृष्ण – (करुणापूर्ण स्वर से) – नहीं, नही, आयगी तो फिर चली जायगी।

राखाल – पहले-पहल इनके पास अगर और पॉच आदमी आते थे तो मुझे एक तरह की ईर्ष्या होती थी। उन्होंने कृपा करके अब मुझे समझा दिया है कि वे मेरे भी गुरु है और संसार के भी गुरु हैं। वे केवल हमारे लिए थोड़े ही आये हुए हैं?

शशि – माना कि हमारे लिए ही नहीं आये, परन्तु बीमारी के समय आकर उपद्रव मचाना, यह क्या बात है?

राखाल – उपद्रव तो सभी करते हैं। क्या सभी उनके पास सच्चे भाव से आये हुए है? क्या हम लोगों ने उन्हें कष्ट नही दिया? नरेन्द्र आदि, सब पहले कैसे थे? – कितना तर्क करते थे?

शशि – नरेन्द्र मुख से जो कुछ कहता था, उसे कार्य द्वारा पूरा भी उतार देता था।

राखाल – डाक्टर सरकार ने उन्हें न जाने कितनी बाते कही हैं! – देखा जाय तो दूध का धोया कोई नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – (राखाल से सस्नेह) – तू कुछ खायगा?

राखाल – नहीं, फिर खा लूँगा।

श्रीरामकृष्ण मणि की ओर संकेत कर रहे हैं कि वे आज यहीं प्रसाद पायें।

राखाल – पाइये न, जब वे कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण पंचवर्षीय बालक की तरह दिगम्बर होकर भक्तों के बीच में बैठे हुए है। ठीक इसी समय पगली जीने से ऊपर चढ़कर कमरे के द्वार के पास आकर खड़ी हो गयी।

मणि – (शशि से, धीरे-धीरे) – नमस्कार करके जाने के लिए कहो, कुछ और

कहने की आवश्यकता नही है।

शशि ने पगली को नीचे उतरवा दिया। आज नये वर्ष का पहला दिन है। बहुतसी भक्त स्त्रियाँ आयी हुई है। उन्होंने श्रीरामकृष्ण और माताजी को प्रणाम कर आशीर्वाद ग्रहण किया। श्रीयुत बलराम की स्त्री, मणिमोहन की स्त्री, बागबाजार की ब्राह्मणी तथा अन्य बहुतसी स्त्रियाँ आयी हुई है।

वे सब की सब श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करने के लिए ऊपरवाले कमरे मे गयी। किसी किसी ने श्रीरामकृष्ण के पादपद्मो मे अबीर और पुष्प चढ़ाये। भक्तो की दो लडकियाँ – नौ-नौ दस-दस साल की – श्रीरामकृष्ण को गाना सुना रही है।

लड़कियो ने दो-तीन गाने सुनाये। श्रीरामकृष्ण ने संकेत द्वारा उन्हे बधाई दी।

ब्राह्मणी का स्वभाव बच्चो जैसा है। श्रीरामकृष्ण हँसकर राखाल की ओर संकेत कर रहे है। तात्पर्य यह कि वह उसे भी कुछ गाने के लिए कहे। ब्राह्मणी गा रही है।

गाना – हे कृष्ण, आज तुम्हारे साथ खेलने को जी चाहता है, आज तुम मधुवन मे अकेले मिल गये हो।. .

स्त्रियाँ ऊपरवाले कमरे से नीचे चली आयी। दिन का पिछला पहर है। श्रीरामकृष्ण के पास मणि तथा दो-एक और भक्त बैठे हुए है। नरेन्द्र भी कमरे मे आये। श्रीरामकृष्ण ठीक ही कहते है कि नरेन्द्र मानो म्यान से तलवार निकालकर घूम रहा है।

संन्यासी के कठिन नियम तथा नरेन्द्र

नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण को सुनाकर स्त्रियो के सम्बन्ध मे नरेन्द्र बहुत ही विरक्ति-भाव प्रकाशित कर रहे है। कहते है, 'स्त्रियो के साथ रहकर ईश्वर की प्राप्ति मे घोर विघ्न है।'

श्रीरामकृष्ण कुछ कहते नही, केवल सुन रहे है।

नरेन्द्र फिर कह रहे है, 'मै शान्ति चाहता हूँ, मै ईश्वर को भी नही चाहता।' श्रीरामकृष्ण एकदृष्टि से नरेन्द्र को देख रहे है। मुख मे कोई शब्द नही है। नरेन्द्र बीच बीच मे स्वर के साथ कह रहे है, 'सत्यं ज्ञानमनन्तम्।'

रात के आठ बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए है। सामने दो-एक भक्त भी बैठे है। ऑफिस का काम समाप्त करके सुरेन्द्र श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए आये है। हाथ मे चार सन्तरे है और फूल की दो मालाएँ। सुरेन्द्र एक-एक बार भक्तो की ओर तथा एक-एक बार श्रीरामकृष्ण की ओर देख रहे है, और अपने हृदय की सारी बाते कहते जा रहे है।

सुरेन्द्र – (मणि आदि की ओर देखकर) - ऑफिस का कुल काम समाप्त करके आया। मैने सोचा, दो नावो पर पैर रखकर क्या होगा ? अतएव काम समाप्त करके जाना

ही ठीक है। आज एक तो पहला वैशाख है, दूसरे, मंगल का दिन; कालीघाट जाना नही हुआ। मैने सोचा, काली की चिन्ता करके स्वयं ही जो काली बन गये है, अब चलकर उन्ही के दर्शन करूँ; इसी से हो जायगा।

श्रीरामकृष्ण मुस्करा रहे है।

सुरेन्द्र – मैने सुना है, गुरु और साधु के दर्शन करने के लिए कोई जाय तो उसे कुछ फल-फूल लेकर जाना चाहिए। इसीलिए फल-फूल मै ले आया। (श्रीरामकृष्ण से) आपके लिए यह सब खर्च, – ईश्वर ही मेरा मन जानते है। किसी को एक पैसा खर्च करते हुए भी कष्ट होता है, पर कुछ लोग लाखो रुपये बिना किसी हिचकिचाहट के खर्च कर डालते है। ईश्वर तो हृदय की भक्ति देखते है, तब ग्रहण करते है।

श्रीरामकृष्ण सिर हिलाकर संकेत कर रहे है कि तुमने ठीक ही कहा। सुरेन्द्र फिर कह रहे है – "कल संक्रांन्ति थी, मै यहॉ तो नही आ सका, परन्तु घर मे फूलो से आपके चित्र को खूब सुसज्जित किया।"

श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र की भक्ति की बात मणि को संकेत करके सूचित कर रहे है।

सुरेन्द्र – आते हुए ये दो मालाएँ ले ली, चार आने की।

अधिकांश भक्त चले गये। श्रीरामकृष्ण मणि से पैरो पर हाथ फेरने और पंखा झलने के लिए कह रहे है।

□□□

परिच्छेद १३७

ईश्वर-लाभ के उपाय

(१)

गिरीश तथा मास्टर

काशीपुर के बगीचे के पूर्व की ओर तालाब है, जिसमे पक्का घाट बँधा हुआ है। उद्यान, पथ और तरु-लताएँ चाँदनी की उज्ज्वल छटा मे खूब चमक रही है। तालाब के पश्चिम की ओर दुमॅजले मकान मे दीपक जल रहा है। कमरे मे श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए है। दो-एक भक्त भी कमरे मे चुपचाप बैठे है। कोई कोई इस कमरे से उस कमरे मे आ-जा रहे हैं। घाट से नीचे के कमरो का उजाला भी दिखायी पड़ रहा है। एक कमरे मे भक्तगण रहते है। यह कमरा दक्षिण की ओर है। मकान के बीच से जो प्रकाश आ रहा है, वह श्रीमाताजी के कमरे का है। श्रीमाताजी श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए आयी हुई है। तीसरा प्रकाश भोजनगृह से आ रहा है। यह कमरा मकान के उत्तर की ओर है। उद्यान के भीतर से पूर्व की ओर घाट तक एक रास्ता गया है। रास्ते के दोनो ओर, विशेषकर, दक्षिण की ओर फूलो के बहुतसे पेड़ है।

तालाब के घाट पर गिरीश, मास्टर, लाटू तथा दो-एक भक्त और बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध मे बातचीत हो रही है। आज शुक्रवार है, १६ अप्रैल, १८८६, चैत्र शुक्ल त्रयोदशी।

कुछ देर बार गिरीश और मास्टर उस रास्ते पर टहल रहे है और बीच बीच मे वार्तालाप कर रहे है।

मास्टर – कैसी सुन्दर चाँदनी है! कितने अनन्त काल से प्रकृति के ये नियम चले आ रहे है!

गिरीश – तुम्हे कैसे मालूम हुआ?

मास्टर – प्रकृति के नियमो मे परिवर्तन नही होता। विलायत के पण्डित टेलिस्कोप (Telescope) से नये नये नक्षत्र देख रहे है। उन्होंने देखा है, चन्द्रलोक मे बड़े बड़े पहाड़ है।

गिरीश – यह कहना कठिन है, उनकी बातो पर विश्वास नही होता।

मास्टर – क्यों? टेलिस्कोप से तो सब बिलकुल ठीक ठीक दीख पड़ता है।

गिरीश – पर तुम कैसे कह सकते हो कि पहाड़ आदि सब ठीक ठीक ही देखे गये हैं। मान लो, पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच में कुछ और चीजे हों, तो उनमें से प्रकाश आने पर सम्भव है ऐसा दिखता हो।

किशोर भक्त-मण्डली सदा ही बगीचे में रहती है, श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए, – नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, शरद, शशि, बाबूराम, काली, योगिन, लाटू आदि। जो संसारी भक्त हैं, उनमें से कोई कोई रोज आते हैं और रात में भी कभी कभी रह जाते हैं। उनमें से कोई कभी कभी आया करते हैं। आज नरेन्द्र, काली और तारक दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर के बगीचे में गये हुए हैं। नरेन्द्र वहाँ पंचवटी के नीचे बैठकर तपस्या और साधना करेंगे। इसीलिए दो-एक गुरुभाइयों को भी साथ लेते गये हैं।

(२)

श्रीरामकृष्ण का भक्तों के प्रति स्नेह

गिरीश, लाटू और मास्टर ने ऊपर जाकर देखा, श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए हैं। शशि और दो-एक भक्त उसी कमरे में श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए थे। क्रमशः बाबूराम, निरंजन और राखाल भी आ गये।

कमरा बड़ा है। श्रीरामकृष्ण की शय्या के पास औषधि तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ रखी हुई हैं। कमरे के उत्तर की ओर एक दरवाजा है, जीने से चढ़कर उस कमरे में प्रवेश किया जाता है। उस द्वार के सामनेवाले कमरे के दक्षिण की ओर एक और द्वार है। इस द्वार से दक्षिण की छोटी छत पर चढ़ सकते हैं। छत पर खड़े होने पर बगीचे के पेड़-पौधे, चाँदनी और पास का राजपथ भी दीख पड़ता है।

भक्तों को रात में जागना पड़ता है। वे बारी बारी से जागते हैं। मसहरी लगाकर, श्रीरामकृष्ण को शयन कराने के पश्चात् जो भक्त कमरे में रहते हैं, वे कमरे के पूर्व की ओर चटाई बिछाकर कभी बैठे रहते हैं और कभी लेटे। अस्वस्थता के कारण श्रीरामकृष्ण की आँख नहीं लगती। इसलिए जो रहते हैं, उन्हें कई घण्टे जागते ही रहना पड़ता है।

आज श्रीरामकृष्ण की बीमारी कुछ कम है। भक्तों ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया, फिर सब के सब जमीन पर श्रीरामकृष्ण के सामने बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से दीपक जरा नजदीक ले आने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण गिरीश से आनन्दपूर्वक बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश से) – कहो, अच्छे हो न? (लाटू से) इन्हें तम्बाकू पिला और पान दे।

कुछ क्षण के बाद बोले 'इन्हें कुछ मिठाई दे।'

लाटू – पान दे दिया है। दूकान से मिठाई लेने के लिए आदमी भेजा है।

श्रीरामकृष्ण बैठे है। एक भक्त ने कई मालाएँ लाकर श्रीरामकृष्ण को अर्पण कर दी। श्रीरामकृष्ण ने मालाओ को लेकर गले मे धारण कर लिया। फिर उनमे से दो मालाएँ निकालकर गिरीश को दे दी।

बीच-बीच मे जलपान की मिठाई के सम्बन्ध मे श्रीरामकृष्ण पूछ रहे है - 'क्या मिठाई आयी?'

मणि श्रीरामकृष्ण को पंखा झल रहे है। श्रीरामकृष्ण के पास किसी भक्त का दिया हुआ चन्दन की लकड़ी का एक पंखा था। श्रीरामकृष्ण ने उसे मणि के हाथ मे दिया। उसी पंखे को लेकर मणि हवा कर रहे है। गले से दो मालाएँ निकालकर श्रीरामकृष्ण ने मणि को भी दी।

लाटू श्रीरामकृष्ण से एक भक्त की बात कह रहे है। उनका एक सात-आठ साल का लड़का आज डेढ़ साल हुए गुजर गया है। उस लड़के ने भक्तो के बीच मे श्रीरामकृष्ण को कई बार देखा था।

लाटू – (श्रीरामकृष्ण से) – ये अपने लड़के की पुस्तक देखकर कल रात को बहुत रोये थे। इनकी स्त्री भी बच्चे के शोक से पागल-सी हो गयी है। अपने दूसरे बच्चो को मारती है और उठाकर पटक देती है। ये कभी कभी यहाँ रहते है, इसलिए बड़ा हल्ला मचाती है।

श्रीरामकृष्ण उस शोक-समाचार को सुनकर मानो चिन्तित हो चुप हो रहे।

गिरीश – अर्जुन ने इतनी गीता पढ़ी परन्तु वे भी पुत्र के शोक से मूर्च्छित हो गये, तो इनके शोक के लिए आश्चर्य प्रकट करने की कोई बात नही।

संसार में ईश्वर-लाभ किस प्रकार होता है

गिरीश के जलपान के लिए मिठाई आयी है। फागू की दूकान की गर्म कचौड़ियाँ, पूड़ियाँ और दूसरी मिठाइयाँ। फागू की दूकान वराहनगर मे है। श्रीरामकृष्ण ने अपने सामने वह सब सामान रखकर प्रसाद कर दिया। फिर स्वयं उठाकर मिष्टान्न और पूड़ियो का दोना गिरीश को दिया। कहा, 'कचौड़ियाँ बहुत अच्छी है।' गिरीश सामने बैठकर खा रहे है। गिरीश को पीने के लिए पानी देना है। श्रीरामकृष्ण के पलंग के पश्चिम की ओर सुराही मे पानी है। गरमी का समय है, वैशाख का महीना। श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'यहाँ बड़ा अच्छा पानी है।'

श्रीरामकृष्ण बहुत ही अस्वस्थ है। खड़े होने की शक्ति तक नही रह गयी है। भक्तगण आश्चर्यचकित होकर देख रहे हैं – श्रीरामकृष्ण की कमर मे वस्त्र नही है, दिगम्बर हो रहे है। बालक की तरह पलंग पर बैठे सरक-सरककर बढ रहे है – इच्छा है,

खुद पानी दे दें। श्रीरामकृष्ण की वह अवस्था देखकर भक्तों की साँस मानो रुक गयी। श्रीरामकृष्ण ने गिलास में पानी ढाला। गिलास से थोड़ासा पानी हाथ में लेकर देख रहे है कि पानी ठण्डा है या नहीं। उन्होंने देखा, पानी अधिक ठण्डा नहीं है। अन्त में यह सोचकर कि दूसरा अच्छा पानी यहाँ मिल नहीं सकता, श्रीरामकृष्ण ने इच्छा न होते हुए भी गिरीश को वही पानी पीने के लिए दिया।

गिरीश मिठाइयाँ खा रहे हैं। चारों ओर भक्तगण बैठे हुए हैं। मणि श्रीरामकृष्ण को पंखे से हवा कर रहे हैं।

गिरीश – (श्रीरामकृष्ण से) – देवेन्द्रबाबू संसार का त्याग करेंगे।

श्रीरामकृष्ण सब समय बातचीत नहीं कर सकते, बड़ा कष्ट होता है। अपने ओठो मे उँगली छुलाकर उन्होंने इशारे से पूछा, 'फिर उनके घरवालों के भरण-पोषण की क्या व्यवस्था होगी, – संसार कैसे चल सकेगा?'

गिरीश – मुझे नहीं मालूम कि वे क्या करेंगे।

सब लोग चुप हैं। गिरीश खाते-खाते फिर बातचीत करने लगे।

गिरीश – अच्छा महाराज, कौनसा ठीक है? – कष्ट में संसार का त्याग करना या संसार में रहकर उन्हें पुकारना?

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – क्या गीता में तुमने नहीं देखा? अनासक्त हो संसार में रहकर कर्म करते रहने पर, सब मिथ्या समझकर ज्ञानलाभ के पश्चात् संसार में रहने पर अवश्य ही ईश्वर-प्राप्ति होती है।

"कष्ट मे पड़कर जो लोग संसार का त्याग करते हैं, वे निम्न कोटि के मनुष्य हैं।

"संसार मे रहनेवाला ज्ञानी कैसा है – जानते हो? – जैसे काँच के घर में रहनेवाला मनुष्य, – वह भीतर-बाहर सब देखता है।"

सब लोग चुप हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – कचौड़ियाँ गर्म हैं, बहुत ही अच्छी हैं।

मास्टर (गिरीश से) – फागू की दूकान की कचौड़िया प्रसिद्ध हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, प्रसिद्ध हैं।

गिरीश – (खाते ही खाते, सहास्य) – जी, बहुत ही अच्छी हैं।

श्रीरामकृष्ण – पूड़ियाँ रहने दो, कचौड़ियाँ खाओ। (मास्टर से) परन्तु कचौड़ी रजोगुणी भोजन है।

गिरीश – (श्रीरामकृष्ण से) – अच्छा महाराज, मन अभी इतनी उच्च भूमि पर है, फिर नीचे भला क्यों गिर जाता है?

श्रीरामकृष्ण – संसार में रहने से ऐसा होता ही है। कभी मन ऊँचे चढ़ जाता है, कभी गिर जाता है? कभी बहुत अच्छी भक्ति होती है, कभी भक्ति की मात्रा घट जाती

है। कामिनी और कांचन लेकर रहना पड़ता है न, इसीलिए ऐसा होता है। संसार मे रहकर भक्त कभी ईश्वर-चिन्ता करता है, कभी उनका स्मरणकीर्तन करता है, कभी वही मन कामिनी और कांचन की ओर लगा देता है। जैसे साधारण मक्खी – कभी बर्फियो पर बैठती है, और कभी सड़े घाव और विष्ठा पर भी बैठती है।

"त्यागियो की बात और है। वे लोग कामिनी और कांचन से मन को हटाकर केवल ईश्वर मे ही लगाते है। वे केवल हरि-रस का ही पान करते है। जो यथार्थ त्यागी है, उन्हे ईश्वर के सिवा और कोई वस्तु अच्छी नही लगती। विषय-चर्चा होने पर वे वहाँ से उठ जाते है। ईश्वरीय प्रसंग वे ध्यान से सुनते है। जो यथार्थ त्यागी है, वह ईश्वर की बात छोड़ और दूसरी चर्चा करता ही नही।

"मधुमक्खी फूल पर ही बैठती है – मधु पीने के लिए। और कोई चीज उसे अच्छी नही लगती।"

गिरीश दक्षिण की छोटी छत पर हाथ धोने के लिए गये।

अवतार वेद-विधि के परे हैं

गिरीश फिर कमरे मे श्रीरामकृष्ण के सामने आकर बैठे, पान खा रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश से) – राखाल आदि ने अब समझा है कि कौनसा अच्छा है और कौनसा बुरा, क्या सत्य है और क्या मिथ्या। ये लोग जो संसार मे जाकर रहते है, जान-बूझकर ऐसा करते है। स्त्री है, लड़का भी हो गया है, परन्तु समझ मे आ गया है कि यह सब मिथ्या है, अनित्य है। राखाल आदि जितने है ये संसार मे लिप्त न होगे।

"जैसे 'पॉकाल' मछली। वह रहती तो पंक (कीच) के भीतर है, परन्तु उसकी देह मे कीच कही छू भी नही जाता।"

गिरीश – महाराज, यह सब मेरी समझ मे नही आता। आप चाहे तो सब को निर्लिप्त और शुद्ध कर दे सकते है। संसारी हो या त्यागी, सब को आप शुद्ध कर सकते है। मेरा विश्वास है, मलयानिल के प्रवाहित होने पर सब काठ चन्दन बन जाते है।

श्रीरामकृष्ण – सार वस्तु के बिना रहे चन्दन नही बनता। सेमर तथा इसी तरह के कुछ अन्य पेड़ चन्दन नही बनते।

गिरीश – यह मै नही मानता।

श्रीरामकृष्ण – किन्तु नियम तो ऐसा ही है।

गिरीश – आपका सब कुछ नियम के बाहर है।

भक्तगण निर्वाक् होकर सुन रहे है। मणि का हाथ पंखा झलते हुए कभी कभी रुक जाता है।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, हो सकता है। भक्ति-नदी के उमड़ने पर चारो ओर बॉसभर पानी

चढ़ जाता है।

"जब भक्ति-उन्माद होता है, तब वेद-विधि नही रह जाती। दूर्वादल तोड़कर भक्त फिर चुनता नही। हाथ मे जो कुछ आ जाता है, वही ले लेता है। तुलसी-दल लेते समय उसकी डाल तक तोड लेता है। अहा, कैसी अवस्था बीत चुकी है!

(मास्टर से) "भक्ति के होने पर और कुछ नही चाहता।"

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – किसी एक भाव का आश्रय लेना पड़ता है। रामावतार मे शान्त, दास्य, वात्सल्य, सख्य, ये सब भाव थे, कृष्णावतार मे ये सब तो थे ही, मधुरभाव एक ज्यादा था।

"श्रीमती (राधा) के मधुरभाव मे प्रणय है। सीता मे वह बात नही है, उसका शुद्ध सतीत्व है।

"उन्ही की लीला है। जब जैसा भाव उचित हो, उसे धारण करते है।"

विजय गोस्वामी के साथ दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर मे एक पगली-सी स्त्री श्रीरामकृष्ण को गाना सुनाने के लिए जाया करती थी। वह काली-संगीत और ब्रह्मगीत गाती थी। सब लोग उसे पगली कहते थे। वह काशीपुर के बगीचे मे भी प्राय: आया करती है और श्रीरामकृष्ण के पास जाने के लिए बड़ा उपद्रव मचाती है। भक्तो को इसीलिए सदा सतर्क रहना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण (गिरीश से) – पगली का मधुरभाव है। दक्षिणेश्वर मे एक दिन गयी थी, एकाएक रोने लगी। मैने पूछा, 'तू क्यो रोती है?' उसने कहा, 'सिर मे दर्द हो रहा है।' (सब लोग हँसते है)

"एक दिन और गयी थी। मै भोजन करने के लिए बैठा था। एकाएक उसने कहा, 'आपकी कृपा नही हुई?' मै भोजन कर रहा था, उसके मन मे क्या था मुझे मालूम नही। उसने कहा, 'आपने मुझे मन से उतार क्यो दिया?' मैने पूछा, 'तेरा भाव क्या है?' उसने कहा, 'मधुरभाव।' मैने कहा, 'अरे, मेरी मातृयोनि है। मेरे लिए सब स्त्रियाँ माताएँ है।' तब उसने कहा, 'यह मै कुछ नही जानती।' तब मैने रामलाल को पुकारकर कहा, 'रामलाल, जरा सुन तो, 'मन से उतारने' का प्रयोग यह किस अर्थ मे कर रही है?' उसमे वही भाव अब भी है।"

गिरीश – वह पगली धन्य है! चाहे वह पगली हो, और चाहे भक्तो द्वारा मारी भी जाय, परन्तु आठो पहर वह करती तो आप ही की चिन्ता है। – वह चाहे जिस भाव से करे, उसका अनिष्ट कभी हो ही नही सकता।

"महाराज, क्या कहूँ, पहले मै क्या था और आपको सोचकर क्या हो गया! पहले आलस्य था, इस समय वह आलस्य ईश्वरनिर्भरता मे परिणत हो गया। पहले पापी था

परन्तु अब निरहंकार हो गया हूँ। और क्या क्या कहूँ!"

भक्तगण चुप हैं। राखाल पगली की बातें कहते हुए दु:ख प्रकट कर रहे है। उन्होंने कहा, 'क्या कहें, दु:ख होता है. वह उपद्रव करती है, इसीलिए उसे बहुत कुछ कष्ट भी मिलता है।'

निरंजन – (राखाल से) – तेरे बीबी है, इसीलिए तेरा मन इस तरह छटपटाता है। हम लोग तो उसे लेकर बलि चढ़ा सकते हैं!

राखाल – (विरक्ति से) – बड़ी बहादुरी करोगे! उनके (श्रीरामकृष्ण के) सामने ये सब बातें कर रहे हो!

रुपये में आसक्ति। सद्व्यवहार

श्रीरामकृष्ण – (गिरीश से) – कामिनी और कांचन, यही संसार है। बहुतसे लोग ऐसे है, जो रुपये को अपनी देह के खून के बराबर समझते है। रुपये पर कितना भी प्यार क्यों न करो, परन्तु एक दिन वह अपने प्यार करनेवाले को सदा के लिए छोड़कर निकल जायगा।

"हमारे देश में खेतों पर मेड़ बाँधते है। मेड़ जानते हो? जो लोग बड़े प्रयत्न से चारों ओर मेड़ बाँधते हैं, उनकी मेड़े पानी के तेज बहाव से ढह जाती है, और जो लोग एक ओर घास जमा देते हैं, उनकी मेड़ें मजबूत हो जाती है और पानी के रुकने के कारण खूब धान पैदा होता है।

"जो लोग रुपये का सद्व्यवहार करते हैं – श्रीठाकुरजी और साधुओं की सेवा में, दान आदि सत्कर्मों मे खर्च करते हैं, वास्तव में उन्हीं का धनोपार्जन सफल होता है। उन्हीं की खेती तैयार होती है।

"डाक्टर और कविराजों की चीजें मैं नहीं खा सकता। जो लोग दूसरो के शारीरिक रोग-दु:खो का व्यापार करते है और उसी के अर्थोपार्जन करते है, उनका धन मानो खून और पीब है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने दो चिकित्सकों के नाम लिये।

गिरीश – राजेन्द्र दत्त बहुत ही श्रेष्ठ मनुष्य है। किसी से एक पैसा भी नही लेता। वह दान भी करता है।

परिच्छेद १३८

नरेन्द्र के प्रति उपदेश

(१)

नरेन्द्र आदि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ काशीपुर के बगीचे मे है। शरीर बहुत ही अस्वस्थ है, परन्तु सदा ही व्याकुल भाव से ईश्वर के निकट भक्तो की कल्याणकामना किया करते है। आज शनिवार है, चैत्र की शुक्ला चतुर्दशी, १७ अप्रैल १८८६। पूर्णिमा लग गयी है।

कुछ दिनो से नरेन्द्र लगातार दक्षिणेश्वर जा रहे है। वहाँ पंचवटी मे ईश्वर-चिन्तन, ध्यान-साधना आदि किया करते है। आज शाम को वे लौटे, साथ मे श्रीयुत तारक और काली भी है।

रात के आठ बजे का समय होगा। चाँदनी और दक्षिणी वायु ने उद्यान को और भी मनोहर बना दिया है। भक्तो मे से कितने ही नीचे के कमरे मे बैठे हुए ध्यान कर रहे है। नरेन्द्र मणि से कह रहे है – 'ये लोग अब छूट रहे है, (अर्थात् ध्यान करते हुए उपाधियो से मुक्त हो रहे है)।

कुछ देर बाद मणि ऊपरवाले कमरे मे श्रीरामकृष्ण के पास जाकर बैठे। श्रीरामकृष्ण ने उनसे पीकदान और अँगौछा धो लाने के लिए कहा। वे पश्चिमवाले तालाब से चन्द्रमा के प्रकाश मे सब धोकर ले आये।

दूसरे दिन सबेरे श्रीरामकृष्ण ने मणि को बुला भेजा। गंगास्नान करके श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के पश्चात् वे छत पर गये हुए थे।

उनकी स्त्री पुत्र के शोक से पागल हो रही है। श्रीरामकृष्ण ने उसे बगीचे मे आकर प्रसाद पाने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण इशारे से बतला रहे है – "उसे यहाँ आने के लिए कहना। गोद मे जो लड़का है, उसे भी ले आवे, – और यहाँ आकर भोजन करे।"

मणि – जी। ईश्वर पर उसकी भक्ति हो तो बहुत अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण इशारा करके बतला रहे है – "नही, शोक भक्ति को हटा देता है। और इतना बड़ा लड़का था!

"कृष्णकिशोर के भवनाथ की तरह दो लड़के थे, युनिवर्सिटी की दो-दो परीक्षाएँ पास की थी। जब उनका देहान्त हुआ, तब कृष्णकिशोर इतना बड़ा ज्ञानी, परन्तु फिर भी सम्हल न सका! मुझे ईश्वर ही ने नही दिया, मेरा भाग्य!

"अर्जुन इतना बड़ा ज्ञानी था, साथ कृष्ण थे। फिर भी अभिमन्यु के शोक से बिलकुल अधीर हो गया।

"किशोरी भला क्यो नही आता?"

एक भक्त – वह रोज गंगा नहाने जाया करता है।

श्रीरामकृष्ण – यहाँ क्यो नही आता?

भक्त – जी, आने के लिए कहूँगा।

श्रीरामकृष्ण – (लाटू से) – हरीश क्यो नही आता?

मास्टर के घर की ९-१० साल की दो लड़कियाँ श्रीरामकृष्ण को गाना सुना रही है। इन लड़कियो ने उस समय भी श्रीरामकृष्ण को गाना सुनाया था, जब श्रीरामकृष्ण मास्टर के श्यामपुकुर के तेलीपारावाले मकान मे पधारे थे। श्रीरामकृष्ण उनका गाना सुनकर बहुत ही सन्तुष्ट हुए थे। श्रीरामकृष्ण के पास गाना हो जाने पर भक्तो ने लड़कियो को नीचे बुलाकर फिर गवाया।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – अपनी लड़कियो को अब गाना मत सिखाना। आप ही आप ये गावे तो और बात है। जिस-तिस के पास गाने से लज्जा जाती रहेगी। स्त्रियो के लिए लज्जा बड़ी आवश्यक है।

श्रीरामकृष्ण के सामने पुष्पपात्र मे फूल-चन्दन लाकर रखा गया। श्रीरामकृष्ण पलंग पर बैठे हुए है। फूल-चन्दन से वे अपनी ही पूजा कर रहे है। सचन्दन पुष्प कभी मस्तक पर धारण कर रहे है, कभी कण्ठ मे, कभी हृदय मे और कभी नाभिस्थल मे।

मनोमोहन कोन्नगर से आये। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण अब भी अपनी पूजा कर रहे है। अपने गले मे उन्होने फूलो की माला डाल ली।

कुछ देर बाद मानो प्रसन्न होकर मनोमोहन को निर्माल्य प्रदान किया। मणि को भी एक फूल दिया।

(२)

नरेन्द्र के प्रति उपदेश

दिन के नौ बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ वार्तालाप कर रहे है। कमरे मे शशि भी है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – नरेन्द्र और शशि ये दोनो क्या कह रहे थे? क्या विचार

कर रहे थे?

मास्टर – (शशि से) – क्या बातें हो रही थीं, जी?

शशि – शायद निरंजन ने कहा है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर नास्ति-अस्ति, ये सब क्या बातें हो रही थी?

शशि – (सहास्य) – नरेन्द्र को बुलाऊ?

श्रीरामकृष्ण – बुला।

नरेन्द्र आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – तुम भी कुछ पूछो। क्या बातें हो रही थीं? – बता।

नरेन्द्र – पेट कुछ ठीक नहीं है। उन बातों को अब और क्या कहूँ?

श्रीरामकृष्ण – पेट अच्छा हो जायगा।

मास्टर – (सहास्य) – बुद्ध की अवस्था कैसी है?

नरेन्द्र – क्या मुझे वह अवस्था हुई है जो मैं बतलाऊँ?

मास्टर – ईश्वर हैं, इस सम्बन्ध में वे क्या कहते हैं?

नरेन्द्र – ईश्वर हैं, यह बात कैसे कह सकते हो? तुम्हीं इस संसार की सृष्टि कर रहे हो। बर्कले ने क्या कहा है, जानते हो?

मास्टर – हाँ, उन्होंने कहा है, 'Esse is percipi' (बाह्य वस्तुओ का अस्तित्व उनके अनुभव होने पर ही निर्भर है)। जब तक इन्द्रियों का काम चल रहा है, तभी तक संसार है।

श्रीरामकृष्ण – न्यांगटा कहता था, मन ही से संसार की उत्पत्ति है और मन ही में उनका लय भी होता है।

"परन्तु जब तक 'मैं' है तब तक सेव्य-सेवक का भाव ही अच्छा है।"

नरेन्द्र – (मास्टर से) – विचार अगर करो, तो ईश्वर हैं यह कैसे कह सकते हो? और विश्वास पर अगर जाओ तो सेव्यसेवक मानना ही होगा। यह अगर मानो – और मानना ही होगा – तो दयामय भी कहना होगा।

"तुमने केवल दुःख को ही सोच रखा है। उन्होंने जो इतना सुख दिया है, इसे क्यों भूल जाते हो? उनकी कितनी कृपा है! उन्होंने हमें बड़ी बड़ी चीजें दी हैं – मनुष्य-जन्म, ईश्वर को जानने की व्याकुलता और महापुरुष का संग। 'मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुष-संश्रयः।' " (सब लोग चुप हैं)

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – परन्तु मुझे बहुत साफ अनुभव होता है कि भीतर कोई एक है।

राजेन्द्रलाल दत्त आकर बैठे। वे होमिओपैथिक मत से श्रीरामकृष्ण की चिकित्सा कर रहे हैं। औषधि आदि की बातें हो जाने पर, श्रीरामकृष्ण मनोमोहन की ओर उँगली के

इशारे से बतला रहे है।

डाक्टर राजेन्द्र – ये मेरे ममेरे भाई के लड़के है।

नरेन्द्र नीचे आये है। आप ही आप गा रहे है – (भावार्थ) – "प्रभो, तुमने दर्शन देकर मेरा समस्त दुःख दूर कर दिया है और मेरे प्राणो को मोह लिया है। तुम्हे पाकर सप्त लोक अपना दारुण शोक भूल जाते है, फिर, नाथ, मुझ अति दीन-हीन की बात ही क्या? ..."

नरेन्द्र को पेट की कुछ शिकायत है, मास्टर से कह रहे हैं – 'प्रेम और भक्ति के मार्ग मे रहने पर देह की ओर मन आता है। नही तो मै हूँ कौन? मै न मनुष्य हूँ, न देवता हूँ, न मेरे सुख है, न दुःख है।'

रात के नौ बजे का समय हुआ। सुरेन्द्र आदि भक्तो ने श्रीरामकृष्ण को फूलो की माला लाकर समर्पण की। कमरे मे बाबूराम, सुरेन्द्र, लाटू, मास्टर आदि है। श्रीरामकृष्ण ने सुरेन्द्र की माला स्वयं अपने गले मे धारण कर ली। सब लोग चुपचाप बैठे है।

श्रीरामकृष्ण एकाएक सुरेन्द्र को इशारे से बुला रहे है। सुरेन्द्र जब पलंग के पास आये, तब उस प्रसादी माला को लेकर श्रीरामकृष्ण ने सुरेन्द्र को पहना दिया।

माला पाकर सुरेन्द्र ने प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण फिर उन्हे इशारा करके पैरो पर हाथ फेरने के लिए कह रहे है। कुछ देर तक सुरेन्द्र ने उनके पैर दबाये।

श्रीरामकृष्ण जिस कमरे मे है, उसकी पश्चिम-ओर एक पुष्करिणी (तालाब) है। इस तालाब के घाट मे कई भक्त खोल करताल लेकर गा रहे है। श्रीरामकृष्ण ने लाटू से कहला भेजा, 'तुम लोग कुछ देर हरिनाम-कीर्तन करो।'

मास्टर और बाबूराम आदि अभी भी श्रीरामकृष्ण के पास बैठे है। वे वही से भक्तो का गाना सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण गाना सुनते सुनते बाबूराम और मास्टर से कह रहे है, 'तुम लोग नीचे जाओ। उनके साथ मिलकर गाना और नाचना।' वे लोग भी नीचे आकर कीर्तनवालो के साथ गाने लगे।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने फिर आदमी भेजा। उससे उन्होने कीर्तन के खास-खास पद गवाने के लिए कह दिया।

कीर्तन समाप्त हो गया। सुरेन्द्र भावावेश मे आकर गा रहे है। गाना शंकर के सम्बन्ध मे है।

(३)

नरेन्द्र तथा ईश्वर का अस्तित्व

श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर हीरानन्द गाड़ी पर चढ़ रहे है। गाड़ी के पास नरेन्द्र और

राखाल खड़े हुए उनसे साधारण कुशल प्रश्न-सम्बन्धी बातचीत कर रहे है। दिन के दस बजे का समय होगा। हीरानन्द कल फिर आयेगे।

आज बुधवार है, चैत्र की कृष्णा तृतीया। २१ अप्रैल, १८८६। नरेन्द्र बगीचे मे टहलते हुए मणि से वार्तालाप कर रहे है। घर मे उनकी माता और भाइयो को बडा कष्ट है। अभी भी वे कोई उत्तम प्रबन्ध नही कर सके। इसके लिए उन्हे चिन्ता रहती है।

नरेन्द्र – विद्यासागर के स्कूल का काम मुझे नही चाहिए। मै गया जाने की सोच रहा हूॅ। वहॉ एक जमीदार के मैनेजर की जगह है, एक आदमी ने उसके सम्बन्ध मे कहा था। ईश्वर फीश्वर कही कुछ नही है।

मणि – (हॅसकर) – तुम इस समय तो कहते हो, परन्तु बाद मे फिर नही कहोगे। संशय भी ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग की एक अवस्था है, इन सब अवस्थाओ को पार कर जाने पर, और भी आगे बढ जाने पर ईश्वर मिलते है – ऐसा श्रीगमकृष्णदेव कहते है।

नरेन्द्र – जिस तरह इस पेड को देख रहा हूं, इसी तरह क्या किसी ने ईश्वर को देखा है?

मणि – हॉ, श्रीरामकृष्ण ने देखा है।

नरेन्द्र – वह मन की भूल हो सकती है।

मणि – जो जिस अवस्था मे जैसा दर्शन करता है, उस अवस्था के लिए वही सत्य होता है। जब स्वप्न देख रहे हो कि तुम किसी के बगीचे मे गये हुए हो, तब वह बगीचा तुम्हारे लिए सत्य है, परंतु तुम्हारी उस अवस्था के बदलने पर – अर्थात् जाग्रत अवस्था मे – तुम्हे वह बात भ्रम मालूम होगी। जिस अवस्था मे ईश्वर के दर्शन होते है, उस अवस्था के होने पर ईश्वर सत्य ही मालून होगे।

नरेन्द्र – मै सत्य चाहता हूॅ। उस दिन श्रीरामकृष्णदेव के साथ ही मैने घोर तर्क किया।

मणि – (सहास्य) – क्या हुआ था?

नरेन्द्र – उन्होने मुझसे कहा था, 'मुझे कोई कोई ईश्वर कहते है।' मैने कहा, 'दूसरे चाहे लाख कहे, परंतु जब तक मुझे वह बात सच नही जॅचेगी, तब तक मै कदापि न कहूॅगा।'

'उन्होने कहा, 'अधिक तर लोग जो कुछ कहेगे, वही तो सत्य है – वही तो धर्म है।'

"मैने कहा, 'मै स्वयं जब तक अच्छी तरह समझ न लूॅगा, तब तक मै दूसरो की बाते नही मान सकता।' "

मणि – (सहास्य) – तुम्हारा भाव कोपरनिकस, बर्कले आदि की तरह का है। संसार के आदमी कहते है, 'सूर्य ही चलता है', पर कोपरनिकस ने उनकी बातो पर ध्यान नही

दिया। संसार के आदमी कहते है, 'बाह्य संसार है,' पर बर्कले ने यह बात नही मानी। इसलिए लीविस कहते है, 'क्यो, बर्कले क्या एक दार्शनिक कोपरनिकस नही था?'

नरेन्द्र – एक History of Philosophy (दर्शन का इतिहास) आप दे सकेगे?

मणि – क्या लीविस का लिखा हुआ?

नरेन्द्र – नही उहबरवेग का, – मै जर्मन लेखक की पुस्तक पढ़ूँगा।

मणि – तुम कहते तो हो कि सामने के पेड की तरह क्या किसी ने ईश्वर को देखा है, परन्तु ईश्वर अगर आदमी बनकर तुम्हारे सामने आये और कहे कि मै ईश्वर हूँ, तो क्या तुम विश्वास करोगे? तुम लेजरस की कहानी जानते हो न? जब लेजरस ने परलोक मे एब्राहम से जाकर कहा कि अपने आत्मीयो और मित्रो से कह आऊँ कि परलोक वास्तव मे है, तब एब्राहम ने कहा, 'तुम्हारे जाकर कहने से वे लोग क्या विश्वास करेगे? वे कहेंगे, यह एक झूठा यहाँ आकर बेसिर-पैर की उड़ा रहा है।'

"श्रीरामकृष्ण ने कहा है, उन्हे विचार करके कोई जान नही सकता। विश्वास से ही सब कुछ होता है – ज्ञान और विज्ञान, दर्शन और आलाप, सब कुछ।"

भवनाथ ने विवाह किया है। उन्हे अब भोजन-वस्त्र की चिन्ता हो रही है। वे मास्टर के पास आकर कहते है, 'विद्यासागर का नया स्कूल खुलनेवाला है, मुझे भी तो भोजन-वस्त्र का प्रबन्ध करना है। अगर स्कूल का कोई काम कर लूँ तो क्या बुरा है?'

दिन के तीन-चार बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण लेटे हुए है। रामलाल पैर दबा रहे है, कमरे मे सीती के गोपाल और मणि भी है। रामलाल दक्षिणेश्वर से आज श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए आये हुए है।

श्रीरामकृष्ण मणि से खिड़कियाँ बन्द कर देने और पैरो पर हाथ फेरने के लिए कह रहे है।

श्रीयुत पूर्ण को किराये की गाड़ी करके काशीपुर के बगीचे मे ले आने के लिए श्रीरामकृष्ण ने कहा था। वे आकर दर्शन कर गये। गाड़ी का किराया मणि देगे। श्रीरामकृष्ण गोपाल को इशारा करके पूछ रहे है, 'इनके पास से मिला?'

गोपाल – जी हाँ।

रात के नौ बजे का समय है। सुरेन्द्र राम आदि कलकत्ता लौट जाने का प्रबन्ध कर रहे है।

वैशाख की धूप – दिन के समय श्रीरामकृष्ण का कमरा बहुत ही तप जाता है। *सुरेन्द्र इसीलिए खस की टट्टियाँ ले आये है। इन्हे खिड़कियो मे लगा देने से कमरा खूब* ठण्डा रहता है।

सुरेन्द्र – खस की टट्टी अभी तक किसी ने नही लगायी, – मालूम होता है कोई ध्यान ही नही देता।

एक भक्त – (सहास्य) – भक्तो को इस समय ब्रह्मज्ञान की अवस्था है। इस समय सब 'सोऽहम्' है – संसार मिथ्या हो रहा है। फिर जब 'तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ' यह भाव आयगा, तब यह सब सेवा होगी।

(सब हँसते है।)

परिच्छेद १३९

श्रीरामकृष्ण का भक्तों के प्रति प्रेम

(१)

राखाल, शशि आदि भक्तों के संग में

काशीपुर के बगीचे मे शाम को राखाल, शशि और मास्टर टहल रहे है। श्रीरामकृष्ण बीमार है, बगीचे मे चिकित्सा कराने के लिए आये हुए है। वे ऊपर के कमरे मे है। भक्तगण उनकी सेवा कर रहे है। आज बृहस्पतिवार है, २२ अप्रैल, १८८६।

मास्टर – वे तो तीनो गुणो से परे एक बालक है।

शशि और राखाल – श्रीरामकृष्ण ने वैसा ही कहा है।

राखाल - जैसे एक ऊँची मीनार। वहाँ बैठने पर सब समाचार मिलता रहता है, सब कुछ देख सकते है, परन्तु वहाँ कोई पहुँच नही सकता,

मास्टर – उन्होने कहा है, 'इस अवस्था मे सदा ईश्वर के दर्शन हो सकते है।' विषयरूपी रस के न रहने के कारण सूखी लकड़ी आग जल्दी पकड़ती है।

शशि - बुद्धि मे कितने भेद है, यह वे चारु को बतला रहे थे। जिस बुद्धि से ईश्वर की प्राप्ति होती है, वही बुद्धि ठीक है। जिस बुद्धि से रुपया मिलता है, घर बनता है, डिप्टी मैजिस्ट्रेट या वकील होता है, वह बुद्धि नाममात्र की है। वह पतले दही की तरह है, जिसमे पानी का भाग अधिक है। उसमे सिर्फ चिउड़ा भीग सकता है। वह जमे दही की तरह अच्छा दही नही है। जिस बुद्धि से ईश्वर की प्राप्ति होती है, वही बुद्धि जमे दही की तरह उत्कृष्ट कहलाती है।

मास्टर – अहा! कैसी सुन्दर बात है!

शशि – काली तपस्वी ने श्रीरामकृष्ण से कहा था, "आनन्द क्या होगा? आनन्द तो भीलो के भी है। जंगली लोग भी 'हो हो' करके नाचते और गाते है।"

राखाल – उन्होने (श्रीरामकृष्ण ने) कहा, 'यह क्या? ब्रह्मानन्द और विषयानन्द क्या एक है? जीव विषयानन्द लेकर है। सम्पूर्ण विषयासक्ति के बिना गये ब्रह्मानन्द कभी मिल नही सकता। एक ओर रुपये और इन्द्रिय-सुख का आनन्द है और दूसरी ओर है ईश्वर-प्राप्ति का आनन्द। क्या ये दो कभी समान हो सकते है? ऋषियों ने इस ब्रह्मानन्द

का भोग किया था।'

मास्टर – काली इस समय बुद्धदेव की चिन्ता करते है न; इसलिए आनन्द के उस पार की बातें कह रहे हैं।

राखाल – श्रीरामकृष्ण के पास भी बुद्धदेव की बातचीत काली ने उठायी थी। श्रीरामकृष्णदेव ने कहा, 'बुद्धदेव अवतार-पुरुष है। उनके साथ किसी की क्या तुलना? बड़े घर की बड़ी बातें।' काली ने कहा, 'ईश्वर की शक्ति ही तो सब कुछ है। उसी शक्ति से ईश्वर का आनन्द मिलता है, और उसी से विषय का भी।'

मास्टर – फिर उन्होंने क्या कहा?

राखाल – उन्होंने कहा 'यह कैसा? – सन्तानोत्पत्ति करने की शक्ति और ईश्वर-प्राप्ति की शक्ति दोनों क्या एक है?'

बगीचे के दुमँजले कमरे में भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। शरीर अधिकाधिक अस्वस्थ होता जा रहा है। आज फिर डाक्टर महेन्द्र सरकार और डाक्टर राजेन्द्र दत्त देखने के लिए आये हैं। कमरे मे राखाल, नरेन्द्र, शशि, मास्टर, सुरेन्द्र, भवनाथ तथा अन्य बहुतसे भक्त बैठे है।

बगीचा पाकपाड़ा के बाबुओ का है। किराये से है, ६०-६५ रुपये देने पड़ते है। भक्तो में जो कम उम्र के है, वे बगीचे में ही रहते है। दिन-रात श्रीरामकृष्ण की सेवा वही किया करते है। गृही भक्त भी बीचबीच में आते है और उनकी सेवा किया करते है। वही रहकर श्रीरामकृष्ण की सेवा करने की इच्छा उन्हे भी है, परन्तु अपने-अपने कार्य मे लगे रहने के कारण सदा वहाँ रहकर वे उनकी सेवा नही कर सकते। बगीचे का खर्च चलाने के लिए अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार वे आर्थिक सहायता देते है। अधिकांश खर्च सुरेन्द्र ही देते हैं। उन्हीं के नाम से किराये पर बगीचे की लिखा-पढ़ी हुई है। एक रसोइया और दासी, ये दो नौकर भी सदा वहीं रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण तथा कामिनी-कांचन

श्रीरामकृष्ण – (डाक्टर सरकार आदि से) – बड़ा खर्च हो रहा है।

डाक्टर – (भक्तों की ओर इशारा करके) – ये सब लोग तैयार भी तो है। बगीचे का सम्पूर्ण खर्च देते हुए भी इन्हे कोई कष्ट नही है। (श्रीरामकृष्ण से) अब देखो, कांचन की आवश्यकता आ पड़ी।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – बोल न।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को उत्तर देने की आज्ञा दे रहे हैं। नरेन्द्र चुप है। डाक्टर फिर बातचीत कर रहे हैं।

डाक्टर – कांचन चाहिए। और फिर कामिनी भी चाहिए।

राजेन्द्र डाक्टर – इनकी स्त्री इनके लिए खाना पका दिया करती है।

डाक्टर सरकार – (श्रीरामकृष्ण से) – देखा?

श्रीरामकृष्ण – (जरा मुस्कराकर) – है लेकिन बड़ा झंझट।

डाक्टर सरकार – झंझट न रहती, तो सब लोग परमहंस हो गये होते।

श्रीरामकृष्ण – स्त्री छू जाती है, तो तबीयत अस्वस्थ हो जाती है! और जिस जगह छू जाती है, वहाँ बड़ी देर तक सीगी मछली के काँटे के चुभ जाने के समान पीड़ा होती रहती है।

डाक्टर – यह विश्वास तो होता है, परन्तु अपनी ओर से देखता हूँ तो कामिनी और कांचन के बिना काम ही नही चलता।

श्रीरामकृष्ण – रुपया हाथ मे लेता हूँ तो हाथ टेढ़ा हो जाता है – साँस रुक जाती है। रुपये से अगर कोई विद्या का संसार चला सके, ईश्वर और साधुओ की सेवा कर सके, तो उसमे दोष नही रह जाता।

"स्त्री लेकर माया का संसार करने से मनुष्य ईश्वर को भूल जाता है। जो संसार की माँ है, उन्ही ने इस माया का रूप – स्त्री का रूप धारण किया है। इसका यथार्थ ज्ञान हो जाने पर फिर माया के संसार पर जी नही लगता। सब स्त्रियो पर मातृज्ञान के होने पर मनुष्य विद्या का संसार कर सकता है। ईश्वर के दर्शन हुए बिना स्त्री क्या वस्तु है, यह समझ मे नही आता।"

होमियोपैथिक दवा का सेवन करके श्रीरामकृष्ण कुछ दिनो से जरा अच्छे रहते है।

राजेन्द्र – अच्छे होकर आपको स्वयं होमियोपैथिक डाक्टरी करनी चाहिए, नही तो फिर इस मानव-जीवन का क्या उपयोग होगा? (सब हँसते है।)

नरेन्द्र – जो मोची का काम करता है, वह कहता है कि इस संसार मे चमड़े से बढ़कर और कोई चीज नही है! (सब हँसे)

कुछ देर बाद दोनो डाक्टर चले गये।

(२)

श्रीरामकृष्ण की उच्च अवस्था

श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत कर रहे है। कामिनी के सम्बन्ध मे अपनी अवस्था बतला रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – ये लोग कहते है, कामिनी और कांचन के बिना चल नही सकता। मेरी क्या अवस्था है, यह ये लोग नही जानते।

"स्त्रियो की देह मे हाथ लग जाता है तो ऐंठ जाता है, वहाँ पीड़ा होने लगती है।

"यदि आत्मीयता के विचार से किसी के पास जाकर बातचीत करने लगता हूँ तो

बीच मे एक न जाने किस तरह का पर्दा-सा पड़ा रहता है; उसके उस तरफ जाया ही नही जाता।

"कमरे में अकेला बैठा हुआ हूँ, ऐसे समय अगर कोई स्त्री आये तो एकदम बालक की-सी अवस्था हो जाती है और उसे माता की दृष्टि से देखता हूँ।"

मास्टर निर्वाक् होकर श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए ये सब बातें सुन रहे हैं। कुछ दूर भवनाथ के साथ नरेन्द्र बातचीत कर रहे है। भवनाथ ने विवाह किया है, अब नौकरी की खोज में हैं। काशीपुर के बगीचे में श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए अधिक नहीं आ सकते। श्रीरामकृष्ण भवनाथ के लिए बड़ी चिन्ता किया करते हैं। कारण, भवनाथ संसार मे फँस गये हैं। भवनाथ की उम्र २३-२४ वर्ष की होगी।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – उसे खूब हिम्मत बँधाते रहना।

नरेन्द्र और भवनाथ श्रीरामकृष्ण की ओर देखकर मुस्कराने लगे। श्रीरामकृष्ण इशारा करके फिर भवनाथ से कह रहे हैं – "खूब वीर बनो। घूँघट के भीतर अपनी स्त्री के आँसू देखकर अपने को भूल न जाना। ओह! औरतें कितना रोती हैं! – वे तो नाक छिनकने मे भी रोती हैं!

(नरेन्द्र, भवनाथ और मास्टर हँसते हैं।)

"ईश्वर मे मन को अटल भाव से स्थापित रखना। वीर वह है, जो स्त्री के साथ रहने पर भी उससे प्रसंग नहीं करता। स्त्री के साथ केवल ईश्वरीय बाते करते रहना।"

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर इशारा करके भवनाथ से कह रहे है – "आज यही भोजन करना।"

भवनाथ – जी, बहुत अच्छा। आप मेरी चिन्ता बिलकुल न कीजिये।

सुरेन्द्र आकर बैठे। महीना वैशाख का है। भक्तगण सन्ध्या के बाद रोज श्रीरामकृष्ण को मालाएँ पहनाया करते हैं। सुरेन्द्र चुपचाप बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण ने प्रसन्न होकर उन्हे दो मालाएँ दीं। सुरेन्द्र ने प्रणाम करके मालाओ को पहले सिर पर धारण किया, फिर गले में डाल लिया।

सब लोग चुपचाप बैठे हुए श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं। सुरेन्द्र उन्हें प्रणाम करके खडे हो गये। वे चलनेवाले हैं। जाते समय भवनाथ को बुलाकर उन्होंने कहा, 'खस की टट्टी लगा देना।'

(३)

श्रीरामकृष्ण तथा हीरानन्द

श्रीरामकृष्ण ऊपरवाले कमरे में बैठे है। सामने हीरानन्द, मास्टर तथा दो-एक भक्त और है। हीरानन्द के साथ दो-एक मित्र भी आये है। हीरानन्द सिन्ध मे रहते है। कलकत्ते

के कॉलेज मे अध्ययन समाप्त करके देश चले गये थे, अब तक वही थे। श्रीरामकृष्ण की बीमारी का समाचार पाकर उन्हे देखने के लिए आये है। सिन्ध देश कलकत्ते से कोई बाईस सौ मील होगा। हीरानन्द को देखने के लिए श्रीरामकृष्ण भी उत्सुक रहते थे।

श्रीरामकृष्ण हीरानन्द की ओर उँगली उठाकर मास्टर को इशारा कर रहे है। मानो कह रहे है – 'यह बड़ा अच्छा लड़का है।'

श्रीरामकृष्ण – क्या तुमसे परिचय है?

मास्टर – जी हॉ, है।

श्रीरामकृष्ण – (हीरानन्द और मास्टर से) – तुम लोग जरा बातचीत करो, मै सुनूँ।

मास्टर को चुप रहते हुए देखकर श्रीरामकृष्ण ने पूछा – "क्या नरेन्द्र है? उसे बुला लाओ।"

नरेन्द्र ऊपर श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र और हीरानन्द से) – तुम दोनो जरा बातचीत तो करो।

हीरानन्द चुप है। बड़ी देर तक टाल-मटोल करके उन्होने बातचीत करना आरम्भ किया।

हीरानन्द – (नरेन्द्र से) – अच्छा, भक्त को दु:ख क्यो मिलता है?

हीरानन्द की बाते बड़ी ही मधुर है। जिन-जिन लोगो ने उनकी बाते सुनी, उन सब को यह जान पड़ा कि इनका हृदय प्रेम से भरा है।

नरेन्द्र – इस संसार का प्रबन्ध देखकर यह जान पड़ता है कि इसकी रचना किसी शैतान ने की है। मै इससे अच्छे संसार की सृष्टि कर सकता था।

हीरानन्द – दु:ख के बिना क्या कभी सुख का अनुभव होता है?

नरेन्द्र – मै यह नही कहता कि संसार की सृष्टि किस उपादान से की जाय, किन्तु मेरा मतलब यह है कि संसार का अभी जो प्रबन्ध दीख पड़ रहा है, वह अच्छा नही।

"परन्तु एक बात पर विश्वास करने पर सब निपटारा हो जायगा। सब ईश्वर है, यह विश्वास किया जाय तो उलझन सुलझ जायेगी। ईश्वर ही सब कुछ कर रहे है।"

हीरानन्द – यह कहना सहज है।

नरेन्द्र मधुर स्वर से निर्वाणषट्क कह रहे है –

ॐ मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायुश्चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम्।।१।।
न च प्राणसंज्ञो न वै पंचवायुर्न वा सप्तधातुर्न वा पंचकोष:।
न वाक्पाणिपाद न चोपस्थपायुश्चिदानन्दरूप शिवोऽह शिवोऽहम्।।२।।
न मे द्वेषरागौ न मे लोभमोहो मदो नेव मे नैव मात्सर्यभाव:।
न धर्मो न चार्थो न कामा न मोक्षश्चिदानन्दरूप शिवोऽह शिवोऽहम्।।३।।

न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं न मन्त्रो न तीर्थो न वेदा न यज्ञाः।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ताश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्॥ ४॥
न मृत्युर्न शंका न मे जातिभेदः। पिता नैव मे नैव माता न जन्म।
न बन्धुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्यश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्॥ ५॥
अहं निर्विकल्पो निराकाररूपो विभुत्वाच्च सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणाम्।
न चासंगतं नैव मुक्तिर्न मेयश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्॥ ६॥

हीरानन्द – वाह!

श्रीरामकृष्ण ने हीरानन्द को इसका उत्तर देने के लिए कहा।

हीरानन्द – एक कोने से घर को देखना जैसा है, वैसा ही घर के बीच मे रहकर भी देखना है। 'हे ईश्वर! मै तुम्हारा दास हूँ' – इससे भी ईश्वर का अनुभव होता है और 'मै वही हूँ, सोऽहम्' – इससे भी ईश्वर का अनुभव होता है। एक द्वार से भी कमरे मे जाया जाता है और अनेक द्वारो से भी जाया जाता है।

सब लोग चुप है। हीरानन्द ने नरेन्द्र से गाने के लिए अनुरोध किया। नरेन्द्र कौपीनपंचक गा रहे है –

वेदान्तवाक्येषु सदा रमन्तो भिक्षान्नमात्रेण च तुष्टिमन्तः।
अशोकमन्तःकरणे चरन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः॥१॥
मूलं तरोः केवलमाश्रयन्तः पाणिद्वयं भोक्तुममन्त्रयन्तः।
कन्थामिव श्रीमपि कुत्सयन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः॥२॥
स्वानन्दभावे परितुष्टिमन्तः सुशान्तसर्वेन्द्रियवृत्तिमन्तः।
अहर्निशं ब्रह्मणि ये रमन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः॥३॥

श्रीरामकृष्ण ने ज्योही सुना – 'अहर्निशं ब्रह्मणि ये रमन्तः' कि धीरे धीरे कहने लगे - 'अहा।' और इशारा करके बतलाने लगे कि यही योगियो का लक्षण है।

नरेन्द्र कौपीनपंचक समाप्त करने लगे –

देहादिभावं परिवर्तयन्तः स्वात्मानमात्मन्यवलोकयन्तः।
नान्तं न मध्यं न बहिः स्मरन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः॥४॥
ब्रह्माक्षरं पावनमुच्चरन्तः ब्रह्माहमस्मीति विभावयन्त.।
भिक्षाशिनो दिक्षु परिभ्रमन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः॥५॥

नरेन्द्र फिर गा रहे है – "परिपूर्णमानन्दम्।
अंगविहीनं स्मर जगन्निधानम्।
श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनो यद्वाचो ह वाचम्।
वागतीतं प्राणस्य प्राणं परं वरेण्यम्।"

नरेन्द्र ने एक गाना और गाया।

इस गाने मे कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार की है : –

"तुझसे हमने दिल है लगाया, जो कुछ है सो तू ही है।
हरएक के दिल मे तू ही समाया, जो कुछ है सो तू ही है।
जहाँ देखा नजर तू ही आया, जो कुछ है सो तू ही है।"

'हरएक के दिल मे' यह सुनकर श्रीरामकृष्ण इशारा करके कह रहे है कि वे हरएक के हृदय मे है, वे अन्तर्यामी है।

'जहाँ देखा नजर तू ही आया' यह सुनकर हीरानन्द नरेन्द्र से कह रहे है, "सब तू ही है, अब 'तुम तुम' हो रहा है। मै नही, तुम।"

नरेन्द्र – तुम मुझे एक दो, मै तुम्हे एक लाख दूँगा। (अर्थात्, एक के मिलने पर आगे शून्य रखकर एक लाख कर दूँगा।) तुम ही मै; मै ही तुम, मेरे सिवा और कोई नही है।

यह कहकर नरेन्द्र अष्टावक्रसंहिता से कुछ श्लोको की आवृत्ति करने लगे। सब लोग चुपचाप बैठे है।

श्रीरामकृष्ण – (हीरानन्द से, नरेन्द्र की ओर संकेत करके) – मानो म्यान से तलवार निकालकर घूम रहा है।

(मास्टर से, हीरानन्द की ओर संकेत करके) "कितना शान्त है! सँपेरे के पास विषधर साँप जैसे फन फैलाकर चुपचाप पड़ा हो!"

(४)

गुह्य कथा

श्रीरामकृष्ण अन्तर्मुख है। पास ही हीरानन्द और मास्टर बैठे है। कमरे में सन्नाटा छाया हुआ है। श्रीरामकृष्ण की देह में घोर पीड़ा हो रही है। भक्तगण जब एक-एक बार देखते है, तब उनका हृदय विदीर्ण हो जाता है। परन्तु श्रीरामकृष्ण ने सब को दूसरी बातो मे डालकर उधर से मन हटा रखा है। बैठे हुए है, श्रीमुख से प्रसन्नता टपक रही है।

भक्तो ने फूल और माला लाकर समर्पण किया है। फूल लेकर कभी सिर पर चढ़ाते है, कभी हृदय से लगाते है, जैसे पाँच वर्ष का बालक फूल लेकर क्रीड़ा कर रहा हो।

जब ईश्वरी भाव का आवेश होता है, तब श्रीरामकृष्ण कहा करते है कि शरीर मे महावायु ऊर्ध्वगामी हो रही है। महावायु के चढ़ने पर ईश्वरानुभव होता है। यह बात सदा वे कहा करते है। अब श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – वायु कब चढ़ गयी, मुझे मालूम भी नही हुआ।

"इस समय बालकभाव है; इसीलिए फूल लेकर इस तरह किया करता हूँ। क्या देख रहा हूँ, जानते हो? शरीर मानो बाँस की कमानियो का बनाया हुआ है और ऊपर से

कपडा लपेट दिया गया है। वही मानो हिल रहा है। भीतर कोई है इसीलिए हिल रहा है।

"जैसे बिना बीज और गूदे का कद्दू। भीतर कामादि आसक्तियाँ नही है, सब साफ है। और –"

श्रीरामकृष्ण को बातचीत करते हुए कष्ट हो रहा है। बहुत ही दुर्बल हो गये है। वे क्या कहने जा रहे है इसका अनुमान लगाकर मास्टर शीघ्र ही कह उठे – "और भीतर आप ईश्वर को देख रहे है।"

श्रीरामकृष्ण – भीतर बाहर दोनो जगह देख रहा हूँ – अखण्ड सच्चिदानन्द। सच्चिदानन्द इस शरीर का आश्रय लेकर इसके भीतर भी है और बाहर भी। यही मै देख रहा हूँ।

मास्टर और हीरानन्द यह ब्रह्मदर्शन की बात सुन रहे है। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण उनकी ओर सस्नेह दृष्टि करके बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण तथा योगावस्था। अखण्ड दर्शन।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर और हीरानन्द से) – तुम लोग आत्मीय जान पड़ते हो। कोई दूसरे नही मालूम पड़ते।

"सब को देख रहा हूँ, एक-एक गिलाफ के अन्दर रहकर सिर हिला रहे है।

"देख रहा हूँ, जब उनसे मन का संयोग हो जाता है तब कष्ट एक ओर पड़ा रहता है।

"इस समय केवल यही देख रहा हूँ कि अखण्ड सच्चिदानन्द ही इस त्वचा से ढका हुआ है और इसी मे एक ओर यह गले का घाव पड़ा है।"

श्रीरामकृष्ण चुप हो रहे। कुछ देर बाद फिर कहने लगे – "जड़ की सत्ता को चेतन समझ लिया जाता है और चेतन की सत्ता को जड़। इसीलिए शरीर मे रोग होने पर मनुष्य कहता है, 'मै बीमार हूँ।' "

इस बात को समझाने के लिए हीरानन्द ने आग्रह किया। [illegible] कहने लगे – "गर्म पानी मे हाथ के जल जाने पर लोग कहते है, पानी मे हाथ जल गया, परन्तु बात ऐसी नही, वास्तव मे ताप से ही हाथ जला है।"

हीरानन्द – (श्रीरामकृष्ण से) – आप बतलाइये, भक्त को कष्ट क्यो होता है?

श्रीरामकृष्ण – कष्ट तो देह का है।

श्रीरामकृष्ण शायद कुछ और कहे इसलिए दोनो प्रतीक्षा कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – समझे?

मास्टर धीरे धीरे हीरानन्द से कुछ कह रहे है।

[illegible] शिक्षा के लिए। उदाहरण सामने है कि इतने कष्ट के भीतर भी मन

का संयोग सोलहो आने ईश्वर से हो रहा है।

हीरानन्द – हाँ, जैसे ईशू को सूली देना। परन्तु रहस्य की बात तो यह है कि इन्हे इतना कष्ट क्यो मिला?

मास्टर – ये जैसा कहते है – माता की इच्छा। यहाँ उनकी ऐसी ही लीला हो रही है।

ये दोनो आपस मे धीरे धीरे बातचीत कर रहे है। श्रीरामकृष्ण इशारा करके हीरानन्द से पूछ रहे है। हीरानन्द इशारा समझ नही सके। इसलिए श्रीरामकृष्ण फिर इशारा करके पूछ रहे है, 'वह क्या कहता है?'

हीरानन्द – ये कहते है कि आपकी बीमारी लोक-शिक्षा के लिए है।

श्रीरामकृष्ण – यह बात अनुमान की ही तो है।

(मास्टर और हीरानन्द से) "अवस्था बदल रही है। सोच रहा हूँ, सब के लिए न कहूँ कि चैतन्य हो। कलिकाल मे पाप अधिक है, वह सब पाप आ जाता है।"

मास्टर (हीरानन्द से) – समय को बिना देखे हुए ये ऐसी बात न कहेगे। जिसके लिए चैतन्य होने का समय आया है, उसे ही कहेगे।

(५)

प्रवृत्ति या निवृत्ति? हीरानन्द के प्रति उपदेश

हीरानन्द श्रीरामकृष्ण के पैरो पर हाथ फेर रहे है। पास ही मास्टर बैठे है। लाटू तथा अन्य दो-एक भक्त कमरे मे आते-जाते है। आज शुक्रवार है, २३ अप्रैल, १८८६। दिन के १२-१ बजे का समय होगा। हीरानन्द ने आज यही भोजन किया है। श्रीरामकृष्ण की बड़ी इच्छा थी कि हीरानन्द यही रहे।

हीरानन्द श्रीरामकृष्ण के पैरो पर हाथ फेरते हुए उनसे वार्तालाप कर रहे है। वैसी ही मधुर बाते, मुख हास्य और प्रसन्नता से भरा हुआ, – जैसे बालक को समझा रहे हो। श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ है, डाक्टर सदा ही उन्हे देख रहे है।

हीरानन्द – आप इतना सोचते क्यो है? डाक्टर पर विश्वास करके निश्चिन्त हो जाइये। आप बालक तो है ही।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – डाक्टर पर विश्वास कैसे होगा? सरकार (डाक्टर) ने कहा है, बीमारी अच्छी न होगी।

हीरानन्द – तो इतनी चिन्ता क्यो करते है? जो कुछ होना है, होगा।

मास्टर – (हीरानन्द से, एकान्त मे) – ये अपने लिए कुछ नही सोच रहे है। इनकी शरीर-रक्षा भक्तो के लिए है।

गर्मी जोरो की हो रही है। और फिर दोपहर का समय। खस की टट्टी लगायी गयी

है। हीरानन्द उठकर टट्टी ठीक कर रहे है। श्रीरामकृष्ण देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (हीरानन्द से) – तो पाजामा भेज देना।

हीरानन्द ने कहा है कि उसके देश का पाजामा पहनकर श्रीरामकृष्ण को आराम होगा। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन्हे पाजामा भेज देने की याद दिला रहे है।

हीरानन्द का भोजन ठीक नही हुआ। चावल अच्छी तरह पके नही थे। श्रीरामकृष्ण को सुनकर बड़ा दु:ख हुआ। बार बार उनसे जलपान करने के लिए कह रहे है। इतना कष्ट है कि बोल भी नही सकते, परन्तु फिर भी बार बार पूछ रहे है।

फिर लाटू से पूछ रहे है, 'क्या तुम लोगो को भी वही चावल दिया गया था?'

श्रीरामकृष्ण कमर मे कपड़ा नही सम्हाल सकते। प्राय: बालक की तरह दिगम्बर होकर ही रहते है। हीरानन्द के साथ दो ब्राह्म भक्त आये हुए है; इसीलिए एक-आध बार श्रीरामकृष्ण धोती को कमर की ओर खीच रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (हीरानन्द से) – धोती के खुल जाने पर क्या तुम लोग असभ्य कहते हो?

हीरानन्द – आपको इससे क्या? आप तो बालक है।

श्रीरामकृष्ण – (एक ब्राह्म भक्त प्रियनाथ की ओर उँगली उठाकर) – वे ऐसा कहते है।

हीरानन्द अब बिदा होगे। दो-एक रोज कलकत्ते मे रहकर वे फिर सिन्ध देश जायेगे। वे वही काम करते है। दो अखबारो के सम्पादक है। १८८४ ई. से लगातार चार साल तक उन्होने सम्पादन-कार्य किया था। उनके पत्रो के नाम थे – सिन्ध टाइम्स (Sind Times) और सिन्ध-सुधार। (Sind Sudhar)। हीरानन्द ने १८८३ ई. मे बी. ए. की उपाधि प्राप्त की थी।

श्रीरामकृष्ण – (हीरानन्द से) – वहॉ न जाओ तो?

हीरानन्द (सहास्य) – वहॉ और कोई मेरा काम करनेवाला नही है। मुझे तो वहॉ नौकरी करनी पड़ती है।

श्रीरामकृष्ण – क्या वेतन पाते हो?

हीरानन्द – इन सब कामो मे वेतन कम है।

श्रीरामकृष्ण – कितना?

हीरानन्द हॅस रहे है।

श्रीरामकृष्ण – यही रहो न।

हीरानन्द चुप है।

श्रीरामकृष्ण – काम करके क्या होगा?

हीरानन्द चुप है।

थोड़ी देर और बातचीत करके हीरानन्द बिदा हुए।

श्रीरामकृष्ण – कब आओगे?

हीरानन्द – परसो सोमवार को देश जाऊँगा। सोमवार को सुबह आकर दर्शन करूँगा।

(६)

मास्टर, नरेन्द्र आदि के संग में

मास्टर श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए हैं। हीरानन्द को गये अभी कुछ ही समय हुआ होगा।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – बहुत अच्छा है, न?

मास्टर – जी हॉ, स्वभाव बड़ा मधुर है।

श्रीरामकृष्ण – उसने बतलाया २२ सौ मील – इतनी दूर से देखने आया है!

मास्टर – जी हॉ, बिना अधिक प्रेम के ऐसी बात नही होती।

श्रीरामकृष्ण – मेरी बड़ी इच्छा है कि मुझे भी उस देश मे कोई ले जाय।

मास्टर – जाते हुए बड़ा कष्ट होगा, चार-पॉच दिन तक रेल पर बैठे रहना होगा।

श्रीरामकृष्ण – तीन पास कर चुका है। (युनिवर्सिटी की तीन उपाधियॉ है।)

मास्टर – जी हॉ।

श्रीरामकृष्ण कुछ शान्त है, विश्राम करेगे।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – खिड़की की झंझरियो को खोल दो और चटाई बिछा दो।

मास्टर पंखा झल रहे है। श्रीरामकृष्ण को नीद आ रही है।

श्रीरामकृष्ण – (जरा सोकर, मास्टर से) – क्या मेरी ऑख लगी थी?

मास्टर – जी हाँ, कुछ लगी थी।

नरेन्द्र, शरद, और मास्टर नीचे हॉल (Hall) के पूर्व ओर बातचीत कर रहे है।

नरेन्द्र – कितने आश्चर्य की बात है! इतने साल तक पढ़ने पर भी विद्या नही होती! फिर किस तरह लोग कहते है कि 'मैने दोन-तीन दिन साधना की; अब क्या, अब ईश्वर मिलेंगे!' ईश्वर-प्राप्ति क्या इतनी सीधी है? (शरद से) तुझे शान्ति मिली है, मास्टर महाशय को भी शान्ति मिली है, परन्तु मुझे अभी तक शान्ति नही मिली।

(७)

केदार, सुरेन्द्र आदि भक्तों के संग में

दिन का पिछला पहर है। ऊपरवाले हॉल में कई भक्त बैठे हुए है। नरेन्द्र, शरद,

शशि, लाटू, नित्यगोपाल, गिरीश, राम, मास्टर और सुरेश आदि अनेक भक्त बैठे हुए हैं।

केदार आये। बहुत दिनों के बाद वे श्रीरामकृष्ण को देखने आये हैं। वे अपने ऑफिस के कार्य के सम्बन्ध में ढाके में थे। वहाँ से श्रीरामकृष्ण की बीमारी का हाल पाकर आये हैं। केदार ने कमरे में प्रवेश करके श्रीरामकृष्ण की पदधूलि पहले अपने सिर पर धारण की, फिर आनन्दपूर्वक उसे औरों को भी देने लगे। भक्तगण नतमस्तक होकर उसे ग्रहण कर रहे हैं। केदार शरद को भी देने के लिए बढ़े, परन्तु उन्होंने स्वयं श्रीरामकृष्ण की धूलि लेकर मस्तक पर धारण की। यह देखकर मास्टर हँसने लगे। उनकी ओर देखकर श्रीरामकृष्ण भी हँसे। भक्तगण चुपचाप बैठे हुए हैं। इधर श्रीरामकृष्ण के भावावेश के पूर्वलक्षण प्रकट हो रहे हैं। रह-रहकर साँस छोड़ते हुए मानो वे भाव को दबाने की चेष्टा कर रहे है। अन्त मे गिरीष घोष के साथ तर्क करने के लिए केदार के प्रति इशारा करने लगे। गिरीश अपने कान ऐंठकर कह रहे है, "महाराज, कान पकड़ा। पहले मैं नही जानता था कि आप कौन हैं। उस समय जो मैंने तर्क किया, वह और बात थी।" (श्रीरामकृष्ण हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र की ओर उँगली उठाकर इशारा करते हुए केदार से कह रहे हैं – "इसने सर्वस्व का त्याग कर दिया है। (भक्तों से) केदार ने नरेन्द्र से कहा था, 'अभी चाहे तर्क करो और विचार करो, परन्तु अन्त में ईश्वर का नाम लेकर धूलि में लोटना होगा।' (नरेन्द्र से) केदार के पैरो की धूलि लो।"

केदार – (नरेन्द्र से) – उनके पैरों की धूलि लो, इसी से हो जायगा।

सुरेन्द्र भक्तों के पीछे बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण ने जरा मुस्कराकर उनकी ओर देखा। केदार से कह रहे हैं, "अहा! कैसा स्वभाव है!" केदार श्रीरामकृष्ण का इशारा समझकर सुरेन्द्र की ओर बढ़कर बैठे।

सुरेन्द्र जरा अभिमानी हैं। भक्तों में से कुछ लोग बगीचे के खर्च के लिए बाहर के भक्तों के पास से अर्थ-संग्रह करने गये थे। इस पर सुरेन्द्र को बड़ा दुःख है। बगीचे का अधिकतर खर्च सुरेन्द्र ही देते हैं।

सुरेन्द्र – (केदार से) – इतने साधुओं के बीच मैं क्या बैठूँ! और कोई कोई (नरेन्द्र) तो कुछ दिन हुए, संन्यासी बनकर बुद्ध-गया गये हुए थे, – बड़े बड़े साधुओं के दर्शन करने।

श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र को शान्त कर रहे हैं। कह रहे हैं, "हाँ, वे अभी बच्चे हैं, अच्छी तरह समझ नहीं सकते।"

सुरेन्द्र – (केदार से) – क्या गुरुदेव जानते नहीं, किसका क्या भाव है? वे रुपये से नही, वे तो भाव लेकर सन्तुष्ट होते हैं।

श्रीरामकृष्ण सिर हिलाकर सुरेन्द्र की बात का समर्थन कर रहे है। 'भाव लेकर सन्तुष्ट होते हैं' इस कथन को सुनकर केदार भी प्रसन्न हुए।

भक्तों ने मिठाइयाँ लाकर श्रीरामकृष्ण के सामने रखी। उनमे से एक छोटासा टुकड़ा ग्रहण करके श्रीरामकृष्ण ने सुरेन्द्र के हाथ में प्रसाद की थाली दी और कहा, 'दूसरे भक्तों को भी प्रसाद दे दो।'

सुरेन्द्र नीचे गये। प्रसाद नीचे ही दिया जायगा।

श्रीरामकृष्ण (केदार से) – तुम समझा देना। जाओ बकझक करने की मनाही कर देना।

मणि पंखा झल रहे है। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, 'क्या तुम नहीं खाओगे?' उन्होने प्रसाद पाने के लिए नीचे मणि को भी भेज दिया।

सन्ध्या हो रही है। गिरीश और श्री 'म' (मास्टर) तालाब के किनारे टहल रहे हैं।

गिरीश – क्यों जी, सुना है, तुमने श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध में कुछ लिखा है?

श्री 'म' – किसने कहा आपसे?

गिरीश – मैंने सुना है। क्या मुझे दोगे – पढ़ने के लिए?

श्री 'म' – नहीं, जब तक मैं यह न समझ लूँ कि किसी को देना उचित है, मैं न दूँगा। वह मैने अपने लिए लिखा है, किसी दूसरे के लिए नहीं।

गिरीश – क्या बोलते हो?

श्री 'म' – जब मेरा देहान्त हो जायगा तब पाओगे।

श्रीरामकृष्ण - अहेतुक कृपासिन्धु

सन्ध्या होने पर श्रीरामकृष्ण के कमरे में दीपक जलाये गये। ब्राह्मभक्त श्रीयुत अमृत बसु उन्हे देखने के लिए आये है। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखने के लिए पहले ही से उत्सुक थे। मास्टर तथा दो चार भक्त और बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण के सामने केले के पत्ते में बेला और जुही की मालाएँ रखी हुई हैं। कमरे में सन्नाटा छाया है। एक महायोगी मानो चुपचाप योगयुक्त होकर बैठे है। श्रीरामकृष्ण एक-एक बार मालाओं को उठा रहे हैं। जैसे गले मे डालना चाहते हों।

अमृत – (सस्नेह) – क्या मालाएँ पहना दूँ?

मालाएँ पहन लेने पर श्रीरामकृष्ण अमृत से बड़ी देर तक बातचीत करते रहे। अमृत अब चलनेवाले हैं।

श्रीरामकृष्ण – तुम फिर आना।

अमृत – जी, आने की तो बड़ी इच्छा है। बड़ी दूर से आना पड़ता है, इसलिए हमेशा मैं नहीं आ सकता।

श्रीरामकृष्ण – तुम आना, यहाँ से बग्घी का किराया ले लिया करना।

अमृत के लिए श्रीरामकृष्ण का यह अकारण स्नेह देखकर भक्तगण आश्चर्यचकित हो गये।

दूसरे दिन शनिवार है, २४ अप्रैल। श्री 'म' अपनी स्त्री तथा सात साल के लड़के को लेकर श्रीरामकृष्ण के पास आये है। एक साल हुआ, उनके एक आठ वर्ष के लड़के का देहान्त हो गया है। उनकी स्त्री तभी से पागल की तरह हो गयी है। इसीलिए श्रीरामकृष्ण कभी कभी उसे आने के लिए कहते है।

रात को श्रीमाताजी ऊपरवाले कमरे मे श्रीरामकृष्ण को भोजन कराने के लिए आयी। श्री 'म' की स्त्री उनके साथ साथ दीपक लेकर गयी।

भोजन करते हुए श्रीरामकृष्ण उससे घर-गृहस्थी की बाते पूछने लगे। फिर उन्होने कुछ दिन श्रीमाताजी के पास आकर रहने के लिए कहा, इसलिए कि इससे उसका शोक बहुत-कुछ घट जायगा। उसके एक छोटी लड़की थी। श्रीमाताजी उसे मानमयी कहकर पुकारती थी। श्रीरामकृष्ण ने उसे भी ले आने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण के भोजन के पश्चात् श्री 'म' की स्त्री ने उस जगह को साफ कर दिया। श्रीरामकृष्ण के साथ कुछ देर तक बातचीत हो जाने के बाद श्रीमाताजी जब नीचे के कमरे मे गयी, तब श्री 'म' की स्त्री भी उन्हे प्रणाम करके नीचे चली आयी।

रात के नौ बजे का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ उसी कमरे मे बैठे है। गले मे फूलो की माला पड़ी हुई है। श्री 'म' पंखा झल रहे है।

श्रीरामकृष्ण गले से माला हाथ मे लेकर अपने-आप कुछ कह रहे है। उसके पश्चात् प्रसन्न होकर उन्होने श्री 'म' को वह माला दे दी।

□□□

परिशिष्ट

(क)

परिच्छेद १

केशव के साथ दक्षिणेश्वर मन्दिर में

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा श्री केशवचन्द्र सेन

शनिवार, १ जनवरी, १८८१ ई

ब्राह्मसमाज का माघोत्सव आनेवाला है। राम, मनोमोहन आदि अनेक व्यक्ति उपस्थित है।

ब्राह्म भक्तगण तथा अन्य लोग केशव के आने से पहले ही कालीबाड़ी मे आ गये हे और श्रीरामकृष्णदेव के पास बैठे हुए है। सभी बेचैन है, बार-बार दक्षिण की ओर देख रहे है कि कब केशव आयेगे, कब केशव जहाज मे आकर उतरेगे।

प्रताप, त्रैलोक्य, जयगोपाल सेन आदि अनेक ब्राह्मभक्तो को साथ लेकर केशवचन्द्र सेन श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर के मन्दिर मे आये। हाथ मे दो बेल फल तथा फूल का एक गुच्छा है। उन्होने श्रीरामकृष्ण के चरण स्पर्श कर उन चीजो को उनके पास रख दिया और भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने भी भूमिष्ठ होकर प्रति-नमस्कार किया।

श्रीरामकृष्ण आनन्द से हॅस रहे है और केशव के साथ बात कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (केशव के प्रति, हॅसते हुए) – केशव, तुम मुझे चाहते हो, परन्तु तुम्हारे चेले लोग मुझे नहीं चाहते। तुम्हारे चेलो से कहा था, 'आओ, हम खंजन-मंजन करे, उसके बाद गोविन्द आ जायेगे।'

(केशव के शिष्यो के प्रति) "वह देखो जी, तुम्हारे गोविन्द आ गये। मै इतनी देर तक खजन-मंजन कर रहा था, भला आयेगे क्यो नही? (सभी हॅसे)

"गोविन्द का दर्शन सहज नही मिलना। कृष्ण-लीला मे देखा होगा, नारद जब व्याकुल होकर ब्रज मे कहते है – 'प्राण! हे गोविन्द! मम जीवन!' – उस समय गोपालों के साथ श्रीकृष्ण आते है पीछे पीछे सखियाँ और गोपियाँ। व्याकुल हुए बिना ईश्वर का

दर्शन नहीं होता।

(केशव के प्रति) "केशव, तुम कुछ कहो; ये सब तुम्हारी बात सुनना चाहते है।"

केशव – (विनीत भाव से हँसते हुए) – यहाँ पर बात करना लुहार के पास सूई बेचने की चेष्टा-जैसा होगा!

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – बात क्या है, जानते हो? भक्तों का स्वभाव गॉजा पीनेवालों-जैसा है। तुमने एक बार गॉजे की चिलम लेकर दम लगाया, और मैंने भी एक बार लगाया। (सभी हँसे)

दिन के चार बजे का समय है। कालीबाड़ी के नौबतखाने का वाद्य सुनायी दे रहा है।

श्रीरामकृष्ण – (केशव के प्रति) – देखा, कैसा सुन्दर वाद्य है! लेकिन एक आदमी केवल एक राग – 'पों' – निकाल रहा है और दूसरा अनेक सुरों की लहर उठाकर कितनी ही राग-रागिनियाँ निकाल रहा है। मेरा भी वही भाव है। मेरे सात सूराख रहते हुए फिर मै क्यों केवल 'पों' निकालूँ – क्यो केवल 'सोऽहम्' 'सोऽहम्' करूँ? मैं सात सूराखों से अनेक प्रकार की राग-रागिनियॉ बजाऊँगा। केवल 'ब्रह्म-ब्रह्म' ही क्यों करूँ? शान्त, दास्य, वात्सल्य, सख्य, मधुर सभी भावों से उन्हे पुकारूँगा, आनन्द करूँगा, विलास करूँगा।

केशव अवाक् होकर इन बातो को सुन रहे हैं और कह रहे हैं, "ज्ञान और भक्ति की इस प्रकार अद्भुत और सुन्दर व्याख्या मैने कभी नहीं सुनी।"

केशव – (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – आप कितने दिन इस प्रकार गुप्त रूप में रहेगे – धीरे धीरे यहाँ पर लोगों का मेला लग जायगा।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारी यह कैसी बात है! मै खाता-पीता रहता हूँ और उनका नाम लेता हूँ। लोगों का मेला लगाना मैं नही जानता। हनुमानजी ने कहा था, 'मै वार, तिथि, नक्षत्र यह सब कुछ नहीं जानता, केवल एक राम का चिन्तन करता हूँ।'

केशव – अच्छा, मैं लोगों का मेला लगाऊँगा, परन्तु आपके यहॉ सभी को आना पड़ेगा।

श्रीरामकृष्ण – मैं सभी के चरणों की धूलि की धूलि हूँ। जो दया करके आयेंगे, वे आवें!

केशव – आप जो भी कहें; आपका आगमन (अवतार-ग्रहण) व्यर्थ न होगा।

(२)

ईश्वर-दर्शन का उपाय

इधर कीर्तन का आयोजन हो रहा है। अनेक भक्त जुट गये हैं। पंचवटी से कीर्तन का दल दक्षिण की ओर आ रहा है। हृदय शहनाई बजा रहा है। गोपीदास मृदंग तथा अन्य दो व्यक्ति करताल बजा रहे है।

श्रीरामकृष्ण गाना गाने लगे –

संगीत – (भावार्थ) –

"रे मन! यदि सुख से रहना चाहता है तो हरि का नाम ले। हरिनाम के गुण से सुख से रहेगा, वैकुण्ठ मे जायगा, सदा मोक्षफल प्राप्त करेगा। जिस नाम का जप शिवजी पंचमुखो से करते है, आज तुझे वही हरिनाम दूँगा।"

श्रीरामकृष्ण सिह-बल से नृत्य कर रहे है। अब समाधिमग्न हो गये।

समाधि-भंग होने के बाद कमरे मे बैठे है। केशव आदि के साथ वार्तालाप कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – सभी पथो से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है – जैसे, तुममे से कोई गाडी पर, कोई नौका पर, कोई जहाज पर सवार होकर और कोई पैदल आया है – जिसकी जिसमे सुविधा और जिसकी जैसी प्रकृति है, वह उसी के अनुसार आया है। उद्देश्य एक ही है। कोई पहले आया, कोई बाद मे।

"उपाधि जितनी दूर रहेगी, उतना ही वे निकट अनुभूत होगे। ऊँचे ढेर पर वर्षा का जल नही इकट्ठा होता, नीची जमीन मे होता है। इसी प्रकार जहाँ अहंकार है, वहाँ पर उनका दयारूपी जल नही जमता। उनके पास दीनभाव ही अच्छा है।

"बहुत सावधान रहना चाहिए, यहाँ तक कि वस्त्र से भी अहंकार होता है। तिल्ली के रोगी को देखा, काली किनारवाली धोती पहनी है और साथ ही निधुबाबू की गजल गा रहा है।

"किसी ने बूट पहना नही कि मुँह से अंग्रेजी बोली निकलने लगी! यदि कोई छोटा आधार हो तो गेरुआ वस्त्र पहनने से अहंकार होता है। उसके प्रति सम्मान प्रदर्शन करने मे जरासी त्रुटि होने पर उसे क्रोध, अभिमान होता है।

"व्याकुल हुए बिना उनका दर्शन नही किया जा सकता। यह व्याकुलता भोग का अन्त हुए बिना नही होती। जो लोग कामिनीकांचन के बीच मे है, जिनके भोग का अन्त नही हुआ, उनमे व्याकुलता नही आती।

"उस देश (कामारपुकुर) मे जब मै था, हृदय का चार-पाँच वर्ष का लड़का सारा दिन मेरे पास रहता था, मेरे सामने इधर उधर खेला करता था, एक तरह से भूला रहता था। पर ज्योही सन्ध्या होती वह कहने लगता – 'माँ के पास जाऊँगा।' मै कितना कहता – 'कबूतर दूँगा' आदि आदि, अनेक तरह से समझाता, पर वह भूलता न था, रो-रोकर कहता था – 'माँ के पास जाऊँगा।' खेल, खिलौना कुछ भी उसे अच्छा नही लगता था। मै उसकी दशा देखकर रोता था।

"यही है बालक की तरह ईश्वर के लिए रोना! यही है व्याकुलता! फिर खेल, खाना-पीना कुछ भी अच्छा नही लगता। यह व्याकुलता तथा उनके लिए रोना, भोग के क्षय होने पर होता है।"

सब लोग विस्मित होकर इन बातों को सुन रहे हैं।

सायंकाल हो गया है, बत्तीवाला बत्ती जलाकर चला गया। केशव आदि ब्राह्म भक्तगण जलपान करके जायेंगे। जलपान का आयोजन हो रहा है।

केशव – (हँसते हुए) – आज भी क्या लाई-मुरमुरा है?

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – हृदय जानता है।

पत्तल बिछाये गये। पहले लाई-मुरमुरा, उसके बाद पूड़ी और उसके बाद तरकारी। (सभी हँसते हैं) सब समाप्त होते होते रात के दस बज गये।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी के नीचे ब्राह्म भक्तों के साथ फिर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए, केशव के प्रति) – ईश्वर को प्राप्त करने के बाद गृहस्थी में भलीभाँति रहा जा सकता है। बूढ़ी* (ढाई) को पहले छू लो, और फिर खेल करो।

"ईश्वर-प्राप्ति के बाद भक्त निर्लिप्त हो जाता है, जैसे कीचड़ की मछली – कीचड़ के बीच में रहकर भी उसके बदन पर कीच नहीं लगता।"

लगभग ११ बजे रात का समय हुआ, सभी जाने की तैयारी में हैं। प्रताप ने कहा, 'आज रात को यहीं पर रह जाना ठीक होगा।'

श्रीरामकृष्ण केशव से कह रहे है, 'आज यही रहो न।'

केशव – (हँसते हुए) – काम-काज है, जाना होगा।

श्रीरामकृष्ण – क्यों जी, तुम्हें क्या मछली की टोकरी की गन्ध न होने से नींद न आयगी? एक मछलीवाली रात को एक बागवान के घर अतिथि बनी थी। उसे फूलवाले कमरे मे सुलाया गया, पर उसे नींद न आयी। वह करवटें बदल रही थी, उसे देख बागवान की स्त्री ने आकर कहा, 'क्यों री, सो क्यों नहीं रही हो?' मछलीवाली बोली, 'क्या जानूँ बहन, शायद फूलों की गन्ध से नींद नहीं आ रही है। क्या तुम जरा मछली की टोकरी मँगा सकती हो?'

"तब मछलीवाली मछली की टोकरी पर जल छिड़ककर उसकी गन्ध सूँघती सो गयी!" (सभी हँसे)

बिदा के समय केशव ने श्रीरामकृष्ण के चरणों में अपने द्वारा चढ़ाये हुए पुष्पों में से एक गुच्छा लिया और भूमि पर माथा लगाकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके भक्तों के साथ कहने लगे, 'विधान की जय हो।'

केशव ब्राह्मभक्त जयगोपाल सेन की गाड़ी में बैठे। वे कलकत्ता जायेंगे।

---

* बच्चों के एक खेल में एक बालक 'चोर' बनता है, जो एक खूंटी के पास रहता है और अन्य बालक इधर-उधर रहते है। वह 'चोर' बालक जिस बालक को छुएगा, वही 'चोर' बनेगा। लेकिन जिसने उस खूँटी को छू लिया वह फिर 'चोर' नहीं बन सकता। उस खूँटी को बूढ़ी कहते है।

परिच्छेद २

सुरेन्द्र के मकान पर श्रीरामकृष्ण

(१)

राम, मनोमोहन, त्रैलोक्य तथा महेन्द्र गोस्वामी आदि के साथ

आज श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ सुरेन्द्र के घर पधारे है। १८८१ ई., आषाढ़ महीना है। सन्ध्या होनेवाली है।

श्रीरामकृष्ण ने इसके कुछ देर पहले श्री मनोमोहन के मकान पर थोड़ी देर विश्राम किया था!

सुरेन्द्र के दूसरे मँजले के बैठकघर मे अनेक भक्तगण बैठे हुए है। महेन्द्र गोस्वामी, भोलानाथ पाल आदि पड़ोसी भक्तगण उपस्थित है। श्री केशव सेन आनेवाले थे, परन्तु आ न सके। ब्राह्मसमाज के श्री त्रैलोक्य सान्याल तथा अन्य कुछ ब्राह्म भक्त आये है।

बैठकघर मे दरी और चद्दर बिछायी गयी है – उस पर एक सुन्दर गलीचा तथा तकिया भी है। श्रीरामकृष्ण को ले जाकर सुरेन्द्र ने उसी गलीचे पर बैठने के लिए अनुरोध किया।

श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "यह तुम्हारी कैसी बात है?" ऐसा कहकर महेन्द्र गोस्वामी के पास बैठ गये।

महेन्द्र गोस्वामी – (भक्तो के प्रति) – मै इनके (श्रीरामकृष्ण के) पास कई महीनो तक प्राय: सदा ही रहता था। ऐसा महान् व्यक्ति मैने कभी नही देखा। इनके भाव साधारण नही है।

श्रीरामकृष्ण – (गोस्वामी के प्रति) – यह सब तुम्हारी कैसी बात है? मै छोटे से छोटा, दीन से भी दीन हूँ। मै प्रभु के दासो का दास हूँ। कृष्ण ही महान् है।

"जो अखण्ड सच्चिदानन्द है, वे ही श्रीकृष्ण है। दूर से देखने पर समुद्र नीला दिखता है, पर पास जाओ तो कोई रंग नही। जो सगुण है, वे ही निर्गुण है। जिनका नित्य है, उन्ही की लीला है।

"श्रीकृष्ण त्रिभंग क्यो है? – राधा के प्रेम से।

"जो ब्रह्म है, वे ही काली, आद्याशक्ति है सृष्टि-स्थिति-प्रलय कर रहे है। जो

कृष्ण हैं, वे ही काली हैं।

"मूल एक है – यह सब उन्हीं का खेल है, उन्हीं की लीला है।

"उनका दर्शन किया जा सकता है। शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि से उनका दर्शन किया जा सकता है। कामिनी-कांचन में आसक्ति रहने से मन मैला हो जाता है।

"मन पर ही सब कुछ निर्भर है। मन धोबी के यहाँ का धुला हुआ कपड़ा जैसा है; जिस रंग में रँगवाओगे उसी रंग का हो जायगा। मन से ही ज्ञानी, और मन से ही अज्ञानी है। जब तुम कहते हो कि अमुक आदमी खराब हो गया है, तो अर्थ यही है कि उस आदमी के मन में खराब रंग आ गया है।"

सुरेन्द्र माला लेकर श्रीरामकृष्ण को पहनाने आये। पर उन्होंने माला हाथ में ले ली, और फेंककर एक ओर रख दी। इससे सुरेन्द्र के अभिमान मे धक्का लगा और उनकी आँखें डबडबा गयीं।

सुरेन्द्र पश्चिम के बरामदे में जाकर बैठे – साथ राम तथा मनोमोहन आदि हैं। सुरेन्द्र प्रेमकोप करके कह रहे हैं, "मुझे क्रोध हुआ है; राढ़ देश का ब्राह्मण है, इन चीजों की कद्र क्या जाने? कई रुपये खर्च करके यह माला लायी। मैं गुस्से में आकर कह बैठा, 'और सब मालाएँ दूसरों के गले में डाल दो।'

"अब समझ रहा हूँ मेरा अपराध, भगवान पैसे से खरीदे नहीं जा सकते। वे अहंकारी के नहीं हैं। मै अहंकारी हूँ, मेरी पूजा क्यों लेने लगे? मेरी अब जीने की इच्छा नहीं है।"

कहते कहते आँसू की धाराएँ उनके गालों और छाती पर से बहती हुई नीचे गिरने लगीं।

इधर कमरे के अन्दर त्रैलोक्य गाना गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण मतवाले होकर नृत्य कर रहे हैं। जिस माला को उन्होंने फेंक दिया था, उसी को उठाकर गले में पहन लिया। वे एक हाथ से माला पकड़कर तथा दूसरे हाथ से उसे हिलाते हुए गाना गा रहे हैं और नृत्य कर रहे हैं।

सुरेन्द्र यह देखकर कि श्रीरामकृष्ण गले में उसी माला को पहनकर नाच रहे हैं, आनन्द में विभोर हो गये। मन ही मन कह रहे हैं, 'भगवान गर्व का हरण करनेवाले हैं जरूर, परन्तु (दीनों के, निर्धनों के धन भी हैं)!'

श्रीरामकृष्ण अब स्वयं गाने लगे, –

गाना – (भावार्थ) –

"हरिनाम लेते हुए जिनकी आँखों से आँसू बहते हैं, वे दोनों भाई आये हैं! – वे, जो मार खाकर प्रेम देते हैं, जो स्वयं मतवाले बनकर जगत् को मतवाला बनाते हैं, जो चाण्डाल तक को गोद में ले लेते हैं, जो दोनों ब्रज के कन्हैया-बलराम हैं।"

अनेक भक्त श्रीरामकृष्ण के साथ-साथ नृत्य कर रहे हैं।

कीर्तन समाप्त होने पर सभी बैठ गये और ईश्वर की बाते करने लगे।

श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र से कह रहे है, "मुझे कुछ खिलाओगे नही?"

यह कहकर वे उठकर घर के भीतर चले गये। स्त्रियो ने आकर भूमिष्ठ हो भक्तिभाव से उन्हे प्रणाम किया।

भोजन करने के बाद थोड़ी देर विश्राम करके वे दक्षिणेश्वर लौट आये।

परिच्छेद ३

श्रीरामकृष्ण मनोमोहन के घर पर

(१)

केशव सेन, राम, सुरेन्द्र आदि के संग में

श्री मनोमोहन का घर, २३ नं सिमुलिया स्ट्रीट, सुरेन्द्र के मकान के पास है। आज है शनिवार, ३ दिमम्बर १८८१ ई।

श्रीरामकृष्ण दिन के लगभग चार बजे मनोमोहन के घर पधारे है। मकान छोटासा है, दुमँजला, छोटासा आँगन भी है। श्रीरामकृष्ण नीचे मँजले के बैठकघर मे बैठे है। यह कमरा गली से लगा हुआ ही है।

भवानीपुर के ईशान मुखर्जी के साथ श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे है।

ईशान – आपने संसार क्यो छोड़ा? शास्त्रो मे तो संसार-आश्रम को श्रेष्ठ कहा गया है।

श्रीरामकृष्ण – क्या भला है और क्या बुरा, यह मै नही जानता। वे जो कुछ कराते है, वही करता हूँ, जो कहलाते है, वही कहता हूँ।

ईशान – सभी लोग यदि गृहस्थी को छोड़ दे, तो ईश्वर के विरुद्ध काम करना होता है।

श्रीरामकृष्ण – सभी लोग क्यो छोड़ेगे? और क्या उनकी यही इच्छा है कि सभी लोग पशुआ की तरह कामिनी-कांचन मे मुँह डुबोकर रहे? क्या और कुछ भी उनकी इच्छा नही है? क्या तुम सब्र कुछ जानते हो कि क्या उनकी इच्छा है और क्या नही?

"तुम कहते तो हो कि उनकी इच्छा है गृहस्थी करना। जब स्त्री-पुत्र मरते है, उस ममय भगवान की इच्छा क्यो नही देख पाते? जब खाने को नही पाते, उस समय – दारिद्र्य मे – भगवान की इच्छा क्यो नही देख पाते?

"माया जानने नही देती कि उनकी क्या इच्छा है। उनकी माया मे अनित्य नित्य-जैसा लगता है, औग फिर नित्य अनित्य-सा जान पड़ता है। संसार अनित्य है – अभी है, अभी नही, परन्तु उनकी माया से ऐसा लगता है कि यही ठीक है। उनकी माया से 'मै करता हूँ' ऐसा बोध होता है, और ये सब स्त्री-पुत्र, भाई बहन, माँ-बाप, घर-बार मेरे ही

है ऐसा ज्ञात होता है।

"माया मे विद्या और अविद्या दोनो है। अविद्या माया भुला देती है, और विद्या-माया – ज्ञान, भक्ति, साधुसंग – ईश्वर की ओर ले जाती है।

"उनकी कृपा से जो माया से परे चले गये है, उनके लिए सभी एक-से है, – विद्या, अविद्या सभी एक-जैसी है।

"गृहस्थ-आश्रम भोग का आश्रम है। और फिर कामिनी-कांचन के भोग मे रखा ही क्या है? मिठाई गले के नीचे उतर जाते ही याद नही रहती कि खट्टी थी या मीठी।

"परन्तु सब लोग क्यो त्याग करेगे? समय हुए बिना क्या त्याग होता है? भोग का अन्त हो जाने पर तब त्याग का समय होता है। जबरदस्ती क्या कोई त्याग कर सकता है?

"एक प्रकार का वैराग्य है, जिसे कहते है मर्कट-वैराग्य। हीन-बुद्धिवालो को वह वैराग्य होता है। जैसे विधवा का लड़का, – माँ सूत कातकर गुजर करती है – लडके की मामूली नौकरी थी, वह भी अब नही रही। तब वैराग्य हुआ – गेरुआ वस्त्र पहना, काशी चला गया। फिर कुछ दिनो के बाद पत्र लिख रहा है – 'मुझे एक नौकरी मिली है। दस रुपये माहवारी वेतन है।' उसी मे से सोने की अँगूठी और धोती-कमीज खरीदने की चेष्टा कर रहा है। भोग की इच्छा जायगी कहाँ?"

(२)

उपाय - अभ्यासयोग

ब्राह्म भक्तो के साथ केशव आये है। श्रीरामकृष्ण आँगन मे बैठे है।

केशव ने आकर अति भक्ति-भाव स प्रणाम किया। वे श्रीरामकृष्ण की बायी ओर बैठे। दाहिनी ओर राम बैठे है।

थोडी देर मे भागवत-पाठ होने लगा। पाठ के बाद श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे है। आँगन के चारो ओर गृहस्थ भक्तगण बैठे है।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो के प्रति) – संसार का काम बडा कठिन है। खाली गोल-गोल घूमने से सिर मे चक्कर आकर मनुष्य बेहोश हो जाता है, परन्तु खम्भा पकडकर गोल-गोल चक्कर काटने से फिर गिरने का भय नही रहता। काम करो, परन्तु ईश्वर को न भूलो।

"यदि कहो, 'यह तो बड़ा कठिन है, फिर उपाय क्या है?' - तो उपाय है अभ्यासयोग। उस देश (कामारपुकुर) मे भड़भूजो की औरतो को देखा, – वे एक ओर तो चिउड़ा कूट रही है, हाथ पर मूसल गिरने का भय है, फिर दूसरी ओर बच्चे को दूध पिला रही है, और फिर खरीददार के साथ बात भी कर रही है, कह रही है, 'देखो, तुम्हारे ऊपर इतने पैसे बाकी है, सो दे जाना।'

"व्यभिचारिणी औरत गृहस्थी के सभी कामों को करती है, परन्तु मन सदा उप-पति

की ओर रहता है।

"परन्तु मन की ऐसी अवस्था होने के लिए थोड़ी साधना चाहिए, बीच-बीच में निर्जन में जाकर भगवान को पुकारना चाहिए। भक्ति प्राप्त करके फिर कर्म किया जा सकता है। ऐसे ही यदि कटहल काटने जाओ तो हाथ में चिपक जायगा, पर हाथ में तेल लगाकर कटहल काटने से फिर नहीं चिपकेगा।"

अब आँगन में कीर्तन हो रहा है। श्री त्रैलोक्य गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण आनन्द से नृत्य कर रहे हैं। साथ-साथ केशव आदि भक्तगण भी नाच रहे हैं। जाड़े का समय होने पर भी श्रीरामकृष्ण के शरीर में पसीना झलक रहा है।

कीर्तन के बाद जब सब लोग बैठ गये तो श्रीरामकृष्ण ने कुछ खाने की इच्छा प्रकट की। भीतर से एक थाली में मिठाई आयी। केशव उस थाली को पकड़े रहे और श्रीरामकृष्ण खाने लगे। खाना होने पर केशव जलपात्र से श्रीरामकृष्ण के हाथों में पानी डालने लगे और फिर अँगौछे से उनका मुँह पोंछ दिया। उसके बाद पंखा झलने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (केशव आदि के प्रति) – जो लोग गृहस्थी में रहकर उन्हें पुकार सकते हैं, वे वीर भक्त हैं। सिर पर बीस मन का बोझा है, फिर भी ईश्वर को पाने के लिए चेष्टा कर रहा है, – इसी का नाम है वीर भक्त।

"तुम कहोगे, यह बड़ा कठिन है। पर क्या ऐसी कोई कठिन बात है, जो भगवान की कृपा से नहीं होती? उनकी कृपा से असम्भव भी सम्भव हो जाता है। हजार वर्ष से अँधेरे कमरे में यदि प्रकाश लाया जाय तो क्या उजाला धीरे-धीरे होगा? कमरा एकदम आलोकित हो जायगा।"

ये सब आशाजनक बातें सुनकर केशव आदि गृहस्थ भक्तगण आनन्दित हो रहे है।

केशव – (राजेन्द्र मित्र के प्रति, हँसते हुए) – यदि आपके घर पर एक दिन ऐसा उत्सव हो तो बहुत अच्छा है।

राजेन्द्र – बहुत अच्छा, यह तो उत्तम बात है। राम, तुम पर सब भार रहा।

अब श्रीरामकृष्ण को ऊपर के कमरे में ले जाया जा रहा है। वहाँ पर वे भोजन करेंगे। मनोमोहन की माँ श्रीमती श्यामसुन्दरी ने सारी तैयारी की है। श्रीरामकृष्ण आसन पर बैठे, नाना प्रकार की मिठाई तथा उत्तमोत्तम पदार्थों को देखकर वे हँसने लगे और खाते खाते कहने लगे – "मेरे लिए इतना तैयार किया है!" एक ग्लास में बरफ डाला हुआ जल भी पास ही था।

केशव आदि भक्तगण भी आँगन में बैठकर खा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण नीचे आकर उन्हें खिलाने लगे। उनके आनन्द के लिए पूड़ी-मिठाई का गाना गा रहे हैं और नाच रहे हैं।

अब श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर को रवाना होंगे। केशव आदि भक्तों ने उन्हें गाड़ी पर बिठा दिया और पदधूलि ग्रहण की।

परिच्छेद ४

राजेन्द्र के घर पर श्रीरामकृष्ण

(१)

राम, मनोमोहन आदि के संग में

राजेन्द्र मित्र का घर ठनठनिया मे बेचु चटर्जी की गली मे है। मनोमोहन के घर पर उत्सव के दिन श्री केशव ने राजेन्द्र बाबू से कहा था, 'आपके घर पर इसी प्रकार एक दिन हो तो अच्छा है।' राजेन्द्र आनन्दित होकर उसी की तैयारी कर रहे है।

आज शनिवार है, १० दिसम्बर १८८१ ई । आज उत्सव होना निश्चित हुआ है। अनेक भक्त पधारेगे – केशव आदि ब्राह्म भक्तगण भी आयेगे।

इसी समय उमानाथ ने राजेन्द्र को ब्राह्मभक्त भाई अघोरनाथ की मृत्यु का समाचार सुनाया। अघोरनाथ ने लखनऊ शहर मे रात्रि के दो बजे शरीर-त्याग किया है, उसी रात को तार द्वारा यह समाचार आया है। (८ दिसम्बर, १८८१ ई)। उमानाथ दूसरे ही दिन यह समाचार ले आये है। केशव आदि ब्राह्मभक्तो ने अशौच ग्रहण किया है। यह सोचकर कि शनिवार को वे कैसे आयेगे, राजेन्द्र चिन्तित हो रहे है।

राम राजेन्द्र से कह रहे है, "आप क्यो सोच रहे है ? केशव बाबू नही आयेगे तो न आये। श्रीरामकृष्ण तो आयेगे। आप तो जानते ही है कि वे सदा समाधिमग्न रहा करते है। उनकी कृपा से दूसरे को भी ईश्वर का दर्शन हो सकता है। उनकी उपस्थिति से यह उत्सव सफल हो जायगा।"

राम, राजेन्द्र, राजमोहन व मनोमोहन केशव से मिलने गये। केशव ने कहा "कहाँ, मैने ऐसा तो नही कहा कि मै नही आऊँगा। श्रीरामकृष्णदेव आयेगे और मै न आऊँगा ? – अवश्य आऊँगा, अशौच हुआ है तो अलग स्थान पर बैठकर खा लूँगा।"

केशव राजेन्द्र आदि भक्तो के साथ वार्तालाप कर रहे है। कमरे मे श्रीरामकृष्ण का समाधि-चित्र टँगा हुआ है।

राजेन्द्र – (केशव के प्रति) – श्रीरामकृष्णदेव को अनेक लोग चैतन्य का अवतार कहते है।

केशव – (समाधि-चित्र को देखकर) – इस प्रकार की समाधि प्राय नही देखी

जाती। ईसा मसीह, मुहम्मद, चैतन्य इनको हुआ करती थीं।

दिन के तीन बजे के समय मनोमोहन के घर पर श्रीरामकृष्ण पधारे। वहाँ पर विश्राम करके थोड़ा जलपान किया। फिर सुरेन्द्र उन्हें गाड़ी पर चढ़ाकर 'बेगाल फोटोग्राफर' के स्टुडिओ में ले गये। फोटोग्राफ ने कैसे फोटो लिया जाता है दिखा दिया। काँच के पीछे सिलवर नाइट्रेट (Silver Nitrate) लगायी जाती है, उस पर फोटो उतरता है – यह सब बतला दिया।

श्रीरामकृष्ण का फोटो लिया जा रहा है, उसी समय वे समाधिमग्न हो गये।

अब श्रीरामकृष्ण राजेन्द्र मित्र के मकान पर आये है। राजेन्द्र रिटायर्ड डिप्टी मैजिस्ट्रेट है।

श्री महेन्द्र गोस्वामी आँगन में भागवत का प्रवचन कर रहे हैं। अनेक भक्तगण उपस्थित हैं – केशव अभी तक नहीं आये। श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों के प्रति) – गृहस्थी में धर्म होगा क्यों नही? परन्तु है बड़ा कठिन। आज बागबाजार के पुल पर से होकर आया। कितने संकलों से उसे बाँधा है! एक संकल के टूटने से भी पुल का कुछ न होगा, क्योंकि वह और भी अनेक संकलों से बँधा हुआ है। वे सब उसे खीचे रहेंगे। उसी प्रकार गृहस्थों के अनेक बन्धन है, ईश्वर की कृपा के बिना उन बन्धनों के कटने का उपाय नही है।

"उनका दर्शन होने पर फिर कोई भय नही है। उनकी माया मे विद्या और अविद्या दोनो ही हैं; पर दर्शन के बाद मनुष्य निर्लिप्त हो जाता है। परमहंस-स्थिति प्राप्त होने पर यह बात ठीक तरह से समझ में आती है। दूध में जल है, हंस दूध लेकर जल को छोड़ देता है, पर केवल हंस ही ऐसा कर सकता है, बत्तख नही।"

एक भक्त – फिर गृहस्थ के लिए क्या उपाय है?

श्रीरामकृष्ण – गुरु-वाक्य में विश्वास। उनकी वाणी का सहारा लेकर, उनका वाक्यरूपी खम्भा पकड़कर घूमो, गृहस्थी का काम करो।

"गुरु को मनुष्य नही मानना चाहिए। सच्चिदानन्द ही गुरु के रूप में आते है। गुरु की कृपा से इष्ट का दर्शन होता है। उस समय गुरु इष्ट में लीन हो जाते हैं।

"सरल विश्वास से क्या नही हो सकता? एक समय किसी गुरु के यहाँ अन्नप्राशन हो रहा था। उस अवसर पर शिष्यगण, जिससे जैसा बना, उत्सव का आयोजन कर रहे थे। उनमें एक दीन विधवा भी शिष्या थी। उसके एक गाय थी। वह एक लोटा दूध लेकर आयी। गुरुजी ने सोचा था कि दूध-दही का भार वही लेगी, किन्तु एक लोटा दूध देखकर क्रोधित हो उन्होंने उस लोटे को फेंक दिया और कहा, 'तू जल में डूबकर मर क्यों नहीं गयी?' स्त्री ने गुरु का यही आदेश समझा और नदी में डूबने के लिए गयी। उस समय नारायण ने दर्शन दिया और प्रसन्न होकर कहा, 'इस बर्तन में दही है, जितना निकालोगी

उतना ही निकलता जायगा। इससे गुरु सन्तुष्ट होगे।' वह बर्तन जब गुरु को दिया गया तो वे दंग रह गये और सारी कहानी सुनकर नदी के किनारे पर आकर उस स्त्री से बोले – 'यदि मुझे नारायण का दर्शन न कराओगी तो मै इसी जल मे कूदकर प्राण छोड़ दूँगा।' नारायण प्रकट हुए, परन्तु गुरु उन्हे न देख सके। तब स्त्री ने कहा, 'प्रभो, गुरुदेव को यदि दर्शन न दोगे और यदि उनकी मृत्यु हो जायगी तो मै भी शरीर छोड़ दूँगी।' फिर नारायण ने एक बार गुरु को भी दर्शन दिया।

"देखो, गुरु-भक्ति रहने से अपने को भी दर्शन हुआ, फिर गुरुदेव को भी हुआ।

"इसलिए कहता हूँ – 'यदि मेरे गुरु शराबखाने मे भी जाते हो तो भी मेरे गुरु नित्यानन्द राय है।'

"सभी गुरु बनना चाहते है। चेला बनना कदाचित् ही कोई चाहता है। परन्तु देखो, ऊँची जमीन मे वर्षा का जल नही जमता वह तो नीची जमीन मे – गढ़े मे ही जमता है।

"गुरु जो नाम दे, विश्वास करके उस नाम को लेकर साधनभजन करना चाहिए।

"जिस सीप मे मुक्ता तैयार होता है, वह सीप स्वाति नक्षत्र का जल लेने के लिए तैयार रहती है। उसमे वह जल गिर जाने पर फिर एकदम अथाह जल मे डूब जाती है, और वही चुपचाप पडी रहती है। तभी मोती बनता है।"

(२)

संसार में किस प्रकार रहना चाहिए

अनेक ब्राह्म भक्त आये है। यह देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है – "ब्राह्मसभा है या शोभा? ब्राह्मसभा मे नियमित उपासना होती है, यह बहुत अच्छा है, परन्तु डुबकी लगानी पड़ती है। केवल उपासना या व्याख्यान से कुछ नही होने का। ईश्वर से प्रार्थना करनी पड़ती है, जिससे भोग-आसक्ति दूर होकर उनके चरण-कमलो मे शुद्धा भक्ति हो।

"हाथी के दिखाने के दाँत और होते है तथा खाने के दाँत और। बाहर के दाँत शोभा के लिए है, परन्तु भीतर के दाँतो से वह खाता है। इसी प्रकार भीतर कामिनी-कांचन का भोग करने पर भक्ति की हानि होती है।

"बाहर भाषण आदि देने से क्या होगा? गीध बहुत ऊँचे पर उड़ता है, परन्तु उसकी दृष्टि रहती है सड़े हुए मुर्दो की ओर। आतशबाजी 'फुँस' करके पहले आकाश मे उठ जाती है, परन्तु दूसरे ही क्षण जमीन पर गिर पड़ती है।

"भोगासक्ति का त्याग हो जाने पर देह-त्याग होते समय ईश्वर की ही स्मृति आयगी। और नही तो इस संसार की ही चीजो की याद आयगी – स्त्री, पुत्र, गृह, धन, मान, इज्जत आदि। पक्षी अभ्यास करके राधा-कृष्ण रटता तो है, परन्तु जब बिल्ली पकड़ती है तो 'टे-टें' ही करता है।

"इसीलिए सदा अभ्यास करना चाहिए – उनके नाम-गुणों का कीर्तन, उनका ध्यान, चिन्तन और प्रार्थना – जिससे भोगासक्ति छूट जाय और उनके चरणकमलों में मन लगा रहे।

"इस प्रकार के भक्त-गृहस्थ संसार में नौकरानी की तरह रहते हैं। वे सब कामकाज तो करते हैं, परन्तु मन देश में पड़ा रहता है। अर्थात् मन को ईश्वर पर रखकर वे सब काम करते हैं। गृहस्थी करने से ही देह में कीचड़ लगती है। यथार्थ भक्तगृहस्थ 'पाँकाल' मछली की तरह होते हैं, पंक में रहकर भी देह में कीच नहीं लगता।

"ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं। उन्हें माँ कहकर पुकारने से शीघ्र ही भक्ति होती है, प्रेम होता है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे –

गाना – (भावार्थ) –

"श्यामा के चरणरूपी आकाश में मेरा मनरूपी पतंग उड़ रहा था। पाप की जोरदार हवा से धक्का खाकर उल्टा होकर गिर गया। ..."

गाना – (भावार्थ) –

"ओ माँ! तुम्हें यशोदा नीलमणि कहकर नचाती थी। ऐ करालवदनि, उस भेष को तूने कहाँ छिपा दिया है? ..."

श्रीरामकृष्ण उठकर नृत्य कर रहे हैं और गाना गा रहे हैं। भक्तगण भी उठे।

श्रीरामकृष्ण बार बार समाधिमग्न हो रहे हैं। सभी उन्हें एकदृष्टि से देख रहे हैं और चित्रवत् खड़े हैं।

डाक्टर दोकौड़ी समाधि कैसी होती है इसकी परीक्षा करने के लिए उनकी आँखों में उँगली डाल रहे हैं। यह देखकर भक्तों को विशेष क्षोभ हुआ।

इस अद्भुत संकीर्तन और नृत्य के बाद सभी ने आसन ग्रहण किया। इसी समय केशव कुछ ब्राह्म भक्तों के साथ आ उपस्थित हुए। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर उन्होंने आसन ग्रहण किया।

राजेन्द्र – (केशव के प्रति) – बड़ा सुन्दर नृत्य-गीत हुआ।

ऐसा कहकर उन्होंने श्री त्रैलोक्य से फिर गाना गाने के लिए अनुरोध किया।

केशव – (राजेन्द्र के प्रति) – जब श्रीरामकृष्णदेव बैठ गये हैं, तो कीर्तन किसी भी तरह नहीं जमेगा।

गाना होने लगा। त्रैलोक्य तथा ब्राह्म भक्तगण गाना गाने लगे।

गाना – (भावार्थ) –

"मन, एक बार हरि बोलो, हरि बोलो, हरि बोलो। हरि-हरि कहकर भवसागर के पार उतर चलो। जल में, थल में, चन्द्र में, सूर्य में, आग में, वायु मे, सभी में हरि का वास

है। यह भूमण्डल ही हरिमय है।"

श्रीरामकृष्ण तथा भक्तों के भोजन के लिए व्यवस्था हो रही है। वे अभी भी आँगन मे बैठकर केशव के साथ बातचीत कर रहे हैं। राधाबाजार में फोटोग्राफरों के यहाँ गये थे – यही सब बातें।

श्रीरामकृष्ण – (केशव के प्रति हँसते हुए) – आज मशीन से फोटो खींचना देख आया। वहाँ पर देखा कि सादे काँच पर फोटो नहीं उतरता, काँच के पीछे काली लगा देते है, तब फोटो उतरता है। उसी प्रकार कोई ईश्वर की बातें तो सुनता जा रहा है, पर इससे उसका कुछ नहीं होता, फिर उसी समय भूल जाता है। यदि भीतर प्रेम-भक्तिरूपी काली लगी हुई हो तो उन बातो की धारणा होती है। नही तो सुनता है और भूल जाता है।

अब श्रीरामकृष्ण दुमँजले पर आये। सुन्दर कालीन के आसन पर उन्हें बैठाया गया।

मनोमोहन की माँ श्यामासुन्दरी देवी परोस रही हैं। राम आदि खाते समय वहाँ पर है। जिस कमरे में श्रीरामकृष्ण भोजन कर रहे हैं, उस कमरे के सामनेवाले बरामदे में केशव आदि भक्तगण खाने बैठे है। बेचु चटर्जी स्ट्रीट के 'श्यामसुन्दर' देवमूर्ति के सेवक श्री शैलजाचरण मुखोपाध्याय भी वहाँ पर उपस्थित हैं।

□□□

परिच्छेद ५

सिमुलिया ब्राह्मसमाज में श्रीरामकृष्ण

(१)

राम, केशव, नरेन्द्र आदि के संग में

आज श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ सिमुलिया ब्राह्मसमाज के वार्षिक महोत्सव में पधारे है। ज्ञान चौधरी के मकान में महोत्सव हो रहा है। १ जनवरी १८८२ ई., रविवार, शाम के पाँच बजे का समय।

राम, मनोमोहन, बलराम, राजमोहन, ज्ञान चौधरी, केदार, कालिदास सरकार, कालिदास मुखोपाध्याय, नरेन्द्र, राखाल आदि अनेक भक्त उपस्थित हैं।

नरेन्द्र ने, केवल थोड़े ही दिन हुए, राम आदि के साथ जाकर दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का दर्शन किया है। आज भी इस उत्सव में वे सम्मिलित हुए हैं। वे बीच-बीच में सिमुलिया ब्राह्मसमाज में आते थे और वहाँ पर भजन-गाना और उपासना करते थे।

ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना होगी।

पहले कुछ पाठ हुआ। नरेन्द्र गा सकते हैं। उनसे गाने के लिए अनुरोध करने पर उन्होंने भी गाना गाया।

सन्ध्या हुई। इँदेश के गौरी पण्डित गेरुआ वस्त्र पहने ब्रह्मचारी के भेष में आकर उपस्थित हुए।

गौरी – कहाँ हैं श्रीरामकृष्णदेव?

थोड़ी देर बाद श्री केशव सेन ब्राह्म भक्तों के साथ आ पहुँचे और उन्होंने भूमिष्ठ होकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। सभी लोग बरामदे में बैठे हैं; आपस में आनन्द कर रहे हैं। चारों ओर गृहस्थ भक्तों को बैठे देखकर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कह रहे हैं – "गृहस्थी में धर्म होगा क्यों नहीं? पर बात क्या है जानते हो? मन अपने पास नही है। अपने पास मन हो तब तो ईश्वर को देगा! मन को धरोहर रखा है, – कामिनी-कांचन के पास धरोहर। इसीलिए तो सदा साधु-संग आवश्यक है।

"मन अपने पास आने पर तब साधन-भजन होगा। सदा ही गुरु का संग, गुरु की सेवा, साधु-संग आवश्यक है। या तो एकान्त में दिन-रात उनका चिन्तन किया जाय और

नहीं तो साधु-संग। मन अकेला रहने से धीरे धीरे सूख जाता है। जैसे एक बर्तन में यदि अलग जल रखो तो धीरे धीरे सूख जायगा, परन्तु गंगा के भीतर यदि उस बर्तन को डुबोकर रखो तो नही सूखेगा।

"लुहार की दूकान मे लोहा आग में रखने से अच्छा लाल हो जाता है। अलग रख दो तो फिर काले का काला। इसलिए लोहे को बीच-बीच में आग मे डालना चाहिए।

" 'मै करनेवाला हूँ, मै कर रहा हूँ तभी गृहस्थी चल रही है, मेरा घर, मेरा कुटुम्ब' – यह सब अज्ञान है। पर 'मै प्रभु का दास, उनका भक्त, उनकी सन्तान हूँ' - यह बहुत अच्छा है।

" 'मैं'-पन एकदम नही जाता। अभी विचार करके उसे भले ही उड़ा दो, पर दूसरे क्षण वह कही से फिर आ जाता है। जैसे कटा हुआ बकरा – सिर कटने पर भी म्याँ-म्याँ करके हाथ-पैर हिलाता रहता है।

"उनके दर्शन के बाद वे जिस 'मै' को रख देते हैं, उसे कहते हैं 'पक्का मै'। – जिस प्रकार तलवार पारसमणि को छूकर सोना बन गयी है। उसके द्वारा अब और हिसा का काम नही होता।"

श्रीरामकृष्ण उपासना-मन्दिर में बैठकर यही सब बाते कह रहे हैं, केशव आदि भक्तगण चुपचाप सुन रहे है। रात के ८ बजे का समय है। तीन बार घण्टी बजी, जिससे उपासना प्रारम्भ हो।

श्रीरामकृष्ण – (केशव आदि के प्रति) – यह क्या? तुम लोगों की उपासना नहीं हो रही है।

केशव – और उपासना की क्या आवश्यकता? यही तो सब हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण – नहीं जी, जैसी पद्धति है, उसी प्रकार हो।

केशव – क्यो, यही तो अच्छा हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण के अनेक बार कहने पर केशव ने उठकर उपासना प्रारम्भ की।

उपासना के बीच में श्रीरामकृष्ण एकाएक खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। ब्राह्म भक्तगण गाना गा रहे हैं। – 'मन एक बार हरि बोलो, हरि बोलो' – आदि।

श्रीरामकृष्ण अभी भी भावमग्न होकर खड़े हैं। केशव ने बड़ी सावधानी से उनका हाथ पकड़कर उन्हें मन्दिर में से आँगन पर उतारा।

गाना चल रहा है। अब श्रीरामकृष्ण गाने के साथ नृत्य कर रहे है। चारों ओर भक्तगण भी नाच रहे है।

ज्ञानबाबू के दुमँजले के कमरे में श्रीरामकृष्ण तथा केशव आदि के जलपान की व्यवस्था हो रही है। वे जलपान करके फिर नीचे उतरकर बैठे। श्रीरामकृष्ण बातें करते करते फिर गाना गा रहे हैं। साथ में केशव भी गा रहे हैं।

गाना – (भावार्थ) –

"मेरा मनरूपी भ्रमर श्यामा के चरणरूपी नील-कमलों में मग्न हो गया। कामादि कुसुमों का विषयरूपी मधु उसके सामने फीका पड़ गया। . ."

"श्यामा के चरणरूपी आकाश में मेरा मनरूपी पतंग उड़ रहा था। पाप की जोरदार हवा से धक्का खाकर उल्टा होकर गिर गया।..."

श्रीरामकृष्ण और केशव दोनों ही मतवाले बन गये। फिर सब लोग मिलकर गाना और नृत्य करने लगे। आधी रात तक यह कार्यक्रम चलता रहा।

थोड़ी देर विश्राम करके श्रीरामकृष्णदेव केशव से कह रहे हैं, "अपने लड़के के विवाह की सौगात क्यों भेजी थी? वापस मँगवा लेना। उन चीजों को लेकर मैं क्या करूँगा?"

केशव मुस्करा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं – "मेरा नाम समाचार-पत्रों में क्यों निकालते हो? पुस्तकों या संवादपत्रों में लिखकर किसी को बड़ा नहीं बनाया जा सकता। भगवान जिसे बड़ा बनाते है, जंगल मे रहने पर भी उसे सभी लोग जान सकते हैं। घने जंगल में फूल खिला है, भौरा इसका पता लगा ही लेता है, पर दूसरी मक्खियाँ पता नहीं पातीं। मनुष्य क्या कर सकता है? उसके मुँह की ओर न ताको। मनुष्य तो एक कीड़ा है। जिस मुँह से आज अच्छा कह रहा है, उसी मुँह से कल बुरा कहेगा। मैं प्रसिद्धि नहीं चाहता। मैं तो चाहता हूँ कि दीन से दीन, हीन से हीन बनकर रहूँ।"

□□□

(ख)

परिच्छेद १

श्रीरामकृष्ण तथा नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द)
(अमरीका और यूरोप में विवेकानन्द)

(१)

नरेन्द्र की श्रेष्ठता

आज रथयात्रा का दूसरा दिन है, १८८५ ई., आषाढ़ संक्रान्ति। भगवान श्रीरामकृष्ण प्रात:काल बलराम के घर में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। नरेन्द्र की महानता बतला रहे हैं –

"नरेन्द्र आध्यात्मिकता में बहुत ऊँचा है, निराकार का घर है, उसमें पुरुष की सत्ता है। इतने भक्त आ रहे हैं, पर उनमें उसकी तरह एक भी नहीं।

"कभी कभी मैं बैठा-बैठा हिसाब करता हूँ तो देखता हूँ कि पद्मों में कोई दशदल है तो कोई षोड़शदल और कोई शतदल, परन्तु नरेन्द्र सहस्रदल है।

"अन्य लोग घड़ा, लोटा ये सब हो सकते हैं, परन्तु नरेन्द्र एक बड़ा मटका है।

"तालाबों की तुलना में नरेन्द्र सरोवर है।

"मछलियों में नरेन्द्र लाल आँखवाला रोहित मछली है, बाकी सब छोटी-मोटी मछलियाँ हैं।

"वह बड़ा पात्र है – उसमें अनके चीजें समा जाती हैं। वह बड़ा सूराखवाला बाँस है।

"नरेन्द्र किसी के वशीभूत नहीं है। वह आसक्ति, इन्द्रियसुख के वश में नहीं है। वह नर कबूतर है। नर कबूतर की चोंच पकड़ने पर वह चोंच को खींचकर छुड़ा लेता है। पर स्त्री कबूतर चुप होकर बैठी रहती है।"

• • •

तीन वर्ष पहले (१८८२ ई. में) नरेन्द्र अपने एक ब्राह्म मित्र के साथ दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आये थे। रात को वे वही रहे थे। सबेरा होने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा था, "जाओ, पंचवटी में ध्यान करो।" थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण ने जाकर देखा था, वे मित्रों के साथ पंचवटी के नीचे ध्यान कर रहे हैं। ध्यान के बाद श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था, "देखो, ईश्वर का दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है। व्याकुल होकर एकान्त मे गुप्त रूप से उनका ध्यान-चिन्तन करना चाहिए और रो-रोकर प्रार्थना करनी चाहिए, 'प्रभो, मुझे दर्शन दो।' " ब्राह्म-समाज तथा दूसरे धर्मवालों के लोकहितकर कर्म तथा स्त्री-शिक्षा, स्कूलों की स्थापना एवं भाषण आदि के सम्बन्ध में उन्होंने कहा था, "पहले ईश्वर का दर्शन करो। निराकार साकार दोनों का ही दर्शन। जो वाणी-मन से परे हैं, वे ही भक्त के लिए देहधारण करके दर्शन देते हैं और बात करते हैं। दर्शन के बाद, उनका निर्देश लेकर लोकहितकर कार्य करने चाहिए। एक गाने में है – 'मन्दिर में देवता की स्थापना तो हुई नहीं, और पोदो (बुद्धू) केवल शंख बजा रहा है, मानो आरती हो रही हो। इसलिए कोई कोई उसे धिक्कारते हुए कह रहे हैं – अरे पोदो, तेरे मन्दिर मे माधव तो है नही और तूने खाली शंख बजा-बजाकर इतना ढोंग रच रखा है! उसमें तो ग्यारह चमगीदड़ रातदिन निवास करते हैं।'

"यदि हृदयरूपी मन्दिर में माधव की स्थापना करना चाहते हो, यदि भगवान को प्राप्त करना चाहते हो तो केवल भों-भों करके शंख बजाने से क्या होगा? पहले चित्त को शुद्ध करो। मन शुद्ध होने पर भगवान पवित्र आसन पर आकर बैठेंगे। चमगीदड़ की विष्ठा रहने पर माधव को लाया नहीं जा सकता। ग्यारह चमगीदड़ अर्थात् ग्यारह इन्द्रियाँ।

"पहले डुबकी लगाओ। डूबकर रत्न उठाओ, उसके बाद दूसरा काम। पहले माधव की स्थापना करो, उसके बाद चाहो तो व्याख्यान देना।

"कोई डुबकी लगाना नहीं चाहता। साधन नहीं, भजन नहीं, विवेक-वैराग्य नहीं, दो-चार बातें सीख लीं, बस लगे 'लेक्चर' देने!

"लोगों को सिखाना कठिन काम है। भगवान के दर्शन के बाद यदि किसी को उनका आदेश प्राप्त हो, तो वह लोक-शिक्षा दे सकता है।"

• • •

१८८४ ई. की रथयात्रा के दिन कलकत्ते में श्रीरामकृष्णदेव के साथ पण्डित शशधर का साक्षात्कार हुआ। नरेन्द्र वहाँ पर उपस्थित थे। श्रीरामकृष्ण ने पण्डितजी से कहा, "तुम जनता के कल्याण के लिए भाषण दे रहे हो, सो भली बात है। परन्तु भाई, भगवान के निर्देश के बिना लोकशिक्षा नहीं होवी। होगा यह कि लोग दो दिन तुम्हारा भाषण सुनेंगे, उसके बाद भूल जायेंगे। हलदारपुकुर के किनारे पर लोग शौच को जाते थे।

लोग गाली-गलौज करते थे, परन्तु कुछ परिणाम न हुआ। अन्त मे सरकार ने जब एक नोटिस लगा दिया, तब कही लोगो का वहाँ पर शौच जाना बन्द हुआ। इसी प्रकार ईश्वर का आदेश पाये बिना लोक-शिक्षा नही होती।''

इसलिए नरेन्द्र ने गुरुदेव की बात को मानकर संसार छोड़ दिया था और एकान्त मे गुप्त रूप से बहुत तपस्या की थी। उसके बाद उन्ही की शक्ति से शक्तिशाली बनकर, इस लोकशिक्षा के व्रत को ग्रहण कर उन्होने कठिन प्रचार-कार्य प्रारम्भ किया था।

काशीपुर मे जिस समय (१८८६ ई) श्रीरामकृष्ण रुग्ण थे, उस समय उन्होने एक कागज पर लिखा था, ''नरेन्द्र शिक्षा देगा।''

स्वामी विवेकानन्द ने अमरीका से मद्रास-निवासियों को जो पत्र लिखा था, उनमे उन्होने लिखा था कि वे श्रीरामकृष्ण के दास है, उन्ही के दूत बनकर वे उनकी मंगल-वार्ता समग्र जगत् को सुना रहे है –

'' .. जिनका सन्देश, भारत तथा समस्त संसार को पहुँचाने का सम्मान मुझ जैसे उनके अत्यन्त तुच्छ और अयोग्य सेवक को मिला है, उनके प्रति आपका आदरभाव सचमुच अपूर्व है। यह आपकी जन्मजात धार्मिक प्रवृत्ति है, जिसके कारण आप उनमे और उनके सन्देश मे आध्यात्मिकता के उस प्रबल तरंग की प्रथम हलचल का अनुभव कर रहे है, जो निकट भविष्य मे सारे भारतवर्ष पर अपनी सम्पूर्ण अबाध्य शक्ति के साथ अवश्यमेव आघात करेगा। ...''

– 'हिन्दू धर्म के पक्ष मे' से उद्धृत

मद्रास मे दिये गये तीसरे व्याख्यान मे उन्होने कहा था, –

''... इस समय केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि यदि मैने जीवन भर मे एक भी सत्य वाक्य कहा है तो वह उन्ही का (श्रीरामकृष्ण का) वाक्य है; पर यदि मैंने ऐसे वाक्य कहे है जो असत्य, भ्रमपूर्ण अथवा मानवजाति के लिए हितकारी न हो तो वे सब मेरे ही वाक्य है, उनके लिए पूरा उत्तरदायी मै ही हूँ।''

– 'भारत में विवेकानन्द' से उद्धृत

कलकत्ते मे स्वर्गीय राधाकान्त देव के मकान पर जब उनकी अभ्यर्थना हुई, उस समय भी उन्होने कहा था कि 'श्रीरामकृष्णदेव की शक्ति आज पृथ्वी भर मे व्याप्त है। हे भारतवासियो, तुम लोग उनका चिन्तन करो, तभी सब विषयो मे उन्नति करोगे।' उन्होने कहा –

''... यदि यह जाति उठना चाहती है, तो मै निश्चयपूर्वक कहूँगा, इस नाम से सभी को प्रेमोन्मत्त हो जाना चाहिए। श्रीरामकृष्णदेव का प्रचार हम, तुम या चाहे जो कोई करे, इससे कुछ होना जाना नही; तुम्हारे सामने मै इस महान् आदर्श-पुरुष को रखता हूँ, लो, अब विचार का भार तुम पर है। इस महान् आदर्श-पुरुष को लेकर क्या करोगे, इसका

निश्चय तुम्हें अपनी जाति के कल्याण के लिए अभी कर डालना चाहिए। ...''

★ ★ ★

''... उनके तिरोभाव के दस वर्ष के भीतर ही इस शक्ति ने सम्पूर्ण संसार घेर लिया है ...। मुझे देखकर उनका विचार न करना। मैं एक बहुत ही क्षुद्र यन्त्र मात्र हूँ। उनके चरित का विचार मुझे देखकर न करना। वे इतने बड़े थे कि मैं, या उनके शिष्यों में से कोई दूसरा, सैकड़ों जीवनों तक चेष्टा करते रहने पर भी उनके यथार्थ स्वरूप के एक करोड़वें अंश के बराबर भी न हो सकेगा। ...''

– 'भारत में विवेकानन्द' से उद्‌धृत

गुरुदेव की बात कहते कहते स्वामी विवेकानन्द एकदम पागल-से हो जाया करते थे। धन्य है वह गुरुभक्ति!

(२)

नरेन्द्र द्वारा श्रीरामकृष्ण का प्रचारकार्य

श्रीरामकृष्णदेव के उस सार्वभौमिक सनातन हिन्दू धर्म का स्वामीजी ने किस प्रकार प्रचार करने की चेष्टा की थी, उसकी यहाँ पर हम थोड़ीसी चर्चा करेंगे।

ईश्वर-दर्शन

श्रीरामकृष्ण की पहली बात यह है कि ईश्वर का दर्शन करना होगा। कुछ मन्त्र या श्लोकों को कण्ठस्थ कर लेने का ही नाम धर्म नहीं है। भक्त यदि व्याकुल होकर उन्हें पुकारे, तभी ईश्वरदर्शन होता है। चाहे इस जन्म में हो या अगले जन्म में। उनके एक दिन के वार्तालाप की हमें याद आ रही है। दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में वार्तालाप हो रहा था। रविवार, २६ अक्टूबर १८८४ ई.।

श्रीरामकृष्णदेव काशीपुर के महिमाचरण चक्रवर्ती तथा अन्य भक्तों से कह रहे थे – ''शास्त्र कितने पढ़ोगे? केवल विचार करने से क्या होगा? पहले उन्हें प्राप्त करने की चेष्टा करो। पुस्तकें पढ़कर क्या जानोगे? जब तक बाजार में नहीं पहुँचते तब तक दूर से केवल हो-हो शब्द सुनायी देता है। बाजार के पास पहुँचने पर कुछ दूसरा शब्द सुनायी पड़ेगा, और अन्त में बाजार के भीतर पहुँचकर साफ साफ देख सकोगे, सुन सकोगे 'आलू लो, पैसा दो।'

''खाली पुस्तकें पढ़कर ठीक अनुभव नहीं होता। पढ़ने तथा अनुभव करने में बहुत अंतर है। ईश्वर-दर्शन के बाद शास्त्र, विज्ञान आदि सब कूड़ा-कर्कट जैसे लगते हैं।

''बड़े बाबू के साथ परिचय आवश्यक है। उनके कितने मकान, कितने बगीचे, कितने कम्पनी के कागज हैं – यह सब पहले से ही जानने के लिए इतने व्यग्र क्यों हो?

चाहे धक्का खाकर या दीवाल फाँदकर ही सही, किसी न किसी तरह बड़े मालिक के साथ एक बार परिचय तो कर लो, तब यदि इच्छा होगी, तो वे ही कह देंगे कि उनके कितने मकान हैं, कितने बगीचे हैं, कम्पनी के कितने कागज हैं। मालिक के साथ परिचय होने पर फिर नौकर-चाकर, द्वारपाल सभी लोग सलाम करेंगे।'' (सभी हँसे)

एक भक्त – बड़े मालिक के साथ परिचय कैसे होता है?

श्रीरामकृष्ण – उसके लिए कर्म चाहिए – साधना चाहिए। 'ईश्वर हैं' इतना कहकर बैठे रहने से काम न चलेगा। उनके पास जाना होगा। निर्जन में उन्हें पुकारो, यह कहकर प्रार्थना करो, 'हे प्रभो! दर्शन दो।' व्याकुल होकर रोओ। कामिनी-कांचन के लिए जब पागल होकर घूम सकते हो तो उनके लिए भी जरा पागल बनो। लोगों को कहने दो कि अमुक ईश्वर के लिए पागल हो गया। कुछ दिन सब कुछ छोड़कर उन्हें अकेले में पुकारो। केवल 'वे है' यह कहकर बैठे रहने से क्या होगा? हालदारपुकुर में बड़ी-बड़ी मछलियाँ है। तालाब के किनारे पर केवल बैठे रहने से ही क्या मिल सकती हैं? खुराक डालो। धीरे धीरे गहरे जल से मछलियाँ आयेंगी और जल हिलेगा। उस समय आनन्द आयगा। सम्भव है, मछली का कुछ अंश एक बार दिखायी भी दे और मछली को छलाँग मारते हुए भी देखो। जब उसको प्रत्यक्ष देखा तो और भी आनन्द!

ठीक यही बात स्वामीजी ने शिकागो-धर्मसभा के सम्मुख कही है (अर्थात् धर्म का उद्देश्य है ईश्वर को प्राप्त करना, उनका दर्शन करना) –

''हिन्दू शब्दों और सिद्धान्तों के जाल में समय बिताना नहीं चाहता। ... वह ईश्वर का साक्षात्कार कर लेना चाहता है; कारण, ईश्वर के केवल प्रत्यक्ष दर्शन से ही समस्त शंकाएँ दूर हो सकती हैं। अत: हिन्दू ऋषि आत्मा के विषय में, ईश्वर के विषय में यही सर्वोत्तम प्रमाण देते है कि 'मैंने आत्मा का दर्शन किया है, मैने ईश्वर का दर्शन किया है।' ... हिन्दुओं की सारी साधना-प्रणाली का लक्ष्य केवल एक ही है और वह है सतत अध्यवसाय द्वारा पूर्ण बन जाना, देवता बन जाना, ईश्वर के निकट पहुँचकर उनका दर्शन करना। और इस प्रकार ईश्वरसान्निध्य को प्राप्त कर उनका दर्शन कर लेना, उन्ही 'स्वर्गस्थ पिता' के समान पूर्ण हो जाना – यही असल में हिन्दू धर्म हैं।''

– 'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

अमरीका के अनेक स्थानों में स्वामीजी ने भाषण दिया और सभी स्थानों में उन्होंने यही एक बात कही। हार्टफोर्ड (Hartford) नामक स्थान में उन्होंने कहा था –

''... जो दूसरी बात मैं तुम्हें बतलाना चाहता हूँ, वह यह है कि धर्म केवल सिद्धान्तों या मतवादों में नहीं है। ... सभी धर्मों का चरम लक्ष्य है – आत्मा में परमात्मा की अनुभूति। यही एक सार्वभौमिक धर्म है। समस्त धर्मों में यदि कोई सार्वभौमिक सत्य है तो वह है ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन करना। परमात्मा और उनकी प्राप्ति के साधनों के सम्बन्ध

में विभिन्न धर्मों की धारणाएँ भिन्न भिन्न भले ही हो, पर उन सब में वही एक केन्द्रीय भाव है। सहस्र विभिन्न त्रिज्याएँ भले ही हों, पर वे सब एक ही केन्द्र में मिलती है, और यह केन्द्र है ईश्वर का साक्षात्कार – इस इन्द्रियग्राह्य जगत् के पीछे, इस निरन्तर खाने-पीने और थोथी बकवास के पीछे, इन उड़ते छायास्वप्नों और स्वार्थ से भरे इस संसार के पीछे वर्तमान किसी सत्ता की अनुभूति। समस्त ग्रन्थो और धर्ममतों के अतीत, इस जगत् की असारता से परे वह विद्यमान है, जिसकी अपने भीतर ईश्वर के रूप में प्रत्यक्ष-अनुभूति होती है। कोई व्यक्ति संसार के समग्न गिर्जाघरो में आस्था भले ही रखता हो, अपने सिर में समस्त धर्मग्रन्थों का बोझा लिये भले ही घूमता हो, इस पृथ्वी की समस्त नदियों में उसने भले ही बप्तिस्मा लिया हो, फिर भी यदि उसे ईश्वर-दर्शन न हुआ हो तो मैं उसे घोर नास्तिक ही मानूँगा। ...''

स्वामीजी ने अपने राजयोग नामक ग्रन्थ मे लिखा है –

''... सभी धर्माचार्यों ने ईश्वर को देखा था। उन सभी ने आत्मदर्शन किया था; अपने अनन्त स्वरूप का सभी को ज्ञान हुआ था, अपनी भविष्य अवस्था देखी थी, और जो कुछ उन्होंने देखा था, उसी का वे प्रचार कर गये है। भेद इतना ही है कि प्राय: सभी धर्मों में, विशेषत: आजकल के, एक अद्भुत दावा हमारे सामने उपस्थित होता है; वह यह है कि इस समय ये अनुभूतियाँ असम्भव हैं; जो धर्म के प्रथम संस्थापक हैं, बाद को जिनके नाम से उस धर्म का प्रवर्तन और प्रचलन हुआ है, केवल उन थोड़े आदमियों को ही ऐसा प्रत्यक्षानुभव सम्भव हुआ था; अब ऐसे अनुभव के लिए रास्ता नहीं रहा, फलत: अब धर्मों पर केवल विश्वास भर कर लेना होगा। मै इसको पूरी शक्ति से अस्वीकृत करता हूँ। यदि संसार मे किसी प्रकार के विज्ञान के किसी विषय की किसी ने कभी प्रत्यक्ष उपलब्धि की है, तो इससे इस सार्वभौमिक सिद्धान्त पर पहुँचा जा सकता है कि पहले भी कोटि-कोटि बार उसकी उपलब्धि की सम्भावना थी, बाद को भी अनन्त काल तक उसकी उपलब्धि की सम्भावना रहेगी। समवर्तन ही प्रकृति का बली नियम है। एक बार जो घटित हुआ है, वह फिर घटित हो सकता है। ...''

– 'राजयोग' से उद्धृत

स्वामीजी ने न्यूयार्क में ९ जनवरी १८९६ ई. को 'सार्वभौमिक धर्म का आदर्श' (Ideal of a Universal Religion) नामक विषय पर एक भाषण दिया था – अर्थात् जिस धर्म में ज्ञानी, भक्त, योगी या कर्मी सभी सम्मिलित हो सकते हैं। भाषण समाप्त करते समय उन्होंने कहा कि ईश्वर का दर्शन ही सब धर्मों का उद्देश्य है, – ज्ञान, कर्म, भक्ति ये सब विभिन्न पथ तथा उपाय हैं, परन्तु गन्तव्य स्थान एक ही है और वह है ईश्वर का साक्षात्कार। स्वामीजी ने कहा –

''... इन सब विभिन्न योगों को हमें कार्य में परिणत करना ही होगा; केवल उनके

सम्बन्ध मे जल्पना-कल्पना करने से कुछ न होगा। 'श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य:।' पहले उनके सम्बन्ध मे सुनना पड़ेगा – फिर श्रुत विषयो पर चिन्ता करनी होगी ...। इसके बाद उनका ध्यान और उपलब्धि करनी पडेगी – जब तक कि हमारा समस्त जीवन तद्भाव भावित न हो उठे। तब धर्म हमारे लिए केवल कतिपय धारणा, मतवादसमष्टि अथवा कल्पना रूप ही नही रहेगा। भ्रमात्मक ख्याल से आज हम अनेक मूर्खताओ को सत्य समझकर ग्रहण करके कल ही शायद सम्पूर्ण मत परिवर्तन कर सकते है, पर यथार्थ धर्म कभी परिवर्तित नही होता। धर्म अनुभूति की वस्तु है – वह मुख की बात, मतवाद अथवा युक्तिमूलक कल्पना मात्र नही है – चाहे वह जितना ही सुन्दर हो, वह केवल सुनने या मान लेने की चीज नही है। आत्मा की ब्रह्मस्वरूपता को जान लेना, तद्रूप हो जाना, उसका साक्षात्कार करना – यही धर्म है। . ''

– 'धर्मरहस्य' से उद्धृत

मद्रासियो के पास उन्होने जो पत्र लिखा था, उसमे भी वही बात थी, – हिन्दू धर्म की विशेषता है ईश्वर-दर्शन, – वेद का मुख्य उद्देश्य है ईश्वर दर्शन –

'' . हिन्दू धर्म मे एक भाव संसार के अन्य धर्मो की अपेक्षा विशेष है। उसके प्रकट करने मे ऋषियो ने संस्कृत भाषा के प्राय. समग्र शब्द-समूह को नि:शेष कर डाला है। वह भाव यह है कि मनुष्य को इसी जीवन मे ईश्वर की प्राप्ति करनी होगी ...। इस प्रकार, द्वैतवादियो के मतानुसार ब्रह्म की उपलब्धि करना, ईश्वर का साक्षात्कार करना, या अद्वैतवादियो के कहने के अनुसार ब्रह्म हो जानना – यहीं वेदो के समस्त उपदेशो का एकमात्र लक्ष्य है ...''

– 'हिन्दू धर्म के पक्ष मे' से उद्धृत

स्वामीजी ने २९ अक्टूबर, सन् १ '९६ मे लन्दन मे भाषण दिया था, विषय था – ईश्वर-दर्शन (Realısatıon)। इस भाषण मे उन्होने कठोपनिषद् का उल्लेख कर नचिकेता की कथा सुनायी थी। नचिकेता ईश्वर का दर्शन करना चाहते थे। धर्मराज यम ने कहा, ''भाई, यदि ईश्वर को जानना चाहते हो, देखना चाहते हो, तो भोगासक्ति को त्यागना होगा। भोग रहते योग नही होता, अवस्तु से प्रेम करने पर वस्तु की प्राप्ति नही होती।'' स्वामीजी ने कहा था –

''... हम सभी नास्तिक है, परन्तु जो व्यक्ति उसे स्पष्ट स्वीकार करता है, उससे हम विवाद करने को प्रस्तुत होते है। हम लोग सभी अन्धकार मे पड़े हुए है। धर्म हम लोगो के समीप मानो कुछ नही है, केवल विचारलब्ध कुछ मतो का अनुमोदन मात्र है, केवल मुँह की बात है – अमुक व्यक्ति खूब अच्छी तरह से बोल सकता है, अमुक व्यक्ति नही बोल सकता ...। आत्मा की जब यह प्रत्यक्षानुभूति आरम्भ होगी, तभी धर्म आरम्भ होगा। उसी समय तुम धार्मिक होगे ...। उसी समय प्रकृत विश्वास का – आस्तिकता का – उदय होगा। . .''

– 'ज्ञानयोग' से उद्धृत

(३)

श्रीरामकृष्ण, नरेन्द्र और सर्वधर्मसमन्वय

नरेन्द्र तथा अन्य बुद्धिमान युवकगण श्रीरामकृष्णदेव की सभी धर्मों पर श्रद्धा और प्रेम को देख बड़े प्रसन्न तथा आश्चर्यचकित हुए थे। 'सभी धर्मो में सत्य हैं' – यह बात श्रीरामकृष्णदेव मुक्त कण्ठ से कहते थे, और वे यह भी कहा करते थे कि सभी धर्म सत्य हैं – अर्थात् प्रत्येक धर्म के द्वारा ईश्वर के निकट पहुँचा जा सकता है। एक दिन २७ अक्टूबर १८८२ ई. को कार्तिकी पूर्णिमा की कोजागरी लक्ष्मीपूजा के दिन केशवचन्द्र सेन स्टीमर लेकर दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण को देखने गये थे और उन्हें स्टीमर में लेकर कलकत्ता लौटे थे। रास्ते में स्टीमर पर अनेक विषयों पर चर्चा हुई थी। ठीक ये ही बातें १३ अगस्त को (अर्थात् कुछ मास पूर्व) भी हुई थीं। सर्वधर्मसमन्वय की ये बातें हम अपनी डायरी से उद्धृत करते हैं। –

१३ अगस्त १८८२। आज श्री केदारनाथ चटर्जी ने दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में महोत्सव किया है। उत्सव के बाद, दिन के ३-४ बजे के समय दक्षिणवाले दालान में वे श्रीरामकृष्ण के साथ वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों के प्रति) -- जितने मत उतने पथ। सभी धर्म सत्य हैं – जिस प्रकार कालीघाट में अनेक पथों से जाया जाता है। धर्म ही ईश्वर नहीं है। भिन्न भिन्न धर्मों का सहारा लेकर ईश्वर के पास जाया जाता है।

"नदियाँ भिन्न भिन्न दिशाओं से आती हैं, परन्तु सभी समुद्र में जा गिरती हैं। वहाँ पर सभी एक हैं।

"छत पर अनेक उपायों से जाया जा सकता है। पक्की सीढ़ी, लकड़ी की सीढ़ी, टेढ़ी सीढ़ी और केवल एक रस्सी के सहारे भी जाया जा सकता है। परन्तु जाते समय एक ही उपाय का सहारा लेकर जाना पड़ता है – दो-तीन अलग अलग सीढ़ियों पर पैर रखने से ऊपर नहीं जा सकते। लेकिन छत पर पहुँच जाने के बाद भी सभी प्रकार की सीढ़ियों के सहारे उतर-चढ़ सकते हैं।

"इसीलिए पहले एक धर्म का सहारा लेना पड़ता है। ईश्वर की प्राप्ति होने पर वही व्यक्ति सभी धर्म-पथों से आना-जाना कर सकता है। जब हिन्दुओं के बीच में रहता है तब लोग उसे हिन्दू मानते है; जब मुसलमानों के साथ रहता है तो लोग मुसलमान मानते है और फिर जब ईसाइयों के साथ रहता है, तो सभी लोग समझते हैं कि शायद वे ईसाई हैं।

"सभी धर्मों के लोग एक ही को पुकार रहे हैं। कोई कहता है ईश्वर, कोई राम, कोई हरि, कोई अल्लाह, कोई ब्रह्म – नाम अलग अलग हैं, परन्तु वस्तु एक ही है।

"एक तालाब में चार घाट हैं। एक घाट में हिन्दू जल पी रहे हैं, वे कह रहे है 'जल';

दूसरे घाट मे मुसलमान कह रहे है 'पानी', तीसरे घाट मे ईसाई, कह रहे है, 'वाटर' (Water), चौथे घाट मे कुछ आदमी कह रहे है 'अकुआ' (Aqua)। (सभी हॅसे) वस्तु एक ही है – जल, पर नाम अलग अलग है। अतएव झगड़ा करने का क्या काम? सभी एक ईश्वर को पुकार रहे है और सभी उन्ही के पास जायेगे।''

एक भक्त (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – यदि दूसरे धर्म मे गलत बाते हो तो?

श्रीरामकृष्ण – गलत बाते भला किस धर्म मे नही है? सभी कहते है, 'मेगी घड़ी सही चल रही है', परन्तु कोई भी घड़ी बिलकुल सही नही चलती। सभी घड़ियो को बीच बीच मे सूर्य के साथ मिलाना पड़ता है।

''गलत बाते किस धर्म मे नही है? और यदि गलत बाते रही भी, परन्तु यदि आन्तरिकता हो, यदि व्याकुल होकर उन्हे पुकारो तो वे अवश्य ही सुनेगे।

''मान लो, एक बाप के कई लडके है – कोई छोटे, कोई बड़े। सब उन्हे 'पिताजी' कहकर पुकार नही सकते। कोई कहता है, 'पिताजी', कोई छोटा बच्चा सिर्फ 'पि' औग कोई केवल 'ता' ही कहता है। जो बच्चे 'पिताजी' नही कह सकते क्या पिता उन पर नाराज होगा? (सभी हॅसे) नही, पिता सभी को एक-जैसा प्यार करेगा।*

''लोग समझते है, 'मेरा ही धर्म ठीक है, ईश्वर क्या चीज है, मैने ही समझा है, दूसरे लोग नही समझ सके। मै ही उन्हे ठीक पुकार रहा हूँ, दूसरे लोग ठीक पुकार नही सकते। अत ईश्वर मुझ पर ही कृपा करते है, उन पर न ही करते।' ये सब लोग नही जानते कि ईश्वर सभी के पिता-माता है, आन्तरिक प्रेम होने पर वे सभी पर कृपा करते है।''

प्रेम का धर्म कितना अद्भुत है! यह बात तो उन्होने बार बार कही, परन्तु कितने लोग समझ सके? श्री केशव सेन थोड़ासा समझ सके थे। और स्वामी विवेकानन्द ने तो दुनिया के सामने इसी प्रेम-धर्म का प्रचार अग्निमन्त्र से दीक्षित होकर किया है। श्रीरामकृष्णदेव ने तआस्सुबी बुद्धि रखने का बार बार निषेध किया था। 'मेरा धर्म सत्य है और तुम्हारा धर्म झूठा' इसी का नाम है तआस्सुबी बुद्धि – यह बड़े अनर्थ की जड़ है। स्वामीजी ने इसी अनर्थ की बात शिकागो-धर्मसभा के सामने कही थी। उन्होने कहा - ईसाई, मुसलमान आदि अनेको ने धर्म के नाम पर मार-काट मचायी है।

''. साम्प्रदायिकता, संकीर्णता और इनसे उत्पन्न भयंकर धर्मविषयक उन्मत्तता इस सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुके है। इनके घोर अत्याचार से पृथ्वी भर गयी है, इन्होने अनेक बार मानव-रक्त से धरणी को सीचा, सभ्यता नष्ट कर डाली तथा समस्त जातियो को हताश कर डाला।...

---

* ठीक यही बात एक अंग्रेजी ग्रन्थ मे है – Maxmuller's Hibbert Lectures मैक्समूलर ने भी यही उपमा देकर समझाया है कि जो लोग देव-देवियो की पूजा करते है, उनसे घृणा करना ठीक नही।

स्वामीजी ने एक दूसरे भाषण मे विज्ञान-शास्त्र से प्रमाण देकर समझाने की चेष्टा की कि सभी धर्म सत्य है –

"... यदि कोई महाशय यह आशा करे कि यह एकता इन धर्मो मे से किसी एक की विजय और बाकी अन्य सब के नाश से स्थापित होगी, तो उनसे मै कहता हूँ कि 'भाई, तुम्हारी यह आशा असम्भव है।' क्या मैं चाहता हूँ कि ईसाई लोग हिन्दू हो जायँ? – कदापि नही, ईश्वर ऐसा न करे! क्या मेरी यह इच्छा है कि हिन्दू या बौद्ध लोग ईसाई हो जायँ? ईश्वर इस इच्छा से बचावे। बीज भूमि मे बो दिया गया है और मिट्टी, वायु तथा जल उसके चारो ओर रख दिये गये है। तो क्या वह बीज मिट्टी हो जाता है अथवा वायु या जल बन जाता है? नही, वह तो वृक्ष ही होता है। वह अपने नियम से ही बढता है और वायु, जल तथा मिट्टी को आत्मसात कर, इन उपादानो से शाखाप्रशाखाओ की वृद्धि कर एक बडा वृक्ष हो जाता है।

"यही अवस्था धर्म के सम्बन्ध मे भी है। न तो ईसाई को हिन्दू या बौद्ध होना पडेगा, और न हिन्दू अथवा बौद्ध को ईसाई ही। पर हा, प्रत्येक मत के लिए यह आवश्यक है कि वह अन्य मतो को आत्मसात् करके पुष्टि लाभ करे, और साथ ही अपने वैशिष्ट्य की रक्षा करता हुआ अपनी प्रकृति के अनुसार वृद्धि को प्राप्त हो। "

– 'शिकागो वक्तृता' मे उद्धृत

अमरीका मे स्वामीजी ने ब्रूक्लीन एथिकल सोसाइटी (Brooklyn Ethical Society) के सामने हिन्दू धर्म के सम्बन्ध मे एक भाषण दिया था। प्रोफेसर डॉ. लीविजेन्स (Dr Lewis Janes) ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। वहाँ पर भी वही बात थी, – सर्वधर्मसमन्वय की। स्वामीजी ने कहा,

"... सत्य सदा सार्वभौमिक रहा है। यदि केवल मेरे ही हाथ मे छः उँगलियाँ हो और तुम सब के हाथ मे पाँच, तो तुम यह न सोचोगे कि मेरा हाथ प्रकृति का सच्चा अभिप्राय है, प्रत्युत यह समझोगे कि वह अस्वाभाविक और एक रोगविशेष है। उसी प्रकार धर्म के सम्बन्ध मे भी है। यदि केवल एक ही धर्म सत्य होवे और बाकी सब असत्य, तो तुम्हे यह कहने का अधिकार है कि वह एक धर्म कोई रोगविशेष है, यदि एक धर्म सत्य है तो अन्य सभी धर्म सत्य होगे ही। अतएव हिन्दू धर्म तुम्हारा उतना ही है जितना कि मेरा।..."

स्वामीजी ने शिकागो-धर्ममहासभा के सम्मुख जिस दिन पहले-पहल भाषण दिया, उस भाषण को सुनकर लगभग छः हजार व्यक्तियो ने मुग्ध होकर अपना-अपना आसन छोड़कर मुक्त कण्ठ से उनकी अभ्यर्थना की थी।* उस भाषण मे भी इसी समन्वय का

"When Vivekanand addressed the audience as 'Sisters and Brothers of America, there arose a peal of applause that lasted for several minutes" -Dr Barrow's Report *But eloquent as were many of the brief speeches no one expressed so well the spirit of*

सन्देश था। स्वामीजी ने कहा था –

"... मुझको ऐसे धर्म का अवलम्बी होने का गौरव है, जिसने संसार को न केवल 'सहिष्णुता' की शिक्षा दी, बल्कि 'सब धर्मो को मानने' का पाठ भी सिखाया। हम केवल 'सब के प्रति सहिष्णुता' मे ही विश्वास नही करते, वरन् यह भी दृढ़ विश्वास करते है कि सब धर्म सत्य है। मै अभिमानपूर्वक आप लोगो से निवेदन करता हूँ कि मै ऐसे धर्म का अनुयायी हूँ, जिसकी पवित्र भाषा संस्कृत मे अंग्रेजी Meyo Exclusion का कोई पर्यायवाची शब्द है ही नही।..."

– "शिकागो वक्तृता" से उद्धृत

(४)

श्रीरामकृष्ण, नरेन्द्र, कर्मयोग और स्वदेश-प्रेम

श्रीरामकृष्णदेव सदैव कहा करते थे, 'मै और मेरा, यही अज्ञान है, 'तुम और तुम्हारा' यही ज्ञान है। एक दिन सुरेश मित्र के बगीचे मे महोत्सव हो रहा था। रविवार, १५ जून, १८८४ ई.। श्रीरामकृष्णदेव तथा अनेक भक्त उपस्थित थे। ब्राह्मसमाज के कुछ भक्त भी आये थे। श्रीरामकृष्णदेव ने प्रताप मजूमदार तथा अन्य भक्तो से कहा, "देखो, 'मै और मेरा' – इसी का नाम अज्ञान है। 'काली-मन्दिर का निर्माण रासमणि ने किया है' – यही बात सब लोग कहते है। कोई नही कहता कि ईश्वर ने किया है। 'अमुक व्यक्ति ब्राह्मसमाज बना गये है' – यही लोग कहते है। यह कोई नही कहता कि ईश्वर की इच्छा से यह हुआ है। 'मैने किया है' इसी का नाम अज्ञान है। 'हे ईश्वर मेरा कुछ भी नही है, यह मन्दिर मेरा नही है, यह कालीमन्दिर मेरा नही, समाज मेरा नही, सभी चीजे तुम्हारी हें, स्त्री, पुत्र, परिवार – कुछ भी मेरा नही हे, सब तुम्हारी चीजे है', – ये सब ज्ञानी की बाते है।

" 'मेरी चीज मेरी चीज' कहकर उन सब चीजो से प्यार करने का नाम है 'माया'। सभी को प्यार करने का नाम है 'दया'। मै केवल ब्राह्मसमाज के लोगो को प्यार करता हूँ, इसका नाम है माया। केवल अपने देश के लोगो को प्यार करता हूँ, इसका नाम है माया। सभी देश के लोगो को प्यार करना, सभी धर्म के लोगो को प्यार करना – यह दया से होता है, भक्ति से होता है। माया से मनुष्य बद्ध हो जाता है, भगवान से विमुख हो जाता है। दया से ईश्वर-प्राप्ति होती है। शुकदेव, नारद – इन सब ने दया रखी थी।"

श्रीरामकृष्णदेव का कथन है – 'केवल स्वदेश के लोगो को प्यार करना – इसका

---

the Parliament of Religions and its limitations as the Hindu monk He is an orator by divine right "

- New York Critique 1893

नाम माया है। सभी देशों के लोगों से, सभी धर्म के लोगों से प्रेम रखना, यह हृदय में दया होने से होता है, भक्ति से होता है।' तो फिर स्वामी विवेकानन्द स्वदेश के लिए उतने व्यस्त क्यों हुए थे?

स्वामीजी ने शिकागो-धर्ममहासभा में एक दिन कहा था, "... भारत में धर्म का अभाव नहीं है – वहाँ तो वैसे ही आवश्यकता से अधिक धर्म है, पर हाँ, हिन्दुस्थान के लाखों अकालपीड़ित लोग सूखे गले से 'अन्न-अन्न, रोटी-रोटी' चिल्ला रहे हैं। ... मैं अपने निर्धन स्वदेश निवासियों के लिए यहाँ पर धन की भिक्षा माँगने आया था, परन्तु आकर देखा बड़ा ही कठिन काम है, – ईसाइयों से उन लोगों के लिए, जो ईसाई नहीं हैं, धन एकत्रित करना टेढ़ी खीर है।"

– 'शिकागो वक्तृता' से उद्धृत

स्वामीजी की प्रधान शिष्या भगिनी निवेदिता (Miss Margaret Noble) कहती है कि स्वामीजी जिस समय शिकागो नगर में निवास करते थे, उस समय किसी भारतीय के साथ साक्षात्कार होने पर, वह चाहे किसी भी जाति का क्यों न हो – हिन्दू, मुसलमान या पारसी, – उसका बहुत आदर-सत्कार करते थे। वे स्वयं किसी सज्जन के घर पर अतिथि के रूप में निवास करते थे। वहीं पर अपने देश के लोगों को ले जाते थे। गृहस्वामी भी उन लोगों का काफी आदर-सत्कार करते थे और वे भलीभाँति जानते थे कि उन लोगों का आदर-सम्मान न करने पर स्वामीजी अवश्य ही उनका घर छोड़कर किसी दूसरी जगह चले जायेंगे।

अपने देश के लोगों की निर्धनता और उनका दु:ख-निवारण, उनकी सत्‌शिक्षा तथा उनके धर्मपरायण होने के सम्बन्ध में स्वामीजी सदैव विचारशील रहते थे। परन्तु वे अपने देशवासियों के लिए जिस प्रकार दु:ख का अनुभव करते थे, आफ्रिकानिवासी निग्रो के लिए भी उसी प्रकार दु:खी रहते थे। भगिनी निवेदिता ने कहा है कि स्वामीजी जिस समय दक्षिणी संयुक्त राष्ट्रों में भ्रमण कर रहे थे, उस समय किसी किसी ने उन्हें आफ्रिकानिवासी (Coloured man) समझकर घर से लौटा दिया था; परन्तु जब उन्होने सुना कि वे आफ्रिकानिवासी नहीं हैं, वे हिन्दू संन्यासी प्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द है, तब उन्होंने परम आदर के साथ उन्हें ले जाकर उनकी सेवा की। उन्होंने कहा, "स्वामी, जब हमने आपसे पूछा, 'क्या आप आफ्रिकानिवासी हैं?' उस समय आप कुछ भी न कहकर चले क्यों गये थे?"

स्वामीजी बोले, "क्यों, आफ्रिकानिवासी निग्रो क्या मेरे भाई नहीं है?" निग्रो तथा स्वदेशवासियों की सेवा एक जैसी होनी चाहिए और चूँकि स्वदेशवासियों के बीच हमें रहना है इसलिए उनकी सेवा पहले। इसी का नाम अनासक्त सेवा है। इसी का नाम कर्मयोग है। सभी लोग कर्म करते हैं, परन्तु कर्मयोग है बड़ा कठिन। सब छोड़कर बहुत

दिनों तक एकान्त में ईश्वर का ध्यान-चिन्तन किये बिना स्वदेश का ऐसा उपकार नहीं किया जा सकता। 'मेरा देश' कहकर नही, क्योंकि तब तो माया में फँसना हुआ; पर 'ये लोग तुम्हारे (ईश्वर के) हैं' इसलिए इनकी सेवा करूँगा। तुम्हारा निर्देश है, इसीलिए देश की सेवा करूँगा; तुम्हारा ही यह काम है – मै तुम्हारा दास हूँ इसीलिए इस व्रत का पालन कर रहा हूँ, सफलता मिले या असफलता हो, यह तुम जानो; यह सब मेरे नाम के लिए नही, इससे तुम्हारी ही महिमा प्रकट होगी – इसीलिए।

वास्तविक स्वदेश-प्रेम (Ideal patriotism) इसे ही कहते हैं, – इसीलिए लोक-शिक्षा के उद्देश्य से स्वामीजी ने इतने कठिन व्रत का अवलम्बन किया था। जिनके घर-बार और परिवार है, कभी ईश्वर के लिए जो व्याकुल नही हुए, जो 'त्याग' शब्द को सुनकर मुस्कराते है, जिनका मन सदा कामिनी-कांचन और ऐहिक मान-सन्मान की ओर लगा रहता है, जो लोग 'ईश्वरदर्शन ही जीवन का उद्देश्य है' इस बात को सुनकर विस्मित हो उठते है, वे स्वदेश-प्रेम के इस महान् आदर्श को क्या जाने? स्वामीजी स्वदेश के लिए ऑसू बहाते थे अवश्य, परन्तु साथ ही यह भी भूलते न थे कि इस अनित्य संसार में ईश्वर ही वस्तु है, शेष सभी अवस्तु। स्वामीजी विलायत से लौटने के बाद हिमालय के दर्शन के लिए अलमोड़ा पधारे थे। अलमोड़ा निवासी उन्हें साक्षात् नारायण मानकर उनकी पूजा करने लगे। स्वामीजी नगाधिराज देवतात्मा हिमालय पर्वत के अत्युच्च श्रृंगों को देखकर भावमग्न हो गये। उन्होंने कहा, –

"... मेरी अब यही इच्छा हैं कि मैं अपने जीवन के शेष दिन इसी गिरिराज में कहीं पर व्यतीत कर दूँ, जहाँ अनेकों ऋषि रह चुकें हैं, जहाँ दर्शनशास्त्र का जन्म हुआ था ...। यहाँ आते समय जैसे जैसे गिरिराज की एक चोटी के बाद दूसरी चोटी मेरी दृष्टि के सामने आती गयी वैसे वैसे मेरी कार्य करने की समस्त इच्छाएँ तथा भाव, जो मेरे मस्तिष्क में वर्षो से भरे हुए थे, धीरे धीरे शान्त-से होने लगे ... और मेरा मन एकदम उसी अनन्त भाव की ओर खिच गया जिसकी शिक्षा हमे गिरिराज हिमालय सदैव से देते रहे हैं, जो इस स्थान की वायु तक में भरा हुआ है तथा जिसका निनाद मैं आज भी यहाँ के कलकल बहनेवाले झरनों में सुनता हूँ, और वह भाव है – त्याग।

" 'सर्व वस्तु भयान्वितं भुवि नृणां वैराग्यमेवाभयम्।'

"अर्थात् इस संसार में प्रत्येक वस्तु में भय भरा है, यह भय केवल वैराग्य से ही दूर हो सकता है, इसी से मनुष्य निर्भय हो सकता है। ...

"भविष्य में शक्तिशाली आत्माएँ इस गिरिराज की ओर आकर्षित होकर चली आयेंगी। यह उस समय होगा जब कि भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के आपस के झगड़े नष्ट हो जायेंगे, जब रूढ़ियो के सम्बन्ध का वैमनस्य नष्ट हो जायगा, जब हमारे और तुम्हारे धर्म सम्बन्धी झगड़े बिलकुल दूर हो जायेगे तथा जब मनुष्यमात्र यह समझ लेगा कि केवल एक

ही चिन्तन, धर्म है और वह है स्वयं में परमेश्वर की अनुभूति, और शेष जो कुछ है वह सब व्यर्थ है। यह जानकर कि यह संसार एक धोखे की टट्टी है, यहाँ सब कुछ मिथ्या है और यदि कुछ सत्य है तो वह है ईश्वर की उपासना – केवल ईश्वर की उपासना – तीव्र विरागी यहाँ आयेंगे।..."

– 'भारत में विवेकानन्द' से उद्धृत

श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे, 'अद्वैत ज्ञान को आँचल में बाँधकर जो इच्छा हो, करो।' स्वामी विवेकानन्द अद्वैत ज्ञान को आँचल में बाँधकर कर्म-क्षेत्र में उतर पड़े थे। संन्यासी को फिर घर, धन, परिवार, आत्मीय, स्वजन, स्वदेश, विदेश से क्या प्रयोजन? याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी से कहा था, 'ईश्वर को न जाननें पर इन सब धन-विद्याओं से क्या होगा? हे मैत्रेयी, पहले उन्हें जानो, बाद में दूसरी बात।' स्वामीजी ने दुनिया को यही सिखाया। उन्होंने कहा, हे पृथ्वी भर के निवासियों! पहले विषय का त्याग कर निर्जन में भगवान की आराधना करो, उसके बाद जो चाहो, करो, किसी में दोष नहीं। चाहे स्वदेश की सेवा करो या परिवार का पालन करो, किसी से दोष न होगा; क्योंकि तुम उस समय समझोगे कि सर्वभूतों में वे ही विद्यमान हैं, उनको छोड़ और कुछ भी नहीं है – परिवार, स्वदेश उनसे अलग नहीं हैं। भगवान के साक्षात्कार करने के बाद देखोगे, वे ही सर्वत्र विद्यमान हैं। वशिष्ठ ने श्रीरामचन्द्रजी से कहा था, 'राम, तुम संसार को छोड़ना चाहते हो, आओ, मेरे साथ विचार करो; यदि ईश्वर इस संसार से अलग हों तो इसे त्याग देना।'* श्रीरामचन्द्र ने आत्मा का साक्षात्कार किया था; इसीलिए चुप रह गये। श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे, 'छुरे को चलाना सीखकर हाथ में छुरा लो।' स्वामी विवेकानन्द ने दिखा दिया कि वास्तविक कर्मयोगी किसे कहते हैं। स्वामीजी जानते थे कि देश के दु:खियों की धन द्वारा सहायता करने से बढ़कर अनेक अन्य महान् कार्य हैं। ईश्वर का ज्ञान प्राप्त करा देना मुख्य कार्य है। उसके बाद विद्यादान, उसके बाद जीवनदान, उसके बाद अन्नवस्त्र-दान। संसार दु:खपूर्ण है। इस दु:ख को तुम कितने दिनों के लिए मिटाओगे? श्रीरामकृष्णदेव ने कृष्णदास पाल‡ से पूछा था, "अच्छा, जीवन का उद्देश्य क्या है?"

कृष्णदास ने कहा था, "मेरी राय में दुनिया का उपकार करना, जगत् के दु:ख को दूर करना।" श्रीरामकृष्ण खेद के साथ बोले थे, "तुम्हारी ऐसी विधवा-पुत्र§ जैसी बुद्धि क्यों? – जगत् के दु:खों का नाश तुम करोगे? क्या जगत् इतना-सा ही है? बरसात में गंगाजी में केंकड़े होते हैं, जानते हो? इसी प्रकार असंख्य जगत् हैं। इस विश्वजगत् के

---

* योगवशिष्ठ

‡ श्रीकृष्णदास पाल ने दक्षिणेश्वर मे श्रीरामकृष्णदेव का दर्शन किया था।

§ विधवा-पुत्र जैसी बुद्धि अर्थात् हीन बुद्धि; क्योंकि ऐसे लड़के अनेक प्रकार के नीच उपाय से मनुष्य बनते है; दूसरों की खुशामद आदि करके।

जो अधिपति हैं, वे सभी की खबर ले रहे हैं। उन्हें पहले जानना – यही जीवन का उद्देश्य है। उसके बाद चाहे जो करना।'' स्वामीजी ने भी एक स्थान में कहा है –

"... केवल आध्यात्मिक ज्ञान ही ऐसा है जो हमारे दुःखों को सदा के लिए नष्ट कर सकता है; अन्य किसी प्रकार के ज्ञान से तो हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति केवल अल्प समय के लिए ही होती है। ... जो मनुष्य आध्यात्मिक ज्ञान देता है, वही मानव समाज का सब से बड़ा हितैषी है। ... आध्यात्मिक सहायता के बाद मानसिक सहायता का स्थान आता है। ज्ञान का दान देना, भोजन तथा वस्त्र के दान से कहीं श्रेष्ठ है। इसके बाद है जीवन-दान और चौथा है अन्न-दान। ..."

– 'कर्मयोग' से उद्धृत

ईश्वर का दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है, और इस देश की यही एक विशेषता है। पहले यह और उसके बाद दूसरी बातें। पहले से ही राजनीति की बातें करने से न चलेगा, पहले एकचित्त होकर भगवान का ध्यान-चिन्तन करो, हृदय के बीच में उनके अनुपम रूप का दर्शन करो। उन्हें प्राप्त करने के बाद तब स्वदेश का कल्याण कर सकोगे; क्योंकि उस समय तुम्हारा मन अनासक्त होगा। 'मेरा देश' कहकर सेवा नहीं – 'सर्वभूतों में ईश्वर हैं' यह कहकर उनकी सेवा कर सकोगे। उस समय स्वदेश-विदेश की भेद-बुद्धि नहीं रहेगी। उस समय ठीक समझा जा सकेगा कि जीव का कल्याण किससे होता है। श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे, "जो लोग दाँव खेलते हैं, वे खेल की चाल ठीक ठीक समझ नहीं सकते। जो लोग खेल से अलग रहकर पास बैठे-बैठे खेल देखते रहते हैं, वे दूर से अच्छी चाल दे सकते हैं।'' कारण देखनेवाला खेल में आसक्त नहीं है। एकान्त में बहुत दिनों तक साधना करके राग-द्वेष से मुक्त उदासीन अनासक्त जीवन्मुक्त महापुरुष ने जो कुछ उपलब्धि की है उसके सामने उन्हें और कुछ भी अच्छा नहीं लगता –

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते।। - गीता।

हिन्दुओं की राजनीति, समाजनीति, ये सभी धर्मशास्त्र हैं। मनु, याज्ञवल्क्य, पराशर आदि महापुरुष इन सब धर्मशास्त्रों के प्रणेता हैं। उन्हें किसी भी चीज की आवश्यकता नहीं थी। फिर भी, भगवान का निर्देश पाकर, गृहस्थों के लिए, उन्होंने शास्त्रों की रचना की है। वे उदासीन रहकर दाँव-खेल की चाल बता दे रहे हैं, इसीलिए देश-काल-पात्र की दृष्टि से उनकी बातों में एक भी भूल होने की सम्भावना नहीं है।

स्वामी विवेकानन्द भी कर्मयोगी हैं। उन्होंने अनासक्त होकर परोपकार-व्रतरूपी, जीव-सेवारूपी कर्म किया हैं; इसीलिए कर्मियों के सम्बन्ध में उनका इतना मूल्य है। उन्होंने अनासक्त होकर इस देश का कल्याण किया है, जिस प्रकार प्राचीनकाल के महापुरुषगण जीव के मंगल के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे हैं। इस निष्काम धर्म के पालन

के लिए हम भी उनके चरण-चिह्नो का अनुसरण कर सकें तो कितना अच्छा हो! परन्तु यह बात है बहुत कठिन। पहले भगवान को प्राप्त करना होगा। इसके लिए स्वामी विवेकानन्दजी की तरह त्याग और तपस्या करनी होगी। तब यह अधिकार प्राप्त हो सकता है।

धन्य हो तुम त्यागी वीर महापुरुष! तुमने वास्तव में गुरुदेव के चरण-चिह्नों का अनुसरण किया है। गुरुदेव का महामन्त्र – पहले ईश्वर-प्राप्ति, उसके बाद दूसरी बात – तुम्हीं ने साधित किया है। तुम्ही ने समझा था, ईश्वर छोड़ने पर यह संसार यथार्थ में स्वप्न की तरह है, गोरख-धन्धा है। इसीलिए सब कुछ छोड़कर तुमने पहले ईश्वर-प्राप्ति की साधना की थी। जब तुमने देखा, सर्व वस्तुओं के प्राण वे ही हैं, जब तुमने देखा उनके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, तब फिर इस संसार में तुमने मन लगाया। तब हे महायोगिन्! सर्वभूतों में स्थित उसी हरि की सेवा के लिए तुम फिर कर्मक्षेत्र मे उतर आये। उस समय सभी तुम्हारे गम्भीर असीम प्रेम के अधिकारी बने – हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, विदेशी, स्वदेशवासी, धनी, निर्धन, नर, नारी सभी को तुमने प्रेमालिंगन-दान किया है। तुमने नारद, जनक आदि की तरह लोक-शिक्षा के लिए कर्म किया है।

(५)

ईश्वर साकार हैं या निराकार

एक दिन स्वर्गीय केशवचन्द्र सेन शिष्यों को साथ लेकर दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में श्रीरामकृष्णदेव का दर्शन करने गये। केशव के साथ निराकार के सम्बन्ध में अनेक बातें होती थीं। श्रीरामकृष्णदेव उनसे कहा करते थे, "मैं प्रतिमा में मिट्टी या पत्थर की काली नहीं देखता, मैं तो उसमें चिन्मयी काली देखता हूँ। जो ब्रह्म हैं, वे ही काली हैं। वे जिस समय क्रियारहित हैं, उस समय ब्रह्म; जब सृष्टि-स्थिति-प्रलय करती हैं, उस समय काली, अर्थात् जो काल के साथ रमण करती हैं। काल अर्थात् ब्रह्म।" उन दोनों में एक दिन निम्नलिखित वार्तालाप हो रहा था :–

श्रीरामकृष्ण – (केशव के प्रति) – किस प्रकार, जानते हो! मानो सच्चिदानन्दरूपी समुद्र है, कहीं किनारा नहीं है। भक्तिरूपी हिम के कारण इस समुद्र में स्थान-स्थान पर जल बरफ के आकार में जम जाता है। अर्थात् भक्त के पास वे प्रत्यक्ष होकर कभी कभी साकार रूप में दर्शन देते हैं। फिर ब्रह्मज्ञानरूपी सूर्य के उदय होने पर वह बरफ गल जाती है – अर्थात् 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' इस विचार के बाद समाधि होने पर रूप आदि सब अदृश्य हो जाते हैं। उस समय वे क्या हैं, मुख से कहा नहीं जा सकता – मन, बुद्धि, अहं के द्वारा उन्हें पकड़ा नहीं जा सकता।

"जो व्यक्ति एक सत्य को जानता है, वह दूसरे को भी जान सकता है। जो निराकार

को जान सकता है, वह साकार को भी जान सकता है। जब तुम उस मुहल्ले में गये ही नहीं तो कहाँ श्यामपुकुर है, और कहाँ तेलीपाड़ा, कैसे जानोगे?''

श्रीरामकृष्णदेव यह भी समझा रहे हैं कि सभी निराकार के अधिकारी नहीं हैं, इसीलिए साकार पूजा की विशेष आवश्यकता है। उन्होंने कहा, –

''एक माँ के पाँच लड़के हैं। माँ ने कई प्रकार की तरकारियाँ बनायी हैं, जिसके पेट में जो सहन होता हो।''

इस देश में साकार पूजा होती है। ईसाई मिशनरीगण अमरीका व यूरोप में इस देश के निवासियों को असभ्य जाति कहकर वर्णन करते हैं। वे कहते हैं कि भारतीयगण मूर्ति की पूजा करते हैं, और उनकी बड़ी दयनीय स्थिति है।

स्वामी विवेकानन्द ने इस साकार पूजा का अर्थ अमरीका में पहले-पहल समझाया। उन्होंने कहा कि भारतवर्ष में 'मूर्ति' की पूजा नहीं होती। –

''... मैं पहले ही तुम्हें बता देना चाहता हूँ कि भारतवर्ष में अनेकेश्वरवाद नहीं है। प्रत्येक मन्दिर में यदि कोई खड़ा होकर सुने, तो वह यही पाएगा कि भक्तगण सर्वव्यापित्व से लेकर ईश्वर के सभी गुणों का आरोप उन मूर्तियों में करते हैं।...''

– 'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

स्वामीजी मनोविज्ञान(Psychology) की सहायता से समझाने लगे कि ईश्वर का चिन्तन करने में साकार चिन्तन को छोड़ अन्य कुछ भी नहीं आ सकता। उन्होंने कहा –

''... ईश्वर यदि सर्वव्यापी है तो फिर ईसाई लोग गिरजाघर में क्यो उसकी आराधना के लिए जाते हैं? क्यों वे क्रास को इतना पवित्र मानते हैं? प्रार्थना के समय आकाश की ओर मुँह क्यों करते हैं? कैथलिक ईसाइयों के गिरजाघरों में इतनी बहुतसी मूर्तियाँ क्यों रहा करती हैं? और प्रोटेस्टेन्ट ईसाइयों के हृदय में प्रार्थना के समय इतनी बहुतसी भावमयी मूर्तियाँ क्यों रहा करती हैं? मेरे भाइयों! मन में किसी मूर्ति के बिना आये कुछ सोच सकना उतना ही असम्भव है, जितना कि श्वास लिए बिना जीवित रहना। ... सच पूछिये तो दुनिया के प्रायः सभी मनुष्य सर्वव्यापित्व का क्या अर्थ समझते हैं? – कुछ नहीं! ... क्या परमेश्वर का भी कोई क्षेत्रफल है? अगर नहीं, तो जिस समय हम सर्वव्यापी शब्द का उच्चारण करते हैं, उस समय विस्तृत आकाश या विशाल भूमिखण्ड की कल्पना हम अपने मन में लाते हैं। इससे अधिक और कुछ नहीं।...''

– 'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

स्वामीजी ने और भी कहा, ''अधिकारियों की भिन्नता के अनुसार साकार पूजा और निराकार पूजा होती है। साकार पूजा कुसंस्कार नहीं है – मिथ्या नहीं है, वह एक निम्न श्रेणी का सत्य है।'' -

"... अगर कोई मनुष्य अपने ब्रह्मभाव को मूर्ति के सहारे अधिक सरलता से अनुभव कर सकता है, तो क्या उसे पाप कहना ठीक होगा? और जब वह उस अवस्था से परे पहुँच गया है, तब भी उसके लिए मूर्तिपूजा को भ्रमात्मक कहना उचित नहीं है। हिन्दू की दृष्टि में मनुष्य असत्य से सत्य की ओर नही जा रहा है, वह तो सत्य से सत्य की ओर, निम्न श्रेणी के सत्य से उच्च श्रेणी के सत्य की ओर अग्रसर हो रहा है।..."

– 'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

स्वामीजी ने कहा, सभी के लिए एक नियम नहीं हो सकता। ईश्वर एक हैं, परन्तु वे भक्तों के पास अनेक रूपों में प्रकट हो रहे है। हिन्दू इस बात को समझते हैं। –

". . . विभिन्नता में एकता यही प्रकृति की रचना है और हिन्दुओं ने इसे भलीभाँति पहचाना है। अन्य धर्मों में कुछ निर्दिष्ट मतवाद विधिबद्ध कर दिये गये हैं और सारे समाज को उन्हें मानना अनिवार्य कर दिया जाता है। वे तो समाज के सामने केवल एक ही नाप की कमीज रख देते हैं, जो राम, श्याम, हरि सब के शरीर में जबरदस्ती ठीक होनी चाहिए। और यदि वह कमीज राम या श्याम के शरीर में ठीक नहीं बैठती, तो उसे नंगे बदन – बिना कमीज के ही रहना होगा। हिन्दुओं ने यह जान लिया है कि निरपेक्ष ब्रह्म-तत्त्व की उपलब्धि, धारणा या प्रकाश केवल सापेक्ष के सहारे से ही हो सकता है। ..."

– 'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

(६)

श्रीरामकृष्ण और पापवाद

स्वामीजी के गुरुदेव भगवान श्रीरामकृष्ण कहा करते थे, "ईश्वर का नाम लेने से तथा आन्तरिकता के साथ उनका चिन्तन करने से पाप भाग जाता है – जिस प्रकार रूई का पहाड़ आग लगते ही क्षण भर में जल जाता है, अथवा वृक्ष पर बैठे हुए पक्षी ताली बजाते ही उड़ जाते हैं।" एक दिन केशवबाबू के साथ वार्तालाप हो रहा था –

श्रीरामकृष्ण – (केशव के प्रति) – मन से ही बद्ध और मन से ही मुक्त है। मैं मुक्त पुरुष हूँ, – संसार में रहूँ या जंगल में – मुझे कैसा बन्धन? मैं ईश्वर की सन्तान हूँ, राजाधिराज का पुत्र हूँ, मुझे भला कौन बाँधकर रखेगा? यदि साँप काटे, तो 'विष नहीं है, विष नहीं है' ऐसा जोर देकर कहने से विष उतर जाता है। उसी प्रकार 'मैं बद्ध नहीं हूँ,' 'मैं बद्ध नहीं हूँ,' 'मैं मुक्त हूँ' इस बात को जोर देकर कहते कहते वैसा ही बन जाता है – मुक्त ही हो जाता है।

"किसी ने ईसाइयों की एक पुस्तक(Bible) दी थी। मैंने उसे पढ़कर सुनाने के लिए कहा, उसमें केवल 'पाप' और 'पाप' था!

"*तुम्हारे ब्राह्मसमाज में भी केवल 'पाप' और 'पाप' है! जो बार बार कहता है 'मैं*

बद्ध हूँ' 'मैं बद्ध हूँ' वह अन्त मे बद्ध ही हो जाता है। जो दिन-रात 'मैं पापी हूँ' 'मैं पापी हूँ' ऐसा कहता रहता है वह वैसा ही बन जाता है!

"ईश्वर के नाम पर ऐसा विश्वास होना चाहिए – 'क्या! मैंने ईश्वर का नाम लिया, अब भी मेरा पाप रहेगा? मेरा अब बन्धन क्या है, पाप क्या है?' कृष्णकिशोर परम हिन्दू सदाचारी ब्राह्मण है। वह वृन्दावन गया था। एक दिन घूमते-घूमते उसे प्यास लगी। एक कुएँ के पास जाकर देखा – एक आदमी खड़ा है। उससे कहा, 'अरे, तू मुझे एक लोटा जल दे सकेगा? तेरी क्या जात है?' उसने कहा, 'पण्डितजी, मैं नीच जाति का हूँ – मोची हूँ।' कृष्णकिशोर ने कहा, 'तू 'शिव' कह और जल खीच दे।'

"भगवान का नाम लेने से देह-मन शुद्ध हो जाते है। केवल 'पाप' और 'नरक' की ये सब बातें क्यों? एक बार कहो कि मैंने जो कुछ अनुचित काम किया है वह अब और नहीं करूँगा। साथ ही ईश्वर के नाम पर विश्वास करो।"

स्वामीजी ने भी ईसाइयों के इस पापवाद के सम्बन्ध में कहा है, "पापी क्यों? तुम लोग अमृत के अधिकारी हो (Sons of Immortal Bliss)! तुम्हारे धर्माचार्य जो दिनरात नरकाग्नि की बातें बताया करते है, उसे मत सुनो!" –

". . . तो तुम तो ईश्वर की सन्तान हो, अमर आनन्द के अधिकारी हो, पवित्र और पूर्ण आत्मा हो। तुम इस मर्त्यभूमि पर देवता हो, तुम पापी? मनुष्य को पापी कहना ही महा पाप है। विशुद्ध मानव आत्मा को तो यह मिथ्या कलंक लगाना है। उठो! आओ! ऐ सिंहो! तुम भेड़ हो इस मिथ्या भ्रम को झटककर दूर फेंक दो। तुम तो जरा-मरण-रहित एवं नित्यानन्दस्वरूप आत्मा हो। तुम जड़ पदार्थ नही हो। तुम शरीर नहीं हो। जड़ पदार्थ तो तुम्हारा गुलाम है, तुम उसके गुलाम नही। . . ."

– 'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

अमरीका मे हार्टफोर्ड नामक स्थान पर स्वामीजी भाषण देने के लिए आमन्त्रित हुए थे। यहाँ के अमरीकन कॉनसल (Consul) पैटर्सन उस समय वहाँ पर उपस्थित थे तथा सभापति थे। स्वामीजी ने ईसाइयो के पापवाद के सम्बन्ध मे कहा था –

"... वह क्या लोगों को घुटने टेककर यह चिल्लाने की सलाह दे कि 'ओह, हम कितने पापी हैं!' नहीं, प्रत्युत आओ, हम उन्हें उनके दैवी स्वरूप का ख्याल करा दें। ... यदि कमरा अँधेरा हो तो क्या तुम अपनी छाती पीटते हुए यह चिल्लाते जाते हो कि 'कमरा अँधेरा है!' 'कमरा अँधेरा है!' नही, उजाला करने का एक मात्र उपाय है रोशनी जलाना, और तब अँधेरा भाग जाता है। उसी प्रकार आत्मज्योति के दर्शन का एकमात्र उपाय है अन्दर में आध्यात्मिक ज्योति जलाना, और तब पाप और अपवित्रता-रूपी अन्धकार दूर भाग जायगा। अपने उच्चतर स्वरूप का चिन्तन करो, क्षुद्र स्वरूप का नहीं।"

फिर स्वामीजी ने एक कहानी* सुनायी, जो उन्होंने श्रीरामकृष्णदेव से सुनी थी –

"एक बाघिनी ने बकरों के एक झुण्ड पर आक्रमण किया। वह पूर्ण गर्भवती थी, इसलिए कूदते समय उसे बच्चा पैदा हो गया। बाघिनी वहीं मर गयी। बच्चा बकरों के साथ पलने लगा और उनके साथ घास खाने लगा तथा 'में' 'में' भी कहने लगा। कुछ दिनों बाद वह बच्चा बड़ा हुआ। एक दिन उस बकरों के झुण्ड पर एक बाघ ने आक्रमण किया। वह बाघ यह देखकर हैरान रह गया कि एक बाघ घास खा रहा है तथा 'में' 'में' कर रहा है और उसे देखकर बकरों की तरह भाग रहा है। तब वह उसे पकड़कर जल के पास ले गया और कहा, 'देख, तू भी बाघ है, तू घास क्यों खा रहा है और 'मे' 'में' क्यों कर रहा है? – देख, मैं कैसा माँस खाता हूँ। ले तू भी खा। और जल में देख, तेरा चेहरा भी कैसा बिलकुल मेरे ही जैसा है!' उस छोटे बाघ ने वह सब देखा, मॉस का आस्वादन किया और अपना असली रूप पहचान गया।"

(७)

कामिनीकांचन-त्याग – संन्यास

एक दिन श्रीरामकृष्ण और विजयकृष्ण गोस्वामी दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में वार्तालाप कर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण – (विजय के प्रति) – कामिनी-कांचन का त्याग किये बिना लोक-शिक्षा नहीं दी जा सकती। देखो न, यही न कर सकने के कारण केशव सेन का अन्त में क्या हुआ! तुम स्वयं ऐश्वर्य में, कामिनी-कांचन के भीतर रहकर यदि कहो 'संसार अनित्य है, ईश्वर ही नित्य है', तो कौन तुम्हारी बात सुनेगा? तुम अपने पास तो गुड़ का घड़ा रखे हुए हो, और दूसरों से कह रहे हो – 'गुड़ न खाना!' इसीलिए सोच समझकर चैतन्यदेव ने संसार छोड़ा था। नही तो जीव का उद्धार नहीं होता।

विजय – जी हॉ, चैतन्यदेव ने कहा था, 'कफ हटाने के लिए पिप्पल-खण्ड‡ तैयार किया, परन्तु परिणाम उल्टा हुआ, कफ बढ़ गया।' नवद्वीप के अनेक लोग हॅसी उड़ाने लगे और कहने लगे, 'निमाई पण्डित मजे मे है जी, सुन्दर स्त्री, मान-सन्मान, धन की भी कमी नहीं है, बड़े मजे में है।'

श्रीरामकृष्ण – केशव यदि त्यागी होता, तो अनेक काम होते। बकरे के बदन पर घाव रहने से वह देव-सेवा के काम में नहीं आता, उसकी बलि नहीं दी जाती। त्यागी हुए बिना व्यक्ति लोक-शिक्षा का अधिकारी नहीं बनता। गृहस्थ होने पर कितने लोग उसकी बात सुनेंगे?

---

* यह कहानी सांख्यदर्शन में है – आख्यायिका-प्रकरण

‡ पिप्पल-खण्ड का मतलब है नवद्वीप में हरिनाम का प्रचार।

स्वामी विवेकानन्द कामिनी-कांचनत्यागी हैं, इसीलिए उनका ईश्वर के विषय में लोक-शिक्षा देने का अधिकार है। विवेकानन्दजी वेदान्त तथा अंग्रेजी भाषा व दर्शन आदि के अग्रगण्य पण्डित हैं; वे असाधारण भाषणपटु हैं; क्या उनका माहात्म्य इतना ही है? इसका उत्तर श्रीरामकृष्ण ने दिया था। दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में भक्तों को सम्बोधित कर श्रीरामकृष्णदेव ने १८८२ ई. में स्वामी विवेकानन्द के सम्बन्ध में कहा था –

"इस लड़के को देख रहे हो, यहाँ पर एक तरह का है। उत्पाती लड़के जब बाप के पास बैठते हैं तो मानो भीगी बिल्ली बन जाते हैं। फिर चाँदनी में जब खेलते हैं, उस समय उनका रूप दूसरा ही होता है। ये लोग नित्यसिद्ध के स्तर के हैं। ये लोग कभी संसार में आबद्ध नहीं होते। थोड़ी उम्र में ही इन्हें चैतन्य होता है और भगवान की ओर चले जाते हैं। ये लोग लोक-शिक्षा के लिए संसार मे आते हैं, इन्हें संसार की कोई भी चीज अच्छी नहीं लगती – ये कभी भी कामिनी-कांचन में आसक्त नहीं होते।

"वेद में 'होमा' पक्षी का उल्लेख है। आकाश मे खूब ऊँचाई पर वह चिड़िया रहती है। वहीं आकाश में ही वह अण्डा देती है। अण्डा देते हो अण्डा नीचे गिरने लगता है। अण्डा गिरते गिरते फूट जाता है। तब बच्चा गिरने लगता है। गिरते गिरते उसकी आँखे खुल जाती हैं और पंख निकल आते हैं। आँखें खुलते ही वह देखता है कि वह गिर रहा है और जमीन पर गिरते ही उसकी देह चकनाचूर हो जायगी। तब वह पक्षी अपनी माँ की ओर देखता है, और ऊपर की ओर उड़ान लेता है और ऊपर उठ जाता है।"

विवेकानन्द वही 'होमा पक्षी' हैं – उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य है उड़कर माँ के पास ऊपर उठ जाना – देह के जमीन से टकराने के पहले ही अर्थात् संसार से सम्बन्ध होने से पहले ही, ईश्वरलाभ के पथ पर अग्रसर हो जाना।

श्रीरामकृष्ण ने ईश्वरचन्द्र विद्यासागर से कहा था, – "पाण्डित्य! केवल पाण्डित्य से ही क्या होगा? गिद्ध भी काफी ऊँचा उड़ता है, परन्तु उसकी दृष्टि रहती है जमीन पर मुर्दों की ओर – कहाँ सड़ा मुर्दा पड़ा है। पण्डित अनेक श्लोक झाड़ सकते हैं, परन्तु मन कहाँ है? यदि ईश्वर के चरणकमलों में हो, तो मैं उसे सम्मान देता हूँ, यदि कामिनी-कांचन की ओर हो, तो वह मुझे कूड़ा-कर्कट जैसा लगता है।"

स्वामी विवेकानन्द केवल पण्डित ही नहीं, वे साधु महापुरुष थे। केवल पाण्डित्य के लिए ही अंग्रेजों तथा अमरीकानिवासियों ने भृत्यों की तरह उनकी सेवा नहीं की थी। उन्होंने जान लिया था कि ये एक दूसरे ही प्रकार के व्यक्ति हैं। अन्य सब लोग सम्मान, धन, इन्द्रियसुख, पण्डिताई आदि लेकर रहते हैं पर इनका लक्ष्य है ईश्वरप्राप्ति।

'संन्यासी के गीत' में स्वामीजी ने कहा है कि संन्यासी कामिनी-कांचन का त्याग करेगा –

"... करते निवास जिस उर मे मद काम लोभ औ' मत्सर,
उसमे न कभी हो सकता आलोकित सत्य-प्रभाकर;
भार्यत्व कामिनी मे जो देखा करता कामुक बन,
वह पूर्ण नही हो सकता, उसका न छूटता बन्धन;
लोलुपता है जिस नर की स्वल्पातिस्वल्प भी धन मे,
वह मुक्त नही हा सकता. रहता अपार बन्धन मे;
जंजीर क्रोध की जिसको रखती है सदा जकड़कर,
वह पार नही कर सकता दुस्तर माया का सागर।
इन सभी वासनाओ का अतएव त्याग तुम कर दो,
सानन्द वायुमण्डल को बस एक गूँज से भर दो –
'ॐ तत् सत् ॐ!' .."

– 'कवितावली' से उद्धृत

अमरीका मे उन्हे प्रलोभन कम नही मिला था। इधर विश्वव्यापी यश, उस पर सदा ही परम सुन्दरी उच्चवंशीय सुशिक्षित महिलाएँ उनसे वार्तालाप तथा उनकी सेवा-टहल किया करती थी। स्वामीजी मे इतनी मोहिनी शक्ति थी कि उनमे से कई उनसे विवाह करना चाहती थी। एक अत्यन्त धनी व्यक्ति की लड़की ने तो एक दिन आकर उनसे यहाँ तक कह दिया, "स्वामी! मेरा सब कुछ एवं स्वयं को भी मै आपको सौपती हूँ।" स्वामीजी ने उसके उत्तर मे कहा, 'भद्रे, मै संन्यासी हूँ, मुझे विवाह नही करना है। सभी स्त्रियाँ मेरी माँ जैसी है।'

धन्य हो वीर! तुम गुरुदेव के योग्य ही शिष्य हो! तुम्हारी देह मे वास्तव मे पृथ्वी की मिट्टी नही लगी है, तुम्हारी देह मे कामिनी-कांचन का दाग तक नही लगा है। तुम प्रलोभन के देश से दूर न भागकर, उसी मे रहकर, श्री की नगरी मे रहकर ईश्वर के पथ मे अग्रसर हुए हो! तुमने साधारण जीव की तरह दिन बिताना नही चाहा। तुम देवभाव का जीता-जागता उदाहरण छोड़कर इस मर्त्यलोक को छोड़ गये हो!

(८)

कर्मयोग और दरिद्रनारायण-सेवा

श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे, कर्म सभी को करना पड़ता है। ज्ञान, भक्ति और कर्म – ये तीन ईश्वर के पास पहुँचने के पथ है। गीता में है, – साधु-गृहस्थ पहले-पहल चित्तशुद्धि के लिए गुरु के उपदेशानुसार अनासक्त होकर कर्म करे। 'मैं करनेवाला हूँ' यह [illegible] काम-काज मेरे है' – यह भी अज्ञान है। गीता में है, अपने को [illegible] करना चाहिए। गीता में यह भी है कि सिद्धि

प्राप्त करने के बाद भी प्रत्यादिष्ट होकर कोई कोई, जैसे जनक आदि, कर्म करते हैं। गीता में जो कर्मयोग है, वह यही है। श्रीरामकृष्णदेव भी यही कहते थे।

इसीलिए कर्मयोग बहुत कठिन है। बहुत दिन निर्जन में ईश्वर की साधना किये बिना, अनासक्त होकर कर्म नहीं किया जा सकता। साधना की अवस्था में श्रीगुरु के उपदेश की सदा ही आवश्यकता है। उस समय कच्ची स्थिति रहती है इसलिए किस ओर से आसक्ति आ पड़ेगी, जाना नहीं जाता। मन में सोच रहा हूँ, 'मैं अनासक्त होकर, ईश्वर को फल समर्पण कर, जीवसेवा, दान आदि कर्म कर रहा हूँ।' परन्तु वास्तव में, सम्भव है, मैं यश के लिए ही यह सब कर रहा हूँ, और खुद नहीं समझ पा रहा हूँ। जो आदमी गृहस्थ है, जिसके घर, परिवार, आत्मीय, स्वजन और अपना कहने की चीजें हैं, उसे देखकर निष्काम कर्म, अनासक्ति और दूसरे के लिए स्वार्थ का त्याग, ये सब बातें सीखना बहुत कठिन है।

परन्तु सर्वत्यागी, कामिनी-कांचन-त्यागी सिद्ध महापुरुष यदि निष्काम कर्म करके दिखायें तो लोग आसानी से उसे समझ सकते हैं और उनके चरण-चिन्हों का अनुसरण कर सकते हैं।

स्वामी विवेकानन्द कामिनी-कांचन त्यागी थे। उन्होंने एकान्त में श्रीगुरु के उपदेश से बहुत दिनों तक साधना करके सिद्धि प्राप्त की थी। वे वास्तव में कर्मयोग के अधिकारी थे। वे संन्यासी थे; वे चाहते तो ऋषियों की तरह अथवा अपने गुरुदेव श्रीरामकृष्णदेव की तरह केवल ज्ञान-भक्ति लेकर रह सकते थे। परन्तु उनका जीवन केवल त्याग का उदाहरण दिखाने के लिए नहीं हुआ था। सांसारिक लोग जिन सब वस्तुओं को ग्रहण करते हैं, उनसे अनासक्त होकर किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, यह भी नारद, शुकदेव तथा जनक आदि की तरह स्वामीजी लोकसंग्रह के लिए दिखा गये हैं। वे धन-सम्पत्ति आदि को काक-विष्ठा की तरह समझते अवश्य थे और स्वयं उनका उपयोग नहीं करते थे, परन्तु फिर भी जीवसेवा के लिए उनका किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए इसके बारे में उपदेश देकर वे स्वयं भी करके दिखा गये है। उन्होंने विलायत व अमरीका के मित्रों से जो धन एकत्रित किया था, वह सारा धन जीवो के कल्याण के लिए व्यय किया। उन्होंने स्थान स्थान पर – जैसे कलकत्ते के पास बेलुड़ में, अलमोड़ा के पास मायावती में, काशीधाम में तथा मद्रास आदि स्थानों में – मठों की स्थापना की। अनेक स्थानों मे – दिनाजपुर, वैद्यनाथ, किशनगढ़, दक्षिणेश्वर आदि स्थानों में – दुर्भिक्ष-पीड़ितों की सेवा की। दुर्भिक्ष के समय अनाथाश्रम बनाकर मातृ-पितृहीन अनाथ बालक-बालिकाओं की रक्षा की। राजपुताना के अन्तर्गत किशनगढ़ नामक स्थान में अनाथाश्रम की स्थापना की। मुरशिदाबाद के निकट (भीवदा) सारगाछी गाँव में तो अभी तक उसी समय का अनाथश्रम चल रहा है। हरिद्वार के निकट कनखल में रोगपीड़ित साधुओं के लिए स्वामीजी ने सेवाश्रम की स्थापना की।

प्लेग के समय रोगियो की विपुल धन व्यय करके सेवा करायी। वे दीन, दुःखी तथा असहायो के लिए अकेले बैठकर रोते थे और मित्रो से कहते थे, "हाय! इन लोगों को इतना कष्ट है कि इन्हें ईश्वर-चिन्तन का अवसर तक नहीं है!"

गुरु से उपदिष्ट कर्मों और नित्य-कर्मों को छोड़, दूसरे कर्म तो बन्धन के कारण हैं। वे संन्यासी थे, उन्हें कर्म की क्या आवश्यकता?

"... 'अपने अपने कर्मों का फल-भोग जगत् मे निश्चित'
कहते है सब, 'कारण पर है सभी कार्य अवलम्बित;
फल अशुभ, अशुभ कर्मों के; शुभ कर्मो के है शुभ फल,
किसकी सामर्थ्य बदल दे, यह नियम अटल औ' अविचल?
इस मृत्युलोक मे जो भी करता है तनु को धारण,
बन्धन उसके अंगों का होता नैसर्गिक भूषण।'
यह सच है, किन्तु परे जो गुण नाम-रूप से रहता,
वह नित्य मुक्त आत्मा है, स्वच्छन्द सदैव विचरता।
'तत् त्वमसि' – वही तो तुम हो, यह ज्ञान करो हृदयांकित
फिर क्या चिन्ता संन्यासी, सानन्द करो उद्घोषित –
'ॐ तत् सत् ॐ!' ..."

– 'कवितावली' से उद्धृत

केवल लोक-शिक्षा के लिए ईश्वर ने उनसे ये सब कर्म करा लिये। अब साधु या संसारी सभी सीखेंगे कि यदि वे भी कुछ दिन एकान्त में गुरु के उपदेशानुसार साधना करके ईश्वर की भक्ति प्राप्त करे, तो वे भी स्वामीजी की तरह निष्काम कर्म कर सकेंगे; सचमुच में अनासक्त होकर दानादि सत्कर्म कर सकेंगे। स्वामीजी के गुरुदेव श्रीरामकृष्ण कहा करते थे, "हाथ में तेल मलकर कटहल काटने से हाथ न चिपकेगा।" अर्थात् एकान्त में साधना के बाद भक्ति प्राप्त करके, ईश्वर का निर्देश पाकर लोकशिक्षा के लिए यदि संसार के काम में हाथ डाला जाय, तो ईश्वर की कृपा से यथार्थ में निर्लिप्त भाव से काम किया जा सकता है। स्वामी विवेकानन्द के जीवन को ध्यानपूर्वक देखने से 'एकान्त में साधना' तथा 'लोक-शिक्षा के लिए कर्म' किसे कहते हैं इसका पता लगा सकता है।

स्वामी विवेकानन्द के ये सब कर्म लोक-शिक्षा के लिए थे।

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि॥

यह गीतोक्त कर्मयोग बहुत ही कठिन है। जनक आदि ने कर्म के द्वारा सिद्धि प्राप्त की थी। श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे कि जनक ने अपने सांसारिक जीवन के पूर्व, जंगल में एकान्त में बैठकर बहुत कठोर तपस्या की थी। इसलिए साधुगण ज्ञान और भक्ति का

पथ अवलम्बन करके, संसार का कोलाहल छोड़कर एकान्त में ईश्वर-साधन करते हैं। स्वामी विवेकानन्द की तरह उत्तम अधिकारी वीर-पुरुष इस कर्मयोग के अधिकारी हैं। वे भगवान को अनुभव करते है, और साथ ही लोकशिक्षा के लिए, ईश्वर का आदेश पाकर संसार में कर्म करते हैं। इस प्रकार के महापुरुष संसार में कितने हैं? ईश्वर के प्रेम में मतवाले, कामिनी-कांचन का दाग एक भी न लगा हो, परन्तु जीवसेवा के लिए व्यस्त होकर घूम रहे है, ऐसे आचार्य कितने देखने में आते है? स्वामीजी ने लन्दन मे १० नवम्बर १८९६ को वेदान्त के कर्मयोग की व्याख्या करते हुए गीता का विवरण देते हुए कहा था –

".. और यह आश्चर्य की बात है कि इस उपदेश का केन्द्र है संग्राम-स्थल। यही श्रीकृष्ण अर्जुन को इस दर्शन का उपदेश दे रहे है और गीता के प्रत्येक पृष्ठ पर यही मत उज्ज्वल रूप से प्रकाशित है – तीव्र कर्मण्यता, किन्तु उसी के बीच अनन्त शान्तभाव। इसी तत्त्व को कर्मरहस्य कहा गया है और इस अवस्था को पाना ही वेदान्त का लक्ष्य है।..."

– 'व्यावहारिक जीवन में वेदान्त' से उद्धृत

भाषण मे स्वामीजी ने कर्म के बीच शान्त भाव की बात कही है। स्वामीजी रागद्वेष से मुक्त होकर कर्म कर सकते थे, यह केवल उनकी तपस्या के गुण तथा उनकी ईश्वरानुभूति के बल पर ही सम्भव था। सिद्धपुरुष अथवा श्रीकृष्ण की तरह अवतारीपुरुष हुए बिना यह स्थिरता तथा शान्ति प्राप्त नही होती।

(९)

स्त्रियों को लेकर साधना (वामाचार) के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण और स्वामीजी के उपदेश

स्वामी विवेकानन्द एक दिन दक्षिणेश्वर मन्दिर में श्रीरामकृष्णदेव का दर्शन करने गये थे। भवनाथ व बाबूराम आदि उपस्थित थे। २९ सितम्बर १८८४। घोषपाड़ा तथा पंचनामी के सम्बन्ध में नरेन्द्र ने बात चलायी और पूछा, "स्त्रियों को लेकर वे लोग कैसी साधना करते हैं?"

श्रीरामकृष्णदेव ने कहा, "ये सब बातें तुझे सुननी न चाहिए। घोषपाड़ा, पंचनामी और भैरव-भैरवी ये लोग ठीक-ठीक साधना नहीं कर सकते, पतन होता है। ये सब पथ मैले हैं, अच्छे पथ नहीं हैं। शुद्ध पथ पर चलना ही ठीक है। वाराणसी मे एक व्यक्ति मुझे भैरवी-चक्र में ले गया था। एक-एक भैरव, और एक-एक भैरवी। वे मुझे शराब पीने के लिए कहने लगे। मैंने कहा, 'माँ, मैं शराब छू नहीं सकता।' वे सब शराब पीने लगे। मैंने सोचा, अब शायद जप-ध्यान करेंगे। लेकिन नही, मदिरा पीकर नाचना शुरू कर दिया।"

नरेन्द्र से उन्होंने फिर कहा, "बात यह है, मेरा भाव है मातृ-भाव – सन्तानभाव। मातृभाव अत्यन्त विशुद्ध भाव है, इसमें कोई डर नहीं है। स्त्री-भाव, वीरभाव बहुत कठिन है, ठीक-ठीक रखा नहीं जा सकता, पतन होता है। तुम लोग अपने लोग हो, तुम लोगों से कहता हूँ – मैंने अन्त में यही समझा है – वे पूर्ण हैं, मैं उनका अंश हूँ। वे प्रभु है, मैं उनका दास हूँ। फिर कभी कभी सोचता हूँ, वह ही मैं, मै ही वह। और भक्ति ही सार है।"

एक दूसरे दिन (९ सितम्बर १८८३ ई.) दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं, "मेरा है सन्तान-भाव। अचलानन्द बीच-बीच में यहाँ पर आकर ठहरता था, खूब मदिरा पीता था। स्त्री लेकर साधन को मैं अच्छा नही कहता था, इसलिए उसने मुझसे कहा था, 'भला तुम वीर-भाव का साधन क्यों नहीं मानोगे? तन्त्र मे जो है। – शिवजी का लिखा नहीं मानोगे? उन्होंने (शिवजी ने) सन्तान-भाव कहा है, फिर वीरभाव भी बताया है।'

"मैंने कहा, 'कौन जाने भाई, मुझे वह सब अच्छा नही लगता – मेरा सन्तान-भाव ही रहने दो।'

"उस देश मे भगी तेली को इस दल में देखा था – वही औरत लेकर साधन। फिर एक पुरुष के हुए बिना औरत का साधन-भजन न होगा। उस पुरुष को कहते हैं 'रागकृष्ण'। तीन बार पूछता है, 'कृष्ण तूने पा लिया?' वह औरत भी तीन बार कहती है, 'मैंने कृष्ण पा लिया।' "

एक दूसरे दिन २३ मार्च १८८४ ई. को श्रीरामकृष्ण राखाल, राम आदि भक्तों से कह रहे है – "वैष्णवचरण का वामाचारी मत था। मैं जब उधर श्यामबाजार में गया था तो उनसे कहा, 'मेरा मत ऐसा नहीं है।' मेरा मातृभाव है। देखा कि लम्बी लम्बी बातें बनाता है और फिर साथ ही व्यभिचार भी करता है। वे लोग देवपूजा, मूर्तिपूजा, पसन्द नहीं करते। जीवित मनुष्य चाहते हैं। उनमे से कई राधातन्त्र का मत मानते हैं; पृथ्वीतत्त्व, अग्नितत्त्व, जलतत्त्व, वायुतत्त्व, आकाशतत्त्व – विष्ठा, मूत्र, रज, वीर्य, ये ही सब तत्त्व, यह साधन बहुत मैला साधन है; जैसे पैखाने के रास्ते से मकान में प्रवेश करना।"

श्रीरामकृष्ण के उपदेशानुसार स्वामी विवेकानन्द ने भी वामाचार की खूब निन्दा की है। उन्होंने कहा है, "भारतवर्ष के प्राय: सभी स्थानों में विशेष रूप से बंगाल प्रान्त में, गुप्त रूप से अनेक व्यक्ति ऐसी साधना करते हैं। वे वामाचार तन्त्र का प्रमाण दिखाते हैं। उन सब तन्त्रों का त्याग कर लड़कों को उपनिषद्, गीता आदि शास्त्र पढ़ने को देना चाहिए।"

स्वामी विवेकानन्द ने विलायत से लौटने के बाद शोभाबाजार के स्व. राधाकान्त देव के देव-मन्दिर में वेदान्त के सम्बन्ध में एक सारगर्भित भाषण दिया था, उसमें औरतों को लेकर साधना करने की निन्दा करके निम्नलिखित बातें कही थीं –

"...यह घृण्य वामाचार छोड़ो, जो देश का नाश कर रहा है। तुमने भारत के अन्यान्य भाग नहीं देखे। जब मैं देखता हूँ कि हमारे समाज में कितना वामाचार फैला हुआ है, तब उन्नति का इसे बड़ा गर्व रहने पर भी मेरी नजरों में यह अत्यन्त गिरा हुआ मालूम होता है। इन वामाचार सम्प्रदायों ने मधुमक्खियों की तरह हमारे बंगाल के समाज को छा लिया है। वे ही, जो दिन को गरजते हुए आचार के सम्बन्ध में प्रचार करते हैं, रात को घोर पैशाचिक कृत्य करने से बाज नहीं आते, और अति भयानक ग्रन्थसमूह उनके कर्म के समर्थक हैं। इन्हीं शास्त्रों की आज्ञा मानकर वे उन घोर दुष्कर्मों में हाथ देते हैं। तुम बंगालियों को यह विदित है। बंगालियों के शास्त्र वामाचार-तन्त्र है। ये ग्रन्थ ढेरों प्रकाशित होते हैं, जिन्हें लेकर तुम अपनी सन्तानों के मन को विषाक्त करते हो, किन्तु उन्हें श्रुतियों की शिक्षा नहीं देते। ऐ कलकत्तावासियों, क्या तुम्हें लज्जा नहीं आती कि अनुवादसहित वामाचार-तन्त्रों का यह बीभत्स संग्रह तुम्हारे बालकों और बालिकाओं के हाथ रखा जाय, उनका चित्त विषविह्वल हो और वे जन्म से यही धारणा लेकर पलें कि हिन्दुओं के शास्त्र ये वामाचार ग्रन्थ है? यदि तुम लज्जित हो तो अपने बच्चों से उन्हें अलग करो, और उन्हें यथार्थ शास्त्र – वेद, गीता, उपनिषद् – पढ़ने दो। ..."

– 'भारत में विवेकानन्द' से उद्धृत

काशीपुर बगीचे मे श्रीरामकृष्ण जब (१८८६ ई.) बीमार थे, तो एक दिन नरेन्द्र को बुलाकर बोले, 'भैया, यहाँ पर कोई शराब न पीये। धर्म के नाम पर मदिरा पीना ठीक नही; मैंने देखा है, जहाँ ऐसा किया गया है, वहाँ भला नही हुआ।'

(१०)

श्रीरामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द व अवतारवाद

दक्षिणेश्वर मन्दिर मे भगवान श्रीरामकृष्ण बलराम आदि भक्तो के साथ बैठे हैं। १८८५ ई., ७ मार्च, दिन के ३-४ बजे का समय होगा।

भक्तगण श्रीरामकृष्ण की चरणसेवा कर रहे हैं, – श्रीरामकृष्ण थोड़ा हँसकर भक्तो से कह रहे हैं – "इसका (अर्थात् चरणसेवा का) विशेष तात्पर्य है।" फिर अपने हृदय पर हाथ रखकर कह रहे हैं, "इसके भीतर यदि कुछ है, (चरणसेवा करने पर) अज्ञान-अविद्या एकदम दूर हो जायगी।"

एकाएक श्रीरामकृष्ण गम्भीर हुए, मानो कुछ गुप्त बात कहेंगे। भक्तों से कह रहे हैं, "यहाँ पर बाहर का कोई नहीं है। तुम लोगों से एक गुप्त बात कहता हूँ। उस दिन देखा, मेरे भीतर से सच्चिदानन्द बाहर आकर प्रकट होकर बोले, 'मैं ही युग-युग में अवतार लेता हूँ।' देखा, पूर्ण आविर्भाव, सत्त्वगुण का ऐश्वर्य है।"

भक्तगण ये सब बातें विस्मित होकर सुन रहे है; कोई कोई गीता में कहे हुए भगवान

श्रीकृष्ण के महावाक्य की याद करा रहे हैं –

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।

दूसरे एक दिन, १ सितम्बर १८८५, जन्माष्टमी के दिन नरेन्द्र आदि भक्त आये है। श्री गिरीश घोष दो-एक मित्रो को साथ लेकर गाड़ी करके दक्षिणेश्वर में उपस्थित हुए। वे रोते रोते आ रहे है। श्रीरामकृष्ण स्नेह के साथ उनकी देह थपथपाने लगे।

गिरीश सिर उठाकर हाथ जोड़कर कह रहे हैं, "आप ही पूर्ण ब्रह्म हैं। यदि ऐसा न हो तो सभी झूठा है। बड़ा खेद रहा कि आपकी सेवा न कर सका। वरदान दीजिये न भगवन्, कि एक वर्ष आपकी सेवाटहल करूँ।" बार बार उन्हे ईश्वर कहकर स्तुति करने से श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए। भक्तवत् न च कृष्णवत्; तुम जो कुछ सोचते हो, सोच सकते हो। अपने गुरु भगवान तो है, तो भी ऐसी बात कहने से अपराध होता है।"

गिरीश फिर श्रीरामकृष्ण की स्तुति कर रहे है, "भगवन्, मुझे पवित्रता दो, जिससे कभी रत्तीभर भी पाप-चिन्तन न हो।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – "तुम तो पवित्र हो, – तुम्हारी विश्वास-भक्ति जो है।"

१ मार्च १८८५ ई. होली के दिन नरेन्द्र, आदि भक्तगण आये है। उस दिन श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को संन्यास का उपदेश दे रहे हैं और कह रहे है, "भैया, कामिनी-कांचन न छोड़ने से नही होगा। ईश्वर ही एकमात्र सत्य है और सब अनित्य।" कहते कहते वे भावपूर्ण हो उठे। वही दयापूर्ण सस्नेह दृष्टि। भाव में उन्मत्त होकर गाना गाने लगे –

संगीत – (भावार्थ) – "बात करने में डरता हूँ", आदि।

मानो श्रीरामकृष्ण को भय है कि कहीं नरेन्द्र किसी दूसरे का न हो जाय, कही ऐसा न हो कि मेरा न रहे – भय है, कहीं नरेन्द्र घर-गृहस्थी का न बन जाय। 'हम जो मन्त्र जानते है, वही तुम्हें दिया', अर्थात् जीवन का सर्वश्रेष्ठ आदर्श – सब कुछ त्यागकर ईश्वर के शरणागत बन जाना – यह मन्त्र तुझे दिया। नरेन्द्र आँसूभरी आँखों से देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कह रहे है, "क्या गिरीश घोष ने जो कुछ कहा, वह तेरे साथ मिलता है?"

नरेन्द्र – मैंने कुछ नहीं कहा, उन्होंने ही कहा कि उनका विश्वास है कि आप अवतार है। मैंने और कुछ भी नहीं कहा।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु उसमें कैसा गम्भीर विश्वास है! देखा?

कुछ दिनो के बाद अवतार के विषय मे नरेन्द्र के साथ श्रीरामकृष्ण का वार्तालाप हुआ। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, – "अच्छा, कोई-कोई जो मुझे ईश्वर का अवतार कहते है – तू क्या समझता है?"

नरेन्द्र ने कहा, "दूसरो की राय सुनकर मै कुछ भी नही कहूँगा, मै स्वयं जब समझूँगा तब मेरा विश्वास होगा, तभी कहूँगा।"

काशीपुर बगीचे मे श्रीरामकृष्ण जिस समय केन्सर रोग की यन्त्रणा से बैचेन हो रहे है, भात का तरल मॉड तक गले के नीचे नही उतर रहा है, उस समय एक दिन नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के पास बैठकर सोच रहे है, 'इस यन्त्रणा मे यदि कहे कि मै ईश्वर का अवतार हूँ तो विश्वाम होगा।' उसी समय श्रीरामकृष्ण कहने लगे, "जो राम, जो कृष्ण, इस समय वे ही रामकृष्ण के रूप मे भक्तो के लिए अवतीर्ण हुए है।" नरेन्द्र यह बात सुनकर दंग रह गये। श्रीरामकृष्ण के स्वधाम मे सिधार जाने के बाद नरेन्द्र ने संन्यासी होकर बहुत साधन-भजन तथा तपस्या की। उस समय उनके हृदय मे अवतार के सम्बन्ध मे श्रीरामकृष्ण के सभी महावाक्य मानो और भी स्पष्ट हो उठे। वे स्वदेश और विदेशो मे इस तत्त्व को और भी स्पष्ट रूप से समझाने लगे।

स्वामीजी जब अमरीका मे थे, उस समय नारदीय भक्तिसूत्र आदि ग्रन्थो के अवलम्बन से उन्होने भक्तियोग नामक ग्रन्थ अंग्रेजी मे लिखा। उसमे भी वे कह रहे है कि अवतारगण छूकर लोगों मे चैतन्य उत्पन्न करते हैं। जो लोग दुराचारी है, वे भी उनके स्पर्श से सदाचारी बन जाते है। 'अपि चेत् सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्, साधुरेव स मन्तव्यः सम्यक् व्यवसितो हि सः।' ईश्वर ही अवतार के रूप मे हमारे पास आते है। यदि हम ईश्वर-दर्शन करना चाहे तो अवतारी पुरुषो मे ही उनका दर्शन करना होगा। उनका पूजन किये बिना हम रह नही सकते।

"... साधारण गुरुओ से श्रेष्ठ एक और श्रेणी के गुरु होते है, जो इस संसार मे ईश्वर के अवतार होते है। केवल स्पर्श से ही वे आध्यात्मिकता प्रदान कर सकते है, यहाँ तक कि इच्छा मात्र से ही। उनकी इच्छा से महान् दुराचारी तथा पतित व्यक्ति भी क्षण भर मे ही साधु हो जाता है। वे गुरुओ के भी गुरु है तथा मनुष्य रूप मे भगवान के अवतार है। उनके माध्यम बिना हम ईश्वर-दर्शन नही कर सकते। उनकी उपासना किये बिना हम रह ही नही सकते और वास्तव मे केवल वे ही ऐसे है जिनकी हमे उपासना करनी चाहिए। ... जब तक हमारा यह मनुष्यशरीर है तब तक हमे ईश्वर की उपासना मनुष्य के रूप मे और मनुष्य के सदृश ही करनी पड़ती है। तुम चाहे जितनी बाते करो, चाहे जितना यत्न करो, परन्तु भगवान को मनुष्य-रूप के अतिरिक्त तुम किसी अन्य रूप मे सोच ही नही सकते। ईश्वर तथा संसार की सारी वस्तुओ पर चाहे तुम सुन्दर तर्कयुक्त भाषण दे सकते हो, चाहे बड़े युक्तिवादी बन सकते हो और मन को समझा सकते हो कि इन सारे

ईश्वरावतारो की कथा भ्रमात्मक है। पर थोड़ी देर के लिए सहज बुद्धि से सोचो। हमे इस विचित्र विचारबुद्धि से क्या प्राप्त होता है? – शून्य, कुछ नही, केवल शब्दाडम्बर। भविष्य मे जब कभी तुम किसी मनुष्य को अवतार-पूजा के विरुद्ध एक बड़ा तर्कपूर्ण भाषण देते हुए सुनो तो उससे यह प्रश्न करो कि उसकी ईश्वरसम्बधी धारणा क्या है। सर्वशक्तिशाली, सर्वव्यापी तथा इस प्रकार के अन्य शब्दो का अर्थ वह केवल अक्षरो के जानने की अपेक्षा और क्या समझता है? वास्तव मे वह कुछ नही समझता। वह उनका कोई ऐसा अर्थ नही लगा सकता जो उसकी स्वयं की मानवी प्रकृति से प्रभावित न हो। इस सम्बन्ध मे वह बिलकुल उसी सामान्य मनुष्य के सदृश है, जिसने एक पुस्तक भी नही पढ़ी।''

– 'भक्तियोग' से उद्धृत

स्वामीजी १८९९ ईसवी मे दूसरी बार अमरीका गये थे। उस समय १९०० ईसवी मे उन्होने कैलिफोर्निया (California) प्रान्त मे लास इंजिलस (Los Angeles) नामक नगर मे 'ईशदूत ईसा' (Christ the Messenger) विषय पर एक भाषण दिया था। इस भाषण मे उन्होने फिर से अवतार-तत्त्व को भलीभाँति समझाने की चेष्टा की थी। स्वामीजी ने कहा –

" इसी महापुरुष (ईसा मसीह) ने कहा है, 'किसी भी व्यक्ति ने ईश्वर-पुत्र के माध्यम बिना ईश्वर का साक्षात्कार नही किया है।' और यह कथन अक्षरश: सत्य है। ईश्वर-तनय के अतिरिक्त हम ईश्वर को और कहाँ देखेगे? यह सच है कि मुझमे और तुममे, हममे से निर्धन से भी निर्धन और हीन से भी हीन व्यक्ति मे भी परमेश्वर विद्यमान है, उनका प्रतिबिम्ब मौजूद है। प्रकाश की गति सर्वत्र है, उसका स्पन्दन सर्वव्यापी है, किन्तु हमे उसे देखने के लिए दीप जलाने की आवश्यकता होती है। जगत् का सर्वव्यापी ईश भी तब तक दृष्टिगोचर नही होता, जब तक ये महान् शक्तिशाली दीपक, ये ईशदूत, ये उसके सन्देशवाहक और अवतार, ये नर-नारायण उसे अपने मे प्रतिबिम्बित नही करते। ईश्वर के इन सब महान् ज्ञानज्योतिसम्पन्न अग्रदूतो मे से आप किसी एक की ही जीवन-कथा लीजिये और ईश्वर की जो उच्चतम भावना आपने हृदय मे धारण की है, उससे चरित्र की तुलना कीजिये। आपको प्रतीत होगा कि इन जीवित और जाज्वल्यमान आदर्श महापुरुषो के चरित्र की अपेक्षा आपकी भावनाओ का ईश्वर अनेकांश मे हीन है, ईश्वर के अवतार का चरित्र आपके कल्पित ईश्वर की अपेक्षा कही अधिक उच्च है। आदर्श के विग्रह-स्वरूप इन महापुरुषो ने ईश्वर की साक्षात् उपलब्धि कर, अपने महान् जीवन का जो आदर्श, जो दृष्टान्त हमारे सम्मुख रखा है, ईश्वरत्व की उससे उच्च भावना धारण करना असम्भव है। इसलिए यदि कोई इनकी ईश्वर के समान अर्चना करने लगे, तो इसमे क्या अनौचित्य है? इन नरनारायणो के चरणाम्बुजो मे लुण्ठित हो यदि कोई

उनकी भूमि पर अवतीर्ण ईश्वर के समान पूजा करने लगे तो क्या पाप है? यदि उनका जीवन हमारे ईश्वरत्व के उच्चतम आदर्श से भी उच्च है तो उनकी पूजा करने मे क्या दोष? दोष की बात तो दूर रही, ईश्वरोपासना की केवल यही एक विधि सम्भव है।...''

– 'महापुरुषो की जीवनगाथाएँ' से उद्धृत

अवतार के लक्षण। ईसा मसीह

अवतार-पुरुष क्या कहने के लिए आते है? श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र से कहा था, ''भैया, कामिनी-कांचन का त्याग किये बिना न होगा। ईश्वर ही वस्तु है, बाकी सभी अवस्तु हैं।'' स्वामीजी ने भी अमरीकनों से कहा –

''... हम अपने आलोच्य महापुरुष, जीवन के इस दिव्य-संदेशवाहक (ईसा) के जीवन का मूलमन्त्र यही पाते है कि 'यह जीवन कुछ नहीं है, इससे भी उच्च कुछ और है' ...। उन्हें इस नश्वर जगत् व उसके क्षणभंगुर ऐश्वर्य मे विश्वास नहीं था। ... ईसा स्वयं त्यागी व वैराग्यवान् थे, इसलिए उनकी शिक्षा भी यही है कि वैराग्य या त्याग ही मुक्ति का एकमेव मार्ग है, इसके अतिरिक्त मुक्ति का और कोई पथ नहीं है। यदि हममे इस मार्ग पर अग्रसर होने की क्षमता नहीं है, तो हमें मुख मे तृण धारण कर विनीत भाव से अपनी यह दुर्बलता स्वीकार कर लेनी चाहिए कि हममें अब भी 'मैं' और 'मेरे' के प्रति ममत्व है, हममें धन और ऐश्वर्य के प्रति आसक्ति है। हमें धिक्कार है कि हम यह सब स्वीकार न कर, मानवता के उन महान् आचार्य का अन्य रूप से वर्णन कर उन्हें निम्न स्तर पर खींच लाने की चेष्टा करते है। उन्हे पारिवारिक बन्धन नही जकड़ सके। क्या आप सोचते है कि ईसा के मन में कोई सांसारिक भाव था? क्या आप सोचते हैं कि यह ज्ञानज्योतिस्वरूप अमानवी मानव, यह प्रत्यक्ष ईश्वर पृथ्वी पर पशुओं का समधर्मी बनने के लिए अवतीर्ण हुआ? किन्तु फिर भी लोग उनके उपदेशों का अपनी इच्छानुसार अर्थ लगाकर प्रचार करते हैं। उन्हें देह-ज्ञान नहीं था, उनमें स्त्री-पुरुष भेदबुद्धि नही थी – वे अपने को लिंगोपाधिरहित आत्मास्वरूप जानते थे। वे जानते थे कि वे शुद्ध आत्मास्वरूप हैं – देह में अवस्थित हो मानवजाति के कल्याण के लिए देह का परिचालन मात्र कर रहे हैं। देह के साथ उनका केवल इतना ही सम्पर्क था। आत्मा लिंगविहीन है। विदेह आत्मा का देह व पाशवभाव से कोई सम्बन्ध नहीं होता। अवश्यमेव त्याग व वैराग्य का यह आदर्श साधारण जनों की पहुँच के बाहर है। कोई हर्ज नही, हमें अपना आदर्श विस्मृत नहीं कर देना चाहिए – उनकी प्राप्ति के लिए सतत यत्नशील रहना चाहिए। हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि त्याग हमारे जीवन का आदर्श है, किन्तु अभी तक हम उस तक पहुँचने में असमर्थ हैं।...''

– 'महापुरुषों की जीवनगाथाएँ' से उद्धृत

फिर अमरिकनो से कह रहे है – "... अपनी महान् वाणी से ईसा ने जगत् मे घोषणा की, 'दुनिया के लोगो, इस बात को भलीभाँति जान लो कि स्वर्ग का राज्य तुम्हारे अभ्यन्तर मे अवस्थित है।' – 'मै और मेरे पिता अभिन्न है।' साहस कर खड़े हो जाओ और घोषणा करो कि मै केवल ईश्वर-तनय ही नही हूँ, पर अपने हृदय मे मुझे यह भी प्रतीति हो रही है कि मै और मेरे पिता एक और अभिन्न है। नाजरथवासी ईसा मसीह ने यही कहा।...

"... इसलिए हमे केवल नाजरथवासी ईसा मे ही ईश्वर का दर्शन न कर विश्व के उन सभी महान् आचार्यो व पैगम्बरो मे भी उसका दर्शन करना चाहिए, जो ईसा के पहले जन्म ले चुके थे, जो ईसा के पश्चात् आविर्भूत हुए है और जो भविष्य मे अवतार ग्रहण करेंगे। हमारा सम्मान और हमारी पूजा सीमाबद्ध न हो। ये सब महापुरुष उसी एक अनन्त ईश्वर की विभिन्न अभिव्यक्ति है। वे सब शुद्ध और स्वार्थगन्ध-शून्य है, सभी ने इस दुर्बल मानवजाति के उद्धार के लिए प्राणपण से प्रयत्न किया है, इसी के लिए अपना जीवन निछावर कर दिया है। वे हमारे और हमारी आनेवाली सन्तान के सब पापो को ग्रहण कर उनका प्रायश्चित्त कर गये है।..."

– 'महापुरुषो की जीवनगाथाएँ' से उद्धृत

स्वामीजी वेदान्त की चर्चा करने के लिए कहा करते थे, परन्तु साथ ही उस चर्चा मे जो विपत्ति है, वह भी बता देते थे। श्रीरामकृष्ण जिस दिन ठनठनिया मे श्री शशधर पण्डित के साथ वार्तालाप कर रहे थे, उस दिन नरेन्द्र आदि अनेक भक्त वहाँ पर उपस्थित थे, १८८४ ईसवी।

ज्ञानयोग व स्वामी विवेकानन्द

श्रीरामकृष्ण ने कहा है, 'ज्ञानयोग इस युग मे बहुत कठिन है। जीव का एक तो अन्न मे प्राण है, उस पर आयु कम है। फिर देह-बुद्धि किसी भी तरह नही जाती। इधर देह-बुद्धि न जाने से ब्रह्मज्ञान नही होता। ज्ञानी कहते है, 'मै वही ब्रह्म हूँ।' मै शरीर नही हूँ, मैं भूख-प्यास, रोग-शोक, जन्म-मृत्यु, सुख-दुःख इन सभी से परे हूँ। यदि रोग-शोक सुख-दुःख इन सब का बोध रहे तो तुम ज्ञानी क्योकर होगे? इधर काँटे से हाथ चुभ रहा है, खून की धारा बह रही है, बहुत दर्द हो रहा है, परन्तु कहता है, 'कहाँ, हाथ तो नही कटा! मेरा क्या हुआ?'

"इसलिए इस युग के लिए भक्तियोग है। इसके द्वारा दूसरे पथों की तुलना मे आसानी से ईश्वर के पास जाया जाता है। ज्ञानयोग या कर्मयोग तथा दूसरे पथो से भी ईश्वर के पास जाया जा सकता है, परन्तु ये सब कठिन पथ है।"

श्रीरामकृष्ण ने और भी कहा है, "कर्मियो का जितना कर्म बाकी है, उतना निष्काम भावना से करें। निष्काम कर्म द्वारा चित्तशुद्धि होने पर भक्ति आयेगी। भक्ति द्वारा भगवान

की प्राप्ति होती है।''

स्वामीजी ने भी कहा, ''देह-बुद्धि रहते 'सोऽहम्' नही होता – अर्थात् सभी वासनाएँ मिट जाने पर, सर्वत्याग होने पर तब कही समाधि होती है। समाधि होने पर तब ब्रह्मज्ञान होता है। भक्तियोग सरल व मधुर (natural and sweet) है।''

''... ज्ञानयोग अवश्य ही अति श्रेष्ठ मार्ग है। उच्च तत्त्वज्ञान इसका प्राण है, और आश्चर्य की बात तो यह है कि प्रत्येक मनुष्य यह सोचता है कि वह ज्ञानयोग के आदर्शानुसार चलने मे समर्थ है। परन्तु वास्तव मे ज्ञानयोग-साधना बड़ी कठिन है। ज्ञानयोग के पथ पर चलने मे हमारे गड्ढे मे गिर जाने की बड़ी आशंका रहती है। कहा जा सकता है कि इस संसार मे दो प्रकार के मनुष्य होते है। एक तो आसुरी प्रकृतिवाले जिनकी दृष्टि मे अपने शरीर का पालन-पोषण ही सर्वस्व है और दूसरे दैवी प्रकृतिवाले, जिनकी यह धारणा रहती है कि शरीर किसी एक विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए केवल एक साधन तथा आत्मोन्नति के लिए एक यन्त्रविशेष है। शैतान भी अपनी कार्यसिद्धि के लिए झट से शास्त्रो को उद्धृत कर देता है, और इस प्रकार प्रतीत होता है कि बुरे मनुष्य के कृत्यो के लिए भी शास्त्र उसी प्रकार साक्षी है जैसे कि एक सत्पुरुष के शुभ कार्य के लिए। ज्ञानयोग मे यही एक बड़े डर की बात है। परन्तु भक्तियोग स्वाभाविक तथा मधुर है। भक्त उतनी ऊँची उड़ान नही उड़ता जितनी कि एक ज्ञानयोगी, और इसीलिए उसके उतने बड़े खड्डो मे गिरने की आशंका भी नही रहती।...''

– 'भक्तियोग' से उद्धृत

क्या श्रीरामकृष्ण अवतार हैं? स्वामीजी का विश्वास

भारत के महापुरुषो (The Sages of India) के सम्बन्ध मे स्वामीजी ने जो भाषण दिया था, उसमे अवतार-पुरुषो की अनेक बाते कही है। श्रीरामचन्द्र, श्रीकृष्ण बुद्धदेव, रामानुज, शंकराचार्य, चैतन्यदेव आदि सभी की बाते कही। भगवान श्रीकृष्ण के इस कथन का उद्धरण देकर समझाने लगे, 'जब धर्म की ग्लानि होकर अधर्म का अभ्युत्थान होता है, तो साधुओ के परित्राण के लिए, पापाचार को विनष्ट करने के लिए मैं युग युग में अवतीर्ण होता हूँ।'

उन्होने फिर कहा, 'गीता में श्रीकृष्ण ने धर्मसमन्वय किया है', –

''... हम गीता में भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के विरोध के कोलाहल की दूर से आती हुई आवाज सुन पाते है, और देखते हैं कि समन्वय के वे अद्भुत प्रचारक भगवान श्रीकृष्ण बीच में पड़कर विरोध को हटा रहे है। ...''

– 'भारतीय व्याख्यान' से उद्धृत

''श्रीकृष्ण ने फिर कहा है, – स्त्री, वैश्य, शूद्र सभी परम गती को प्राप्त करेगे,

ब्राह्मण क्षत्रियों की तो बात ही क्या है!

"बुद्धदेव दरिद्र के देव है। सर्वभूतस्थमात्मानम् – भगवान सर्वभूतो मे है – यह उन्होंने प्रत्यक्ष दिखा दिया। बुद्धदेव के शिष्यगण आत्मा, जीवात्मा आदि नही मानते है – इसीलिए शंकराचार्य ने फिर से वैदिक धर्म का उपदेश दिया। वे वेदान्त का अद्वैत मत, रामानुज का विशिष्टाद्वैत मत समझाने लगे। उसके बाद चैतन्यदेव प्रेमभक्ति सिखाने के लिए अवतीर्ण हुए। शंकर और रामानुज ने जाति का विचार किया था, परन्तु चैतन्यदेव ने ऐसा न किया। चैतन्यदेव ने कहा, 'भक्त की फिर जाति क्या?' "

अब स्वामीजी श्रीरामकृष्णदेव की बात कह रहे है, –

".. एक (शंकराचार्य) का था अद्भुत मस्तिष्क, और दूसरे (चैतन्य) का था विशाल हृदय। अब एक ऐसे अद्भुत पुरुष के जन्म लेने का समय आ गया था, जिनमे ऐसा ही हृदय और मस्तिष्क दोनो एक साथ विराजमान हो, जो शंकर के अद्भुत मस्तिष्क एवं चैतन्य के अद्भुत, विशाल, अनन्त हृदय के एक ही साथ अधिकारी हो, जो देखे कि सब सम्प्रदाय एक ही आत्मा, एक ही ईश्वर की शक्ति से चालित हो रहे है और प्रत्येक प्राणी में वही ईश्वर विद्यमान है, जिनका हृदय भारत में अथवा भारत के बाहर दरिद्र, दुर्बल, पतित सब के लिए पानीपानी हो जाय, लेकिन साथ ही जिनकी विशाल बुद्धि ऐसे महान् तत्त्वो को पैदा करे, जिनसे भारत में अथवा भारत के बाहर सब विरोधी सम्प्रदायो मे समन्वय साधित हो और इस अद्भुत समन्वय द्वारा एक ऐसे सार्वभौमिक धर्म को प्रकट करे, जिससे हृदय और मस्तिष्क दोनो की बराबर उन्नति होती रहे। एक ऐसे ही पुरुष ने जन्म ग्रहण किया और मैने वर्षो तक उनके चरण तले बैठकर शिक्षा-लाभ का सौभाग्य प्राप्त किया। ऐसे एक पुरुष के जन्म लेने का समय आ गया था, इसकी आवश्यकता पड़ी थी, और वे आविर्भूत हुए। सब से अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि उनका समग्र जीवन एक ऐसे शहर के पास व्यतीत हुआ जो पाश्चात्य भावों से उन्मत्त हो रहा था, भारत के सब शहरो की अपेक्षा जो विदेशी भावों से अधिक भरा हुआ था। उनमे पोथियो की विद्या कुछ भी न थी, ऐसे महाप्रतिभासम्पन्न होते हुए भी वे अपना नाम तक नही लिख सकते थे, किन्तु हमारे विश्वविद्यालय के बड़े बड़े उपाधिधारियों ने उन्हें देखकर एक महाप्रतिभाशाली व्यक्ति मान लिया था। वे एक अद्भुत महापुरुष थे। यह तो एक बड़ी लम्बी कहानी है, आज रात को आपके निकट उनके विषय में कुछ भी कहने का समय नही है। इसलिए मुझे भारतीय सब महापुरुषों के पूर्णप्रकाश-स्वरूप युगाचार्य भगवान श्रीरामकृष्ण का उल्लेख भर करके आज समाप्त करना होगा। उनके उपदेश आजकल हमारे लिए विशेष कल्याणकारी हैं। उनके भीतर जो ऐश्वरिक शक्ति थी, उस पर विशेष ध्यान दीजिये। वे एक दरिद्र ब्राह्मण के लड़के थे। उनका जन्म बंगाल के सुदूर, अज्ञात, अपरिचित किसी एक गॉव मे हुआ था। आज यूरोप, अमरीका के सहस्रों व्यक्ति

वास्तव मे उनकी पूजा कर रहे हैं, भविष्य में और सहस्रो मनुष्य उनकी पूजा करेगे। ईश्वर की लीला कौन समझ सकता है! हे भाइयो, आप यदि इसमे विधाता हा हाथ नही देखते तो आप अन्धे हैं, सचमुच जन्मान्ध है। यदि समय मिला, यदि आप लोगो से आलोचना करने का और कभी अवकाश मिला तो आपसे इनके सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक कहूँगा; इस समय केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि यदि मैने जीवन भर मे एक भी सत्य वाक्य कहा है तो वह उन्हीं का वाक्य है; पर यदि मैंने ऐसे वाक्य कहे है जो असत्य, भ्रमपूर्ण अथवा मानवजाति के लिए हितकारी न हों, तो वे सब मेरे ही वाक्य है, उनके लिए पूरा उत्तरदायी मैं ही हूँ।''

– 'भारतीय व्याख्यान' से उद्धृत

स्वामीजी ने और भी कहा है, –

"... फिर से कालचक्र घूमकर आ रहा है, एक बार फिर भारत से वही शक्तिप्रवाह नि:सृत हो रहा है, जो शीघ्र ही समस्त जगत् को प्लावित कर देगा। एक वाणी मुखरित हुई है, जिसकी प्रतिध्वनि चारो ओर व्याप्त हो रही है एवं जो प्रतिदिन अधिकाधिक शक्ति संग्रह कर रही है, और यह वाणी इसके पहले की सभी वाणियों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है, क्योंकि यह अपने पूर्ववर्ती उन सभी वाणियों का समष्टिस्वरूप है। जो वाणी एक समय कलकल-निनादिनी सरस्वती के तीर पर ऋषियों के अन्तस्तल में प्रस्फुटित हुई थी, जिस वाणी ने रजतशुभ्रहिमाच्छादित गिरिराज हिमालय के शिखर-शिखर पर प्रतिध्वनित हो कृष्ण, बुद्ध और चैतन्यदेव में से होते हुए समतल प्रदेशों में अवरोहण कर समस्त देश को प्लावित कर दिया था, वही वाणी एक बार पुन: मुखरित हुई है। एक बार फिर से द्वार खुल गये हैं। आइये, हम सब आलोक-राज्य में प्रवेश करें – द्वार एक बार पुन: उन्मुक्त हो गये हैं। ...''

– 'हमारा भारत' से उद्धृत

इसी प्रकार स्वामी विवेकानन्द ने भारतवर्ष के अनेक स्थानों मे अवतार-पुरुष श्रीरामकृष्ण के आगमन की वार्ता घोषित की। जहाँ जहाँ मठ स्थापित हुए हैं, वहाँ उनकी प्रतिदिन सेवा-पूजा आदि हो रही है। आरती के समय सभी स्थानो मे स्वामीजी द्वारा रचित स्तव वाद्य तथा स्वर-संयोग के साथ गाया जाता है। इस स्तव में स्वामीजी ने भगवान् श्रीरामकृष्ण को सगुण निर्गुण निरंजन जगदीश्वर कहकर सम्बोधित किया है – और कहा है, "हे भवसागर के पार उतारनेवाले! तुम नररूप धारण करके हमारे भवबन्धन को छिन्न करने के लिए योग के सहायक बनकर आये हो। तुम्हारी कृपा से मेरी समाधि हो रही है। तुमने कामिनी-कांचन छुड़वाया है। हे भक्तों को शरणदेनेवाले, अपने चरण-कमलों में मुझे प्रेम दो। तुम्हारे चरणकमल मेरी परम सम्पद् हैं। उसे प्राप्त करने पर भवसागर गोष्पद जैसा लगता है।''

स्वामीजी-रचित श्रीरामकृष्ण-आरती।

(मिश्र-चौताल)

खण्डन भव-बन्धन, जग-वन्दन, वन्दि तोमाय।
निरंजन, नररूपधर, निर्गुण, गुणमय।।
मोचन-अघदूषण, जगभूषण, चिद्घनकाय।
ज्ञानांजन-विमल-नयन, वीक्षणे मोह जाय।।
भास्वर भाव-सागर, चिर-उन्मद प्रेम-पाथार।
भक्तार्जन-युगलचरण, तारण भव-पार।।
जृम्भित-युग-ईश्वर, जगदीश्वर, योगसहाय।
निरोधन, समाहित मन, निरखि तव कृपाय।।
भंजन-दु:खगंजन, करुणाघन, कर्म-कठोर।
प्राणार्पण-जगत-तारण, कृन्तन-कलिडोर।।
वंचन-कामकांचन, अतिनिन्दित-इन्द्रिय-राग।
त्यागीश्वर, हे नरवर, देह पदे अनुराग।।
निर्भय, गतसंशय, दृढ़निश्चयमानसवान्।
निष्कारण-भकत-शरण त्यजि ज्ञातिकुलमान।।
सम्पद तव श्रीपद, भव गोष्पद-वारि यथाय।
प्रेमार्पण, समदर्शन, जगजन-दुख जाय।।

जो राम, जो कृष्ण, इस समय वही रामकृष्ण

काशीपुर बगीचे में स्वामीजी ने यह महावाक्य भगवान श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से सुना था। इस महावाक्य का स्मरण कर स्वामीजी ने विलायत से कलकत्ते मे लौटने के बाद बेलुड़ मठ में एक स्तोत्र की रचना की थी। स्तोत्र में उन्होने कहा है – जो आचण्डाल दीन-दरिद्रों के मित्र, जानकीवल्लभ, ज्ञान-भक्ति के अवतार श्रीरामचन्द्र हुए, जिन्होंने फिर श्रीकृष्ण के रूप में कुरुक्षेत्र में गीतारूपी गम्भीर मधुर सिंहनाद किया था, वे ही इस समय विख्यात पुरुष श्रीरामकृष्ण के रूप में अवतीर्ण हुए हैं।

ॐ नमो भगवते रामकृष्णाय

(१)

आचण्डालाप्रतिहतरयो यस्य प्रेमप्रवाह:
लोकातीतोऽप्यहह न जहौ लोककल्याणमार्गम्।

त्रैलोक्येऽप्यप्रतिममहिमा जानकीप्राणबन्धः
भक्त्या ज्ञानं वृतवरवपुः सीतया यो हि रामः।।

(२)

स्तब्धीकृत्य प्रलयकलितम्वाहवोत्थं महान्तम्
हित्वा रात्रि प्रकृतिसहजामन्धतामिस्रमिश्राम्।।
गीतं शान्तं मधुरमपि यः सिहनादं जगर्ज।
सोऽयं जातः प्रथितपुरुषो रामकृष्णस्त्विदानीम्।।

और एक स्तोत्र बेलुड़ मठ मे तथा वाराणसी, मद्रास, ढाका आदि सभी मठो मे आरती के समय गाया जाता है।

इस स्तोत्र मे स्वामीजी कह रहे है – "हे दीनबन्धो, तुम सगुण हो, फिर त्रिगुणो के परे हो, रातदिन तुम्हारे चरणकमलो की आराधना नही कर रहा हूँ इसीलिए मै तुम्हारी शरण मे आया हूँ। मै मुख से आराधना कर रहा हूँ, ज्ञान का अनुशीलन कर रहा हूँ, परन्तु कुछ भी धारणा करने मे असमर्थ हूँ इसीलिए तुम्हारी शरण मे आया हूँ। तुम्हारे चरणकमलो का चिन्तन करने से मृत्यु पर विजय प्राप्त होती है, इसीलिए मै तुम्हारी शरण मे आया हूँ। हे दीनबन्धो, तुम ही जगत् की एकमात्र प्राप्त करने योग्य वस्तु हो, मै तुम्हारी शरण मे आया हूँ। 'त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो!' "

ॐ ह्रीं ऋतं त्वमचलो गुणजित् गुणेड्यः
नक्तन्दिवं सकरुणं तव पादपद्मम्।
मोहंकषं बहुकृतं न भजे यतोऽहम्
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो।।१।।

भक्तिर्भगश्च भजनं भवभेदकारि
गच्छन्त्यलं सुविपुलं गमनाय तत्त्वम्।
वक्त्रोद्धृतन्तु हृदि मे न च भाति किंचित्
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो।।२।।

तेजस्तरन्ति तरसा त्वयि तृप्तृष्णाः
रागे कृते ऋतपथे त्वयि रामकृष्णे।
मर्त्यामृतं तव पदं मरणोर्मिनाशम्
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो।।३।।

कृत्यं करोति कलुषं कुहकान्तकारि
ष्णान्तं शिवं सुविमलं तव नाम नाथ।

यस्मादहं त्वशरणो जगदेकगम्य
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो।।४।।

स्वामीजी ने आरती के बाद श्रीरामकृष्ण-प्रणाम सिखाया है। उसमें श्रीरामकृष्णदेव को अवतारों में श्रेष्ठ कहा गया है।

"स्थापकाय च धर्मस्य सर्वधर्मस्वरूपिणे।
अवतारवरिष्ठाय रामकृष्णाय ते नमः।।"

(ग)

परिच्छेद १

श्रीरामकृष्ण की महासमाधि के पश्चात्

(१)

पहला श्रीरामकृष्ण मठ

रविवार, १५ अगस्त १८८६ ई. को श्रीरामकृष्ण, भक्तों को दुःख के असीम समुद्र में बहाकर स्वधाम को चले गये। अविवाहित और विवाहित भक्तगण श्रीरामकृष्ण की सेवा करते समय आपस में जिस स्नेह-सूत्र में बँध गये थे, वह कभी छिन्न होने का न था। एकाएक कर्णधार को न देखकर आरोहियों को भय हो गया है। वे एक दूसरे का मुँह ताक रहे हैं। इस समय उनकी ऐसी अवस्था है कि बिना एक दूसरे को देखे उन्हें चैन नही – मानो उनके प्राण निकल रहे हो। दूसरों से वार्तालाप करने को जी नही चाहता। सब के सब सोचते है – 'क्या अब उनके दर्शन न होंगे? वे तो कह गये है कि व्याकुल होकर पुकारने पर, हृदय की पुकार सुनकर ईश्वर अवश्य दर्शन देगे! वे कह गये हैं – आन्तरिकता होने पर ईश्वर अवश्य सुनेंगे।' जब वे लोग एकान्त में रहते हैं, तब उसी आनन्दमयी मूर्ति की याद आती है। रास्ता चलते हुए भी उन्हीं की स्मृति बनी रहती है; अकेले रोते फिरते हैं। श्रीरामकृष्ण ने शायद इसीलिए मास्टर से कहा था, 'तुम लोग रास्ते में रोते फिरोगे। इसीलिए मुझे शरीर-त्याग करते हुए कष्ट हो रहा है।' कोई सोचते है, 'वे तो चले गये और मै अभी भी बचा हुआ हूँ! इस अनित्य संसार में अब भी रहने की इच्छा! मैं अगर चाहूँ तो शरीर का त्याग कर सकता हूँ, परन्तु करता कहाँ हूँ!'

किशोर भक्तों ने काशीपुर के बगीचे में रहकर दिनरात उनकी सेवा की थी। उनकी महासमाधि के पश्चात्, इच्छा न होते हुए भी, लगभग सब के सब अपने अपने घर चले गये। उनमें से किसी ने भी अभी संन्यासी का बाहरी चिह्न (गेरुआ वस्त्र आदि) धारण नहीं किया है। वे लोग श्रीरामकृष्ण के तिरोभाव के बाद कुछ दिनों तक दत्त, घोष, चक्रवर्ती, गांगुली आदि उपाधियों द्वारा लोगो को अपना परिचय देते रहे; परन्तु उन्हें श्रीरामकृष्ण हृदय से त्यागी कर गये थे।

लाटू, तारक और बूढ़े गोपाल के लिए कोई स्थान न था जहाँ वे वापस जाते। उनसे सुरेन्द्र ने कहा, "भाइयो, तुम लोग अब कहाँ जाओगे? आओ, एक मकान लिया जाय। वहाँ तुम लोग श्रीरामकृष्ण की गद्दी लेकर रहोगे तो हम लोग भी कभी-कभी हृदय की दाह मिटने के लिए वहाँ आ जाया करेगे, अन्यथा संसार मे इस तरह दिन-रात कैसे रहा जायगा? तुम लोग वही जाकर रहो। मै काशीपुर के बगीचे मे श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए जो कुछ दिया करता था, वह अभी भी दूँगा। इस समय उतने से ही रहने और भोजन आदि का खर्च चलाया जायगा।" पहले-पहले दो-एक महीने तक सुरेन्द्र तीस रुपये महीना देते गये। क्रमशः मठ मे दूसरे दूसरे भाई ज्यो ज्यो आकर रहने लगे, त्यो त्यो पचास-साठ रुपये का माहवार खर्च हो गया – सुरेन्द्र देते भी गये। अन्त मे सौ रुपये तक का खर्च हो गया। वराहनगर मे जो मकान लिया गया था, उसका किराया और टैक्स दोनो मिलाकर ग्यारह रुपये पड़ते थे। रसोइये को छः रुपये महीना और बाकी खर्च भोजन आदि का था। बूढ़े गोपाल, लाटू और तारक के घर था ही नही। छोटे गोपाल काशीपुर के बगीचे से श्रीरामकृष्ण की गद्दी और कुल सामान लेकर उसी किराये के मकान मे चले आये। काशीपुर मे जो रसोइया था, उसे यहाँ भी लगाया गया। शरद रात को आकर रहते थे। तारक वृन्दावन गये हुये थे, कुछ दिनो मे वे भी आ गये। नरेन्द्र, शरद, शशी, बाबूराम, निरंजन, काली ये लोग पहले-पहल घर से कभी कभी आया करते थे। राखाल, लाटू, योगीन और काली ठीक उसी समय वृन्दावन गये हुये थे। काली एक महीने के अन्दर, राखाल कई महीने के बाद और योगीन पूरे साल भर बाद लौटे।

कुछ दिनो के पश्चात् नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, शरद, शशी, बाबूराम, योगीन, काली और लाटू वही रह गये, – वे फिर घर नही लौटे। क्रमशः प्रसन्न और सुबोध भी आकर रह गये। गंगाधर सदा मठ मे आया-जाया करते थे। नरेन्द्र को बिना देखे वे रह न सकते थे। बनारस के शिवमन्दिर मे गाया जानेवाला 'जय शिव ओंकार' स्तोत्र उन्होने मठ के भाइयो को सिखलाया था। मठ के भाई 'वाह गुरु की फतह' कहकर बीच-बीच मे जो जयध्वनि करते थे, यह भी उन्ही की सिखलायी हुई थी। तिब्बत से लौटने के पश्चात् वे मठ मे ही रह गये। श्रीरामकृष्ण के और दो भक्त हरि तथा तुलसी सदा नरेन्द्र तथा मठ के दूसरे भाइयो को देखने के लिए आया करते थे। कुछ दिन बाद ये भी मठ मे रह गये।

सुरेन्द्र! तुम धन्य हो! यह पहला मठ तुम्हारे ही हाथो से तैयार हुआ! तुम्हारी ही पवित्र इच्छा से इस आश्रम का संगठन हुआ! तुम्हें यन्त्रस्वरूप करके भगवान श्रीरामकृष्ण ने *अपने मूलमन्त्र कामिनीकांचन-त्याग को मूर्तिमान कर लिया।* कौमारकाल से ही वैराग्यव्रती शुद्धात्मा नरेन्द्रादि भक्तो द्वारा तुमने फिर से हिन्दू धर्म का प्रकाश मनुष्यो के सामने रखा। भाई, तुम्हारा ऋण कौन भूल सकता है? मठ के भाई मातृहीन बच्चों की तरह रहते थे – तुम्हारी प्रतीक्षा किया करते थे कि तुम कब आओगे। आज मकान का किराया

चुकाने में सब रुपये खर्च हो गये हैं – आज भोजन के लिए कुछ भी नहीं बचा – कब तुम आओगे – कब तुम आओगे और आकर अपने भाइयों के भोजन का बन्दोबस्त कर दोगे! तुम्हारे अकृत्रिम स्नेह की याद करके ऐसा कौन है जिसकी आँखो में आँसू न आ जाये!

यह मठ श्रीरामकृष्ण के भक्तो मे वराहनगर मठ के नाम से परिचित हुआ। वहीं श्रीठाकुर-मन्दिर में श्रीगुरुमहाराज भगवान श्रीरामकृष्ण की नित्यसेवा होने लगी। नरेन्द्र आदि सब भक्तो ने कहा, "अब हम लोग संसार-धर्म का पालन न करेगे। श्रीगुरुमहाराज ने कामिनी और कांचन त्याग करने की आज्ञा दी थी, अतएव हम लोग अब किस तरह घर लौट सकते है?"

नित्यपूजन का भार शशी ने लिया। नरेन्द्र गुरु-भाइयो की देख-भाल किया करते थे। सब भाई भी उन्ही का मुँह जोहते थे। नरेन्द्र उनसे कहते थे, "साधना करनी होगी, नही तो ईश्वर नही मिल सकते।" वे और दूसरे गुरुभाई अनेक प्रकार की साधनाएँ करने लगे। वेद, पुराण, तन्त्र इत्यादी मतो के अनुसार अनेक प्रकार की साधनाओ मे वे प्राणपण से लग गये। कभी कभी एकान्त मे वृक्ष के नीचे, कभी अकेले श्मशान मे, कभी गंगा-तट पर साधना करते थे। मठ मे कभी ध्यान करनेवाले कमरे के भीतर अकेले जप और ध्यान करते हुए दिन बिताने लगे। कभी कभी भाइयों के साथ एकत्र कीर्तन करते हुए नृत्य करते रहते। ईश्वर-प्राप्ति के लिए सब लोग, विशेषकर नरेन्द्र, बहुत ही व्याकुल हो गये। वे कभी कभी कहते थे, "उनकी प्राप्ति के लिए क्या मैं प्रायोपवेशन कर डालूँ?"

(२)

नरेन्द्रादि भक्तों का शिवरात्रि-व्रत

आज सोमवार है, २१ फरवरी १८८७। नरेन्द्र और राखाल आदि ने आज शिवरात्रि का उपवास किया है। आज से दो दिन बाद श्रीरामकृष्ण की जन्मतिथि-पूजा होगी।

नरेन्द्र और राखाल आदि भक्तो में इस समय तीव्र वैराग्य है। एक दिन राखाल के पिता राखाल को घर ले जाने के लिए आये थे। राखाल ने कहा, "आप लोग कष्ट करके क्यों आते हैं? मैं यहाँ बहुत अच्छी तरह हूँ। अब आर्शीवाद दीजिये कि आप लोग मुझे भूल जायँ और मै भी आप लोगों को भूल जाऊँ।" इस समय सब लोगों में तीव्र वैराग्य है। सारा समय साधनभजन में ही जाता है। सब का एक ही उद्देश्य है कि किस तरह ईश्वर के दर्शन हों।

नरेन्द्र आदि भक्तगण कभी जप और ध्यान करते हैं, कभी शास्त्रपाठ। नरेन्द्र कहते हैं "गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने जिस निष्काम कर्म का उल्लेख किया है, वह पूजा, जप, ध्यान – यही सब है, सांसारिक कर्म नही।"

आज सबेरे नरेन्द्र कलकत्ता गये हुए है। घर के मुकदमे की पैरवी करनी पड़ती है। अदालत मे गवाह पेश करने पड़ते है।

मास्टर सबेरे नौ बजे के लगभग मठ मे आये। कमरे मे प्रवेश करने पर उन्हे देखकर श्रीयुत तारक मारे आनन्द के शिव के सम्बन्ध मे रचित एक गाना गाने लगे – "ता थैया ता थैया नाचे भोला।"

उनके साथ राखाल भी गाने लगे और गाते हुए दोनो नाचने लगे।

यह गाना नरेन्द्र को लिखे अभी कुछ ही समय हुआ है।

मठ के सब भाइयो ने व्रत किया है। कमरे मे इस समय नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, शरद, शशी, काली, बाबूराम, तारक, हरीश, सीती के गोपाल, सारदा और मास्टर है। योगीन और लाटू वृन्दावन मे है। उन लोगो ने अभी मठ नही देखा।

आगामी शनिवार को शरद, काली, निरंजन और सारदा पुरी जानेवाले है – श्रीजगन्नाथजी के दर्शन करने के लिए।

श्रीयुत शशी दिनरात श्रीरामकृष्ण की सेवा मे रहते है।

पूजा हो गयी। शरद तानपूरा लेकर गा रहे है – "शंकर शिव बम् बम् भोला, कैलासपति महाराज राज।"

नरेन्द्र कलकत्ते से अभी ही लौटे है। अभी उन्होने स्नान भी नही किया। काली नरेन्द्र से मुकदमे की बाते पूछने लगे।

नरेन्द्र – (विरक्तिपूर्वक) – इन सब बातो से तुम्हे क्या काम?

नरेन्द्र मास्टर आदि से बाते कर रहे है। नरेन्द्र कह रहे है – "कामिनी और कांचन का त्याग जब तक न होगा, तब तक कुछ न होगा। कामिनी नरकस्य द्वारम्। जितने आदमी है, सब स्त्रियो के वश मे है। शिव और कृष्ण की बात और है। शक्ति को शिव ने दासी बनाकर रखा था। श्रीकृष्ण ने संसार-धर्म का पालन तो किया था, परन्तु वे कैसे निर्लिप्त थे! उन्होने वृन्दावन कैसे एकदम छोड़ दिया!"

राखाल – और द्वारका का भी उन्होने कैसा त्याग किया!

गंगा-स्नान करके नरेन्द्र मठ लौटे। हाथ मे भीगी धोती है और अँगौछा। सारदा ने आकर नरेन्द्र को साष्टांग प्रणाम किया। उन्होने भी शिवरात्रि के उपलक्ष्य मे उपवास किया है। अब वे गंगा-स्नान के लिए जानेवाले है। नरेन्द्र ने पूजा-घर मे जाकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया और फिर आसन लगाकर कुछ समय तक ध्यान करते रहे।

भवनाथ की बाते हो रही है। भवनाथ ने विवाह किया है। इसलिए उन्हें नौकरी करनी पड़ती है।

नरेन्द्र कह रहे हैं, 'वे तो सब संसारी कीट हैं।'

दिन ढलने लगा। शिवरात्रि की पूजा के लिए व्यवस्था हो रही है। बेल की लकड़ी और बिल्वदल इकट्ठे किये गये। पूजा के बाद होम होगा।

शाम हो गयी। श्रीठाकुरघर में धूना देकर शशी दूसरे कमरों में भी धूना ले गये। हरएक देव-देवी के चित्र के पास प्रणाम करके बड़ी भक्ति के साथ उनका नाम ले रहे हैं। "श्रीश्रीगुरुदेवाय नमः। श्रीश्रीकालिकायै नमः। श्रीश्रीजगन्नाथ-सुभद्रा -बलरामेभ्यो नमः। श्रीश्रीषड्भुजाय नमः। श्रीश्रीराधावल्लभाय नमः। श्रीनित्यानन्दाय, श्रीअद्वैताय, श्रीभक्तेभ्यो नमः। श्रीगोपालाय, श्रीश्रीयशोदायै नमः। श्रीरामाय, श्रीलक्ष्मणाय, श्रीविश्वामित्राय नमः।"

मठ के बिल्ववृक्ष के नीचे पूजा का आयोजन हो रहा है। रात के नौ बजे का समय होगा। अभी पहली पूजा होगी, साढ़े ग्यारह बजे दूसरी। चारों पहर चार पूजाएँ होंगी। नरेन्द्र, राखाल, शरद, काली, सीतीं के गोपाल आदि मठ के सब भाई बेल के नीचे उपस्थित हो गये। भूपति और मास्टर भी आये हुए हैं। मठ के भाइयों में से ऐक व्यक्ति पूजा कर रहा है।

काली गीता-पाठ कर रहे हैं – सैन्यदर्शन, – सांख्ययोग, – कर्मयोग। पाठ के साथ ही बीच बीच में नरेन्द्र के साथ विचार चल रहा है।

काली – मैं ही सब कुछ हूँ। सृष्टि, स्थिति और प्रलय मैं कर रहा हूँ।

नरेन्द्र – मैं सृष्टि कहाँ कर रहा हूँ? एक दूसरी ही शक्ति मुझसे करा रही है। ये अनेक प्रकार के कार्य – यहाँ तक कि चिन्ता भी वही करा रही है।

मास्टर – (स्वगत) – श्रीरामकृष्ण कहते थे, 'जब तक कोई यह सोचता है कि मैं ध्यान कर रहा हूँ, तब तक वह आदिशक्ति के ही राज्य में है। शक्ति को मानना ही होगा।'

काली चुपचाप थोड़ी देर तक चिन्तन करते रहे। फिर कहने लगे, "जिन कार्यों की तुम चर्चा कर रहे हो, वे सब मिथ्या हैं – और इतना ही नहीं, स्वयं 'चिन्तन' तक मिथ्या है। मुझे तो इन चीजों के विचार मात्र पर हँसी आती है।"

नरेन्द्र – 'सोऽहम्' के कहने पर जिस 'मैं' का ज्ञान होता है, वह यह 'मैं' नहीं है। मन, देह, यह सब छोड़ देने पर जो कुछ रहता है, वही वह 'मैं' है।

गीता-पाठ हो जाने पर काली शान्ति-पाठ कर रहे हैं – 'ॐ शान्तिः! शान्तिः! शान्तिः!'

अब नरेन्द्र आदि सब भक्त खड़े होकर नृत्य-गीत करते हुए बिल्ववृक्ष की बार बार परिक्रमा करने लगे। बीच बीच में एक स्वर से 'शिव गुरु! शिव गुरु!' इस मन्त्र का उच्चारण कर रहे हैं।

कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी, रात्रि गम्भीर हो रही है। चारों ओर अन्धकार छाया हुआ है,

जीव-जन्तु सब मौन हैं। गेरुआ वस्त्र पहने हुए इन आकौमारविरागी भक्तों के कण्ठ से उच्चारित 'शिव गुरु! शिव गुरु!' की महामन्त्रध्वनि मेघ की तरह गम्भीर रव से अनन्त आकाश में गूँजकर अखण्ड सच्चिदानन्द में लीन होने लगी।

पूजा समाप्त हो गयी। उषा की लाली फैलने ही वाली है। नरेन्द्र आदि भक्तों ने इस ब्राह्म मुहूर्त में गंगास्नान किया।

सबेरा हो गया। स्नान करके भक्तगण मठ में श्रीठाकुरमन्दिर में जाकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके 'दानवों के कमरे' में आकर एकत्र होने लगे। नरेन्द्र ने सुन्दर नया गेरुआ वस्त्र धारण किया है। वस्त्र के सौन्दर्य के साथ उनके श्रीमुख और देह से तपस्यासम्भूत अपूर्व स्वर्गीय पवित्र ज्योति एक हो रही है। वदनमण्डल तेजपूर्ण और साथ ही प्रेमरंजित हो रहा है। मानो अखण्ड सच्चिदानन्द सागर के एक स्फुट अंश ने ज्ञान और भक्ति की शिक्षा देने के लिए शरीर-धारण किया हो – अवतार-लीला की सहायता के लिए। जो देख रहा है, वह फिर आँखें नही फेर सकता। नरेन्द्र की आयु ठीक चौबीस वर्ष की है। ठीक इसी आयु में श्रीचैतन्य ने संसार छोड़ा था।

भक्तों के व्रत के पारण के लिए श्रीयुत बलराम ने कल ही फल और मिष्टान्न आदि भेज दिये थे। राखाल आदि दो-एक भक्तों के साथ नरेन्द्र कमरे में खड़े हुए कुछ जलपान कर रहे हैं। दो-एक फल खाते ही आनन्दपूर्वक कह रहे हैं – "धन्य हो बलराम – तुम धन्य हो!" (सब हँसते हैं)

अब नरेन्द्र बालक की तरह हँसी कर रहे हैं। रसगुल्ला मुख में डालकर बिलकुल निःस्पन्द हो गये। नेत्र निर्निमेष हैं। एक भक्त नरेन्द्र की अवस्था देखकर हँसी में उन्हें पकड़ने चले कि कहीं वे गिर न जायँ।

कुछ देर बाद – तब भी रसगुल्ले को मुख में ही रखे हुए – नरेन्द्र पलकें खोलकर कह रहे हैं – "मेरी – अवस्था-अच्छी-है – !"

(सब लोग ठहाका मारकर हँसने लगे)

सब लोगों को अब मिठाई दी गयी। मास्टर यह आनन्द की हाट देख रहे हैं। भक्तगण हर्षपूर्वक जयध्वनि कर रहे हैं –

"जय श्रीगुरुमहाराज! जय श्रीगुरुमहाराज!"

□□□

परिच्छेद २

वराहनगर मठ

(१)

नरेन्द्रादि भक्तों की साधना। नरेन्द्र की पूर्वकथा

आज शुक्रवार है, २५ मार्च, १८८७ ई.। मास्टर मठ के भाइयो को देखने के लिए आये है। साथ देवेन्द्र भी है। मास्टर प्राय: आया करते है और कभी कभी रह भी जाते है। गत शनिवार को वे आये थे, शनि, रवि और सोम, तीन दिन रहे थे। मठ के भाइयो मे, खासकर नरेन्द्र मे, इस समय तीव्र वैराग्य है। इसीलिए मास्टर उत्सुकतापूर्वक उन्हे देखने के लिए आते है।

रात हो गयी है। आज रात को मास्टर मठ मे ही रहेगे।

सन्ध्या हो जाने पर शशी ने ईश्वर के मधुर नाम का उच्चारण करते हुए ठाकुरघर मे दीपक जलाया और धूप-धूना सुलगाने लगे। धूपदान लेकर कमरे मे जितने चित्र है, सब के पास गये और प्रणाम किया।

फिर आरती होने लगी। आरती वे ही कर रहे है। मठ के सब भाई, मास्टर तथा देवेन्द्र, सब लोग हाथ जोड़कर आरती देख रहे है, साथ हा साथ आरती गा रहे हैं – "जय शिव ओकार, भज शिव ओकार! ब्रह्मा विष्णु सदाशिव! हर हर हर महादेव!"

नरेन्द्र और मास्टर बातचीत कर रहे है। नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के पास जाने के समय की बहुतसी बाते कह रहे है। नरेन्द्र की उम्र इस समय २४ साल २ महीने की होगी।

नरेन्द्र – पहले-पहल जब मै गया, तब एक दिन भावावेश मे उन्होंने कहा, 'तू आया है!'

"मैने सोचा, यह कैसा आश्चर्य है! ये मानो मुझे बहुत दिनो से पहचानते है। फिर उन्होने कहा, 'क्या तू कोई ज्योति देखता है?'

"मैने कहा, 'जी हॉ। सोने से पहले, दोनों भौहों के बीच की जगह के ठीक सामने एक ज्योति घूमती रहती है।' "

मास्टर – क्या अब भी देखते हो?

नरेन्द्र – पहले बहुत देखा करता था। यदु मल्लिक के भोजनागार में मुझे छूकर न

जाने उन्होंने मन ही मन क्या कहा, मैं अचेत हो गया था। उसी नशे में मै एक महीने तक रहा था।

"मेरे विवाह की बात सुनकर माँ काली के पैर पकड़कर वे रोये थे। रोते हुए कहा था, 'माँ, वह सब फेर दे – माँ, नरेन्द्र कहीं डूब न जाय!'

"जब पिताजी का देहान्त हो गया, और माँ और भाइयो को भोजन तक की कठिनाई हो गयी तब मैं एक दिन अन्नदा गुहा के साथ उनके पास गया था।

"उन्होंने अन्नदा गुहा से कहा, 'नरेन्द्र के पिताजी का देहान्त हो गया है, घरवालों को बड़ा कष्ट हो रहा है, इस समय अगर इष्टमित्र उसकी सहायता करें तो बड़ा अच्छा हो।'

"अन्नदा गुहा के चले जाने पर मैं उनसे कुछ रुष्टता से कहने लगा, 'क्यों आपने उनसे ये बातें कही?' यह सुनकर वे रोने लगे थे। कहा, 'अरे! तेरे लिए मैं द्वार-द्वार भीख भी माँग सकता हूँ!'

"उन्होंने प्यार करके हम लोगों को वशीभूत कर लिया था। आप क्या कहते है?"

मास्टर – इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। उनके स्नेह का कोई कारण नही था।

नरेन्द्र – मुझसे एक दिन अकेले में उन्होंने एक बात कही। उस समय और कोई न था। यह बात आप और किसी से न कहियेगा।

मास्टर – नहीं। हाँ, क्या कहा था?

नरेन्द्र – उन्होंने कहा, 'सिद्धियों के प्रयोग करने का अधिकार मैंने तो छोड़ दिया है, परन्तु तेरे भीतर से उनका प्रयोग करूँगा – क्यों, तेरा क्या कहना है?' मैंने कहा, 'नहीं, ऐसा तो न होगा।'

"उनकी बात मैं उड़ा देता था। आपने उनसे सुना होगा। वे ईश्वर के रूपों के दर्शन करते थे, इस बात पर मैंने कहा था, 'यह सब मन की भूल है।'

"उन्होंने कहा, 'अरे मैं कोठी पर चढ़कर जोर जोर से पुकारकर कहा करता था – अरे, कहाँ है कौन भक्त, चले आओ, तुम्हें न देखकर मेरे प्राण निकल रहे है। माँ ने कहा था, – 'अब भक्त आयेंगे,' अब देख, सब बातें मिल रही है।'

"तब मैं और क्या कहता, चुप हो रहा।

नरेन्द्र की उच्च अवस्था

"एक दिन कमरे के दरवाजे बन्द करके उन्होंने देवेन्द्रबाबू और गिरीशबाबू से मेरे सम्बन्ध में कहा था, 'उसके घर का पता अगर उसे बता दिया जायगा, तो फिर वह देह नहीं रख सकता।' "

मास्टर – हाँ, यह तो हमने सुना है। हम लोगों से भी यह बात उन्होंने कई बार कही है। काशीपुर में रहते हुए एक बार तुम्हारी वही अवस्था हुई थी, क्यों?

नरेन्द्र – उस अवस्था में मुझे ऐसा जान पड़ा कि मेरे शरीर है ही नहीं; केवल मुँह देख रहा हूँ। श्रीरामकृष्ण ऊपर के कमरे में थे। मुझे नीचे यह अवस्था हुई। उस अवस्था के होते ही मैं रोने लगा – यह मुझे क्या हो गया? बूढ़े गोपाल ने ऊपर आकर उनसे कहा, 'नरेन्द्र रो रहा है।'

"जब उनसे मेरी मुलाकात हुई तब उन्होंने कहा, 'अब तेरी समझ में आया। पर कुंजी मेरे पास रहेगी।' मैंने कहा, 'मुझे यह क्या हुआ?'

"दूसरे भक्तों की ओर देखकर उन्होंने कहा, 'जब वह अपने को जान लेगा, तब देह नहीं रखेगा। मैंने उसे भुला रखा है।' एक दिन उन्होंने कहा था, 'तू अगर चाहे तो हृदय में तुझे कृष्ण दिखायी दें।' मैने कहा, 'मैं कृष्ण-विष्ण नहीं मानता।'

(नरेन्द्र और मास्टर हँसते हैं)

"एक अनुभव मुझे और हुआ है। किसी किसी स्थान पर वस्तु या मनुष्य को देखने पर ऐसा जान पड़ता है जैसे पहले मैंने उन्हें कभी देखा हो, पहचाने हुए-से दीख पड़ते हैं। अमहर्स्ट स्ट्रीट में जब मैं शरद के घर गया, शरद से मैंने कहा, उस घर का सर्वांश जैसे मैं पहचानता हूँ, ऐसा भाव पैदा हो रहा है। घर के भीतर के रास्ते, कमरे, जैसे बहुत दिनों के पहचाने हुए है।

"मैं अपनी इच्छानुसार काम करता था, वे कुछ कहते न थे। मैं साधारण ब्राह्मसमाज का मेम्बर बना था, आप जानते हैं न?"

मास्टर – हाँ, मै जानता हूँ।

नरेन्द्र – वे जानते थे कि वहाँ स्त्रियाँ भी जाया करती हैं। स्त्रियों को सामने रखकर ध्यान हो नही सकता। इसलिए इस प्रथा की वे निन्दा किया करते थे। परन्तु मुझे वे कुछ न कहते थे। एक दिन सिर्फ इतना ही कहा कि राखाल से ये सब बातें न कहना कि तु मेम्बर बन गया है, नहीं तो फिर उसे भी जाने की इच्छा होगी।

मास्टर – तुम्हारा मन ज्यादा जोरदार है, इसीलिए उन्होंने तुम्हें मना नहीं किया।

नरेन्द्र – बड़े दुःख और कष्टों के झेलने के बाद यह अवस्था हुई है। मास्टर महाशय, आपको दुःख-कष्ट नही मिला – मैं मानता हूँ कि बिना दुःख-कष्ट के हुए कोई ईश्वर को आत्मसमर्पण नहीं करता –

"अच्छा, अमुक व्यक्ति कितना नम्र और निरहंकार है! उसमें कितनी विनय है! क्या आप मुझे बता सकते हैं कि मुझमें किस तरह विनय आये?"

मास्टर – उन्होंने तुम्हारे अहंकार के सम्बन्ध में बतलाया था कि यह किसका अहंकार है।

नरेन्द्र – *इसका क्या अर्थ है?*

मास्टर – राधिका से एक सखी कह रही थी, 'तुझे अहंकार हो गया है, इसीलिए

तूने कृष्ण का अपमान किया है।' इसका उत्तर एक दूसरी सखी ने दिया। उसने कहा, 'हाँ, राधिका को अहंकार तो हुआ है परन्तु यह अहंकार है किसका?' – अर्थात्, श्रीकृष्ण मेरे पति हैं – यह अहंकार है, – इस 'अहं' भाव को श्रीकृष्ण ने ही उसमें रखा है। श्रीरामकृष्ण के कहने का अर्थ यह है कि ईश्वर ने ही तुम्हारे भीतर यह अहंकार भर रखा है, अपना बहुतसा कार्य करायेंगे, इसलिए।

नरेन्द्र – परन्तु मेरा 'अहं' पुकारकर कहता है कि मुझे कोई क्लेश नही है।

मास्टर – (सहास्य) – हाँ, तुम्हारी इच्छा की बात है।

(दोनों हँसते हैं)

अब दूसरे दूसरे भक्तों की बात होने लगी – विजय गोस्वामी आदि की।

नरेन्द्र – विजय गोस्वामी की बात पर उन्होंने कहा था, 'यह दरवाजा ठेल रहा है।'

मास्टर – अर्थात् अभी तक घर के भीतर घुस नही सके।

"परन्तु श्यामपुकुरवाले घर में विजय गोस्वामी ने श्रीरामकृष्ण से कहा था, 'मैने आपको ढाके में इसी तरह देखा था, इसी शरीर में।' उस समय तुम भी वहाँ थे।

नरेन्द्र – देवेन्द्रबाबू, रामबाबू ये लोग भी संसार छोड़ेंगे। बड़ी चेष्टा कर रहे है। रामबाबू ने छिपे तौर पर कहा है, दो साल बाद संसार छोड़ेंगे।

मास्टर – दो साल बाद? शायद लड़के-बच्चों का बन्दोबस्त हो जाने पर?

नरेन्द्र – और यह भी है कि घर भाड़े से उठा देंगे और एक छोटासा मकान खरीद लेंगे। उनकी लड़की के विवाह की व्यवस्था अन्य सम्बन्धी कर लेंगे।

मास्टर – नित्यगोपाल की अच्छी अवस्था है – क्यों?

नरेन्द्र – क्या अवस्था है?

मास्टर – कितना भाव होता है! – ईश्वर का नाम लेते ही आँसू बह चलते हैं – रोमांच होने लगता है!

नरेन्द्र – क्या भाव होने से ही बड़ा आदमी हो गया?

"काली, शरद, शशी, सारदा – ये सब नित्यगोपाल से बहुत बड़े आदमी है। इनमे कितना त्याग है! नित्यगोपाल उनको (श्रीरामकृष्ण को) मानता कहाँ है?"

मास्टर – उन्होंने कहा भी है कि वह यहाँ का आदमी नहीं है। परन्तु श्रीरामकृष्ण पर भक्ति तो वह खूब करता था, मैंने अपनी आँखों से देखा है।

नरेन्द्र – क्या देखा है आपने?

मास्टर – जब मैं पहले-पहल दक्षिणेश्वर जाने लगा था, तब श्रीरामकृष्ण के कमरे से भक्तों का दरबार जाने पर, एक दिन बाहर आकर मैंने देखा – नित्यगोपाल घुटने टेककर बगीचे की लाल सुरखीवाली राह पर श्रीरामकृष्ण के सामने हाथ जोड़े हुए था, श्रीरामकृष्ण खड़े थे। चाँदनी बड़ी साफ थी। श्रीरामकृष्ण के कमरे के ठीक उत्तर तरफ जो

बरामदा है उसी के उत्तर ओर लाल सुरखीवाला रास्ता है। उस समय वहाँ और कोई न था। जान पड़ा, नित्यगोपाल शरणागत हुआ है, और श्रीरामकृष्ण उसे आश्वासन दे रहे है।

नरेन्द्र – मैने नही देखा।

मास्टर – और बीच बीच मे श्रीरामकृष्ण कहते थे, उसकी परमहंस अवस्था है। परन्तु यह भी मुझे खूब याद है, श्रीरामकृष्ण ने उसे स्त्री भक्तो के पास जाने की मनाही की थी। बहुत बार उसे सावधान कर दिया था।

नरेन्द्र – और उन्होने मुझसे कहा था, 'उसकी अगर परमहस अवस्था है तो धन के पीछे क्यो भटकता है?' और उन्होने यह भी कहा था, 'वह यहाँ का आदमी नही है। जो हमारे अपने आदमी है, वे यहाँ सदा आते रहेगे।'

"इसीलिए तो वे× बाबू पर नाराज होते थे। इसलिए कि वह सदा नित्यगोपाल के साथ रहता था, और उनके पास ज्यादा आता न था।

"मुझसे उन्होने कहा था, 'नित्यगोपाल सिद्ध है – वह एकाएक सिद्ध हो गया है – आवश्यक तैयारी के बिना। वह यहाँ का आदमी नही है, अगर अपना होता तो उसे देखने के लिए मै कुछ भी तो रोता, परन्तु उसके लिए मै नही रोया।'

"कोई-कोई उसे नित्यानन्द कहकर प्रचार कर रहे है। परन्तु उन्होने (श्रीरामकृष्ण ने) कितनी ही बार कहा है, 'मै ही अद्वैत, चैतन्य और नित्यानन्द हूँ। एक ही आधार मे मै उन तीनो का समष्टि-रूप हूँ।"

(२)

नरेन्द्र की पूर्वकथा

मठ मे काली तपस्वी के कमरे मे दो भक्त बैठे है। उनमे एक त्यागी है, एक गृही। दोनो २४-२५ साल की उम्र के है। दोनो मे बातचीत हो रही है, इसी समय मास्टर भी आ गये। वे मठ मे तीन दिन रहेगे।

आज 'गुड फ्रायडे' है, ८ अप्रैल १८८७, शुक्रवार। इस समय दिन के आठ बजे होगे।

मास्टर ने आते ही ठाकुर-घर मे जाकर श्रीरामकृष्ण के चित्र को प्रणाम किया। फिर नरेन्द्र और राखाल आदि भक्तो से मिलकर उसी कमरे मे आकर बैठे, और उन दोनो भक्तो से प्रीति-सम्भाषण के अनन्तर उनकी बातचीत सुनने लगे। गृही भक्त की इच्छा संसार त्याग करने की है। मठ के भाई उन्हे समझा रहे है कि वे संसार न छोड़ें।

त्यागी भक्त – कर्म जो कुछ है, कर डालो। करने से फिर सब समाप्त हो जायेगा।

"एक ने सुना था कि उसे नरक जाना होगा। उसने एक मित्र से पूछा कि नरक कैसा है। मित्र एक मिट्टी का ढेला लेकर नरक का नक्शा खींचने लगा। नरक का नक्शा उसने

खींचा नहीं कि वह आदमी तुरन्त उस पर लोटने लगा, और बोला, 'चलो, मेरा नरक का भोग हो गया।' "

गृही भक्त – मुझे संसार अच्छा नहीं लगता। अहा! तुम लोगों की कैसी सुन्दर अवस्था है!

त्यागी भक्त – तू इतना बकता क्यों है? अगर निकलना है तो निकल आ; नहीं तो मजे से एक बार भोग कर ले।

नौ बजने के बाद शशी ने श्रीठाकुरघर में पूजा की।

ग्यारह का समय हुआ। मठ के भाई क्रमशः गंगा-स्नान करके आ गये। स्नान के पश्चात् दूसरा शुद्ध वस्त्र धारण कर, हरएक संन्यासी श्रीठाकुरघर मे श्रीरामकृष्ण के चित्र को प्रणाम करके ध्यान करने लगा।

भोग के पश्चात् मठ के भाइयों ने प्रसाद पाया। साथ में मास्टर ने भी प्रसाद पाया।

सन्ध्या हो गयी। धूनी देने के पश्चात् आरती हुई। 'दानवों के कमरे' में राखाल, शशी, बूढ़े गोपाल और हरीश बैठे हुए हैं। मास्टर भी हैं। राखाल श्रीरामकृष्ण का भोग सावधानी से रखने के लिए कह रहे हैं।

राखाल – (शशी आदि से) – एक दिन मैंने उनके जलपान करने से पहले कुछ खा लिया था। उन्होंने मेरी ओर देखकर कहा – 'तेरी ओर मुझसे देखा नहीं जाता। क्यों तूने ऐसा काम किया?' – मैं रोने लगा।

बूढ़े गोपाल – मैंने काशीपुर में उनके भोजन पर जोर से साँस छोड़ी थी, तब उन्होंने कहा, 'यह भोजन रहने दो।'

बरामदे में मास्टर नरेन्द्र के साथ टहल रहे हैं। दोनों में तरह तरह की बातचीत हो रही है। नरेन्द्र ने कहा, 'मैं तो कुछ भी न मानता था।'

मास्टर – क्या? ईश्वर के रूप?

नरेन्द्र – वे जो कुछ कहते थे, पहले-पहल मैं बहुतसी बातें न मानता था। एक दिन उन्होंने कहा था, 'तो फिर तू आता क्यों है।'

"मैंने कहा, 'आपको देखने लिए, आपकी बातें सुनने के लिए नहीं।' "

मास्टर – उन्होंने क्या कहा था?

नरेन्द्र – वे बहुत प्रसन्न हुए थे।

दूसरे दिन शनिवार था, ९ अप्रैल १८८७। श्रीरामकृष्ण के भोग के पश्चात् मठ के भाइयों ने भोजन किया, फिर वे जरा विश्राम करने लगे। नरेन्द्र और मास्टर, मठ से सटा हुआ पश्चिम ओर जो बगीचा है, वहीं एक पेड़ के नीचे एकान्त में बैठे हुए बातचीत कर रहे हैं। नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध में अपने अनुभव बता रहे हैं। नरेन्द्र की आयु २४ वर्ष की है और मास्टर की ३२ वर्ष की।

मास्टर – पहले-पहल जिस दिन उनसे तुम्हारी मुलाकात हुई थी, वह दिन तुम्हें अच्छी तरह याद है?

नरेन्द्र – मुलाकात दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में हुई थी, उन्हीं के कमरे में। उस दिन मैंने दो गाने गाये थे।

गाना – (भावार्थ) – ऐ मन, अपने स्थान में लौट चलो। संसार में विदेशी की तरह अकारण क्यों घूम रहे हो? ...

गाना – (भावार्थ) – क्या मेरे दिन व्यर्थ ही बीत जायेंगे? हे नाथ, मैं दिन-रात आशा-पथ पर आँख गड़ाये हुए हूँ।...

मास्टर – गाना सुनकर उन्होंने क्या कहा?

नरेन्द्र – उन्हे भावावेश हो गया था। रामबाबू आदि और और लोगों से उन्होंने पूछा, 'यह लड़का कौन है? अहा, कितना सुन्दर गाता है' मुझसे उन्होंने फिर आने के लिए कहा।

मास्टर – फिर कहाँ मुलाकात हुई?

नरेन्द्र – फिर राजमोहन के यहाँ मुलाकात हुई थी। इसके बाद दक्षिणेश्वर में; उस समय मुझे देखकर भावावेश में मेरी स्तुति करने लगे थे। स्तुति करते हुए कहने लगे, 'नारायण! तुम मेरे लिए शरीर धारण करके आये हो।'

"परन्तु ये बातें किसी से कहियेगा नहीं।"

मास्टर – और उन्होंने क्या कहा?

नरेंद्र – उन्होंने कहा, "तुम मेरे लिए ही शरीर धारण करके आये हो। मैंने माँ से कहा था, 'माँ, काम-कांचन का त्याग करनेवाले शुद्धात्मा भक्तों के बिना संसार में कैसे रहूँगा!' " उन्होंने फिर मुझसे कहा, "तूने रात को मुझे आकर उठाया, और कहा, 'मै आ गया।' " परन्तु मैं यह सब कुछ नही जानता था, मैं तो कलकत्ते के मकान में खूब खर्राटे ले रहा था।

मास्टर – अर्थात्, तुम एक ही समय Present (हाजिर) भी हो और Absent (गैरहाजिर) भी हो, जैसे ईश्वर साकार भी हैं और निराकार भी।

नरेन्द्र के प्रति लोक-शिक्षा का आदेश

नरेन्द्र – परन्तु यह बात किसी दूसरे से न कहियेगा।

"काशीपुर में उन्होंने मेरे भीतर शक्ति का संचार किया।"

मास्टर – जिस समय तुम काशीपुर में पेड़ के नीचे धूनी जलाकर बैठते थे, क्यों?

नरेन्द्र – हाँ। काली से मैंने कहा, 'जरा मेरा हाथ पकड़ तो सही।' काली ने कहा 'न जाने तुम्हारी देह छूते ही कैसा एक धक्का मुझे लगा।'

"यह बात हम लोगो मे किसी से आप न कहेगे – प्रतिज्ञा कीजिये।"

मास्टर – तुम्हारे भीतर शक्ति-संचार करने का उनका खास मतलब है। तुम्हारे द्वारा उनके बहुतसे कार्य होगे। एक दिन एक कागज मे लिखकर उन्होने कहा था, 'नरेन्द्र शिक्षा देगा।'

नरेन्द्र – परन्तु मैने कहा था, 'यह सब मुझसे न होगा।'

"इस पर उन्होने कहा, 'तेरे हाड करेगे।' शरद का भार उन्होने मुझे सौपा है। वह व्याकुल है। उसकी कुण्डलिनी जाग्रत हो गयी है।"

मास्टर – इस समय चाहिए कि सड़े पत्ते न जमने पाये। श्रीरामकृष्ण कहते थे, शायद तुम्हे याद हो, कि तालाब मे मछलियो के बिल रहते है, वहाँ मछलियाँ आकर विश्राम करती है। जिस बिल में सड़े पत्ते आकर जम जाते है, उसमे फिर मछली नही आती।

नरेन्द्र – मुझे नारायण कहते थे।

मास्टर – तुम्हे नारायण कहते थे, यह मै जानता हूँ।

नरेन्द्र – जब वे बीमार थे, तब शौच का पानी मुझसे नही लेते थे।

"काशीपुर मे उन्होने कहा था, 'अब कुंजी मेरे हाथो मे है। वह अपने को जान लेगा तो छोड़ देगा।' "

मास्टर – जिस दिन तुम्हारी निर्विकल्प समाधि की अवस्था हुई थी – क्यो?

नरेन्द्र – हाँ। उस समय मुझे जान पड़ा था कि मेरे शरीर नही है, केवल मुँह भर है। घर मे मै कानून पढ रहा था परीक्षा देने के लिए। तब एकाएक याद आया कि यह मै क्या कर रहा हूँ।

मास्टर – जब श्रीरामकृष्ण काशीपुर मे थे?

नरेन्द्र – हाँ। पागल की तरह मै घर से निकल आया। उन्होने पूछा, 'तू क्या चाहता है?' मैने कहा, 'मै समाधिमग्न होकर रहूँगा।' उन्होने कहा, 'तेरी बुद्धि तो बड़ी हीन है। समाधि के पार जा, समाधि तो तुच्छ चीज है।'

मास्टर – हाँ, वे कहते थे ज्ञान के बाद विज्ञान है। छत पर चढ़कर सीढ़ियो से फिर आना-जाना।

नरेन्द्र – काली ज्ञान-ज्ञान चिल्लाता है। मै उसे डाँटता हूँ। ज्ञान क्या इतना सहज है? पहले भक्ति तो पके।

"उन्होने (श्रीरामकृष्ण ने) तारकबाबू से दक्षिणेश्वर मे कहा था, 'भाव और भक्ति को ही इति न समझ लेना।' "

मास्टर – तुम्हारे सम्बन्ध मे उन्होने और क्या क्या कहा था, बताओ तो।

नरेन्द्र – मेरी बात पर वे इतना विश्वास करते थे कि जब मैने कहा, 'आप रूप आदि

जो कुछ देखते है, यह सब मन की भूल है,' तब माँ (जगन्माता काली) के पास जाकर उन्होने पूछा है, 'माँ, नरेन्द्र इस तरह कह रहा है, तो क्या यह सब भूल है?' फिर उन्होने मुझसे कहा, 'माँ ने कहा है, यह सब सत्य है।'

"वे कहते थे, शायद आपको याद हो, 'तेरा गाना सुनने पर (छाती पर हाथ रखकर) इसके भीतर जो है, वे साँप की तरह फन खोलकर स्थिर भाव से सुनते रहते है।'

"परन्तु मास्टर महाशय, उन्होने इतना तो कहा, परन्तु मेरा बतलाइये क्या हुआ?"

मास्टर – इस समय तुम शिव बने हुए हो, पैसे लेने का अधिकार तो है ही नही। श्रीरामकृष्ण की कहानी याद है न?

नरेन्द्र – कौनसी कहानी? जरा कहिये।

मास्टर – कोई बहुरूपिया शिव बना था। जिनके यहाँ वह गया था, वे एक रुपया देने लगे। उसने रुपया नही लिया, घर लौटकर हाथ-पैर धोकर उसने बाबू के यहाँ आकर रुपया माँगा। बाबू के घरवालो ने कहा, 'उस समय तुमने रुपया क्यो नही लिया?' उसने कहा, 'तब तो मै शिव बना था – संन्यासी था – रुपया कैसे छूता?'

यह बात सुनकर नरेन्द्र खूब हँसे।

मास्टर – इस समय तुम मानो एक वैद्य हो। सब भार तुम्ही पर है। मठ के भाइयो को तुम मनुष्य बनाओगे।

नरेन्द्र – हम लोग जो साधन-भजन कर रहे है, यह उन्ही की आज्ञा से। परन्तु आश्चर्य है, रामबाबू साधना की बात पर हम लोगो को ताना मारते है। वे कहते है, 'जब उनके प्रत्यक्ष दर्शन कर लिए तब साधना कैसी?'

मास्टर – जिसका जैसा विश्वास, वह वैसा ही करे।

नरेन्द्र – हम लोगो को तो उन्होने साधना करने की आज्ञा दी है।

नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के प्यार की बाते करने लगे।

नरेन्द्र – मेरे लिए माँ काली से उन्होने न जाने कितनी बाते कही। जब मुझे खाने को नही मिल रहा था, पिताजी का देहान्त हो गया था – घरवाले बड़े कष्ट मे थे, तब मेरे लिए माँ काली से उन्होने रुपयो की प्रार्थना की थी।

मास्टर – यह मुझे मालूम है।

नरेन्द्र – रुपये नही मिले। उन्होने कहा, 'माँ ने कहा है, मोटा कपड़ा और रूखा-सूखा भोजन मिल सकता है – रोटी-दाल मिल सकती है।'

"मुझे इतना प्यार तो करते थे, परन्तु जब कोई अपवित्र भाव मुझमे आता था तब उसे वे तुरन्त ताड़ जाते थे। जब मै अन्नदा के साथ घूमता था – कभी कभी बुरे आदमियो के साथ पड़ जाता था – और तब यदि उनके पास मै आता था तो मेरे हाथ का वे कुछ न खाते थे। मुझे स्मरण है, एक बार उनका हाथ कुछ उठा था, परन्तु फिर आगे न बढ़ा।

उनकी बीमारी के समय एक दिन ऐसा होने पर उनका हाथ मुँह तक गया और फिर रुक गया। उन्होने कहा, 'अब भी तेरा समय नही आया।'

"कभी-कभी मुझे बड़ा अविश्वास होता है। रामबाबू के यहाँ मुझे जान पड़ा कि कही कुछ नही है। मानो ईश्वर-फीश्वर कही कुछ नही।"

मास्टर – वे कहते थे कि कभी कभी उन्हें भी ऐसा ही होता था।

दोनों चुप है। मास्टर कहने लगे – "तुम लोग धन्य हो! दिन-रात उनके चिन्तन में रहते हो।" नरेन्द्र ने कहा – "कहाँ? हममे इतनी व्याकुलता कहाँ कि ईश्वरदर्शन न होने के दुःख से शरीर-त्याग कर सके?"

रात हो गयी है। निरंजन को पुरीधाम से लौटे कुछ ही समय हुआ है। उन्हे देखकर मठ के भाई और मास्टर प्रसन्न हो रहे है। वे पुरीयात्रा का हाल कहने लगे। निरंजन की उम्र इस समय २५-२६ साल की होगी। सन्ध्या-आरती के हो जानेपर कोई ध्यान करने लगे। निरंजन के लौटने पर बहुतसे भाई बड़े घर में आकर बैठे। सत्प्रसंग होने लगा। रात के नौ बजे के बाद शशी ने श्रीरामकृष्ण को भोगार्पण करके उन्हे शयन कराया।

मठ के भाई निरंजन को साथ लेकर भोजन करने बैठे। उस दिन भोजन में रोटियाँ थी, एक तरकारी, जरासा गुड़ और श्रीरामकृष्ण के नैवेद्य की थोड़ीसी खीर।

□□□

परिच्छेद ३

भक्तों के हृदय में श्रीरामकृष्ण

(१)

नरेन्द्रादि का तीव्र वैराग्य

आज वैशाखी पूर्णिमा है। शनिवार, ७ मई १८८७।

गुरुप्रसाद चौधरी लेन, कलकत्ता के एक मकान मे नरेन्द्र और मास्टर बैठे हुए वार्तालाप कर रहे है। यह मास्टर के पढने का कमरा है। नरेन्द्र के आने के पहल्ने वे Merchant of Venice, Comus, Blackie's Self-culture, यही सब पुस्तके पढ़ रहे थे। स्कूल मे विद्यार्थियो को पढ़ाने के लिए पाठ तैयार कर रहे थे।

नरेन्द्र और मठ के सब गुरुभाइयों के हृदय मे तीव्र वैराग्य झलक रहा है। ईश्वर-दर्शन के लिए सब के सब व्याकुल हो रहे है।

नरेन्द्र – (मास्टर से) – मुझे कुछ अच्छा नही लगता। आपके साथ बातचीत तो कर रहा हूँ, परन्तु जी चाहता है कि उठकर अभी चला जाऊँ।

नरेन्द्र कुछ देर तक चुप रहे। कुछ समय बाद कहने लगे, "ईश्वर-दर्शन के लिए मै अनशन कर डालूँगा – प्राण तक दे दूँगा।"

मास्टर – अच्छा तो है, ईश्वर के लिए सब कुछ किया जा सकता है।

नरेन्द्र – अगर भूख न सम्हाल सका तो?

मास्टर – तो कुछ खा लेना, और फिर से शुरू करना।

नरेन्द्र कुछ देर तक चुप रहे।

नरेन्द्र – जान पड़ता है, ईश्वर नही है। इतनी प्रार्थनाएँ मैने की, उत्तर एक बार भी नही मिला।

"सोने के अक्षरो मे लिखे हुए न जाने कितने मन्त्र चमकते हुए मैने देखे!

"न जाने कितने काली रूप, और दूसरे दूसरे रूप देखे, फिर भी शान्ति नही मिल रही है!

"छः पैसे दीजियेगा?"

नरेन्द्र शोभाबाजार से गाड़ी में वराहनगर मठ जानेवाले है, इसीलिए किराये के छः

पैसे चाहिए थे।

देखते ही देखते सातू (सातकौड़ी) गाड़ी से आ पहुँचे। सातू नरेन्द्र के ही उम्र के हैं, मठ के किशोर भक्तों को बड़ा प्यार करते हैं, मठ में सब आते-जाते भी हैं। उनका घर वराहनगर मठ के पास ही है, कलकत्ते के किसी आफिस में काम करते हैं। उनके घर की गाड़ी है। उसी गाड़ी से आफिस होकर आ रहे हैं।

नरेन्द्र ने मास्टर को पैसे वापस कर दिये, कहा, 'अब क्या है, अब सातू के साथ चला जाऊँगा। आप कुछ खिलाइये।' मास्टर ने कुछ जलपान कराया।

उसी गाड़ी पर मास्टर भी बैठे। उनके साथ वे भी मठ जायेंगे। सब लोग शाम को मठ पहुँचे। मठ के भाई किस तरह दिन बिताते और साधना करते हैं, यह देखने की उनकी इच्छा है। श्रीरामकृष्ण किस तरह अपने पार्षदों के हृदय में प्रतिबिम्बित हो रहे हैं यह देखने के लिए कभी कभी मास्टर मठ हो आया करते हैं। निरंजन मठ में नहीं हैं। घर में एकमात्र उनकी माँ बच रही हैं, उन्हें देखने के लिए वे घर चले गये हैं। बाबूराम, शरद और काली पुरी गये हुए हैं – कुछ दिन वहाँ रहेंगे, – उत्सव देखेंगे।

मठ के भाइयों की देख-रेख नरेन्द्र ही कर रहे हैं। प्रसन्न कुछ दिनों से कठोर साधना कर रहे थे। उनसे भी नरेन्द्र ने प्रायोपवेशन की बात कही थी। नरेन्द्र को कलकत्ता जाते हुए देख, वे भी कहीं अज्ञात स्थान के लिए चले गये। कलकत्ते से लौटकर नरेन्द्र ने सब कुछ सुना। उन्होंने दूसरे गुरुभाइयों से कहा, 'राजा (राखाल) ने क्यों उसे जाने दिया?' परन्तु राखाल उस समय मठ में नहीं थे, वे मठ से दक्षिणेश्वर के बगीचे में टहलने चले गये थे। राखाल को सब भाई राजा कहकर पुकारते थे। 'राखालराज' श्रीकृष्ण का एक दूसरा नाम था।

नरेन्द्र – राजा को आने दो, मैं उसे एक बार फटकारूँगा कि क्यों उसे जाने दिया। (हरीश से) तुम तो पैर फैलाये लेक्चर दे रहे थे, उसे मना क्यों नहीं कर सके?

हरीश – (मधुर स्वर से) – तारकदादा ने कहा तो, पर वह चला ही गया।

नरेन्द्र – (मास्टर से) – देखिये, मेरे लिए बड़ी मुश्किल है। यहाँ भी मैं एक माया के संसार में आ फँसा हूँ! न मालूम वह लड़का कहाँ चला गया!

राखाल दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर से लौट आये हैं। भवनाथ भी उनके साथ गये थे।

राखाल से नरेन्द्र ने प्रसन्न की बात कही। प्रसन्न ने नरेन्द्र को एक पत्र लिखा है, वह पत्र पढ़ा जा रहा है। पत्र इस आशय का है – "मैं पैदल ही वृन्दावन चला। मेरे लिए यहाँ रहना अच्छा नहीं है। यहाँ भाव का परिवर्तन हो रहा है। पहले तो मैं माता-पिता और घर के दूसरे मनुष्यों का स्वप्न देखा करता था, इसके पश्चात् मैंने माया की मूर्ति देखी। दो बार मुझे बड़ा कष्ट मिला, घर लौट जाना पड़ा था। इसीलिए अब की बार दूर जा रहा हूँ।

श्रीरामकृष्णदेव ने मुझसे कहा था – 'तेरे वे घरवाले सब कुछ कर सकते है, उनका विश्वास न करना।' "

राखाल कह रहे हैं, "वह इन्ही अनेक कारणो से चला गया है। और उसने यह भी कहा है, 'नरेन्द्र अपनी माँ और भाइयो की खबर लेने और मुकदमा आदि करने के लिए घर चला जाया करता है। मुझे भय है कि उसकी देखा-देखी कही मुझे भी घर जाने की इच्छा न हो।' "

यह सुनकर नरेन्द्र चुप हो रहे।

राखाल तीर्थ जाने की बातचीत कर रहे है। कह रहे है, 'यहाँ रहकर तो कही कुछ न हुआ। उन्होंने (श्रीरामकृष्ण ने) जो कहा है – ईश्वरदर्शन, वह कहाँ हुआ?' राखाल लेटे हुए है। पास ही भक्तों मे कोई लेटे हुए है, कोई बैठे।

राखाल – चलो, नर्मदा की ओर निकल चलें।

नरेन्द्र – निकलकर क्या होगा? ज्ञान इससे थोड़े ही होता है, जिसके सम्बन्ध में तूने इतनी रट लगा दी है।

एक भक्त – तो फिर संसार का त्याग तुमने क्यो किया?

नरेन्द्र – राम को नही पाया, इसलिए क्या श्याम के साथ रहना चाहिए? ईश्वर-लाभ नही हुआ, इसलिए क्या बच्चे पैदा करते रहना चाहिए? यह कैसी बात है?

यह कहकर नरेन्द्र जरा उठ गये। राखाल लेटे हुए है।

कुछ देर बाद नरेन्द्र फिर लौटे और आसन ग्रहण किया।

मठ के एक भाई लेटे ही लेटे हास्य में कह रहे है मानो ईश्वर-दर्शन के बिना उन्हें बड़ा कष्ट हो रहा हो – "अरे, कोई है? – मुझे एक छुरी तो दो, प्राणान्त कर लूँ – बस अब तो कष्ट सहा नही जाता!"

नरेन्द्र – (मानो गम्भीर होकर) – वही है, हाथ बढ़ाकर उठा लो (सब हँसते हैं)

फिर प्रसन्न की बात होने लगी।

नरेन्द्र – यहाँ भी माया! फिर हम लोगों ने संन्यास क्यों लिया?

राखाल – 'मुक्ति और उसकी साधना' नामक पुस्तक में है कि संन्यासियों को एक जगह नहीं रहना चाहिए। 'संन्यासीनगर' की कथा उसमें है।

शशी – मैं संन्यास-फन्यास नहीं मानता। मेरे लिए ऐसा कोई स्थान नही है, जो अगम्य हो। ऐसी कोई जगह नहीं है, जहाँ मैं न रह सकूं।

भवनाथ की बात चलने लगी। भवनाथ की स्त्री को कठिन पीड़ा हुई थी।

नरेन्द्र – (राखाल से) – जान पड़ता है, भवनाथ की बीबी बच गयी; इसीलिए मारे खुशी के दक्षिणेश्वर घूमने गया था।

काँकुड़गाछी के बगीचे की बातचीत होने लगी। रामबाबू वहाँ मन्दिर बनवाने का

विचार कर रहे हैं।

नरेन्द्र – (राखाल से) – रामबाबू ने मास्टर महाशय को एक 'ट्रस्टी' (trustee) बनाया है।

मास्टर – (राखाल से) – परन्तु मुझे तो इसकी कोई खबर नही।

शाम हो गयी। शशी श्रीरामकृष्ण के कमरे में धूप देने लगे। दूसरे कमरों में श्रीरामकृष्ण के जितने चित्र थे, वहाँ भी धूप-धूना दिया गया। फिर मधुर कण्ठ से उनका नामोच्चारण करते हुए उन्हें प्रणाम किया।

अब आरती हो रही है। मठ के गुरु-भाई और दूसरे भक्त हाथ जोड़कर खड़े हुए आरती देख रहे हैं। झाँझ और घण्टे बज रहे हैं। भक्तवृन्द एकस्वर से आरती गा रहे हैं –

"जय शिव ओंकार, भज शिव ओकार।

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव, हर हर हर महादेव।"

नरेन्द्र पहले गाते हैं, पीछे से उनके दूसरे गुरु-भाई। यही गायन श्रीकाशीधाम में विश्वेश्वर-मन्दिर मे हुआ करता है।

भोजन आदि समाप्त करते हुए रात के ग्यारह बज गये। भक्तो ने मास्टर के लिए एक बिछौना बिछा दिया और वे स्वयं भी सो गये।

आधी रात का समय है। मास्टर की आँख नही लगी। वे सोच रहे है। – 'सब तो है, – अयोध्या तो वही है, परन्तु बस राम नहीं हैं।' मास्टर चुपचाप उठ गये। आज वैशाख की पूर्णिमा है। मास्टर अकेले गंगाजी के तट पर टहल रहे है। श्रीरामकृष्ण की बाते सोच रहे है।

योगवासिष्ठ-पाठ। संकीर्तनानन्द तथा नृत्य

आज रविवार है। मास्टर शनिवार को आये है। बुध तक अर्थात् पॉच दिन मठ में रहेंगे। गृही भक्त प्राय: रविवार को ही मठ में दर्शन करने के लिए आया करते हैं। आजकल बहुधा योगवासिष्ठ का पाठ हुआ करता है। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण से योगवासिष्ठ की कुछ बातें सुनी थी। देह-बुद्धि के रहते योगवासिष्ठ के 'सोऽहम्' भाव के अनुसार साधना करने की श्रीरामकृष्ण ने मनाही की थी और कहा था, 'सेव्यसेवक-भाव ही अच्छा है।'

मास्टर – अच्छा, योगवासिष्ठ में ब्रह्मज्ञान की कैसी बातें हैं?

राखाल – भूख-प्यास, सुख-दु:ख, यह सब माया है, मन का नाश ही एकमात्र उपाय है।

मास्टर – मन के नाश के पश्चात् जो कुछ बच रहता है, वही ब्रह्म है, क्यों?

राखाल – हॉं।

मास्टर – श्रीरामकृष्ण भी ऐसा ही कहते थे। न्यांगटा ने उनसे यही बात कही थी। अच्छा, राम को वशिष्ठजी ने संसार में रहने के लिए कहा है, क्या ऐसी कोई बात तुम्हें उस ग्रन्थ में मिली?

राखाल – नहीं, अभी तक तो नही मिली। इसमें तो राम को कहीं अवतार ही नहीं लिखा है।

यही बातचीत चल रही है, इसी समय नरेन्द्र, तारक तथा एक और भक्त गंगातट से टहलकर आ गये। उनकी इच्छा सैर करते हुए कोन्नगर तक जाने की थी, परन्तु नाव नही मिली। सब के सब आकर बैठे। योगवासिष्ठ का प्रसंग फिर चलने लगा।

नरेन्द्र – (मास्टर से) – बड़ी अच्छी कहानियाँ हैं। लीला की कथा आप जानते हैं?

मास्टर – हाँ, योगवासिष्ठ में है, मैंने कुछ पढ़ा है। लीला को ब्रह्मज्ञान हुआ था न?

नरेन्द्र – हॉ, और इन्द्र-अहल्या-संवाद, तथा विदूरथ राजा चाण्डाल हुए – वह कथा?

मास्टर – हॉ, याद आ रही है।

नरेन्द्र – वन का वर्णन भी कितना मनोहर है!

नरेन्द्र आदि भक्तगण गंगा-स्नान को जा रहे हैं। मास्टर भी जायेंगे। धूप देखकर मास्टर ने छाता ले लिया। वराहनगर के श्रीयुत शरच्चन्द्र भी साथ ही गंगा नहाने जा रहे है। ये सदाचारी ब्राह्मण युवक हैं। मठ में सदा आते रहते है। कुछ दिन पहले वैराग्य धारण करके ये तीर्थाटन भी कर चुके हैं।

मास्टर – (शरद से) – धूप बड़ी तेज है।

नरेन्द्र – तो यह कहो कि छाता ले लूँ।

(मास्टर हँसते हैं)

भक्तगण कन्धे पर अँगौछा डाले हुए मठ का रास्ता पार कर परामाणिक घाट के उत्तर तरफवाले घाट में नहा रहे है। सब के सब गेरुआ वस्त्र धारण किये हुए हैं। आज ८ मई, १८८७ है। धूप बड़ी तेज है।

मास्टर – (नरेन्द्र से) – कही लू न लग जाय।

नरेन्द्र – आप लोगों का शरीर भी तो वैराग्य में बाधक है – है न? मेरा मतलब है आपका, देवेन्द्रबाबू का –

मास्टर हँसने लगे और सोचने लगे – 'क्या केवल शरीर ही बाधक है?'

स्नान करके भक्तगण मठ लौटे और हाथ-पैर धोकर श्रीरामकृष्ण के कमरे में (जहाँ श्रीरामकृष्ण की पूजा होती थी) गये। प्रणाम करके श्रीरामकृष्ण के पादपद्मों में प्रत्येक भक्त ने पुष्पांजलि चढ़ायी।

पूजा-घर में नरेन्द्र को जाने में कुछ देर हो गयी। श्रीगुरु महाराज को प्रणाम करके

नरेन्द्र फूल लेने को बढ़े तो देखा, पुष्पपात्र में फूल एक भी नही था। उन्होंने पूछा – 'फूल नहीं हैं?' पुष्प-पात्र में दो-एक बिल्वदल बच रहे थे, चन्दन में उन्हें ही डुबाकर अर्पण किया। फिर एक बार घण्टाध्वनि की। अन्त में प्रणाम करके 'दानवों के कमरे' में जाकर बैठे।

मठ के गुरुभाई अपने आपको भूत तथा दानव कहते थे, क्योंकि भूत दानव शिवजी के अनुयायी हैं। और जिस कमरे में सब एक साथ बैठते थे, उसे 'दानवों का कमरा' कहते थे। जो लोग एकान्त में ध्यान-धारणा और पाठ आदि करते थे, वे लोग दक्षिण ओर के कमरे में रहते थे। काली द्वार बन्द करके अधिकतर उसी कमरे में रहते थे, इसलिए मठ के गुरुभाई उस कमरे को काली तपस्वी का कमरा कहते थे। काली तपस्वी के कमरे के उत्तर तरफ पूजा-घर था। उसके उत्तर ओर जो कमरा था, उसमें नैवेद्य रखा जाता था। उसी कमरे में खड़े होकर लोग आरती देखते और वही से भगवान श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करते थे। नैवेद्यवाले कमरे के उत्तर में 'दानवों का कमरा' था। यह कमरा खूब लम्बा था। बाहर के भक्तों के आने पर इसी कमरे में उनका स्वागत किया जाता था। 'दानवों के कमरे' के उत्तर तरफ एक और छोटासा कमरा था। यह 'पान-घर' के नाम से पुकारा जाता था। यहाँ भक्तगण भोजन करते थे।

'दानवो के कमरे' के पूर्व कोने में दालान थी। उत्सव होने पर भोजन आदि की व्यवस्था इसी कमरे में की जाती थी। दालान के ठीक उत्तर तरफ रसोईघर था।

पूजा-घर और काली तपस्वी के कमरे के पूर्व ओर बरामदा था। बरामदे के दक्षिण-पश्चिम कोने में वराहनगर की एक समिति का पुस्तकालय था। ये सब कमरे दुमँजले पर थे। जीने दो थे। एक तो पुस्तकालय और काली तपस्वी के कमरे के बीच से, और दूसरा, भक्तों के भोजन करनेवाले कमरे के उत्तर तरफ। नरेन्द्र आदि भक्तगण इसी जीने से शाम को कभी कभी छत पर जाते थे। वहाँ बैठकर वे लोग ईश्वर-सम्बन्धी अनेक विषयो की चर्चा किया करते थे। कभी भगवान श्रीरामकृष्ण की बातें, कभी शंकराचार्य की, कभी रामानुज की और कभी ईसा मसीह की बातें होती थी। कभी हिन्दू-दर्शन की बाते होती थी तो कभी यूरोपीय दर्शन का प्रसंग चलता था, कभी वेदो, कभी पुराणो और कभी तन्त्रो की कथाएँ हुआ करती थी।

'दानवों के कमरे' में बैठकर नरेन्द्र अपने दैवी कण्ठ से परमात्मा के नामों और उनके गुणों का कीर्तन किया करते थे। शरद अपने दूसरे भाइयों को गाना सिखलाते थे। काली वाद्य सीखते थे। इस कमरे में नरेन्द्र कितनी ही बार कीर्तन करते हुए आनन्द करते और आनन्दपूर्वक नृत्य किया करते थे।

नरेन्द्र तथा धर्मप्रचार। ध्यानयोग और कर्मयोग

नरेन्द्र 'दानवों के कमरे' में बैठे हुए हैं। चुन्नीलाल, मास्टर तथा मठ के और भाई

भी बैठे हुए हैं। धर्म-प्रचार की बातें होने लगीं।

मास्टर – (नरेन्द्र से) – विद्यासागर कहते हैं, 'मैं तो बेंतों की मार खाने के डर से ईश्वर की बात किसी दूसरे से नहीं कहता।'

नरेन्द्र – बेंतों की मार खाने का क्या मतलब?

मास्टर – विद्यासागर कहते हैं, 'सोचो मरने के बाद हम सब ईश्वर के पास गये। सोचो कि केशव सेन को यमदूत ईश्वर के पास ले गये। केशव ने संसार में पाप भी किया है। जब यह सप्रमाण सिद्ध हुआ, तब बहुत सम्भव है, ईश्वर कहें कि इसे पच्चीस बेंत लगाओ। इसके बाद, सोचो, मुझे ले गये। मैं भी अगर केशव सेन के समाज में जाता हूँ, अन्याय करता हूँ, तो इसके लिए सम्भव है, आदेश हो कि इसको बेंत लगाओ। तब, अगर मैं कहूँ कि केशव सेन ने ही मुझे इस तरह समझाया था, तो सम्भव है कि ईश्वर दूत से कहें, "केशव सेन को फिर ले आओ।" केशव के आने पर सम्भव है, उससे वे पूछें – "क्या तूने इसे उपदेश दिया था? खुद तो तू ईश्वर के सम्बन्ध में कुछ जानता नहीं और दूसरे को उपदेश दे रहा था? है कोई – इसको पच्चीस बेंत और लगाओ।" ' (सब हँसते हैं)

"इसीलिए विद्यासागर कहते हैं, 'मैं खुद तो सम्हल सकता ही नहीं, फिर दूसरों के लिए बेंत क्यों सहूँ? (सब हँसते है) मैं खुद तो ईश्वर के सम्बन्ध में कुछ जानता नहीं, फिर दूसरे को क्या लेक्चर देकर समझाऊँ?' "

नरेन्द्र – जिसने इस विषय को (ईश्वर को) नहीं समझा, उसने और दस-पाँच विषयों को कैसे समझ लिया?

मास्टर – दस-पाँच विषय कैसे?

नरेन्द्र – जिसने इस विषय को नही समझा, उसने दया और उपकार कैसे समझ लिया? – स्कूल कैसे समझ लिया? स्कूल खोलकर बच्चों को विद्या पढ़ानी चाहिए और संसार में प्रवेश करके, विवाह करके, लड़कों और लड़कियों का बाप बनना ही ठीक है, यही कैसे समझ लिया?

"जो एक बात को अच्छी तरह समझता है, वह सब बातों की समझ रखता है।"

मास्टर – (स्वगत) – सच है, श्रीरामकृष्ण भी तो कहते थे – "जिसने ईश्वर को समझा है, वह सब कुछ समझता है।" और संसार में रहना, स्कूल करना, इन सब बातों के सम्बन्ध में उन्होंने कहा था, "ये सब रजोगुण से होते हैं।" विद्यासागर में दया है, इस प्रसंग में उन्होंने कहा था, "यह रजोगुणी सत्त्व है, इसमें दोष नहीं।"

भोजन आदि के पश्चात् मठ के सब गुरुभाई विश्राम कर रहे हैं। मास्टर और चुन्नीलाल नैवेद्यवाले कमरे के पूर्व ओर अन्दर से महल की जो सीढ़ी है, उसके पटाव पर बैठे हुए वार्तालाप कर रहे हैं। चुन्नीलाल बतला रहे हैं किस तरह उन्होंने दक्षिणेश्वर में

पहले-पहले श्रीरामकृष्ण के दर्शन किये। संसार में जी नही लग रहा था, इसलिए एक बार वे पहले संसार छोड़कर चले गये थे और तीर्थों में भ्रमण किया करते थे। वही सब बातें हो रही हैं। कुछ देर में नरेन्द्र भी पास आकर बैठे। फिर योगवासिष्ठ की बातें होने लगीं।

नरेन्द्र – (मास्टर से) – और विदूरथ का चाण्डाल होना?

मास्टर – क्या तुम लवण की बात कह रहे हो!

नरेन्द्र – अच्छा, क्या आपने योगवासिष्ठ पढ़ा है!

मास्टर – हाँ, कुछ पढ़ा है।

नरेन्द्र – क्या यहीं की पुस्तक पढ़ी है?

मास्टर – नहीं, मैंने घर में कुछ पढ़ा था।

मठ की इमारत से मिली हुई पीछे कुछ जमीन है। वहाँ बहुतसे पेड़-पौधे हैं। मास्टर पेड़ के नीचे अकेले बैठे हुए है, इसी समय प्रसन्न आ पहुँचे। दिन के तीन बजे का समय होगा।

मास्टर – इधर कुछ दिनों से कहाँ थे तुम! तुम्हारे लिए सब के सब बड़े सोच मे पड़े हुए हैं। उनसे मुलाकात हुई? तुम कब आये?

प्रसन्न – मैं अभी आया, आकर मिल चुका हूँ।

मास्टर – तुमने चिट्ठी लिखी थी कि मैं वृन्दावन चला। हम लोग बड़ी चिन्ता मे पड़े थे। तुम कितनी दूर गये थे?

प्रसन्न – कोन्नगर तक गया था। *(दोनों हँसते है)*

मास्टर – बैठो, जरा कुछ कहो, सुनूँ। पहले तुम कहाँ गये थे?

प्रसन्न – दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर – एक रात वही रहा।

मास्टर – (सहास्य) – हाजरा महाशय अब किस भाव मे है?

प्रसन्न – हाजरा ने कहा, 'मुझे भला क्या समझते हो?' *(दोनों हँसते है)*

मास्टर – (सहास्य) – तुमने क्या कहा?

प्रसन्न – मैं चुप हो रहा।

मास्टर – फिर?

प्रसन्न – फिर उसने कहा, 'मेरे लिए तम्बाकू ले आये हो?' (दोनों हँसते हैं) मेहनत पूरी करा लेना चाहता है। (हास्य)

मास्टर – फिर तुम कहाँ गये?

प्रसन्न – फिर कोन्नगर गया। रात को एक जगह पड़ा रहा। और भी आगे चले जाने के लिए सोचा। पश्चिम जाने के लिए किराये के लिए भलेमानसो से पूछा कि यहाँ किराया मिल सकता है या नही।

मास्टर – उन लोगो ने क्या कहा?

प्रसन्न – कहा, 'धेली-रुपया कोई चाहे दे दे, पर इतना किराया अकेला कौन देगा?' (दोनो हँसे)

मास्टर – तुम्हारे साथ क्या था?

प्रसन्न – दो-एक कपड़े और श्रीरामकृष्णदेव की तस्वीर। तस्वीर मैने किसी को नही दिखलायी।

पिता-पुत्र संवाद। पहले माँ-बाप या पहले ईश्वर?

श्रीयुत शशी के पिता आये हुए है। उनके पिता अपने लड़के को मठ से ले जाना चाहते है। श्रीरामकृष्ण की बीमारी के समय प्राय: नौ महीने तक लगातार शशी ने उनकी सेवा की थी। उन्होने कालेज मे बी. ए. तक अध्ययन किया था। प्रवेशिका मे इन्हे छात्रवृत्ति मिली थी। इनके पिता गरीब होने पर भी निष्ठावान् ब्राह्मण है और साधना भी करते है। शशी अपने माता-पिता के सब से बड़े लड़के है। उनके माता-पिता को बड़ी आशा थी कि ये लिख-पढकर रोजगार करके उनका दु ख दूर करेगे, परन्तु इन्होने ईश्वर-प्राप्ति के लिए सब को छोड़ दिया था। अपने मित्रो से ये रो-रोकर कहा करते थे, 'क्या करूँ, मेरी समझ मे कुछ नही आता। हाय। माता-पिता की मै कुछ भी सेवा न कर सका। उन्होने न जाने कितनी आशाएँ की थी! मेरी माता को अलंकार-आभूषण पहनने को नही मिले। मेरी कितनी साध थी कि उन्हे गहने पहनाऊँगा। कही कुछ भी न हुआ। घर लौट जाना मुझे भार-सा जान पडता है। उधर श्रीगुरुमहाराज ने कामिनी-कांचन का त्याग करने के लिए कहा है। अब तो जाने की जगह रही ही नही।'

श्रीरामकृष्ण की महासमाधि के पश्चात् शशी के पिता ने सोचा, बहुत सम्भव है, अब वह घर लौटे, परन्तु कुछ दिन घर रहने के पश्चात् जब मठ स्थापित हुआ तब मठ मे आते-जाते ही शशी सदा के लिए मठ मे रह गये। जब से यह परिस्थिति हुई तब से उनके पिता उन्हे ले जाने के लिए प्राय: आया करते है। परन्तु शशी घर जाने का नाम भी नही लेते। आज जब उन्होने यह सुना कि पिताजी आये हुए है, वे एक दूसरे रास्ते मे नौ दो ग्यारह हो गये ताकि उनसे भेट न हो।

उनके पिता मास्टर को पहचानते थे। वे मास्टर के साथ ऊपरवाले बरामदे मे टहलते हुए उनसे बातचीत करने लगे।

पिता – यहाँ कर्ता कौन है? यही नरेन्द्र सारे अनर्थो का कारण जान पडता है। सब

लड़के राजी-खुशी घर लौट गये थे। फिर से स्कूल-कालेज जाने लगे थे।

मास्टर – यहाँ कर्ता (मालिक) कोई नही है। सब बराबर हैं। नरेन्द्र क्या करे? बिना अपनी इच्छा के क्या कोई आ सकता है? क्या हम लोग सदा के लिए घर छोड़कर आ सके हैं?

पिता – अजी, तुम लोगों ने तो अच्छा किया, क्योंकि दोनों तरफ की रक्षा कर रहे हो, तुम लोग जो कुछ कर रहे हो, इसमें धर्म नहीं है क्या? हम लोगों की भी तो यही इच्छा है कि शशी यहाँ भी रहे और वहाँ भी रहे। देखो तो जरा, उसकी माँ कितना रो रही है!

मास्टर दुःखित होकर चुप हो गये।

पिता – और साधुओं की तलाश में इतना क्यों मारा-मारा फिरता है? वह कहे तो मैं उसे एक अच्छे महात्मा के पास ले जाऊँ। इन्द्रनारायण के पास एक महात्मा आये हुए हैं, बहुत सुन्दर स्वभाव है। चलें, देखे न ऐसे महात्मा को!

राखाल और मास्टर काली तपस्वी के घर के पूर्व ओर के बरामदे में टहल रहे है। श्रीरामकृष्ण और उनके भक्तों के सम्बन्ध में वार्तालाप हो रहा है।

राखाल – (व्यस्त भाव से) – मास्टर महाशय, आइये, सब एक साथ साधना करे।

"देखिये न, अब घर भी सदा के लिए छोड़ दिया है। अगर कोई कहता है, 'ईश्वर तो मिले ही नहीं, फिर क्यों अब यह सब हो रहा है?' – तो इसका उत्तर नरेन्द्र बड़ा सुन्दर देता है। कहता है, 'राम नहीं मिले तो क्या इसलिए हमे श्याम (अमुक किसी भी) के साथ रहकर लड़के-बच्चों का बाप बनना ही होगा?' अहा! एक एक बात नरेन्द्र बड़े मार्के की कह देता है। जरा आप भी पूछियेगा।"

मास्टर – ठीक तो है। राखाल भाई, देखता हूँ, तुम्हारा मन भी खूब व्याकुल हो रहा है।

राखाल – मास्टर महाशय, क्या कहूँ, दोपहर को नर्मदा जाने के लिए जी में कैसी विकलता थी। मास्टर महाशय, साधना कीजिये, नहीं तो कहीं कुछ न होगा। देखिये न, शुकदेव भी डरते थे। जन्मग्रहण करते ही भगे। व्यासदेव ने खड़े होने के लिए कहा, परन्तु वे खड़े भी नहीं होते थे।

मास्टर – योगोपनिषद् की कथा है। माया के राज्य से शुकदेव भाग रहे थे। हाँ, व्यास और शुकदेव की कथा बड़ी ही रोचक है। व्यास संसार में रहकर धर्म करने के लिए कह रहे थे। शुकदेव ने कहा, 'ईश्वर के पादपद्मों में ही सार है।' और संसारियों के विवाह तथा स्त्री के साथ रहने पर उन्होंने घृणा प्रकट की।

राखाल – बहुतेरे सोचते हैं, स्त्री को न देखा तो बस फतह है। स्त्री को देखकर सिर झुका लेने से क्या होगा? कल रात को नरेन्द्र ने खूब कहा, 'जब तक अपने भीतर काम है, तभी तक स्त्री की सत्ता है; अन्यथा स्त्री और पुरुष में कोई भेद नहीं रह जाता।'

मास्टर – ठीक है। बालक और बालिकाओं में यह भेद-बुद्धि नही रहती।

राखाल – इसलिए तो कहता हूँ, हम लोगों को चाहिए कि साधना करें। माया के पार गये बिना ज्ञान कैसे होगा? चलिये, बड़े कमरे में चलें। वराहनगर से कुछ शिक्षित मनुष्य आये हुए हैं। नरेन्द्र से उनकी क्या बातचीत हो रही है, चलिये सुनें।

नरेन्द्र तथा शरणागति

नरेन्द्र वार्तालाप कर रहे हैं। मास्टर भीतर नहीं गये। बड़े घर के पूर्व ओरवाले दालान में टहलते रहे, कुछ अंश सुनायी पड़ रहा था।

नरेन्द्र कह रहे है, 'सन्ध्यादि कर्मों के लिए न तो अब स्थान ही है, न समय ही।'

एक सज्जन – क्यों महाशय, साधना करने से क्या वे मिलेंगे?

नरेन्द्र – उनकी कृपा। गीता में कहा है –

"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढ़ानि मायया।।
तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात् परां शान्ति स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।।"

"उनकी कृपा के बिना हुए साधन-भजन कहीं कुछ नही होता। इसलिए उनकी शरण में जाना चाहिए।"

सज्जन – हम लोग यदा-कदा यहाँ आकर आपको कष्ट देंगे।

नरेन्द्र – जरूर, जब जी चाहे, आया कीजिये।

"आप लोगों के वहाँ, गंगा-घाट मे हम लोग नहाने के लिए जाया करते हैं।"

सज्जन – इसके लिए हमारी ओर से कोई रोक-टोक नहीं। हाँ, कोई और न जाया करे।

नरेन्द्र – नहीं, अगर आप कहें तो हम भी न जाया करें।

सज्जन – नही, नहीं, ऐसी बात नहीं; परन्तु हाँ, अगर आप देखें कि कुछ और लोग भी जा रहे हैं तो आप न जाइयेगा।

सन्ध्या के बाद फिर आरती हुई। भक्तगण फिर हाथ जोड़कर एकस्वर से 'जय शिव ओंकार' गाते हुए श्रीरामकृष्ण की स्तुति करने लगे। आरती हो जाने पर भक्तगण दानवों के कमरे में जाकर बैठे। मास्टर बैठे हुए हैं। प्रसन्न गुरुगीता का पाठ करके सुनाने लगे। नरेन्द्र स्वयं आकर सस्वर पाठ करने लगे। नरेन्द्र गा रहे हैं –

"ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्।

एकं नित्यं विमलमचलं सर्वदा साक्षिभूतम्
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि।"

फिर गाते हैं –

"न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम्। शिवशासनतः शिवशासनतः।।
श्रीमत् परं ब्रह्म गुरुं वदामि। श्रीमत् परं ब्रह्म गुरुं भजामि।।
श्रीमत् परं ब्रह्म गुरुं स्मरामि। श्रीमत् परं ब्रह्म गुरुं नमामि।।"

नरेन्द्र सस्वर गीता का पाठ कर रहे हैं और भक्तों का मन उसे सुनते हुए निर्वात निष्कम्प दीप-शीखा की भाँति स्थिर हो गया। श्रीरामकृष्ण सत्य कहते थे कि 'बंसी की मधुर ध्वनि सुनकर सर्प जिस तरह फन खोलकर स्थिर भाव से खड़ा रहता है, उसी प्रकार नरेन्द्र का गाना सुनकर हृदय के भीतर जो हैं, वे भी चुपचाप सुनते रहते हैं।' अहा! मठ के भाइयो की गुरु के प्रति कैसी तीव्र भक्ति है!

श्रीरामकृष्ण का प्रेम तथा राखाल

राखाल काली तपस्वी के कमरे में बैठे हुए है। पास ही प्रसन्न है। उसी कमरे मे मास्टर भी है।

राखाल अपनी स्त्री और लड़के को छोड़कर आये हैं। उनके हृदय मे वैराग्य की गति तीव्र हो रही है। उन्हें एक यही इच्छा है कि अकेले नर्मदा के तट पर या कही अन्यत्र चले जायॅ। फिर भी वे प्रसन्न को बाहर भागने से समझा रहे है।

राखाल – (प्रसन्न से) – कहाँ तू बाहर भागता फिरता है? यहाॅ साधुओ का संग – क्या इसे छोड़कर कही जाना होता है? – तिसपर नरेन्द्र जैसे व्यक्ति का साथ छोडकर? यह सब छोड़कर तू कहाँ जायगा!

प्रसन्न – कलकत्ते मे माँ-बाप हैं। मुझे भय होता है कि कही उनका स्नेह मुझे खीच न ले। इसीलिए कही दूर भाग जाना चाहता हूँ।

राखाल – श्रीगुरु महाराज जितना प्यार करते थे, क्या माॅ-बाप उतना प्यार कर सकते है? हम लोगों ने उनके लिए क्या किया है, जो वे हमें उतना चाहते थे? क्यो वे हमारे शरीर, मन और आत्मा के कल्याण के लिए इतने तत्पर रहा करते थे? हम लोगों ने उनके लिए क्या किया है?

मास्टर – (स्वगत) – अहा! राखाल ठीक ही तो कह रहे हैं, इसीलिए उन्हें (श्रीरामकृष्ण को) अहेतुक कृपासिन्धु कहते हैं।

प्रसन्न – क्या बाहर चले जाने के लिए तुम्हारी इच्छा नहीं होती?

राखाल – जी तो चाहता है कि नर्मदा के तट पर जाकर रहूँ। कभी कभी सोचता हूँ कि वही किसी बगीचे में जाकर रहूँ और कुछ साधना करूँ। कभी यह तरंग उठती है कि

तीन दिन के लिए पंचतप करूँ; परन्तु संसारी मनुष्यो के बगीचे मे जाने से हृदय इनकार भी करता है।

क्या ईश्वर हैं?

'दानवो के कमरे' मे तारक और प्रसन्न दोनो वार्तालाप कर रहे है। तारक की माँ नही है। उनके पिता ने राखाल के पिता की तरह दूसरा विवाह कर लिया है। तारक ने भी विवाह किया था, परन्तु पत्नी-वियोग हो गया है। मठ ही तारक का घर हो रहा है। प्रसन्न को वे भी समझा रहे है।

प्रसन्न - न तो ज्ञान ही हुआ और न प्रेम ही, बताओ क्या लेकर रहा जाय?

तारक – ज्ञान होना अवश्य कठिन है परन्तु यह कैसे कहते हो कि प्रेम नही हुआ?

प्रसन्न – रोना तो आया ही नही, फिर कैसे कहूँ कि प्रेम हुआ? और इतने दिनो मे हुआ भी क्या?

तारक – क्यो? तुमने श्रीरामकृष्णदेव को देखा है या नही? फिर यह क्यो कहे कि तुम्हे ज्ञान नही हुआ?

प्रसन्न – क्या खाक होगा ज्ञान? ज्ञान का अर्थ है जानना। क्या जाना? ईश्वर है या नही इसी का पता नही चलता –

तारक – हाँ, ठीक है, ज्ञानियो के मत से ईश्वर है ही नही।

मास्टर – (स्वगत) – अहा! प्रसन्न की कैसी अवस्था है! श्रीरामकृष्ण कहते थे, 'जो लोग ईश्वर को चाहते है, उनकी ऐसी अवस्था हुआ करती है। कभी कभी ईश्वर के अस्तित्व मे सन्देह होता है।' जान पड़ता है, तारक इस समय बौद्ध मत का विवेचन कर रहे है, इसीलिए शायद उन्होने कहा – 'ज्ञानियो के मत से ईश्वर है ही नही।' परन्तु श्रीरामकृष्ण कहते थे – 'ज्ञानी और भक्त, दोनो एक ही जगह पहुँचेगे।'

गुरुभाइयों के साथ नरेन्द्र

ध्यानवाले कमरे मे अर्थात् काली तपस्वीवाले कमरे मे नरेन्द्र और प्रसन्न आपस मे बातचीत कर रहे है। कमरे मे एक दूसरी तरफ राखाल, हरीश और छोटे गोपाल है। बाद मे बूढ़े गोपाल भी आ गये।

नरेन्द्र गीतापाठ करके प्रसन्न को सुना रहे है :–

"ईश्वर: सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।।
तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत् प्रसादात् परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।।
सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

नरेन्द्र – देखा? – 'यन्त्रारूढ़'! 'भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढ़ानि मायया।' इस पर भी ईश्वर को जानने की चेष्टा! तू कीट से भी गया-बीता है, तू उन्हें जान सकता है? जरा सोच तो सही आदमी क्या है। ये जो अगणित नक्षत्र देख रहा है, इनके सम्बन्ध में सुना है, ये एक एक Solar system (सौरजगत्) हैं। हम लोगों के लिए जो यह एक ही Solar system है, इसी में आफत है। जिस पृथ्वी की सूर्य के साथ तुलना करने पर वह एक भटे की तरह जान पड़ती है, उस उतनी ही पृथ्वी में मनुष्य चल-फिर रहा है।

नरेन्द्र गा रहे हैं।

गाने का भाव :–

"तुम पिता हो, हम तुम्हारे नन्हे-से बच्चे है। पृथ्वी की धूलि से हमारा जन्म हुआ है और पृथ्वी की धूलि से हमारी ऑखे भी ढँकी हुई हैं। हम शिशु होकर पैदा हुए हैं और धूलि में ही हमारी क्रीड़ाएँ हो रही हैं, दुर्बलों को अपनी शरण में ग्रहण करनेवाले, हमें अभय प्रदान करो। एक बार हमें भ्रम हो गया है, क्या इसीलिए तुम हमें गोद में न लोगे? – क्या इसीलिए एकाएक तुम हमसे दूर चले जाओगे? अगर ऐसा करोगे तो, हे प्रभु हम फिर कभी उठ न सकेंगे, चिरकाल तक भूमि में ही अचेत होकर पड़े रहेंगे। हम बिलकुल शिशु है, हमारा मन बहुत ही क्षुद्र है। हे पिता, पग-पग पर हमारे पैर फिसल जाते हैं। इसलिए तुम हमें अपना रुद्रमुख क्यों दिखलाते हो? – क्यों हम कभी कभी तुम्हारी भौंहों को कुटिल देखते हैं? हम क्षुद्र जीवों पर क्रोध न करो। हे पिता, स्नेह-शब्दों में हमे समझाओं – हमसे कौनसा दोष हो गया है? यदि हमसे सैकड़ों बार भी भूल हो जाय, तो सैकड़ों ही बार हमें गोद में उठा लो। जो दुर्बल हैं, वे भला कर क्या सकते हैं?"

"तू पड़ा रह। उनकी शरण में पड़ा रह।"

नरेन्द्र भावावेश में आये हुए-से फिर गा रहे हैं – (भावार्थ) –

"हे प्रभु, मैं तुम्हारा गुलाम हूँ। मेरे स्वामी तुम्हीं हो। तुम्हीं से मुझे दो रोटियाँ और एक लंगोटी मिल रही हैं।"

"उनकी (श्रीरामकृष्णदेव की) बात क्या याद नहीं है? ईश्वर शक्कर के पहाड़ है, और तू चींटी, बस एक ही दाने से तो तेरा पेट भरता है, और तू सोच रहा है कि मैं यह पहाड़ का पहाड़ उठा ले जाऊँगा। उन्होंने कहा है, याद नहीं? – 'शुक-देव अधिक से अधिक एक बड़ी चींटी समझे जा सकते हैं।' इसीलिए तो मैं काली से कहा करता था, 'क्यों रे, तू गज और फीता लेकर ईश्वर को नापना चाहता है?"

"ईश्वर दया के सागर हैं। उनकी शरण में तू पड़ा रह। वे कृपा अवश्य करेंगे। उनसे प्रार्थना कर – 'यत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां पाहि नित्यम्।' –

"असतो मा सद् गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।।
मृत्योर्माऽमृतं गमय।
आविराविर्म एधि।।
रुद्र यत्ते दक्षिणं मुखम्।
तेन मां पाहि नित्यम्।।"

प्रसन्न – कौनसी साधना की जाय?

नरेन्द्र – सिर्फ उनका नाम लो। श्रीरामकृष्ण का गाना याद हैं या नही?

नरेन्द्र श्रीरामकृष्णदेव का वह गाना गा रहे है, जिसका भाव है –

"ऐ श्यामा, मुझे तुम्हारे नाम का ही भरोसा है। पूजनसामग्री, लोकाचार और दाँत निकालकर हँसने से मुझे क्या काम? तुम्हारे नाम के प्रताप से काल के कुल पाश छिन्न-भिन्न हो जाते है, शिव ने इसका प्रचार भी खूब कर दिया है, मैने तो अब इसे ही अपना आधार समझ लिया है। नाम लेता जा रहा हूँ; जो कुछ होने का है, होता रहेगा। क्यो मै अकारण सोचकर जीवन नष्ट करूँ? ऐ शिवे, मैने शिव के वाक्य को सर्वसार समझ लिया हैं।"

प्रसन्न – तुम अभी तो कह रहे हो, ईश्वर हैं। फिर तुम्ही बदलकर कहते हो, चार्वाक और अन्य दूसरे दर्शनाचार्य कह गये है, यह संसार आप ही आप हुआ है।'

नरेन्द्र – तूने Chemistry (रसायन-शास्त्र) नही पढ़ा? अरे यह तो बता, Combination (समवाय - संयोग) कौन करता है? पानी तैयार करने के लिए आक्सीजन, हाइड्रोजन और इलेक्ट्रिसिटी, इन सब चीजों को मनुष्य का हाथ इकट्ठा करता है।

"Intelligent Force (ज्ञानपूर्वक शक्तिचालना) तो सब लोग मानते हैं। ज्ञानस्वरूप एक ही है, जो इन सब पदार्थों को चला रहा है।"

प्रसन्न – दया उनमें है, यह हम कैसे जानें?

नरेन्द्र – 'यत्ते दक्षिणं मुखं' वेदों में कहा है।

"जॉन स्टुअर्ट मिल भी यही कहते हैं। जिन्होंने मनुष्य के भीतर दया दी, उनमें न जाने कितनी दया है! वे (श्रीरामकृष्ण) भी तो कहते थे – 'विश्वास ही सार है।' वे तो पास ही हैं। विश्वास करने से ही सिद्धि होती हैं।"

इतना कहकर नरेन्द्र मधुर कण्ठ से गाने लगे –

"मोको कहाँ ढूँढ़ो बन्दे मैं तो तेरे पास में।
ना रहता मैं झगड़ि बिगड़ि में, ना छुरी गढ़ास में।
ना रहता मैं खाल रोम में, ना हड्डी ना माँस में।।

ना देवल में ना मसजिद में, ना काशी-कैलास में।
ना रहता मैं अवध-द्वारका, मेरी भेंट विश्वास में।।
ना रहता मैं क्रिया करम में, ना योग संन्यास में।
खोजोगे तो आन मिलूँगा, पल भर की तलाश में।।
शहर से बाहर डेरा मेरा, कुटिया मेरी मवास में।
कहत कबीर सुनो भइ साधो, सब सन्तन के साथ में।।"

वासना के रहते ईश्वर में अविश्वास होता है

प्रसन्न – कभी तो तुम कहते हो, भगवान हैं ही नहीं और अब ये सब बातें सुना रहे हो। तुम्हारी बातों का कुछ ठीक ही नहीं। तुम प्राय: मत बदलते रहते हो। (सब हँसते हैं)

नरेन्द्र – यह बात अब कभी न बदलूँगा – जब तक वासनाएँ रहती हैं तब तक ईश्वर पर अविश्वास रहता है। कोई न कोई कामना रहती ही है। कुछ नहीं तो भीतर ही भीतर पढ़ने की इच्छा रह गयी। पास करूँगा, पण्डित होऊँगा, इस तरह की वासना।

नरेन्द्र भक्ति से गद्गद होकर गाने लगे।

'वे शरणागतवत्सल हैं, पिता और माता है। ...'
'जय देव, जय देव, जय मंगलदाता, जय जय मंगलदाता।
संकटभयदु:खत्राता, विश्वभुवनपाता, जय देव, जय देव।।

नरेन्द्र फिर गा रहे हैं। भाइयों से हरिरस का प्याला पीने के लिए कह रहे हैं। कहते हैं, ईश्वर पास ही हैं, जैसे मृग के पास कस्तूरी।

"पीले अवधूत, हो मतवाला, प्याला प्रेम हरिरस का रे।
बाल अवस्था खेलि गँवायो, तरुण भयो नारीबस का रे।
वृद्ध भयो कफ वायु ने घेरा, खाट पड़ो रह्यो शाम-सकारे।
नाभि-कमल में है कस्तूरी, कैसे भरम मिटै पशु का रे।
बिन सद्गुरु नर ऐसहि ढूँढ़ै, जैसे मिरिग फिरै वन का रे।।"

मास्टर बरामदे से ये सब बातें और संगीत सुन रहे हैं।

नरेन्द्र उठे। कमरे में आते समय कह रहे हैं – 'इन युवकों से बातचीत करते करते मेरा सिर गरम हो गया।' बरामदे में मास्टर को देखकर उन्होंने कहा, 'मास्टर महाशय, आइये पानी पियें।'

मठ के एक भाई नरेन्द्र से कह रहे हैं, 'इतने पर भी तुम क्यों कहते हो कि ईश्वर नहीं हैं?' नरेन्द्र हँसने लगे।

नरेन्द्र का तीव्र वैराग्य। गृहस्थाश्रम

दूसरे दिन सोमवार है। ९ मई १८८७। सबेरे मास्टर मठ के बगीचे में एक पेड़

नीचे बैठे हुए है। मास्टर सोच रहे है – "श्रीरामकृष्ण ने मठ के भाइयो का काम-कांचन छुड़ा दिया। अहा! ईश्वर के लिए ये लोग व्याकुल हो रहे है! यह स्थान मानो साक्षात् वैकुण्ठ है! मठ के भाई मानो साक्षात् नारायण है! श्रीरामकृष्ण को गये अभी अधिक दिन नही हुए। इसलिए वे सब भाव अब भी ज्यो के त्यो बने है।

"अयोध्या तो वही है, परन्तु राम नही है।'

"इनसे तो उन्होने (श्रीरामकृष्ण ने) गृहत्याग करा लिया, फिर कुछ और जो है, उन्हे ही क्यो घर मे रखा है, उनके लिए क्या कोई उपाय नही है?"

नरेन्द्र ऊपर के कमरे से देख रहे हैं। मास्टर अकेले पेड़ के नीचे बैठे है। उतरकर हँसते हुए वे कह रहे है – 'क्यो मास्टर महाशय, क्या हो रहा है?' कुछ बाते हो जाने पर मास्टर ने कहा – 'अहा। तुम्हारा स्वर बड़ा मधुर है! कोई श्लोक कहो।'

नरेन्द्र स्वर से अपराध-भंजन स्तव कहने लगे। गृहस्थगण ईश्वर को भूले हुए है, – बाल्य, प्रौढ़ और वार्धक्य तक वे न जाने कितने अपराध करते है! क्यो वे मनसा, वाचा और कर्मणा ईश्वर की सेवा नही करते? –

"बाल्ये दु:खातिरेको मललुलितवपु: स्तन्यपाने पिपासा,
नो शक्तश्चेन्द्रियेभ्यो भवगुणजनिता: जन्तवो मां तुदन्ति।
नानारोगादिदु:खाद्रुदनपरवश: शंकरं न स्मरामि,
क्षन्तव्यो मेऽपराध: शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो।।
प्रौढोऽहं यौवनस्थो विषयविषधरैर्पचभिर्मर्मसन्धौ,
दष्टो नष्टो विवेक: सुतधनयुवतिस्वादुसौख्ये निषण्ण:।
शैवीचिन्ताविहीनं मम हृदयमहो मानगर्वाधिरूढम्,
क्षन्तव्यो मेऽपराध: शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो।।
वार्धक्ये चेन्द्रियाणां विगतगतिमतिश्चाधिदैवादितापै:,
पापै: रोगैर्वियोगैस्त्वनवसितवपु: प्रौढिहीनं च दीनम्।
मिथ्यामोहाभिलाषैर्भ्रमति मम मनो धूर्जटेर्ध्यानशून्यम्,
क्षन्तव्यो मेऽपराध: शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो।।
स्नात्वा प्रत्यूषकाले स्नपनविधिविधौ नाहृतं गांगतोयं,
पूजार्थं वा कदाचित् बहुतरगहनात् खण्डबिल्वीदलानि।
नानीता पद्ममाला सरसि विकसिता गन्धधूपौ त्वदर्थ,
क्षन्तव्यो मेऽपराध: शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो।।
गात्रं भस्मसितं सितं च हसितं हस्ते कपालं सितं,
खट्वांगं च सितं सितश्च वृषभ: कर्णे सिते कुण्डले।
गंगाफेनसिता जटा पशुपतेश्चन्द्र: सितो मूर्धनि,
सोऽयं सर्वसितो ददातु विभवं पापक्षयं सर्वदा।। ..."

स्तवपाठ हो गया। फिर बातचीत होने लगी।

नरेन्द्र – निर्लिप्त संसार कहिये या चाहे जो कहिये, काम-कांचन का त्याग बिना किये न होगा। स्त्री के साथ सहवास करते हुए घृणा नहीं होती? जहाँ कृमि, कफ, मेध, दुर्गन्ध –

"अमेध्यपूर्णे कृमिजालसंकुले स्वभावदुर्गन्धिविनिन्दितान्तरे।
कलेवरे मूत्रपूरीषभाविते रमन्ति मूढ़ा विरमन्ति पण्डिता:।।

"वेदान्त-वाक्यों में जो रमण नहीं करता, हरिरस का जो पान नहीं करता, उसका जीवन ही वृथा है।

"ओंकारमूलं परमं पदान्तरं गायत्रीसावित्रीसुभाषितान्तरम्।
वेदान्तरं य: पुरुषो न सेवते वृथान्तरं तस्य नरस्य जीवनम्।।

"एक गाना सुनिये – (भावार्थ)

"मोह और कुमन्त्रणा को छोड़ो, उन्हें जानो, तब सम्पूर्ण कष्ट छूट जायेंगे। चार दिन के सुख के लिए अपने जीवन-सखा को भूल गये, यह कैसा?

"कौपीन धारण बिना किये दूसरा उपाय नही – संसारत्याग!" – यह कहकर नरेन्द्र सस्वर गाने लगे –

"वेदान्तवाक्येषु सदा रमन्तो भिक्षान्नमात्रेण च तुष्टिमन्त:।
अशोकमन्त:करणे चरन्त: कौपीनवन्त: खलु भाग्यवन्त:।।"

नरेन्द्र फिर कह रहे हैं – "मनुष्य संसार में बँधा क्यों रहेगा? क्यों वह माया में पड़े? मनुष्य का स्वरूप क्या है? 'चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहं।' मैं ही वह सच्चिदानन्द हूँ।"

फिर स्वरसहित नरेन्द्र शंकराचार्य-कृत स्तव पढ़ने लगे –

ॐ मनो बुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं, न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योमभूमिर्न तेजो न वायुश्चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम्।।

एक दूसरा स्तव वासुदेवाष्टक भी नरेन्द्र सस्वर पढ़ रहे हैं। "हे मधुसूदन! मैं तुम्हारे शरणागत हूँ, मुझ पर कृपा करके काम, निद्रा, पाप, मोह, स्त्री-पुत्र का मोहजाल, विषय-तृष्णा, इन सब से मेरा परित्राण करो और अपने पाद-पद्मों में भक्ति दो।"

"ॐ इति ज्ञानरूपेण रागाजीर्णेन जीर्यत:।
कामनिद्रां प्रपन्नोऽस्मि त्राहि मां मधुसूदन।।
म गतिर्विद्यते नाथ त्वमेक: शरणं प्रभो।
पापपंके निमग्नोऽस्मि त्राहि मां मधुसूदन।।
मोहितो मोहजालेन पुत्रदारगृहादिषु।

तृष्णया पीड्यमानोऽहं त्राहि मां मधुसूदन।।
भक्तिहीनं च दीनं च दु:खशोकातुरं प्रभो।
अनाश्रयमनाथं च त्राहि मां मधुसूदन।।
गतागतेन श्रान्तोऽहं दीर्घसंसारवर्त्मसु।
येन भूयो न गच्छामि त्राहि मां मधुसूदन।।
बहुधाऽपि मया दृष्टं योनिद्वारं पृथक् पृथक्।
गर्भवासे महद्दु:खं त्राहि मां मधुसूदन।।
तेन देव प्रपन्नोऽस्मि नारायणपरायण:।
जगत्संसारमोक्षार्थं त्राहि मां मधुसूदन।।
वाचयामि यथोत्पन्नं प्रणमामि तवाग्रत:।
जरामरणभीतोऽस्मि त्राहि मां मधुसूदन।।
सुकृतं न कृतं किंचित् दुष्कृतं च कृतं मया।
संसारे पापपंकेऽस्मिन् त्राहि मां मधुसूदन।।
देहान्तरसहस्त्राणामन्योन्यं च कृतं मया।
कर्तृत्वं च मनुष्याणां त्राहि मां मधुसूदन।।
वाक्येन यत्प्रतिज्ञातं कर्मणा नोपपादितम्।
सोऽहं देव दुराचारस्त्राहि मां मधुसूदन।
यत्र यत्र हि जातोऽस्मि स्त्रीषु वा पुरुषेषु वा।
तत्र तत्राचला भक्तिस्त्राहि मां मधुसूदन।।"

मास्टर – (स्वगत) – नरेन्द्र को तीव्र वैराग्य है। इसलिए मठ के अन्य भाइयों की भी यही अवस्था है। इन लोगो को देखते ही श्रीरामकृष्ण के उन भक्तों मे, जो संसार मे अब भी है, कामिनीकांचन-त्याग की इच्छा प्रबल हो जाती है। अहा! इनकी यह कैसी अवस्था है! दूसरे कुछ भक्तो को उन्होने (श्रीरामकृष्ण ने) अब भी संसार मे क्यो रखा है? क्या वे कोई उपाय करेगे? क्या वे तीव्र वैराग्य देगे या संसार मे ही भुलाकर रख छोड़ेगे?

नरेन्द्र तथा और दो-एक अन्य भाई भोजन करके कलकत्ता गये। नरेन्द्र रात को फिर लौटेगे। नरेन्द्र के घरसम्बन्धी मुकदमे का अब भी फैसला नही हुआ। मठ के भाइयो को नरेन्द्र की अनुपस्थिति सह्य नहीं होती। सब सोच रहे है कि नरेन्द्र कब लौटें।

□□□

परिच्छेद ४

वराहनगर मठ

(१)

रवीन्द्र का पूर्वजीवन

आज सोमवार है, ९ मई, १८८७, जेष्ठ कृष्ण की द्वितीया। नरेन्द्र आदि भक्तगण मठ में हैं। शरद, बाबूराम और काली पुरी गये हुए हैं और निरंजन माता को देखने के लिए। मास्टर आये हैं।

भोजन आदि के पश्चात् मठ के भाई जरा देर विश्राम कर रहे है। गोपाल (बूढ़े गोपाल) गाने की कापी में गाना उतार रहे हैं।

दिन ढल रहा है। रवीन्द्र पागल की तरह आकर उपस्थित हुए। नंगे पैर, काली धारी की सिर्फ आधी धोती पहने हुए हैं, पागल की तरह आँखों की पुतलियाँ घूम रही हैं। लोगों ने पूछा, 'क्या हुआ?' रवीन्द्र ने कहा, 'जरा देर बाद बतलाता हूँ, मैं अब और घर न लौटूँगा, यही आप लोगों के साथ रहूँगा। उसने विश्वासघात किया, जरा देखिये तो साहब, पूरे पाँच साल की आदत, – सो शराब पीना तक मैंने उसके लिए छोड़ दिया – आज आठ महीने हुए मुझे शराब छोड़े, इसका फल यह कि वह पूरी धोखेबाज निकली।' मठ के भाइयों ने कहा – 'तुम जरा ठण्डे हो लो, तुम आये किस सवारी से?'

रवीन्द्र – मैं कलकत्ते से बराबर नंगे पैर पैदल चला आ रहा हूँ।

भक्तों ने पूछा, 'तुम्हारी आधी धोती क्या हो गयी?' रवीन्द्र ने कहा, 'आते समय उसने धर-पकड़ की, इसी में आधी धोती फट गयी।' भक्तों ने कहा, 'तुम गंगा-स्नान करके आओ, आकर ठण्डे होओ, फिर बातचीत होगी।'

रवीन्द्र का जन्म कलकत्ते के एक बहुत ही प्रतिष्ठित कायस्थ वंश में हुआ है। उम्र २०-२२ साल की होगी। श्रीरामकृष्ण को उन्होंने दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में देखा था और उनकी कृपा प्राप्त की थी। एक बार तीन रात लगातार वहाँ रह भी चुके थे। स्वभाव के बड़े मधुर और कोमल हैं। श्रीरामकृष्ण इम पर बड़ा स्नेह करते थे। परन्तु उन्होंने कहा था, "तेरे लिए अभी देर है अभी तेरे लिए कुछ भोग बाकी है। अभी कुछ न होगा। जब डाकू छापा मारते हैं, तब ठीक उसी समय पुलिस कुछ कर नहीं सकती। जब हलचल कुछ

शान्त हो जाती है तब पुलिस आकर गिरफ्तार करती है।'' आज रवीन्द्र वारांगना के जाल मे पड गये है, परन्तु और सब गुण उनमे है। गरीबो के प्रति दया, ईश्वर-चिन्तन, यह सब उनमे है। वेश्या को विश्वासघातक जानकर आधी धोती पहने हुए मठ मे आये है। संसार मे अब नही लौटेगे, इसका उन्होने दृढ संकल्प कर लिया है।

रवीन्द्र गंगा-स्नान के लिए जा रहे है। परामाणिक घाट पर जायेगे। एक भक्त भी साथ जा रहे है।

उनकी हार्दिक इच्छा है कि साधुओ के साथ इस युवक मे चेतना का संचार हो। गंगा-स्नान के पश्चात् रवीन्द्र को वे घाट ही के पासवाले एक श्मशान मे ले गये। वहाँ उसे लाशे दिखलाने लगे। कहा – ''यहाँ कभी कभी रात को मठ के भाई आकर ध्यान करते है। यहाँ हम लोगो के लिए ध्यान करना अच्छा है। संसार की अनित्यता खूब समझ मे आती है।'' उनकी यह बात सुनकर रवीन्द्र ध्यान करने के लिए बैठे, परन्तु ज्यादा देर तक ध्यान नही कर सके। मन चंचल हो रहा था।

दोनो मठ लौटे। पूजा-घर मे आकर दोनो ने श्रीरामकृष्ण के चित्र को प्रणाम किया। भक्त ने कहा, मठ के भाई इसी कमरे मे ध्यान करते है। रवीन्द्र जरा देर के लिए ध्यान करने बैठे। परन्तु ध्यान अधिक देर तक न हो सका।

मास्टर - क्या मन बहुत चंचल हो रहा है? शायद इसलिए तुम इतनी जल्दी उठ पडे? शायद ध्यान अच्छी तरह जमा नही?

रवीन्द्र – यह निश्चय है कि अब घर न लौटूँगा, परन्तु मन चंचल जरूर है।

मास्टर और रवीन्द्र मठ मे एकान्त स्थान पर खड़े है। मास्टर बुद्ध की बाते कर रहे है। देवकन्याओ का एक गाना सुनकर बुद्ध को पहले-पहल चैतन्य हुआ था। आजकल मठ मे बुद्धचरित्र और चैतन्यचरित्र की चर्चा प्राय: हुआ करती है। मास्टर वही गाना गा रहे है।

रात को नरेन्द्र, तारक और हरीश कलकत्ते से लौटे। आते ही उन्होने कहा – 'ओह, खूब खाया!' कलकत्ते मे किसी भक्त के यहाँ उनकी दावत थी।

नरेन्द्र और मठ के दूसरे भाई, मास्टर तथा रवीन्द्र आदि भी, 'दानवो के कमरे' मे बैठे हुए है। मठ मे नरेन्द्र को रवीन्द्र का सब हाल मिल चुका है।

दुःखी जीव तथा नरेन्द्र का उपदेश

नरेन्द्र गा रहे है। गाते हुए रवीन्द्र को मानो उपदेश दे रहे है।

गाने का भाव - ''तुम मोह और कुमन्त्रणाएँ छोड़ उन्हे समझो, तुम्हारी सम्पूर्ण व्यथा इस तरह दुर हो जायेगी।'' नरेन्द्र फिर गा रहे है:–

''पी ले अवधूत, हो मतवाला, प्याला प्रेम हरिरस का रे।

बाल अवस्था खेलि गॅवायो, तरुण भयो नारीबस का रे,
वृद्ध भयो कफ वायु ने घेरा, खाट पडो रह्यो शाम-सकारे।।
नाभि-कमल मे है कस्तूरी, कैसे भरम मिटै पशु का रे;
बिन सद्गुरु नर ऐसहि ढूँढै, जैसे मिरिग फिरै वन का रे।।''

कुछ देर बाद सब गुरुभाई काली तपस्वी के कमरे मे आकर बैठे। गिरीश का बुद्धचरित्र और चैतन्यचरित्र, ये दो नयी पुस्तके आयी है। नरेन्द्र, शशी, राखाल, प्रसन्न, मास्टर आदि बैठे है। नये मठ मे जब से आना हुआ है, तब से शशी श्रीरामकृष्ण की पूजा और उन्ही की सेवा मे दिनरात लगे रहते है। उनकी सेवा देखकर दूसरो को आश्चर्य हो रहा है। श्रीरामकृष्ण की बीमारी के समय वे दिनरात जिस नरह उनकी सेवा किया करते थे, आज भी उसी तरह अनन्यचित्त होकर भक्तिपूर्वक उनकी सेवा किया करते है।

मठ के एक भाई बुद्धचरित्र और चैतन्यचरित्र पढ़ रहे है। स्वरसहित जरा व्यंग के भाव से चैतन्यचरित्र पढ रहे है। नरेन्द्र ने उनसे पुस्तक छीन ली और कहा – 'इस तरह कोई अच्छी चीज को भी मिट्टी मे मिलाता है?' नरेन्द्र स्वयं चैतन्यदेव के 'प्रेम-वितरण' की कथा पढ़ रहे है।

मठ के एक भाई – मै कहता हूँ, कोई किसी को प्रेम दे नही सकता।

नरेन्द्र – मुझे तो श्रीरामकृष्णदेव ने प्रेम दिया है।

मठ के भाई – अच्छा, क्या मचमुच ही तुम्हे प्रेम दिया है?

नरेन्द्र – तू क्या समझेगा! तू (ईश्वर के) नौकरो के दर्जे का है। मेरे सब पैर दाबेगे, – शरता मित्तर और देसो भी। (सब हँसते है) तू शायद यह सोच रहा है कि तूने सब कुछ समझ लिया? (हास्य)

मास्टर – (स्वगत) – श्रीरामकृष्ण ने मठ के सभी भाइयो के भीतर शक्ति का संचार किया है, केवल नरेन्द्र के भीतर ही नही। बिना इस शक्ति के क्या कभी कामिनी और कांचन का त्याग हो सकता है?

दूसरे दिन मंगल है, १० मई। आज महामाया की पूजनतिथि है। नरेन्द्र तथा मठ के सब भाई आज विशेष रूप से जगन्माता की पूजा कर रहे है। पूजा-घर के सामने त्रिकोण यन्त्र की रचना की गयी, होम होगा। नरेन्द्र गीता-पाठ कर रहे है।

मणि गंगा-स्नान को गये। रवीन्द्र छत पर अकेले टहल रहे है। स्वरसमेत नरेन्द्र स्तवन पढ़ रहे है, रवीन्द्र वही से सुन रहे है :–

ॐ मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं, न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायुश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्।।
न च प्राणसंज्ञो न वै पंचवायुर्न वा सप्तधातुर्न वा पंचकोशः।
न वाक्पाणिपादं न चोपस्थपायुश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्।।

न मे द्वेषरागौ न मे लोभमोहौ मदो नैव मे नैव मात्सर्यभाव·।
न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षश्चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम्।
न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दु:खं, न मन्त्रो न तीर्थो न वेदा न यज्ञा:।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता, चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम्।।

रवीन्द्र गंगा-स्नान करके आ गये, धोती भीगी हुई है।

नरेन्द्र – (मणि के प्रति, एकान्त मे) – यह देखो, नहाकर आ गया, अब इसे संन्यास दे दिया जाय तो बहुत अच्छा हो!

(नरेन्द्र और मणि हँसते है)

प्रसन्न ने रवीन्द्र मे भीगी धोती उतारने के लिए कहा, साथ ही उन्होंने एक गेरुआ वस्त्र भी दिया।

नरेन्द्र – (मणि से) – अब वह त्यागियो का वस्त्र पहनेगा।

मणि – (हँसकर) – किस चीज का त्याग?

नरेन्द्र – काम-कांचन का त्याग।

गेरुआ वस्त्र पहनकर रवीन्द्र एकान्त मे काली तपस्वी के कमरे मे जाकर बैठे। जान पड़ना है कि कुछ ध्यान करेगे।

□□□

(घ)

परिच्छेद १

भक्तों के संग में श्रीरामकृष्ण

एक पत्र

(श्री अश्विनी दत्त द्वारा श्री 'म' को लिखित)

प्रिय प्राणों के भाई श्री 'म', तुम्हारा भेजा हुआ श्रीरामकृष्ण वचनामृत, चतुर्थ खण्ड, शरद-पूर्णिमा के दिन मिला। आज द्वितीया को मैंने उसे पढ़कर समाप्त किया। तुम धन्य हो, इतना अमृत तुमने देश भर में सींचा! ... खैर, बहुत दिन हुए, तुमने यह जानना चाहा था कि श्रीरामकृष्ण के साथ मेरी क्या बातचीत हुई थी। इसलिए तुम्हें उस सम्बन्ध मे कुछ लिखने की चेष्टा कर रहा हूँ। मुझे कुछ श्री 'म' की तरह भाग्य तो मिला नही कि उन श्रीचरणों के दर्शन का दिन, तारीख, मुहूर्त, और उनके श्रीमुख से निकली हुई सब बातें बिलकुल ठीक ठीक लिख रखता; जहाँ तक मुझे याद है, लिख रहा हूँ; सम्भव है एक दिन की बात को दूसरे दिन की कहकर लिख डालूँ। और बहुतसी बातें तो भूल ही गया हूँ।

शायद सन् १८८१ की पूजा की छुट्टियों के समय पहले-पहल मुझे उनके दर्शन हुए थे। उस दिन केशवबाबू के आने की बात थी। नाव से दक्षिणेश्वर पहुँच, घाट से चढ़कर मैंने एक आदमी से पूछा – "परमहंस कहाँ हैं?" उस मनुष्य ने उत्तर की ओर के बरामदे में तकिये के सहारे बैठे हुए एक व्यक्ति की ओर इशारा करके बतलाया – "ये ही परमहंस हैं।" परन्तु मैंने देखा, दोनों पैर ऊपर उठाये और उन्हें अपने हाथों से घेरकर बाँधे हुए अध-चित होकर वे तकिये का सहारा लिए बैठे हैं। मेरे मन में आया, इन्हें कभी बाबुओं की तरह तकिये के सहारे बैठने या लेटने की आदत नहीं है; सम्भव है, ये ही परमहंस हों। तकिये के बिलकुल पास ही उनके दाहिनी ओर एक बाबू बैठे थे। मैंने सुना, वे राजेन्द्र मित्र हैं। बंगाल सरकार के सहायक सेक्रेटरी रह चुके हैं। उनके दाहिनी ओर कुछ और सज्जन बैठे हुए थे। परमहंसदेव ने कुछ देर बाद राजेन्द्रबाबू से कहा – 'जरा देखो तो सही, केशव आया है या नहीं।' एक ने जरा बढ़कर देखा, लौटकर उसने कहा – "नही

आये।" थोड़ी देर मे कुछ शब्द हुआ तब उन्होने फिर कहा – 'देखो, जरा फिर तो देखो।' इस बार भी एक ने देखकर कहा – 'नही आये।' साथ ही परमहंसदेव ने हँसते हुए कहा – "पत्तो के झड़ने का शब्द हो रहा था, राधा सोचती थी – मेरे प्राणनाथ तो नही आ रहे है। क्यो जी, क्या केशव की सदा की यही रीति है? आते ही आते रुक जाता है।" कुछ देर बाद, सन्ध्या हो ही रही थी कि दलबलसमेत केशव आ गये।

आते ही जब केशव ने भूमिष्ठ होकर उन्हे प्रणाम किया, तब उन्होने भी ठीक वैसे ही भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया और कुछ देर बाद सिर उठाया। उस समय वे समाधिमग्न थे – कह रहे थे –

"कलकत्ते भर के आदमी इकट्ठे कर लाये है। इसलिए कि मै व्याख्यान दूँगा! व्याख्यान-आख्यान मैं कुछ न दे सकूँगा। देना हो तो तुम दो। यह सब मुझसे न होगा।"

उसी अवस्था मे दिव्य भाव से जरा मुस्कराकर कह रहे है –

"मै बम भोजन-पान करूँगा और पड़ा रहूँगा। मै भोजन करूँगा औरं सोऊँगा – बस। यह सब मै न कर सकूँगा। करना हो तो तुम करो। मुझसे यह सब न होगा।"

केशवबाबू देख रहे है और श्रीरामकृष्ण भाव से भरपूर हो रहे है। एक-एक बार भावावेश मे 'अ: अ:' कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण की उस अवस्था को देखकर मै सोच रहा था – 'यह ढोग तो नही है? ऐसा तो मैने और कभी देखा ही नही।' और मै जैसा विश्वासी हूँ, यह तो तुम जानते ही हो!

समाधि-भंग के पश्चात् केशवबाबू से उन्होने कहा – "केशव, एक दिन मै तुम्हारे यहाँ गया था, मैने सुना, तुम कह रहे हो, 'भक्ति की नदी मे गोता लगाकर हम लोग सच्चिदानन्द-सागर मे जाकर गिरेगे।' तब मैने ऊपर देखा, (जहाँ केशवबाबू और ब्राह्मसमाज की स्त्रियाँ बैठी थी) और सोचा, तो फिर इनकी क्या दशा होगी? तुम लोग गृहस्थ हो, एकदम किस तरह सच्चिदानन्द-सागर मे जाकर गिरोगे? तुम लोग तो उस नेवले की तरह हो जिसकी दुम में कंकड़ बाँध दिया गया हो; कुछ हुआ नही कि झट वह ताक पर जा बैठता है; परन्तु वहाँ रहे किस तरह? कंकड़ नीचे की ओर खीचता है और उसे कूदकर नीचे आना पड़ता है। तुम लोग इसी तरह कुछ काल के लिए जप-ध्यान कर सकते हो, परन्तु दारा और सुतरूपी कंकड़ जो पीछे लटका हुआ नीचे की ओर खीच रहा है, वह नीचे उतारकर ही छोड़ता है। तुम लोगो को तो चाहिए भक्ति की नदी में एक बार डुबकी लगाकर निकलो, फिर डुबकी लगाओ और फिर निकलो। इसी तरह करते रहो। एकदम तुम लोग कैसे डूब सकते हो?"

केशवबाबू ने कहा – *"क्या गृहस्थो के लिए यह बात असम्भव है? महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर?"*

परमहंसदेव ने दो-तीन बार 'देवेन्द्रनाथ ठाकुर, देवेन्द्र, देवेन्द्र' कहकर उन्हें लक्ष्य करके कई बार प्रणाम किया, फिर कहा –

"सुनो, एक के यहाँ देवी-पूजा के समय उत्सव मनाया जाता था, सूर्योदय के समय भी बलि चढ़ती थी और अस्त के समय भी। कई साल बाद फिर वह धूम न रह गयी। एक दूसरे ने पूछा – 'क्यों महाशय, आजकल आपके यहाँ वैसी बलि क्यों नही चढ़ायी जाती?' उसने कहा, 'अजी, अब तो दाँत ही गिर गये!' देवेन्द्र भी अब ध्यान-धारणा करता है – करेगा ही! परन्तु बड़ी शान का आदमी है – खूब मनुष्यता है उसमें।

"देखो, जितने दिन माया रहती है, उतने दिन आदमी कच्चे नारियल की तरह रहता है। नारियल जब तक कच्चा रहता है, तब तक यदि उसका गूदा निकालना चाहो तो गूदे के साथ खोपड़े का कुछ अंश छिलकर जरूर निकल आयगा। और जब माया निकल जाती है तब वह सूख जाता है, – नारियल का गोला खोपड़े से छूट जाता है, तब वह भीतर खड़खड़ाता रहता है, आत्मा अलग और शरीर अलग हो जाता है, फिर शरीर के साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता।

"यह जो 'मैं' है, यह बड़ी बड़ी कठिनाईयाँ लाकर खड़ी कर देता है। क्या यह 'मै' दूर होगा ही नहीं? देखा कि उस टूटे हुए मकान पर पीपल का पेड़ पनप रहा है, उसे काट दो, फिर दूसरे दिन देखो, उसमें कोंपल निकल रही है, – यह 'मैं' भी इसी तरह का है। प्याज का कटोरा सात बार धोओ, परन्तु उसकी बू जाती ही नहीं!"

न जाने क्या कहते हुए उन्होंने केशवबाबू से कहा – "क्यों केशव, तुम्हारे कलकत्ते में, सुना, बाबू लोग कहते हैं, 'ईश्वर नहीं है।' क्या यह सच है? बाबूसाहब जीने पर चढ़ रहे हैं, एक सीढ़ी पर पैर रखा नहीं कि 'इधर क्या हुआ' कहकर गिरे अचेत, फिर पड़ी डाक्टर की पुकार, जब तक डाक्टर आवे-आवे तब तक बन्दे कूच कर गये! और ये ही लोग कहते हैं कि ईश्वर नहीं हैं!"

घण्टे-डेढ़-घण्टे बाद कीर्तन शुरू हुआ। उस समय मैंने जो कुछ देखा, वह शायद जन्म-जन्मान्तर में भी न भूलूँगा। सब के सब नाचने लगे। केशव को भी मैंने नाचते हुए देखा, बीच में थे श्रीरामकृष्ण, और बाकी सब लोग उन्हें घेरकर नाच रहे थे। नाचते ही नाचते बिलकुल स्थिर हो गये – समाधिमग्न। बड़ी देर तक उनकी यह अवस्था रही। इस तरह देखते और सुनते हुए मैं समझा, ये यथार्थ ही परमहंस हैं।

एक दिन और, शायद १८८३ ई. में, श्रीरामपुर के कुछ युवकों को मैं साथ लेकर गया था। उस दिन उन युवकों को देखकर परमहंसदेव ने कहा था, 'ये लोग क्यों आये हैं?'

मैंने कहा, 'आपको देखने के लिए।'

श्रीरामकृष्ण – मुझे ये क्या देखेंगे? ये सब लोग बिल्डिंग (इमारत) क्यों नहीं देखते

जाकर?

मै – ये लोग यह सब देखने नहीं आये। ये आपको देखने के लिए आये है।

श्रीरामकृष्ण – तो शायद ये चकमक पत्थर हैं। आग भीतर है। हजार साल तक चाहे उसे पानी मे डाल रखो, परन्तु घिसने के साथ ही उससे आग निकलेगी। ये लोग शायद उसी जाति के कोई जीव हैं? हम लोगों को घिसने पर आग कहाँ निकलती है?

यह अन्त की बात सुनकर हम लोग हँसे। उसके बाद और भी कौन-कौनसी बातें हुई, मुझे याद नही। परन्तु जहाँ तक स्मरण है, शायद 'कामिनीकांचन-त्याग' और 'मैं की बू नही जाती' इन पर भी बातचीत हुई थी।

मैं एक दिन और गया, प्रणाम करके बैठा कि उन्होंने कहा – "वही जिसकी डाट खोलने पर जोर से 'फस्-फस्' करने लगता है, कुछ खट्टा कुछ मीठा होता है – एक वही ले आओगे?" मैंने पूछा – 'लेमोनेड?' श्रीरामकृष्ण ने कहा – "ले आओ न।" जहाँ तक मुझे याद है शायद मैं एक लेमोनेड ले आया। इस दिन शायद और कोई न था। मैंने कई प्रश्न किये थे – "आपमें क्या जाति-भेद हैं?"

श्रीरामकृष्ण – कहाँ है अब? केशव सेन के यहाँ की तरकारी खायी। अच्छा, एक दिन की बात कहता हूँ। एक आदमी बर्फ ले आया, उसकी दाढ़ी खूब लम्बी थी, पहले तो खाने की इच्छा न जाने क्यों नहीं हुई, फिर कुछ देर बाद एक दूसरा आदमी उसी के पास से बर्फ ले आया तो मैं दाँतो से चबाकर सब बर्फ खा गया। यह समझो कि जाति-भेद आप ही छूट जाता है। जैसे, नारियल और ताड़ के पेड़ जब बड़े होते हैं तब उनके बड़े बड़े डण्ठलदार पत्ते पेड़ से आप ही टूटकर गिर जाते हैं। इसी तरह जाति-भेद आप ही छूट जाता है। झटका मारकर न छुड़ाना, उन सालों की तरह!

मैंने पूछा – केशवबाबू कैसे आदमी हैं?

श्रीरामकृष्ण – अजी, वह दैवी आदमी है।

मै – और त्रैलोक्यबाबू?

श्रीरामकृष्ण – अच्छा आदमी है, बहुत सुन्दर गाता है।

मै – और शिवनाथबाबू?

श्रीरामकृष्ण – आदमी अच्छा है, परन्तु तर्क जो करता है –?

मै – हिन्दू और ब्राह्म में अन्तर क्या हैं?

श्रीरामकृष्ण – अन्तर और क्या है? यहाँ शहनाई बजती है। एक आदमी स्वर साधे रहता है, और दूसरा तरह तरह की रागिनियों की करामत दिखाता है। ब्राह्मसमाजवाले ब्रह्म का स्वर साधे हुए हैं और हिन्दू उसी स्वर के अन्दर तरह तरह की रागिनियों की करामत दिखाते हैं।

"पानी और बर्फ। निराकार और साकार। जो चीज पानी है, वही जमकर बर्फ बनती

है। भक्ति की शीतलता से पानी बर्फ बन जाता है!

"वस्तु एक ही है, अनेक मनुष्य उसे अनेक नाम देते हैं। जैसे तालाब के चारों ओर चार घाट हों। इस घाट में जो लोग पानी भर रहे हैं, उनसे पूछो तो कहेंगे, जल है। उधर के घाट में जो लोग हैं वे पानी कहेंगे। तीसरे घाटवाले कहेंगे, वाटर और चौथे घाट के लोग कहेंगे, एकुआ। परन्तु पानी एक ही है।"

मेरे यह कहने पर कि बरीशाल में अचलानन्द अवधूत के साथ मेरी मुलाकात हुई थी, उन्होंने कहा – "वही कोतरंग का रामकुमार न?" मैंने कहा, 'जी हाँ।'

श्रीरामकृष्ण – उसे तुम क्या समझे?

मैं – जी, वे बहुत अच्छे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, वह अच्छा है या मैं?

मैं – आपकी तुलना उनके साथ? वे पण्डित हैं, विद्वान् हैं, आप पण्डित और ज्ञानी थोड़े ही हैं?

उत्तर सुनकर कुछ आश्चर्य में आकर वे चुप हो गये। एक मिनट बाद मैंने कहा – "हाँ, वे पण्डित हो सकते हैं, परन्तु आप बड़े मजेदार आदमी हैं। आपके पास मौज खूब है।"

अब हँसकर उन्होंने कहा – "खूब कहा, अच्छा कहा।"

मुझसे उन्होंने पूछा – "क्या मेरी पंचवटी तुमने देखी है?"

मैंने कहा, "जी हाँ।" वहाँ वे क्या करते थे, यह भी कहा – अनेक तरह की साधनाओं की बातें। मैंने पूछा – "उन्हें किस तरह हम पायें?"

श्रीरामकृष्ण – अजी, चुम्बक जिस तरह लोहे को खींचता है, उसी तरह वे हम लोगों को खींच ही रहे हैं। लोहे में कीच लगा रहने से चुम्बक से वह चिपक नहीं सकता। रोते रोते जब कीच धुल जाता है, तब लोहा आप ही चुम्बक के साथ जुड़ जाता है।

मैं श्रीरामकृष्ण की उक्तियों को सुनकर लिख रहा था, उन्होंने कहा – "हाँ देखो, भंग-भंग रट लगाने से कुछ न होगा। भंग ले आओ, उसे घोंटो और पीओ।" इसके बाद उन्होंने मुझसे कहा – "तुम्हें तो संसार में रहना है, अतएव ऐसा करो कि नशे का गुलाबी रंग रहा करे। काम-काज भी करते रहो और इधर जरा सुखी भी रहो। तुम लोग शुकदेव की तरह तो कुछ हो नहीं सकोगे कि नशा पीते ही पीते अन्त में अपने तन की खबर भी न रहे – जहाँ-तहाँ बेहोश पड़े रहो।

"संसार में रहोगे तो एक आम-मुखतारनामा लिख दो। उनकी जो इच्छा, करें। तुम बस बड़े आदमियों के घर की नौकरानी की तरह रहो। बाबू के लड़के-बच्चों का वह आदर तो खूब करती है, नहलाती-धुलाती है, खिलाती-पिलाती है, मानो वह उसी का लड़का हो; परन्तु मन ही मन खूब समझती है कि यह मेरा नहीं है। वहाँ से उसकी नौकरी छूटी

नहीं कि बस फिर कोई सम्बन्ध नहीं।

"जैसे कटहल काटते समय हाथ में तेल लगा लिया जाता है, उसी तरह (भक्तिरूपी) तेल लगा लेने से संसार में फिर न फँसोगे, लिप्त न होओगे।"

अब तक जमीन पर बैठे हुए बातें हो रही थी। अब उन्होने खाट पर चढ़कर लेटे लेटे मुझसे कहा – "पंखा झलो।" मैं पंखा झलने लगा। वे चुपचाप लेटे रहे। कुछ देर बाद कहा, "अजी, बड़ी गरमी है, पंखा जरा पानी मे भिगा लो।" मैंने कहा, "इधर शौक भी देखता हूँ कम नहीं है!" हँसकर उन्होंने कहा, "क्यों शौक नहीं रहेगा? – शौक रहेगा क्यों नहीं?" मैंने कहा – "अच्छा, तो रहे, रहे, खूब रहे।" उस दिन पास बैठकर मुझे जो सुख मिला वह अकथनीय है।

अन्तिम बार – जिस समय की बात तुमने तीसरे खण्ड में लिखी है* – मै अपने स्कूल के हेडमास्टर को ले गया था, उनके बी. ए. पास करने के कुछ ही समय बाद। अभी थोड़े ही दिन हुए उनसे तुम्हारी मुलाकात हुई थी।

उन्हे देखते ही श्रीरामकृष्णदेव ने मुझसे कहा – "क्यो जी, तुम इंन्हे कहाँ पा गये? ये तो बड़े सुन्दर व्यक्ति है।

"क्यों जी, तुम तो वकील हो। बड़ी तेज बुद्धि है! मुझे कुछ बुद्धि दे सकते हो? तुम्हारे पिताजी अभी उस दिन यहाँ आये थे, आकर तीन दिन रह भी गये हैं।"

मैंने पूछा – "उन्हें आपने कैसा देखा?"

उन्होंने कहा – "बहुत अच्छा आदमी है, परन्तु बीच बीच में बहुत ऊल-जलूल भी बकता है।"

मैंने कहा – "अब की बार मुलाकात हो तो ऊल-जलूल बकना छुड़ा दीजियेगा।"

वे इस पर जरा मुस्कराये। मैंने कहा – "मुझे कुछ बातें सुनाइये।"

उन्होंने कहा – "हृदय को पहचानते हो?"

मैंने कहा – "आपका भाँजा न? मुझसे उनका परिचय नहीं है।"

श्रीरामकृष्ण – हृदय कहता था, 'मामा, तुम अपनी बातें सब एक साथ न कह डाला करो। हर बार उन्ही उन्हीं बातों को क्यों कहते हो?' इस पर मैं कहता था, 'तो तेरा क्या, बोल मेरा है, मैं लाख बार अपना एक ही बोल सुनाऊँगा।'

मैंने हँसते हुए कहा, 'बेशक, आपने ठीक ही तो कहा है।'

कुछ देर बाद बैठे ही बैठे ॐ ॐ कहकर वे गाने लगे – 'ऐ मन, तू रूप के समुद्र में डूब जा।...'

दो-एक पद गाते ही गाते सचमुच वे डूब गये। – समाधि के सागर में निमग्न हो

---

* ता. २३ मई १८८५ देखिये।

गये।

समाधि छूटी। वे टहलने लगे। जो धोती पहने हुए थे, उसे दोनों हाथो से समेटते समेटते बिलकुल कमर के ऊपर चढ़ा ले गये। एक तरफ से लटकती हुई धोती जमीन को बुहारती जा रही थी। मैं और मेरे मित्र, दोनों एक दूसरे को टोंच रहे थे और धीरे धीरे कह रहे थे, 'देखो, धोती सुन्दर ढंग से पहनी गयी है।' कुछ देर बाद ही 'हत्तेरे की धोती' कहकर, उसे उन्होंने फेंक दिया। फिर दिगम्बर होकर टहलने लगे। उत्तर तरफ से न जाने किसका छाता और छड़ी हमारे सामने लाकर उन्होंने पूछा, 'क्या यह छाता और छड़ी तुम्हारी है?' मैंने कहा, 'नहीं।' साथ ही उन्होंने कहा, "मैं पहले ही समझ गया था कि यह छाता और छड़ी तुम्हारी नहीं है। मैं छाता और छड़ी देखकर ही आदमी को पहचान लेता हूँ। अभी जो एक आदमी आया था, ऊल-जलूल बहुत-कुछ बक गया, ये चीजें निस्सन्देह उसी की हैं।"

कुछ देर बाद उसी हालत में चारपाई पर वायव्य की तरफ मुँह करके बैठे गये। बैठे ही बैठे उन्होंने पूछा, "क्यों जी, क्या तुम मुझे असभ्य समझ रहे हो?"

मैंने कहा, "नही, आप बड़े सभ्य हैं। इस विषय का प्रश्न आप करते ही क्यों है?"

श्रीरामकृष्ण – अजी, शिवनाथ आदि मुझे असभ्य समझते हैं। उनके आने पर धोती किसी न किसी तरह लपेटकर बैठना ही पड़ता है। क्या गिरीश घोष से तुम्हारी पहचान है?

मैं – कौन गिरीश घोष? वही जो थियेटर करता है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ।

मैं – कभी देखा तो नहीं, पर नाम सुना है।

श्रीरामकृष्ण – वह अच्छा आदमी है।

मैं – सुना है, वह शराब भी पीता है!

श्रीरामकृष्ण – पिये, पिये न, कितने दिन पियेगा?

फिर उन्होंने कहा, 'क्या तुम नरेन्द्र को पहचानते हो?'

मैं – जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण – मेरी बड़ी इच्छा है कि उसके साथ तुम्हारी जान-पहचान हो जाय। वह बी. ए. पास कर चुका है, विवाह नहीं किया।

मैं – जी, तो उनसे परिचय अवश्य करूँगा।

श्रीरामकृष्ण – आज राम दत्त के यहाँ कीर्तन होगा। वहाँ मुलाकात हो जायगी। शाम को वहाँ जाना।

मैं – जी हाँ, जाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, जाना, जरूर जाना।

मै – आपका आदेश मिला और मै न जाऊँ। – अवश्य जाऊँगा।

फिर वे कमरे की तस्वीरे दिखाते रहे। पूछा - ' क्या बुद्धदेव की तस्वीर बाजार मे मिलती है?''

मै – सुना है कि मिलती है।

श्रीरामकृष्ण – एक तस्वीर मेरे लिए ले आना।

मै – जी हाँ, अब की बार जब आऊँगा, साथ लेता आऊँगा।

फिर दक्षिणेश्वर मे उन श्रीचरणो के समीप बैठने का सौभाग्य मुझे कभी नही मिला।

उस दिन शाम को रामबाबू के यहाँ गया। नरेन्द्र को देखा। श्रीरामकृष्ण एक कमरे मे तकिये के सहारे बैठे हुए थे, उनके दाहिनी ओर नरेन्द्र थे। मै सामने था। उन्होने नरेन्द्र से मेरे साथ बातचीत करने के लिए कहा।

नरेन्द्र ने कहा, 'आज मेरे सिर मे बडा दर्द हो रहा है। बोलने की इच्छा ही नही होती।'

मै – रहने दीजिये, किसी दूसरे दिन बातचीत होगी।

उसके बाद उनसे बातचीत हुई थी, अलमोडे मे, शायद १८९७ की मई या जून के महीने मे।

श्रीरामकृष्ण की इच्छा पूरी तो होने की ही थी, इसीलिए बारह साल बाद वह इच्छा पूरी हुई। अहा! स्वामी विवेकानन्दजी के साथ अलमोडे मे वे उतने दिन कैसे आनन्द मे कटे थे। कभी उनके यहाँ, कभी मेरे यहाँ, और कभी निर्जन मे पहाड़ की चोटी पर। उसके बाद फिर उनसे मुलाकात नही हुई। श्रीरामकृष्ण की इच्छा-पूर्ति के लिए ही उस बार उनसे मुलाकात हुई थी।

श्रीरामकृष्ण के साथ भी सिर्फ चार-पाँच दिन की मुलाकात है, परन्तु उतने ही समय मे ऐसा हो गया था कि उन्हे देखकर जी मे आता था जैसे हम दोनो एक ही दर्जे के पढे हुए विद्यार्थी हो। उनके पास हो आने पर जब दिमाग ठिकाने आता था, तब जान पड़ता था कि बाप रे! किसके सामने गये थे। उतने ही दिनो मे जो कुछ मैने देखा है – जो कुछ मुझे मिला है, उसी से जी मधुमय हो रहा है। उस दिव्यामृतवर्षी हास्य को यत्नपूर्वक मैने हृदय मे बन्द कर रखा है। अजी, वह आश्रयहीनो का आश्रय है। और उसी हास्य से बिखरे हुए अमृत-कणो के द्वारा अमरीका तक मे संजीवनी का संचार हो रहा है और यही सोचकर 'हृष्यामि च मुहुर्मुहुः, हृष्यामि च पुनः पुनः' – मुझे रह-रहकर आनन्द हो रहा है।

रामकृष्ण मठ, (प्रकाशन विभाग)
रामकृष्ण आश्रम मार्ग, धन्तोली, नागपुर ४४० ०१२

(H-13) Shri Ramakrishna Vachanamrit - Part : 2